मुद्रा और वित्त की रिपोर्ट
2008-09

वैश्विक वित्तीय संकट और भारतीय अर्थव्यवस्था

भारतीय रिज़र्व बैंक

मुद्रा और वित्त की रिपोर्ट
2008-09

वैश्विक वित्तीय संकट और भारतीय अर्थव्यवस्था

भारतीय रिज़र्व बैंक

"इस रिपोर्ट में व्यक्त परिणाम, विचार तथा निष्कर्ष पूर्णतया आर्थिक नीति और अनुसंधान विभाग (आनीअवि) में योगदान देने वाले स्टाफ के हैं और यह जरूरी नहीं कि ये भारतीय रिज़र्व बैंक के अपने विचार हों।"

भारत में - 195 रुपए (सामान्य)

- 230 रुपए (डाक प्रभार सहित)
- 145 रुपए (रियायती)
- 180 रुपए (रियायती, डाक प्रभार सहित)

विदेश में - 27 अमरीकी डॉलर (एयरमेल कूरियर प्रभार सहित)

© भारतीय रिज़र्व बैंक 2010
सर्वाधिकार सुरक्षित। सामग्री के पुन:प्रयोग की अनुमति है, बशर्ते कि स्रोत का उल्लेख किया जाए।

आइएसएसएन 0972-8759

गुणजीत कौर द्वारा भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई - 400 001 के लिए प्रकाशित और उनके द्वारा एल्को कॉर्पोरेशन, ए-2/72, शाह एण्ड नाहर इंडस्ट्रियल इस्टेट, लोअर परेल, मुंबई - 400 013 में अभिकल्पित और मुद्रित।

प्राक्कथन

वैश्विक वित्तीय संकट, जिसकी तुलना गहनता और प्रभावों के मामले में 1930 के दशक की महामंदी से की गई है, में हाल में कमी आने के संकेत दिखाई देने लगे हैं। जो संकट अगस्त 2007 में अमेरिका में सब-प्राइम मार्टगेज क्षेत्र के अत्यंत सीमित दायरे में पैदा हुआ था, उसने लेहमन ब्रदर्स के धराशायी होने के बाद सितंबर 2008 में वैश्विक वित्तीय संकट का रूप ले लिया। यूरोप की हाल की गतिविधियों से यह संकेत मिलता है कि विश्व अर्थव्यवस्था में अभी भी कुछ कमजोर पहलू मौजूद हैं।

अच्छी बात यह है कि हम पीछे मुड़कर कुछ सबक ले सकते हैं। संबंधित वित्तीय साहित्य में कई समष्टि आर्थिक और व्यष्टि आर्थिक तत्त्वों की पहचान इस संकट के प्रत्यक्ष कारण के रूप में की गई है, जिनमें शामिल हैं - आसानी से उपलब्ध धन की भूमिका, वैश्विक असंतुलन, वित्तीय नवोन्मेष तथा राष्ट्रीय और वैश्विक - दोनों स्तरों पर विनियामक और पर्यवेक्षी कमियां। अतीत के वित्तीय संकटों से संबंधित कई बातों से वर्तमान संकट की तुलना करने पर यह स्पष्ट होता है कि उनके अंतर्निहित कारणों के संबंध में कुछ समानताएं पायी जा सकती हैं।

लेकिन प्रभावों की दृष्टि से पहले के वित्तीय संकटों की तुलना में हाल के वित्तीय संकट का प्रभाव अधिक व्यापक रहा है। वैश्विक वित्तीय बाजारों के प्राय: सभी क्षेत्रों ने वित्तीय संकट के आघात महसूस किये, भले ही उनकी तीव्रता कम या अधिक रही हो। उभरती अर्थव्यवस्था वाले देशों में अंतर-बैंक बाजारों पर सबसे पहले चलनिधि की भारी कमी के रूप में प्रभाव दृष्टिगोचर हुए क्योंकि बैंकों ने, प्रतिपक्षियों की ओर से पैदा होने वाले जोखिमों के डर से, एक दूसरे को उधार देने के प्रति अरुचि दिखानी शुरू कर दी। वैश्विक वित्तीय मंदी से पैदा होने वाले समष्टि आर्थिक उथल-पुथल का दुष्प्रभाव उभरती अर्थव्यवस्था वाले देशों पर भी पड़ा। इस संकट के समाधान के लिए देश के भीतर और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी अभूतपूर्व नीतिगत उपाय किए गए। पूरे विश्व में मौद्रिक प्राधिकारियों ने अपनी परंपरागत भूमिका से बहुत आगे बढ़कर कदम उठाए तथा संकट से उबरने के लिए बहुत अधिक वित्तीय पैकेज उपलब्ध कराए, तथा उन्होंने यह काम इतने व्यापक स्तर पर किया कि नीतिगत दरों में अभूतपूर्व कमी आ गई। ऐसा प्रतीत होता है कि सशक्त और सुनियोजित नीतिगत उपायों के कारण आर्थिक महाविपत्ति रोकने में सफलता मिली। भारत इनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका और वैश्विक गतिविधियों ने वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में हमारी वित्तीय तथा वास्तविक गतिविधियों पर प्रभाव डाला।

प्रत्येक संकट से हमें बहुत बड़े-बड़े सबक मिलते हैं। इस संकट से यह बात उभरकर सामने आयी कि हमें कुछ नयी विनियामक और पर्यवेक्षी संस्थाओं की जरूरत है तथा पूरी प्रणाली को लक्ष्य करके कुछ निश्चित कदम उठाए जाने चाहिए, केंद्रीय बैंकों के लिए कुछ नये उद्देश्य होने चाहिए, केंद्रीय बैंक के कामकाज में सूचनाओं के आदान-प्रदान, पारदर्शिता और समन्वयन का बड़ा महत्त्व है, अंतरराष्ट्रीय वित्तीय ढांचे को एक नया स्वरूप दिया जाना चाहिए और उभरती बाजार अर्थव्यवस्था वाले देशों द्वारा अपनाए गए कुछ सुरक्षात्मक उपायों में फिर से विश्वास पैदा करने की जरूरत है। इस संकट ने वैश्विक संकटों को रोकने तथा उनके प्रबंधन की दृष्टि से वर्तमान अंतरराष्ट्रीय वित्तीय ढांचे की पर्याप्तता तथा सक्षमता के बारे में सवाल खड़े कर दिए हैं। वस्तुत: अमेरिका के सब-प्राइम संकट ने जिस गति तथा तीव्रता से वैश्विक वित्तीय संकट का रूप तथा बाद में वैश्विक आर्थिक संकट का रूप धारण कर लिया, उसने समष्टि अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ सिद्धांतों के बारे में बिल्कुल नयी बहस छेड़ दी है और बाजार व्यवस्था के स्वत:-सुधार संबंधी सुस्थापित विचारों और सरकारी नीति की भूमिका के लिए चुनौती खड़ी कर दी है। इस संकट की गहनता और व्यापकता ने पूरी दुनिया में नीति-निर्माताओं के पास उपलब्ध परंपरागत और गैर-परंपरागत नीतिगत विकल्पों की सीमाओं की परीक्षा भी ले ली है।

इस पृष्ठभूमि में यह महसूस किया गया कि वैश्विक अर्थव्यवस्था पर और, विशेष रूप से भारतीय अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाले प्रभावों के वस्तुनिष्ठ आकलन पर चिंतन किया जाए और नीति के संबंध में कुछ सीख ली जाए। **तदनुसार वर्ष 2008-09 की इस रिपोर्ट की थीम " वैश्विक वित्तीय संकट और भारतीय अर्थव्यवस्था" चुनी गयी।** इस रिपोर्ट में संकट के कारणों, किए गए नीतिगत उपायों तथा वैश्विक और भारतीय अर्थव्यवस्था पर उसके प्रभावों का गहन विश्लेषण किया गया है।

यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि वर्ष 1998-99 से मुद्रा और वित्त की रिपोर्ट किसी-न-किसी थीम पर आधारित है। अब तक 9 रिपोर्टें प्रकाशित हो चुकी हैं जिनका विवरण नीचे दिया गया है:

	वर्ष	थीम
1.	1998-99	भारतीय अर्थव्यवस्था का संरचनात्मक रूपांतरण
2.	1999-2000	वित्तीय क्षेत्र और बाजार एकीकरण
3.	2000-01	वृद्धि का पुनरुज्जीवन
4.	2001-02	सुधार की प्रक्रिया और इसके परिणामों का मूल्यांकन
5.	2002-03	मुक्त अर्थव्यवस्था के ढांचे में बाह्य क्षेत्र का प्रबंधन
6.	2003-04	मौद्रिक नीति का क्रमिक विकास
7.	2004-05	भारत में केंद्रीय बैंकिंग का क्रमिक विकास
8.	2005-06	वित्तीय बाजारों का विकास और केंद्रीय बैंक की भूमिका
9.	2006-07 और 2007-08	भारत में बैंकिंग क्षेत्र : उभरते मुद्दे और चुनौतियां
10.	2008-09 (वर्तमान)	वैश्विक वित्तीय संकट और भारतीय अर्थव्यवस्था

यह रिपोर्ट आर्थिक विश्लेषण और नीति विभाग में श्री दीपक मोहंती, कार्यपालक निदेशक के समग्र पर्यवेक्षण और मार्गनिर्देशन में अधिकारियों के एक दल द्वारा तैयार की गई है जिसका नेतृत्व श्री एस.वी.एस.दीक्षित, परामर्शदाता और डॉ.राजीव रंजन, निदेशक ने किया। कोर टीम में जीवन के. खुंद्राकपम, रेखा मिश्र, भूपाल सिंह, सुनील कुमार, अभिमान दास, एस.सी.धल, अनुपम प्रकाश, राजीव जैन, अत्रि मुखर्जी, सौरभ घोष, संगीता मिश्र, एस.एम.लोकरे, पंकज कुमार, राकेश कुमार, सुब्रत सीत, एन. अरुण विष्णुकुमार, इंद्रजित राय और एस. सुराज शामिल थे। अन्य विभागों के अधिकारियों द्वारा उपलब्ध करायी गयी बहुमूल्य सामग्री अत्यंत प्रशंसनीय है।

रिपोर्ट में उठाए गए बहुत से मुद्दे अभी भी उभरकर सामने आ रहे हैं तथा उन मुद्दों के स्थिर होने में अभी कुछ और समय लगेगा। युवा अर्थशास्त्रियों के जिस समूह ने एक सूक्ष्म संतुलन स्थापित करने की चुनौती स्वीकार की है, उसने उत्साह, दृढ़ता और निष्कपटता के साथ यह काम किया है। मैं उन अधिकारियों के प्रयासों की भूरि-भूरि प्रशंसा करता हूँ।

सुबीर गोकर्ण
उप गवर्नर

जुलाई 1, 2010

विषयवस्तु

प्राक्कथन

पृष्ठ संख्या

1. रिपोर्ट की विषय-वस्तु 1-6

2. संकट की उत्पत्ति और उसका स्वरूप 7-58

संकट के लिए कारण 8

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में वित्तीय संकट 27

हाल का संकट पूर्व के संकटों से कैसे भिन्न है 47

निष्कर्षात्मक टिप्पणियां 57

3. संकट का प्रादुर्भाव 59-125

वित्तीय बाजारों पर प्रभाव 60

वित्तीय प्रणाली पर प्रभाव 78

बाह्य क्षेत्र पर प्रभाव 87

वास्तविक अर्थव्यवस्था पर प्रभाव 106

निष्कर्षात्मक टिप्पणियां 123

4. संकट के प्रति अंतरराष्ट्रीय अनुक्रियाएं 126-190

वित्तीय संकट के दौरान नीतिगत अनुक्रियाएं : ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य 127

मौद्रिक नीतिगत अनुक्रियाएं 132

वित्तीय क्षेत्र को राजकोषीय सहायता 143

प्रति-चक्रीय राजकोषीय नीति : कीन्स के उपाय 149

राजकोषीय और मौद्रिक नीति का समन्वय 160

बहुदेशीय संस्थाओं की अनुक्रिया 163

वित्तीय क्षेत्र की नीतियां 166

निष्कर्षात्मक टिप्पणियां 188

5. भारत पर संकट का प्रभाव और नीतिगत उपाय: वित्तीय क्षेत्र 191-241

वैश्विक एकीकरण के माध्यम 192

वित्तीय बाजारों पर वैश्विक संकट का प्रभाव 197

बैंकिंग क्षेत्र, म्यूचुअल फंड और गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियाँ 218

नीतिगत उपाय 233

निष्कर्षात्मक टिप्पणियां 239

(जारी...)

पृष्ठ संख्या

6. संकट का प्रभाव और भारत में नीतिगत अनुक्रिया : संपदा क्षेत्र 242-292

वैश्विक आघात का संपदा क्षेत्र में संचरण 242

व्यापार सरणी के माध्यम से भारत पर प्रभाव 248

वित्तीय सरणी के माध्यम से भारत पर प्रभाव 270

बचत निवेश और वृद्धि पर प्रभाव 276

निष्कर्षात्मक टिप्पणियां 289

7. संकट से प्राप्त सबक और भावी चुनौतियां 293-336

केंद्रीय बैंकों के लिए सबक 296

वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण के लिए सबक 302

अन्तरराष्ट्रीय नीति समन्वयन 311

अन्तरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं की भूमिका 312

वैश्विक असंतुलन और समष्टि-आर्थिक प्रबंधन 314

राजकोषीय नीति के लिए सबक 315

साख-श्रेणी-निर्धारण एजेंसियों की भूमिका 316

वित्तीय और संपदा क्षेत्रों के आकार में संतुलन 317

भारत सहित उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए सबक 317

नीति निर्माताओं के लिए प्रमुख चुनौतियाँ 327

निष्कर्षात्मक टिप्पणियाँ 333

चुने हुए संदर्भ ..... I-XXIV

(जारी...)

बॉक्स मदों की सूची

बॉक्स संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
II.1	उत्पादन से वितरण का मॉडल	17
II.2	क्रेडिट रेटिंग एजेंसियाँ (सीआरए) : वरदान या अभिशाप ?	20
II.3	छाया बैंकिंग की संकल्पना	23
II.4	महान मंदी	31
II.5	पूर्वी एशियाई संकट	34
II.6	महान मंदी और भारत	48
II.7	ग्रीस में संकट की उत्पत्ति	55
III.1	घरेलू धन-संपदा पर गिरती परिसंपत्ति कीमतों का प्रभाव	77
III.2	क्यों एशियाई निर्यातों पर सबसे बुरा प्रभाव पड़ा ?	91
III.3	कुल माँग पर प्रभाव	108
III.4	वित्तीय संकट के संक्रमण के माध्यम : वित्तीय और वास्तविक संबद्धताएँ	117
III.5	एशिया पर वैश्विक संकट का प्रभाव	120
III.6	तेजी और मंदी की अवधि के दौरान श्रमिक उत्पादकता का विश्लेषण	121
IV.1	अंतिम ऋणदाता	128
IV.2	महामंदी और हाल के संकट के दौरान नीतिगत अनुक्रियाएं	131
IV.3	मात्रात्मक सुधार और केंद्रीय बैंक का तुलनपत्र	138
IV.4	जमाराशि की गारंटी से संबंधित उपाय	145
IV.5	प्रति-चक्रीय उपायों के रूप में विवेकाधीन राजकोषीय नीति	150
IV.6	हाल के संकट में राजकोषीय नीति की सार्थकता	151
IV.7	राजकोषीय नीति की प्रभावशीलता के लिए कुछ अपेक्षाएं	152
IV.8	राजकोषीय प्रवर्धक के निर्धारक	157
IV.9	जी-20 कार्यदल 3 : आईएमएफ में सुधार	164
IV.10	वित्तीय सुधार के संबंध में जी-30 की रिपोर्ट : वित्तीय स्थिरता के लिए ढाँचा	167
IV.11	सुदृढ़ विनियमन को बढ़ाने और पारदर्शिता को मजबूत करने से संबंधित जी-20 कार्यदल 1 की रिपोर्ट : प्रमुख अनुशंसाएं	169
IV.12	टर्नर समीक्षा : प्रमुख अनुशंसाएं	171
IV.13	यूरोपीय संघ में वित्तीय पर्यवेक्षण से संबंधित उच्च-स्तरीय समूह की अनुशंसाएं	172

(जारी...)

बॉक्स संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
IV.14	अंतरराष्ट्रीय मौद्रिक और वित्तीय प्रणाली के सुधारों पर संयुक्त राष्ट्र महासभा की अध्यक्षता में विशेषज्ञों के आयोग की रिपोर्ट (अध्यक्षता : जोसेफ ई स्टिगलिट्ज)	175
IV.15	जी-20 कार्यदल 2 : अंतरराष्ट्रीय सहयोग को पुन: प्रबलित करना और वित्तीय बाज़ारों में अखंडता को बढ़ावा देना	176
IV.16	अमरीकी प्रशासन की वित्तीय क्षेत्र की योजना	178
IV.17	बासेल II ढाँचे में सुधार	180
IV.18	एफएएसबी और आईएएसबी दृष्टिकोण	181
IV.19	वित्तीय विनियमन के दायरे को बढ़ाना	184
V.1	वित्तीय खुलापन एवं आर्थिक संवृद्धि	194
V.2	विदेशी मुद्रा चलनिधि बढ़ाने के लिए नीतिगत उपाय	201
V.3	प्रमुख वैश्विक घटनाएँ और भारतीय शेयर बाजारों की प्रतिक्रिया	214
V.4	विनियामक उपाय	223
V.5	मौद्रिक नीति का तुलनपत्र संबंधी प्रभाव	224
V.6	एनबीएफसी द्वारा सामना किये गये वित्तीय दबाव पर ध्यान देने के लिए किये गये नीतिगत उपाय	229
V.7	वैश्विक वित्तीय संकट की पृष्ठभूमि में राजकोषीय नीति प्रतिक्रिया	235
V.8	मौद्रिक नीति संबंधी उपाय	238
VI.1	उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) की तुलना में भारत में संभाव्य वृद्धि की हानि	247
VI.2	निर्यात और देशी वृद्धि संबंध : वृद्धि लेखांकन दृष्टिकोण	250
VI.3	विदेश व्यापार का ग्रैविटी मॉडल	255
VI.4	भारत के इंजीनियरी सामान का निर्यात	256
VI.5	वस्तु मूल्य का आस्ति कीमतों, निवेश, व्यापार और आर्थिक कार्यकलाप पर प्रभाव	262
VI.6	वैश्विक संकट और सॉफ्टवेयर निर्यात पर इसका प्रभाव	269
VI.7	भारत में विदेशी बचत और निवेश	271
VI.8	वैश्विक संकट और भारत में कारपोरेटों का कार्यसंपादन	286

(जारी...)

चार्ट की सूची

चार्ट संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
II.1	वैश्विक असंतुलन : 1990-2009	11
II.2	अमेरिकी वास्तविक ब्याज दर और प्रभावी फेड निधि दर	14
II.3	संरचित वित्त उत्पाद : मात्र्योष्का 'रूसी गुड़िया' संरचना	19
II.4	संकट की घटनाओं के दौरान विकासशील देशों को पूँजी प्रवाह (जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)	53
II.5	संकट की घटनाओं के दौरान ईएमई व्यापार परिमाण में विद्यमान प्रवृत्तियाँ (प्रतिशत में परिवर्तन)	53
II.6	1930 के बाद के दशक से अमेरिका की जीडीपी संवृद्धि (वार्षिक प्रतिशत परिवर्तन)	54
III.1	निधीयन नकदी और अंतर-बैंक स्प्रेड	62
III.2	ऋण बाजार पर प्रभाव	63
III.3	शेयर बाजारों में उतार-चढ़ाव	67
III.4	कारपोरेट बांड बाजार पर प्रभाव	69
III.5	सरकारी बांड आय में उतार-चढ़ाव	71
III.6	विनिमय दरों में उतार-चढ़ाव	73
III.7	पण्य कीमतों में उतार-चढ़ाव	75
III.8	आवास कीमतों में उतार-चढ़ाव	78
III.9	बैंकों के लिए हानि प्रावधान के कार्यान्वित और प्रत्याशित अवलेखन	79
III.10	अमेरिका में बैंक विफलताएँ	80
III.11	बीमा क्षेत्र ऋण चूक स्वैप स्प्रेड	86
III.12	अंतरराष्ट्रीय व्यापार - प्रवृत्तियाँ और महत्व	87
III.13	मासिक व्यापार निष्पादन	89
III.14	क्षेत्र-वार व्यापार निष्पादन	90
III.15	विप्रेषण बहिर्वाह	93
III.16	उभरते और विकासशील देशों को निवल पूँजी प्रवाह	98
III.17	आर्थिक संवृद्धि पर संकट का प्रभाव	109
III.18	जीडीपी संवृद्धि में समकालिक पतन	109

(जारी...)

चार्ट संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
III.19	उपभोक्ता कीमत वृद्धि - चुनिंदा देश	111
III.20	यूरो क्षेत्र में वास्तविक जीडीपी	113
III.21	औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि (एसए)	115
IV.1	मौद्रिक नीतिगत दरें : टेलर नियम से विचलन	135
IV.2	सितम्बर 2008 से मार्च 2009 के दौरान नीतिगत दरों में कटौती	140
IV.3	वर्ष 2008-10 के दौरान ओईसीडी देशों में राजकोषीय पैकेजों (राजस्व और खर्च उपायों) का आकार (2008 के जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)	153
IV.4	ओईसीडी देशों में विवेकाधीन राजकोषीय प्रोत्साहन और स्वचालित स्थिरीकारी	154
IV.5	जी-20 देशों में विवेकाधीन राजकोषीय प्रोत्साहन और उत्पादन अंतराल	154
IV.6	जी-20 देशों में विवेकाधीन राजकोषीय प्रोत्साहन और प्रारंभिक ऋण स्थिति	154
V.1	देशी अर्थव्यवस्था पर वैश्विक आघातों की प्रमुख संचरण सारणियाँ	192
V.2	भारतीय अर्थव्यवस्था का बाह्य खुलापन	196
V.3	निर्यात, बैंक ऋण और पूँजी प्रवाह के साथ जीडीपी की चक्रीय समकालिकता (सहसंबंध गुणांक)	196
V.4	विनिमय दर की प्रवृत्ति (यूएसडी-आइएनआर)	198
V.5	भारत के विदेशी मुद्रा बाजार में अस्थिरता और दर	200
V.6	भारतीय रुपये में उतार-चढ़ाव	200
V.7	विदेशी मुद्रा स्वाप सुविधा और यूएसडी-आइएनआर अस्थिरता	202
V.8	चलनिधि समायोजन सुविधा और मांग दर	203
V.9	मांग दर अस्थिरता	204
V.10	चलनिधि-स्थिति और मुद्रा बाजार दर	205
V.11	सीपी और सीडी निर्गम	206
V.12	मुद्रा बाजार स्प्रेड	207
V.13	सरकारी प्रतिभूति बाजार की गतिविधियाँ	208
V.14	2007-09 के दौरान बेंचमार्क आय में उतार-चढ़ाव (1 वर्ष, 5 वर्ष और 10 वर्ष)	209
V.15	शेयर बाजारों में अस्थिरता	215
V.16	क्षेत्रीय बैंक ऋण में वृद्धि की प्रवृत्ति	222

(जारी...)

चार्ट संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
V.17	ऋण-वृद्धि की प्रवृत्ति और आर्थिक कार्यकलाप	222
V.18	ब्याज दर में उतार-चढ़ाव	226
V.19	बीएसई सेंसेक्स और म्यूचुअल फंडों द्वारा निवल निवेश	227
V.20	वित्तीय दबाव संकेतक	232
V.21	जीडीपी वृद्धि में सरकारी उपभोग का आपेक्षिक योगदान	237
VI.1	जीडीपी वृद्धि की प्रवृत्ति	244
VI.2	भारत की व्यवसाय-चक्र समकालिकता (2005ति1 - 2009ति2)	245
VI.3	औद्योगिक क्षेत्र की समकालिकता	246
VI.4	निर्यात और बाह्य मांग	249
VI.5	आयात और औद्योगिक कार्यकलाप	260
VI.6	भारत का पण्य आयात और वैश्विक कीमतें	261
VI.7	वैश्विक पण्य मूल्य-चक्र	261
VI.8	तेल और खाद्यान्न की कीमतें	264
VI.9	व्यापार संबद्ध सेवाएँ	266
VI.10	धन-प्रेषण : प्रवृत्ति और अंतरराष्ट्रीय तेल मूल्यों के साथ संबंध	268
VI.11	पूँजी प्रवाह और देशी पूँजी निर्माण	271
VI.12	ईसीबी संवितरण एवं पूँजीगत वस्तुओं का आयात	273
VI.13	वित्तीय सरणी के संकेतक	274
VI.14	मांग-पक्ष घटकों में त्रैमासिक वृद्धि की प्रवृत्ति	280
VI.15	चक्रीय आइआइपी, निर्यात और एफडीआई की प्रवृत्ति	283
VI.16	सेवाओं का आपेक्षिक अंशदान	288

(जारी...)

सारणियों की सूची

सारणी संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
2.1	अमेरिका के समष्टि मानदंड	10
2.2	चालू खाता शेष	10
2.3	चालू खाता शेष (जीडीपी का प्रतिशत)	11
2.4	बचत और निवेश	12
2.5	वस्तुओं और सेवाओं के निर्यात	13
2.6	बंधक उद्भव	16
2.7	ऋण कर्ज दायित्वों (सीडीओ) का वैश्विक निर्गम	19
2.8	सब-प्राइम एक्सपोज़र और हानियाँ	22
2.9	वित्तीय संकट का आपतन	35
2.10	वित्तीय संकट की आवृत्ति :1973-2007	36
2.11	प्रमुख वित्तीय संकट : 1873-2007	36
2.12	वैश्विक संकट जो अमेरिका में उत्पन्न हुए	47
2.13	वित्तीय संकटों की अवधि और गहराई	49
2.14	वैश्विक असंतुलनों की पिछली घटनाएँ	49
2.15	संपूर्ण संकट : स्थूल संकेतक	50
2.16	विभिन्न देशों में संकट : प्रारंभिक स्थितियाँ	51
2.17	अमेरिका : महान मंदी की तुलना में वर्तमान संकट	54
3.1	अंतर-बैंक स्प्रेडों में उतार-चढ़ाव:	61
3.2	चयनित एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में निजी घरेलू ऋण की वृद्धि	64
3.3	ऋण बाजार स्प्रेड	64
3.4	उभरते बाजारों के ईक्विटी निर्गम	66
3.5	शेयर बाजार परिवर्तन - चयनित देश	66
3.6	उभरती ईक्विटी कीमतों का कार्य-निष्पादन	66
3.7	विभिन्न देशों में शेयर बाजार पूँजीकरण	67
3.8	उभरते बाजारों के बांड निर्गम -चयनित देश	69
3.9	उभरते बाजारों के बांड स्प्रेड - चयनित देश	70

(जारी...)

सारणी संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
3.10	उभरते यूरोप में सरकारी बाह्य उधार	71
3.11	विनिमय दरें : अमेरिकी डॉलर की तुलना में मुद्राओं की मूल्यवृद्धि (+)/मूल्यह्रास (-)	73
3.12	चयनित उभरते देशों की वास्तविक प्रभावी विनिमय दरों का उतार-चढ़ाव	74
3.13	वैश्विक पण्य कीमतों में उतार-चढ़ाव	76
3.14	कुल औसत परिसंपत्तियों के प्रतिशत के रूप में प्रमुख बैंकों की लाभप्रदता	80
3.15	बैंकिंग संकेतक - चयनित देश	81
3.16	लेहमैन ब्रदर्स के प्रति एक्सपोज़र से युक्त चयनित एशियाई बैंक	82
3.17	बैंक अनुपात	83
3.18	बैंकिंग संकेतक - चयनित देश	83
3.19	उभरते बाजारों की बचाव निधियाँ	86
3.20	व्यापार का खुलापन - चयनित देश	88
3.21	विश्व व्यापार के परिमाण में विकास	88
3.22	चयनित एशियाई देशों में व्यापार निष्पादन	92
3.23	पण्य और वाणिज्य सेवाओं के वैश्विक निर्यात	92
3.24	विकासशील देशों को विप्रेषण प्रवाह, 2002-09	94
3.25	2009 में प्रमुख विप्रेषण प्राप्तकर्ता विकासशील और संक्रमणशील अर्थव्यवस्थाएँ	94
3.26	विभिन्न देशों के व्यापार शेष और चालू खाता शेष में उतार-चढ़ाव	95
3.27	उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में पूँजी प्रवाह : विभिन्न घटनाओं की तुलना	96
3.28	क्षेत्रवार उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) को निवल पूँजी अंतर्वाह	97
3.29	विकासशील देशों को निवल बाह्य पूँजी प्रवाह	99
3.30	प्रमुख उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से बहिर्वाह	100
3.31	विभिन्न देशों में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (एफडीआइ) प्रवाहों का उतार-चढ़ाव	101
3.32	विभिन्न देशों के संविभाग प्रवाहों में उतार-चढ़ाव	102
3.33	अल्पावधि व्यापार ऋण के संबंध में विभिन्न देशों की तुलना	103
3.34	परिपक्वता के लिए एक वर्ष तक शेष अंतरराष्ट्रीय अल्पावधि देयताएँ	105
3.35	अंतरराष्ट्रीय आरक्षित निधि संचलन	106
3.36	वास्तविक जीडीपी में वृद्धि	107

(जारी...)

सारणी संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
3.37	जीडीपी में तिमाही वृद्धि	107
3.38	2009 के लिए जीडीपी वृद्धि के अनुमानों की तुलना	109
3.39	सकल बचत और निवेश	110
3.40	उपभोक्ता कीमत वृद्धि में विद्यमान प्रवृत्तियाँ	111
3.41	वास्तविक घरेलू माँग की संरचना (मौसमी तौर पर समायोजित)	112
3.42	यूरो क्षेत्र में आवासीय संपत्ति की कीमतें	114
3.43	सरकारी राजकोषीय शेष	116
3.44	वास्तविक जीडीपी वृद्धि, निवेश और निर्यात - चुनिंदा एशियाई अर्थव्यवस्थाएँ	118
3.45	बेरोजगारी की दरें	123
4.1	केंद्रीय बैंकों के परंपरागत और गैर-परंपरागत उपायों का वर्गीकरण	133
4.2	उन्नत देशों में नीतिगत दरों में कटौती	134
4.3	केंद्रीय बैंकों के हाल के चुनिंदा उपाय	135
4.4	केंद्रीय बैंकों द्वारा शुरू किये गये प्रमुख संकट निवारण हस्तक्षेप	137
4.5	उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंकों द्वारा चुनिंदा गैर-परंपरागत उपाय	139
4.6	चुनिंदा उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में कार्यान्वित उपाय (सितम्बर 2008 - मई 2009)	140
4.7	संकटकाल में हस्तक्षेप की प्रभावशीलता	141
4.8	3-महीने की लिबॉर-एक दिवसीय सूचकांक अदला-बदली स्प्रेड : चरम बिन्दु से गिरावट	142
4.9	जून 2009 को वित्तीय क्षेत्र को सहायता (2008 के जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)	147
4.10	विगत में चुनिंदा संकटों की राजकोषीय लागत (जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)	148
4.11	घोषणाओं की तुलना में वित्तीय क्षेत्र को की गई सहायता की उपयोगिता (2008 के जीडीपी के % के रूप में)	148
4.12	वर्ष 2008-10 में जी-20 देशों में विवेकाधीन उपायों का आकार	153
4.13	वर्ष 2008-10 के दौरान ओईसीडी देशों में राजकोषीय पैकेजों का संघटन (जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)	155
4.14	जी-20 प्रोत्साहन उपाय, 2008-10	156
4.15	ओईसीडी देशों में प्रवर्धक	158
4.16	जी-20 देश - विकास पर राजकोषीय विस्तार का प्रभाव	159

(जारी...)

सारणी संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
4.17	ऋण गतिकी और ऋण स्थिरीकारी प्राथमिक शेष	160
5.1	भारतीय अर्थव्यवस्था के खुलेपन के संकेतक	195
5.2	विदेशी मुद्रा बाजार में लेनदेन	199
5.3	भारतीय रुपये में उतार-चढ़ाव	199
5.4	मुद्रा बाजार खंडों में कार्यकलाप	205
5.5	सरकारी प्रतिभूति बाजार में लेन देन	209
5.6	गैर-सरकारी पब्लिक लिमिटेड कंपनियों द्वारा नये पूँजी निर्गम	211
5.7	शेयर बाजारों का बाजार पूँजीकरण : क्षेत्रवार	212
5.8	उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में शेयर बाजारों का बाजार पूँजीकरण	212
5.9	भारतीय शेयर बाजारों की चुनिंदा देशों के साथ चक्रीय तुल्यकालिकता	213
5.10	भारत के शेयर बाजार का क्षेत्रीय और वैश्विक बाजारों के साथ एकीकरण	213
5.11	बीएसई और निफ्टी सूचकांकों की प्रवृत्ति	215
5.12	शेयर बाजार के संकेतक	216
5.13	एफआईआई प्रवाह और भारत के शेयर बाजार : कारण संबंध	217
5.14	वास्तविक शेयर प्रतिलाभ और औद्योगिक उत्पादन वृद्धि पेयरवाइज ग्रैंजर कॉजेलिटी टेस्ट	218
5.15	बैंक आकार और औसत परिचालन-कार्य	219
5.16	अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के तुलनपत्र की वृद्धि - बैंक समूहवार	220
5.17	ऋण-वृद्धि और वित्तीय कार्यसंपादन : वर्ष 2008-09	221
5.18	क्षेत्रीय बैंक ऋण में वृद्धि	222
5.19	म्युचुअल फंडों द्वारा संसाधन संग्रहण	227
5.20	म्युचुअल फंडों द्वारा क्षेत्रवार जुटाये गये निवल संसाधन	227
5.21	एनबीएफसी-डी का समेकित तुलनपत्र	228
5.22	एनबीएफसी-डी का एनपीए अनुपात	229
5.23	एनबीएफसी-डी का वित्तीय कार्यसंपादन	230
5.24	मासिक वित्तीय दबाव संकेतक	231
5.25	चलनिधि अंत:क्षेप/उपलब्धता सितंबर 2008 - सितंबर 2009 के दौरान	237
6.1	भारत में समग्र मांग की संरचना में बदलाव	242

(जारी...)

सारणी संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
6.2	भारत और विश्व अर्थव्यवस्था की वृद्धि के बीच सहसंबंध	244
6.3	उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) के साथ भारत की व्यवसाय-चक्र समकालिकता (जीडीपी वृद्धि)	245
6.4	उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) के साथ भारत की व्यवसाय-चक्र समकालिकता (पारिवारिक उपभोग)	245
6.5	विश्व व्यापार कार्यसंपादन	249
6.6	विश्व आय में भारत के पण्य निर्यात की लोच-अनुक्रिया	250
6.7	आर्थिक वृद्धि में उपभोग, निवेश और निर्यात का योगदान	251
6.8	भारत में निजी उपभोग के कुछ निर्धारक तत्व	251
6.9	भारत का व्यापार कार्यसंपादन	252
6.10	भारत के पण्य निर्यात की संरचना	253
6.11	वैश्विक संकट और भारत का निर्यात	254
6.12	भारत के निर्यात का भौगोलिक विविधीकरण	254
6.13	भारत के निर्यात की व्यापक दिशा पर आपेक्षिक कीमत एवं वास्तविक मांग का प्रभाव (दीर्घावधि सह-एकीकरण गुणांक)	255
6.14	प्रमुख निर्यात उद्योंगों के प्रधान लक्षण	257
6.15	फर्म-स्तरीय निर्यात उन्मुखता	257
6.16	वैश्विक संकट और भारत का आयात	258
6.17	भारत के आयात की पण्य संरचना	258
6.18	भारत के आयात का भौगोलिक विविधीकरण	259
6.19	उत्पादन की आयात तीव्रता : फर्म-स्तरीय साक्ष्य	260
6.20	अंतरराष्ट्रीय तेल मूल्यों का विकसित एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के निर्यात-मूल्य में अंतरण : ग्रैंजर कारणत्व विश्लेषण	263
6.21	भारत के आयात मूल्य का वैश्विक एवं क्षेत्रीय निर्यात मूल्यों से सहसंबंध	263
6.22	भारत के आयात मूल्य सूचकांक का देशी मूल्यों (डब्लूपीआइ) के साथ सहसंबंध	263
6.23	तेल आयात परिमाण वृद्धि	264
6.24	भारत का खाद्यान्न आयात और निर्यात	265
6.25	उपभोग की अपेक्षाओं के लिए आयात पर भारत की निर्भरता	265

(जारी...)

सारणी संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
6.26	वर्ष 2008 में शीर्ष सेवा निर्यातकों के बीच भारत की तुलनात्मक स्थिति	267
6.27	सेवा निर्यात और आयात में वृद्धि (अमरीकी डालर)	267
6.28	पर्यटन क्षेत्र से भारत की विदेशी मुद्रा आय	267
6.29	सॉफ्टवेयर सेवा-निर्यात	268
6.30	भारत का सॉफ्टवेयर सेवा निर्यात	268
6.31	भारत : निवल पूँजी प्रवाह	272
6.32	भारत में विदेशी निवेश	272
6.33	आरक्षित निधियों में परिवर्तन	276
6.34	सकल घरेलू बचत में अंशदान	277
6.35	वर्तमान कीमतों पर सकल देशी पूँजी निर्माण	278
6.36	उपादान लागत पर जीडीपी में त्रैमासिक वृद्धि	279
6.37	समग्र मांग के घटकों के साथ जीडीपी का चक्रीय सहगमन (सहसंबंध गुणांक)	280
6.38	जीडीपी के मांग-घटकों में वृद्धि (वर्ष 2004-05 की कीमतों पर)	281
6.39	जीडीपी में क्षेत्रीय वृद्धि (वर्ष 2004-05 की कीमतों पर)	282
6.40	उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में औद्योगिक वृद्धि	283
6.41	उद्योग के व्यापक क्षेत्रों का कार्यसंपादन	284
6.42	17 द्विअंकीय विनिर्माण उद्योगों का वृद्धि-कार्यसंपादन	285
6.43	निर्यातोन्मुख विनिर्माण उद्योगों में औसत वृद्धि (आइआइपी पर आधारित)	285
6.44	उपयोग आधारित उद्योगों की मासिक वृद्धि	286
6.45	आधारभूत संरचना उद्योगों के लक्ष्य और उपलब्धि के बीच अंतराल	287
6.46	भिन्न-भिन्न स्तरों पर सेवा-क्षेत्र की वृद्धि	289

संक्षेपाक्षर

एबीसीपी	:	आस्ति समर्थित वाणिज्यिक पत्र
एबीएस	:	आस्ति समर्थित प्रतिभूतियां
एसीएमए	:	ऑटोमोबाइल कंपोनेंट मैनुफैक्चरिंग एशोसिएसन ऑफ इंडिया
एडी	:	प्राधिकृत व्यापारी
एडीएफ	:	आगमेंटेड डिकी फुलर
एआरएम	:	समायोज्य दर बंधक
बीसीबीएस	:	बैंकिंग पर्यवेक्षण संबंधी बासल समिति
बीआईएस	:	अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक
बीओपी	:	भुगतान संतुलन
बीपीओ	:	बिज़नेस प्रोसेस आउटसोर्सिंग
सीएडी	:	चालू खाता घाटा
सीबीआरजी	:	सीमापारीय बैंक समाधान समूह
सीबीओ	:	कांग्रेसनल बजट कार्यालय
सीडीओ	:	संपार्श्विकीकृत ऋण दायित्व
सीडीएस	:	ऋण चूक स्वैप
सीईएसआर	:	कमिटी ऑफ यूरोपियन सिक्योरिटीज़ रेगुलेटर्स
सीएफपीए	:	उपभोक्ता वित्तीय सुरक्षा एजेंसी
सीएमबीएस	:	वाणिज्यिक बंधक समर्थित प्रतिभूतियां
सीपी	:	वाणिज्यिक पत्र
सीपीआई	:	उपभोक्ता मूल्य सूचकांक
सीपीएफएफ	:	वाणिज्यिक पत्र निधीयन सुविधा
सीपीएसएस	:	भुगतान और निपटान प्रणाली समिति
सीआरए	:	ऋण रेटिंग एजेंसियां
सीआरएआर	:	जोखिम भारित आस्तियों की तुलना में पूँजी अनुपात
सीपीआर	:	आरक्षित नकदी निधि अनुपात
सीवीडी	:	प्रतिकारी शुल्क
ईसी	:	यूरोपीय आयोग
ईसीबी	:	यूरोपीय केंद्रीय बैंक
ईएफएसी	:	आर्थिक और वित्तीय मामला समिति
ईएमई	:	उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएं
ईएमपीआई	:	विनिमय बाजार दवाब सूचकांक
ईएसएफ	:	बहिर्जात आघात सुविधा
ईआरएम	:	विनिमय दर व्यवस्था
ईएसएफएस	:	वित्तीय पर्यवेक्षकों की यूरोपीय प्रणाली
ईएसआरसी	:	यूरोपीय प्रणालीगत जोखिम परिषद
एफएएसबी	:	वित्तीय लेखांकन मानक बोर्ड
एफबीटी	:	अनुषंगी लाभ कर
एफसीएल	:	लचीली ऋण व्यवस्था
एफडीआई	:	विदेशी प्रत्यक्ष निवेश
एफडीआईसी	:	फेडरल डिपाज़िट इश्योरेंस कार्पोरेशन
एफएचसी	:	वित्तीय होल्डिंग कंपनी
एफएचएलएमसी	:	फेडरल होम लोन मोर्टगेज कार्पोरेशन
एफआईआई	:	विदेशी संस्थागत निवेशक
एफआईपीबी	:	विदेशी निवेश संवर्धन बोर्ड
एफएसआई	:	वित्तीय दबाव संकेतक
एफएनएमए	:	फेडरल नेशनल मोर्टगेज एशोसिएशन
एफएसए	:	वित्तीय सेवा प्राधिकारी
एफएससीएस	:	वित्तीय सेवा क्षतिपूर्ति योजना
एफटीसी	:	संघीय व्यापार आयोग
जीएएपी	:	सामान्यत: स्वीकृत लेखांकन सिद्धांत
जीडीपी	:	सकल देशी उत्पाद
जीईसीसी	:	वैश्विक आर्थिक समन्वय परिषद
जीएफडी	:	सकल राजकोषीय घाटा
जीएफएसआर	:	वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट

जीआईएमएफ	:	वैश्विक समन्वित मौद्रिक और राजकोषीय
जीपीआरएफ	:	वैश्विक खाद्य संकट समाधान कार्यक्रम
जीएसडीपी	:	सकल राज्य देशी उत्पाद
डीटीए	:	देशी प्रशुल्क क्षेत्र
एचएफसी	:	आावास वित्त कंपनियां
एचपी	:	होड्रिक -प्रेसकॉट
एचकेएमए	:	हांगकांग मौद्रिक प्राधिकारी
आईएएसबी	:	अंतरराष्ट्रीय लेखांकन मानक बोर्ड
आईएफसी	:	अंतरराष्ट्रीय वित्त निगम
आईएफआरएस	:	अंतरराष्ट्रीय वित्तीय रिपोर्टिंग मानक
आईआईएफसीएल	:	इंडिया इंफ्रास्ट्रक्चर वित्त कंपनी लिमिटेड
आईएनएफआरए	:	इंफ्रास्ट्रक्चर रिकवरी और आस्तियां
आईएमएफ	:	अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष
आईएमएफसी	:	अंतरराष्ट्रीय मौद्रिक और वित्तीय समिति
आईओएससीओ	:	प्रतिभूति आयोगों का अंतरराष्ट्रीय संगठन
आईपीए	:	जारीकर्ता और अदाकर्ता एजेंट
आईपीओ	:	आरंभिक सार्वजनिक प्रस्ताव
आईआरबी	:	आंतरिक रेटिंग आधारित
आईटी	:	सूचना प्रौद्योगिकी
आईटीई	:	अंतर समूह लेनदेन और एक्सपोज़र
आईटीईएस	:	सूचना प्रौद्योगिकी समर्थित सेवाएं
एलएएफ	:	चलनिधि समायोजन सुविधा
एलसीबीजी	:	बड़े और जटिल बैंकिंग समूह
एलसीडी	:	लिक्विड क्रिस्टल डिस्प्ले
एलआईबीओआर	:	लंदन अंतर बैंक प्रस्ताव दर
एलओएलआर	:	अंतिम उधारदाता
एमएएस	:	सिंगापुर मौद्रिक प्राधिकारी
एमबीएस	:	बंधक समर्थित प्रतिभूतियां
एमएफआई	:	माइक्रो फाइनैंस संस्थाएं
एमआईबीओआर	:	मुंबई अंतर -बैंक प्रस्ताव दर
एमआईजीए	:	बहुपक्षीय निवेश गारंटी एजेंसी
एमएसएमई	:	अति लघु, लघु और मझोले उद्यम
एमएसएस	:	बाजार स्थिरीकरण योजना
एमटीएम	:	बाजार दर के आधार पर
एमॲण्डए	:	विलय और अधिग्रहण
एनएबी	:	उधार लेने की नई व्यवस्था
एनबीएफसी	:	गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियां
एनबीएस	:	राष्ट्रीय बैंक पर्यवेक्षक
एनसीबीपी	:	गैर रियायती उधार नीति
एनडीए	:	निवल देशी आस्तियां
एनडीटीएल	:	निवल मांग और मीयादी देयताएं
एनएफए	:	निवल विदेशी आस्तियां
एनएफसी	:	खाद्येतर ऋण
एनएमएफ	:	म्यूचुअल फंडों द्वारा निवेश
एनपीएल	:	अनर्जक ऋण
एनआरएसआरओ	:	राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त प्रतिभूति रेटिंग संगठन
ओबीएसवी	:	तुलनपत्रेतर संस्थाएँ
ओसीआर	:	सामान्य पूँजी संसाधन
ओईसीडी	:	आर्थिक सहयोग और विकास संगठन
ओआईएस	:	एक दिवसीय सूचकांकित स्वैप
ओएलएस	:	ऑर्डिनरी लीस्ट स्क्वेयर
ओएमओ	:	खुला बाजार परिचालन
ओएनआई	:	राष्ट्रीय बीमा कार्यालय
ओटीसी	:	ओवर द काउंटर
ओटीडी	:	ओरिजिनेट टु डिस्ट्रीब्यूट
ओटीएच	:	ओरिजिनेट टु होल्ड
ओटीएस	:	मितव्यय पर्यवेक्षण कार्यालय
ओबीएसई	:	तुलनपत्रेतर संस्थाएं
पीडीआईसी	:	फिलीपाइन डिपॉज़िट इंश्योरेंस कॉर्पोरेशन

पीडी	:	प्राथमिक व्यापारी
पीपीएसी	:	पेट्रोलियम आयोजना विश्लेषण प्रकोष्ठ
पीपीपी	:	सार्वजनिक निजी क्षेत्र सहभागिता
पीआरजीएफ	:	निर्धनता न्यूनीकरण और वृद्धि सुविधा
पीवीएआर	:	पैनल वेक्टर ऑटो रिग्रेशन
आरईईआर	:	वास्तविक प्रभावी विनिमय दर
आरएमबीएस	:	निवासी बंधक समर्थित प्रतिभूतियां
आरडब्ल्यूए	:	जोखिम भारित आस्तियां
एसईबीआई	:	भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड
एसईसी	:	प्रतिभूति और विनिमय आयोग
एसईपी	:	पर्यवेक्षी संवर्धन कार्यक्रम
एसईज़ेड़	:	विशेष आर्थिक क्षेत्र
एसएचजी	:	स्वयं सहायता समूह
सिडबी	:	भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक
एसडीएल	:	राज्य विकास ऋण
एसआइवी	:	संरचित निवेश संस्थाएं
एसएलआर	:	सांविधिक चलनिधि अनुपात
एसएमई	:	लघु और मझोले उद्यम
एसएमओ	:	विशेष बाजार परिचालन
एसएसएमबी	:	मानक निर्धारक और निगरानी निकाय
एसएसआई	:	लघु उद्योग
एसटीएआर	:	चुराई गई आस्तियों की बरामदगी
एसॲण्डएल	:	बचत और ऋण संघ
टीएएफ	:	मीयादी नीलामी सुविधा
टीएआरपी	:	समस्याग्रस्त आस्ति राहत कार्यक्रम
टीएफएफपी	:	व्यापार संवर्धन कार्यक्रम
टीयूएफ	:	प्रौद्योगिकी उन्नयन निधि
यूएनडब्ल्यूटीओ	:	संयुक्त राष्ट्र विश्व पर्यटन संगठन
वीएआर	:	वेक्टर ऑटोरिग्रेसन
डब्ल्यूएडीआर	:	भारित औसत छूट दर
डब्यूईओ	:	वैश्विक आर्थिक संभावना
डब्ल्यूटीओ	:	विश्व व्यापार संगठन

यह रिपोर्ट इंटरनेट के माध्यम से www.rbi.org.in यूआरएल पर भी देखी जा सकती है।

1 रिपोर्ट की विषय-वस्तु

संकट की उत्पत्ति और उसका स्वरूप

1.1 विश्व की अर्थव्यवस्था ने निम्न मुद्रास्फीति से युक्त, केवल साधारण उतार-चढ़ाव के साथ संवृद्धि की निरंतरता की अवधि को देखा जो एक ऐसा परिदृश्य है जिसे हाल के वैश्विक संकट के आविर्भाव तक आम तौर पर 'असाधारण मंदन' कहा गया। समष्टि-आर्थिक स्थिरता की इस लंबी अवधि का श्रेय निश्चित रूप से कुशलतापूर्वक कार्यरत बाजारों और वैश्वीकरण के लाभों को दिया गया। तथापि समृद्धि के इन समग्र संकेतों के भीतर अत्यंत जटिल वित्तीय प्रणालियाँ एवं प्राधिकारियों द्वारा अनुसरण की गई 'मृदु उपेक्षापूर्ण' नीति के कारण इन वित्तीय प्रणालियों द्वारा अपरिहार्य बनाए गए प्रणालीगत जोखिम छिपे हुए थे। इसके अतिरिक्त, विश्व की अर्थव्यवस्था में कुछ संरचनागत असंतुलन भी विकसित हुए थे जो विभिन्न राष्ट्रों में बचत और निवेश तथा उत्पादन और उपभोग के बीच असंतुलनें के रूप में थे जो अंशत: विस्तृत हो रहे चालू खाता असंतुलनों में प्रकट हुए एवं अन्यों में आधिक्य, विनिमय दरों में असमरेखण और परिसंपत्तियों की तेजी से बढ़ती हुई कीमतों के रूप में प्रतिबिंबित हुए। इन गतिविधियों को किसी न किसी समय खुल जाना था तथा जब इनका खुलना प्रारंभ हुआ, तब वे 1930 के बाद के दशक की 'महान मंदी' के बाद अब तक के सर्वाधिक बुरे वैश्विक वित्तीय संकट के रूप में प्रकट हुईं।

1.2 जिस गति और सघनता के साथ वर्ष 2007 के बीच अमेरिका में सब-प्राइम संकट उत्पन्न हुआ, वह एक वैश्विक वित्तीय संकट के रूप में परिवर्तित हुआ और तत्पश्चात् उसने एक वैश्विक आर्थिक संकट का रूप धारण किया और अपनी ओर सबका ध्यान आकर्षित किया। उत्तरवर्ती विश्लेषण में संकट के आसन्न कारणों के रूप में अभिलेख के अंतर्गत अनेक व्यष्टि और समष्टि-आर्थिक तत्वों - एक ओर सुलभ मुद्रा, वित्तीय नवोन्मेषों और वैश्विक असंतुलनों की भूमिका से लेकर दूसरी ओर राष्ट्रीय और वैश्विक (दोनों) स्तरों पर विनियामक दोषों तक - को सूचीबद्ध किया गया है। अत्यधिक लीवरेज संकट का आलंब था। घरेलू क्षेत्र एवं वित्तीय मध्यवर्ती संस्थाओं (दोनों) द्वारा जोखिमों के न्यून मूल्यांकन के साथ संबद्ध सुलभ ऋण ने स्थावर संपदा, ऊर्जा और अन्य क्षेत्रों में कीमतों में अस्थायी वृद्धि की तथा इन तीनों क्षेत्रों को अव्यवस्थाओं का सामना करना पड़ा। हाल के संकट ने तीव्र वित्तीय नवोन्मेषों की पृष्ठभूमि में वैश्विक विनियामक और पर्यवेक्षी संरचनाओं तथा परिमापों का पुनर्मूल्यांकन करने की आवश्यकता को अपरिहार्य बना दिया है। संकट के विभिन्न कारणों के विश्लेषण ने विभिन्न आर्थिक मतों की प्रासंगिकता के संबंध में एक पूरे नये वाद-विवाद को जन्म दिया है तथा उस आर्थिक सिद्धांत को चुनौती दी है जिसने बाजारों की स्वयं-सुधारक व्यवस्था को स्वीकार किया था। एक ऐसी धारणा भी है जो विभिन्न क्षेत्रों में अर्थव्यवस्थाओं द्वारा अनुसरण किये जाने वाले नीतिगत ढांचों और संवृद्धि संबंधी कार्यनीतियों को जिम्मेदार ठहराती है।

1.3 हाल के संकट की अतीत के संकटों के विभिन्न वृत्तांतों के साथ तुलना करने से विदित होता है कि अंतर्निहित कारणों के संबंध में उनमें कुछ समानता पाई जा सकती है। अतीत की ही तरह हाल के संकट के मुख्य कारण प्रणालीगत सुभेद्यताओं और असंतुलनों के साथ जोड़े गए हैं जो वैश्विक अर्थव्यवस्था के अपर्याप्त कार्यचालन के लिए सहायक सिद्ध हुए हैं। संकट के लिए मार्ग प्रशस्त करते हुए ये कारक वित्तीय विनियमन, पर्यवेक्षण और वित्तीय क्षेत्र की निगरानी तथा अपर्याप्त चौकसी और पूर्व चेतावनी में निहित प्रमुख दुर्बलताओं के कारण अधिक स्पष्ट हुए हैं। बाजार के स्व-विनियमन पर अधिक निर्भरता, विरूपित प्रोत्साहन संरचना सहित पारदर्शिता के समग्र अभाव के साथ ही इन्होंने अत्यधिक जोखिम-ग्रहण, असहनीय उच्च आस्ति-कीमतों, गैर-जिम्मेदाराना लीवरेजिंग तथा उपभोग के उच्च स्तरों को प्रेरित किया जिन्हें सुलभ ऋण और बढ़ी हुई आस्ति-कीमतों ने और तीव्र कर दिया। तथापि प्रभाव के तौर पर ऐसा प्रतीत होता है कि हाल का संकट पिछले कई अन्य संकटों की तुलना में अधिक व्यापक है तथा ऐसा माना जाता है कि यह 1930 के बाद के दशक की भारी मंदी के सबसे नजदीक है। उत्पादन हानि के अनुमान इस संकट को अतीत के अधिकांश संकटों से ऊपर रखते हैं क्योंकि अधिकेंद्र से परिधि तक संकट के तेज संक्रमण के परिणामस्वरूप अधिकांश विकसित और उभरती बाजार व्यवस्था को गिरावट की स्थिति का सामना करना पड़ा। वास्तव में वैश्वीकरण और अंतरराष्ट्रीय वित्त की वे ही शक्तियाँ, जिन्होंने पिछले दशकों में अपेक्षाकृत गरीब देशों की गतिविधियों को प्रेरित किया था, अपने साथ संसर्ग के बीज भी ले आईं जिसके परिणामस्वरूप आघातों का अंतरराष्ट्रीय संक्रमण हुआ।

1.4 परिणामत: तथाकथित 'डीकपलिंग सिद्धांत' जो हाल के संकट के ठीक पहले पूरी तरह प्रचलित था, अधिकाधिक परस्पराश्रित विश्व में संदेह के घेरे में आ गया। अमेरिका में उत्पन्न हुआ संकट अन्य विकसित अर्थव्यवस्थाओं में तेजी से फैल गया तथा एक अगले चरण में, उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की अपेक्षाकृत सुदृढ़ समष्टि-आर्थिक मूलभूत व्यवस्थाओं और नीतिगत ढाँचों के बावजूद विभिन्न माध्यमों - वित्तीय, व्यापार और विश्वास - के जरिये उनमें व्याप्त हो गया। इस प्रकार बाजारों की कार्यकुशलता और सरकारी नीति की भूमिका (दोनों) के संबंध में स्थापित धारणाओं की कड़ी आलोचना होने लगी जिसने अर्थशास्त्र के लिए नई चुनौतियाँ प्रस्तुत कर दीं। अधिक मौलिक रूप से 'आर्थिक संवृद्धि में वित्त की भूमिका' के संबंध में पुरानी बहस पुन: केंद्र में आ गई जबकि वित्तीय वैश्वीकरण की संभावित लागतें और लाभ अंतरराष्ट्रीय मंचों पर नीतिगत विचार-विमर्श का केंद्र बन गए हैं। इसके साथ ही, वैश्विक संकटों को रोकने और उनका प्रबंध करने की वर्तमान अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संरचना की पर्याप्तता और प्रभावात्मकता पुन: महत्त्वपूर्ण हो गई है।

संकट का आविर्भाव

1.5 वैश्विक वित्तीय बाजारें के लगभग सभी खंडों ने वित्तीय संकट के आघातों का अनुभव किया, यद्यपि उनकी गंभीरता अलग-अलग थी। विकसित अर्थव्यवस्थाओं में अंतर-बैंक बाजार तीव्र चलनिधि संकट के साथ सबसे पहले प्रभावित हुए थे क्योंकि बैंक प्रतिपक्षी जोखिमों के भय से एक दूसरे को उधार देने में अरुचि दिखाने लगे। तत्पश्चात् यह संकट मुद्रा बाजारों में भी व्याप्त हुआ जैसा कि स्प्रेडों के असाधारण स्तरों, परिपक्वता अवधियों के न्यूनीकरण और कुछ बाजार खंडों के संकुचन अथवा समापन से भी स्पष्ट हो गया है। ऋण और मुद्रा बाजारों में गिरावट आने एवं शेयर कीमतों के अवरुद्ध हो जाने के परिणामस्वरूप बैंक और अन्य वित्तीय संस्थाएं मार्क टू मार्केट व्यवस्था के कारण संचित हो रही हानियों के कारण निधि की व्यवस्था करने तथा अपना पूँजी आधार बनाए रखने में कठिनाई महसूस करने लगीं। दूसरी ओर उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में विद्यमान शेयर बाजारों ने संकट की काफी गरमाहट सही क्योंकि विश्वभर के शेयर बाजारों ने अत्यधिक अस्थिरता को देखा तथा कीमतों और टर्नओवर में तीव्र कमी महसूस की। संकट के प्रारंभिक चरणों में पण्य कीमतों ने, जो अभूतपूर्व ऊँचाइयों पर पहुँचीं, सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स के पतन के बाद इस प्रवृत्ति में तेजी से उल्टे रुख को देखा। संकट की गहराई और व्याप्ति का अनुमान अपलेखनों के अनुमानों में क्रमिक संशोधनों, व्यापार में गिरावट और अंतत: आर्थिक गतिविधि में संकुचन से लगाया जा सकता है।

1.6 अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में बड़े पैमाने पर विघटनों एवं बदतर होती जा रही समष्टि-आर्थिक स्थितियों की पृष्ठभूमि में वित्तीय संस्थाओं ने भी बहुत अधिक तकलीफ उठाई। वाणिज्य बैंकों को लाभप्रदता में कमी और बड़ी मात्रा में मार्क-टू-मार्केट हानियों के कारण नुकसान उठाना पड़ा। इस संकट ने निवेश बैंकिंग उद्योग के महत्व को लगभग समाप्त कर दिया, जबकि एक ही गतिविधि वाले (मोनोलाइन) बीमाकर्ताओं और बचाव-व्यवस्था की निधियों का वित्तीय कार्यनिष्पादन अत्यंत प्रभावित हुआ। इसके विपरीत, उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की बैंकिंग प्रणालियों ने अस्थिर आस्तियों में अपने सीमित एक्सपोज़र एवं पूर्वी एशियाई संकट के परिणामस्वरूप अपने तुलन-पत्रों को मजबूत करने के लिए किये गये विनियामक और पर्यवेक्षी उपायों के कारण इस संकट के दौरान अपेक्षाकृत आघात-सहनीयता दर्शाई।

1.7 बढ़ते हुए वैश्वीकरण और व्यापार के एकीकरण ने उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को विपुल आर्थिक और वित्तीय लाभ पहुँचाये हैं, परंतु उन्होंने ऐसे माध्यमों को भी विस्तृत कर दिया है जिनके जरिये विकसित अर्थव्यवस्थाओं की आर्थिक गतिविधि में कोई भी मंदी उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में फैल सकती है। प्रारंभ में ऐसा प्रतीत हुआ कि उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ भारी विदेशी मुद्रा आरक्षित निधि की अनुकूल स्थिति, सुधरे हुए नीतिगत ढाँचों तथा सामान्यत: सशक्त बैंकिंग क्षेत्र और कंपनी तुलन-पत्रों की पृष्ठभूमि में वैश्विक वित्तीय विपत्ति द्वारा निर्मित किये गये तूफान को झेलने के लिए बेहतर स्थिति में थीं। फिर भी, सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स की विफलता और जोखिम के प्रति विमुखता में वैश्विक स्तर पर परवर्ती वृद्धि के बाद किसी क्षति के बिना उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के बच निकलने की कोई भी आशा अधिक नहीं बनी रह सकी; वैश्विक वित्तीय विपत्ति द्वारा निर्मित की गई समष्टि आर्थिक अशांति के व्याप्त प्रभावों द्वारा भी उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुईं। उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ विशेष रूप से 2008 की दूसरी छमाही में विश्व व्यापार में संकुचन से प्रभावित हुईं। उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को मिलने वाले निवल निजी पूँजी प्रवाह भी उलट गए जो अवनति

और जोखिम के प्रति निवेशकों की विमुखता को प्रतिबिंबित करता है, जिसने बाह्य वित्तीयन की स्थितियों की तंगी के लिए मार्ग प्रशस्त किया। अंतत: उनकी संवृद्धि भी प्रभावित हुई।

संकट के प्रति अंतरराष्ट्रीय प्रतिक्रियाएँ

1.8 उक्त संकट ने घरेलू और अंतरराष्ट्रीय (दोनों) स्तरों पर अभूतपूर्व नीतिगत प्रतिक्रियाओं को जन्म दिया। बदतर हो रहे वैश्विक वित्तीय परिवेश के बीच विशेष रूप से विकसित देशों में प्राधिकारियों ने प्रारंभिक स्तर पर पहचान लिया कि उनके लिए धैर्यपूर्वक प्रतिक्रिया व्यक्त करने तथा तेजी से कार्य करने की आवश्यकता है। विभिन्न देशों की राष्ट्रीय सरकारों और केंद्रीय बैंकों ने वित्तीय प्रणाली में विश्वास बरकरार रखने तथा आर्थिक मंदी रोकने हेतु प्रणालीगत जोखिमों को नियंत्रित करने के लिए सहवर्ती रूप से विभिन्न प्रकार की परंपरागत और गैर-पारंपरिक (दोनों) नीतिगत उपायों का सहारा लिया। संकट के दौरान नीतिगत प्रतिक्रियाएँ -विनियामक, पर्यवेक्षी, मौद्रिक और राजकोषीय प्रतिक्रियाएँ विभिन्न अधिकार-क्षेत्रों में उनके मान, परिमाण और विशिष्ट समन्वयन के तौर पर अद्वितीय रही हैं। इन प्रतिक्रियाओं में मौद्रिक और राजकोषीय उपायों, जमा गारंटियों, ऋण गारंटियों, पूँजी प्रदान करने और परिसंपत्ति खरीदने के विभिन्न समूह शामिल हैं जिनका समन्वयन वैश्विक स्तर पर किया गया।

1.9 औद्योगिक जगत में मौद्रिक प्राधिकारियों ने सर्वप्रथम एक आक्रामक मौद्रिक सरलीकरण का सहारा लेते हुए जोखिम उठाया; यहाँ तक कि नीतिगत दरें अब तक के निम्नतम स्तर पर पहुँच गईं। विश्वास के संकट को नियंत्रित करने तथा वित्तीय स्थितियों को सुगम बनाने के लिए केंद्रीय बैंकों ने अपने तुलन-पत्रों का प्रयोग गैर-पारंपरिक तरीकों से करते हुए आगे और जोखिम उठाया। विभिन्न देशों की सरकारों ने दिवालियेपन की समस्या का समाधान करने एवं वित्तीय प्रणाली को मजबूत बनाने के लिए बड़े पैमाने पर आर्थिक सहायता और पूँजी प्रदान करते हुए अपनी प्रतिक्रिया दिखाई। इस वित्तीय संकट के साथ अभूतपूर्व पैमाने पर आई आर्थिक मंदी ने भी बड़े परिमाण में ऐसी प्रतिचक्रीय राजकोषीय नीति की सक्रियता के लिए मार्ग प्रशस्त किया जो अतीत में बहुत कम ही देखी गई।

1.10 जैसे-जैसे संकट प्रकट होता गया, आगे आई हुई समाधान की व्यवस्थाओं को नये और जटिल वित्तीय जगत के साथ मुकाबला करना पड़ा जिसमें ऋण चूक स्वैप, विशेष निवेश माध्यम शामिल थे तथा इस कारण से पूर्व में इस प्रकार के संकटों में किए गए उपायों से बुनियादी तौर पर भिन्न थे। विश्व भर में पर्यवेक्षक और मानक निर्धारक निकाय बैंक पूँजी, चलनिधि, जोखिम प्रबंध, प्रोत्साहन क्षतिपूर्ति, और उपभोक्ता सुरक्षा इत्यादि को नियंत्रित करनेवाले मानकों को मजबूत करने में अधिकाधिक लिप्त रहे। संवर्धित समेकित पर्यवेक्षण और नये पर्यवेक्षी साधनों के विकास के द्वारा अधिकाधिक समष्टि विवेकपूर्ण फोकस सहित पर्यवेक्षण का प्रवर्धन करने पर जोर गति पकड़ने लगा।

1.11 यद्यपि विकसित देशों ने अपना नीतिगत ध्यान सामान्य स्थिति को बहाल करने और वित्तीय विनियमन/पर्यवेक्षण मजबूत बनाने पर लगाया तथा उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं ने व्यापार के पतन और पूँजीगत बहिर्वाहों के संबंध में उपाय करना शुरू किया, तथापि संवृद्धि को पुन: कायम करना इन दोनों श्रेणियों में नीतिगत प्रतिक्रिया के सामान्य सूत्र के रूप में उभरा। ऐसा पहली बार हुआ कि एक वैश्विक समस्या के लिए सार्थक समाधान की व्यवस्था की तलाश करने में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ सक्रिय सहभागी बन गईं। वर्तमान वित्तीय संकट का एक विशिष्ट लक्षण यह है कि वैश्विक स्वरूप का होने के बावजूद प्रभाव और नीतिगत प्रतिक्रियाओं के तौर पर विकसित देशों और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के बीच एक स्पष्ट अंतर दिखाई देता है। विकसित देशों के लिए नीतिगत प्राथमिकता वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण को मजबूत करने की रही है। उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में व्यापार के पतन और पूँजी के बहिर्वाह के संबंध में व्यवहार करने पर नीतिगत ध्यान दिया गया।

1.12 सशक्त और समन्वित नीतिगत कार्रवाइयाँ प्रारंभिक क्षति को समाप्त करने और वैश्विक वित्तीय पतन को टालने में सफल रही हैं। हालांकि नीतिगत प्रतिक्रियाएँ सर्वाधिक बुरे वित्तीय और आर्थिक परिणामों को दूर कर सकीं, फिर भी नीतिनिर्धारक और विद्वज्जन भविष्य में ऐसी घटनाओं की संभावना को रोकने के लिए उपयुक्त नीतियों के रूपांकन और संचालन की समस्या से अभी भी जूझ रहे हैं। इसके अलावा, गैर-पारंपरिक उपाय एक ओर जहाँ वित्तीय प्रणाली को मजबूत करने में सहायता कर रहे हैं, वहीं दूसरी ओर उन्होंने कई चुनौतियाँ और जोखिम उत्पन्न कर दिये हैं।

1.13 अभी हाल ही में ग्रीस द्वारा उत्प्रेरित वित्तीय दबावों के परिणामस्वरूप यूरो क्षेत्र के भीतर आर्थिक और वित्तीय स्थिरता को सुरक्षित रखने पर ध्यान देते हुए व्यापक सहायता के उपाय घोषित

किये गये हैं। यह विश्वास कि सार्वभौम राज्य असीमित उधार ले सकते हैं, ग्रीस में उत्पन्न समस्या के बाद एक बार पुन: संदेह के घेरे में आ गया है। यह इस बात का स्मरण कराता है कि राजकोषीय गुंजाइश सीमित है तथा इसे अनिश्चित काल तक बढ़ाया नहीं जा सकता। अब यह स्वीकार किया जा रहा है कि यूरो क्षेत्र को राजकोषीय अनुशासन के संबंध में सख्त प्रवेश के अपने मानदंडों को निरंतर राजकोषीय निगरानी से अनुपूरित करना चाहिए ताकि दुर्बलताओं का पता समय रहते लगाया जा सके।

भारत में प्रभाव और नीतिगत प्रतिक्रियाएँ

1.14 वैश्विक संकट का आविर्भाव होने तक भारतीय अर्थव्यवस्था भी घरेलू माँग - अधिकांशत: घरेलू बचत द्वारा वित्तपोषित वर्धमान घरेलू निवेश और निरंतर बनी हुई उपभोग की माँग द्वारा संचालित एक उच्च संवृद्धि के चरण से गुजरी। वास्तव में, उपभोग और बचत सुसंतुलित हैं। घरेलू माँग द्वारा प्रेरित सेवा क्षेत्र ने संवृद्धि में स्थिरता के लिए योगदान किया। सहवर्ती तौर पर मुद्रास्फीति भी सामान्यत: निम्न और स्थिर रही। भारत में समष्टि-आर्थिक कार्यनिष्पादन में इस समग्र सुधार का श्रेय आनुक्रमिक वित्तीय क्षेत्र सुधारों को दिया गया जिनके परिणामस्वरूप वित्तीय मध्यस्थता की एक कुशल *हालांकि* बैंक-आधारित प्रणाली का उदय हुआ; नियम-आधारित राजकोषीय नीति बनी जिसने निजी बचत के संबंध में सरकारी क्षेत्र की बाधा को कम कर दिया; तथा अग्रदर्शी मौद्रिक नीति बनी जिसने संवृद्धि और मुद्रास्फीति के बीच अल्पकालिक तालमेल को एक निरंतर आधार पर संतुलित रखा तथा वित्तीय स्थिरता के लक्ष्य का भी अनुसरण किया। इसके अतिरिक्त, व्यापक तौर पर बाजार द्वारा संचालित विनिमय दर व्यवस्था के साथ व्यापार और पूँजी प्रवाहों के प्रति अर्थव्यवस्था के चरणबद्ध उदारीकरण ने संवृद्धि की प्रक्रिया को सहायता प्रदान करने में बाह्य माँग की भूमिका को बढ़ा दिया एवं साथ ही अर्थव्यवस्था को वैश्वीकरण की शक्तियों के समक्ष असुरक्षित बना दिया। इस प्रक्रिया में भारत विश्व की अर्थव्यवस्था के साथ अधिकाधिक एकीकृत हुआ तथा वित्तीय स्थिरता को बनाये रखना सरकारी नीति के पदानुक्रम की व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण हो गया; दरअसल वर्तमान संकट के पहले ही यह भारत में मौद्रिक नीति के एक महत्त्वपूर्ण लक्ष्य के रूप में उभरा। यह प्रतिचक्रीय मौद्रिक नीति और उन समष्टि-विवेकपूर्ण वित्तीय विनियमों से स्पष्ट है जो संकट से ठीक पहले तेजी के चरण के दौरान प्रचलित थे।

1.15 इन परिस्थितियों में भारतीय अर्थव्यवस्था वैश्विक एकीकरण से लाभान्वित हुई तथा उसने विभिन्न प्रतिकूल बाह्य घटनाओं - पूर्वी एशियाई संकट (1997-98), डॉट.कॉम संकट (2000-01) आदि के प्रति उल्लेखनीय आघात-सहनीयता भी प्रदर्शित की थी। तथापि वर्तमान वैश्विक संकट के दौरान भारत वित्तीय संकट के अधिकेंद्र में संकटग्रस्त परिसंपत्तियों के प्रति किसी प्रत्यक्ष एक्सपोज़र के न होने के बावजूद अधिकांश अन्य उभरते बाजारों की तरह प्रभावित हुआ। वास्तव में यह संक्रामक रोग सभी माध्यमों - व्यापार, वित्त और विश्वास से व्याप्त हो गया।

1.16 संकट के प्रारंभिक चरण में भारतीय वित्तीय बाजारें पर प्रभाव अपेक्षाकृत अस्पष्ट था। दरअसल वित्तीय प्रणाली में बैंक हावी रहे तथा तुलन-पत्र से बाहर की गतिविधियों और गैर-नकदी प्रतिभूतिकृत परिसंपत्तियों, जो विकसित अर्थव्यवस्थाओं में वर्तमान वैश्विक वित्तीय संकट के केंद्र में रहीं, में उनकी नगण्य लिप्तता ने भारत को अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में प्रारंभिक अशांति से बचा लिया। तथापि, भारत प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका और वैश्विक गतिविधियों ने वित्तीय और वास्तविक गतिविधियों को 2008-09 की दूसरी छमाही में प्रभावित किया। भारत के वित्तीय बाजार - शेयर बाजार, मुद्रा बाजार, विदेशी मुद्रा बाजार और ऋण बाजार - सब-के- सब अनेक दिशाओं से दबाव में आ गए।

संकट से प्राप्त सीख और भावी चुनौतियाँ

1.17 वैश्विक वित्तीय प्रणाली में भावी चुनौतियों की पहचान करने के लिए उक्त संकट से कई प्रकार की शिक्षा प्राप्त की जा सकती है। संकटों के निवारण और प्रबंध से संबंधित अनेक महत्त्वपूर्ण मुद्दे उभरे हैं जिससे हम बाजार सहभागियों और नीति निर्धारकों (दोनों) के लिए उपयोगी शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। संकट को विकसित करने और उसे गहन बनाने के लिए उत्तरदायी अंतर्निहित कारकों - चाहे उनका स्वरूप समष्टि-आर्थिक अथवा व्यष्टि-आर्थिक क्यों न हो - का विश्लेषण वित्तीय स्थिरता बनाये रखने में सार्वजनिक प्राधिकारियों अर्थात् केंद्रीय बैंकों, पर्यवेक्षकों/विनियामकों और सरकारों की भूमिका के बारे में प्रश्न उठाता है। वैश्विक वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने में राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तरों पर मौजूदा संस्थागत ढाँचे और उपलब्ध नीतिगत साधनों की प्रभावात्मकता पर इस संकट ने निश्चय ही संदेह उत्पन्न कर दिया है।

1.18 इसने वित्तीय बाजारों और संस्थाओं के कार्य, विशेष रूप से कुशलतापूर्वक जोखिम का कीमत-निर्धारण, आबंटन और प्रबंध करने की उनकी क्षमता पर भी प्रश्न उठाये हैं। इस प्रकार हाल के संकट से प्राप्त की जानेवाली सीख न केवल बहुविध है, बल्कि यह विविध प्रकार के प्राधिकारियों के लिए है जिन्हें वित्तीय स्थिरता बनाये रखने का कार्य सौंपा गया है जो एक अधिक व्यापक तौर पर उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए उपयोगी होने के साथ ही विकसित अर्थव्यवस्थाओं के लिए सर्वाधिक प्रयोज्य है। आगे देखते हुए, वैश्विक स्तर पर अभूतपूर्व मौद्रिक सहायता से अत्यंत सावधानीपूर्वक बाहर निकलने का तरीका ढूँढ़ना, जो कुछ देशों में प्रारंभ हो चुका है, सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण चुनौतियों में से एक है। इस संदर्भ में समय-निर्धारण और उपलब्ध करायी जा रही सहायता की मात्रा में कमी लाना अत्यंत महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं।

1.19 अभी यह ज्ञात नहीं है कि क्या संकट से ठीक पहले सुस्पष्ट व्यवसाय चक्र का समकालीकरण तथा संकट की प्रतिक्रियास्वरूप उभरा हुआ मौद्रिक नीति समकालीकरण, संकट से बाहर निकलने की रणनीतियों में इसी प्रकार के समकालीकरण के लिए मार्ग प्रशस्त करेंगे। अत: वैश्विक संकट की अतीत, वर्तमान और भविष्य के संदर्भ में समीक्षा करना सामयिक होगा ताकि भारतीय अर्थव्यवस्था पर उसके प्रभाव का वस्तुनिष्ठ आकलन किया जा सके तथा भविष्य में किसी संकट जैसी स्थिति के आवर्तन को रोका जा सके, और किसी संकट के घटित होने पर उसका सामना अधिक कारगर ढंग से किया जा सके। तदनुसार वर्ष 2008-09 के लिए इस रिपोर्ट की विषय-वस्तु का शीर्षक "वैश्विक वित्तीय संकट और भारतीय अर्थव्यवस्था" रखा गया है। यह रिपोर्ट संकट के कारणों और परिणामों का गहन विश्लेषण करती है, वर्तमान संकट की अतीत के संकटों के साथ तुलना और मिलान करती है एवं वैश्विक स्तर पर संकट के प्रति पारंपरिक और गैर-पारंपरिक नीतिगत प्रतिक्रियाओं की प्रभावात्मकता का परीक्षण करती है। भारतीय दृष्टिकोण से यह रिपोर्ट भारत में संकट के आविर्भाव, की गई प्रतिक्रियाओं के स्वरूप तथा प्रतिकूल प्रभाव को सीमित करने में उनके प्रभाव एवं घरेलू और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर संकट से उभरनेवाली व्यापक सीख का विस्तृत विवरण देती है।

रिपोर्ट के अध्यायों की योजना

1.20 रिपोर्ट में इस अध्याय के साथ कुल सात अध्याय हैं। अध्याय 2 जिसका शीर्षक "संकट की उत्पत्ति और उसका स्वरूप" है, उन संकटों की उत्पत्ति और उनके स्वरूप का विवरण प्रस्तुत करता है जिन्होंने पिछली डेढ़ शताब्दी में विकसित, उभरते और विकासशील विश्व (दोनों) को प्रभावित किया है, जब वे प्राय: प्रचंड शक्ति के साथ आये तथा नीति-निर्धारकों के लिए महत्त्वपूर्ण सीख देकर गये। इस अध्याय में वर्तमान वित्तीय संकट के कारणों की चर्चा की गई है और साथ ही संकट के विभिन्न सहायक कारकों के संबंध में हुई बहस पर प्रकाश डाला गया है तथा वर्तमान संकट के साथ इसी प्रकार के संकट की पिछली घटनाओं की तुलना करते हुए एक ऐतिहासिक परिदृश्य में उक्त संकट का विवरण दिया गया है। इस अध्याय में ग्रीस में घटित हाल के संकट के आविर्भाव को भी शामिल किया गया है।

1.21 "संकट के प्रादुर्भाव" संबंधी अध्याय 3 में वैश्विक अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों, जैसे वित्तीय बाजारों, वित्तीय संस्थाओं, अंतरराष्ट्रीय व्यापार, अंतरराष्ट्रीय पूँजी प्रवाहों, विप्रेषणों और वास्तविक अर्थव्यवस्था पर संकट के प्रभाव के विश्लेषण का प्रयास किया गया है।

1.22 "संकट के प्रति अंतरराष्ट्रीय प्रतिक्रियाओं" संबंधी अध्याय 4 में परंपरागत संकट प्रबंध की रणनीतियों की पृष्ठभूमि में वर्तमान वित्तीय संकट के दौरान अंतरराष्ट्रीय समुदाय द्वारा किये गये उपायों की चर्चा की गई है। इस अध्याय में वित्तीय संकट के प्रति नीतिगत प्रतिक्रियाओं का ब्योरा भी एक ऐतिहासिक परिदृश्य में दिया गया है। राजकोषीय मौद्रिक समन्वयन संबंधी मुद्दों सहित मौद्रिक नीतिगत और राजकोषीय नीतिगत प्रतिक्रियाओं को सम्मिलित किया गया है। बहुपक्षीय संस्थाओं द्वारा अभिव्यक्त प्रतिक्रियाएँ भी प्रस्तुत की गई हैं। इस अध्याय में ऐसे परिमाण के वित्तीय संकट के पुन: घटित होने की संभावना को कम करने के लिए वित्तीय क्षेत्र की नीतियों के संबंध में की गई कार्रवाइयों पर भी प्रकाश डाला गया है।

1.23 वैश्विक संदर्भ में संकट की उत्पत्ति, आविर्भाव और नीतिगत प्रतिक्रियाओं पर क्रमश: अध्याय 2, 3 और 4 में विचार-विमर्श करने के बाद अगले दो अध्यायों में (5 और 6) भारतीय अर्थव्यवस्था पर वैश्विक वित्तीय संकट के प्रभाव तथा प्राधिकारियों की नीतिगत प्रतिक्रियाओं को शामिल किया गया है। "भारत में प्रभाव और नीतिगत प्रतिक्रियाएँ : वित्तीय क्षेत्र" पर अध्याय 5 में भारत के वित्तीय क्षेत्र पर प्रभाव का विस्तारपूर्वक विश्लेषण किया गया है। "भारत में प्रभाव और नीतिगत प्रतिक्रियाएँ : संपदा क्षेत्र" संबंधी अगले अध्याय 6 में व्यापार, सेवाओं एवं पूँजी प्रवाहों के माध्यम से भारतीय अर्थव्यवस्था के संपदा क्षेत्र पर प्रभाव का विश्लेषण किया गया है।

1.24 वित्तीय क्षेत्र पर वित्तीय संकट के प्रभाव का परीक्षण करने के तहत अध्याय 5 में वर्षों से व्यापार और वित्तीय माध्यमों से भारतीय अर्थव्यवस्था के विकसित हो रहे वैश्विक एकीकरण का विश्लेषण किया गया है। इसमें विभिन्न वित्तीय बाजारों पर संकट के प्रभाव और संबंधित नीतिगत उपायों का भी वर्णन किया गया है। बैंकिंग क्षेत्र, म्युचुअल फंडों और गैर-बैंकिंग वित्त कंपनियों पर पड़ने वाले प्रभावों तथा उनका सामना करने के लिए किये गये नीतिगत उपायों का विस्तार से परीक्षण किया गया है। भारत सरकार और भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा संकट के निवारण के लिए की गई नीतिगत प्रतिक्रियाओं की भी चर्चा इस अध्याय में की गई है।

1.25 अध्याय 6 में व्यापार और पूँजी प्रवाह के माध्यम से हुए उन प्रभावों को शामिल किया गया है जो अंतत: अर्थव्यवस्था के संपदा क्षेत्र में प्रविष्ट हुए हैं। इस अध्याय में संपदा क्षेत्र पर वैश्विक आघातों के संचरण के विभिन्न माध्यमों का भी विवरण प्रस्तुत किया गया है। व्यापार और वित्तीय माध्यमों से उद्भूत होनेवाले प्रभावों का भी सविस्तार विश्लेषण किया गया है तथा अंतत: बचत, निवेश और संवृद्धि पर पड़ने वाले प्रभावों को भी इस अध्याय में सम्मिलित किया गया है।

1.26 "संकट से प्राप्त सीख और भावी चुनौतियों" से संबंधित अध्याय 7 में कुछ भावी चुनौतियों की पहचान करने के लिए संकट से प्राप्त सीख का विवरण दिया गया है। इस अध्याय में केंद्रीय बैंकों के लिए, वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण के लिए, राजकोषीय नीति के लिए तथा अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं की भूमिका के रूप में अपनाई गई अंतरराष्ट्रीय नीति के समन्वयन के लिए शिक्षा सम्मिलित की गई है। वैश्विक असंतुलनों और समष्टि-आर्थिक प्रबंध से उभरनेवाले मुद्दे भी इस अध्याय में शामिल किये गये हैं। अंतत: इस अध्याय में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं और भारत के लिए सीख और चुनौतियों का विवरण दिया गया है।

2 संकट की उत्पत्ति और उसका स्वरूप

2.1 विश्व की अर्थव्यवस्था ने 2008 के मध्य से निश्चय ही एक वैश्विक संकट का साक्षात्कार किया है। इस संकट ने वैश्विक वित्तीय परिदृश्य के कार्य की परिधि-रेखाओं का परीक्षण किया है, जबकि वित्तीय और वास्तविक अर्थव्यवस्था के बीच की अंतर-संबद्धताएँ आवर्धित हुई हैं। अगस्त 2007 में अमेरिका के सब-प्राइम बाजार में उठी समस्याएँ सितंबर 2008 में अपने चरम पर पहुँच गईं जब कुछ प्राइम वाल स्ट्रीट वित्तीय संस्थाएँ ढह गईं जिससे एक विश्वव्यापी विश्वासभंग सामने आया। वित्तीय संस्थाएँ परस्पर ऋण देने के लिए प्राय: अनिच्छुक हो जाने के साथ ही, ऋण बाजार वस्तुत: निक्रिय हो गये। आरंभिक चरणों में विश्वास के लोप ने विकसित अर्थव्यवस्थाओं में अवनति (डीलिवरेजिंग), परिसंपत्ति और पण्य कीमतों में गिरावट, घटती आय, ह्रासमान माँग तथा व्यापार और पूँजी प्रवाह एवं बढ़ती बेरोजगारी का एक चक्र प्रारंभ किया। यद्यपि विकसित देश स्पष्ट रूप से हाल के वैश्विक संकट का अधिकेंद्र रहे, तथापि उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ (ईएमई) भी इस संकट से अत्यंत प्रभावित हुई हैं। विकसित देशों के वित्तीय क्षेत्र की अशांति ने विशेष रूप से सितंबर 2008 के बीच में लेहमैन बंधुओं के दीवालियेपन के बाद भारत सहित उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के वित्तीय क्षेत्र में पारगमन किया। उक्त संक्रामकता इन अर्थव्यवस्थाओं में उनकी अपेक्षाकृत सुदृढ़ मूलभूत व्यवस्थाओं के बावजूद वित्तीय, व्यापार और विश्वास की सरणियों के माध्यम से व्याप्त हुई। इसने कईयों को एक अधिकाधिक वैश्वीकृत विश्व में तथाकथित 'डीकपलिंग सिद्धांत' के संबध में पुन: विचार करने के लिए अभिप्रेरित किया। इस प्रकार अगस्त 2007 में अमेरिका के आवास बाजार में एक सब-प्राइम संकट के रूप में जो कुछ शुरू हुआ, वह क्रमिक रूप से एक वैश्विक बैंकिंग संकट के रूप में, एक वैश्विक वित्तीय संकट के रूप में और आगे चलकर एक वैश्विक आर्थिक संकट के रूप में परिणत हुआ।

2.2 इस संकट के प्रकट होने से पहले की अवधि की विशेषता सामान्यत: विकसित अर्थव्यवस्थाओं में अपेक्षाकृत धीमी व नियमित संवृद्धि तथा निम्न और स्थिर मुद्रास्फीति एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में तीव्र संवृद्धि और विकास थी जिसे आम तौर पर 'महान मंदन' (ग्रेट मॉडरेशन) की अवधि के रूप में जाना जाता है (बेर्नांके, 2004)। समष्टि-आर्थिक स्थिरता की इस लंबी अवधि के लिए कारण मुक्त बाजार और सफल वैश्वीकरण था। तथापि, आर्थिक कार्यनिष्पादन में उक्त 'महान मंदन' ने एक बाजार अर्थव्यवस्था में अनर्थपूर्ण विफलताओं की संभावना की उपेक्षा की। समृद्धि के इन समग्र संकेतों के भीतर जो कुछ प्रच्छन्न थीं, वे अत्यधिक जटिल वित्तीय प्रणालियाँ थीं जो कभी-कभी नीतिगत प्राधिकारियों के विनियामक दायरे से बाहर रहीं तथा उन्होंने भारी प्रणालीगत जोखिम उत्पन्न कर दिये। इसके अतिरिक्त, वर्षों से विश्व की अर्थव्यवस्था में कुछ संरचनागत असंतुलन भी विकसित हुए थे जो विभिन्न राष्ट्रों में बचत और निवेश तथा उत्पादन और उपभोग के बीच असंतुलनों के रूप में थे। ये विस्तृत हो रहे चालू खाता असंतुलनों, असमरेखित विनिमय दरों, तथा निम्न ब्याज दरों और आस्ति कीमतों में प्रकट हुए जिन्हें कभी न कभी खुलना ही था। ये सभी कारक अब तक के सबसे बुरे वैश्विक वित्तीय संकट के रूप में व्यक्त हुए।

2.3 जिस तीव्र गति से यह वित्तीय संकट अमेरिका से यूरोप में तथा तत्पश्चात् शेष विश्व में व्याप्त हो गया, उसने सारी दुनिया को आघात पहुँचाया। जब कि संकट युगों से वित्तीय परिदृश्य का अंग रहे हैं, अब यह व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है कि हाल के संकट का निकटतम पूर्व उदाहरण अपनी गहराई, भौगोलिक व्याप्ति, सघनता और अवधि के तौर पर 1930 के बाद के दशक की महान मंदी है। इसकी प्रचंडता से कोई भी देश बच नहीं सका है, यद्यपि विभिन्न राष्ट्रों में इसका प्रभाव भिन्न-भिन्न रहा है।

2.4 हाल के वित्तीय संकट और उसके बाद की मंदी ने - बाजारों की प्रभावात्मकता और सरकारी नीति की भूमिका, जो तथाकथित कीनेशियनिज्म है, पर दो महत्वपूर्ण बहसों को पुन: उद्घाटित किया है तथा अर्थशास्त्र के अनुशासन के लिए नई चुनौतियाँ खड़ी कर दी हैं। हाल के संकट ने संवृद्धि के लिए मार्ग प्रशस्त करने में वित्त की भूमिका पर पुन: प्रश्नचिह्न लगा दिया है तथा बाजार के उत्थान और पतन को स्पष्ट करने में आर्थिकेतर प्रयोजनों की भूमिका को फोकस में लाया है। हाल के संकट ने तीव्र वित्तीय नवोन्मेषणों की पृष्ठभूमि में वर्तमान वैश्विक विनियामक और पर्यवेक्षी संरचनाओं और परिसीमाओं के पुनर्मूल्यांकन को भी आवश्यक बना दिया है। अंतत: इसने वर्तमान अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संरचना की पर्याप्तता और प्रभावात्मकता पर बहस को पुन: आमंत्रण दिया है ताकि जिस तरह का वैश्विक संकट

हाल में देखा गया है, उस प्रकार के वैश्विक संकटों को रोका जा सके और उनका प्रबंध किया जा सके।

2.5 इस संकट की गहराई और व्यापकता ने दुनिया भर के नीति-निर्धारकों के लिए उपलब्ध पारंपरकि और अपारंपरिक नीतिगत विकल्पों की सीमाओं का परीक्षण किया है। बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं द्वारा धारित वास्तविक और संभावित वैश्विक अपलेखनों का प्रारंभिक अनुमान, जो 2007 के मध्य लगभग 50 बिलियन अमेरिकी डॉलर पर शुरू हुआ, 2008 के अंत तक लगभग 4.0 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर तक बढ़ गया तथा अप्रैल 2010 में अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा किये गये माप के अनुसार यह 2.3 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर तक नीचे आया। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के पूर्वानुमानों (अप्रैल 2010) के अनुसार वैश्विक ज़ीडीपी संवृद्धि 2007 में विद्यमान 5.2 प्रतिशत से घटकर 2008 में 3.0 प्रतिशत हो गई तथा 2009 में इसमें 0.6 प्रतिशत की कमी आई। तथापि, वैश्विक संवृद्धि के संबंध में यह अनुमान है कि यह 2010 में 4.2 प्रतिशत तक और 2011 में 4.3 प्रतिशत तक बढ़ेगी। विकसित अर्थव्यवस्थाओं ने (2008 में दर्ज 0.5 प्रतिशत की धनात्मक वृद्धि की तुलना में) 2009 में 3.2 प्रतिशत की ऋणात्मक वृद्धि प्रदर्शित की, जबकि उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में (2008 के 6.1 प्रतिशत की तुलना में) 2009 में 2.4 प्रतिशत वृद्धि हुई। यह अनुमान है कि 2010 के दौरान विकसित अर्थव्यवस्थाओँ तथा उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में क्रमश: 2.3 प्रतिशत और 6.3 प्रतिशत वृद्धि होगी।

2.6 उपर्युक्त पृष्ठभूमि के साथ इस अध्याय में पिछली डेढ़ शताब्दी में दोनों विकसित और विकासशील विश्व को प्रभावित करनेवाले संकटों की उत्पत्ति और उनके स्वरूप की खोज करेगा जब वे भीषण शक्ति के साथ आये और नीतिनिर्धारकों के लिए महत्वपूर्ण शिक्षा देकर चले गये। इसे तीन विस्तृत खंडों के अंतर्गत समाविष्ट किया जाएगा। खंड I में हाल के वित्तीय संकट के कारणों की विस्तार से चर्चा की जाएगी और इसके साथ ही विभिन्न अंशदायी कारकों पर विकसित हो रही बहस की रूपरेखा प्रस्तुत की जाएगी। एक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में संकट का विवरण खंड II में दिया गया है। हाल के संकट और इसी प्रकार की पिछली घटनाओं के बीच तुलना खंड III में प्रस्तुत की गई है। खंड IV में निष्कर्षात्मक टिप्पणियाँ दर्शायी गई हैं।

I. संकट के लिए कारण

2.7 संकट के कारण अनेक थे और वे अंतर्जटित थे क्योंकि ऐसा व्यापक संकट किसी एक अथवा विलग कारण द्वारा प्रेरित नहीं हो सकता। इस संकट के विभिन्न कारणों को समझने का प्रयास करने में विभिन्न दृष्टिकोण उभरे हैं। एक धारणा यह विश्वास करती है कि वित्तीय बाजारों का वर्तमान विघटन सुलभ वैश्विक मुद्रा तथा विशेष रूप से दशक के प्रारंभ से विद्यमान ऋण परिस्थितियों का लंबा चला आ रहा परिणाम है। एक ओर जहाँ इस वित्तीय संकट का तत्काल कारण अमेरिका के सब-प्राइम बंधक क्षेत्र में बनी हुई समस्याओं को माना जाता है, वहीं दूसरी ओर इसका मूल वर्तमान दशक के प्रारंभ से वैश्विक असंतुलनों के बने रहने में निहित है (अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक, 2009, मोहन, 2008, पोर्टेस, 2009, टेलर, 2009)। संकट के विशिष्ट लक्षणों को उत्पन्न करने के लिए वैश्विक असंतुलनों ने वित्तीय बाजारों और साधनों में विद्यमान त्रुटियों के साथ पारस्परिक क्रिया की।

2.8 एक अन्य अभिमत यह तर्क करता है कि यदि वैश्विक स्तर पर विद्यमान असंतुलन ही मूल कारण हैं तो यह संकट अमेरिका में ही क्यों उत्पन्न हुआ और अन्य देशों में क्यों नहीं जबकि वे भी वैश्विक असंतुलनों के सहभागी थे ? वास्तव में अमेरिका की वित्तीय प्रणाली में आधिक्य वर्तमान संकट के केंद्र में थे तथा अन्य सभी कारकों ने संकट को और बढ़ाने में योगदान किया। वित्त अतीत के अधिकांश संकटों के पीछे आसन्न कारक रहा है और हाल का संकट इससे अलग नहीं है (फेर्गूसन, 2009)। कुछ लोगों की यह भी राय है कि संकट का एक महत्वपूर्ण कारण अमेरिकी फेड की अत्यंत निम्न ब्याज दरें हैं जो एक बहुत लंबे समय से लगातार बनी हुई हैं जिन्होंने आवास और परिसंपत्ति-कीमत के खतरे (बबल) को प्रेरित किया (यूरोपीय केंद्रीय बैंक, 2007, टेलर, 2009, स्किडेलस्की, 2009) तथा एक समान रूप से महत्वपूर्ण कारण नीति-निर्माण में परिसंपत्ति-कीमतों की मान्यता का अभाव रहा है (बोरियो और लोवे, 2004; व्हाइट 2008)। कुछ लोगों के अनुसार बेसल समझौता भी हाल के बैंकिंग संकट का एक कारण है; बासेल समझौते की पूँजी पर्याप्तता की अपेक्षाओं के संबंध में प्रवंचना करने के लिए बैंकों के प्रयास उक्त वित्तीय संकट के लिए कारणभूत हैं (आचार्य *ईटी एएल.*,2009;प्लेंडर, 2007)। सितंबर 2009 में संपन्न जी-20 शिखर सम्मेलन में प्रमुखों ने संकट के लिए वैश्विक वित्तीय विनियमन की असफलता की तुलना में वैश्विक असंतुलनों को अधिक उत्तरदायी पाते हुए उनकी निंदा की।

2.9 संकट के कारणों पर बहस इस बात पर भी रही कि क्या यह संकट बाजार की विफलता का परिणाम था अथवा अभिशासन (गवर्नेंस) की विफलता का। पिछले डेढ़ दशक में आर्थिक कार्यनिष्पादन में महान नरमी ने बाजार की अर्थव्यवस्था में अनर्थपूर्ण असफलताओं की

संभावना की उपेक्षा की। स्वर्णिम वर्षों के दौरान वित्तीय अर्थशास्त्रियों का यह विश्वास रहा कि मुक्त बाजार अर्थव्यवस्थाएँ कभी पथभ्रष्ट नहीं हो सकतीं, जिसे इस संकट ने झुठला दिया (क्रुगमैन, 2009)। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ने भी बाजार-उन्मुख विचारधारा का समर्थन किया।

2.10 इसके विपरीत, हाल के संकट को गवर्नेंस की विफलता के रूप में भी माना गया है। केंद्रीय बैंकों ने वित्तीय दुर्बलता की कीमत पर उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (सीपीआइ) मुद्रास्फीति पर ध्यान अत्यधिक केंद्रित किया (अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, 2009ए)। चूँकि वित्तीय स्थिरता बनाये रखने के लिए कोई औपचारिक अधिदेश (मैंडेट) नहीं था, अत: सरकारी नीति में प्रमादवश वित्तीय दुर्बलता की उपेक्षा की गई। नरम ऋण शर्तों और बढ़ते हुए कर्ज को स्थान देने के द्वारा मौद्रिक नीति निर्माताओं ने एक प्रकार से कई अनर्थकारी जोखिमों को बढ़ा दिया। साथ ही, कई केंद्रीय बैंकों को प्रेरित किया गया कि वे अधिक पारदर्शी रहें तथा अपने नीतिगत रुख के संबंध में वित्तीय बाजारों को समय से पहले, विशेष रूप से मौद्रिक नीति की भावी दिशा के बारे में मार्गदर्शन प्रदान करें। इस प्रकार समय से पहले किये गये मार्गदर्शन ने वित्तीय बाजारों को अत्यधिक सुविधा उपलब्ध कराई तथा जोखिमों के न्यून मूल्यांकन में सहायता पहुँचाई।[1] निगरानी की जिम्मेदारी से युक्त अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आइएमएफ) जैसी अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं की भूमिकाओं पर भी प्रश्न-चिह्न लग गया। यह चिंता व्यक्त की गई कि अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष दोनों वैश्विक स्तर एवं प्रणालीगत तौर पर महत्वपूर्ण विकसित अर्थव्यवस्थाओं के स्तर पर दुर्बलताओं का निरूपण और निर्देश करने में विफल रहा है।

2.11 एक अधिक संतुलित दृष्टिकोण यह है कि हाल का संकट बाजार एवं राज्य के पतन को प्रतिबिंबित करता है क्योंकि दोनों निजी और सरकारी क्षेत्रों में अभिशासन विफल हो गया है (रेड्डी, 2009सी)। इस तर्क को आगे और बढ़ाते हुए सभी स्तरों पर अभिशासन की विफलता का अर्थ लगाया गया जो संपूर्ण आर्थिक प्रणाली की नैतिक असफलता अथवा कुछ लोगों द्वारा की गई व्याख्या के अनुसार पूँजीवाद की असफलता का संकेत करता है (क्रुगमैन, 2009)। बहरहाल, चूँकि संकट के कारणों के संबंध में यह बहस अभी जारी है, अत: यह उपयुक्त होगा कि उन विभिन्न कारकों का परीक्षण किया जाए जिन्होंने संकट के लिए योगदान किया है।

वैश्विक असंतुलन

2.12 एक ऐतिहासिक दृष्टिकोण से कई लोग अब यह तर्क करते हैं कि अमेरिका का सब-प्राइम बंधक संकट, हाल के संकट के लिए जोखिमों के पुनर्मूल्यन के माध्यम से केवल एक आसन्न कारण अथवा मात्र एक प्रेरक था जो प्रतिभूतिकृत बंधक डेरिवेटिव्ज़ द्वारा विश्व के अन्य भागों में फैल गया। एक अधिक आधारभूत स्तर पर एक समयावधि में विभिन्न प्रणालीगत तौर पर महत्वपूर्ण अर्थव्यवस्थाओं के बड़े वैश्विक असंतुलनों - युनाइटेड किंगडम, ग्रीस, इटली, पुर्तगाल और स्पेन जैसी कुछ अन्य विकसित अर्थव्यवस्थाओं सहित, अमेरिका में बड़े चालू खाता घाटों, जो एशिया में, विशेष रूप से चीन, मध्यपूर्व में स्थित तेल निर्यातक देशों और रूस में भारी आधिक्य द्वारा प्रतिबिंबित हैं, की निरंतरता से इसका पता लगाया जा सकता है जिसने अव्यवस्थित रूप से खुल रही वैश्विक वित्तीय प्रणाली के लिए जोखिम उत्पन्न कर दिये हैं। सामान्य तौर पर वैश्विक असंतुलनों की परिभाषा "वैश्विक अर्थव्यवस्था के लिए विकृतियों को प्रतिबिंबित करनेवाली अथवा जोखिमों को अपरिहार्य करनेवाली, प्रणालीगत तौर पर महत्वपूर्ण अर्थव्यवस्थाओं की बाह्य स्थितियों" के रूप में दी जा सकती है (ब्रैक *ईटी एएल.*, 2008)।

2.13 अमेरिका में डॉट.कॉम खतरे के विस्फोट के बाद की अवधि की विशेषता एक अत्यधिक अनुकूलनकारी मौद्रिक नीति रही जिसने अमेरिका एवं अन्य विकसित देशों में समग्र माँग बढ़ा दी। वित्तीय नवोन्मेषणों सहित निम्नतर ब्याज दरों ने गृहनिर्माण में तेजी को प्रोत्साहित किया तथा आवास और अन्य परिसंपत्ति की कीमतों में वृद्धि को बढ़ावा दिया जिससे धन-संपदा संबंधी परिसंपत्तियों के माध्यम से उपभोग और निवेश को और अधिक प्रेरणा मिली। एक ओर जहाँ अमेरिका में वास्तविक गतिविधि ने शेष विश्व में सक्रियता को एक प्रोत्साहन प्रदान किया, वहीं दूसरी ओर उसके साथ बड़े और वृद्धिशील चालू खाता घाटे रहे (सारणी 2.1)। समग्र रूप में अमेरिका के चालू खाता घाटे (सीएडी) ने 1995 में विद्यमान 114 बिलियन अमेरिकी डॉलर से 2006 में दर्ज 804 बिलियन अमेरिकी डॉलर तक सात-गुनी वृद्धि को देखा (सारणी 2.2)। जीडीपी के प्रतिशत के रूप में अमेरिका का चालू खाता घाटा 1990 के बाद के दशक के शुरुआती वर्षों से हर 5 साल में लगभग दुगुना हो गया (सारणी 2.3)। 2006

[1] भले ही कुछ केंद्रीय बैंकों ने समझ लिया है कि प्रणाली में कुछ अत्यधिक जोखिम विद्यमान हैं, तो भी उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि बचाव निधियों जैसे नये मध्यस्थों तथा डेरिवेटिव्ज़ जैसे नये साधनों के आविर्भाव के कारण ऐसे जोखिम व्यापक तौर पर दूर कर लिये गये हैं एवं समग्र रूप में वित्तीय प्रणाली पर इनका कोई प्रभाव नहीं है।

सारणी 2.1: अमेरिका के समष्टि मानदंड

(प्रतिशत, वार्षिक औसत)

अवधि	जीडीपी संवृद्धि	सीएडी/ जीडीपी	सामान्य सरकारी राजकोषीय शेष/जीडीपी	बचत	निवेश	बचत-निवेश अंतर
1	2	3	4	5	6	7
1981-85	3.3	-1.3	-4.5	18.7	20.8	-2.1
1986-90	3.2	-2.4	-4.1	16.6	19.8	-3.2
1991-95	2.5	-1.1	-4.5	15.4	17.8	-2.4
1996-2000	4.3	-2.6	-0.02	18.1	20.1	-1.9
2001-2005	2.4	-4.8	-3.3	14.9	19.3	-4.4
2005-2008	1.8	-5.3	-3.6	14.4	19.4	-5.0

स्रोत : वैश्विक आर्थिक संभावना, अक्तूबर 2009, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ।

के दौरान चालू खाता घाटा जीडीपी के 6 प्रतिशत के बहुत नजदीक था, जो अमेरिका के लिए तब तक का उच्चतम चालू खाता घाटा था और जो वैश्विक जीडीपी का लगभग 1.5 प्रतिशत था। यद्यपि वह तब से कम हो गया है, तथापि वह ऐतिहासिक मानकों के अनुसार ऊँचा बना हुआ है। चालू खाता घाटों में अत्यंत वृद्धि केवल अमेरिका तक ही सीमित नहीं रहा; वास्तव में; 1996 से अनेक अन्य प्रमुख औद्योगिक देशों ने भी अपने चालू खातों को घाटे में जाते हुए देखा है, जिनमें फ्रांस, इटली, स्पेन, आस्ट्रेलिया और युनाइटेड किंगडम शामिल हैं। इनमें से अधिकांश देशों ने आवास-मूल्य में भारी वृद्धि तथा घरेलू धन-संपदा में बढ़ोतरी अनुभव की (बेर्नांके, 2005)। उदाहरण के लिए, 1996 से आय की तुलना में धन-संपदा का अनुपात फ्रांस में 14 प्रतिशत, इटली में 12 प्रतिशत तथा युनाइटेड किंगडम में 27 प्रतिशत बढ़ गया है।

2.14 चालू खाता संबंधी भारी असंतुलनों के कारण पूँजी ने पूँजी-निर्धन उभरते देशों से पूँजी-धनी औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं, विशेष रूप से अमेरिका में पलायन किया। साथ ही, वित्तीय संकटों की शृंखलाओं की प्रतिक्रिया में 1990 के बाद के दशक में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं ने अनुभव किया कि अंतरराष्ट्रीय पूँजी प्रवाहों का प्रबंध करने के लिए या तो उन्होंने नई कार्यनीतियाँ चुन ली हैं अथवा वे नई कार्यनीतियाँ अपनाने के लिए विवश हो गई हैं। सामान्यत: इन कार्यनीतियों में वित्तीय पूँजी के निवल आयातक होने की स्थिति से निवल निर्यातक होने की स्थिति में परिवर्तन संबद्ध था, जिसका परिणाम भारी चालू खाता आधिक्य थे (चार्ट II.1)। यह परस्पर विरुद्ध परिदृश्य उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई), विशेष रूप से चीन में बचत दरों में उल्लेखनीय वृद्धि, निवेश के अवसरों की न्यूनता, तथा अपनी मुद्रा की मूल्यवृद्धि को रोकने और पूँजी प्रवाहों के अचानक उलट जाने के विरुद्ध स्वयं की सुरक्षा के रूप में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं द्वारा धारित भारी विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों के संचय के कारण था। इनमें से अधिकांश अर्थव्यवस्थाओं, विशेष रूप से पूर्वी एशियाई देशों ने वर्तमान दशक के प्रारंभ से ही विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों की विपुल राशियाँ निर्मित करना शुरू किया।

सारणी 2.2: चालू खाता शेष

(बिलियन अमेरिकी डॉलर)

	1990-94	1995-99	2000-04	2005	2006	2007	2008	2009
1	2	3	4	5	6	7	8	9
चीन	5.5	18.6	37.6	160.8	253.3	371.8	426.1	283.8
फ्रांस	0.9	32.3	18.2	-9.1	-11.6	-25.9	-64.8	38.8
जर्मनी	-10.2	-19.4	36.5	142.8	188.4	253.8	245.7	160.6
भारत	-3.8	-5.0	2.7	-10.3	-9.3	-11.3	-26.6	-25.9
जापान	97.4	101.5	125.7	165.7	170.4	211.0	157.1	141.7
कोरिया	-3.5	5.0	13.2	15.0	5.4	5.9	-5.8	42.7
मलेशिया	-3.2	0.6	10.4	20.7	25.8	29.2	38.9	32.0
फिलीपीन्स	-2.1	-2.3	-0.5	2.0	5.3	7.1	3.6	8.6
रूस	3.1	8.5	41.0	84.4	94.3	77.0	102.4	47.5
सऊदी अरब	-15.4	-3.4	23.2	90.1	99.1	93.5	132.5	20.5
दक्षिण अफ्रीका	1.5	-1.9	-1.5	-8.6	-13.9	-20.1	-19.6	-11.4
स्विटजरलैंड	14.3	24.9	32.5	52.2	59.5	43.5	11.9	43.1
थाईलैंड	-6.9	-0.8	5.3	-7.6	2.3	15.7	1.6	20.3
तुर्की	-2.2	-1.9	-5.7	-22.1	-31.9	-37.7	-41.3	-13.6
संयुक्त अरब अमीरात	2.9	2.3	8.0	22.6	36.2	19.5	22.2	-7.0
युनाइटेड किंगडम	-21.9	-13.3	-34.6	-59.8	-80.8	-75.5	-40.7	-28.8
अमेरिका	-66.5	-178.4	-485.5	-748.7	-803.5	-726.6	-706.1	-418.0

टिप्पणी : (-) घाटे को निर्दिष्ट करता है ।

स्रोत : वैश्विक आर्थिक संभावना डाटाबेस, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ।

सारणी 2.3: चालू खाता शेष

(जीडीपी का प्रतिशत)

देश	1990-94	1995-99	2000-04	2005	2006	2007	2008	2009
1	2	3	4	5	6	7	8	9
चीन	1.4	1.9	2.4	7.2	9.5	11.0	9.4	5.8
फ्रांस	0.0	2.0	1.3	-0.4	-0.5	-1.0	-2.3	-1.5
जर्मनी	-0.4	-0.8	1.4	5.1	6.5	7.6	6.7	4.8
भारत	-1.3	-1.3	0.5	-1.3	-1.1	-1.0	-2.2	-2.1
जापान	2.4	2.3	2.9	3.6	3.9	4.8	3.2	2.8
कोरिया	-1.0	1.9	2.1	1.8	0.6	0.6	-0.6	5.1
मलेशिया	-5.2	1.8	9.8	15.0	16.4	15.7	17.5	16.7
फिलीपीन्स	-4.0	-2.8	-0.7	2.0	4.5	4.9	2.2	5.3
रूस	0.9	3.5	11.2	11.0	9.5	6.0	6.2	3.9
सऊदी अरब	-11.7	-2.4	10.6	28.5	27.8	24.3	27.9	5.5
दक्षिण अफ्रीका	1.2	-1.3	-0.7	-3.5	-5.3	-7.0	-7.1	-4.0
स्विटजरलैंड	5.7	8.8	10.8	14.0	15.2	10.0	12.4	8.7
थाईलैंड	-6.4	1.0	4.2	-4.3	1.1	6.3	-0.6	7.7
तुर्की	-0.9	-0.8	-1.6	-4.6	-6.0	-5.8	-5.7	-2.3
संयुक्त अरब अमीरात	8.3	4.6	9.9	16.9	22.1	9.4	8.5	-3.1
युनाइटेड किंगडम	-2.1	-1.0	-2.0	-2.6	-3.3	-2.7	-1.5	-1.3
अमेरिका	-1.0	-2.1	-4.5	-5.9	-6.0	-5.2	-4.9	-2.9
ज्ञापन :								
यूरो क्षेत्र	n.a.	0.9	0.4	0.4	0.4	0.4	-0.8	-0.4

टिप्पणी : (-) घाटे को निर्दिष्ट करता है ।
स्रोत : वैश्विक आर्थिक संभावना डाटाबेस, अप्रैल 2010, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ।

उभरते बाजार वाले देशों ने आरक्षित निधि की इन विपुल धनराशियों को पूँजी प्रवाहों के ऐसे आकस्मिक विपर्ययों से अपनी रक्षा करने के लिए स्वागत-योग्य 'युद्ध-पेटियों' (वार चेस्ट) के रूप में देखा जिस तरह की स्थिति एशियाई संकट के दौरान बनी थी।

चार्ट II.1 : वैश्विक असंतुलन : 1990-2009

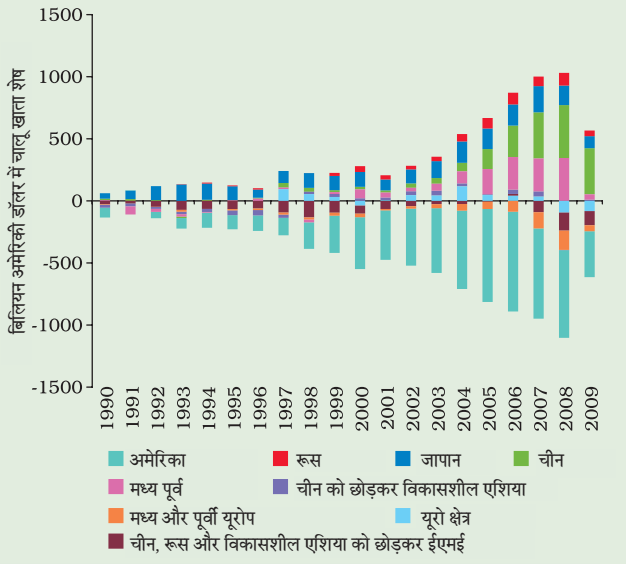

स्रोत : वैश्विक आर्थिक संभावना, अप्रैल 2010, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

बचत के आधिक्य की परिकल्पना

2.15 भारी वैश्विक चालू खाता असंतुलन दोनों उभरते और उन्नत राष्ट्रों में बचत-निवेश व्यवहार में भी प्रतिबिंबित हुए। यही कारण है कि वैश्विक असंतुलन अब सार्वदेशिक तौर पर 'बचत के आधिक्य' की परिकल्पना पर आरोपित किये जाते हैं, जो यह कहता है कि अमेरिका का चालू खाता घाटा शेष विश्व में, विशेष रूप से उभरते बाजार वाले देशों में बचत के आधिक्य द्वारा प्रेरित है (बेर्नांके, 2005)। एक ओर जहाँ अमेरिका में बचत और निवेश के बीच का अंतर 2001 में विद्यमान ज़ीडीपी के माइनस 2.7 प्रतिशत से लगभग दुगुना बढ़कर 2008 में जीडीपी का माइनस 5.6 प्रतिशत हो गया, वहीं दूसरी ओर उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के मामले में इसकी विपरीत स्थिति देखी गई जहाँ अत्यधिक बचत ने उल्लेखनीय चालू खाता आधिक्यों को प्रेरित किया।

2.16 जीडीपी के प्रतिशत के रूप में वैश्विक सकल बचत में 2001 में स्थित लगभग 21.4 प्रतिशत से 2007 में प्राय: 24.2 प्रतिशत तक उल्लेखनीय वृद्धि रही। अधिकांश वृद्धि ने एशियाई संकट के बाद की अवधि में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की अपेक्षाकृत उच्च बचत दर को प्रतिबिंबित किया जहाँ 2001 और

2007 के बीच कुल बचत में तिगुनी से भी अधिक वृद्धि ने 43 प्रतिशत तक बचत करने के लिए सीमांत प्रवृत्ति को बढ़ा दिया था (अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक, 2009)। सकल रूप में वैश्विक बचत में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं का अंश 1992-96 में स्थित 25 प्रतिशत से बढ़कर 2003 में 30 प्रतिशत हुआ तथा 2007 में और बढ़कर 37 प्रतिशत हो गया। तुलना करने पर वैश्विक जीडीपी में ईएमई का अंश बिलकुल इतनी तेजी से नहीं बढ़ा जो 1992-96 के 21 प्रतिशत से बढ़कर 2007 में 31 प्रतिशत हुआ। उभरते बाजारों के भीतर औसत बचत दरों में वृद्धि चीन और मध्य पूर्व के लिए उल्लेखनीय थी। इसके विपरीत, अमेरिका ने 2001 से बचत में गिरावट पाई (सारणी 2.4)।

2.17 इन अर्थव्यवस्थाओं में अत्यधिक बचत के पीछे पूर्व सावधानी का उद्देश्य मुख्य कारण था। उभरती अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय बाजार के अल्प विकास सहित, पर्याप्त सुरक्षा जाल के अभाव तथा परिणामत: स्व-सुरक्षा की आवश्यकता ने इन अर्थव्यवस्थाओं में, विशेष रूप से चीन जैसे देशों में निजी एजेंटों को अधिक बचत करने के लिए प्रेरित किया (फ्रांसिया, 2009)। चीन में एक शिशु वाली नीति ने भी बचत में वृद्धि के लिए योगदान किया है क्योंकि बच्चे जीवन-चक्र की बचत के लिए प्रतिस्थापक हैं (मोदीग्लियानी और कैओ, 2004)। साथ ही, जैसे जैसे प्रति व्यक्ति आय उच्च दरों पर बढ़ जाती है, उपभोग सामान्यत: आय की गति से आगे नहीं बढ़ता तथा बचत की दर वृद्धि की प्रवृत्ति दर्शाती है। ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में अपेक्षाकृत अधिक प्रवसन ने बचत में वृद्धि को बढ़ा दिया क्योंकि प्रवासियों की उपभोग की आदतें अपरिवर्तित रहीं भले ही उनकी आय में वृद्धि हुई थी।

2.18 संकट से पूर्व की अवधि में विभिन्न ईएमई क्षेत्रों में बचत-निवेश संतुलन भी भिन्न-भिन्न रहे। चीन में सकल बचत सकल निवेश से बड़े अंतर से अधिक रही : 2008 में बचत दर जीडीपी के 59 प्रतिशत तक पहुंची यद्यपि चीन ने जीडीपी के लगभग 49 प्रतिशत की निवेश दर को बनाये रखा जो विश्व में उच्चतम निवेश दरों में से एक है। जबकि भारत ने भी बचत दर में एक तीव्र वृद्धि को देखा, निवेश दर में एक समान वृद्धि के कारण बचत-निवेश का अंतर ऋणात्मक रहा। अन्य एशियाई उभरती अर्थव्यवस्थाओं ने 2003 और 2007 के बीच बचत और निवेश दरों में केवल एक साधारण वृद्धि को देखा, जब दोनों एशियाई संकट से पहले के स्तरों से नीचे रहीं।

2.19 यह विश्वास किया जाता है कि तेल निर्यातकों द्वारा उच्चतर निवल बचत ने भी वैश्विक बचत के आधिक्य में योगदान किया है। तेल की कीमतों में तीव्र वृद्धि के परिणामस्वरूप तेल निर्यातकों के, उल्लेखनीय रूप से मध्य पूर्व एवं रूस, नाइजीरिया और वेनेजुएला जैसे देशों के भी चालू खाता आधिक्य बढ़ गये क्योंकि तेल राजस्व में उछाल आई। मध्य पूर्व और अफ्रीका का संयुक्त चालू खाता आधिक्य 1996 और 2004 के बीच 115 बिलियन अमेरिकी डॉलर से भी अधिक बढ़ा। जीडीपी के प्रतिशत के रूप में मध्य पूर्व का चालू खाता आधिक्य 2000 के लगभग 1.0 प्रतिशत से बढ़कर 2005 में लगभग 18.5 प्रतिशत हो गया। इस प्रकार विकासशील विश्व की संयुक्त चालू खाता स्थिति में परिवर्तनों के परिणामस्वरूप कई विकासशील और उभरते बाजार वाले देश शेष विश्व के लिए निवल उधारकर्ताओं के बजाय बड़े निवल उधारदाता बन गये।

सारणी 2.4: बचत और निवेश

(जीडीपी का प्रतिशत)

	बचत				निवेश			
देश	1995	2001	2007	2008	1995	2001	2007	2008
1	2	3	4	5	6	7	8	9
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	21.4	20.0	19.9	18.8	21.6	20.6	21	20.4
अमेरिका	16.0	16.4	14.2	11.9	18.6	19.1	18.8	17.5
जापान	30.5	26.9	28.9	26.7	28.4	24.8	24.1	23.5
जर्मनी	21.1	19.5	25.8	25.7	22.2	19.5	18.3	19.3
युनाइटेड किंगडम	15.9	15.4	15.3	15.1	17.2	17.4	18.2	16.8
अन्य	21.4	22.5	22.5	21.9	20.1	21.2	23.5	23.2
उभरती अर्थव्यवस्थाएँ	26.8	26.6	35.4	36.6	27.6	25.1	30.2	31.8
चीन	42.1	37.6	57.6	59.0	41.9	36.3	46.6	49.0
भारत	24.4	23.4	37.7	36.3	26.0	23.1	38.7	39.1
अन्य उभरता एशिया	33.3	28.9	30.9	30.4	33.9	24.6	25.1	26.3
मध्य पूर्व	24.0	33.3	49.6	50.8	20.9	24.8	26.5	26.7

स्रोत : वैश्विक आर्थिक संभावना, अक्तूबर 2009, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ।

2.20 बचत के आधिक्य की परिकल्पना का एक मत यह है कि बचत के आधिक्य की अपेक्षा निवेश का अकाल था। पूर्वी एशियाई संकट ने इन अर्थव्यवस्थाओं में निवेश पर स्थायी मंदी के प्रभाव डाल दिये हैं (बैरो और ली, 2003)। जबकि अधिकांश पूर्वी एशियाई ईएमई में बचत दर, जो सामान्यत: औद्योगीकृत देशों की बचत दरों से उच्चतर रही है, ने एक साधारण गिरावट दर्शाई, निवेश की दरों ने तीव्रतर कमी प्रदर्शित की, जिसके परिणामस्वरूप उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में बचत-निवेश का अंतर चौड़ा हो गया। एक समर्थक धारणा यह है कि उन्नत देशों में उपभोग की अधिकता ने सारे विश्व में चालू खाता विसंतुलन को तीव्र कर दिया है। एक शिथिल रूप से विनियमित और अपर्यवेक्षित वित्तीय प्रणाली में उच्चतर उन्नयन (लीवरेजिंग) से युक्त अत्यधिक उपभोग ने आवास संबंधी खतरे (बबल) को और तेज कर दिया (फ्रांसिया, 2009)।

विनिमय दर का अपर्याप्त लचीलापन

2.21 अनेक उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ अपनी निर्यात-प्रेरित संवृद्धि की कार्यनीति के भाग के रूप में जानबूझकर अधोमूल्यित विनिमय दरें जारी रख रही थीं। 2003 और 2008 के मध्य के बीच अनेक उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं ने उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के साथ तीव्र एकीकरण अनुभव किया तथा संवृद्धि की प्रेरक शक्ति के रूप में निर्यातों पर अत्यधिक निर्भर बन गये। चीन के लिए जीडीपी की तुलना में वस्तुओं और सेवाओं के निर्यातों का अंश 1992-95 के दौरान दर्ज लगभग 23 प्रतिशत से बढ़कर 2003 के दौरान लगभग 30 प्रतिशत हुआ तथा 2007 के दौरान यह आगे और बढ़कर लगभग 43 प्रतिशत हो गया, परंतु 2008 में जीडीपी के 35 प्रतिशत तक नीचे आया (सारणी 2.5)। समग्र रूप में उभरते एशिया के लिए निर्यात एशियाई संकट से पूर्व की अवधि में पहले से ही विद्यमान उच्च स्तरों से बढ़कर 2007 में जीडीपी का लगभग 75 प्रतिशत हो गये। किसी विनिमय दर की वृद्धि को रोकने के लिए उद्दिष्ट विदेशी मुद्रा के हस्तक्षेपों के संदर्भ में आरक्षित निधियाँ संचित हो गई थीं (माइकेल डूले *ईटी एएल.,* 2004)। देशों ने विशिष्ट रूप से निर्यात-प्रेरित संवृद्धि का अनुसरण किया क्योंकि यह माना गया कि देशी संसाधनों का पूर्णत: उपयोग करने के लिए देशी माँग अपर्याप्त है। इसके अलावा, इन आधिक्यों का उद्देश्य पूँजी प्रवाहों में अचानक अवरोध उत्पन्न होने की स्थिति को सँभालने के लिए पूर्व सावधानी से युक्त आरक्षित निधियों का निर्माण करना था।

सारणी 2.5: वस्तुओं और सेवाओं के निर्यात

(जीडीपी का प्रतिशत)

देश	1992-95	2003	2005	2007	2008
1	2	3	4	5	6
चीन	23.3	29.6	37.4	42.5	35.0
फ्रांस	21.8	25.6	26.1	26.5	..
जर्मनी	23.4	35.6	40.9	46.7	..
भारत	10.0	14.8	19.9	21.2	24.0
जापान	9.3	12.0	14.3	..	..
कोरिया	27.1	35.4	39.3	41.9	52.9
मलेशिया	84.5	106.9	117.5	110.2	..
फिलीपीन्स	32.7	49.6	47.6	42.5	36.9
रूस	39.4	35.2	35.2	30.5	33.4
सऊदी अरब	36.4	46.1	60.9	65.0	69.9
दक्षिण अफ्रीका	22.2	28.1	27.4	31.6	36.3
स्विटजरलैंड	36.2	44.0	48.8	..	..
थाईलैंड	38.9	65.7	77.2	76.0	..
तुर्की	17.3	23.0	21.9	22.0	23.6
संयुक्त अरब अमीरात	71.4	79.0	92.6	..	..
युनाइटेड किंगडम	25.9	25.5	26.5	25.9	..
अमेरिका	10.0	10.0	11.0	11.9	12.9

.. : उपलब्ध नहीं ।

स्रोत : वैश्विक विकास संकेतक, विश्व बैंक ऑनलाइन डाटाबेस ।

2.22 फिर भी, यह तर्क विनिमय दर नीति पर अत्यधिक बल देती है। विकसित अर्थव्यवस्थाओं में किसी बढ़ाई गई अवधि के लिए अधिक माँग का अस्तित्व उनकी अपनी समष्टि-आर्थिक और मौद्रिक नीतियों द्वारा अधिक प्रभावित हुआ तथा यह उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में और भी अधिक लचीली विनिमय दर नीतियों के साथ जारी रहा होगा। यह तर्क इस विचार पर आधारित है कि उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं से कम कीमत वाली उपभोक्ता वस्तुएँ और सेवाएँ दुनिया भर में उपलब्ध हैं। फिर भी, यूरो क्षेत्र जैसे अन्य क्षेत्रों ने समग्र रूप में पूरे वर्तमान दशक में बड़े चालू खाता घाटे नहीं दर्शाये हैं। वास्तव में, उसने 2008 में एक छोटे-से घाटे को छोड़कर आधिक्य ही प्रदर्शित किया है। इस प्रकार, कुछ ईएमई में लचीली विनिमय दर नीतियों के होते हुए भी अमेरिका का चालू खाता घाटा बड़े परिमाण में जारी रहता, यद्यपि अमेरिका के लिए आयातों का स्रोत भिन्न-भिन्न रहा हो। अत: एशियाई ईएमई में विनिमय दर के लचीलेपन का अनुभूत अभाव अमेरिका में बड़े और वर्धमान चालू खाता घाटों को पूरी तरह स्पष्ट नहीं कर सकता (मोहन, 2009)।

2.23 उभरते हुए देशों के चालू खाता आधिक्यों का उपयोग अमेरिका जैसी बाजार-आधारित वित्तीय प्रणालियों से युक्त अर्थव्यवस्थाओं में परिसंपत्तियाँ खरीदने के लिए किया गया। प्रभावी

जोखिम प्रबंध के लिए नये उत्पादों के तेज नवोन्मेषण से युक्त अमेरिकी वित्तीय बाजारों की गहराई ने वैश्विक निवेशकों की निधियों के लिए अमेरिका को एक आकर्षक गंतव्य बना दिया है। एक अन्य कारक अमेरिकी डॉलर की विशेष अंतरराष्ट्रीय हैसियत है। चूँकि डॉलर अग्रणी अंतरराष्ट्रीय आरक्षित निधि मुद्रा है, तथा चूँकि कुछ उभरते बाजार वाले देश अपनी स्वयं की मुद्राओं के मूल्यों का प्रबंध करते समय एक मूल्यमान के रूप में डॉलर का प्रयोग करते हैं, अत: विकासशील विश्व से बाहर जानेवाली बचत को डॉलर-मूल्यवर्गीकृत परिसंपत्तियों, जैसे अमेरिकी खजाना प्रतिभूतियों में अपेक्षाकृत अधिक निर्दिष्ट किया गया है।

मौद्रिक नीति का सरलीकरण और निम्न वास्तविक ब्याज दरें

2.24 वैश्विक असंतुलन उन्नत अर्थव्यवस्थाओं, विशेष रूप से अमेरिका में अत्यधिक शिथिल मौद्रिक नीति द्वारा सुस्पष्ट कर दिये गये थे। कुछ सीमा तक कुछ उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में पर्याप्त विनिमय दर के लचीलेपन के अभाव, जिसने अधिक चलनिधि और निम्न ब्याज दरों को बढ़ाया, ने समस्या को तीव्र कर दिया। वास्तव में, चूँकि प्रौद्योगिकी के स्टॉक 2000 में निक्रिय हो गये थे, अत: विशेष रूप से दशक के पहले आधे भाग के दौरान अमेरिका, यूरो क्षेत्र और जापान जैसी प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं द्वारा उल्लेखनीय मौद्रिक सुविधा उपलब्ध कराई गई है। अमेरिकी फेड निधियों की दर पिछले दो दशकों की तुलना में निम्नतम रही। अमेरिका में वास्तविक ब्याज दर[2] 2001 के मध्य से 2005 के अंत तक निरंतर 1 प्रतिशत से नीचे थी; दरअसल इस अवधि के काफी हिस्से के लिए यह ऋणात्मक थी (चार्ट II.2)। सामान्य तौर पर यह स्वीकार किया गया कि उक्त फेड ने 2002-2006 में अत्यधिक शिथिल मौद्रिक नीति का अनुसरण किया था (टेलर, 2007)। यूरो क्षेत्र में मंदी से युक्त संवृद्धि की प्रतिक्रिया में यूरोपीय केंद्रीय बैंक (ईसीबी) ने 2001 के मध्य से 2005 के बीच की अवधि के अधिकांश भाग के लिए अल्पावधि वास्तविक ब्याज दरें 1 प्रतिशत से नीचे धारित कीं; जापान में वास्तविक ब्याज दरें पिछले दशक के अधिकांश भाग के लिए लगभग 0 से 1 प्रतिशत के आसपास मँडराती रहीं। उक्त निम्न ब्याज दरें न केवल उच्चतर संवृद्धि और निम्न मुद्रास्फीति, बल्कि उनकी घटी हुई अस्थिरता के रूप में भी सुधरे हुए समष्टि-आर्थिक कार्यनिष्पादन के कारण संभव हुई थीं। 1990 के बाद के दशक के शुरुआती वर्षों से प्रारंभ हुई

चार्ट II.2 : अमेरिकी वास्तविक ब्याज दर और प्रभावी फेड निधि दर

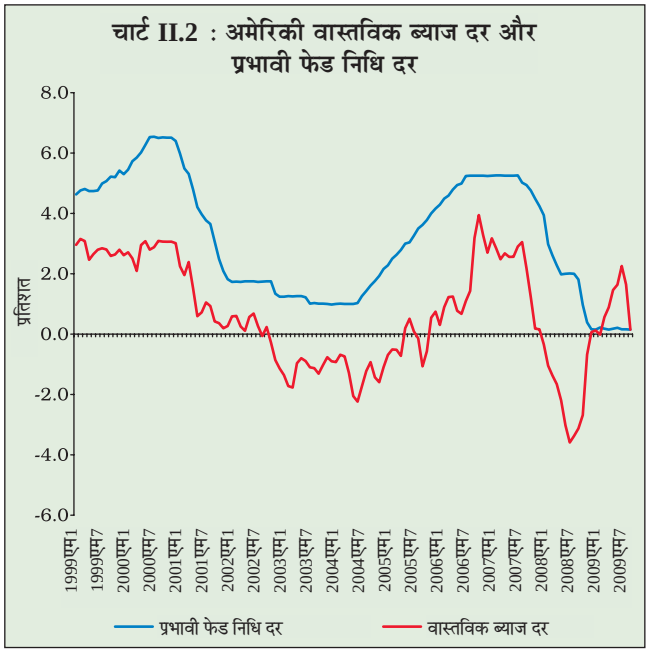

अवधि, जिसने अमेरिकी अर्थव्यवस्था में समष्टि-आर्थिक अस्थिरता में भारी कमी को देखा, को 'महान नरमी' के रूप में अभिहित किया गया। बेर्नांके (2004) ने इस परिदृश्य के लिए तीन स्पष्टीकरण प्रस्तुत किये, जिनमें शामिल हैं संरचनात्मक परिवर्तन (संस्थागत सुधार, वैश्वीकरण और तकनीकी प्रगति), सुधरी हुई समष्टि-आर्थिक नीतियाँ (मूल्य-स्थिरता पर सुस्पष्ट फोकस) तथा अच्छी किस्मत (अपेक्षाकृत छोटे और विरल आघात)। इसके अतिरिक्त, चीन और अन्य उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं से अपेक्षाकृत सस्ती वस्तुओं और सेवाओं ने उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मापित मुद्रास्फीति को निम्न रखने में सहायता की।

2.25 अल्पावधि वास्तविक ब्याज दरों में गिरावट के साथ ही, दीर्घावधि वास्तविक ब्याज दरें भी वर्तमान दशक के पहले आधे भाग के दौरान निम्न रहीं। इस संबंध में दो अलग-अलग धारणाएँ हैं। पहली, वैश्विक बचत के आधिक्य को देखते हुए एक सिद्धांत यह सुझाव देता है कि निवेश के एक उच्चतर स्तर पर वैश्विक संतुलन स्थापित करने के लिए वास्तविक दीर्घावधि ब्याज दर को अवश्य गिर जाना चाहिए (बेर्नांके, 2005)। दूसरा सिद्धांत यह है कि सीमित वित्तीय विकास से युक्त उभरते बाजारों में वित्तीय संकटों और उच्च बचत ने निम्न जोखिम वाली परिसंपत्तियों की वैश्विक स्तर पर कमी निर्मित की, जिससे निम्नतर दीर्घावधि बांड दरों के लिए मार्ग प्रशस्त हुआ (कैबलेरो *ईटी एएल.*, 2008)।

[2] वास्तविक ब्याज दर उपभोक्ता मूल्य मुद्रास्फीति को घटाकर अमेरिकी फेड निधियों की दर है।

2.26 निम्न ब्याज दर व्यवस्था के विभिन्न प्रभाव रहे थे। विपुल चलनिधि से युक्त निम्न ब्याज दरों ने अनेक अर्थव्यवस्थाओं में सुदृढ़ ऋण संवृद्धि के लिए प्रोत्साहन प्रदान किया, तथा देशी असंतुलनों के निर्माण के लिए मार्ग प्रशस्त किया। उदाहरण के लिए, अमेरिका और युनाइटेड किंगडम में 2003 और 2007 के मध्य के बीच ऋण वार्षिक तौर पर क्रमश: 7 प्रतिशत और 10 प्रतिशत बढ़ा। जबकि सस्ता ऋण गृहनिर्माण में तेजी और घरेलू परिक्रामी कर्ज में नाटकीय वृद्धि के लिए आधार बना था, निम्न ब्याज दर ने भी अर्जक परिसंपत्तियों से उत्पन्न होनेवाले राजस्व प्रवाहों के वर्तमान बट्टागत मूल्य को बढ़ा दिया, जिसके द्वारा परिसंपत्ति कीमतों में बढ़ोतरी की और परिसंपत्ति संबंधी खतरों (बबल्स) का निर्माण किया। अमेरिका, युनाइटेड किंगडम और कई यूरोपीय देशों में 2003 और 2007 के बीच वास्तविक आवास कीमतों में 30 प्रतिशत से भी अधिक वृद्धि हुई। तथापि, मौद्रिक नीति इस परिसंपत्ति कीमत संबंधी मुद्रास्फीति के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं कर सकी जो अब विख्यात ग्रीनस्पैन कट्टरपन द्वारा प्रेरित है जिसके अनुसार पहला, परिसंपत्ति कीमतों के खतरों को तत्काल पहचानना कठिन होता है तथा परिसंपत्ति कीमतों को प्रेरित करनेवाले आधारभूत कारक प्रत्यक्ष रूप से देखे नहीं जा सकते। दूसरा, मौद्रिक नीति एक ऐसा दुर्बल साधन है कि वह परिसंपत्ति कीमतों में उछाल को निष्फल नहीं कर सकती। और तीसरा, कोई भी केंद्रीय बैंक बाजार से अधिक जानने के लिए अनुमान नहीं लगा सकता क्योंकि वित्तीय बाजार हर प्रकार से कार्यकुशल, समझदार और स्व-सुधारक हैं। इस प्रकार, मौद्रिक नीति के लिए यह अधिक किफायती माना गया कि वह खतरे (बबल) को पहले ही छेदने के बजाय उसके समाप्त होने (फटने) तक प्रतीक्षा करे और उसके बाद उसे साफ-सुथरा रखे (सुब्बाराव, 2010)।

2.27 इसके अलावा, असाधारण रूप से निम्न स्तरों पर ब्याज दरों के संबंध में वित्तीय संस्थाओं ने उन प्रतिलाभों को उत्पन्न करने में कठिनाई महसूस की जिनके लिए उनके सामान्यत: दीर्घावधि स्वरूप की संविदाओं में वचन दिया गया है, जिसने उन्हें लाभप्रद रहने के लिए आवश्यक प्रतिलाभों को उत्पन्न करने की आशा में अधिक जोखिम उठाने के लिए प्रेरित किया। अत: ऋण की तेजी ने तीव्र वित्तीय नवोन्मेषणों के लिए आधार निर्मित किया तथा जोखिम उठाने के व्यवहार को बढ़ा दिया। फिर भी, जब वित्तीय असंतुलन निर्मित हो रहे थे, तब भी समष्टि-आर्थिक स्थिरता कायम रखी गई (जो महान नरमी का एक प्रतिफलन था), जिससे जोखिमों के कम कीमत-निर्धारण को प्रोत्साहन मिला। तत्काल कारण 'उत्पादन और वितरण' बंधक का मॉडल एवं परिसंपत्ति-आधारित प्रतिभूतियाँ (एबीएस) और संपार्श्विकीकृत ऋण दायित्व (सीडीओ) जैसे सुनियोजित वित्त उत्पाद थे, जिन्होंने जोखिम उठाने की प्रवृत्ति में सामान्य वृद्धि को सुसाध्य बनाया। गृहनिर्माण में तेजी, ऋण द्वारा वित्तपोषित उपभोक्ता व्यय में उछाल और लाभ के लिए खोज ने कई अर्थव्यवस्थाओं में समष्टि-आर्थिक संरचना को विरूपित किया।

2.28 इस प्रकार उभरती अर्थव्यवस्थाओं में 'ऋण के आधिक्य' के साथ वैश्विक असंतुलनों ने तथा अमेरिका और अन्य उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में शिथिल मौद्रिक नीति ने निम्न वास्तविक ब्याज दरों और लाभ के लिए तीव्र खोज के एक नये युग का सूत्रपात किया जिसका परिणाम अनेक वित्तीय आधिक्यों में हुआ। ये दोनों ही कारक अधारणीय खतरों के स्पष्ट पूर्वगामी संकेत थे जिनकी निम्न मुद्रास्फीति सहित उच्च वैश्विक संवृद्धि के संकट-पूर्व चरण के कारण सामान्यत: उपेक्षा की गई (चक्रवर्ती, 2009)। सैद्धांतिक रूप से 2000 के बाद की अवधि की विशेषता ऐसी अवधि के रूप में मानी जा सकती है जब दोनों आइएस और एलएम वक्र इस प्रकार उत्पादन को निम्न ब्याज दरों पर बनाये रखते हुए बाईं ओर अंतरित हुए (पोर्टेस, 2009)। यह चिंता व्यक्त की गई थी कि वैश्विक असंतुलनों का निरंतर विस्तारण उभरते बाजारों से अमेरिका में पूँजी प्रवाहें के अचानक रुक जाने से अव्यवस्थित रूप में खुल सकता है जिससे अमेरिका में संकट पैदा हो सकता है जो डॉलर के भारी मूल्यह्रास के लिए प्रेरणा बन सकता है (ऑब्स्टफेल्ड और रॉगोफ, 2005)। तथापि, संकट के लिए प्रेरणा वैश्विक असंतुलनों से नही, बल्कि अमेरिकी अर्थव्यवस्था में आवास संबंधी खतरे से आई थी। जब वित्तीय असंतुलन बन रहे थे, तब भी समष्टि-आर्थिक स्थिरता कायम रखी गई थी जिसने फिर जोखिमों के कम मूल्य-निर्धारण को प्रोत्साहित किया।वित्तीय नवोन्मेषण, विनियामक अंतरपणन, उधार देने में भ्रष्टाचार, उत्पादन और वितरण मॉडल का अत्यधिक उपयोग एवं सब-प्राइम ऋणों का प्रतिभूतिकरण और पर्याप्त रूप से जोखिम का आकलन किये बिना एएए अंशों के रूप में उनका समूहन अमेरिका में वित्तीय बाजार की संस्थाओं के अत्यधिक उन्नयन (लीवरेज) के रूप में परिणत हुए।

अमेरिका में घरेलू असंतुलन

2.29 एक ओर जहाँ वैश्विक असंतुलन वर्तमान संकट के लिए सामान्य समष्टि-आर्थिक अथवा "समष्टिवित्तीय" स्पष्टीकरण प्रस्तुत करते हैं, वहीं दूसरी ओर तत्काल स्पष्टीकरण जो एक प्रकार से पहले स्पष्टीकरण का समादर करता है, अमेरिका के आवास बाजार के

असम कार्यों तथा अमेरिका में हाल ही में प्रमुखता प्राप्त विशिष्ट प्रकार के वित्तीय उत्पादों की कमियों पर फोकस करता है।

अमेरिकी आवास बाजार का कार्य

2.30 1990 के बाद के दशक के मध्य तक अमेरिका के बंधक बाजार में भारी संख्या में आवास ऋण उत्कृष्ट (प्राइम) उधारकर्ताओं को दिये गये थे। 1990 के बाद के दशक के परवर्ती वर्षों से अमेरिका में आवास ऋणों में वृद्धि बहुत अधिक रही है,जो अमेरिका के जीडीपी से भी उच्चतर संवृद्धि दरें दर्ज करती हैं। इस उधार का एक बड़ा भाग निश्चित रूप से सब-प्राइम उधार था। 12 वर्षों के भीतर कुल बंधक उत्पादन में उनका अंश 1994 के 4.5 प्रतिशत से उछलकर 2006 में 20 प्रतिशत से भी अधिक हो गया (सारणी 2.6)। सब-प्राइम उधार का आशय ऐसे उधारकर्ताओं को ऋण देने की प्रथा से है जो अपने खराब ऋण इतिहास के कारण अथवा यह साबित करने में कि ऋण की मासिक किश्तें भरने के लिए उनके पास पर्याप्त संसाधन हैं, अपनी असमर्थता के कारण बाजार की ब्याज दरों के लिए अर्हता-प्राप्त नहीं हैं। सब-प्राइम ऋण अथवा बंधक, दोनों ऋणदाता और ऋणी के लिए जोखिम से भरे हैं क्योंकि इनमें उच्च ब्याज दरों, खराब ऋण इतिहास और धुँधली वैयक्तिक वित्तीय स्थितियों का संयोजन है जो प्राय: सब-प्राइम आवेदकों से संबद्ध हैं। मंदी से भरी वर्ष 2001 और 2002 की अवधि को छोड़कर (डॉट.कॉम खतरे के विस्फोट के बाद) जब आवास कीमत (केस-शिलर) मुद्रास्फीति ने कुछ मंदन दर्शाया, तब सब-प्राइम उधार ने विशेष रूप से 2003-06 की अवधि में मजबूत संवृद्धि दर्शाई।

2.31 माँग की ओर, आवास को प्रत्येक व्यक्ति के लिए वहन करने योग्य बनाने के लिए उद्दिष्ट निम्न ब्याज दरों ने आवास की कीमतों को बढ़ा दिया। आपूर्ति की ओर वित्तीय उत्पादों में तीव्र नवोन्मेषण सहित, 'उत्पादन से वितरण तक' के बंधक मॉडल और ऋणों के प्रतिभूतिकरण के संयोजन के परिणामस्वरूप निधियों की उपलब्धता में भारी वृद्धि हुई और इससे आवास ऋण आकर्षक बने। जबकि ऋण की मात्रा बढ़ी, उसकी गुणवत्ता में कमी आई। इनमें से अधिकांश ऋण कम मार्जिन राशि के साथ थे और कम दुष्कर भुगतानों से युक्त थे।

2.32 किसी भी परंपरागत बैंकिंग व्यवस्था में जब कोई बैंक आवास ऋण उपलब्ध कराता है, तब उसे ऋण जोखिम (उधारकर्ता द्वारा चूक का जोखिम), बाजार जोखिम (ऋण की अवधि में ब्याज दर के परिवर्तित होने का जोखिम), तथा चलनिधि जोखिम (चूँकि नकदी जमा देयताओं की जमानत पर दीर्घावधि अनकदी आवास ऋण दिये जा सकते हैं) का पूर्व अनुमान करना चाहिए। बंधकों के लिए एक अनुषंगी बाजार का निर्माण होने के कारण ये जोखिम अर्थात् ऋण जोखिम, बाजार जोखिम और चलनिधि जोखिम बैंकों से बंधक एजेंसियों को अंतरित किये जा सकते हैं। यह प्रणाली अमेरिका में 1938 से ही कार्य कर रही है जब फेडरल नेशनल मॉर्टगेज एसोसिएशन जो आम तौर पर फैनी माए के रूप में जाना जाता है, की स्थापना की गई थी। फैनी माए

सारणी 2.6: बंधक उद्भव

वर्ष	कुल बंधक उद्भव (बिलियन अमेरिकी डॉलर)	सब-प्राइम उद्भव (बिलियन अमेरिकी डॉलर)	प्राइम और आल्ट-ए उद्भव (बिलियन अमेरिकी डॉलर)	कुल उद्भवों में सब-प्राइम अंश (अमेरिकी डॉलर मूल्य का प्रतिशत)	सब-प्राइम बंधक-समर्थित प्रतिभूतियाँ (बिलियन अमेरिकी डॉलर)	प्रतिभूतिकृत सब-प्राइम उद्भव (अमेरिकी डॉलर मूल्य का प्रतिशत)
1	2	3	4	5	6	7
1994	773	35	738	4.5	उ.न.	उ.न.
1995	636	65	571	10.2	उ.न.	उ.न.
1996	785	97	689	12.3	उ.न.	उ.न.
1997	839	125	734	14.5	उ.न.	उ.न.
1998	1,430	150	1,280	10.5	उ.न.	उ.न.
1999	1,275	160	1,115	12.5	उ.न.	उ.न.
2000	1,048	138	910	13.2	उ.न.	उ.न.
2001	2,215	190	2,025	8.6	95	50.4
2002	2,885	231	2,654	8.0	121	52.7
2003	3,945	335	3,610	8.5	202	60.5
2004	2,920	540	2,380	18.5	401	74.3
2005	3,120	625	2,495	20.0	507	81.2
2006	2,980	600	2,380	20.1	483	80.5

स्रोत : सबप्राइम उधार संकट - संयुक्त आर्थिक समिति के स्टाफ के बहुमत द्वारा रिपोर्ट और सिफारिशें, अक्तूबर 2007।

ने बैंकों और अन्य प्रारंभकों से बंधक खरीदना तथा उसके द्वारा विशेष रूप से निम्न और मध्य आय वाले परिवारों के लिए बंधक उधार में सहायता करना शुरू किया। 1968 में फैनी माए के कार्यकलापों का निजीकरण किया गया और उसे फेडरल बजट से अलग कर दिया गया तथा बंधक-समर्थित प्रतिभूतियों (एमबीएस) पर बल अंतरित किया गया जिसका उद्देश्य बंधकों का समूहन करने, उनका प्रतिभूतिकरण करने और उन्हें बाजार में बेचने के द्वारा ऋण, बाजार और चलनिधि जोखिम बाजार को अंतरित करने में फैनी माए की सहायता करना था। बंधक-समर्थित प्रतिभूतियों (एमबीएस) ने अपना मूल्य बंधकों के समूह से संबद्ध नकदी प्रवाहों से प्राप्त किया। 1970 में फेडरल होम लोन मॉर्टगेज कार्पोरेशन (एफएचएलएमसी), जो आम तौर पर फ्रेडी मैक के रूप में जाना जाता है, की स्थापना निजीकृत फैनी माए के साथ स्पर्धा करने और साथ ही बंधक-समर्थित प्रतिभूतियों (एमबीएस) को और अधिक प्रोत्साहित करने के लिए की गई। इसके परिणामस्वरूप, इन दोनों संस्थाओं के माध्यम से प्रतिभूतिकृत किये गए और बेचे गए 'प्रमुख' (प्राइम) आवास ऋणों के एक भारी प्रतिशत के साथ ही आवास वित्त बाजार एक 'उत्पादन और धारण' के आधार से एक 'उत्पादन और वितरण' प्रकार में अंतरित हुआ (बॉक्स II.1)।

बॉक्स II.1
उत्पादन से वितरण का मॉडल

वैश्विक बैंकिंग प्रणाली ने उधार देने की प्रथाओं के तौर पर एक रूपांतरण को देखा है। बैंकिंग ऋण अपने पारंपरिक "संबंध बैंकिंग" मॉडल से "लेनदेन-उन्मुख" तक विकसित हुआ है। बैंक ऋण "उत्पादन से धारण (ओटीएच)" मॉडल, जहाँ उधारकर्ता का ऋण ऋणदाता के तुलन-पत्र में तब तक रहता है जब तक ऋण परिपक्व नहीं होता/बट्टे खाते में नहीं डाला जाता, से एक उत्पादन से वितरण (ओटीडी) के मॉडल में रूपांतरित हुआ है जहाँ बैंक ऋणों का उत्पादन कर सकते हैं, उनका शुल्क अर्जित कर सकते हैं और तब उनका वितरण अन्य निवेशकों को कर सकते हैं। उक्त ओटीडी मॉडल अनुषंगी समूहीकृत ऋण बाजार[3] में हुई विस्पोटक वृद्धि की प्रतिक्रिया में पिछले दो दशकों में उभरा है। समय के चलते ओटीडी मॉडल पर निर्भरता इस मॉडल के साथ संबद्ध लाभों, जैसे जोखिम का विविधीकरण, पूँजीगत राहत और पूँजी की निम्नतर लागत के कारण बढ़ गई है। ऋण के बारे में किसी बैंक की निजी जानकारी के स्वरूप के आधार पर ऋण की संभावित पूर्ण चुकौती में अनिश्चितता को दो घटकों में विभाजित किया जा सकता है : एक तो ऐसा है जिसके लिए बैंक का सूचनात्मक लाभ अपेक्षाकृत छोटा है तथा दूसरा ऐसा है जिसके लिए ऐसा लाभ अपेक्षाकृत बड़ा है। बैंक एक अनुषंगी समूहीकृत ऋण बाजार में जा सकता है तथा बाहर वालों को पूर्वोक्त जोखिमों का अंतरण करने के लिए ऋण-डेरिवेटिव संविदा का प्रयोग कर सकता है, जबकि परवर्ती स्थिति में उक्त जोखिम बैंक के पास ही रख सकता है। चूँकि बैंक का सूचनात्मक लाभ ऋण की समयावधि तक स्थिर रहने की संभावना नहीं है, अत: अवसर का लाभ उठाते हुए उन्नति (लीवरेज) करने की गुंजाइश है। इस प्रकार ओटीडी मॉडल के पास जोखिम का वितरण व्यापक रूप से और कुशलतापूर्वक करने की क्षमता है।

यह तर्क किया गया है कि ओटीडी मॉडल में पारदर्शिता का अभाव ऋण बाजार में संकट के लिए एक कारण रहा है। अनुषंगी बाजारें की उपस्थिति होते हुए, ऋणदाता ऋणों को समूह में प्रतिभूतियों में डालने में समर्थ थे ताकि उनसे धनार्जन किया जा सके, इस प्रकार वे बाजार में तेजी को प्रेरित कर रहे थे जो वित्तीय संकट के केंद्र में थी। इसके अतिरिक्त, प्रवर्तक बैंकों द्वारा जारी किये गये ऋणों की वास्तविक निगरानी करने के लिए कोई प्रोत्साहन नहीं था क्योंकि ऋण के प्रवर्तक और उधारकर्ता के बीच कोई प्रत्यक्ष संबंध नहीं था। यदि कोई बैंक किसी ऋण को धारित करता है तो उक्त ऋण की निगरानी करने के लिए उसके पास अधिकाधिक प्रोत्साहन है (और इस प्रकार वह उसकी चुकौती की संभावना को बढ़ा सकता है), बजाय इसके कि वह उसे बेचे। यह अनुमान है कि उधार के संबंधों के भंग होने

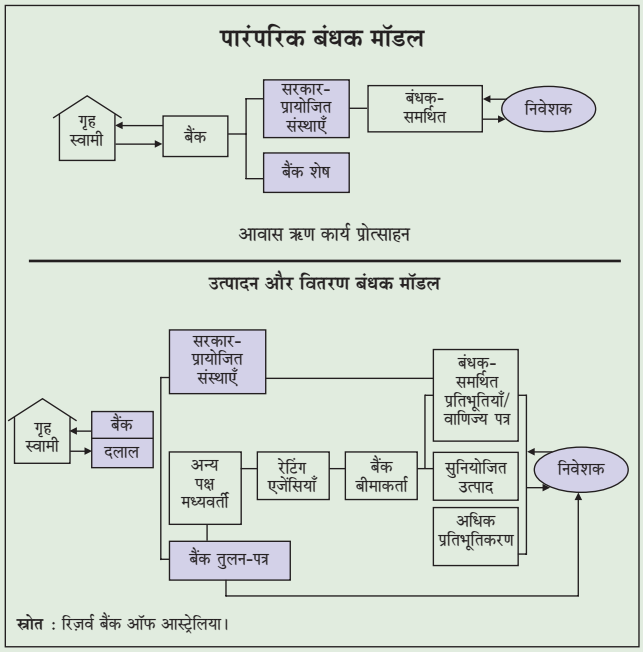

स्रोत : रिज़र्व बैंक ऑफ आस्ट्रेलिया।

(जारी...)

[3] 1997 से 2007 तक अनुषंगी समूहीकृत ऋण बाजार वार्षिक व्यापार परिमाण में 60 बिलियन अमेरिकी डॉलर से 342 बिलियन अमेरिकी डॉलर तक बढ़ गया है जो प्रतिभूतिकरण एवं संपार्श्विकीकृत कर्ज दायित्व (सीडीओ) और संपार्श्विकीकृत ऋण दायित्व (सीएलओ) निधियों में भारी वृद्धि द्वारा समर्थित है।

(.... समाप्त)

का उधारकर्ताओं के निर्णयन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है क्योंकि संभवत: वे कम इष्टतम निवेश और परिचालन का निर्णय लेने लगते हैं।इस प्रकार अच्छे ऋणों का समापन भी खराब कार्यनिष्पादन के साथ हो सकता है। साथ ही, हाल के वर्षों में निर्मित संरचित उत्पादों से उत्पन्न होनेवाले कुछ "अज्ञात जोखिम" थे जो पारंपरिक परिसंपत्ति-समर्थित प्रतिभूतियों और कम उत्कृष्ट (सब-प्राइम) बंधकों पर आधारित नये उत्पादों के साथ संबद्ध थे। इससे इस बारे में व्यापक अनिश्चितता निर्मित हुई कि जोखिम कहाँ पर संकेंद्रित हैं तथा आर्थिक चक्र के लिए वे कितने संवेदनशील हैं। इस परिवेश में अर्थव्यवस्था के सभी खंडों में संकट की स्थिति के परिणामस्वरूप जब हालत बिगड़ गई तब अचानक हर कोई संदेह के घेरे में आ गया। अनुभवजन्य प्रमाण भी इस तथ्य का समर्थन करता है कि ओटीडी मॉडल का परिणाम यह हुआ कि निम्नस्तरीय गुणवत्ता वाले बंधक बन गए और सक्रिय अनुषंगी बाजार में संबद्ध उधारकर्ताओं का कार्यनिष्पादन न्यून रहा (ब्रेन्ड्ट *ईटी एएल.*, 2009; पूर्णानन्दम, 2009)।

इस सबका यह अर्थ नहीं है कि अनुषंगी समूहीकृत ऋण बाजार के रूप में ओटीडी का परित्याग कर देना चाहिए। नहाने के पानी के साथ शिशु को बाहर फेंक देने में समझदारी नहीं है। ओटीडी मॉडल के अनेक लाभ हैं तथा यह वित्तीय एजेंटों को बढ़ी हुई चलनिधि और उन्नयन (लीवरेज) के अवसर उपलब्ध कराता है। अत: इस मॉडल को अधिक लचीला बनाने के लिए कदम उठाने की आवश्यकता है।

ओटीडी को अधिक लचीला बनाने के उपाय

1. अतिरिक्त प्रकटीकरण अपेक्षाएँ सम्मिलित करें तथा निवेशकों को प्रतिभूतिकरण संरचनाओं में निहित जोखिमों के बारे में संगत सूचना उपलब्ध कराएँ।
2. नैतिक संकट और प्रतिकूल चयन समस्याओं को सीमित करने के लिए ऋणों के कुछ अनुपात को प्रवर्तकों के तुलन-पत्र में रखें।
3. बैंकों की जोखिम प्रबंध प्रथाओं को पुन: निर्मित करें ताकि किसी विशिष्ट परियोजना को उधार देने में संबद्ध सभी जोखिमों का एक प्रभावी विश्लेषण किया जा सके। अशांति ने यह दर्शाया कि उत्पादन से वितरण तक के मॉडल का उपयोग करनेवाली संस्थाओं ने प्रतिभूतिकरण व्यवसाय के साथ संबद्ध ऋणेतर जोखिमों, जैसे बाजार जोखिम, चलनिधि जोखिम, संकेंद्रण जोखिम और निश्चय ही प्रक्रियाधीन जोखिम का प्रबंधन खराब ढंग से किया। इसका अर्थ यह है कि बाजार सहभागियों के लिए प्रभावी परिदृश्य विश्लेषणों और दबाव-परीक्षण प्रक्रियाओं सहित उनके एक्सपोज़रों पर पर्याप्त नियंत्रण रखने की आवश्यकता है।
4. सभी सहभागियों - प्रवर्तकों, व्यवस्थापकों, प्रबंधकों, वितरकों, ऋण-पात्रता निर्धारण (क्रेडिट रेटिंग) एजेंसियों और निवेशकों - के लिए प्रोत्साहनों को श्रेणीबद्ध करें ताकि किसी भी सहभागी को कोई अनुचित लाभ न पहुँचे।
5. क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों द्वारा अदा की जानेवाली भूमिका को अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण बनाएँ क्योंकि उनकी सूचना विभिन्न वित्तीय संस्थाओं द्वारा निर्णय-निर्धारण के लिए आधार निर्मित करती है।

संदर्भ

1. बेर्नड्ट, ऐन्ड्रे और अनुराग गुप्ता, 2009। "बैंक ऋण के उत्पादन से वितरण तक के मॉडल में नैतिक संकट और प्रतिकूल चयन।" *जर्नल ऑफ मॉनिटरी इकनॉमिक्स,* खंड 56।
2. पूर्णानन्दम, अमियतोष के. 2009। "उत्पादन से वितरण तक का मॉडल और सब-प्राइम बंधक संकट।" एएफए 2010 अटलांटा मीटिंग्स पेपर।
3. डफी, ग्रेगरी आर. और चुनशेंग झऊ, 2001। "बैंकिंग में ऋण डेरिवेटिव्ज़ : क्या जोखिम प्रबंधन के लिए उपयोगी साधन हैं?" *जर्नल ऑफ मॉनिटरी इकनॉमिक्स,* खंड 48।
4. पार्लर, क्रिस्टीन ए. और गिलोम प्लैन्टीन, 2008। "ऋण विक्रय और संबंध बैंकिंग।" *दी जर्नल ऑफ फाइनैंस,* खंड LXIII, सं. 3।
5. ——, 2008। "उत्पादन और वितरण मॉडल की प्रोत्साहन संरचना।" , यूरोपीय केंद्रीय बैंक, दिसंबर।
6. जी20. 2008। "वैश्विक ऋण बाजार विघटन संबंधी अध्ययन दल"। आस्ट्रेलिया द्वारा तैयार किया गया पेपर, अक्तूबर।

2.33 इस प्रकार ऋणों का प्रतिभूतिकरण कोई नई बात नहीं है। यह अमेरिका के बाजार में 1930 के बाद के दशक से प्रचलित था। तथापि, हाल ही तक केवल फैनी माए और फ्रेडी मैक जैसी एजेंसियों को बेचे गए उत्कृष्ट (प्राइम) ऋणों का ही प्रतिभूतिकरण किया जा रहा था। इसके अलावा, इन एजेंसियों द्वारा खरीदा गया ऋण संविभाग कुछ हामीदारी मानकों के अनुरूप था। तथापि, वर्तमान दशक में जो कुछ नया था, वह सब-प्राइम ऋणों के लिए प्रतिभूतिकरण को लागू करना और हामीदारी मानकों का मंदन करना था।

संश्लिष्ट डेरिवेटिव्ज़ और संरचित वित्त उत्पादों का प्रयोग

2.34 आवास निर्माण में तेजी ने बंधक-समर्थित प्रतिभूतियों (एमबीएस), संपार्श्विकीकृत कर्ज दायित्वों (सीडीओ) और अन्य संश्लिष्ट डेरिवेटिव साधनों के लिए बाजार में भारी रुचि उत्पन्न की। आय के लिए घोर अन्वेषण ने प्रतिभूतिकरण की प्रक्रिया और संरचित वित्त उत्पादों के निर्माण के माध्यम से नये विषाक्त वित्तीय साधनों के उत्पादन को प्रेरित किया।

2.35 संकट से पहले अमेरिका के आवास बाजार ने प्रतिभूतिकरण के एक ऐसे विस्तार को देखा जिसमें नये उत्पादों का बहुत बड़ा समुच्चय शामिल था जिसके अंतर्गत मानक एमबीएस अथवा बहुत सामान्य रूप से परिसंपत्ति-समर्थित प्रतिभूतियाँ (एबीएस) एवं संरचित वित्त उत्पादों का दायरा जिसमें सुनियोजित एमबीएस और एबीएस, सीडीओ तथा परिसंपत्ति-समर्थित वाणिज्य पत्र (एबीसीपी) सम्मिलित थे।

2.36 "संरचित वित्त" से सामान्यत: आशय बहुविध अंतर्निहित जोखिमों (जैसे बाजार और ऋण जोखिम) को उन जोखिमों (उदा0 बांड, ऋण अथवा बंधक-समर्थित प्रतिभूतियाँ) के अधीन साधनों के समूहन द्वारा संकलित करने और तब परिणामी नकदी प्रवाहों को विभिन्न धारकों को प्रदत्त किये जानेवाले "अंशों" अथवा खंडों के रूप में विभाजित करने से है (आइएमएफ, जीएफसीआर, 2008)। साधारण एमबीएस (पहले चर्चा की गई है) के असमान संश्लिष्ट एमबीएस विभिन्न जोखिम अंशों में संरचित अथवा खंडित होती हें। एक साधारण तीन अंशों वाले उदाहरण में प्रतिभूति के लिए संरचना के अंतर्गत (बढ़ते हुए जोखिम के क्रम में) एक `वरिष्ठ', `मध्यवर्ती' और एक `ईक्विटी' अंश शामिल हो सकते हैं। वरिष्ठ अंश के लिए जोखिम और प्रतिलाभ निम्नतम हैं तथा तदनुसार इसका उच्चतम क्रेडिट रेटिंग है। इसके बाद `मध्यवर्ती अंश' की बारी आती है जिसका जोखिम और प्रतिलाभ वरिष्ठ अंश की अपेक्षा काफी अधिक है, तथा इस कारण से इसके पास निवेश से नीचे के ग्रेड का रेटिंग है। `ईक्विटी अंश' जो अंशीकरण में तीसरा और अंतिम स्तर है, सर्वाधिक जोखिमपूर्ण है और इसलिए सामान्यत: इसका कोई रेटिंग नहीं है। बंधक-समर्थित प्रतिभूतियों (एमबीएस) के अंतर्निहित समूह के संबंध में चूक से ईक्विटी अंश को अधिकतम हानि हो सकती है। चूक के अभाव में ईक्विटी अंश के संबंध में प्रतिलाभ सबसे अधिक होगा। मूल रूप से बचाव निधियाँ ही हैं जिनका निवेश अधिकतम प्रतिलाभ पाने के लिए ईक्विटी अंशों में किया गया है। संरचित वित्त प्रतिभूतिकरण से इस मायने में भिन्न है कि नकदी प्रवाहों को "अंशीकृत" नहीं किया जाता तथा इसके बदले ये *आनुपातिक* आधार पर प्रतिभूतिकृत लिखतों के धारकों को प्रदान किये जाते हैं।

2.37 सब-प्राइम बंधक-समर्थित प्रतिभूतियों के अत्यधिक जोखिम को देखते हुए कभी कभी ऐसी प्रतिभूतियाँ खरीदने के लिए निवेशकों को लुभाना कठिन हो गया। ऐसी परिस्थितियों में एमबीएस को एक अच्छे रेटिंग के समर्थन के साथ पुन: सीडीओ में रख दिया गया। संकट से पहले की अवधि के दौरान सीडीओ निर्गमों ने एक भारी उछाल को देखा (सारणी 2.7)। उच्च रेटिंग प्राप्त कर्ज पुन:प्रत्यक्षत: निम्न गुणवत्ता वाली संपार्श्विक जमानत से निर्मित किया गया।

सारणी 2.7: ऋण कर्ज दायित्वों (सीडीओ) का वैश्विक निर्गम

(बिलियन अमेरिकी डॉलर)

	2005	2006	2007	2008
1	2	3	4	5
अंतर्निहित गारंटियाँ	**271.8**	**520.6**	**481.6**	**56.1**
उच्च आय वाले ऋण	71.2	171.9	138.8	23.7
निवेश ग्रेड बांड	4.0	24.9	78.6	14.7
उच्च आय वाले बांड	3.1	0.9	2.1	-
संरचित वित्त	176.6	307.7	259.2	16.6
मिश्रित गारंटियाँ	0.1	ऋणात्मक	-	-
अन्य स्वैप	2.5	0.7	1.1	-
अन्य	4.3	14.4	1.7	1.0

स्रोत : प्रतिभूति उद्योग और वित्तीय बाजार संघ, 2009।

अंतर्निहित परिसंपत्ति एक्सपोज़र अधिक निष्प्रभ हो गए तथा निवेशक ऋण की गुणवत्ता का आकलन करने के लिए क्रेडिट रेटिंग पर अधिकाधिक निर्भर रहे। सीडीओ के मामले में असम सूचना (अथवा अकेरलोफ के नींबू) की समस्या अपने कठिनतम रूप में देखी जा सकती है जहाँ खरीदारों के पास अंतर्निहित जोखिम के बारे में कोई जानकारी नहीं है और वे आँख मूँदकर रेटिंग में विश्वास कर रहे हैं जबकि विक्रेताओं ने अत्यधिक जोखिम वाली अंतर्निहित परिसंपत्तियों को निम्न जोखिम से युक्त उच्च रेटिंग वाली परिसंपत्तियों के रूप में बेचने के लिए सूचना के इस अभाव का लाभ उठाया है (पटनायक, 2009)। वर्गांकित (स्क्वेयर्ड) सीडीओ, घनांकित (क्यूब्ड) सीडीओ एवं और भी गुणज बनाने के लिए पुन:समूहन और पुन: संरचना

चार्ट II.3 : संरचित वित्त उत्पाद : मात्र्योष्का 'रूसी गुड़िया' संरचना

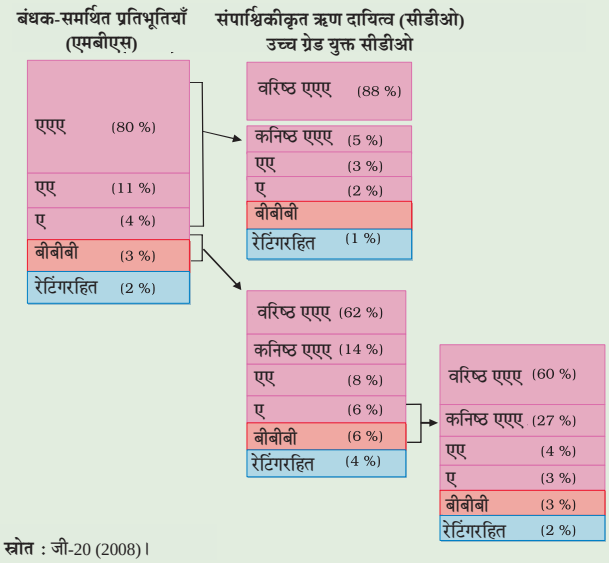

स्रोत : जी-20 (2008)।

की यह प्रक्रिया अनेक बार दुहराई गई। इसने तथाकथित मात्र्योष्का अथवा 'रूसी गुड़िया' की संरचना निर्मित की (चार्ट II.3)। इस प्रकार सब-प्राइम जोखिम के प्रति एक्सपोज़र का लगभग एक असीमित तरीके से निर्माण किया गया (वैश्विक ऋण बाजार के विघटनों पर जी-20 का अध्ययन दल)।

2.38 इस संदर्भ में रेटिंग एजेंसियों द्वारा दिये गये रेटिंग, उनके द्वारा प्रयुक्त मॉडलों एवं समग्र सब-प्राइम संकट में उनकी भूमिका के बारे में चिंताएँ प्रकट की गई हैं (बॉक्स II.2) । इन सब-प्राइम संरचित उत्पादों में से 80 प्रतिशत से भी अधिक उत्पादों को क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों द्वारा उच्चतम रेटिंग अर्थात् एएए प्रदान किये गये। इस प्रकार

बॉक्स II.2
क्रेडिट रेटिंग एजेंसियाँ (सीआरए) : वरदान या अभिशाप ?

क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों की आवश्यकता

क्रेडिट रेटिंग एजेंसियाँ (सीआरए) मुख्य रूप से ऐसी वाणिज्यिक संस्थाएँ हैं जो अपने ग्राहकों की ऋण-पात्रता के प्रकाशन और मूल्यांकन के लिए आय अर्जित करती हैं। विशेष रूप से वैश्विक प्रतिभूतियों और बैंकिंग बाजारों में वित्तीय बाजार जोखिम के प्रबंधन में वे एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती रही हैं; वे ऋण-पात्रता के बारे में अभिमत जारी करते हैं जो कर्ज लिखत जारी करनेवालों और इन लिखतों में निवेश करनेवालों के बीच विद्यमान सूचना की असमता को दूर करने में सहायता प्रदान करते हैं। सीआरए का उद्भव अमेरिका में 20वीं शताब्दी के मोड़ पर हुआ तथा उन्होंने कंपनी बांडों के रेटिंग पर ध्यान केंद्रित किया। उसके बाद उनके कार्यकलापों के दायरे और मान में वृद्धि हुई। वर्तमान में किसी भी प्रमुख श्रेणी की प्रतिभूति, जारीकर्ता अथवा भौगोलिक क्षेत्र छूटा हुआ नहीं है। सीआरए अब ऋण जोखिम के लिए सही मायने में एक वैश्विक आधार (बेंचमार्क) परिभाषित करती हैं। महान मंदी से वित्तीय बाजारों के विनियमन में भी सीआरए के बेंचमार्क का उपयोग किया गया है। उदाहरण के लिए बासेल मानदंडों के अनुसार केवल बैंकों और कुछ अन्य प्रकार के निवेशकों को ही 'निवेश ग्रेड' के रेटिंग से युक्त निम्नतर जोखिम वाली प्रतिभूतियाँ धारित करने के लिए अनुमति दी जाती है। पिछले कुछ दशकों से ये कंपनियाँ एक व्यापक दायरे में अधिक संश्लिष्ट वित्तीय लिखतों के लिए, जो संरचित वित्त उत्पादों के रूप में जाने जाते हैं, रेटिंग प्रदान करने में लिप्त हैं।

2004 की बैंकिंग पर्यवेक्षण संबंधी बासेल समिति (बीसीबीएस) की पूँजी पर्याप्तता की नई रूपरेखा (बासेल II) के अंतर्गत बैंक अपने अनेक संस्थागत ऋण एक्सपोज़रों के लिए ऋण जोखिम भार निर्धारित करने में किसी मान्यताप्राप्त सीआरए द्वारा दिये गये रेटिंगों का उपयोग कर सकते हैं। पिछली दशाब्दी से नीति-निर्धारक अनेक अवसरों पर सीआरए के प्रति अधिकाधिक ध्यान दे रहे हैं, जो सामान्यत: वित्तीय बाजारों में दबाव में वृद्धि के साथ मेल खाता है। विश्व भर के विनियामकों ने जुलाई 1997 में पूर्वी एशियाई अर्थव्यवस्थाओं की कठिनाइयाँ दूर करने में उनकी असफलता, उल्लेखनीय रूप में यूरो क्षेत्र और अमेरिका में इस शताब्दी के प्रारंभ में कंपनियों के पतन (एनरॉन, डॉटकॉम, और परमालैट), तथा हाल के वित्तीय संकट के बाद सीआरए की भूमिका की ओर अपना ध्यान दिया।

हाल के वित्तीय संकट में क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों की भूमिका

सीआरए सब-प्राइम बाजारों संबंधी समस्याओं के उद्गम के नजदीक थीं क्योंकि वे निवेशकों को अधिक विश्वास दिलाने के लिए वित्तीय रूप से व्यवस्थित लिखतों पर अनुकूल अभिमत दे रही थीं। निवेशक - सीआरए की विशेषज्ञता पर विश्वास करते हुए इन लिखतों में निहित जोखिम के लक्षणों, अंतर्निहित परिसंपत्तियों के कार्यनिष्पादन और बाजार के सामान्य दृष्टिकोण के संबंध में कम ध्यान दिया अथवा कोई ध्यान नहीं दिया। सीआरए ने अनेक सब-प्राइम बंधक समर्थित प्रतिभूतियों को एएए रेटिंग दिये जिनमें से कई की स्थिति बाद में घटाकर निम्न श्रेणी (जंक) की कर दी गई। रेटिंग एजेंसियों की विफलता के लिए आलोचक घटिया आर्थिक मॉडलों, हितों के संघर्षों, और प्रभावी विनियमन के अभाव को कारण मानते हैं। एक और कारक रेटिंगों पर बाजार की अत्यधिक निर्भरता है जिसका अनेक कानूनों और विनियमों ने समर्थन किया है जो रेटिंगों का उपयोग अनुमतियोग्य निवेशों के लिए मानदंड के रूप में अथवा अपेक्षित पूँजी स्तरों में एक कारक के रूप में करते हैं।

सीआरए ने बंधक आधारित प्रतिभूतियों (एमबीएस) और संपार्श्विकीकृत कर्ज दायित्वों (सीडीओ) को विकसित करने में सहायता पहुँचाई जिन्होंने संकट को चिनगारी दी। सीआरए ने जारीकर्ताओं को सूचित किया कि किसी एमबीएस अथवा सीडीओ के अंशों की संरचना और प्राथमिकीकरण कैसे करना चाहिए। लक्ष्य यह था कि किसी सीडीओ अथवा एमबीएस से उसके उच्चतम रेटिंग प्राप्त अंशों को अधिकतम करने के द्वारा अधिकतम लाभ प्राप्त करने में जारीकर्ताओं की सहायता की जाए। अंशीकरण का उद्देश्य किसी सीडीओ अथवा एमबीएस के अंतर्निहित परिसंपत्ति समूह के औसत रेटिंग की तुलना में एक उच्चतर क्रेडिट रेटिंग के साथ परिसंपत्तियों की कम से कम एक श्रेणी का निर्माण करना था। सीआरए ने प्रत्येक अंश का रेटिंग उस अंश में ऋणों की पात्रता और उसकी प्राथमिकता के आधार पर निर्धारित किया। "प्राथमिकीकरण" द्वारा अंशों को उच्चतर क्रेडिट रेटिंग मिला; जारीकर्ताओं ने गारंटी दी कि "वरिष्ठ" अंशों का भुगतान "कनिष्ठ" अथवा "अधीनस्थ" अंशों से पहले किया जाएगा। गृहनिर्माण में तेजी की ऊँचाई पर प्राय: सभी वरिष्ठ अंशों ने संभव उच्चतम रेटिंग अर्थात् एएए प्राप्त किया।

क्रेडिट रेटिंग एजेंसियाँ एमबीएस और सीडीओ में ऋण जोखिमों का पर्याप्त रूप से आकलन करने में विफल हुईं। सीआरए ने आवास बाजार के संबंध में एक अधिक आशावादी दृष्टिकोण अपनाया। उनके रेटिंग मॉडल ने अनुमान किया कि आवास की कीमतों में वृद्धि सामान्यत: लगातार जारी रहेगी। सीआरए ने एमबीएस और सीडीओ की जटिलता का कम आकलन किया। प्रतिभूति और विनिमय आयोग (एसईसी) ने पाया कि 2002 से संरचित वित्त सौदों की मात्रा और जटिलता में वृद्धि कुछ सीआरए के लिए अत्यधिक साबित हुई।

जुलाई 2008 में एसईसी ने यह निष्कर्ष निकाला कि एमबीएस और सीडीओ जारीकर्ताओं एवं सीआरए के बीच हितों के संघर्षों का समाधान करने में सीआरए विफल हुईं। सीआरए से यह अपेक्षित था कि वे निवेशकों की सेवा करें, परंतु हितों के संघर्षों के कारण कुछ सीआरए एमबीएस और सीडीओ जारीकर्ताओं की आवश्यकताएँ रेटिंग बढ़ाने के द्वारा पूरी करने के लिए प्रेरित हुईं। हित के संघर्षों

(जारी...)

(... समाप्त)

के लिए कारणों में शामिल हैं :(i) संबंध के संघर्ष : सबसे बड़े एमबीएस और सीडीओ जारीकर्ताओं के साथ सीआरए का घनिष्ठ, निरंतर कार्यचालन संबंध था; (ii) जारीकर्ता द्वारा भुगतान किये गये रेटिंग : सीआरए द्वारा प्रस्तुत 98 प्रतिशत रेटिंगों के लिए भुगतान जारीकर्ताओं द्वारा किया गया था, न कि निवेशकों द्वारा। भुगतान के प्रोत्साहन ने कुछ सीआरए को भुगतान करनेवाले जारीकर्ताओं के रेटिंग बढ़ा-चढ़ाकर देने का प्रयास करने के लिए प्रेरित किया, इस आशा में कि उन जारीकर्ताओं से कारोबार के दुहराव का लाभ मिले; तथा (iii) परामर्श-रेटिंग संयोजन : सीआरए ने जारीकर्ताओं को परामर्श दिया कि उच्च रेटिंग प्राप्त करने के लिए एमबीएस और सीडीओ की संरचना कैसे करनी चाहिए। तब सीआरए ने "आश्वस्त" रेटिंग प्रदान करते हुए उस परामर्श की "पुष्टि" कर दी।

एनरॉन, डॉटकॉम और हाल के सब-प्राइम संकट पर संक्षोभ के कारण रेटिंग उद्योग में विनियामक परिवर्तनों के लिए माँग होने लगी। विनियामक मुद्दे हमेशा अत्यंत जटिल और स्वतंत्र होते हैं। आइओएससीओ (प्रतिभूति आयोग का अंतरराष्ट्रीय संगठन) ने मार्च 2008 के अपने परामर्श-पत्र में सीआरए के कार्यचालन के संबंध में कुछ महत्वपूर्ण सिफारिशें प्रस्तुत की हैं। इनमें शामिल हैं :

- सीआरए को यह सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाने चाहिए कि किसी संरचित वित्त उत्पाद के वर्तमान रेटिंग की समीक्षा करने तथा संभावित रूप से उसका ग्रेड कम करने के लिए निर्णय लेने की प्रक्रिया को एक वस्तुनिष्ठ तरीके से संचालित किया जाए।
- सीआरए को चाहिए कि वे एक ऐसा स्वतंत्र कार्य स्थापित करें जो रेटिंग प्रक्रिया में प्रयुक्त दोनों कार्यपद्धतियों और मॉडलों एवं कार्यपद्धतियों और मॉडलों में परिवर्तनों की आवधिक रूप से समीक्षा करने के लिए उत्तरदायी हो।
- सीआरए को यह सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त उपाय अपनाने चाहिए कि जिस सूचना का वे उपयोग कर रही हैं, वह विश्वसनीय रेटिंग का समर्थन करने के लिए पर्याप्त गुणवत्ता से युक्त हो।
- जहाँ कोई सीआरए किसी संरचित वित्त उत्पाद के रेटिंग का निर्धारण करती है, वहाँ उसे चाहिए कि वह निवेशकों और/या अभिदाताओं (सीआरए के व्यवसाय के मॉडल के आधार पर) को उसकी हानि और नकदी-प्रवाह के विश्लेषण के बारे में पर्याप्त जानकारी उपलब्ध कराए ताकि उक्त उत्पाद में निवेश करने के लिए अनुमत निवेशक सीआरए के रेटिंग के लिए आधार को समझ सके।

अध्ययनों में भी ऐसी प्रणाली की दिशा में आगे बढ़ने का सुझाव दिया गया है जहाँ क्रेडिट रेटिंग के लिए भुगतान, निवेशकों द्वारा किया जाता है और जहाँ व्यवस्थापक और सेवा-प्रदाता संरचित वित्त उत्पादों में अंतर्निहित अलग-अलग ऋणों के संबंध में संपूर्ण आधार-सामग्री (डाटा) न:शुल्क प्रकट करते हैं। दूसरी सर्वोत्तम नीति के रूप में सीआरए के लिए जारीकर्ताओं द्वारा भुगतान किये जाने की वर्तमान प्रथा जारी रखी जा सकती है। तथापि, उक्त भुगतान, जारी किये जानेवाले रेटिंग का विचार किये बिना अग्रिम (तथाकथित "क्युओमो योजना") अग्रिम ही अदा किया जाना चाहिए तथा ऋण के क्रय-विक्रय (क्रेडिट शॉपिंग) (तथा जारीकर्ताओं को रेटिंग एजेंसियों द्वारा सशुल्क परामर्श) पर बंदिश लगानी चाहिए (पैगानो *ईटी एएल.*, 2009)। निवेश करनेवाले जनसाधारण को जारीकर्ताओं और रेटिंग एजेंसियों द्वारा जो सूचना अनिवार्यत: प्रसारित की जानी चाहिए उसे निर्धारित करते हुए पारदर्शिता को बढ़ाने की आवश्यकता पर भी बल दिया गया है।

संदर्भ

1. प्रतिभूति आयोग का अंतरराष्ट्रीय संगठन (आइओएससीओ), 2008, परामर्श-पत्र, मार्च।
2. पैगानो, मार्को और पाओलो वोल्पिन, 2009। क्रेडिट रेटिंगों की असफलताएँ : कारण और नीतिगत विकल्प। इन एम. देवात्रिपोंत, एक्स. फ्रेइक्सास और आर. पोर्टेस (ईडीएस)। *समष्टि-आर्थिक स्थिरता और वित्तीय विनियमन : जी-20 के लिए प्रमुख मुद्दे* (पीपी. 129-148)। सेंटर फॉर इकनॉमिक एण्ड पॉलिसी रिसर्च।

संकट से पहले की अवधि ने वित्तीय अपमिश्रण के उच्चतम रूप को देखा जब सीसे को सोने में बदलने की युक्त की गई (फेर्गूसन, 2008)। बंधक-आधारित सीडीओ जैसे डेरिवेटिव साधनों को निवेश-ग्रेड रेटिंग देने के लिए क्रेडिट रेटिंग एजेंसियाँ अब संवीक्षा के अधीन हैं। रेटिंग एजेंसियों ने 2007 की तीसरी तिमाही से 2008 की दूसरी तिमाही के बीच बंधक-समर्थित प्रतिभूतियों (एमबीएस) में 1.9 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर के संबंध में क्रेडिट रेटिंग कम कर दिये, जो इस बात का संकेतक है कि उनके प्रारंभिक रेटिंग सही नहीं थे।

बचाव निधियों की भूमिका

2.39 जोखिम के विभाजन और क्रेडिट रेटिंग के समर्थन के परिणामस्वरूप जोखिम के लिए विभिन्न अभिरुचियों से युक्त निवेशकों को सीडीओ का विपणन किया जा सका। निवेशकों, विशेष रूप से बचाव निधियों ने, जिन्होंने उच्चतर जोखिम एक्सपोज़र के साथ प्रतिफल को अधिकतम बनाना चाहा, सीडीओ के ईक्विटी अंश को खरीदा। बचाव निधियों ने उन परिसंपत्तियों की जमानत पर, जिन्हें उन्होंने अपने निवेश संविभाग में जोड़ दिया (जैसे सीडीओ और एमबीएस), उधार लेते हुए आगे और उन्नयन (लीवरेज) निर्मित किया। उदाहरण के लिए अमेरिका में बियर स्टेर्न्स की बचाव निधियों के विषय में सीडीओ में बड़े लीवरेज वाला एक्सपोज़र था। जब सब-प्राइम चूक की चिंताओं ने बाजार को घेर लिया, तब सीडीओ के मूल्य घटाये गये जिससे बचाव निधियों को दलालों से मार्जिन की माँग (अर्थात् लीवरेज का समर्थन करने के लिए अधिक परिसंपत्तियों के लिए माँग) का सामना करना पड़ा। बचाव निधियों में निवेश करनेवालों ने हानियों की संभावना को पहचान लिया तथा अचानक निधियों से माँग की कि उनके निवेश वापस कर दिये जाएँ। बचाव निधियों के लिए विकल्प या तो और

अधिक उधार लेकर (जो ऋण के दबाव को देखते हुए कठिन और अधिक महँगा था) अधीर निवेशकों को चुकौती कर देना था या (सीडीओ का गिरते मूल्य पर) एक 'आपात विक्रय' (फायर सेल) करते हुए निवेशकें द्वारा उनके पास किये गये निवेश के लिए उनकी माँग का सामना करना था। अधिक चरम विकल्प तो चूक करने का था, अर्थात् निवेशकों को उनकी माँग पर वापसी अदायगी नहीं करना था। बिलकुल ऐसी ही स्थिति का सामना बियर स्टेर्न्स को करना पड़ा जब उन्होंने अपनी दो बचाव निधियों को बंद कर दिया जिन्हें अंतत: अमेरिका के फेडरल रिज़र्व द्वारा आर्थिक सहायता (बेल आउट) दी गई तथा जिन्हें जे. पी. मोर्गन द्वारा अधिगृहीत किया गया। अमेरिका में एजेंसी-वार सब-प्राइम एक्सपोज़र और हानियाँ सारणी 2.8 में दी गई हैं।

विनियामक दुर्बलताएँ

2.40 सब-प्राइम संकट को शिथिल पर्यवेक्षी चूक और विवेकपूर्ण उधार के सामान्य मानकों के शिथिलन के तौर पर वित्तीय संस्थाओं के लिए विनियामक संरचना में अनेक दुर्बलताओं के सर्वोत्तम उदाहरण के रूप में भी देखा गया है। इस संबंध में अनेक मुद्दे प्रकाश में आये हैं - प्रतिचक्रीय विनियमन का अभाव; प्रणालीगत जोखिमे को पहचानने में असमर्थता; विवेकपूर्ण विनियमन की आवश्यकता; बैंकों की तुलन-पत्र से इतर मदों की पहचान न करना; विनियामक दायरे से बाहर गैर-बैंकों का परिचालन; नये वित्तीय साधनों की जटिलता और अपारदर्शी स्वरूप; तथा प्रणालीगत तौर पर महत्वपूर्ण संस्थाओं की विनियामक चूक। वित्तीय क्षेत्र में विनियामकों के पास बाजारों में वित्तीय उत्पादों में नवोन्मेषणों की विविधता और जटिलता में तीव्र वृद्धि को सँभालने के लिए पर्याप्त कौशल नहीं था। पूँजीगत अपेक्षाओं और जोखिम के अनुमानों के तौर पर सुस्थापित विनियामक संरचना के प्रचलित होने के बावजूद वित्तीय संस्थाओं ने विनियामक परिसीमा से बाहर की गतिविधियों की ओर अग्रसर होने में अपेक्षाकृत सुगमता पाई। एक ओर जहाँ विनियामक पूँजीगत अपेक्षा ने बैंकों के तुलन-पत्रों पर उन्नयन (लीवरेज) के निर्माण को सीमित रखा, वहीं दूसरी ओर बैंक प्रबंधक अपने द्वारा धारण किये जाने के लिए अपेक्षित पूँजी में वृद्धि किये बिना जोखिम और प्रतिलाभ को बढ़ाने के लिए विभिन्न तुलन-पत्र में शामिल न होनेवाली गतिविधियों में लिप्त रहे।

सारणी 2.8: सब-प्राइम एक्सपोज़र और हानियाँ

	एक्सपोज़र*			हानियाँ		
	2005	2006	2007+	2005	2006	2007+
1	2	3	4	5	6	7
	कुल राशि (बिलियन अमेरिकी डॉलर में)					
बैंक#	155	264	127	-9	-63	-29
बचाव निधियाँ	70	98	78	-7	-27	-20
बीमा कंपनियाँ	78	106	84	-2	-21	-15
वित्त कंपनियाँ	25	30	24	-1	-5	-4
म्युचुअल फंड/ पेंशन निधियाँ	15	18	14	-0	-3	-2
कुल	**343**	**516**	**326**	**-18**	**-118**	**-70**
	कुल के प्रतिशत के रूप में					
बैंक#	45	51	39	49	53	41
बचाव निधियाँ	20	19	24	37	23	29
बीमा कंपनियाँ	23	20	26	9	18	22
वित्त कंपनियाँ	7	6	7	3	4	5
म्युचुअल फंड/ पेंशन निधियाँ	4	4	4	2	2	3
कुल	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**

* प्रतिभूतियों के लिए सममूल्य राशियाँ और डेरिवेटिव्ज़ के लिए आनुमानिक राशियाँ।
+ नवंबर, 2007 की स्थिति के अनुसार; # निवेश बैंकों सहित।
स्रोत : वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, 2008।

तुलन-पत्र बाह्य संस्थाओं (ओबीएसई) की भूमिका

2.41 प्रवर्तकों के लिए अपने ऋण संविभाग का उन्नयन (लीवरेज) करने का एक प्रमुख कारण यह था कि जैसे ही उन्होंने ऋण का प्रवर्तन किया, वह अनुषंगी बाजार में बेच दिया गया जिससे वे किसी भी वित्तीय दायित्व से मुक्त रहे। बैंक संश्लिष्ट प्रतिभूतिकरण की प्रक्रिया से संबद्ध जोखिमों को पहचानने में विफल रहे। अप्रत्यक्ष रूप से बैंकों के तुलन-पत्र सब-प्राइम बाजार की गतिविधियों के समक्ष तुलन-पत्र बाह्य संस्थाओं (ओबीएसई), जैसे संरचित निवेश संस्थाओं (एसआइवी) के माध्यम से अरक्षित रहे, जो अल्पावधि वाणिज्य पत्र (सीपी) बाजार में उधार लेते हुए एमबीएस और सीडीओ में निवेश कर रही थीं। ओबीएसई, जैसे संरचित निवेश संस्थाएँ (एसआइवी), ऐसी संस्थाएँ हैं जो वित्तीय संस्थाओं को इस बात के लिए समर्थ बनाते हैं कि वे जोखिम को अपने तुलन-पत्र से बाहर अंतरित करें तथा अपने एक्सपोज़र प्राय: विनियामकों और निवेशकों को प्रकट न होने दें; एवं बासेल I के अंतर्गत विनियामक पूँजीगत अपेक्षाओं से राहत प्राप्त करें। यद्यपि वित्तीय संस्थाओं से यह अपेक्षित था कि जब मूल संस्था ओबीएसई की मताधिकार शक्ति (वोटिंग पॉवर) का आधे से अधिक भाग (अंतरराष्ट्रीय लेखांकन मानक 27.40) प्रत्यक्षत: या अप्रत्यक्ष रूप से सहायक संस्थाओं के माध्यम से अपने पास नहीं रखती तब वे मूल और सहायक संस्था के बीच संबंध के स्वरूप को प्रकट करें, तथापि संस्था की रिपोर्ट में ऐसी जानकारी प्राय: एक फुटनोट में दी गई थी (जीएफएसआर, आइएमएफ, 2008))। बैंक बासेल I मानदंडों को पूरा करने के लक्ष्य के साथ बाजार में सुरक्षा खरीदने के लिए ऋणों के प्रतिभूतिकरण तथा ऋण चूक अदला-बदली (सीडीएस) के

प्रयोग द्वारा बाजार को जोखिम के लगातार अंतरण की प्रक्रिया में लिप्त थे, इस प्रकार वे और अधिक उधार देने के लिए पूँजी को मुक्त रख रहे थे। इसने एक 'छाया बैंकिंग प्रणाली' का निर्माण किया जो लगभग पूरी तरह अविनियमित रही (बॉक्स II.3)।

2.42 वित्तीय संस्थाओं ने बंधक दावों का अंतरण अपने द्वारा स्थापित एसआइवी को कर दिया तथा तब एसआइवी ने प्रतिभूतिकृत उत्पाद जारी करने और उन्हें बेचने के द्वारा जोखिम और प्रतिलाभ निवेशकों को अंतरित कर दिये और इससे इस प्रक्रिया में कमीशन अर्जित किये। इस प्रकार करने के द्वारा वित्तीय संस्थाएँ अपनी स्वयं की वित्तीय सुदृढ़ता बनाये रख सकीं तथा पूँजी पर्याप्तता अनुपातों संबंधी प्रतिबंधों के प्रति प्रवंचना कर सकीं, जबकि इसके साथ ही वे स्थिर उपलब्धता वाली आय अर्जित कर सकीं। इन कमीशनों से अधिकाधिक लाभ उत्पन्न करने के लिए जिनमें से प्रत्येक कमीशन अल्प था, बंधक ऋणों की व्यवस्था का विस्तार करना एवं प्रतिभूतिकरण में बड़े पैमाने

बॉक्स II.3
छाया बैंकिंग की संकल्पना

छाया बैंकिंग प्रणाली अथवा छाया वित्तीय प्रणाली के अंतर्गत बैंकेतर वित्तीय संस्थाएँ शामिल हैं जो परिचालन करने के लिए आवश्यक धनराशि उधार देने के व्यवसाय में अधिकाधिक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। यह शब्द "छाया बैंकिंग प्रणाली" पाल मैककली के कारण चल पड़ा है जिसे उन्होंने 2007 में जाकसन होल सम्मेलन में गढ़ा जहाँ इसकी परिभाषा उन्होंने "उन्नति-प्राप्त गैर-बैंक निवेश संवाहिकाओं, वाहनों और संरचनाओं के संपूर्ण अक्षर-रस" के रूप में दी, यद्यपि अविनियमित संस्थाओं द्वारा ऋण-वृद्धि की संकल्पना (यदि शब्दावली नहीं) पूर्व में 1935 में फ्रायडरिच हायेक (1935) तक जाती है। परिभाषा के अनुसार छाया संस्थाएँ एक निक्षेपागार बैंक की तरह जमाराशियाँ स्वीकार नहीं करतीं और इसलिए उन्हीं विनियमों के अधीन नहीं हैं। प्रणाली को बनानेवाली कुछ संश्लिष्ट कानूनी संस्थाओं में शामिल हैं बचाव निधियाँ, संरचित निवेश संस्थाएं (एसआइवी), संवाहिकाएँ, एक ही व्यवसाय क्षेत्र वाली संस्थाएँ (मोनोलाइन्स), निवेश बैंक, और अन्य गैर-बैंक वित्तीय संस्थाएं। वर्ष 2000 और 2008 के बीच अमेरिकी और यूरोपीय बाजारों में अनेक "छाया बैंक"-जैसी संस्थाएं और माध्यम उभरे तथा समूची वैश्विक प्रणाली के अंतर्गत ऋण उपलब्ध कराने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

परिचालन के तौर पर छाया संस्थाओं ने निवेश बैंकों की तरह अल्पावधि में निवेशकों, नकदी बाजारों (जैसे मुद्रा बाजार और वाणिज्य पत्र बाजार) से उधार लिया है, जिसका अर्थ यह हुआ कि उन्हें बारंबार चुकौती करना और इन निवेशकों से पुन: उधार लेना पड़ेगा। इसी समय उन्होंने इन निधियों का उपयोग निगमों को उधार देने अथवा अपेक्षाकृत अधिक अवधि वाली कम नकदी (अर्थात् बेचने के लिए कठिनतर) परिसंपत्तियों में निवेश करने के लिए किया। कई मामलों में खरीदी गई दीर्घावधि परिसंपत्तियाँ एमबीएस/सीडीओ थीं। जब आवास बाजार क्षीण होने लगा तथा बंधक-समर्थित प्रतिभूतियों जैसे निवेशों के माध्यम से निवेशकों से निधियाँ प्राप्त करने की क्षमता घट गई, तब ये निवेश बैंक अपनी निधियों की व्यवस्था करने में असमर्थ हो गये। निवेशकों का अस्वीकार करना अथवा अल्पावधि बाजारों के माध्यम से निधियाँ उपलब्ध कराने में असमर्थ होना 2008 के दौरान बियर स्टेर्न्स और लेहमैन ब्रदर्स की असफलता का एक प्राथमिक कारण था।

तकनीकी रूप से ये संस्थाएँ बाजार जोखिम, ऋण जोखिम और विशेष रूप से चलनिधि जोखिम के अधीन हैं क्योंकि उनकी देयताएँ अल्पावधि की हैं जबकि उनकी परिसंपत्तियाँ अधिक दीर्घावधि की और अनकदी हैं। इससे एक संभावित समस्या निर्मित होती है कि वे निक्षेपागार संस्थाएं नहीं हैं तथा उनके केंद्रीय बैंक का अंतिम उधारदाता वाला समर्थन पाने के लिए उनके पास प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष पहुँच नहीं है। अत: बाजार की अनकदी की अवधियों में वे दिवालिया निकल सकती हैं यदि वे अपनी अल्पावधि देयताओं हेतु पुनर्वित्त की व्यवस्था करने में असमर्थ हैं। वे अत्यधिक उन्नति-प्राप्त (लीवरेज्ड) भी हैं। इसका अर्थ यह है कि ऋण बाजारों में विघटन उन्हें तेज अवनति (डीलिवरोजिंग) के अधीन बना सकते हैं अर्थात् उन्हें अपने कर्जों का भुगतान अपनी दीर्घावधि परिसंपत्तियाँ बेचकर करना होगा

2007 के प्रारंभ में छाया बैंकिंग प्रणाली के माध्यम से उधार बकाया शेषों के आधार पर पारंपरिक बैंकिंग प्रणाली द्वारा उधार से थोड़ा-सा बढ़ गया था।विश्लेषकों ने ऋण बाजारों के निक्रिय होने के लिए छाया बैंकिंग प्रणाली में संस्थाओं से उनके प्रतिपक्षियों द्वारा भारी मात्रा में "आकस्मिक आहरण" (रन) पर उल्लेखनीय रूप में दोषारोपण किया है (गेइथनेर, 2008)। छाया बैंकिंग प्रणाली से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरण को संकट के लिए कारणभूत रूप में "जो कुछ हुआ उसके केंद्र " के रूप में अभिवर्णित किया गया है (क्रुगमैन, 2009)। यह भी कहा गया है कि ऋणों के प्रतिभूतिकरण सहित तथाकथित छाया बैंकिग प्रणाली के अपेक्षाकृत छोटी होने तथा संकट से पूर्व की तुलना में उसके अधिक विनियामक पर्यवेक्षण के अधीन होने की संभावना है (बेर्नांके, 2009)।

संदर्भ

1. हायेक, एफ. ए. 1935। "प्रेस एण्ड प्रोडक्शन एण्ड अदर वर्क्स।" लुडविग वोन माइसेस इनस्टिट्यूट, औबर्न, अलाबामा।
2. आइएमएफ, 2008। "ग्लोबल फाइनैंशियल स्टेबिलिटी रिपोर्ट : स्ट्रक्चर्ड फाइनैंस : इश्यूस ऑफ वैल्युएशन एण्ड डिस्क्लोज़र", अध्याय 2, अप्रैल।
3. बेर्नांके बेन एस. 2009। "सेमीएन्युअल मॉनिटरी पॉलिसी रिपोर्ट टू दी कांग्रेस।" बैंकिंग, आवास और शहरी मामलों संबंधी समिति के समक्ष, अमेरिका, सेनेट, वाशिंगटन डी.सी., फरवरी 24।
4. गेइथनेर, टिमोथी, 2008। "रेडयूसिंग सिस्टमेटिक रिस्क इन ए डाइनमिक फाइनैंशियल सिस्टम।" इकनॉमिक क्लब ऑफ न्यूयार्क में टिप्पणी, जून।
5. मैक कल्ली पाल, 2007। "टेटोन रिफ्लेक्शन्स : ग्लोबल सेंट्रल बैंक फोकस।" जाकसन होल सम्मेलन; अगस्त/सितंबर।
6. क्रुगमैन, पाल, 2009। "दी रिटर्न ऑफ डिप्रेशन इकनॉमिक्स एण्ड दी क्राइसिस ऑफ 2008।" डब्ल्यू. डब्ल्यू. नॉर्टन कंपनी लिमिटेड।

पर लिप्त होना आवश्यक हो गया। ऐसा प्रतीत होता है कि इस व्यावसायिक मॉडल ने उधार देने के मानदंडों में शिथिलन तथा अत्यधिक बंधक ऋण को प्रेरित किया है। एसआइवी सबसे पहले एनरॉन स्कैंडल के दौरान प्रकाश में आईं। तब से उनका उपयोग वित्तीय जगत में व्याप्त हो गया है। संकट तक अग्रसर होनेवाले वर्षों में शीर्षस्थ चार अमेरिकी डिपॉजिटरी बैंकों ने 5.2 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर की अनुमानित परिसंपत्तियो और देयताओं का अंतरण तुलन-पत्र से बाहर विशेष प्रयोजन संस्थाओं अथवा इसी प्रकार की संस्थाओं में कर दिया।

बासेल मानदंडों की भूमिका

2.43 बासेल I न्यूनतम पूँजी पर्याप्तता की आवश्यकता बैंकों को सामान्यत: प्रतिभूतिकरण के माध्यम से अथवा छाया बैंकिंग संवाहिकाओं के द्वारा ऊपर वर्णित तरीके से जोखिम को अपने तुलन-पत्रों से अंतरित करने के लिए प्रोत्साहित करने में सहायक रही है। कुछ लोगों का यह विश्वास है कि यदि बासेल II अधिक देशों में प्रचलित रहता, तो हाल की तनावपूर्ण घटना कम तीव्र होती। संकट से पहले अधिक देशों में बासेल II का कार्यान्वयन सब-प्राइम से संबंधित सभी नहीं तो कुछ समस्याओं का समाधान करने में सहायक होता। यह सुनिश्चित करने से इस प्रकार संभव होता कि तुलन-पत्र से बाहर के एक्सपोज़रों के लिए भी पूँजी प्रभार लगाये जाते जिनका अनुमान छाया बैंकिंग संवाहिकाओं के माध्यम से किया गया था, प्रतिभूतिकरण से संबंधित एक्सपोज़रों के लिए जोखिम के प्रति अधिक संवेदनशील व्यवहार किया जाता, प्राइम ऋणों से सब-प्राइम ऋणों में अथवा कारपोरेट उधार से लीवरेज उधार में एक्सपोज़र को बदलते समय अधिकाधिक जोखिम विभेदीकरण किया जाता, अधिक से अधिक प्रकटीकरण होता एवं बैंकों के अंदर कठोर जोखिम मूल्यांकन ढाँचे रखे जाते। बासेल I के अंतर्गत पूँजी प्रभार सहायक चलनिधि सुविधाओं के लिए लागू करने की आवश्यकता नहीं थी जो आवश्यक रूप से एक वर्ष से कम प्रतिबद्धता के साथ वापस ओबीएसई को ऋण आश्वासनों/वित्तीय सहायता की गारंटियों के रूप में थीं, जबकि ये अपेक्षाकृत दीर्घतर अवधियों के लिए आवश्यक थे। अमेरिका और यूरोप के अधिकांश बैंकों के लिए इन सहायक सुविधाओं के प्रवर्तक बैंकों के लिए निहितार्थ तब तक पूरी तरह नहीं समझे गए जब तक अगस्त 2007 के प्रारंभ में कठिनाइयाँ उत्पन्न नहीं हुईं।[4] बासेल II की बैंकों से अपेक्षा यह है कि वे चलनिधि और अन्य सहायक सुविधाओं के लिए विनियामक पूँजी धारित करें और इस प्रकार निवेशकों और विनियामकों के लिए पारदर्शिता को बढ़ाएँ।

2.44 यद्यपि बासेल II में ऐसे तत्व हैं जो कुछ दबावों को कम कर सकते थे, तथापि यह निष्कर्ष निकालना कठिन है कि इस घटना से बचा जा सकता था (जीएफएसआर, 2008)। यह मानते हुए कि बासेल II परिसंपत्ति धारिताओं पर निम्नतम जोखिम भारों तक जोखिम एक्सपोज़रों के संबंध में बैंकों के बचाव को प्रोत्साहित करता है, ऋण चूक अदला-बदलियों (सीडीएस) का प्रयोग व्यापक हो गया होता। जबकि सीडीएस के माध्यम से ऋण जोखिम से बचाव सहायक हो सकता है, ऐसे स्वैप जारी करनेवालों के लिए प्रतिपक्षी जोखिम अभी भी मौजूद है। साथ ही, जबकि बासेल II की प्रकटीकरण और पूँजी संबंधी अपेक्षाएं प्रवर्तक बैंकों को निम्न निवेश ग्रेड वाले लिखतों को उच्चतर लीवरेज वाले लिखतों के रूप में जारी करने से निरुत्साहित कर सकती हैं तथा एक्सपोज़रों की जोखिमपूर्णता बैंक की पूँजीगत अपेक्षाओं में अधिक स्पष्ट रूप से हिसाब में ली जाएगी, यह एक और संकट को रोक नहीं सकता था। जोखिमों के मूल्यांकन और परिकलन के लिए बासेल II का अत्यधिक बल दिया जाना बहुत प्राय: सही स्थिति को विकृत कर सकता है। एक समष्टि-आर्थिक संदर्भ में यह तर्क दिया गया है कि बासेल II की पूँजीगत अपेक्षाओं के कार्यान्वयन का व्यवसाय-चक्र पर चक्रीयता के अनुकूल प्रभाव पड़ सकता है। विशेष रूप से आर्थिक अवनति की स्थिति में प्रत्याशित हानियों को ध्यान में रखते हुए बैंकों से यह अपेक्षा होगी कि वे ऋण के प्रावधान पर और भी अधोमुखी दबाव डालते हुए तथा उसके द्वारा पतन को दबाते हुए अपनी पूँजी में वृद्धि करें (आर्थिक परिस्थितियों के प्रति रेटिंग मॉडलों की संवेदनशीलता के आधार पर)। प्रसंगवश, इस पृष्ठभूमि में इनमें से कुछ कारकों को ध्यान में रखते हुए बासेल II प्रावधानों में सुधार किया जा रहा है।

2.45 साथ ही, अनेक गैर-बैंक वित्तीय संस्थाएँ रही हैं जैसे बीमा कंपनियाँ, बचाव निधियाँ, पेंशन निधियाँ और म्युचुअल निधियाँ जो बासेल II के अंतर्गत ओबीएसई के लिए प्रकटीकरण की अपेक्षाओं द्वारा सीधे प्रभावित नहीं हुईं, फिर भी वे प्रणालीगत जोखिमों के लिए संभावित माध्यम रही हैं। बचाव निधियाँ जो संरचित उत्पादों के सर्वाधिक जोखिमपूर्ण अंशों को धारित कर रही थीं, *वास्तव में* किसी प्रकटीकरण की अपेक्षा के अधीन नहीं हैं। जबकि हाल की अशांति विनियामकों

[4] बासेल I के मानकों का उपयोग करते हुए फिच रेटिंग ने यह अनुमान किया कि सबसे बुरी स्थिति के परिदृश्य में यदि चलनिधि की रेखाएं पूरी तरह नीचे खींचनी हों, तो यूरोपीय बैंकों के टीयर I पूँजी अनुपात में गिरावट चरम स्थिति में 50 प्रतिशत पर तथा अमेरिकी बैंकों के लिए लगभग 29 प्रतिशत पर होगी। (फिच रेटिंग्स, 2007)।

के समक्ष बचाव निधियों[5] द्वारा अधिदेशात्मक प्रकटीकरण के लिए मामले को मजबूत करती है, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि बाजार और विनियामक विश्वास को उपलब्ध कराये जानेवाले प्रकटीकरण के बीच एक संतुलन होना चाहिए जबकि बाजार के सुचारु कार्यचालन के लिए योगदान करने में बचाव निधि के लचीलेपन में कोई बाधा नहीं डाली जानी चाहिए।

2.46 इस प्रकार बैंकों और गैर-बैंक वित्तीय संस्थाओं के बीच विनियामक मध्यस्थता तथा विनियामक संरचनाओं में समन्वय के अभाव ने भी संकट के लिए योगदान किया होगा। सीमाओं के पार विनियामक मध्यस्थता का भी अधिकतम दुरुपयोग किया गया। वित्तीय सेवाओं को आकर्षित करने के प्रयास में अंतरराष्ट्रीय वित्तीय केंद्रों, जैसे लंदन और न्यूयार्क में स्थित विनियामकों ने अपेक्षाकृत तौर पर नरम विनियमों अथवा मृदु स्पर्श विनियमन के रूप में वर्णित नीति को अपनाया। कुछ केंद्रों को वैश्विक वित्तीय केंद्रों के रूप में विकसित करने की आतुरता विनियमन में आधारतल तक पहुँचने की स्पर्धा में परिणत हुई (रेड्डी, 2009बी)।

जोखिम मापन, लेखांकन और प्रोत्साहन संरचना

जोखिम मापन

2.47 संकट के लिए एक और व्यष्टि-आर्थिक कारण जोखिम मापन की समस्याओं से संबंधित है। इस संदर्भ में पाँच मुद्दे संगत हैं। पहला, ऐतिहासिक सामग्री का उपयोग नये वित्तीय लिखतों के कीमत-निर्धारण के लिए केवल हाल की अवधि (महान नरमी की अवधि) के लिए प्रतिबंधित किया गया जिसके कारण गुमराह करनेवाले परिणाम सामने आए। जोखिम इनके माध्यम से कम किया गया- (1) बचाव, जिसके द्वारा दो जोखिम एक दूसरे के पूरक माने गये क्योंकि उनकी चुकौतियाँ ऋणात्मक रूप से सहसंबद्ध थीं; तथा (2) विविधीकरण, जिसके द्वारा जोखिम उन परिसंपत्तियों में व्याप्त हो गया जिनके प्रतिलाभ पूर्ण से न्यून रूप में सहसंबद्ध थे। सामान्य तौर पर सही होने पर भी कभी कभी ऐतिहासिक सहसंबंध गुमराह करनेवाले परिणामों के लिए कारण बन सकते हैं। इस प्रकार अत्यंत परिष्कृत सांख्यिकीय मॉडल भी जोखिमों का सही तौर पर मापन और कीमत-निर्धारण नहीं कर सके, जिसके परिणामस्वरूप कई अवसरों पर जोखिमों का कुप्रबंध सामने आया। ऐतिहासिक सहसंबंध की सीमाएँ अमेरिका में सब-प्राइम बंधकों के प्रतिभूतिकरण के साथ संबद्ध एक समस्या थीं, जिसके द्वारा वस्तुनिष्ठ रूप में बड़ी संख्या में निम्न गुणवत्ता वाले ऋण एकसाथ समूहीकृत किये गये जिनमें से उक्त समूह द्वारा समर्थित उच्च गुणवत्ता और निम्न गुणवत्ता वाली प्रतिभूतियों का एक मिश्रण निर्मित (उत्पादन) किया गया और पूर्णत: एक नई श्रेणी के उधारकर्ताओं को बेचा गया (वितरण) किया गया। तथापि, प्रमुख त्रुटि यह रही कि प्रवर्तकों ने सामान्यत: चूक का अत्यंत अल्प जोखिम रखा और जैसे ही तेजी में विकास हुआ, ऋणों की गुणवत्ता प्रगामी रूप से बदतर होती गई। संकट से पहले 'उत्पादन और वितरण' मॉडल ने भली भाँति कार्य किया क्योंकि उसने इस अनुमान के संबंध में विविधीकरण उपलब्ध कराया कि विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में परिसंपत्ति कीमतें एकसाथ गतिशील नहीं होतीं। उदाहरण के लिए संकट से पहले यह सोचा गया कि वैश्विक तौर पर निवेश जोखिम को कम करेगा, क्योंकि कीमतें विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में एकसाथ गतिशील नहीं होतीं। यह धारणा गलत साबित हुई। परिसंपत्ति कीमतें जो पहले स्वतंत्र रूप से गतिशील थीं (विविधीकरण प्रदान करते हुए) अथवा विपरीत दिशाओं में गतिशील थीं (बचाव प्रदान करते हुए), जब एकसाथ गतिशील होने लगीं, तब जोखिम कम होने के बजाय बढ़ गए। जब खराब समय आया, तब सहसंबंध बड़े और धनात्मक बन गए। जो कुछ जोखिम-कटौती थी, वह जोखिम संकेंद्रण बन गई।

2.48 दूसरा, इस प्रकार की बड़ी घटनाओं की कम संभावना का अनुमान करना कठिन था।जोखिम का मापन, कीमत-निर्धारण और प्रबंध के लिए आधुनिक सांख्यिकीय साधनों की आवश्यकता होती है जो अधिकत: ऐतिहासिक अनुभव पर आधारित हैं। अपनी सरलता के साथ स्वाभाविक अनुमान यह है कि अनेक विभिन्न परिसंपत्तियों के प्रतिलाभ सामान्यत: वितरित किये जाते हैं (और विरल घटनाओं पर भी यह लागू होता है)। साथ ही, यद्यपि ऐसी घटनाएँ विरल होती हैं. वास्तव में वे एक सामान्य वितरण द्वारा किये गये पूर्वानुमान की तुलना में अधिक आवर्ती हैं। यद्यपि एक सामान्य वितरण के अनुमान से संबंधित समस्या जानी-पहचानी थी, तथापि उक्त अनुमान इस अधिक आश्चर्यचकित न करनेवाले परिणाम के साथ बना रहा कि विरल विपत्तियों के विरुद्ध सुरक्षा की कम कीमत निर्धारित की गई है।

2.49 तीसरा, मापन में निहित समस्याओं के अतिरिक्त, वित्तीय संस्थाओं में विद्यमान जोखिम प्रबंध प्रथाओं में अभिशासन (गवर्नेंस) की समस्याएँ भी थीं। वित्तीय संस्थाओं ने विनियामक परिसीमा के बाहर की गतिविधियों को संरचित निवेश संस्थाओं के माध्यम से

[5] यहाँ यूके बचाव निधि उद्योग की पहल का उल्लेख करना आवश्यक है, जिसने 14 सबसे बड़ी यूके बचाव निधियों द्वारा समर्थित एक कार्यदल गठित किया है ताकि इस उद्योग के लिए दिशानिर्देशों का सेट विकसित किया जा सके।

अंतरित करना अपेक्षाकृत आसान पाया। अधिक सामान्य तौर पर संकट ने यह दर्शाया कि परिवर्धित वित्तीय क्षेत्र - जिसमें दोनों पारंपरिक बैंक तथा गैर-बैंक मध्यवर्तियों और तुलन-पत्र बाह्य संस्थाओं से युक्त अधिकाधिक महत्वपूर्ण समांतर वित्तीय प्रणाली विद्यमान हैं - अतीत की तुलना में अधिक जोखिमपूर्ण बन गया है। अभिशासन की विफलता भी गंभीर वित्तीय अस्थिरता के विरुद्ध सभी संबंधित संस्थागत सुरक्षाओं की असफलता द्वारा प्रमाणित हो चुकी है। इस प्रकार, बोर्ड, प्रबंधन, जोखिम प्रबंध प्रथाओं और आंतरिक नियंत्रणों ने ज्यादतियाँ होने दीं। रेटिंग एजेंसियों, परामर्शदाताओं, विश्लेषकों और लेखा-परीक्षकों ने जोखिमों के निर्माण के विषय में चेतावनी नहीं दी, जो संभवत: संबंधित प्रोत्साहनों अथवा प्रतिपक्षी व्यवहारों के कारण था। वित्तीय विनियामकों ने इन ज्यादतियों को घटित होने दिया। अंतिम रूप से बाजार अनुशासन जिस पर सामान्यत: विश्वास किया गया है तथा जिसमें मीडिया और जनमत शामिल हैं, इन ज्यादतियों को रोक न सका।

2.50 चौथा, अधिक सामान्य तौर पर संकट ने यह दिखाया कि परिवर्धित वित्तीय क्षेत्र -जिसमें दोनों पारंपरिक बैंक तथा गैर-बैंक मध्यवर्तियों और तुलन-पत्र बाह्य संस्थाओं से संरचित अधिकाधिक महत्वपूर्ण समांतर वित्तीय प्रणाली सम्मिलित हैं - अतीत की तुलना में अधिक जोखिमपूर्ण बन गया था। एक राष्ट्रीय समरूप विनियामक प्राधिकरण के अभाव का परिणाम बंधक बाजार और सब-प्राइम बंधक उत्पादों में वित्तीय क्षेत्र की संबद्धता के मान के विषय में चूक के रूप में हुआ। बहुविध विनियामकों के कारण बाजार के सहभागियों द्वारा विनियामक मध्यस्थता सुसाध्य हुई और इस प्रकार जोखिमों में बढ़ोतरी हुई। इस तथ्य के बावजूद कि वित्तीय बाजारों का वैश्वीकरण हुआ, सीमापार विनियमन के लिए ढाँचा कमजोर था।

2.51 पाँचवाँ, जोखिम अधिकारियों और शीर्षस्थ कार्यपालकों के बीच एक बड़ी पृथकता थी जो निर्णयकर्ता हैं। जोखिम अधिकारियों द्वारा शीर्षस्थ निर्णयकर्ताओं के साथ विरले ही पर्याप्त दैनंदिन संपर्क होने के कारण वे प्राय: अपने मूल्यांकन प्रभावी तौर पर संप्रेषित नहीं कर सके। साथ ही, कुछ अवसरों पर जब जो कुछ हो रहा था वह लाभप्रद था, तब सुनने के लिए प्रबंधकों और निदेशकों को पाना कठिन था (अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक, 2009)।

लेखांकन प्रक्रियाएँ

2.52 सामान्यत: यह देखा गया है कि लेखांकन प्रक्रियाओं, जिनका अनुसरण बाजार के सहभागियों ने किया, का भी संकट में योगदान रहा। लेखांकन प्रक्रियाएँ चक्रीयता के अनुकूल थीं, जो विशेष रूप से परिसंपत्तियों और देयताओं के मूल्यांकन के मार्क-टू-मार्केट नियमों की नीति के कारण था। मार्क-टू-मार्केट किसी प्रतिभूति अथवा संविभाग की कीमत अथवा मूल्य को दर्ज करने का लेखांकन कार्य है जिसमें उसके बही मूल्य के बजाय उसका वर्तमान बाजार मूल्य अंकित किया जाता है। तथापि, यह मानते हुए कि सभी प्रतिभूतियाँ व्यापार-योग्य बाजार मूल्य रखने के लिए पर्याप्त नकदी नहीं हैं, सामान्यत: एक मॉडल के आधार पर उचित मूल्य पर उन्हें अंकित किया जाता है। उक्त मॉडल को निविष्टियों से भर दिया जाता है जिनके लिए बाजार मूल्य (इसी प्रकार की प्रतिभूतियों की कीमतें, ब्याज दरें, आदि) अथवा निविष्टि मूल्यों के बारे में अनुमान उपलब्ध हैं। मार्क-टू-मार्केट लेखांकन के साथ समस्या यह है कि वह इस अनुमान पर विश्वास करता है कि बाजार किसी परिसंपत्ति के संबंध में मूल्य का सर्वोत्तम मध्यवर्ती है। प्राय: यह एक उचित मान्यता है, परंतु किसी बाजार संकट के समय यह विच्छिन्न हो जाती है। जब निवेशक भय से आक्रांत होते हैं, तब दहशत भरी बिक्री ऐसी कीमतें उत्पन्न कर सकती है जो अंतर्निहित परिसंपत्ति मूल्यों के साथ सामंजस्य के बाहर हो जाती हैं। बदतर तो यह है कि बाजार पूर्णत: व्यापार को बंद कर सकता है।

2.53 संकट से पहले संरचित वित्त उत्पादों और काउंटर पर (ओटीसी) बाजारों में संबंधित डेरिवेटिव्स के लिए बाजार के बड़े आकार को देखते हुए, उनका उचित मूल्य निर्धारित करना लगभग असंभव हो गया था। जैसा कि स्पष्ट है, हाल के संकट में उचित मूल्य लेखांकन दोषपूर्ण विभिन्न तुलन-पत्र की स्थितियाँ व्यक्त करने के लिए चयनित मूल्यों के लिए नहीं था, बल्कि गोदाम जोखिमों तक वाणिज्य और निवेश बैंकों के विभिन्न तुलन-पत्र से बाहर की मदों के विस्तारों के लिए था जिन्हें प्रतिष्ठात्मक कारणों से जब भी संचित हानियाँ विकसित होतीं, तब तुलन-पत्र पर वापस लाना चाहिए था। साथ ही, बड़ी और संश्लिष्ट वित्तीय संस्थाओं में अलग-अलग प्रबंधकों के लिए अपनी पूँजी को अधिक बताने और हानि के प्रति अपने एक्सपोज़र को कम बताने के सूचना संबंधी विकल्पों की ख़ोज करने और उनका प्रयोग करने के लिए जबरदस्त प्रोत्साहन थे। यह अंतर्निहित आर्थिक सहायता प्राप्त करने के लिए उनकी क्षमता को व्यापक बनाता है जो जोखिम उठाने से अंतर्निहित सुरक्षा-जाल की सहायता से उत्पन्न हो सकती है।

2.54 केवल मार्क-टू-मार्केट लेखांकन के कारण सर्वोत्तम कार्यनिष्पादन करनेवाली वित्तीय फर्मों के लिए किस्मत के पूरे उलटाव की यही संभावना है जिसने अंतरराष्ट्रीय लेखांकन मानदंडों की समीक्षा को आवश्यक बना दिया है। एक दृष्टिकोण यह भी है कि प्रतिभूतिकरण संकट को निर्मित करने और उसे सघन बनाने में उचित मूल्य लेखांकन की भूमिका को अधिक बताया जा रहा है। अमेरिका में उचित मूल्य लेखांकन को अपनाने का एक प्रमुख उद्देश्य समस्याग्रस्त वित्तीय

फर्मों की विकसित हो रही कुछ हानियों को पहचानना और उनका समाधान अतीत की तुलना में अधिक तत्परता के साथ करना था। परंतु वास्तव में उचित मूल्य लेखांकन के अंतर्गत संविभाग की स्थितियाँ वास्तविक लेनदेन की कीमत के बजाय "मार्क्ड टू मॉडल" (मॉडल के अनुसार अंकित) थीं, इस प्रकार चतुर प्रबंधकों को अवसर प्रदान किया गया कि वे तब तक मॉडल के परिणामों को समायोजित करें जब तक कि वे पूर्व-विनिर्दिष्ट परिणाम उत्पन्न नहीं करते (कैप्रियो *ईटी एल.*, 2008)। इसका संबंध लेखांकन मानदंडों के बजाय फर्म के अधिकारियों की प्रोत्साहन संरचना से था।

प्रोत्साहन संरचना

2.55 इस संकट ने निवेशकों और निधि प्रबंधकों द्वारा सामना की जानेवाली प्रोत्साहन संरचना में निहित त्रुटियों पर प्रकाश डाला। पहला, निवेशकों के संबंध में जैसे जैसे आय/अर्जन के स्तर बढ़ रहे थे, वे बैंकों के तुलन-पत्रों की ओर उचित ध्यान नहीं दे सके जहाँ वे कारोबार कर रहे थे अथवा उन फर्मों के वित्त के तुलन-पत्रों पर उन्होंने ध्यान नहीं दिया जिसमें उन्होंने शेयरों अथवा ऋण प्रतिभूतियों की खरीद के माध्यम से निवेश किया। जानकारी के अभाव के अतिरिक्त, इस विश्वास ने कि कोई और तो निगरानी कर रहा है - चाहे वह विश्वस्त प्रबंधक हो, शेयर विश्लेषक हो, क्रेडिट रेटिंग एजेंसी हो अथवा विनियामक - उन्हें यह मानने के लिए प्रेरित किया कि प्रणाली परिष्कृत है और उनके निवेश सुरक्षित हैं, जबकि वास्तव में प्रणाली जटिल और अपारदर्शी थी। वित्तीय प्रणाली और वित्तीय उत्पादों की जटिलता को प्रणाली की परिष्कृतता के रूप में गलत समझा गया (अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक, 2009)।

2.56 दूसरा, वित्तीय फर्मों के प्रबंधक भी एक विरूपित प्रोत्साहन ढाँचे के अंतर्गत कार्य कर रहे थे। व्यवसाय की मात्रा के आधार पर क्षतिपूर्ति की योजनाओं ने प्रबंधकों को वित्तीय फर्मों में अत्यधिक जोखिम उठाने के लिए प्रोत्साहित किया। उन्होंने शेयरधारकों को संतुष्ट करने एवं अपने वेतन पैकेज बढ़ाने और कभी-कभी दौड़ में अपनी नौकरियाँ बनाये रखने के लिए भी उनके शेयरों पर प्रतिलाभ बढ़ाने के प्रयास की आवश्यकता देखी। कई मिलियन डॉलर के बड़े वार्षिक बोनसों ने अनुचित जोखिम उठाने, नये वित्तीय उत्पादों का नवोन्मेषण करने और उच्चतर प्रतिलाभ की तलाश करनेवाले निवेशकों को उनका विपणन करने के लिए अप्रत्यक्ष रूप से प्रोत्साहन उपलब्ध कराया, इस प्रकार लीवरेज बढ़ा तथा दुर्बल संस्थाओं और एक अस्थिर वित्तीय प्रणाली का भी निर्माण हुआ। शेयरधारकों (सीमित देयता के कारण) तथा परिसंपत्ति प्रबंधकों (उनकी क्षतिपूर्ति प्रणाली के कारण) को जोखिम उठाने के लिए अनुचित रूप से पुरस्कृत किया गया। लालच स्वीकृत मानदंड बन गया भले ही इसका अर्थ अल्पावधि में फर्म की विश्वसनीयता का परित्याग करना क्यों न था। यहाँ पर लोगों को उग्र निर्णय लेने, बचत के बारे में उनके निर्णयों में भविष्य के बारे में तार्किक रूप से विचार न करने और अंतत: भ्रष्टाचार को प्रोत्साहित करने में पशु प्रवृत्तियों की भूमिका को समझने की आवश्यकता है (अकेर्लोफ और शिलर, 2009)। परिणामत: भले ही प्रबंधकों ने किसी परिसंपत्ति की कीमत में खतरे को पहचान लिया हो, तो भी कम विक्रय करने के द्वारा उस जानकारी का लाभ वे नहीं उठा सके, इस भय से कि निवेशक अपनी निधियाँ वापस लेंगे। ऐसे पुरस्कार कार्यनिष्पादन के अनुरूप नहीं थे क्योंकि सरकारों ने प्रणालीगत तौर पर महत्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं को धराशायी होने से रोकने के लिए निधीयन की सहायता उपलब्ध कराकर अनिवार्यत: मामले को समाप्त कर दिया।

2.57 समाहार के तौर पर, जबकि समष्टि-आर्थिक प्रबंध के क्षेत्र में कोई ऐसा अकेला स्पष्टीकरण नहीं है जो पूर्णत: संतोषजनक प्रतीत होता हो, अधिकांश स्पष्टीकरणों के लिए एक सामान्य सूत्र अर्थात् बाजार की असफलताओं के लिए संभावना की गंभीर कम अनुमान है क्योंकि वह सामान्य रूप से समष्टि-अर्थव्यवस्था से और विशेष रूप से वित्तीय क्षेत्र से संबंधित है (रेड्डी, 2009सी)। विभिन्न कारणों की संबद्धता यद्यपि बहुत स्पष्ट नहीं है, निम्नानुसार परिलक्षित होती है : वैश्विक असंतुलनों के परिणामस्वरूप एशिया से बचत उन्नत देशों में निवेश की गई, जिससे उनकी वास्तविक ब्याज दरें नीचे आ गईं। प्रतिलाभ के लिए स्वार्थी अन्वेषण के कारण इसने ऋण की गुणवत्ता में ह्रास के साथ ऋण की मात्रा में भारी विस्तार के लिए प्रेरणा दी। इसने फिर नये विषाक्त वित्तीय उत्पादों के उत्पादन, हालांकि खंडीकरण, बचाव तथा उत्पादन और वितरण के माध्यम से, के लिए प्रेरित किया, जिनमें से सभी एक विस्फोटक आयाम तक संकट के घटित होने के लिए मिल गए थे (सुब्बाराव, 2009)। वर्तमान वैश्विक वित्तीय संकट के आलोक में यह उपयुक्त होगा कि वित्तीय संकटों के इतिहास का पता उनकी घटना, कारणों और प्रभावों के तौर पर लगाया जाए।

II. ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में वित्तीय संकट

परिभाषा और वर्गीकरण

2.58 वित्तीय आतंक अथवा संकट उतने ही पुराने हैं जितना कि स्वयं पूँजीवाद तथा इनका पता कम से कम 1636-37 के डच ट्यूलिप मैनिया और 1719-20 के दक्षिणी समुद्र खतरे (बबल) तक लगाया

जा सकता है। वित्तीय संकटों के अध्ययन का प्राथमिक उद्देश्य किसी संकट के अंतर्निहित विश्लेषण-विद्या को बेहतर समझना रहा है ताकि भावी घटना का पूर्वानुमान किया जा सके और उसे न्यूनतम बनाया जा सके। इस प्रकार वर्तमान संदर्भ में अतीत में वैश्विक अर्थव्यवस्था द्वारा देखे गये वित्तीय संकटों का विश्लेषण हाल के संकट को समझने और विश्लेषण करने के लिए महत्व रखता है।

2.59 सभी वित्तीय संकटों का एक सामान्य लक्षण वे प्राय: तीव्र शक्ति के साथ आए और नीति-निर्धारकों के लिए महत्वपूर्ण शिक्षा देते हुए चले गए। किंडलबर्गर (1978) ने वित्तीय संकट को ठीक ही एक "सदाबहार समस्या" कहा है। वित्तीय संकटों की स्वीकृत रूप में परिभाषा देना कठिन है तथा प्राय: उनका कोई सुनिश्चित प्रारंभ अथवा अंत नहीं है। उनकी परिभाषा अनकदी और वित्तीय बाजार के सहभागियों में दिवालियेपन की महत्वपूर्ण समस्याओं द्वारा सुस्पष्ट वित्तीय बाजार की अस्थिरता की घटनाओं के रूप में दी जा सकती है जिनके संबंध में ऐसे परिणामों को नियंत्रित करने के लिए सरकारी हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है। वैकल्पिक तौर पर वित्तीय संकटों को बैंकिंग प्रणाली की पूँजी के उल्लेखनीय अंश को विलुप्त अथवा दुर्बल करनेवाली वित्तीय घटनाओटं के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

2.60 कुछ अर्थशास्त्रियों ने भी वित्तीय संकट की परिभाषा एक ऐसी स्थिति के रूप में दी है जिसमें मुद्रा की आपूर्ति मुद्रा के लिए माँग द्वारा पीछे छोड़ दी गई हो। इसका आशय यह है कि चलनिधि त्वरित रूप से अदृश्य होती है क्योंकि उपलब्ध मुद्रा बैंकों से आहरित की जाती है (जो भारी मात्रा में आकस्मिक आहरण कहलाता है) जिससे बैंक कमी को पूरी करने के लिए अन्य निवेशों को बेचने अथवा स्वयं धराशायी होने के लिए मजबूर हो जाते हैं। वित्तीय संकट की एक और परिभाषा मिश्किन (1991ए) द्वारा प्रस्तुत की गई है जो वित्तीय संकट को वित्तीय बाजारों के विघटन के रूप में परिभाषित करते हैं जिसमें प्रतिकूल चयन और नैतिक संकट की समस्याएँ काफी बदतर हो जाती हैं ताकि वित्तीय बाजार उन लोगों को निधियाँ कुशलतापूर्वक मुहैया करने में असमर्थ हो जाते हैं जिनके पास सर्वाधिक उत्पादक निवेश के अवसर हैं। इसके परिणामस्वरूप एक वित्तीय संकट अर्थव्यवस्था को संतुलन से अत्यधिक परिमाण में दूर ले जा सकता है जिसमें वित्तीय बाजार ऐसी स्थिति में कार्य करते हैं जिसमें उत्पादन तेजी से घट जाता है।

2.61 वित्तीय संकट संबंधी साहित्य को दो विचारधाराओं में बाँटा जा सकता है, एक दृष्टिकोण मुद्रावादियों द्वारा प्रकट किया गया है तथा दूसरा अधिक उदार दृष्टिकोण किंडलबर्गर और मिन्स्की द्वारा प्रस्तुत किया गया है। फ्रायडमैन और स्क्वाट्र्ज (1963) जैसे मुद्रावादियों ने वित्तीय संकटों को बैंकिंग आतंकों के साथ संबद्ध किया है तथा यह निष्कर्ष निकाला कि बैंकिंग संबंधी आतंक मुद्रा संकुचन में परिणत होते हैं जो फिर आर्थिक कार्यकलाप में तीव्र संकुचन को प्रेरित करते हैं। वित्तीय संकट की घटनाएँ जो बैंकिंग आतंकों के रूप में परिणत नहीं हुई हैं, मुद्रावादियों द्वारा वित्तीय संकट के रूप में वर्गीकृत नहीं की गई हैं तथा उन्होंने इन घटनाओं को "छद्म वित्तीय संकट" कहा है। वित्तीय संकटों का इसके विपरीत दृष्टिकोण की रूपरेखा किंडलबर्गर (1978) और मिन्स्की (1972) द्वारा दी गई है जिनकी वित्तीय संकटों की परिभाषाएँ अधिक व्यापक हैं। उनकी दृष्टि में वित्तीय संकटों के साथ या तो परिसंपत्ति कीमतों में तीव्र गिरावट, बड़ी वित्तीय और वित्तेतर फर्मों की विफलताएँ, अपस्फीति अथवा अवस्फीति, विदेशी मुद्रा बाजारों में विघटन संबद्ध हैं या इन सभी में से कुछ का समूह। इन परिभाषाओं से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वित्तीय संकट वित्तीय प्रणाली पर, बैंकों और अन्य वित्तीय मध्यवर्तियों पर दबाव को सूचित करते हैं, जिसका परिणाम सामान्यत प्रणालीगत तौर पर महत्वपूर्ण संस्थाओं की विफलताओं एवं राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में तीव्र संकुचन के रूप में होता है।

2.62 साहित्य ने सामान्यत: वित्तीय संकटों को निम्नानुसार वर्गीकृत किया है : ऋण संकट, बैंकिंग संकट, मुद्रा संकट, तथा वित्तीय संसर्ग के कारण संकट। अर्थव्यवस्था इनमें से किसी भी संकट द्वारा प्रभावित हो सकती है अथवा एक ही समय आर्थिक संकट के एक से अधिक प्रकारों के घटित होने का अनुभव कर सकती है। पिछले 150 वर्षों में अनुभव किये गये वित्तीय संकटों को इन प्रकारों में से किसी एक प्रकार के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है।

ऋण संकट

2.63 ऋण संकट वित्तीय संकटों का सबसे पुराना ज्ञात विभेद है और ये बारंबार घटित हुए हैं। ऋण संकट तब घटित होता है जब या तो उधारकर्ता चूक करता है या ऋणदाता इसे महत्वपूर्ण जोखिम के रूप में पाते हें तथा इस कारण से नये ऋणों को रोकते हैं और मौजूदा ऋणों के परिसमापन का प्रयास करते हैं। ऋण संकट वाणिज्यिक (निजी)और/या सर्वोत्तम (सरकारी) ऋण के संबंध में लागू हो सकता है। यदि ऐसा कोई विदित जोखिम है कि सरकारी क्षेत्र अपनी चुकौती के दायित्वों को स्वीकार करना समाप्त करेगा, तो इससे अंशत: निजी पूँजी के अंतर्वाह में तीव्र कटौती की संभावना बन सकती है क्योंकि निजी क्षेत्र के ऋण की चुकौती की अनुमति देने के लिए सरकार की

प्रतिबद्धता पर संदेह उत्पन्न होता है। इसके विपरीत यदि निजी क्षेत्र (का भाग) अपने बाह्य दायित्वों को पूरा करने में असमर्थ है, तो कोई आवश्यक नहीं कि यह किसी अधिक व्यापक संकट का कारण बने; परंतु व्यवहार में यदि निजी क्षेत्र की चूक उल्लेखनीय मात्रा में है तो वाणिज्यिक ऋण प्राय: गारंटियों, बैंक बेलआउटों इत्यादि के माध्यम से सरकारी ऋण बन जाता है। सरकार अपने सर्वोत्तम ऋण की चुकौती करने में विफल हो सकती है। इससे अकसर पूँजी के अंतर्वाह में अचानक गिरावट और पूँजी के बहिर्वाह में तीव्र वृद्धि होती है।

बैंकिंग संकट

2.64 बैंकिंग संकट अनेक ग्राहकों द्वारा बैंक जमाराशियों के आकस्मिक आहरण से प्रेरित होता है जो स्थिति 'बैंक रन' अर्थात् बैंकों से जमाराशि वापस लेने की होड़ के रूप में जानी जाती है। बैंकों के पास अनेक जमाकर्ताओं को एकसाथ वापसी अदायगी करने के लिए पर्याप्त निधियाँ नहीं हो सकतीं, क्योंकि वे अपनी निधियाँ उधार देते हैं। इस प्रकार कोई भी बैंकिंग संकट तब घटित होता है जब वास्तविक अथवा संभावित बैंक रन या विफलताएँ बैंकों को इस बात के लिए अभिप्रेरित करती हैं कि वे अपनी देयताओं की आंतरिक परिवर्तनीयता को स्थगित करें अथवा सरकार को इस बात के लिए विवश करें कि वह बड़े पैमाने पर सहायता प्रदान करने के द्वारा बैंक के पतन को रोकने के लिए हस्तक्षेप करे। बैंक रन रेडलेट और सैक्स (1998) द्वारा दिये गये सुझाव के अनुसार हो सकता है अर्थात् या तो शाब्दिक बैंक रन - चांग और वैलेस्को (1998ए, 1998बी) द्वारा प्रस्तुत धारणा - या एक प्रकार के तुलन-पत्र द्वारा प्रेरित वित्तीय संकुचन के माध्यम से स्व-पूरक पतन संभव है। बैंकिंग संकट दीर्घकालिक होने की प्रवृत्ति दर्शाते हैं तथा आर्थिक कार्यकलाप पर इनके तीव्र प्रभाव होते हैं जो वित्तीय मध्यस्थता, विश्वास, पूँजी-पलायन, मुद्रा प्रतिस्थापन और सरकारी वित्तों पर उनके असर के माध्यम से हैं। बैंकिंग संकट सामान्यत: अधिकांश अथवा संपूर्ण सकल बैंकिंग प्रणाली पूँजी के ह्रास में परिणत होता है। ब्रेटन वुड्स के जमाने के दौरान बैंकिंग संकट अपेक्षाकृत विरल थे जो पूँजीगत और वित्तीय नियंत्रणों के कारण थे, परंतु ये 1970 के बाद के दशक से प्राय: मुद्रा संकटों के आगे-पीछे अधिकाधिक सामान्य हो गये हैं (कैमिन्स्की और रेइनहार्ट, 1999)।

मुद्रा संकट

2.65 मुद्रा संकट तब घटित होता है जब विनिमय दर पर कोई काल्पनिक आक्रमण अवमूल्यन या तीव्र मूल्यह्रास में परिणत होता है अथवा देश के प्राधिकारियों को बड़ी मात्रा में आरक्षित निधियों का व्यय करने या उल्लेखनीय रूप में ब्याज दरों को बढ़ाने के द्वारा मुद्रा की रक्षा करने के लिए विवश कर देता है। मुद्रा संकट सामान्यत: समता में बलपूर्वक परिवर्तन, नियंत्रित विनिमय दर के परित्याग, अथवा किसी अंतरराष्ट्रीय रक्षण का परिणाम है (बोर्डो *ईटी एएल.*, 2001)। मुद्रा संकट या तो 'पुरानी पद्धति' का मुद्रा संकट हो सकता है जहाँ प्राय: व्यापक पूँजी नियंत्रणों के संदर्भ में अधिव्यय और वास्तविक मूल्यवृद्धि का चक्र चालू खाते को कमजोर बनाता है और उसकी समाप्ति अवमूल्यन में होती है या फिर 'नई पद्धति' का संकट हो सकता है जहाँ अर्थव्यवस्था (सरकारी और निजी) के उल्लेखनीय भाग के तुलन-पत्र की ऋण-पात्रता के बारे में निवेशक सरोकार अधिक उदार और एकीकृत पूँजी एवं वित्तीय बाजारों के परिवेश में विनिमय दर पर दबाव के त्वरित निर्माण को प्रेरित करते हैं (डॉर्नब्यूश, 2001)। मुद्रा संकट की कोई सामान्यत: स्वीकृत परिभाषा नहीं है। प्रमुख तत्व एक प्रकार का चक्रीय तर्क है जिसमें निवेशक किसी मुद्रा से दूर भागते हैं क्योंकि उन्हें डर लगता है कि उसका अवमूल्यन हो सकता है तथा जिसमें ऐसे अवमूल्यन के लिए कुछ (यद्यपि आवश्यक रूप से सारा नहीं) दबाव निश्चित रूप से पूँजी पलायन से आता है। मुद्रा संकटों ने अंतर-युद्ध समय की आर्थिक अशांति में, ब्रेटन वुड्स के पतन में, 1980 के बाद के दशक में घटित लातीन अमेरिकी ऋण संकट के प्रारंभिक चरणों में तथा 1997 में एशियाई वित्तीय संकट में बड़ी भूमिका निभाई।

संक्रामकता

2.66 विभिन्न राष्ट्रों के बीच दोनों व्यापार और पूँजी में अधिकाधिक बढ़ी हुई संबद्धताओं को ध्यान में रखते हुए वित्तीय संक्रामकता का प्रश्न भी महत्वपूर्ण बन गया है जो एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा वित्तीय प्रणाली के एक भाग में विद्यमान आघात 'संबद्धताओं' की एक शृंखला के माध्यम से फैल जाता है। संक्रामकता की सरणियों में सामान्यत:सूचना का प्रवाह और अंतर-बैंक दावे शामिल हैं। एक बाजार में कीमतों में गिरावट का अर्थ मूल व्यवस्थाओं के बारे में एक नकारात्मक संकेत के रूप में लगाया जा सकता है। यदि ये मूल व्यवस्थाएँ अन्य बाजारों के लिए समान हैं, तो प्रत्याशित प्रतिलाभ ही नहीं, बल्कि इस कारण से उन बाजारों में कीमतें भी गिर जाएँगी। इसी प्रकार, यदि एक मुद्रा का अवमूल्यन होता है, तो समान मूल व्यवस्थाओं से युक्त अन्य देश भी अपनी मुद्रा में अवमूल्यन का अनुभव कर सकते हैं। साथ ही, यह मानते हुए कि माँग के असाधारण रूप से अत्यधिक होने की स्थिति में चलनिधि उपलब्ध कराने के लिए बैंकों के लिए अन्य प्रांतों और क्षेत्रों में स्थित बैंकों में जमाराशियाँ धारित

करना इष्टतम है, जब एक प्रांत बैंकिंग संकट से ग्रस्त है, तब अन्य प्रांत हानि उठाएँगे क्योंकि समस्याग्रस्त प्रांत में स्थित बैंकों पर उनके दावों का मूल्य गिर जाता है। यदि इस फैलाव का प्रभाव काफी मजबूत है, तो यह निकटवर्ती प्रांतों में संकट का कारण बनता है। जैसे-जैसे संकट एक प्रांत से दूसरे प्रांत में चला जाता है, वह दृढ़तर हो जाता है तथा संक्रामकता बन जाता है (ऐलन और गेल, 2000बी; कोडरेस और प्रिटस्कर, 2002)। एशियाई संकट इस बात का उदाहरण है कि संक्रामकता कैसे क्षेत्र की अनेक अर्थव्यवस्थाओं को प्रभावित कर सकती है।

2.67 उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में हाल के अनेक वित्तीय संकटों, जैसे मेक्सिको का संकट और पूर्वी एशियाई संकट, की विशेषता मुद्रा, ऋण और बैंकिंग संकटों की रही है जो एक ही समय घटित हुए हैं अथवा त्वरित रूप से एक के बाद दूसरा। वित्तीय संकटों का एक विश्लेषण यह सुझाता है कि पूँजीगत नियंत्रणों से युक्त देशों में मुद्रा संकट प्राय: अधिक हैं जबकि बैंकिंग संकट कम आवर्ती हैं। बैंकिंग संकटों और मुद्रा संकटों के बीच का संबंध भी अनुभवपूर्वक जान लिया गया है (कैमिनस्की और रेइनहार्ट, 1999)। यह पाया गया है कि 1970 के बाद के दशक में जब वित्तीय प्रणालियाँ अत्यधिक विनियमित थीं, मुद्रा संकट और बैंकिंग संकट एक समय घटित नहीं हुए। 1980 के बाद के वर्षों में वित्तीय उदारीकरण के बाद मुद्रा संकट और बैंकिंग संकट अधिक अन्तर्जटित बन गए हैं। यद्यपि बैंकिंग संकट विशिष्ट रूप से मुद्रा संकट से पहले घटित होते हें, तथापि उनका समान कारण सामान्यत: परिसंपत्तियों के मूल्यों में गिरावट है जो अर्थव्यवस्था में मंदी अथवा दुर्बलता के कारण होती है। प्राय: संकट तेजी के चक्र का भाग है जो वित्तीय उदारीकरण के बाद घटित होता है।

2.68 वास्तव में, जैसे जैसे अंतरराष्ट्रीय पूँजी और देशी वित्तीय बाजार बढ़ते हुए वैश्वीकरण के साथ अधिकाधिक एकीकृत हुए हैं, विभिन्न प्रकार के वित्तीय संकटों के बीच भेद अस्पष्ट हो गया है। हाल के विश्लेषण आंतरिक वित्तीयन के दबाव के अवसरों पर कारपोरेट, बैंकिंग और सरकारी क्षेत्रों के बीच संबद्धताओं पर फोकस करते हैं। संकट गतिसिद्धांत और व्याप्ति के प्रभावों पर ध्यान दिया गया है जिनका विस्तार अधिक पारंपरिक प्रवाह के परिवर्तियों के माध्यम से किया गया है, जैसे चालू खाता और राजकोषीय घाटे। इस प्रकार, ऋणदाता अपने कर्ज की चुकौती करने में सरकार की क्षमता में, जमाराशियों के बहिर्वाहों के लिए वित्त प्रदान करने में बैंकिंग प्रणाली की क्षमता में अथवा अपने ऋण चुकाने में कंपनी क्षेत्र की क्षमता में विश्वास खो सकते हैं। एक क्षेत्र की समस्याओं का अन्य क्षेत्रों में व्याप्त होना संभव है; उदाहरण के लिए; सरकार के तुलन-पत्र के बारे में चिंताएँ उन बैंकों में विश्वास को नष्ट कर सकती हैं जो सरकारी ऋण को धारित करते हैं और जमाराशियों के संबंध में आकस्मिक रूप से भारी मात्रा में आहरण (रन) को चिनगारी दे सकती हैं; अथवा बैंकिंग क्षेत्र की समस्याएँ बड़ी मात्रा में आकस्मिक देयताएँ एक्सपोज़ कर सकती हैं जिससे सरकार के लिए अपने ऋण की चुकौती करने में कठिनाइयाँ उत्पन्न हो सकती हैं तथा शोधक्षमता की चिंताएँ भी इससे पैदा हो सकती हैं जो मुद्रा के संबंध में भारी मात्रा में अचानक आहरण (रन) के लिए कारणभूत हो सकती हैं। इस प्रकार समुद्रतटों के भीतर और सीमाओं के आर-पार बाजारों के बढ़े हुए एकीकरण के कारण विभिन्न प्रकार के संकटों के बीच भेद अधिकाधिक अस्पष्ट हो रहा है।

वित्तीय संकटों की घटना

2.69 आर्थिक परिदृश्य में परिवर्तनों के साथ ही वित्तीय संकटों का स्वरूप वर्षों से परिवर्तित हो गया है। वित्तीय संकटों की सबसे पुरानी अभिलिखित घटनाओं ने सामान्यत: बाह्य चूक का आकार लिया है। 1300-1799 की अवधि के दौरान यूरोप ने बाह्य चूक की 19 घटनाओं का साक्षात्कार किया। चूक करनेवाले देशों में शामिल थे आस्ट्रिया, इंग्लैंड, फ्रांस, जर्मनी, पुर्तगाल और स्पेन। अठारहवीं शताब्दी में बैंकिंग क्षेत्र के विकास के साथ ही, अनेक विकसित देशों और उभरते बाजारों द्वारा बैंकिंग संकट देखे गये। उन्नत अर्थव्यवस्था का सबसे पुराना बैंकिंग संकट 1802 में फ्रांस में घटित हुआ; उभरते बाजारों में प्रारंभिक संकट चीन में हुए (1860 के बाद के वर्षों-1870 के बाद के वर्षों के दौरान अनेक घटनाएँ) तथा 1873 में पेरू में (रेइनहार्ट और रोगोफ, 2008)।

2.70 रेइनहार्ट और रोगोफ (2008) ने 1800 से 2006 तक की अवधि के दौरान वित्तीय संकटों के इतिहास का एक अपेक्षाकृत अधिक व्यापक दृश्य प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार 1800-2006 की अवधि के दौरान सरकारी चूक की 239 घटनाएँ थीं जिनमें से सरकारी चूक की 126 घटनाएँ लातीन अमेरिका में देखी गईं जिसके बाद सरकारी चूक की 73 घटनाएं यूरोप में तथा 26 अफ्रीका में और 14 एशिया में परिलक्षित की गईं। 1800-2006 की अवधि के दौरान पाँच सुस्पष्ट चरम स्थितियाँ अथवा चूक के चक्र थे जब सभी देशों में से अत्यधिक प्रतिशत के देश चूक अथवा पुनर्संरचना की स्थिति में थे। ऐसी पहली समस्यामूलक घटना नेपोलियन के युद्ध के दौरान हुई। दूसरी 1820 के बाद के वर्षों-1840 के बाद के वर्षों के दौरान घटित हुई जब लातीन अमेरिका के सभी देशों सहित विश्व के लगभग आधे देश चूककर्ता थे। तीसरी घटना 1870 के बाद के वर्षों और 1890 के बाद के वर्षों के बीच रखी गई। 1873 का वैश्विक वित्तीय संकट जर्मन और आस्ट्रियन शेयर बाजार के पतन के कारण उत्पन्न हुआ।

चौथी घटना 1930 के बाद के वर्षों और 1950 के बाद के वर्षों के बीच की महान मंदी में प्रारंभ हुई जब पुन: सभी देशों में से लगभग आधे देश चूक में रहे। सबसे हाल के चूक-चक्र ने 1980 के बाद के वर्षों और 1990 के बाद के वर्षों के उभरते बाजार ऋण संकटों का अधिगमन किया।

2.71 1880-2000 की अवधि के दौरान वित्तीय संकटों के इतिहास की विस्तार में जाँच-पड़ताल बोर्डो *ईटी एएल.*, (2001) द्वारा भी की गई। उनके विश्लेषण के आधार पर 1875 और 2007 के बीच की अवधि को मोटे तौर पर चार अवधियों में बाँटा जा सकता है :स्वर्ण मानक काल 1875-1913; अंतर-युद्ध के वर्ष : 1919-1939; ब्रेटोन वुड्स अवधि :1945-1971; तथा हाल की अवधि : 1973-2007।

स्वर्ण मानक काल : 1875-1913

2.72 स्वर्ण मानक काल उक्त चार अवधियों में अपेक्षाकृत अनुकूल रहा है यद्यपि इस अवधि के दौरान पूँजी बाजार वैश्वीकृत हुए थे। स्वर्ण मानक काल (1873-1913) के दौरान संकट कम रहे। इस अवधि में सरकारी चूक की 35 घटनाएँ थीं। चूक करनेवाले राष्ट्रों में ज्यादातर लातीन अमेरिकी थे तथा कुछ यूरोपीय देश भी थे जैसे ग्रीस (1893), पुर्तगाल (1890), रूस (1885) और स्पेन (1882)। इस अवधि के दौरान बैंकिंग संकट अपेक्षाकृत विरल थे; सर्वाधिक उल्लेखनीय बैंकिंग संकट अमेरिका में था जो 1873 में प्रारंभ हुआ। अमेरिका ने एक और प्रमुख बैंकिंग संकट का सामना 1893 में किया और एक बार पुन: 1907 में।

अंतर-युद्ध के वर्ष : 1919-1939

2.73 अंतर-युद्ध के वर्ष (1919-1939) बिलकुल अशांत थे। यह कोई आश्चर्यजनक नहीं है क्योंकि महान मंदी इसी अवधि में घटित हुई (बॉक्स II.4)। बैंकिंग संकट और मुद्रा संकट अंतर-युद्ध काल के दौरान सुविस्तृत थे। इस अवधि में बैंकिंग संकटों की 21 घटनाएँ थीं तथा वे उत्तरी अमेरिका, यूरोप, अफ्रीका और लातीन अमेरिका

बॉक्स II.4
महान मंदी

विश्वव्यापी आर्थिक अवनति जो महान मंदी के रूप में जानी जाती है, 1929 में प्रारंभ हुई तथा लगभग 1939 तक बनी रही। यह सबसे लंबी और और तीव्रतम मंदी रही है जो औद्योगीकृत पश्चिमी जगत द्वारा देखी गई। यह मंदी अमेरिका में उत्पन्न हुई तथा इसका परिणाम प्राय: समूची वैश्विक अर्थव्यवस्था में उत्पादन और रोजगार में तीव्र गिरावट और उग्र अपस्फीति के रूप में रहा (रोमर, 2003)। .

पृष्ठभूमि

अमेरिका की अर्थव्यवस्था ने 1920 के बाद के दशक के अंतिम वर्षों में तेज आर्थिक वृद्धि और वित्तीय आधिक्यों का अनुभव किया था तथा प्रारंभ में आर्थिक अवनति को मामूली तौर पर तेजी के विकास चक्र के भाग के रूप में देखा गया। कृषि में अधिउत्पादन हुआ जो कीमतों में गिरावट और किसानों में बढ़ते कर्ज का कारण बना। 1920 के बाद के दशक के बीच में वाल स्ट्रीट ने बड़ी संख्या में मध्यवर्ग के निवेशकों को आकर्षित किया। सट्टेबाजी बढ़ रही थी तथा फरवरी 1929 में फेडरल रिज़र्व ने बैंकों द्वारा सट्टेबाजी के प्रयोजनों के लिए उधार को नियंत्रित करने के लिए वक्तव्य जारी किये। इसके कारण शेयरों की कीमतों में गिरावट हुई। शेयर बाजार मार्च 1929 तक पुन: अपनी पूर्व स्थिति में वापस आ गये; फिर भी सितंबर 1929 में एक तीव्र गिरावट आई। इसी समय अक्तूबर 1929 में "वाल स्ट्रीट क्रैश" सहित एक बड़ा बैंकिंग संकट सामने आया।

कारण

अमेरिका में महान मंदी का मूलभूत कारण सकल माँग में गिरावट थी जिसके परिणामस्वरूप उत्पादन में कमी आई और स्टॉकों का ढेर लग गया। अनेक कारकों ने सकल माँग में संकुचन को प्रेरित किया जो मंदी की अवधि के दौरान भिन्न-भिन्न रहा। सकल माँग में मंदी का मुख्य कारक विश्व की मुद्रा आपूर्ति में विश्वव्यापी संकुचन था। यह मौद्रिक पतन स्वयं खराब प्रबंधन और तकनीकी तौर पर त्रुटियों से युक्त अंतरराष्ट्रीय मौद्रिक प्रणाली का परिणाम था (विश्व युद्ध I के बाद स्वर्ण मानक पुनर्गठित किया गया)। महान संकुचन में मौद्रिक आघातों ने एक प्रमुख भूमिका निभाई तथा ये आघात विश्व भर में प्राथमिक तौर पर स्वर्म मानक के कार्यचालन के माध्यम से प्रेषित किये गये (बेर्नान्के, 2000)।

अमेरिका में उत्पादन में पतन, जो 1929 के ग्रीष्मकाल में प्रारंभ हुआ, के लिए व्यापक तौर पर कारण शेयर बाजार में सट्टेबाजी में वृद्धि को रोकने के लिए सख्त की गई अमेरिकी मौद्रिक नीति थी। 1921 और 1929 के बीच अमेरिका में शेयरों की कीमतें चार गुनी से भी अधिक बढ़ गईं जब शेयरों की कीमतें चरम पर थीं। शेयर बाजार में सट्टेबाजी को सीमित करने के उद्देश्य से 1928 और 1929 के बीच फेडरल रिज़र्व ने ब्याज दरें बढ़ाईं। ब्याज दरों में इस वृद्धि ने निर्माण और ऑटोमोबाइल खरीदी जैसे क्षेत्रों में ब्याज दर के प्रति संवेदनशील व्यय में गिरावट को प्रेरित किया जो घटे हुए उत्पादन में परिणत हुआ।सितंबर 1929 तक अमेरिकी शेयर बाजार में सट्टेबाजी का खतरा (बबल) निर्मित हो चुका था तथा कीमतें ऐसे स्तरों पर पहुँच चुकी थीं जिन्हें भावी अर्जन की उचित प्रत्याशाओं द्वारा न्यायसंगत सिद्ध नहीं किया जा सकता था। इस खतरे का विस्फोट अक्तूबर 1929 में हुआ। इसके पहले शेयरों की कीमतों में अल्प गिरावटें हुईं जिन्होंने निवेशकों के विश्वास को भंग किया जिससे भयभीत स्थिति में विक्रय के लिए मार्ग प्रशस्त हुआ। संत्रस्त विक्रय बुरे गुरुवार अर्थात् 24 अक्तूबर 1929 को प्रारंभ हुआ। अमेरिकी शेयरों की कीमतें चक्कर खाकर अधोमुखी हो गईं तथा उनमें सितंबर 1929 से नवंबर 1929 के दौरान 33 प्रतिशत गिरावट आई। शेयर बाजार के इस पतन ने अमेरिका में सकल माँग में तीव्र संकुचन को प्रेरित किया। उपभोक्ता और फर्म व्यय में कटौती के परिणामस्वरूप 1929 के उत्तरार्ध एवं 1930 में वास्तविक उत्पादन में तीव्र कमी आई।

शेयर बाजार के पतन के कारण सकल माँग में कमी के अलावा, बैंकिंग संत्रास और परिणामी मौद्रिक संकुचन माँग में आगे और गिरावट का कारण बना। अमेरिका ने 1930 के फ़ाल, 1931 के स्प्रिंग, 1931 के फ़ाल और 1932 के फ़ाल में व्यापक बैंकिंग संत्रास का अनुभव किया। अंतत: 6 मार्च 1933 को राष्ट्रीय बैंक अवकाश घोषित किया गया जिससे सभी बैंक बंद किये गये जिन्हें सरकारी निरीक्षकों द्वारा शोधक्षम समझे जाने के बाद ही पुन: खोलने की अनुमति दी गई। केवल फेडरल सरकार को छोड़कर चूक और दिवालियेपन ने प्राय: प्रत्येक श्रेणी के उधारकर्ताओं को पीड़ित किया।

(जारी..)

(... समाप्त)

1930-33 के दौरान अमेरिका में लगभग 20 प्रतिशत बैंक विफल हुए। बैंकों की इन असफलताओं ने बैंक जमाराशियों की तुलना में मुद्रा के लिए माँग में नाटकीय वृद्धि को प्रेरित किया। जमाराशि की तुलना में मुद्रा के अनुपात में तीव्र वृद्धि के कारण 1929 और 1933 के बीच मुद्रा की आपूर्ति में 31 प्रतिशत संकुचन हुआ। सितंबर 1931 में फेडरल रिज़र्व ने ब्याज दर में वृद्धि लागू की जिसके कारण मुद्रा आपूर्ति में और संकुचन हुआ तथा उसके बाद उत्पादन पर संकुचनकारी प्रभाव पड़ा।

फ्रायडमैन और स्क्वार्ट्ज़ (1963) ने फेडरल रिज़र्व द्वारा की गई चार मुख्य नीतिगत त्रुटियों को पहचाना जो मुद्रा आपूर्ति में तीव्र और अवांछित गिरावट के लिए कारण बनीं :

1) 1928 के स्प्रिंग में प्रारंभ करते हुए मौद्रिक नीति को सख्त बनाना (जिसके परिणामस्वरूप ब्याज दरों में वृद्धि की गई) और उसे अक्तूबर 1929 में शेयर बाजार के पतन तक जारी रखना।
2) देशी बैंकिंग संत्रास की उपेक्षा करते हुए तथा सितंबर और अक्तूबर 1931 में देशी बैंकों के लिए अंतिम उधारदाता के रूप में कार्य न करते हुए सट्टेबाजी के आघातों की प्रतिक्रिया में डॉलर का बचाव करने के लिए ब्याज दरों में वृद्धि करना।
3) सकारात्मक परिणामों के साथ 1932 के प्रारंभ में ब्याज दरें कम करने के बावजूद 1932 के अंत में ब्याज दरें बढ़ाना।
4) 1930 के बाद के दशक के प्रारंभिक वर्षों में लगातार अमेरिकी बैंकिंग क्षेत्र में विद्यमान समस्याओं की निरंतर उपेक्षा करना तथा एक स्थिर देशी बैंकिंग परिवेश का निर्माण न करना।

कुछ अर्थशास्त्रियें के अनुसार अमेरिका में मुद्रा आपूर्ति में बड़े परिमाण में गिरावटों को अनुमति देने का फेडरल रिज़र्व का निर्णय स्वर्ण मानक को बनाये रखने के लिए था। स्वर्ण मानक के अंतर्गत व्यापार या परिसंपत्ति प्रवाहों में असंतुलनों ने अंतरराष्ट्रीय स्वर्ण प्रवाहों में वृद्धि की। अन्य अंतरराष्ट्रीय संबद्धताएँ भी विद्यमान थीं। अमेरिका में उच्च ब्याज दरों और शेयर बाजार की तेजी के परिणामस्वरूप 1928 और 1929 में विदेशों में अमेरिकी उधार में कमी आई। विदेशी उधार में यह कटौती ऋण में और संकुचन एवं जर्मनी, अर्जेन्टीना और ब्राजील जैसे उधारकर्ता देशों में उत्पादन में गिरावट के रूप में परिणत हुई होगी (रोमर, 2003)।

इस आर्थिक पतन को अमेरिका में स्मूट-हाली टैरिफ के 1930 अधिनियमन और संरक्षणवादी व्यापार नीतियों में विश्वव्यापी वृद्धि द्वारा आगे संयोजित किया गया। इसके अतिरिक्त 1932 के राजस्व अधिनियम ने फेडरल बजट को संतुलित करने के प्रयास में अमेरिका में कर दरों को बढ़ाया जिसने व्यय को और निरुत्साहित करने के द्वारा अर्थव्यवस्था के और संकुचन को प्रेरित किया।

आविर्भाव

महान मंदी का समय और उसकी तीव्रता विभिन्न देशों में काफी भिन्न-भिन्न रही। अमेरिका में अवनति 1929 के ग्रीष्मकाल में शुरू हुआ जो 1929 के अंत तक आते-आते उल्लेखनीय रूप में बदतर हुआ और 1933 के प्रारंभ तक जारी रहा। वास्तविक उत्पादन और कीमतें तेजी से गिरीं तथा इस अवधि में अमेरिका ने औद्योगिक उत्पादन में 47 प्रतिशत की, वास्तविक जीडीपी में 30 प्रतिशत की और थोक मूल्य सूचकांक में 33 प्रतिशत की कमी देखी।

वस्तुत: 1929 और 1933 के बीच प्रत्येक औद्योगीकृत देश ने थोक कीमतों में 30 प्रतिशत या उससे अधिक कमियों का साक्षात्कार किया। पण्य कीमतें इस अवधि में इससे भी अधिक नाटकीय ढंग से घट गईं।

पुन:प्राप्ति

अमेरिकी अर्थव्यवस्था में पुन:प्राप्ति (रिकवरी) 1933 के प्रारंभ से शुरू हुई। 1933 और 1937 के बीच वास्तविक जीडीपी 9 प्रतिशत प्रति वर्ष की औसत दर से बढ़ा। अमेरिकी उत्पादन अंतत: अपनी दीर्घकालिक प्रवृत्ति के स्तर पर 1942 में लौट आया। विश्व के अन्य भागों में पुन:प्राप्ति अत्यधिक भिन्न रही। ब्रिटन ने पुन:प्राप्ति 1932 की समाप्ति से प्रारंभ की। 1933 के प्रारंभ ने कनाडा तथा यूरोप के अन्य अपेक्षाकृत छोटे देशों में समुत्थान देखा। फ्रांस पुन:प्राप्ति के चरण में केवल लगभग 1938 में ही प्रवेश कर सका।

यह पुन:प्राप्ति प्राथमिक रूप से मुद्रा अवमूल्यनों और मौद्रिक विस्तार के द्वारा प्रेरित थी क्योंकि मौद्रिक संकुचन और स्वर्ण मानक ने महान मंदी में प्रमुख भूमिका निभाई थी।विश्वव्यापी मौद्रिक विस्तार निम्नतर ब्याज दरों और ऋण की सुधरी हुई उपलब्धता में परिणत हुआ जिसने फिर व्यय को प्रोत्साहित किया। अवमूल्यनों ने संबंधित देशों को स्वर्ण की गतिविधियों और विनिमय दरों के बारे में चिंता किये बिना अपनी मुद्रा आपूर्तियों का विस्तार करने दिया।

विरासत

महान मंदी का प्रभाव विश्व के उत्पादन और रोजगार में अत्यधिक (स्टीप) कमियों के रूप में रहा। मंदी और नीतिगत प्रतिक्रिया ने भी विश्व की अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया। महान मंदी ने अंतरराष्ट्रीय स्वर्ण मानक का अंत कर दिया। कई देशों में यह अर्थव्यवस्था, विशेष रूप से वित्तीय बाजारों के बढ़े हुए सरकारी विनियमन में परिणत हुआ। इसने नये शेयर निर्गमों और शेयर बाजार के व्यापार की प्रथाओं को विनियमित करने के लिए अमेरिका में 1934 में प्रतिभूति और विनिमय आयोग की स्थापना को प्रेरित किया। 1933 के बैंकिंग अधिनियम (ग्लैस-स्टीगाल अधिनियम) ने अमेरिका मँ जमा बीमा की स्थापना की तथा बैंकों के लिए प्रतिभूतियों में हामीदारी अथवा लेनदेन करना निषिद्ध कर दिया। उक्त मंदी ने आर्थिक पतन और उत्थान को संयमित करने के लिए उद्दिष्ट समष्टि-आर्थिक नीतियों के विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। मंदी ने कीनेशियन सिद्धांत के विकास के लिए मार्ग प्रशस्त किया जिसने पतन और मंदी की स्थितियों को दूर करने में सरकारी व्यय, कर की कटौतियों और मौद्रिक विस्तार में वृद्धि के महत्व को रेखांकित किया। इस अंतर्दृष्टि ने बढ़ती हुई इस आम राय के साथ संबद्ध होकर कि सरकार रोजगार को मजबूत करने का प्रयास करे, 1930 के बाद के दशक से एक अधिक क्रियावादी नीति को प्रेरित किया।

संदर्भ :

1. बेर्नान्के, बेन एस. 2000। "एस्सेस ऑन दी ग्रेड डिप्रेशन।" प्रिन्सटन, प्रिन्सटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
2. बेर्नान्के, बेन एस. 1983। "नॉन-मॉनिटरी इफेक्ट्स ऑफ दी फाइनैंशियल क्राइसिस इन दी प्रॉपगेशन ऑफ दी ग्रेट डिप्रेशन।" एनबीईआर वर्किंग पेपर नं. 1054।
3. आइशनग्रीन, बैरी और केविन एच. ओ'राउरके, 2009। "ए टेल ऑफ टू डिप्रेशन्स", www.voxeu.org.
4. फ्रायडमैन, मिल्टन और आन्ना जे. स्क्वार्ट्ज़, 1963। "ए मॉनिटरी हिस्टरी ऑफ दी युनाइटेड स्टेट्स।" प्रिन्सटन, प्रिन्सटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
5. रोमर, क्रिस्टीना डी. 2003। "ग्रेट डिप्रेशन रीविजिटेड।"

सहित सभी उप महाद्वीपों में फैले हुए थे। एशिया ही एकमात्र अपवाद था। बाह्य ऋण संकट की 30 घटनाओं के साथ इस अवधि के दौरान सरकारी चूक की घटनाएँ भी आम थीं।

ब्रेटन वुड्स अवधि : 1945-1971

2.74 1940 के बाद के दशक के अंतिम वर्षों से 1970 के बाद के दशक के प्रारंभिक वर्षों तक की अवधि (ब्रेटन वुड्स अवधि) के दौरान अपेक्षाकृत शांति थी। 1945 के बाद पहला वैश्विक संकट नियत विनिमय दरों की ब्रेटन वुड्स प्रणाली का विघटन था। इस शांति को अंशत: तेजी से युक्त विश्व की संवृद्धि, देशी वित्तीय बाजारों के दमन (विभिन्न मात्राओं में) तथा पूँजी नियंत्रणों के प्रयोग, जिसका अनुसरण विश्वयुद्ध II के बाद कई वर्षों तक किया गया था, के द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। वित्तीय बाजार 1960 के बाद के दशक के अंत तक अधिक खुले नहीं थे जो विनियमन, पूँजी संचलन के अभाव, विविध मानकों तथा प्रौद्योगिकी की सीमाओं जिन्होंने वैश्विक अर्थव्यवस्था में भौगोलिक सीमाएँ निर्मित कीं, के संयोजन के कारण था। बैंकिंग विनियमन को कठोर बनाया गया और अनेक बैंक राज्य के नियंत्रण में लाये गये। बैंकों और अन्य प्रकार की वित्तीय संस्थाओं के बीच प्रतियोगिता का सख्त विनियमन किया गया तथा कई देशों ने अपनी वित्तीय प्रणालियों का उपयोग निर्यात उद्योंगों का प्रत्यक्षत: संवर्धन करने एवं देशी उत्पादकों और वितरकों को सुरक्षा प्रदान करने के लिए किया। इसके फलस्वरूप इस अवधि के दौरान बहुत कम बैंकिंग संकट हुए, केवल ब्राजील में दुहरे संकटों का अपवाद था। तथापि, ब्रेटन वुड्स अवधि के दौरान मुद्रा संकट वित्तीय परिदृश्य की एक नियमित विशेषता रहे क्योंकि एक नियत विनिमय दर इस अवधि के दौरान अनुसरण की गई समष्टि-आर्थिक नीतियों के लिए प्राय: असंगत थी। मुद्रा संकटों का दमन करने में पूँजी प्रवाहों पर नियंत्रण कम प्रभावोत्पादक थे। इस अवधि के दौरान 14 देशों ने बाह्य ऋण/मुद्रा संकटों का सामना किया; इनमें से अधिकांश देश लातीन अमेरिका में थे।

2.75 1971-72 में नियत विनिमय दरों वाली ब्रेटन वुड्स प्रणाली के भंग होने के बाद स्थिति नाटकीय ढंग से परिवर्तित हो गई। ब्रेटन वुड्स प्रणाली के ढह जाने के बाद उत्तरी अमेरिका में स्थित विकसित देश, यूरोप और जापान एक अस्थायी विनिमिय दर प्रणाली की ओर अग्रसर हुए। इसके अतिरिक्त, इसके साथ ही उन्होंने अपने पूँजी खातों का उदारीकरण करने और सीमापार वित्तीय निवेशों की अनुमति देने का एक कार्यक्रम भी प्रारंभ किया। इसी समय उन्होंने अधिक प्रतियोगिता और वित्तीय कार्यकलापों के नये रूपों को अनुमति देने के लिए अपनी राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं का अविनियमन करना शुरू किया। इन घटनाओं ने 1970 के बाद के दशक और 1980 के बाद के दशक के दौरान अंतरराष्ट्रीय बैंकिंग ऋण की तीव्र वृद्धि सहित सीमाओं के आरपार पूँजी प्रवाहों की सतत वृद्धि के लिए मार्ग प्रशस्त किया, परंतु यह मुख्य रूप से औद्योगीकृत अर्थव्यवस्थाओं तक सीमित था।

हाल की अवधि : 1973-2007

2.76 फिर भी, ब्रेटन वुड्स के बाद की अवधि (1973-2007) संकट-प्रवण रही है। वित्तीय संकट की घटना के संबंध में सूचना/आंकड़ों के विश्लेषण से विदित होता है कि दुनिया भर में अनेक वित्तीय संकट इस अवधि में, और भी अधिक तीव्रता से पिछले तीस वर्षों में उत्पन्न हुए हैं। 1970 के बाद के दशक के प्रारंभ से उन्नत देशों में पूँजी खाते के उदारीकरण के साथ ही बैंकिंग संकटों की घटनाएँ बढ़ गई हैं। एक लंबे अंतराल के बाद बैंकिंग संबंधी कठिनाइयों का सामना करनेवाले देशों की संख्या पहले 1970 के बाद के दशक में बढ़ने लगी (रेइनहार्ट और रोगोफ, 2008)। 1970 के बाद के दशक की विशेषता लातीन अमेरिकी ऋण संकट तथा बैंकों पर उसका प्रभाव रही। नियत विनिमय दरों की ब्रेटोन वुड्स प्रणाली के विघटन के बाद तेल की कीमतों में तीव्र वृद्धियों ने भी लंबी चली आ रही वैश्विक मंदी को उत्प्रेरित किया जिसके परिणामस्वरूप अनेक उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में भी वित्तीय क्षेत्र की कठिनाइयाँ उत्पन्न हुईं। 1970 के बाद के दशक में बैंकिंग संकटों की सात घटनाएं थीं, अर्थात् उरुग्वे (1971), यूके (1974), चिली (1976), केंद्रीय अफ्रीकी गणतंत्र (1976), जर्मनी (1977), दक्षिण अफ्रीका (1977) और वेनेजुएला (1978) में।

2.77 1980 के दशक के प्रारंभ में अमेरिका में उच्च और अस्थिर ब्याज दरों के साथ ही वैश्विक पण्य कीमतों आई गिरावट ने उभरती अर्थव्यवस्थाओं में, सर्वाधिक प्रसिद्ध रूप में लातीन अमेरिका और फिर अफ्रीका में, बैंकिंग और सरकारी ऋण संकटों के विस्फोट में योगदान किया। 1990 के दशक में घटित बैंकिंग संकटों की 73 घटनाओं की तुलना में 1980 के दशक में बैंकिंग संकटों की 40 घटनाएँ घटीं। 1980 के दशक के प्रारंभिक वर्षों ने चिली और मोराको में संकटों का साक्षात्कार किया। 1980 के दशक ने अमेरिका को

'बचत और ऋण संघों' से जुडे संकट का अनुभव करते हुए देखा । 1990 के दशक में स्वीडन, फिनलैंड और नार्वे जैसे नार्डिक देशों सहित कई अर्थव्यवस्थाएँ तथा अधिकांश संक्रमणशील समाजवादी अर्थव्यवस्थाएं इस संकट से आक्रांत हो गईं। उक्त नार्डिक देशों ने पूँजीगत अंतर्वाहों और स्थावर संपदा की कीमतों में एक तीव्र उछाल के परिणामस्वरूप बैंकिंग संकटों को देखा। भारत ने घरेलू असंतुलनों, खाड़ी युद्ध और सोवियत संघ (यूएसएसआर) के विघटन के परिणामस्वरूप 1991 में भुगतान-संतुलन के संकट का सामना किया। यूके सहित कई देश, जो यूरोपीय विनिमय दर व्यवस्था का अंग बने थे, 1992-93 में संकट से ग्रस्त हुए तथा इस बात के लिए विवश हुए कि वे या तो अवमूल्यन करें या उक्त व्यवस्था से बाहर हट जाएँ । 1994-95 में तेकीला संकट ने मेक्सिको को प्रभावित किया और फिर ब्राजील और वेनेजुएला इसकी चपेट में आ गए; 1997 में थाईलैंड, इंडोनेशिया, कोरिया और मलेशिया ने संकटों का सामना किया जिसे आम तौर पर पूर्वी एशियाई संकट के रूप में जाना जाता है (बॉक्स II.5)। 1998 में रूस की चूक के कारण पैदा हुआ गंभीर समस्या का प्रभाव सुदूर ब्राजील तक पड़ा। 1980 के

बॉक्स II.5
पूर्वी एशियाई संकट

पूर्वी एशियाई वित्तीय संकट, जिसने दक्षिण कोरिया, मलेशिया, थाईलैंड और इंडोनेशिया की तेजी से उभरती अर्थव्यवस्थाओं को प्रभावित किया, कई दृष्टियों से उल्लेखनीय है । इस संकट ने विश्व में सर्वाधिक तेजी से उभरती अर्थव्यवस्थाओं को आघात पहुँचाया तथा इतिहास में सबसे अधिक आर्थिक सहायताओं को प्रवर्तित किया। यह अत्यंत कम प्रत्याशित तथा तीव्रतम वित्तीय संकट था जिसने 1982 के ऋण संकट के बाद विकासशील विश्व पर प्रहार किया (रैडेलेट और सैक्स, 1998)।

पृष्ठभूमि

प्रभावित अर्थव्यवस्थाओं में समष्टि-आर्थिक प्रबंधन के मूलभूत पहलू 1990 के बाद के दशक के प्रारंभिक वर्षों में लगातार सुदृढ़ रहे। प्रत्येक देश में सरकारी बजटों में नियमित रूप से अधिशेष दर्ज किया गया तथा सरकारी ऋण विवेकपूर्ण स्तरों पर था । 1990 के बाद के दशक में इस क्षेत्र में मुद्रास्फीति की दरें 10 प्रतिशत से नीचे थीं । घरेलू बचत और निवेश की दरें अत्यंत अधिक थीं। वैश्विक वित्तीय बाजारों में विद्यमान स्थितियों ने भी किसी संकट का पूर्वाभास नहीं दिया क्योंकि विश्व की ब्याज दरें असाधारण रूप से कम थीं और मुख्य पण्य कीमतें अपेक्षाकृत स्थिर थीं । अंतरराष्ट्रीय ऋणदाताओं ने बड़ी सीमा तक इस संकट की उम्मीद नहीं की थी तथा बाजार के अधिकांश प्रेक्षकों और रेटिंग एजेंसियों ने भी तब तक बढ़े हुए जोखिम का संकेत नहीं दिया जब तक कि स्वयं संकट का प्रारंभ नहीं हो गया। दीर्घावधि सरकारी ऋण रेटिंग फिलिपीन्स को छोड़कर, जहाँ 1997 के प्रारंभ में ऋण का वास्तव में ग्रेड बढ़ाया गया था, उक्त एशियाई देशों में से प्रत्येक देश के लिए पूरे 1996 के दौरान और 1997 की पहली छमाही में अपरिवर्तित रही ।

बढ़ती हुई चिंता का एकमात्र संकेत यह था कि शेयरों की कीमतों ने मंदी का रुख देखा जब थाई, सिओल और मलेशियाई शेयर बाजारों ने लगातार अधोमुखी प्रवृत्ति का साक्षात्कार किया, शेयर बाजार और बैंक उधार (दोनों) ने 1997 के मध्य तक निरंतर विश्वास को दर्शाया।

चिंता के अन्य क्षेत्र बढ़ते हुए चालू खाता घाटे, अधिमूल्यित विनिमय दरें और निर्यातों में मंदन थे। बढ़ती हुई वित्तीय दुर्बलता के अन्य महत्वपूर्ण संकेतक थे, वाणिज्यिक बैंक ऋण का तेज विस्तार और बढ़ता हुआ अल्पावधि विदेशी ऋण।

वित्तीय क्षेत्र ने बढ़ते हुए जोखिम के संकेत दर्शाये जब वित्तीय संस्थाएं 1990 के बाद के पूरे दशक में अधिकाधिक सुभेद्य बन गईं। निजी क्षेत्र को दिए जाने वाले ऋण का बड़ी तेजी से विस्तार हुआ जब उसके काफी हिस्से का वित्तीयन बैंकिंग क्षेत्र ने विदेशी उधार से किया। इस ऋण का उपयोग प्राथमिक रूप से सट्टा निवेशों के लिए किया गया ।

बैंक अधिकाधिक दुर्बल बन गए। बैंकों ने विदेशी मुद्रा में उधार लिया तथा स्थानीय मुद्राओं में उधार दिया और इस कारण वे अवमूल्यन से विदेशी मुद्रा हानियों के जोखिम के प्रति असुरक्षित थे । इसके अलावा, बैंकों ने अल्पावधि परिपक्वताओं वाले विदेशी उधार लिए तथा देश में अपेक्षाकृत लंबी अवधि में अदायगी की शर्त के साथ उधार दिये। वित्तीय सुभेद्यता इस तथ्य से बाद में और तीव्र हो गई कि देशों का अल्पावधि ऋण उपलब्ध विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों से अधिक हो गया था।

इस पृष्ठभूमि के साथ थाईलैंड में बैंक विफलता, कोरिया में कारपोरेट असफलता तथा उस क्षेत्र में राजनैतिक अनिश्चितता ने ऋण आहरणों को तेज कर दिया जिसके कारण भय से भारी मात्रा में अचानक आहरण (पैनिक रन) होने लगे। यह आगे संसर्ग के प्रभाव द्वारा और बदतर हो गया जहाँ समूचे क्षेत्र की आर्थिक और राजनैतिक स्थिरता ऋणदाताओं द्वारा असुरक्षित मानी गई ।

कारण

एशियाई संकट अंतरराष्ट्रीय उधार में तेजी तथा उसके बाद निधियों के अचानक आहरण के कारण घटित हुआ । एशियाई संकट के केंद्र में वित्तीय प्रणालियों में बड़ी मात्रा में विदेशी पूँजी के अंतर्वाह थे जो संत्रास की स्थिति में असुरक्षित हो सकते थे (रैडेलेट और सैक्स, 1998)।

अनुमानों के अनुसार संकट द्वारा सर्वाधिक आहत पाँच पूर्वी एशियाई देशों (इंडोनेशिया, कोरिया, मलेशिया, फिलीपीन्स और थाईलैंड) के मामले में प्रवाहों के उलटाव ने निवेश के माध्यम से प्राप्त होने वाले धन की मात्रा को 93 बिलियन अमेरिकी डॉलर से 12.1 बिलियन अमेरिकी डॉलर तक नीचे ला दिया, जो लगभग 935 बिलियन अमेरिकी डॉलर के संयुक्त आघात-पूर्व जीडीपी पर 105 बिलियन अमेरिकी डॉलर का झुकाव (स्विंग) था अथवा जीडीपी के 11

(जारी....)

(.... समाप्त)

प्रतिशत का झुकाव । बैंक उधार में अचानक गिरावट सीमापार बैंक ऋणों में बड़ी मात्रा में वृद्धियों की निरंतरता की अवधि के बाद हुई ।

आविर्भाव

विदेशी पूँजी के अचानक और तीव्रतापूर्ण आहरण के कई समष्टि-आर्थिक और व्यष्टि-आर्थिक प्रभाव पड़े। पहला, थाईलैंड और फिलीपीन्स में एक स्थिर (पेग्ड) विनिमय दर तथा इंडोनेशिया, मलेशिया और कोरिया में एक सीमित प्रकार की स्थिर दर (क्रालिंग पेग) के प्रारंभिक बचाव के बाद सांकेतिक एवं वास्तविक विनिमय दरों का नाटकीय ढंग से मूल्यह्रास हुआ। घरेलू ब्याज दरें विदेशी अंतर्वाहों के उलटाव के कारण तेजी से बढ़ीं जिसके परिणामस्वरूप देशी ऋणों की स्थितियाँ प्रतिकूल हो गईं ।

वास्तविक विनिमय दर मूल्यह्रास और उच्च ब्याज दरों के संयोजन का परिणाम बैंकिंग क्षेत्र में अनर्जक ऋणों के स्तर में उछाल के रूप में हुआ, विशेष रूप से इस कारण से कि स्थावर संपदा की परियोजनाओं का दिवाला निकल गया । तेजी से बढ़ रहे एनपीएल तथा मुद्रा के मूल्यह्रास के कारण प्रत्यक्ष तुलन-पत्र हानियों के संयोजन ने इंडोनेशिया, थाईलैंड और कोरिया में बैंक पूँजी के बाजार-मूल्य के भारी अंश को समाप्त कर दिया।

प्रभाव

विदेशी वित्तपोषण के अचानक हट जाने का अत्यधिक संकुचनकारी प्रभाव पड़ा। घरेलू बैंकों की पूँजी में आई गिरावट ने बैंक उधार को कठोरतापूर्वक प्रतिबंधित करते हुए संकुचन में और वृद्धि कर दी। बैंकों ने अपने द्वारा दिये जानेवाले उधार में कटौती की जो दो कारणों से था क्योंकि बैंक स्वयं नकदी की कमी झेलने लगे थे (विदेशी ऋणों और कुछ मामलों में जमाराशियों के आहरण के परिणामस्वरूप) तथा इस कारण से भी कि वे विपूँजीकृत (डीकैपिटलाइज्ड) हो गये।विपूँजीकृत बैंकों ने बैंक पर्यवेक्षकों द्वारा अपेक्षित तथा अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा समर्थित पूँजी पर्याप्तता अनुपातों की दिशा में अग्रसर होने के लिए अपने उधारों को सीमित कर दिया।

दिसंबर 1997 में मूडीस ने इंडोनेशिया, कोरिया और थाईलैंड के सरकारी ऋण का ग्रेड कम कर दिया और उन्हें निवेश के ग्रेड से नीचे रख दिया। ऋणदाता के संत्रास, बैंक रनों और सरकारी ग्रेड के कम हो जाने के परिणामस्वरूप कोरिया, इंडेनेशिया और थाईलैंड आंशिक ऋण चूककर्ताओं की श्रेणी में डाल दिये गये। प्रभावित देशें में अर्थव्यवस्थाओं ने तीव्र गिरावट का अनुभव किया। थाईलैंड में जीडीपी का 97.7 प्रतिशत अनुमानित उत्पादन हानि थी तथा जीडीपी 10.5 प्रतिशत कम हुआ । कोरिया में उत्पादन हानि 50.1 प्रतिशत थी तथा जीडीपी 6.9 प्रतिशत घट गया । मलेशिया में अनर्जक ऋण बैंकिंग प्रणाली की परिसंपत्तियों के 25-35 प्रतिशत के बीच चरम पर रहे तथा मार्च 2002 तक 10.8 प्रतिशत तक नीचे आये । उत्पादन हानि जीडीपी का 50.0 प्रतिशत थी और जीडीपी में 7.4 प्रतिशत की कमी आई।

विरासत

पूर्वी एशियाई संकट अल्पावधि पूँजी प्रवाहों के साथ संबद्ध दुर्बलता को केंद्र में लाया है। इसने इस बात पर प्रकाश डाला है कि कैसे तुलन-पत्र की दुर्बलताएँ किसी अर्थव्यवस्था की वित्तीय स्थिरता को प्रभावित कर सकती हैं। संकट के बाद उक्त अर्थव्यवस्थाओं ने पूँजी खाता घाटे को आधिक्य में बदलते हुए नाटकीय ढंग से अपनी पूर्व स्थिति प्राप्त कर ली है तथा तीव्र पूँजी विपर्ययों के विरुद्ध सुरक्षा के रूप में विपुल विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों का निर्माण कर लिया है।

संदर्भ :

1. कोरसेट्टी जी., पी. पेसेन्टी, और एन. रूबिनी, 1998। "व्हाट काज्ड दी एशियन करेंसी एण्ड फाइनैंशियल क्राइसिस : दी पालिसी डिबेट"। *एनबीईआर वर्किंग पेपर* 6834 ।
2. काने, एडवर्ड जे. 2000 । "कैपिटल मूवमेंट्स, बैंकिंग इनसॉल्वेंसी, एण्ड साइलेंट रन्स इन दी एशियन फाइनैंशियल क्राइसिस"। *एनबीईआर वर्किंग पेपर* 7514 ।
3. रैडेलेट, एस. और जे. सैक्स, 1998 । "दी ऑनसेट ऑफ दी ईस्ट एशियन फाइनैंशियल क्राइसिस" । *एनबीईआर वर्किंग पेपर* 6680 ।

दशक के अंतिम वर्षों तथा 1990 के दशक के प्रारंभिक वर्षों में परिसंपत्ति की कीमतों में वृद्धि के विस्फोट के बाद जापान ने भी एक बैंकिंग संकट का अनुभव किया जो 1992 में प्रारंभ हुआ और लगभग एक दशक तक जारी रहा। वर्तमान दशक में विभिन्न उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं, अर्थात् तुर्की (2001), पराग्वे (2002), उरुग्वे (2002), अर्जेन्टीना (2001, 2002) और मालदोवा (2002) ने वित्तीय संकटों का अनुभव किया । उल्लेखनीय रूप में अर्जेन्टीना, उरुग्वे और डोमिनिकन गणतंत्र ने तिहरे संकटों का सामना किया। अमेरिका ने 2001 में डॉट.कॉम मंदी देखी जिसने विश्व की माँग को तेजी से प्रभावित किया।

2.78 वित्तीय संकट की घटनाएँ लगभग पिछले तीन दशकों में अधिकतम रही हैं (सारणी 2.9)। लीवैन और वैलेन्शिया (2008) द्वारा संकलित आधारभूत डेटाबेस के अनुसार इस दौरान बैंकिंग संकट की 124 घटनाएँ, मुद्रा संकट की 211 घटनाएं तथा सरकारी ऋण

सारणी 2.9: वित्तीय संकट का आपतन

अवधि	संकटों की संख्या
1	2
1875-1913	58
1919-1939	51
1945-1971	17
1973-2007	399

स्रोत : लीवेन और वैलेन्शिया (2008)।
रेइनहार्ट और रोगोफ (2008)।

संकट की 64 घटनाएँ घटीं। इनमें से 42 तो दुहरे संकट थे और 10 तिहरे संकट थे (सारणी 2.10)।

2.79 विभिन्न मौद्रिक और विनियामक व्यवस्थाओं के अंतर्गत संकटों की घटनाएं बारंबार घटी हैं। वित्तीय संकटों ने उन्नत एवं उभरती (दोनों) बाजार अर्थव्यवस्थाओं को भिन्न-भिन्न मात्रा में प्रभावित किया है (सारणी 2.11)। पिछले 150 वर्षों में वित्तीय संकट की घटनाओं के विश्लेषण से विदित होता है कि यद्यपि संकट किसी चेतावनी के बिना घटित होता है, तथापि ऐसी घटनाओं को काफी सीमा तक प्रचलित समष्टि-आर्थिक स्थितियों, वित्तीय विनियामक व्यवस्था, मुद्रा की व्यवस्था, राजकोषीय अनुशासन तथा वैश्विक पूँजी और व्यापार के प्रवाहों के द्वारा पहले से समझा जा सकता है।

सारणी 2.10: वित्तीय संकट की आवृत्ति : 1973-2007

	बैंकिंग संकट	मुद्रा संकट	सरकारी ऋण संकट	दोहरा संकट	तेहरा संकट
1	2	3	4	5	6
1970 के बाद का दशक	4	26	7	–	–
1980 के बाद का दशक	40	74	42	11	4
1990 के बाद का दशक	73	92	7	27	3
2000 के बाद का दशक	7	19	8	4	3

टिप्पणी : दोहरा संकट वर्ष टी में बैंकिंग संकट और वर्ष (टी-1, टी+1) में मुद्रा संकट सूचित करता है । तेहरा संकट वर्ष (टी-1, टी+1) में बैंकिंग संकट और वर्ष (टी-1, टी+1) में ऋण संकट सूचित करता है।

स्रोत : लीवेन और वैलेन्शिया (2008)।

सारणी 2.11: प्रमुख वित्तीय संकट : 1873-2007

नाम/देश/वर्ष	संकट का स्वरूप	संकट का प्रभाव
1	2	3
जर्मन और आस्ट्रियन शेयर बाजार पतन, मई, 1873	1871 में प्रशिया को अदा की गई फ्रांसीसी युद्ध की क्षतिपूर्ति ने जर्मनी और आस्ट्रिया में सट्टेबाजी को प्रेरित किया । 1873 के प्रारंभ में शेयर बाजार में एक सट्टे की गतिविधि कुछ महीनों में शेयर कीमतों के त्रिगुणीकरण का कारण बनी । 9 मई 1873 को आस्ट्रिया में दो बड़े बैंक विफल हुए । इसके बाद जर्मन और आस्ट्रियन शेयर बाजार का 1873 में पतन हुआ । इन संकटों का संबंध अंतरराष्ट्रीय पूँजी बाजारों के साथ माना गया । अमेरिकी रेल-सड़क उद्योग में बड़ी मात्रा में नकदी की आपूर्ति की गई जिससे एक सट्टे के खतरे का निर्माण हुआ । जर्मन संकट के संदर्भ में अमेरिका को पूँजी प्रवाहों में गिरावट हुई । सितंबर 1873 में जे कूक की निवेश बैंकिंग फर्म विफल हुई जिसके कारण आतंक फैल गया ।	जर्मनी, आस्ट्रिया और अमेरिका में संकटों के बाद व्याप्त मंदी व्यापार और पूँजी प्रवाहों में एक नाटकीय गिरावट में परिणत हुई । जे कूक बैंक की असफलता ने बैंक विफलताओं की एक शृंखलाबद्ध प्रतिक्रिया को जन्म दिया । न्यूयार्क शेयर बाजार 20 सितंबर 1873 से 10 दिन के लिए बंद किया गया । 1873 और 1875 के बीच कुल 18,000 व्यावसायिक प्रतिष्ठान विफल हुए । 1876 तक बेरोजगारी 14 प्रतिशत तक पहुँच गई । स्थावर संपदा के मूल्य गिर गए तथा कंपनी लाभ तेजी से घट गए । आगे की वैश्विक मंदी (1873-1879) ने घटे हुए निर्यातों और कर राजस्वों के माध्यम से अन्य देशों में कर्ज भुगतान की समस्याओं को उत्पन्न किया । जनवरी 1873 में मध्य अमेरिकी राष्ट्रों में प्रारंभिक चूकों के कारण बांड कीमतों में गिरावट हुई । यह संकट तेजी से इटली, हालैंड और बेल्जियम, इंग्लैंड, फ्रांस और रूस में व्याप्त हुआ । 1876 तक ओटोमन साम्राज्य, मिस्र, ग्रीस और 8 लातीन अमेरिकी देशों ने चूक की ।
बेरिडग्स संकट, 1890	यह इंग्लैंड, फ्रांस और जर्मनी में केंद्रीय बैंक के कठोर रवैये के द्वारा प्रेरित हुआ । अर्जेन्टीना ने अप्रैल 1890 में लाभांश का भुगतान रोक दिया था जिससे एक देशी बैंक रन घटित हुआ। अर्जेन्टीना के लिए एक प्रमुख ऋणदाता दी हाउस ऑफ बेरिडग ने स्वयं को नवंबर 1890 में दिवालिया घोषित किया । यह संकट शीघ्र ही अन्य लातीन अमेरिकी देशों में फैल गया ।	इसने ब्रिटन को प्रभावित किया क्योंकि व्यापार और वित्तीय एकीकरण के माध्यम से अर्जेन्टीना और ब्रिटन के प्रगाढ़ आर्थिक संबंध थे । इस संकट ने उरुग्वे को प्रभावित किया जिसने 1891 में चूक की । इसके कारण आकस्मिक विरामों और चालू खाता उलटावों की एक शृंखला उत्पन्न हुई ।
अमेरिका 1907	1897-1906 के दौरान तीव्र औद्योगिक और आर्थिक संवृद्धि हुई जब अनेक विलय और कंपनी समेकन किये गये। अप्रैल 1906 के सैनफ्रैन्सिसको के भूकंप ने पूर्वी अमेरिकी और अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों को सख्त बनाया । न्यास कंपनियों अर्थात् हलके तौर पर विनियमित बैंकों का तीव्र विस्तार हुआ । अक्तूबर 1907 में एक तांबे की कंपनी के शेयरों में बाजार को महत्वहीन बनाने का सट्टेबाजी का प्रयास विफल हो गया; कुछ बैंकों और न्यास कंपनियों को आलिप्त किया गया । न्यूयार्क नगर में न्यास कंपनियों और बैंकों संबंधी आहरण होड़ (रन) ने अक्तूबर 1907 के उत्तरार्ध में आतंक पैदा किया ।	आहरण होड़ (रन्स) का सामना कर रहे बैंकों और न्यास कंपनियों की सहायता करने के लिए 10 मिलियन अमेरिकी डॉलर के एकत्रीकरण हेतु जेपी मोर्गन ने न्यास कंपनियों की एक सहकारी व्यवस्था का संगठन किया । 1908 में कांग्रेस ने ऐल्डरिच-ब्रीलैंड अधिनियम पारित किया । 1907 का संकट मई 1907 से जून 1908 तक एक लंबे आर्थिक संकुचन के दौरान घटित हुआ । अंतर-संबद्ध संकुचन, बैंक आतंक और गिरता शेयर बाजार उल्लेखनीय आर्थिक विघटन में परिणत हुए । औद्योगिक उत्पादन घट गया और 1907 ने दिवालियेपन की कई घटनाएं देखीं । उत्पादन 11 प्रतिशत घटा, आयातों में 26 प्रतिशत गिरावट हुई, जबकि बेरोजगारी 3 प्रतिशत से कम की स्थिति से बढ़कर 8 प्रतिशत हो गई ।
अमेरिका 1929	1920 के बाद के दशक ने शेयर बाजार की एक बड़ी तेजी देखी जो व्यापक निवेश के साथ संबद्ध थी । उसने औद्योगिक संगठनों और कंपनी वित्त में बड़े नवोन्मेषण भी देखे । अमेरिकी शेयर बाजार एक सट्टेबाजी	मंदी 1930 में प्रारंभ हुई । उसने उपभोग पर धन-संपदा के प्रभावों के माध्यम से उत्पादन को कम किया, निवेश को घटाया तथा तेजी को कम कर दिया । 1930-33 में बैंकिंग आतंकों की एक शृंखला निकल आई

सारणी 2.11: प्रमुख वित्तीय संकट : 1873-2007 *(जारी)*

नाम/देश/वर्ष	संकट का स्वरूप	संकट का प्रभाव
1	2	3
	के निर्माण के बाद फेडरल रिज़र्व की सख्त नीति के अनुसरण में 1929 में तबाह हो गया । वित्तीय संकट 1930-31 के फ़ाल और जाड़े में शुरू हुआ जब बड़ी संख्या में अमेरिकी बैंक विफल हुए जिसने अपस्फीतिकारी अधोमुखी उत्तरोत्तर घटती और गहरी मंदी के लिए मार्ग प्रशस्त किया । मई 1931 में आस्ट्रियन क्रेडिटैनस्टाल्ट विफल हुआ । संकट तब जर्मनी में फैल गया जो अपने बड़े विदेशी कर्जों के संबंध में चूक की तथा उसने स्वर्ण मानक को छोड़ दिया । दबाव तब अमेरिका में अंतरित हुआ जिसने अपने स्वर्ण के संबंध में रन का साक्षात्कार किया ।	बैंकिंग आतंकों ने फिर मुद्रा आपूर्ति में पतन के माध्यम से वास्तविक अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया जिसने व्यापक अपस्फीति और वित्तीय अमध्यस्थता को निर्मित किया । संस्थापित स्वर्ण मानक के नियत विनिमय दर संबंधों के माध्यम से अपस्फीति विदेशों में भी फैल गई । वर्ष 1932 अमेरिका के आर्थिक इतिहास में सबसे बुरे वर्ष के रूप में माना जाता है ।
लातीन अमेरिकी ऋण संकट 1980 के बाद का दशक	1960 के बाद के दशक और 1970 में अनेक लातीन अमेरिकी देशों, उल्लेखनीय रूप में ब्राजील, अर्जेन्टीना और मेक्सिको ने विशेष रूप से बुनियादी संरचना कार्यक्रमों में औद्योगीकरण के लिए अंतरराष्ट्रीय ऋणदाताओं से मुद्रा की विपुल राशियों का उधार लिया । वाणिज्य बैंकों को लातीन अमेरिकी ऋण 20.4 प्रतिशत की एक वार्षिक संचयी दर से बढ़ा । कर्ज चुकौती इससे भी द्रुत गति से बढ़ी । जब विश्व की अर्थव्यवस्था 1970 के बाद के दशक और 1980 के बाद के दशक में मंदी में चली गई तब विभिन्न देश एक चलनिधि की चरमराहट (क्रंच) का सामना करने लगे । अमेरिका और यूरोप में ब्याज दरें 1979 में बढ़ गईं जिससे उधार लेनेवाले देशों के लिए अपने कर्ज चुकाना अधिक कठिन हो गया। अगस्त 1982 में मेक्सिको अपने कर्ज की चुकौती में चूककर्ता हो गया। मेक्सिको की चूक के संदर्भ में वाणिज्य बैंकों ने लातीन अमेरिकी देशों को नया उधार देना रोक दिया ।	1980 और 1982 के बीच 70 से भी अधिक संस्थाओं (जो वाणिज्य बैंक परिसंपत्तियों का 16 प्रतिशत और वित्त कंपनी परिसंपत्तियों का 35 प्रतिशत होती हैं) का परिसमापन किया गया अथवा वे मध्यस्थता के अधीन कर दी गईं । मार्च 1980 में अनेक वित्तीय संस्थाओं को केंद्रीय बैंक की वित्तीय सहायता पर अत्यधिक निर्भर रहने के लिए विवश किया गया जब उन्होंने जमा आहरणों का सामना किया । असफल संस्थाओं में सबसे बड़ा निवेश बैंक और दूसरा सबसे बड़ा निजी वाणिज्य बैंक शामिल थे । व्यापक तौर पर पूँजी बहिर्वाह, विशेष रूप से अमेरिका को घटित हुए । प्रभावित देशों की विनिमय दरों का तेजी से मूल्यह्रास हुआ, जिससे वास्तविक ब्याज दरें बढ़ गईं । उक्त क्षेत्र के लिए वास्तविक जीडीपी संवृद्धि 1980-85 के दौरान केवल 2.3 प्रतिशत थी, परंतु प्रति व्यक्ति के तौर पर प्रभावित देशों ने लगभग 9 प्रतिशत की ऋणात्मक वृद्धि का अनुभव किया ।
बचत और ऋण संकट अमेरिका 1980	1980 के बाद के दशक और 1990 के बाद के दशक का बचत और ऋण संकट अमेरिका में 745 बचत और ऋण (एस एण्ड एल) संघों की विफलता के कारण था । 1970 के बाद के दशक के उत्तरार्ध और 1980 के बाद के दशक के पूर्वार्ध की स्थावर संपदा में तेजी और उच्च ब्याज दरों का लाभ उठाने के प्रयास में कई एसएण्डएल संघों ने विवेकपूर्ण सीमा से काफी अधिक धनराशि उधार दी थी तथा जोखिमपूर्ण उद्यमों को उधार दिया । फलस्वरूप 1982 में बड़ी संख्या में ग्राहकों की चूक और दिवालियेपन की घटनाएँ सामने आईं । अमेरिका के एफएसएलआइसी ने एसएण्डएल खातों का बीमा किया था । 1986 से 1989 तक एफएसएलआइसी ने 125 बिलियन अमेरिकी डॉलर की कुल परिसंपत्तियों से युक्त 296 संस्थाओं को बंद किया अथवा अन्यथा उनका समाधान किया । उक्त एसएण्डएल संघों की विफलता कई अन्य बैंक विफलताओं के रूप में परिणत हुई ।	उक्त संकट का समाधान करने के लिए अमेरिकी सरकार ने 105 बिलियन अमेरिकी डॉलर का भुगतान किया । करदाताओं को लगभग 124 बिलियन अमेरिकी डॉलर की निवल हानि हुई । वित्त उद्योग और स्थावर संपदा बाजार में सहवर्ती मंदी 1990-91 की मंदी के लिए योगदान करनेवाला कारण हो सकती है ।
विश्व 1987	काले सोमवार से आशय सोमवार, 19 अक्तूबर 1987 से है, जब दुनिया भर के शेयर बाजारों का पतन हुआ, जब अत्यधिक अल्प समय में एक भारी मूल्य को छोड़ दिया गया। यह पतन हांगकांग में शुरू हुआ, अंतरराष्ट्रीय समय क्षेत्रों के माध्यम से पश्चिम में फैल गया, अमेरिका को आघात पहुँचाया जब तक अन्य बाजारों की उल्लेखनीय मार्जिन के साथ अवनति हो चुकी थी । दी डोव जोन्स औद्योगिक औसत (डेजेआइए) में 508 अंकों की गिरावट हुई और वह 1738.74 (22.6 प्रतिशत) रह गया।	अक्तूबर के अंत तक शेयर बाजारों में गिरावट हांगकांग में 45.8 प्रतिशत, आस्ट्रेलिया में 41.8 प्रतिशत, स्पेन में 31 प्रतिशत, युनाइटेड किंगडम में 26.4 प्रतिशत, अमेरिका में 22.7 प्रतिशत, और कनाडा में 22.5 प्रतिशत हुई । न्यूजीलैंड का बाजार विशेष रूप से अधिक आहत हुआ जो 1987 के चरम से लगभग 60 प्रतिशत गिरा तथा फिर पहले की स्थिति प्राप्त करने में उसके लिए कई वर्ष लगे ।
यूके 1991	1990 के बाद के दशक का पहला प्रमुख संकट 1992 में यूरोपीय विनिमय दर व्यवस्था (ईआरएम) का पतन था। बचाव निधियों से व्यापक सट्टेबाजी के अंतर्गत ब्रिटिश पौंड को ईआरएम से हटाया गया तथा स्कैंडिनेवियन बैंकिंग प्रणाली ने 100 प्रतिशत से अधिक की एक दिवसीय (ओवरनाइट) ब्याज दरों का सामना किया । सितंबर 1992 में ब्रिटिश सरकार को यूरोपीय विनिमय दर व्यवस्था (ईआरएम) से पौंड को हटाने के लिए मजबूर किया गया जब वे स्टर्लिंग को उसकी सहमत निम्नतर सीमा से अधिक रखने में असमर्थ थे। 1990 के बाद के दशक के प्रारंभ से मुद्रास्फीतिकारी प्रभावों की जवाबी कार्रवाई करने के लिए बुंडेसबैंक	उच्च जर्मन ब्याज दरों और उच्च देशी ब्याज दरों के प्रभाव ने यूके को मंदी में रख दिया तथा बड़ी संख्या में व्यवसाय असफल हुए । आवास बाजार का पतन हुआ । अन्य ईआरएम देश जिनकी मुद्राओं ने अपनी सीमाओं का उल्लंघन किया था, विस्तृत की गई सीमाओं के साथ प्रणाली में वापस आ गए ।

सारणी 2.11: प्रमुख वित्तीय संकट : 1873-2007 *(जारी)*

नाम/देश/वर्ष	संकट का स्वरूप	संकट का प्रभाव
1	2	3
	द्वारा निर्धारित उच्च जर्मन ब्याज दरें समूची ईआरएम के अंतर्गत उल्लेखनीय दबाव का कारण बनीं । यूके और इटली की अतिरिक्त कठिनाइयाँ थीं क्योंकि उनके यहाँ दोहरे घाटे थे जबकि अमेरिकी डॉलर के मूल्यह्रास, जिसमें यूके के निर्यातों की कीमतें निर्धारित की गई थीं, ने उसे और भी अधिक आहत किया ।	
नॉर्डिक देश (फिनलैंड, नार्वे और स्वीडन) 1991	तीनों नॉर्डिक देश अर्थात् फिनलैंड, नार्वे और स्वीडन एक वित्तीय उदारीकरण की प्रक्रिया से गुजरे जिसने उधार में तेजी को प्रेरित किया । तथापि, वे उच्चतर जर्मन ब्याज दरों के प्रतिकूल परिणामों से पीड़ित हुए ।	बचत बैंक बुरी तरह प्रभावित हुए; सरकार ने तीन बैंकों को अपने नियंत्रण में लिया जो एकसाथ मिलकर प्रणाली की जमाराशियों का 31 प्रतिशत बनते थे । फिनलैंड में उत्पादन की हानि जीडीपी के 59.1 प्रतिशत पर रखी गई तथा जीडीपी में 6.2 प्रतिशत गिरावट हुई । स्वीडन में उत्पादन की हानि जीडीपी के 30.6 प्रतिशत पर रखी गई तथा जीडीपी में संकट के वर्ष के दौरान 1.2 प्रतिशत गिरावट हुई ।
मेक्सिको संकट 1994	नम्नलिखित कारकों ने मेक्सिको की अर्थव्यवस्था की वित्तीय दुर्बलता के लिए मार्ग प्रशस्त किया : (1) एक अर्ध-नियत विनिमय दर; (2) विपुल ऋण विस्तार से एक बड़ी सीमा तक परिणत काफी बड़ा चालू खाता घाटा; (3) अमेरिकी ब्याज दरों में भारी वृद्धि; तथा (4) एक प्रेरक जिसमें 1994 के दौरान संचित राजनैतिक तनाव शामिल हैं । ऋण, जिसका बड़ा भाग खराब गुणवत्ता का था, के तीव्र विस्तार के साथ विनिमय दर व्यवस्था के संयोजन ने संकट के लिए मार्ग प्रशस्त किया । बैंक ऋणों का उत्कर्ष हलके बैंक पूँजीकरण के कारण था तथा यह सुनिश्चित करने में विफलता भी इसकी वजह थी कि संस्थाओं का स्वामित्व प्राप्त करने अथवा उनका प्रबंधन करने के लिए कुछ बैंकरों ने "योग्य और उचित" मानदंड पूरा किया था। इस प्रकार मूल दोष जिसने मेक्सिको के संकट को प्रेरित किया, वाणिज्य बैंकों का स्वामित्वहरण था जिसने उन्हें कमजोर बना दिया तथा निजीकरण और ऋण-विस्तार के लिए उन्हें एक दुर्बल सरणी प्रस्तुत की । यह संकट मौद्रिक नीति संबंधी तीव्र कमियों का परिणाम था जो इसलिए उत्पन्न हुईं क्योंकि सरकार ने एक नियत अथवा अर्ध-स्थिर विनिमय दर बनाए रखना चाहा था । आर्थिक मंदी से बचने की आशा में मेक्सिको ने 1994 के दौरान मौद्रिक कठोरता की मात्रा को सीमित करने की कोशिश की और साथ ही व्यापक अवरुद्ध मध्यस्थता में लिप्त होने के द्वारा अपनी अर्ध-स्थिर विनिमय दर को बनाए रखा । ऐसी नीति लंबे समय तक जारी नहीं रखी जा सकी तथा इसका परिणाम विनिमय दर के पतन, ब्याज दरों में वृद्धि और मंदी में हुआ ।	1994 में 34 वाणिज्य बैंकों में से 9 की मध्यस्थता की गई तथा 11 ने ऋण/खरीदी पुन:पूँजीकरण कार्यक्रम में सहभागिता की । मध्यस्थता किये गये नौ बैंक वित्तीय प्रणाली परिसंपत्तियों का 19 प्रतिशत बनते थे और वे दिवालिया माने गये । 2000 तक बैंक परिसंपत्तियों का 50 प्रतिशत विदेशी बैंकों द्वारा धारित किया गया। उत्पादन की हानि जीडीपी का 4.2 प्रतिशत थी तथा प्रभावित वर्ष में वास्तविक जीडीपी संवृद्धि में 6.2 प्रतिशत गिरावट हुई ।
पूर्वी एशियाई संकट 1997	स्थिर विनिमय दर व्यवस्था के ढांचे के अंतर्गत थाईलैंड ने जबरदस्त वृद्धि के कार्यनिष्पादन का एक दशक देखा, परंतु 1996 के अंत में बाहट पर दबाव उभर गये । स्थावर संपदा क्षेत्र को बड़े एक्सपोज़र, विनिमय दर जोखिम, और चलनिधि जोखिम सहित एक अधारणीय चालू खाता घाटे, वास्तविक प्रभावी विनिमय दर की उल्लेखनीय वृद्धि, बढ़ते हुए अल्पावधि विदेशी ऋण, ह्रासमान राजकोषीय शेष, तथा अधिकाधिक दर्शनीय वित्तीय क्षेत्र की दुर्बलताओं के बीच 1997 की पहली छमाही के दौरान दबाव बढ़ गया । संपत्ति के क्षेत्र में वित्त कंपनियों का सबसे बड़ा एक्सपोज़र अनुपातहीन रूप में था और वे पहली संस्थाएँ थीं जो आर्थिक मंदी से प्रभावित हुई थीं । बढ़ते हुए विनिमय दर दबावों और इन दबावों को दूर करने के लिए निष्प्रभावी मध्यस्थताओं के अनुसरण में 2 जुलाई 1997 को बाहट को नियंत्रण से मुक्त किया गया । कमजोर समर्थक नीतियों के आलोक में जुलाई में अमेरिकी डॉलर की तुलना में बाहट का 20 प्रतिशत मूल्यह्रास किया गया। जुलाई 1997 में थाई बाहट के मूल्यह्रास, परवर्ती क्षेत्रीय संक्रामकता, तथा हांगकांग शेयर बाजार के पतन ने कोरिया की वित्तीय प्रणाली को आघात की तरंगें भेजीं। कोरिया की विनिमय दर अक्तूबर 1997 के दौरान मोटे तौर पर स्थिर रही । फिर भी, अल्पावधि ऋण के उच्च स्तर और प्रयोज्य अंतरराष्ट्रीय आरक्षित निधियों के निम्न स्तर ने अर्थव्यवस्था को बाजार की भावना में परिवर्तनों	मई 2002 तक थाईलैंड ने 59 (91 में से) वित्तीय कंपनियों को बंद किया जो कुल मिलाकर वित्तीय प्रणाली की परिसंपत्तियों का 13 प्रतिशत और वित्त कंपनी परिसंपत्तियों का 72 प्रतिशत थीं । उसने 1 (15 में से) देशी बैंक और राष्ट्रीयकृत 4 बैंकों को बंद किया । अनर्जक ऋण कुल ऋणों के 33 प्रतिशत पर चरम पर रहे तथा उन्हें फरवरी 2002 में कुल ऋणों के 10.3 प्रतिशत तक कम किया गया। जीडीपी का 97.7 प्रतिशत अनुमानित उत्पादन हानि थी और जीडीपी में 10.5 प्रतिशत गिरावट हुई । कोरिया में, मई 2002 के दौरान ''खरीद और धारण'' के माध्यम से 5 बैंकों को बाजार से निकलने के लिए मजबूर किया गया तथा 303 वित्तीय संस्थाएँ बंद की गईं (215 ऋण संघ थे); अन्य 4 बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया । उत्पादन हानि 50.1 प्रतिशत थी तथा जीडीपी में 6.9 प्रतिशत गिरावट हुई । मलेशिया में, वित्तीय कंपनी क्षेत्र की पुन: संरचना की गई तथा विलयनों के माध्यम से वित्त कंपनियों की संख्या 39 से घटाकर 10 कर दी गई । सबसे बड़ी स्वतंत्र वित्त कंपनी सहित दो वित्त कंपनियों को केंद्रीय बैंक द्वारा अपने अधिकार में लिया गया ।

सारणी 2.11: प्रमुख वित्तीय संकट : 1873-2007 *(जारी)*

नाम/देश/वर्ष	संकट का स्वरूप	संकट का प्रभाव
1	2	3
	के प्रति अधिकाधिक असुरक्षित बना दिया । कोरिया में जबकि समष्टि-आर्थिक मूल तत्व लगातार अनुकूल रहे, वित्तीय क्षेत्र में और औद्योगिक समूहों (चाएबोल्स) में समस्याओं की बढ़ती हुई जानकारी ने बैंकों के लिए अपने अल्पावधि उधार को नवीकृत करने में अधिकाधिक कठिनाइयाँ पैदा कीं । मलेशिया में निजी क्षेत्र को, विशेष रूप से संपत्ति क्षेत्र को तथा स्टाकों और शेयरों की खरीद के लिए लगभग 30 प्रतिशत की वार्षिक दर पर ऋण विस्तार की बनी हुई गति ने वित्तीय प्रणाली को 1997 में घटित संपत्ति और अन्य परिसंपत्तियों की कीमतों में गिरावटों से होनेवाले संभावित जोखिमों के प्रति अरक्षित बना दिया । 1997 की दूसरी छमाही में बाजार की अशांति और संक्रामकता के प्रभावों के संदर्भ में वित्तीय प्रणाली की सही स्थिति और उसकी आघात-सहनीयता के बारे में बाजार सहभागियों की चिंताएँ अधिकाधिक एक केंद्रीय मुद्दा बन गईं जिन्हें वित्त कंपनियों के बीच ज्ञात दुर्बलताओं द्वारा रेखांकित किया गया ।	अनर्जक ऋण बैंकिंग प्रणाली की परिसंपत्तियों के 25-35 प्रतिशत के बीच चरम पर रहे तथा मार्च 2002 तक इनमें 10.8 प्रतिशत तक गिरावट हुई । उत्पादन हानि जीडीपी का 50.0 प्रतिशत थी तथा जीडीपी में 7.4 प्रतिशत गिरावट हुई ।
रूस 1998	1997 के मध्य से अप्रैल 1998 तक रूस का केंद्रीय बैंक (सीबीआर) उल्लेखनीय रूप में ऋण को सख्त बनाने के द्वारा नियत विनिमय दर नीति को बचाने में अपेक्षाकृत सफल रहा । फिर भी, स्थिति तब अधिकाधिक असमर्थनीय बनी जब रूस में उल्लेखनीय राजनैतिक अशांति - प्रधान मंत्री चेर्नोमिर्दिन की सरकार की राष्ट्रपति द्वारा बर्खास्तगी से लेकर एवं नया मंत्रीमंडल बनाने के संबंध में गतिरोध के कारण किये गये विलंब - ने रूस की राजकोषीय समस्याओं को काबू में करने के लिए राजनैतिक संकल्प के संबंध में अधिकाधिक संदेह उत्पन्न किया । तथापि, संकट से काफी पहले ही व्यापक रूप से इस बात की पहचान की गई थी कि बैंकिंग प्रणाली में दुर्बलताओं की एक शृंखला विद्यमान है । विशेष रूप से बैंक की रिपोर्टिंग और बैंक पर्यवेक्षण की स्थिति कमजोर थी एवं विदेशी मुद्रा दर संबंधी जोखिम से जुड़ा एक्सपोज़र काफी था । साथ ही, आपस में जुड़े उधार और कमजोर प्रबंधन की समस्या थी। जुलाई के मध्य से जब ड्यूमा ने मुख्य राजकोषीय उपायों को पारित करने से इनकार किया, तब स्थिति तेजी से बदतर हो गई जिससे 17 अगस्त 1998 को रूबल-मूल्यवर्गीकृत खज़ाना बिलों और बांडों की एकपक्षीय पुन:संरचना के लिए मार्ग प्रशस्त हुआ । तीन दिन बाद उन पिछली घोषणाओं के बावजूद कि रूबल का अवमूल्यन नहीं किया जाएगा, रूबल को नियंत्रण से मुक्त रहने दिया गया।	वास्तविक प्रभावी तौर पर (अभिहित तौर पर 300 प्रतिशत से अधिक) बड़ा अवमूल्यन, अंतरराष्ट्रीय पूँजी बाजारों में प्रवेश की हानि, तथा बैंकिंग प्रणाली के लिए व्यापक हानियाँ हुईं । लागू किये गये दो मुख्य उपाय थे बैंकों की विदेशी देयताओं पर एक 90-दिवसीय अधिस्थगन तथा जमाराशियों के एक बड़े भाग का दिवालिया बैंकों से स्बेरबैंक में अंतरण। लगभग 720 बैंक, अथवा परिचालित हो रहे बैंकों में से आधे बैंक दिवालिया मान लिये गये। ये बैंक क्षेत्र परिसंपत्तियों का 4 प्रतिशत और फुटकर जमाराशियों का 32 प्रतिशत बनते थे । संकट के वर्ष में जीडीपी में 5.3 प्रतिशत गिरावट हुई । 1998 में मुद्रास्फीति 84 प्रतिशत तक पहुँच गई तथा कल्याण की लागतें बहुत बढ़ गईं । अन्य देश जैसे बाल्टिक राज्य, बेलारूस, कज़खस्तान, मालदोवा, उक्रेन और उज़्बेकिस्तान बुरी तरह प्रभावित हुए ।
डॉट.कॉम खतरा (बबल) 2000	"डॉट.कॉम बबल" (अथवा "आइ.टी. बबल") एक काल्पनिक खतरा था जो लगभग 1998-2001 में व्याप्त था (10 मार्च 2000 को चरम पर था ज़ब नासदाक़ 5132.52 की सर्वोच्च स्थिति पर था) जिसके दौरान पश्चिमी राष्ट्रों के शेयर बाजारों ने हाल के इंटरनेट क्षेत्र और संबंधित क्षेत्रों में वृद्धि से अपनी ईक्विटी मूल्य में बढ़ोतरी को देखा । इस अवधि की विशेषता नई इंटरनेट-आधारित कंपनियों के समूह की स्थापना (और कई मामलों में आश्चर्यजनक विफलता) थी जिन्हें आम तौर पर डॉट.कॉम के रूप में कहा जाता है। तेजी से बढ़ रही शेयर कीमतों, बाजार का विश्वास जिसे कंपनियाँ भावी लाभों के रूप में परिवर्तित करेंगी, शेयरों के विषय में व्यक्तिगत अनुमानों, तथा व्यापक रूप से उपलब्ध जोखिम पूँजी के संयोजन ने ऐसे परिवेश का निर्माण किया जिसमें अनेक निवेशक तकनीकी उन्नति में विश्वास के पक्ष में अर्जन की तुलना में कीमत के अनुपातों जैसे पारंपरिक माप-विद्या की उपेक्षा करना चाहते थे। 1999 से और 2000 के प्रारंभ में फेडरल रिज़र्व ने ब्याज दरें छह बार बढ़ाईं तथा अर्थव्यवस्था गति खोने लगी थी । डॉट.कॉम खतरे का विस्फोट 10 मार्च 2000 को हुआ, जब प्रौद्योगिकी-भार से युक्त नासदाक़ मिश्रित सूचकांक 5,048.62 (अंत: दिवसीय चरम स्थिति 5,132.52) के चरम स्थान पर रहा, जो केवल एक वर्ष पहले के अपने मूल्य से दुगुने से भी अधिक था । सोमवार, 13 मार्च को संसाधित विक्रय आदेशों के व्यापक प्रारंभिक समूह ने विक्रय की एक शृंखलाबद्ध प्रतिक्रिया को प्रेरणा दी जिसने अपना	वित्तीय इंटरनेट खतरे (बबल) का अंतत: 2000 के स्प्रिंग में विस्फोट हुआ । नासदाक़ के अवपतन ने नासदाक़ के मूल्य के 62 प्रतिशत को लुप्त कर दिया, जो अचानक 4,260 की ऊँचाई से घटकर 12 महीने के बाद 1,620 के निम्न स्तर तक आ गया । कई डॉट.कॉम पूँजीरहित हो गये तथा उनका अधिग्रहण अथवा परिसमापन किया गया ।विभिन्न सहायक उद्योगों, जैसे विज्ञापन और प्रेषण्। ने अपने परिचालनों को कम कर दिया क्योंकि उनकी सेवाओं के लिए माँग में गिरावट हुई । दूरसंचार ऋण चूकें कुल 60 बिलियन अमेरिकी डॉलर की रहीं; निवेश बैंकों के पास हजारों में आधिक्य थे; दूरसंचार उपस्कर विनिर्माताओं के पास छह महीनों में 300,000 से भी अधिक नौकरियाँ नष्ट हुईं तथा घटकों के आपूर्तिकर्ताओं और संबद्ध उद्योगों में लगभग 200,000 नौकरियाँ चली गईं । सभी दूरसंचार परिचालकों और विनिर्माताओं के शेयर बाजार मूल्य में मार्च 2000 के 6300 बिलियन अमेरिकी डॉलर की उनकी चरम स्थिति से 3800 बिलियन अमेरिकी डॉलर की गिरावट हुई । तुलनात्मक दृष्टि से 1990 के बाद के दशक के संकट की संयुक्त लागत केवल 813 बिलियन अमेरिकी डॉलर ही थी ।

सारणी 2.11: प्रमुख वित्तीय संकट : 1873-2007 *(समाप्त)*

नाम/देश/वर्ष	संकट का स्वरूप	संकट का प्रभाव
1	2	3
	भरण स्वयं किया क्योंकि निवेशकों, निधियों और संस्थाओं ने अपनी स्थितियों का परिसमापन किया । केवल छह दिन में नासदाक़ ने लगभग 9 प्रतिशत हानि उठाई जब उसमें 10 मार्च को विद्यमान लगभग 5,050 से 15 मार्च को 4,580 तक गिरावट हुई ।	
अर्जेन्टीना 2001	मार्च 2001 में बैंक आहरण होड़ (बैंक रन) प्रारंभ हुआ जो करेंसी बोर्ड को कायम रखने के बारे में बढ़ती हुई आशंकाओं, कांग्रेस को भेजे गए नये राजकोषीय मितव्ययिता पैकेज के प्रति जनसाधारण के तीव्र विरोध, केंद्रीय बैंक के अध्यक्ष के त्यागपत्र, तथा परिवर्तनीयता कानून में संशोधन (डॉलर के साथ स्थिर होने की स्थिति से अमेरिकी डॉलर और यूरो से युक्त मुद्रा समुदाय के साथ स्थिर होने की स्थिति की समता में परिवर्तन) के कारण था । 2001 की दूसरी छमाही के दौरान बैंक रन और गहरे हो गए । 3 दिसंबर 2001 को चूँकि कई बैंक पतन के कगार पर थे, अत: लेन-देन वाले खातों पर आंशिक आहरण के प्रतिबंध (कोरैलिटो) लागू किये गये थे जबकि नियत सावधि जमाराशियों (सीडी) को पुन: निर्धारित किया गया ताकि बैंकों से बहिर्वाहों को रोका जा सके । 4 फरवरी 2002 को बैंकिंग प्रणाली की शोधक्षमता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हुए बैंक परिसंपत्तियों को विषम रूप में प्रशमित किया गया ।	2002 में सरकारी बांडों के लिए जमाराशियों के लिए दो स्वैच्छिक स्वैप प्रस्तावित किये गये, परंतु जनता ने इसमें कम रुचि दर्शायी । दिसंबर 2002 में उक्त कोरैलिटो हटाया गया । अगस्त 2003 तक एक बैंक बंद कर दिया गया, तीन बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया,तथा कई अन्य बैंकों ने अपने स्टाफ और शाखाओं को कम कर दिया । उत्पादन हानि जीडीपी का 42.7 प्रतिशत थी तथा संकट के वर्ष में वास्तविक जीडीपी में 10.9 प्रतिशत गिरावट हुई ।

वित्तीय संकटों के कारण

2.80 साहित्य में संकटों के कारणों का वर्णन करने के लिए दो व्यापक दृष्टिकोण प्रयुक्त हुए हैं। पहला दृष्टिकोण जो किंडिलबर्गर (1978) द्वारा प्रतिपादित है, यह है कि संकट भीड़ के मनोविज्ञान अथवा आतंक के परिणाम के रूप में अनायास अपने आप घटित होते हैं। यदि हर कोई किसी संकट की प्रत्याशा करता है और इस तरह कार्य करता है कि कोई संकट आने ही वाला है, तो संकट एक स्वयंपूरक भविष्यवाणी सिद्ध हो जाता है तथा क्रम इसके विपरीत भी हो सकता है। दूसरा दृष्टिकोण निश्चयपूर्वक यह कहता है कि संकट व्यवसाय-चक्र का अंतर्निहित भाग होते हैं तथा आर्थिक मूल तत्वों पर होनेवाले आघातें से परिणत होते हैं (मिचेल, 1941)। जब अर्थव्यवस्था मंदी की स्थिति में पहुँच जाती है तब यह प्रत्याशित है कि परिसंपत्ति के प्रतिलाभ गिर जाते हैं, उधारकर्ताओं को ऋणों की चुकौती करने में कठिनाई होती है तथा जमाकर्ता चूकों में वृद्धि या अनर्जक ऋणों का पूर्वानुमान करते हुए बैंक जमाराशियाँ आहरित करके अपनी संपदा की रक्षा करने का प्रयास करते हैं। बैंक अपनी परिसंपत्तियों की नगदी की कमी की स्थिति और अपेक्षाकृत अपनी नकदी देयताओं के बीच फँस जाते हैं तथा दिवालिया बन सकते हैं। यह आतंक में परिणत होता है यद्यपि वास्तविक कारण कुछ और भी हो सकते हैं। संकटों के कारणों के संबंध में अनुभवजन्य साक्ष्य मिश्रित हैं। एक ओर जहाँ कुछ लोग आतंक के दृष्टिकोण (फ्रायडमैन और स्क्वार्ट्ज, 1963) का समर्थन करते हैं, वहीं दूसरी ओर कई लोग इसका विरोध भी करते हैं और एक अधिक व्यापक दायरे में सबूत प्रस्तुत करते हैं कि संकट मूलभूत तत्वों पर आधारित होते हैं, बजाय इसके कि वे आतंक पर आधारित होते हैं (कैलोमिरिस और गोर्टन, 1991; कैलोमिरिस और मैसन, 2003ए)। वित्तीय साहित्य में संकटों के कारणों के लिए विभिन्न स्पष्टीकरण दिये गये हैं। इस खंड में इन बहसों में से कुछ को निम्नलिखित शीर्षों में शामिल किया गया है :

संकटों के वित्तीय और आतंकीय आयाम

2.81 किसी संकट के सामान्यत: दो मूलभूत आयाम होते हैं - एक तो वित्तीय और दूसरा आतंक का, जो प्राय: प्रेरक है। पहला, बैंक चलनिधि, भुगतान प्रणालियों और शोधक्षमता के लिए आघात वित्तीय संकटों के सुस्पष्ट लक्षण हैं। दूसरा, आतंक की मार - जमाकर्ता और निवेशक के विश्वास की अचानक और नाटकीय ढंग से हानि - प्राय: अध:पतन की घटना है। जब वित्तीय और आतंक के (दोनों) आयाम टकराते हैं तब वे प्रतिक्रिया की एक शृंखला प्रारंभ करते हैं तथा संबंधित/प्रभावित देश चक्कर खाकर नीचे गिरने लगता है, क्योंकि आतंक और विश्वासभंग व्यष्टि-आर्थिक स्तर पर बैंकिंग प्रणाली एवं वास्तविक अर्थव्यवस्था में समस्याएँ बढ़ाते हैं (बैर्टन *ईटी एएल.*, 2003)। साथ ही, देशों के बीच संक्रामकता भी घटित होती है। वित्तीय

संकटों के लिए काफी हद तक कारण अंतरराष्ट्रीय पूँजी प्रवाहों में तीव्र उलटाव हैं तथा ये मुख्य रूप से अंतरराष्ट्रीय निवेश की स्थितियों में परिवर्तनों द्वारा प्रेरित होते हैं। प्रवाहों के उलटाव संभवत: अचानक पूँजी खाता समायोजनों को प्रेरित करते हैं और उसके बाद मुद्रा और बैंकिंग संकटों को (ऐशेनग्रीन और रोज़, 1998; फ्रैंकेल और रोज़, 1996) ।

घरेलू अर्थव्यवस्था में असंतुलन

2.82 वित्तीय संकटों के इतिहास का विश्लेषण यह संकेत करता है कि किसी संकट के लिए पाँच तत्व कारणभूत होते हैं : वास्तविक अर्थव्यवस्था; वित्तीय क्षेत्र; समष्टि-अर्थव्यवस्था; अंतरराष्ट्रीय मुद्रा और पूँजी प्रवाह; और परिसंपत्ति कीमत-निर्धारण । जब ये तत्व संतुलन में रहते हैं, तब अर्थव्यवस्था सामान्यत: भलीभाँति आगे बढ़ती है, परंतु जब इनमें से कोई तत्व संतुलन से बाहर हो जाता है और अन्य तत्वों को प्रभावित करता है तब स्थितियाँ वित्तीय संकट के लिए परिपक्व हो जाती हैं (बैर्टन *ईटी एएल.*, 2003)।

(i) असंतुलन संपदा क्षेत्र के कम निष्पादन के कारण हो सकते हैं और समय के चलते परिसंपत्तियों के मूल्य में क्रमिक ह्रास के लिए मार्ग प्रशस्त हो सकता है जब कंपनियाँ अपनी पूँजी की लागत से अधिक पर्याप्त प्रतिलाभ अर्जित नहीं कर सकतीं।

(ii) असंतुलन अत्यंत आवश्यक परंतु खराब ढंग से निष्पादित बाजार के उदारीकरण के कारण हो सकते हैं, जहाँ आक्रामक सुधार लागू किये गये हों जो अर्थव्यवस्था की उनका अवशोषण करने की सामर्थ्य से बहुत ज्यादा हो गये हों।

(iii) उन देशों की वित्तीय प्रणालियों में उनकी सहन करने की क्षमता से अधिक असंतुलन भी हो सकते हैं जहाँ विदेशी पूँजी प्रवाहों के लिए बाजार को असमान रूप से खोला गया हो अथवा वित्तीय क्षेत्र का अविनियमन किया गया हो। यह स्थिति 1980 के बाद के दशक और 1990 के बाद के दशक के दौरान अधिकांश उभरते बाजार संकटों में, तथा सर्वाधिक उल्लेखनीय रूप में पूर्वी एशियाई संकट में थी।

(iv) असंतुलन अधारणीय समष्टि-आर्थिक नीतियों के कारण भी उत्पन्न हो सकते हैं जैसे असमर्थनीय राजकोषीय घाटे, अधिमूल्यित मुद्राएँ तथा अर्थव्यवस्था में अत्यधिक तीव्र ऋण वृद्धि जो या तो विदेशी निधीयन के प्रवाहों द्वारा या अधारणीय मौद्रिक नीतियों से प्रेरित हों।

2.83 अधिकांश ऋण संकट इन कारकों से हो सकते हैं। इन सभी कारकों ने लातीन अमेरिकी ऋण संकट के पूर्वसूचक के रूप में कार्य किया। समय के चलते इसका स्वरूप संपदा और बैंकिंग क्षेत्रों में प्रारंभ होता है तथा तब तक निर्मित होता है जब तक कि बाह्य आघात (जैसे मुद्रा आक्रमण) अथवा आंतरिक आघात (जैसे जमाकर्ताओं द्वारा बैंक रन) अंतत: संकट के पूर्ण विस्फोट के लिए प्रेरित नहीं कर देते।

वित्तीय और तकनीकी नवोन्मेष द्वारा प्रेरित संकट

2.84 इतिहासकारों, उल्लेखनीय रूप में चार्लेस किंडिलबर्गर ने सूचित किया है कि संकट प्राय: ऐसे प्रमुख वित्तीय अथवा तकनीकी नवोन्मेषों के तत्काल बाद उत्पन्न होते हैं जो निवेशकों को नये प्रकार के वित्तीय अवसर प्रस्तुत करते हैं जिन्हें उन्होंने निवेशकों की आशाओं का "विस्थापन" कहा है। तकनीकी और वित्तीय नवोन्मेषों से अपरिचय यह समझाने में सहायक हो सकता है कि कैसे निवेशक कभी-कभी परिसंपत्तियों के मूल्यों का स्थूल रूप में अति-प्राक्कलन करते हैं। साथ ही, नई श्रेणी की परिसंपत्तियों में (उदाहरण के लिए डॉट.कॉम कंपनियों में शेयर) यदि प्रारंभिक निवेशक बढ़ते हुए परिसंपत्ति मूल्यों से लाभार्जन करते हैं, तो जैसे ही अन्य निवेशक उक्त नवोन्मेष के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं, और अधिक लोग उनका अनुसरण कर सकते हैं तथा वे उक्त कीमत को उच्चतर स्तर पर भी पहुँचाते हैं क्योंकि वे इसी प्रकार के लाभ पाने की आशा में उन्हें खरीदने के लिए पिल पड़ते हैं । यदि इस प्रकार की "भेड़ चाल" या "अंधानुकरण" के कारण परिसंपत्तियों के सही मूल्य से कीमतें बहुत अधिक बढ़ जाती हैं, तो विखंडन अपरिहार्य हो जाता है। यदि किसी कारणवश कीमत थोड़ी-सी गिर जाती है ताकि निवेशक यह समझें कि आगे और लाभ आश्वस्त नहीं हैं, तो तेजी का रुख विपरीत दिशा में भी जा सकता है जिससे कीमत घट जाती है और उसके कारण बिक्री के लिए भीड़ उमड़ पड़ती है तथा कीमतों में कमी करने के लिए सशक्त समर्थन मिल जाता है। पूर्व के उदाहरणों में 1720 के साउथ सी बबल[6] और मिसिसिपी बबल शामिल हैं जो तब घटित हुए जब कंपनी स्टाक के

6 प्रसंगवश, बताया जाता है कि आइज़क न्यूटन ने, जिन्होंने साउथ सी बबल में भारी नुकसान उठाया, कहा था कि मैं आकाशपिंडों की गतिविधि की तो माप कर सकता हूँ, पर लोगों के पागलपन की नहीं।

शेयरों में निवेश की कल्पना ही अपने आपमें एक नई और अपरिचित बात थी एवं 1929 का पतन भी इसमें शामिल है जो नई बिजली और परिवहन प्रौद्योगिकियों को लागू करने के बाद घटित हुआ। बहुत हाल ही में कई वित्तीय संकट निवेश के परिवेश में परिवर्तनों के बाद हुए जो वित्तीय विनियमन द्वारा लागू किये गये; 2001 में डॉट.कॉम खतरे का विस्फोट इंटरनेट प्रौद्योगिकी के बारे में "तर्कशून्यता के बाहुल्य" के साथ प्रारंभ हुआ।

वित्तीय बाजारों में प्रतिकूल चयन और नैतिक संकट

2.85 मिश्किन (1991बी) ने 1857 से 1987 तक के वित्तीय संकटों की घटनाओं का परीक्षण किया। इस विश्लेषण के अनुसार आर्थिक परिवेश में पाँच कारक वित्तीय बाजारों में प्रतिकूल चयन और नैतिक संकट को अत्यधिक बदतर होने के लिए प्रेरित कर सकते हैं, जो तब एक वित्तीय संकट उत्पन्न करते हैं तथा अर्थव्यवस्था को अधिक उत्पादन वाले संतुलन से हटाकर कम उत्पादन वाले संतुलन में अंतरित करते हैं जब वित्तीय प्रणाली उन लोगों को निधियाँ उपलब्ध नहीं करा सकती जिनके पास सर्वोत्तम निवेश के अवसर हैं। वित्तीय संकटों के लिए कारणभूत कारक हैं, ब्याज दरों में वृद्धि, शेयर बाजार का पतन, अनिश्चितता में बढ़ोतरी, बैंक आतंक और कुल मूल्य स्तर में अप्रत्याशित गिरावटें, जैसा कि नीचे विस्तार से बताया गया है:

(i) ब्याज दरों में वृद्धि सामान्यत: संकटों की अग्रदूत हैं क्योंकि व्यक्ति और फर्में, जो उच्चतम ब्याज दरें अदा करने के इच्छुक हैं, ऐसे हैं जिनके पास सर्वाधिक जोखिमों से भरी निवेश परियोजनाएँ हैं। आम तौर पर बाजार की ब्याज दरें अचानक तीव्र वृद्धि अनुभव करती हैं जो ऋण के लिए बढ़ी हुई माँग अथवा मुद्रा आपूर्ति में कमी द्वारा संचालित है। इस परिदृश्य में जिनके पास खराब ऋण जोखिम हैं वे फिर भी उधार लेना चाहते हैं जबकि जिनके पास अच्छे ऋण जोखिम हैं वे उधार लेने की अपेक्षा खो देते हैं। परिणामी प्रतिकूल चयन संभवत: उधार देने में अत्यधिक कमी को प्रेरित करता है क्योंकि ऋणदाता ऋण प्रदान करना नहीं चाहते जो फिर निवेश और सकल आर्थिक कार्यकलाप में भारी कमी का मार्ग प्रशस्त करता है।

(ii) जैसा कि ग्रीनवाल्ड और स्टिग्लिट्ज (1988), बर्नान्के और गेर्टलर (1990), तथा कैलोमिरिस और हब्बर्ड (1989) ने बल देकर कहा है, शेयर बाजार में तीव्र गिरावट वित्तीय बाजारों में प्रतिकूल चयन और नैतिक संकट की समस्याएँ बढ़ा सकता है क्योंकि यह फर्म की निवल मालियत के बाजार मूल्य में बहुत बड़ी कमी ला सकता है। इसका परिणाम उधार देने में कमी के रूप में होता है जो फिर निवेश और कुल उत्पादन में कमी का कारण बनता है। 1930 के बाद के दशक की महान मंदी से पहले अक्तूबर 1929 में शेयर बाजार में तेज गिरावट हुई थी।

(iii) वित्तीय बाजारों में अनिश्चितता में नाटकीय वृद्धि, जो संभवत: किसी प्रसिद्ध वित्तीय अथवा गैर-वित्तीय संस्था की विफलता, मंदी, शेयर बाजार के पतन के कारण हुई हो, ऋणदाताओं के लिए खराब ऋण जोखिमों से लाभकारी तत्व को देखना कठिनतर कर देती है। यह ऋण बाजारों में प्रतिकूल चयन की समस्याओं की तीव्रता को बढ़ा देती है, जबकि शेयर बाजार के पतन से उत्पन्न होनेवाली निवल मालियत में गिरावट भी नैतिक संकट की समस्याओं में बढ़ोतरी में परिणत होती है। यह उन्हें उधार देने के लिए कम इच्छुक बना देती है जिससे उधार, निवेश और कुल आर्थिक कार्यकलाप में कमी आ जाती है।

(iv) बैंक आतंक भी वित्तीय संकटों में बदल जाते हैं क्योंकि बैंक महत्वपूर्ण वित्तीय मध्यवर्ती हैं। बैंक आतंक में परिणत वित्तीय संकट तथा एक ही समय कई बैंकों की विफलता बैंकों द्वारा की जानेवाली वित्तीय मध्यस्थता की मात्रा को घटा देती है और इस प्रकार निवेश और कुल आर्थिक कार्यकलाप में कमी का मार्ग प्रशस्त होगा (बर्नान्के, 1983)।

(v) अंतत: मूल्य के स्तरों में अप्रत्याशित गिरावट, वास्तविक निवल मालियत में भारी कमी तथा प्रतिकूल चयन और नैतिक संकट की समस्याओं का सामना करनेवाले उधारदाताओं में वृद्धि का कारण बनती है। प्रतिकूल चयन और एजेंसी समस्याओं में परिणामी वृद्धि के कारण निवेश और आर्थिक कार्यकलाप में गिरावट होती है।

2.86 अमेरिका में अधिकांश वित्तीय संकट ब्याज दरों में तीव्र वृद्धि, शेयर बाजार के पतन तथा प्रमुख वित्तीय अथवा गैर-वित्तीय फर्मों की विफलता (उदाहरण के लिए 1857 में दी ओहियो लाइफ इंश्यूरेंस एण्ड ट्रस्ट कंपनी, 1873 में दी नॉर्दर्न पैसिफिक रेलरोड ऐण्ड जे कुक ऐण्ड कंपनी, 1884 में ग्रैन्ट एण्ड वार्ड, 1893 में दी नैशनल केर्डेज कंपनी, 1907 में दी निकरबॉकर ट्रस्ट कंपनी, और 1930 में

दी बैंक ऑफ युनाइटेड स्टेट्स) से उत्पन्न अनिश्चितता के बाद प्रारंभ हुए हैं। इस विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि शेयरों की कीमतें गिर जाती हैं तथा निम्न और उच्च गुणवत्ता वाले उधारकर्ताओं के लिए ब्याज दरों के बीच अंतर (स्प्रेड) इतना बढ़ जाता है कि आतंक उत्पन्न हो जाता है। दूसरे, अधिकांश आतंकों से पहले ब्याज दरें में भारी वृद्धियाँ हुई हैं। तीसरे, अधिकांश आतंकों से पहले किसी वित्तीय संस्था की प्रमुख विफलता रही है। यह विफलता प्राय: किसी गैर-वित्तीय निगम द्वारा अनुभव की गई वित्तीय कठिनाइयों का परिणाम है। वित्तीय आतंक सामान्यत: मंदी के शुरू होने के बाद घटित होते हैं तथा अंतत: आतंक के साथ संबद्ध ब्याज दर स्प्रेड में वृद्धि के बाद शीघ्र ही गिरावट होती है। तथापि अनेक मामलों में, सर्वाधिक उल्लेखनीय रूप में 1873 के आतंक, 1907 के आतंक, और महान मंदी के बाद पुन: ब्याज दर स्प्रेड बढ़ जाता है, विशेषत: तब जब अपस्फीति और तीव्र मंदी की स्थिति भी बनी हुई हो।

मुक्त पूँजी संचलन और बैंकिंग संकट

2.87 आर्थिक साहित्य ने भी अपेक्षाकृत मुक्त पूँजी संचलन और बैंकिंग संकटों की घटना के बीच एक आश्चर्यजनक सहसंबंध पाया है। ऐतिहासिक रूप से अत्यधिक अंतरराष्ट्रीय पूँजी संचलन की अवधियों के बाद अंतरराष्ट्रीय बैंकिंग संकट पैदा हुए हैं। एक और आश्चर्यजनक सहसंबंध मुद्रास्फीति और चूक के बीच रहा है। हाल ही में बाह्य ऋण के अत्यधिक निर्माण और पतन को प्रेरित करने वाले, नैतिक संकट द्वारा प्रेरित निवेश बैंक रन और मुद्रा के मूल्यह्रास के तुलन-पत्र संबंधी निहितार्थ वित्तीय संकट के प्रमुख कारणों के रूप में उभरे हैं। मुद्रा संकटों के लिए इन तीन स्पष्टीकरणों के अतिरिक्त, संक्रामकता के प्रभाव भी हैं। इसके अलावा, एक देश के द्वारा अवमूल्यन उसके व्यापार में साझेदारों को प्रतियोगात्मकता की हानि से बचने के लिए अवमूल्यन करने की प्रेरणा दे सकता है। वित्तीय सहसंबंध जैसे अन्य माध्यम भी संक्रामकता के प्रभावों के प्रसार में सहायक हो सकते हैं (कैल्वो और रेनहार्ट, 1996; ऐशेनग्रीन *ईटी एएल.*, 1995)। वित्तीय संकटों का सदैव एक अंतरराष्ट्रीय आयाम भी रहा है जैसा कि मोर्गनस्टेर्न (1959), किंडिलबर्गर (1978) और बोर्डो (1986) ने दर्शाया है। संक्रामकता त्वरित रूप से परिसंपत्ति बाजारों के माध्यम से, अंतरराष्ट्रीय बैंकिंग के माध्यम से तथा मौद्रिक मानकों के माध्यम से फैल जाती है। शेयर बाजार के पतन और बैंकिंग आतंक अनेक देशों में मूल आघात के कुछ ही महीनों के भीतर घटित हुए हैं।

मुद्रावादी आयाम

2.88 मुद्रावादी साहित्य में एक अतिरिक्त माध्यम की भी चर्चा है कि बैंक आतंकों को संबद्ध करनेवाले वित्तीय संकट कैसे कुल अर्थव्यवस्था में तीव्र गिरावट को प्रेरित कर सकते हैं। फ्रायडमैन और स्क्वाट्र्ज (1963) प्रलेखों द्वारा प्रमाणित करते हैं कि किस प्रकार अमेरिका में बैंक आतंकों ने जमाकर्ताओं की जमाराशियों से बाहर आकर मुद्रा की ओर अग्रसर होने एवं बैंकों के ऋणों से बाहर आकर आरक्षित निधियों की ओर अग्रसर होने के परिणामस्वरूप मुद्रा आपूर्ति में तीव्र संकुचन को प्रेरित किया। इन संकुचनों ने आर्थिक कार्यकलाप और मूल्य स्तर में भारी गिरावटों को प्ररित किया है। 1876 से 1907 के बीच के संकटों तथा महान मंदी सहित 1876 से 1970 तक की अवधि के दौरान घटित अधिकांश संकटों के लिए ऊपर वर्णित कारण दिये जा सकते हैं।

पहली, दूसरी और तीसरी पीढ़ी के मॉडल

2.89 क्रुगमैन (1979) द्वारा तैयार किये गये पहली पीढ़ी के मुद्रा संकट मॉडलों ने विनिमय दर व्यवस्थाओं के पतन का स्पष्टीकरण इस आधार पर दिया कि कमजोर मूलभूत तत्व विदेशी निवेशकों को संसाधन देश से बाहर खींचने के लिए प्रेरित करते हैं, तथा इसके परिणामस्वरूप, मुद्रा को बनाये रखने के लिए आवश्यक विदेशी आरक्षित निधियों का ह्रास विनिमय दर व्यवस्था के पतन के लिए मार्ग प्रशस्त करता है। पहली पीढ़ी के मॉडलों ने संकटों के मूलभूत निर्धारक तत्व के रूप में राजकोषीय असंतुलनों के संबंध में एक केंद्रीय भूमिका अदा की। परंतु पहली पीढ़ी का यह दृष्टिकोण 1991 में यूके द्वारा अनुभूत विनिमय दर संकट तथा पूर्वी एशियाई संकट को स्पष्ट नहीं कर सका क्योंकि इन संकटों में निर्णायक राजकोषीय असंतुलन विद्यमान नहीं थे।

2.90 मेक्सिको, एशिया, रूस और ब्राजील में घटित संकटों ने इस बात को रेखांकित किया कि उभरते बाजारों में वित्तीय संकटों के लिए एक संतोषजनक स्पष्टीकरण भ्रांतिजनक रहा है। दूसरी पीढ़ी के मॉडलों ने स्वयंपूरक सट्टेबाजी के आक्रमणों और बहुविध असंतुलनों की संभावना पर बल दिया। मुद्रा संकट कभी कभी ऐसी स्थिति में भी हुए जब केंद्रीय बैंकों के पास उन्हें रोकने के लिए पर्याप्त संसाधन थे (ओब्स्टफेल्ड, 1994)। केंद्रीय बैंक उस स्थिति में एक स्थिर विनिमय दर सीमा का परित्याग करने का निर्णय कर सकते हैं जब उसे अपनाने के लिए बेरोजगारी की लागत बहुत अधिक हो जाती है। इस नये

दृष्टिकोण में यह अंतर्निहित है कि संकट स्वयंपूरक प्रत्याशाओं द्वारा संचालित हो सकते हैं, क्योंकि उक्त सीमा (पेग) की रक्षा करने की लागतों का अनुरक्षण किया जाएगा। एक उदाहरण 1990 के बाद के दशक के प्रारंभिक वर्षों में यूरोप में घटित घटनाएं हैं जिन्हें दूसरी पीढ़ी के मॉडलों द्वारा बड़ी हद तक स्पष्ट किया जा सकता है जो यह दर्शाते हैं कि मुद्रा संकट मजबूत मूलभूत तत्वों के बावजूद घटित हो सकते हैं जैसा कि स्वयंपूरक प्रत्याशाओं (ओब्स्टफेल्ड, 1996), सट्टेबाजी से युक्त आक्रमणों, तथा बाजार की भावना में परिवर्तनों (फ्लड और मेरियोन, 1996; फ्रैंकेल और रोज़, 1996) के मामले में है। इस मामले में, *सिक्का-ढलाई मुनाफा* कोई मुद्दा नहीं था; संबद्ध सरकारों ने निरंतर पूँजी बाजारों तक पहुँच बनाये रखी तथा मौद्रिक नीति समष्टि-आर्थिक नीति के विचारों द्वारा अधिप्रेरित थी, न कि बजट की आवश्यकताओं द्वारा। समष्टि-आर्थिक तालमेलों और निर्णयों के साथ यह नीति संबंधी चयन का मामला था। विनिमय दर व्यवस्था संबंधी संकट एक नियत विनिमय दर का बचाव करने के लिए आवश्यक मितव्ययिता और अत्यधिक बेरोजगारी का उन्मूलन करने के लिए अपेक्षित विस्तार के बीच संघर्ष के कारण हुआ, जिसने 1992 में ब्रिटेन को विनिमय दर व्यवस्था से बाहर आने के लिए विवश किया (ऐशेनग्रीन और वाइप्लोस्ज, 1993)।

2.91 दूसरी पीढ़ी के संकट मॉडलों ने विदेशी मुद्रा के यांत्रिक समापन पर नहीं, बल्कि समष्टि आर्थिक नीति की समस्याओं पर जोर दिया। इस मामले में मुद्रा संकट इसलिए हो सकता है क्योंकि समता की रक्षा करने के लिए सरकार की इच्छा के बारे में संदेह उसे ब्याज दरें बढ़ाने के लिए मजबूर करते हैं, और फिर ब्याज दरों को उच्च रखने की आवश्यकता समता का बचाव करने की लागत को ऐसे स्तर तक बढ़ा देती है कि सरकार उसे अस्वीकार्य पाती है। ओब्स्टफेल्ड ने तर्क दिया कि संकटों के साथ एक स्वयंपूरक भविष्यवाणी का सशक्त तत्व रहता है तथा जो विनिमय व्यवस्थाएं आर्थिक व्यवस्था के ध्वस्त होने के बावजूद अनिश्चित काल के लिए बनी रह सकती थीं, यदि आवश्यक रूप से यादृच्छिक सट्टेबाजी के आक्रमण झेलने के लिए विवश होती रहें तो धराशायी हो जाएंगी। परंतु बढ़ती बेरोजगारी और घरेलू मंदी का यह स्पष्टीकरण जहाँ एक ओर विनिमय दर व्यवस्था 1992 संकट के लिए उपयुक्त था, वहीं दूसरी ओर 1994 में मेक्सिको में और 1997 में पूर्वी एशिया में तथ्यों के साथ मेल नहीं खाता (चांग और वेलैस्को, 2001)। पूर्वी एशियाई संकट के दौरान अंतर्निहित सरकारी गारंटियाँ थीं जिन्होंने नैतिक संकट द्वारा संचालित अत्यधिक निवेश को उत्प्रेरित किया। दूसरे, इन गारंटियों को स्वीकार करने के लिए सरकार की सीमित इच्छा अथवा सामर्थ्य का यह अर्थ रहा कि वे पूरी तरह विश्वसनीय नहीं हो सकते। संकट के प्रति प्रारंभिक प्रतिक्रिया में सरकार इन गारंटियों को स्वीकार करने में समर्थ थी, परंतु ऋण के बढ़ते हुए स्तर के साथ स्वयंपूरक प्रत्याशाएँ थीं कि जिन्हें सरकार अस्वीकार करती, जिसका परिणाम उत्पादन और पूँजी के स्टॉक में तीव्र गिरावट के साथ आकस्मिक पतन था। यह तीसरी पीढ़ी का मुद्रा संकट था जिसमें मुद्रा का बड़ा मूल्यह्रास हुआ जिसने तुलन-पत्रों के संबंध में तबाही की स्थिति पैदा की तथा अर्थव्यवस्था संकट के दायरे में प्रविष्ट हुई। तीसरी पीढ़ी के मॉडल ने जोर दिया कि कैसे वित्तीय दुर्बलता मुद्रा संकट को प्रेरित कर सकती है।

संकटों में विद्यमान सामान्य तत्व

2.92 तथापि, ऐसे कुछ तत्व हैं जो उभरते बाजारों में वित्तीय संकटों के लिए सामान्य हैं और हाल के वर्षों में देखे गये हैं। इन सामान्य तत्वों में शामिल हैं, चालू खाते में नाटकीय विचलन, बहुत बड़ा वास्तविक मूल्यह्रास और वास्तविक उत्पादन में उल्लेखनीय कमी। यह प्रतीत होता है कि इन सभी संकटों एवं अनेक ऐतिहासिक संकटों के स्वरूप में तीन स्थूल तत्व संबद्ध हैं।

2.93 पहला, भारी पूँजी अंतर्वाहों की अवधि के बाद निवेशकों (देशी और विदेशी - दोनों) ने प्रभावित देश में उसकी मूलभूत व्यवस्थाओं में परिवर्तन के प्रतिक्रियास्वरूप परिसंपत्तियों का अपना स्टाक घटाने का निर्णय किया। इसके लिए कारण ये माने जा सकते हैं, जैसे विनिमय दर व्यवस्था की सक्षमता के बारे में चिंताएँ जैसी कि इनमें से अधिकांश मामलों में है, बड़े राजकोषीय घाटों के बारे में चिंता जैसी रूस और ब्राजील में है, बड़े चालू खाता घाटों के बारे में चिंता जैसी थाईलैंड और ब्राजील में है; तथा अपर्याप्त पूँजीकरण और बैंकों के पर्यवेक्षण एवं अत्यधिक लीवरेज और गारंटी के कुछ संयोजन से उत्पन्न वित्तीय क्षेत्र की दीर्घकालिक दुर्बलताओं की बढ़ती हुई सुव्यक्तता (समर्स, 2000)।

2.94 दूसरा, इन उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में कुछ समय के लिए इस प्रक्रिया के जारी रहने के बाद निवेशकों ने अपना ध्यान देश में विद्यमान स्थिति का मूल्यांकन करने से हटाकर अन्य निवेशकों के व्यवहार का मूल्यांकन करने की ओर परिवर्तित किया। जैसे-जैसे बैंक रन की मानसिकता हावी होती गई, आहरण की मात्रा बढ़ती गई।

2.95 तीसरा, पूँजी के आहरण, विनिमय दर में संबद्ध तीव्र परिवर्तन तथा पूँजी तक घटी हुई पहुँच ने मूलभूत दुर्बलताओं को बढ़ा दिया, और फिर वित्तीय बाजार की प्रतिक्रिया को तेज कर दिया। विनिमय दर के वास्तविक मूल्यह्रास वास्तविक आय और व्यय को कम कर दिया। गिरती हुई विनिमय दर के संबंध में असंबद्ध बाहरी अपेक्षाओं ने पूँजी पलायन के लिए दबावों को बढ़ा दिया । तथा सबसे अधिक महत्वपूर्ण, विदेशी मुद्रा देयताओं के बढ़े हुए घरेलू मूल्य और देशी उधारकर्ताओं की घटी हुई ऋण-पात्रता ने पहले से ही अस्वस्थ वित्तीय प्रणाली का दर्जा और कम कर दिया, और फिर यह उधार में और अधिक कटौतियों एवं मूलभूत व्यवस्थाओं के और अधिक बदतर होने के लिए कारण बना ।

2.96 हाल के लगभग सभी संकटों में गंभीर बैंकिंग और वित्तीय क्षेत्र की दुर्बलताओं ने एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। सभी मामलों में सहवर्ती मौद्रिक नीति की प्रतिबद्धताओं के बिना नियत ब्याज दरें संकट से ठीक पहले से ही विद्यमान थीं। सभी घटनाओं में पारंपरिक समष्टि-आर्थिक मूल तत्व अत्यधिक मुद्रास्फीतिकारी मौद्रिक नीतियों, बड़े राजकोषीय घाटों अथवा बड़े चालू खाता घाटों के रूप में भी विद्यमान थे। उक्त प्रत्येक संकट में सरकार की अथवा निजी क्षेत्र की बड़ी अल्पावधि देयताओं सहित राष्ट्रीय तुलन-पत्र संबंधी दुर्बलताएँ महत्वपूर्ण तत्व रहीं।

2.97 संक्षेप में, वित्तीय संकटों के अनेक कारणों में महत्वपूर्ण कारण हैं : अधारणीय समष्टि-आर्थिक नीतियों (बड़े चालू खाता घाटों और अधारणीय लोक ऋण के साथ) का मिश्रण, बड़े पूँजीगत अंतर्वाह और तुलन-पत्र संबंधी दुर्बलताएँ, तथा विभिन्न राजनैतिक और आर्थिक बाधाओं के कारण नीतिगत निक्रियता सहित, अत्यधिक ऋण वृद्धि। कुछ वित्तीय संकटों में मुद्रा और परिपक्वता की असमानताएँ एक मुख्य विशेषता थीं, जबकि अन्यों में बैंकिंग क्षेत्र के तुलन-पत्र-बाह्य परिचालन प्रमुख हैं। वित्तीय संकटों के कारणों के विश्लेषण से विदित होता है कि यद्यपि प्रेरक बिंदु अलग-अलग रहे हैं, फिर भी वित्तीय उथल-पुथल की प्रत्येक घटाना में कुछ सामान्य सूत्र भी विद्यमान हैं : पहला, ऋण का अत्यधिक उपयोग; दूसरा, ऋण मानकों का एक स्पष्ट न्यूनीकरण; और तीसरा, लीवरेज पर भारी निर्भरता। संस्थागत दुर्बलताएँ विशिष्ट रूप से संकट को गहरा बना देती हैं और संकट के समाधान को जटिल बना देती हैं। दिलालियेपन और पुनर्संरचना के ढाँचे प्राय: दोषपूर्ण हैं तथा वित्तीय संस्थाओं और निगमों के लिए प्रकटीकरण और लेखांकन के नियम भी कमजोर हैं। कई वित्तीय संकट, विशेष रूप से नियत विनिमय दरों से युक्त देशों में घटित संकट दुहरे संकटों के रूप में परिवर्तित होते हैं जब उधारकर्ताओं अथवा स्वयं बैंकों के विदेशी मुद्रा एक्सपोजरों के माध्यम से बैंकिंग क्षेत्र की समस्याओं को बढ़ाते हुए मुद्रा का मूल्यह्रास किया जाता है (लीवेन और वैलेन्शिया, 2008)।

संकट के प्रभाव

2.98 वित्तीय संकट विनाशकारी और संक्रामक हो सकते हैं तथा प्राय: इनके कारण अर्थव्यवस्थाएँ गहन मंदी और तीव्र चालू खाता विपर्ययों का अनुभव करती रही हैं। अधिकांश समष्टि-आर्थिक और वित्तीय परिवर्तियों (वैरियबल्स) ने मंदी के दौरान चक्रीयता के अनुकूल व्यवहार दर्शाया, केवल दो मुख्य नीति-संबंधी परिवर्तियों - अल्पावधि ब्याज दरों और राजकोषीय व्ययों - को छोड़कर जिन्होंने मंदियों के दौरान प्राय: प्रतिचक्रीय रूप में व्यवहार किया। पिछले 150 वर्षों में घटित वित्तीय संकटों के प्रभाव के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि अनेक माध्यमों ने वित्तीय संकट, जोखिम विमुखता में संबद्ध वृद्धि और आगामी मंदी ने समष्टि-अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया है। वित्तीय और समष्टि-आर्थिक परिवर्तियों ने संपदा और प्रतिस्थापन प्रभावों के माध्यम से, और फर्मों और घर-परिवारों के तुलन-पत्रांट पर पड़े प्रभावों के माध्यम से घनिष्ठतापूर्वक परस्पर क्रिया की (ब्लैनकैर्ड और फिश्चर, 1989; ओब्स्टफेल्ड और रोगोफ, 1999)।

2.99 यह पाया गया कि मंदी की स्थितियों में प्राय: निवेश, औद्योगिक उत्पादन, आयातों, तथा आवास और शेयरों की कीमतों में भारी कमियों, उपभोग और निर्यातों में मामूली गिरावटों एवं रोजगार की दरों में कुछ कमी विद्यमान थीं। किसी भी वित्तीय संकट के बाद अधिकांश देशों ने सामान्यत: कंपनी और सरकारी बांड दरों (दोनों) में वृद्धि का अनुभव किया जो जोखिम प्रीमियमों में बढ़ोतरी को दर्शाता है। उधार की लागत में परिणामी वृद्धि ने निवेश की गतिविधि को प्रभावित किया। ऋण की उपलब्धता में भारी कमी देखी गई। चलनिधि की कमियों ने न केवल ऋण की कीमत को, बल्कि उपलब्ध मात्रा को भी प्रभावित किया क्योंकि वित्तीय संस्थाओं ने कीमत का विचार किये बिना ऋण की राशनिंग की। ऋण प्रदान करने के मामले में बैंक सतर्क रहे। इसके अलावा, आर्थिक मंदी और निम्नतर माँग के वास्तविक प्रभावों ने राजस्व के नकदी प्रवाहें पर असर डाला जिसके कर्ज भुगतान क्षमता और समग्र लाभप्रदता पर अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़े। आम तौर पर वित्तीय संकटों का अनुभव करनेवाले देशों ने विनिमय दर संबंधी

अभूतपूर्व उतार-चढ़ाव देखे। इन गतिविधियों का भी आर्थिक संस्थाओं के तुलन-पत्रों और कर्ज भुगतान क्षमता पर प्रभाव रहा।

2.100 कुछ वित्तीय संकटों का वित्तीय क्षेत्र से बाहर अल्प प्रभाव रहा, जैसे 1987 का वाल स्ट्रीट पतन, परंतु अन्य संकटों का शेष अर्थव्यवस्था में संवृद्धि पर भारी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा । पिछले 120 वर्षों में औसतन संकटों के बाद आर्थिक मंदी दो से तीन वर्ष तक रही तथा उनकी लागत जीडीपी के 5 से 10 प्रतिशत तक थी (बोर्डो *ईटी एएल.,* 2001)। दुहरे संकट (बैंकिंग और मुद्रा -दोनों) का सामान्यत: परिणाम उत्पादन की भारी हानि रहा। संकटों के साथ मेल खानेवाली मंदियाँ उन मंदियों से कहीं अधिक तीव्र पाई गईं जिन्होंने संकटों के साथ मेल नहीं खाया। प्राय: तीव्र वित्तीय संकटों के नतीजों की तीन विशेषताएँ रहीं । पहली, परिसंपत्ति बाजार के पतन गहरे और दीर्घकालिक थे। आवासों की वास्तविक कीमत की गिरावटें छह वर्षों तक व्याप्त रहीं तथा औसतन 35 प्रतिशत रहीं, जब कि शेयरों की कीमतों में गिरावट लगभग साढ़े तीन वर्षों तक औसतन 55 प्रतिशत रही। दूसरे, बैंकिंग संकटों का परिणाम उत्पादन और रोजगार में गंभीर कमी के रूप में रहा। बेरोजगारी की दर चक्र के अवरोह चरण में औसतन 7 प्रतिशत अंक बढ़ी, जो औसतन चार वर्ष से अधिक समय तक जारी रही। उत्पादन 9 प्रतिशत से भी अधिक औसत (शीर्ष से गर्त तक) से गिरा। मंदी की अवधि औसतन लगभग दो वर्ष की थी जो बेरोजगारी की अवधि की तुलना में काफी कम थी। तीसरे, सरकारी ऋण का वास्तविक मूल्य तेजी से बढ़ा, जिसकी विश्व युद्ध II के बाद की प्रमुख घटनाओं में 86 प्रतिशत के औसत से वृद्धि हुई (रेइनहार्ट और रोगोफ, 2008)। ऋण की वृद्धियों के प्रमुख प्रेरक थे कर राजस्वों में अपरिहार्य गिरावट जो सरकारों ने गहरे और दीर्घकालिक उत्पादन संकुचनों एवं अवनति को कम करने के उद्देश्य से अकसर अपनाई गई महत्वाकांक्षी प्रतिचक्रीय राजकोषीय नीतियों के फलस्वरूप झेला।

2.101 वित्तीय संकट के परिणामस्वरूप, ऋण के सर्वाधिक सामान्य स्रोत वाणिज्य बैंकों ने आम तौर पर अधिक कठोर ऋण मानकों को लागू किया तथा ब्याज दर स्प्रेडों और शुल्क को भी बढ़ा दिया। इसके अलावा, व्यवसाय और घरेलू क्षेत्रों (दोनों) में बिगड़ रही वित्तीय स्थितियों ने व्यवसाय उद्यमों की ऋणपात्रता को घटा दिया तथा इस प्रकार ऋण तक उनकी पहुँच को बाधित कर दिया। वित्तीय संकट का अर्थ वित्तीय बाजारों का खराब कार्यचालन होता है। वित्तीय बाजारें के अपर्याप्त कार्यनिष्पादन ने नई फर्मों के सीमित प्रवेश, फर्मों में निम्न उत्पादन, तथा व्यावसायिक उद्यमों के लिए अधिकाधिक वित्तीय बाधाओं का मार्ग प्रशस्त किया (आन्ना और रोबर्ट, 2005)। मिलेसी-फेरेटी और राज़ीन (1998) के अनुसार उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में मुद्रा संकटों और परिणामी मुद्रा के मूल्यों में भारी गिरावट ने सामान्यत: उत्पादन में तीव्र गिरावटों को प्रेरित किया। बैंक रन मुद्रा संकटों की एक सामान्य विशेषता रहे हैं जहाँ 62 प्रतिशत संकटों ने कुल जमाराशियों में अस्थायी तौर पर तीव्र कमियों का अनुभव किया। मुद्रा संकट के साथ संबद्ध बैंकिंग संकट का परिणाम बड़े पैमाने पर पूँजी पलायन था जिसने मुद्रा के मूल्य में भारी गिरावट को रोकने के लिए बैंकिंग प्रणाली को सहायता प्रदान करने एवं पूँजी नियंत्रण लागू करने के लिए हस्तक्षेप हेतु सरकार को विवश किया। तीव्र बैंक रन प्राय: प्रणाली-व्यापी रहे हैं, तथापि कमजोर बैंकों से सुदृढ़ बैंकों की ओर प्रणाली के भीतर गुणवत्ता-अभिमुख प्रभाव सामान्यत: देखा गया है। 1997 में इंडोनेशियाई संकट के दौरान अक्तूबर और दिसंबर 1997 के बीच निजी राष्ट्रीय बैंकों ने जमाराशियों में 35 ट्रिलियन रुपये की हानि उठाई, जबकि राज्य-स्वामित्व वाले बैंकों तथा विदेशी और संयुक्त उद्यम वाले बैंकों को क्रमश: 12 और 2 ट्रिलियन रुपये का लाभ हुआ (बाटूनंगार, 2002)।

2.102 वित्तीय संकट और परिणामी मंदी ने अकसर आयातों में कमी का मार्ग प्रशस्त किया। वित्तीय प्रणाली, विशेष रूप से बैंकिंग प्रणाली की दुर्बलता अथवा उसका पतन समग्र व्यापार को प्रभावित करते हुए देश की निर्यात क्षमता को कमजोर कर देता है। मुद्रा संकट के दौरान विनिमय दर का परिदृश्य भी अधिक अनिश्चित बन जाता है। तीव्र मुद्रा मूल्यह्रास के कारण उपभोक्ता मुद्रा धारिताओं की वजह से संपदा की हानियाँ उठाते हैं, जिससे उपभोक्ता अपना उपभोग कम करने के लिए विवश हो जाते हैं। इसके अलावा, वित्तीय संकटों (मुद्रा संकटों, बैंकिंग संकटों अथवा दोनों सहित) ने विनिमय दर के साथ-साथ व्यापार को भी प्रभावित किया है। रेइनहार्ट (1999) ने बताया कि वित्तीय संकट सामान्यत: पूँजी खाता विपर्यय ("आकस्मिक विराम") का कारण बने तथा इन्होंने आर्थिक मंदी को प्रेरित किया। मेंडोज़ा (2001) ने दर्शाया कि दोषपूर्ण ऋण बाजारों वाली अर्थव्यवस्था में ये आकस्मिक विराम संतुलन का परिणाम हो सकते हैं। आर्थिक मंदी ने न केवल घरेलू माँग को, बल्कि कुल उत्पादन को भी घटा दिया। अनेक लातीन अमेरिकी देशों (उदा. मेक्सिको, ब्राजील और वेनेजुएला) ने 1980 के बाद के दशक में ऋण संकटों के दौरान अपने विदेशी कर्ज की चुकौती को रोक दिया था।

2.103 पहले के मॉडलों में संकटों को कुछ वास्तविक परिणाम देने वाली मौद्रिक घटनाओं के रूप में माना गया था। तथापि, वित्तीय संकटों के इतिहास के विश्लेषण से यह विदित होता है कि अधिकांश मंदियों के अधिकांश भाग का कारण वित्तीय संकट रहे हैं। एक महत्वपूर्ण उदाहरण महान मंदी है, जिसके पहले अनेक देशों में बैंक रन और शेयर बाजार के पतन हुए हैं। सर्वाधिक तीव्र आतंक की घटनाएँ 1857, 1873, 1893, 1907 और 1930-33 में हुई थीं जिनके परिणामस्वरूप सर्वाधिक तीव्र आर्थिक संकुचन 1857-58, 1873-79, 1893-94, 1907-08 और 1929-33 में हुए थे।

2.104 समाहार के तौर पर, वित्तीय संकट प्रारंभ से ही आर्थिक परिदृश्य का अंग रहे हैं। समय के चलते वित्तीय संकटों की परिभाषा और वर्गीकरण विकसित हुआ है। संकट संबंधी कालक्रम यह सूचित करते हैं कि वित्तीय संकट न केवल वर्तमान युग में, बल्कि पहले की अवधियों में भी दीर्घकालिक समस्याएँ रहे हैं। वित्तीय संकटों के इतिहास का विश्लेषण यह बताता है कि वित्तीय क्षेत्र में दुर्बल वास्तविक अर्थव्यवस्था में असंतुलन व्यवस्था को कमजोर करता है तथा अंतरराष्ट्रीय मुद्रा और पूँजी को प्रभावित करता है, तथा परिसंपत्तियों का गलत कीमत-निर्धारण सामान्यत: संकट में योगदान करता है। वित्तीय संकटों के बाद की अवधि में सामान्यत: तीव्र आर्थिक संकुचन हुए हैं।

III. हाल का संकट पूर्व के संकटों से कैसे भिन्न है

2.105 हाल का वैश्विक वित्तीय संकट, जो एक आर्थिक संकट में परिणत हो गया था, 21वीं शताब्दी का पहला बड़ा वित्तीय संकट है तथा यह समझना आवश्यक है कि यह 20वीं शताब्दी के संकटों से किस प्रकार भिन्न है। एक ओर बड़ी बहस जारी है कि विश्व की व्यवस्था को ठीक रखने के लिए कौन सी नीति अपनाई जाए, वहीं इस बात के भी स्पष्ट संकेत हैं तथा इस पर मतैक्य भी है कि यह वैश्विक संकट भौगोलिक व्याप्ति और सघनता के तौर पर 1930 के बाद के दशक की महान मंदी के उपरांत सबसे बुरा संकट है। सभी उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के एक समकालिक मंदी में होते हुए यह अनुमान किया जाता है कि दूसरे विश्वयुद्ध के बाद पहली बार वैश्विक जीडीपी का संकुचन हुआ है। यद्यपि हाल के संकट की तुलना महान मंदी के साथ की जा रही है, तथापि यह संकट उससे भिन्न है क्योंकि यह सचमुच पहला वैश्विक संकट है। अमेरिका में अथवा अन्यत्र उद्भूत संकटों में यह पहला संकट है जिसने सारी दुनिया को प्रभावित किया है जो महान मंदी भी नहीं कर सकी थी (सारणी 2.12)। अमेरिका और यूरोप, जो अपनी संवृद्धि के इंजन के रूप में वित्तीय क्षेत्र पर निर्भर थे, उक्त संकट के केंद्र में थे। एशिया इसलिए प्रभावित हुआ क्योंकि उनके निर्यातों के लिए विकसित विश्व से माँग में तीव्र कमी आई थी। पूर्वी यूरोप को पूँजी प्रवाहों के उलटाव से आघात पहुँचा, तथा अफ्रीकी और दक्षिण अमेरिकी अर्थव्यवस्थाएँ पण्य कीमतों में भारी गिरावट और उनके व्यापार की शर्तों में आई गिरावट से पीड़ित हुईं । भारत महान मंदी के दौरान एवं हाल के वित्तीय संकट के दौरान भी प्रभावित हुआ। तथापि, भारत एक ब्रिटिश उपनिवेश था तथा इस कारण महान मंदी के दौरान उसपर पड़े प्रभाव का स्वरूप अधिक जटिल था (बॉक्स II.6)।

2.106 संकटों के बीच तुलनाएँ सामान्यत: उक्त संकटों की अवधि और उनकी गंभीरता पर आधारित हैं (बोर्डो *ईटी एएल.*, 2001, सेचेट्टी *ईटी एएल.*, 2009)। संकट की अवधि उन तिमाहियों की संख्या के रूप में परिभाषित है जो उत्पादन को अपने संकट-पूर्व स्तर को पुन: प्राप्त करने में लगती है। संकट की गंभीरता जीडीपी में शिखर से गर्त तक (पीक-टू-ट्रफ) प्रतिशत की गिरावट के रूप में परिभाषित है; इसके अतिरिक्त, संकट की गंभीरता संकट की लंबाई में जीडीपी में संचित हानि द्वारा सिद्ध की जाती है जो उसके शीर्ष (संकट-पूर्व) स्तर के भाग के रूप में लिया गया है। अनुमान यह बताते हैं कि जबकि हाल का संकट कुछ पिछले संकटों के साथ संकट की अवधि के मामले में तुलनीय है, संचित जीडीपी हानि के तौर पर हाल के संकट की लागत निस्संदेह महान मंदी अथवा किसी भी अन्य संकट

सारणी 2.12: वैश्विक संकट जो अमेरिका में उत्पन्न हुए

	प्रभावित देश	
	उन्नत	विकासशील
1	2	3
अक्तूबर 1907 का न्यूयार्क आतंक	अमेरिका, डेनमार्क, फ्रांस, इटली, जापान, स्वीडन	मेक्सिको
1929 की महान मंदी	अमेरिका, फ्रांस, इटली, बेल्जियम, फिनलैंड, जर्मनी, ग्रीस, पुर्तगाल, स्पेन, स्वीडन	ब्राजील, भारत, मेक्सिको, अर्जेन्टीना, चीन
2007 का वैश्विक वित्तीय संकट	अमेरिका, यूके, यूरो क्षेत्र, जापान	एशिया, अफ्रीका, लातीन अमेरिका और पूर्वी यूरोप

बॉक्स II.6
महान मंदी और भारत

1929 की महान मंदी का भारत पर बहुत तीव्र प्रभाव पड़ा, जो उस समय ब्रिटेन का उपनिवेश था। भारत उन देशों में से एक है जिन्होंने महान मंदी का सबसे पहले आघात झेला था। उक्त मंदी अमेरिका में प्रारंभ होने के केवल एक तिमाही के बाद भारत में 1929 की लगभग चौथी तिमाही के आसपास प्रारंभ हुई। भारत प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष (दोनों) माध्यमों से प्रभावित हुआ। पहले, अमेरिका में उत्पन्न महान मंदी ने भारत को सीधे प्रभावित किया क्योंकि भारतीय अर्थव्यवस्था व्यापार और वित्तीय प्रवाहों के लिए अधिक खुली हुई थी। अनुमान यह निर्दिष्ट करते हैं कि विश्व व्यापार में स्वतंत्रता-पूर्व भारत का अंश लगभग 10 प्रतिशत था, जो हाल के समय के लगभग 1 प्रतिशत के समान नहीं था। दूसरे, भारत एक ब्रिटिश उपनिवेश होने के कारण अप्रत्यक्ष रूप से भी प्रभावित हुआ क्योंकि युनाइटेड किंगडम उक्त मंदी द्वारा आहत हुआ था। चूँकि भारतीय अर्थव्यवस्था ने उपनिवेशीय संरक्षण के अंतर्गत कार्य किया, इसलिए समूची समस्या में और जटिलता बढ़ गई। कृषि क्षेत्र और रेलवे सर्वाधिक प्रभावित हुए थे।

भारत सरकार द्वारा अपनाई गई अहितकारी नीतियों तथा अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संकट के कारण पण्यों की कीमतें बढ़ गईं। जो किसान पहले खाद्य फसलों की खेती करते थे, वे युनाइटेड किंगडम में स्थित वस्त्र मिलों की माँगें पूरी करने के लिए नकदी फसलों की खेती की ओर अग्रसर हुए। ऊँची कीमतों के कारण किसान भारत में अपने उत्पाद नहीं बेच सकते थे; और न ही वे पण्यों का निर्यात युनाइटेड किंगडम में कर सकते थे जिसने भारत से आयातों को प्रतिबंधित करते हुए एक सुरक्षात्मक नीति को अपनाया था। चावल और गेहूँ जैसे खाद्यान्नों की तरह, नकदी फसलों का उपयोग निजी उपभोग के लिए नहीं हो सकता था। देश में बनी वस्तुओं की अल्प बिक्री और सीमित निर्यातों के कारण पण्यों का अंबार लग गया तथा नकदी का प्रवाह प्रतिबंधित कर दिया गया ।

1929-1937 की अवधि के दौरान निर्यातों और आयातों में भारी गिरावट आई, जिससे समुद्र मार्ग से किया जाने वाला द्वारा अंतरराष्ट्रीय व्यापार कमजोर पड़ गया। निर्यातों और आयातों में गिरावट के कारण तथा उसके द्वारा वस्तुओं के परिवहन में आई कमी से रेलवे के राजस्व में अत्यंत गिरावट आई। वर्ष 1930-31 और 1931-32 के लिए सभी व्यय रेलवे प्रारक्षित निधि में से अदा किये गये।

ब्रिटिश भारत में मौजूदा आयातें और निर्यातों के अतिरिक्त, भारत के धन के विशिष्ट भाग का उपयोग प्रशासन, सेना के रखरखाव, युद्ध व्यय, सेवानिवृत्त अधिकारियों के पेंशन तथा अपनी कॉलोनी का अनुरक्षण करने के लिए ब्रिटेन द्वारा किये गये "गृह प्रभार" कहलाने वाले अन्य व्ययों के लिए किया जाता था। अंतरराष्ट्रीय व्यापार में भीषण गिरावट और प्राप्त होनेवाले अत्यल्प राजस्व के कारण भारत को तीव्र भुगतान-संतुलन के संकट का सामना करना पड़ा। भारत केवल अपने अदृश्य आयातों के लिए, गृह प्रभारों के माध्यम से अपनी स्वर्ण आरक्षित निधियों का विक्रय करके भुगतान कर सका। वर्ष 1931-32 से 1934-35 तक भारत ने 2,330 मिलियन रुपये के मूल्य के स्वर्ण का निर्यात किया।

सभी कृषिप्रधान देशों के समान भारत ने भी व्यापार में गिरावट का अनुभव किया। आयात की कीमतों की तुलना में निर्यात की कीमतें अधिक तेजी से घटीं। अधिकांश कृषिप्रधान देशों, जैसे आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, ब्राजील और डेनमार्क ने अपनी विनिमय दरों में कमी लाकर प्रतिक्रिया जताई। तथापि, ब्रिटिश राज ने ऐसी कार्रवाई के क्रम का विकल्प नहीं चुना। इस अवधि के दौरान एक और संस्तुत नीतिगत कार्रवाई "सरकारी व्यय में वृद्धि" हो सकती थी। परंतु उपनिवेशीय सरकार ने इसके ठीक विपरीत किया, और महान मंदी की घटना को और भी अधिक तीव्र बना दिया (मणिकुमार, 2003)।

महान मंदी के दौरान भारत सरकार की नीतियों के परिणामस्वरूप देश भर में व्यापक विरोध-प्रदर्शन हुआ। ब्रिटिश भारत में प्रचलित कठोर करों के साथ ही ऊँची कीमतों ने किसानों में असंतोष बढ़ा दिया। 1930 का नमक सत्याग्रह महान मंदी के दौरान भारी कराधान के प्रतिक्रियास्वरूप किये गये उपायों में से एक था। इसके अलावा, जैसे-जैसे राष्ट्रीय संघर्ष सघन होता गया, भारत सरकार ने एक केंद्रीय बैंक की स्थापना सहित राष्ट्रवादियों की कुछ आर्थिक माँगे स्वीकार कर लीं। तदनुसार 1934 में भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम पारित हुआ तथा 1 अप्रैल 1935 से एक केंद्रीय बैंक अस्तित्व में आया जिसके प्रथम गवर्नर सर ओसबोर्न स्मिथ थे ।

संदर्भ :

1. मणिकुमार, के. ए. (2003), '*ए कॉलोनियल इकॉनॉमी इन दी ग्रेट डिप्रेशन, मद्रास (1929-1937)*' , ओरिएन्ट ब्लैकस्वैन ।
2. बालचंद्रन, जी. (1996), '*जॉन बुलियन्स एम्पायर : ब्रिटेन्स गोल्ड प्रॉब्लम एण्ड इंडिया बिट्वीन दी वार्स*' ।

की ऐसी हानि से अधिक तीव्र रही है (सारणी 2.13)। यह अभूतपूर्व मौद्रिक और राजकोषीय उपायों तथा अभूतपूर्व अंतरराष्ट्रीय समन्वयन के बावजूद है।

अतीत में वैश्विक असंतुलन

2.107 जबकि अतीत में वैश्विक असंतुलन घटित हुए हैं, हाल की स्थिति की अनोखी विशेषता यह है कि उभरती अर्थव्यवस्थाओं ने उन्नत देशों में घाटे का वित्तपोषण करने के लिए ऋणदाता का काम किया है। अतीत में इसके विपरीत परिदृश्य देखा गया जब पूँजी धनी राष्ट्रों से निर्धन राष्ट्रों में गई। उदाहरण के लिए, स्वर्ण मानक युग के दौरान (1914 तक) पूँजी का एक बड़ा प्रवाह औद्योगिक देशों (अधिकत: युनाइटेड किंगडम और फ्रांस) से (तत्कालीन) उभरते बाजारों, जैसे कनाडा और आस्ट्रेलिया में गया जहाँ विनिमय दरों में

सारणी 2.13: वित्तीय संकटों की अवधि और गहराई

अवधि	वर्षों में संकट की औसत अवधि	संकट की औसत गहराई (चरम स्थिति के प्रति सापेक्ष संचित ज़ीडीपी हानि प्रतिशत में)
1	2	3
1880-1913 (1890 का बैरिडग संकट, 1907 का न्यूयार्क आतंक शामिल हैं)	2.4	9.8
1919-1939 (महान मंदी की अवधि शामिल है)	2.4	13.4
1945-1971	1.8	5.2
1973-1997 (1980 के बाद के दशक का लातीन अमेरिकी संकट, 1992 का ईआरएम संकट तथा 1997-98 का एशियाई और रूसी संकट शामिल हैं)	2.5-2.6	7.8-8.3
2007-08 (2008 की वैश्विक मंदी)	2.5	20

स्रोत : बोर्डो *ईटी एएल.*, 2001; सेच्चेट्टी *ईटी एएल.*, 2009 से प्राप्त अनुमान ।

उल्लेखनीय स्थिरता थी तथा उन अर्थव्यवस्थाओं के अव्यवस्थित रूप से खुलने का कोई साक्ष्य नहीं था (सारणी 2.14)। इसी प्रकार का पूँजी प्रवाह 1990 के बाद के दशक में देखा गया जब उन्नत देशों ने एशिया, लातीन अमेरिका और रूस में स्थित उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में निवेश किया था। तथापि, इनमें से अनेक उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं ने अपने कर्ज की संरचना के कारण तीव्र वित्तीय ऋण संकटों का सामना किया और इस प्रकार उन्होंने अव्यवस्थित रूप में अपने खुलने का संकेत दिया यद्यपि ऋणदाताओं को इससे कोई खास कष्ट नहीं हुआ। इसके अतिरिक्त ऐसी भी घटनाएँ थीं जहाँ पूँजी ने उभरते बाजारों के भीतर अथवा उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के बीच संचलन किया। 1970 के बाद के दशक में विश्व की अर्थव्यवस्था में एक प्रमुख व्यापार की शर्तों का आघात घटित हुआ जिसके अंतर्गत तेल-आयातक देशों (अधिकांशत: लातीन अमेरिका में) से संसाधनों का एक निवल अंतरण खाड़ी के तेल-निर्यातक देशों में हुआ। तथापि यह अनवाइंडिंग किसी के लिए भी सुचारु नहीं थी। इसके विपरीत,

सारणी 2.14: वैश्विक असंतुलनों की पिछली घटनाएँ

युग	क्षेत्र		निम्नलिखित के लिए व्यवस्थित मोचन	
	ऋणदाता	ऋणी	ऋणदाता	ऋणी
1	2	3	4	5
स्वर्ण मानक (<1914)	उन्नत	उभरता हुआ	हाँ	हाँ
1970 के बाद का दशक	उभरता हुआ	उभरता हुआ	नहीं	नहीं
1980 के बाद का दशक	उन्नत	उन्नत	कुछ	हाँ
1990 के बाद का दशक	उन्नत	उभरता हुआ	हाँ	नहीं
2000 के बाद का दशक	उभरता हुआ	उन्नत	?	?

स्रोत : यूरोपीय केंद्रीय बैंक आकेशनल पेपर सिरीज़, जनवरी 2008।

1980 के बाद के दशक में जापान, जर्मनी और नेदरलैंड्स में स्थित आधिक्यों द्वारा वित्तपोषित अमेरिकी घाटों की व्याप्ति ने असंतुलनों के अपेक्षाकृत व्यवस्थित रूप में अनवाइंडिंग का साक्षात्कार किया जब अमेरिकी डॉलर का क्रमिक रूप से अवमूल्यन किया गया (ब्रैक *ईटी एएल.*, 2008)।

2.108 आज विश्व में कोई भी देश - चाहे उन्नत देश हो अथवा उभरती बाजार अर्थव्यवस्था - उक्त परिणामों से अछूता नहीं है, हालांकि प्रभाव विभिन्न राष्ट्रों के बीच भिन्न-भिन्न है। वास्तव में, हाल के संकट को या तो एक 'उन्नत देश' का संकट, एक 'उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं' का संकट, एक सही मायने में 'वैश्विक संकट' या इन सभी का सम्मिश्रण माना जा सकता है। अत: अध्ययनों में अधिकांशत: हाल के संकट की तुलना पिछले उन्नत देशों के संकटों, निकट अतीत के उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के संकटों, तथा 1930 के बाद के दशक की महान मंदी के साथ करने का प्रयास किया गया है।

हाल का संकट बनाम उन्नत देशों के संकट

2.109 प्रत्येक वित्तीय संकट की कुछ सुस्पष्ट विशेषताएँ होती हैं। फिर भी एक तुलना यह स्पष्ट कर देती है कि इनमें से अधिकांश: संकट कभी-कभी उल्लेखनीय समानताएँ दर्शाते हैं । अधिकांश ऐतिहासिक संकटों से पहले वित्तीय उदारीकरण किया गया था (कैमिनस्की और रेइनहार्ट, 1999)। जहाँ एक ओर वर्षों से वित्तीय उदारीकरण अमेरिकी अर्थव्यवस्था की एक अंतर्निहित विशेषता रही है, वहीं दूसरी ओर हाल के संकट से पहले उल्लेखनीय घटना सामान्यत: विभिन्न वित्तीय आधिक्यों के रूप में देखी गई जो विनियामक दायरे से बाहर चली गई । इसके अतिरिक्त, वर्तमान संकट परिसंपत्तियों की कीमतों के व्यवहार, ऋण विस्तार, ऋण संचयन और चालू खाता घाटों के संबंध में उन्नत देशों के पिछले संकटों के साथ कई समानताएँ दर्शाता है, यद्यपि उनकी सीमा भिन्न-भिन्न है।

2.110 रेइनहार्ट और रोगोफ (2008) ने हाल के अमेरिकी सब-प्राइम संकट की तुलना युद्ध के बाद की अवधि से 18 अन्य बैंक-केंद्रित उन्नत देशों के वित्तीय संकटों के साथ की। संकट की इन घटनाओं में शामिल हैं, स्पेन के पाँच बडे संकट (1978-79), नॉर्वे (1987-88), फिनलैंड (1990-93), स्वीडन (1990-93) और जापान (1992-93) के संकट जो एक विस्तारित अवधि के लिए आर्थिक कार्यनिष्पादन में बड़ी गिरावटों (मंदियाँ) के साथ संबद्ध बड़े

परिमाण के दीर्घकालिक वित्तीय संकट हैं। इस सूची में उन्नत देशों में घटित 13 अन्य बैंकिंग और वित्तीय संकट भी शामिल हैं जो सीमित प्रभाव के साथ अपेक्षाकृत अधिक नरम थे; इनमें सम्मिलित हैं आस्ट्रेलिया (1989), कनाडा (1983), डेनमार्क (1987), फ्रांस (1994 में क्रेडिट लायोनेज बेल-आउट), जर्मनी (1977), ग्रीस (1991), आइसलैंड (1985), इटली (1990), न्यूजीलैंड (1987), युनाइटेड किंगडम (1973, 1991, 1995 का बैरिडग्स इन्वेस्टमेंट बैंक संकट), तथा अमेरिका के संकट (1984 का बचत और ऋण संकट)।

2.111 वास्तविक प्रति व्यक्ति जीडीपी पर प्रभाव के संबंध में औसत संवृद्धि की कमी बड़े पाँच संकटों के लिए लगभग 5 प्रतिशत अंक तथा उन्नत देशों के अन्य बैंकिंग संकटों के लिए लगभग 2-3 प्रतिशत अंक रही है। संचयी उत्पादन की हानियाँ उक्त देशों के बीच भिन्न-भिन्न रही हैं। हाल के संकट के लिए जीडीपी की संचित हानि सामान्यत: कुछ उन्नत देशों के संकटों[7] में ऐसी हानियों से अधिक होने का अनुमान है, यद्यपि अवधि के तौर पर यह अनुमान है कि हाल का संकट उन्नत देशों के अन्य संकटों से अपेक्षाकृत कम कठोर है (सारणी 2.15)।

2.112 उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के बीच प्रारंभिक स्थितियों का जहाँ तक संबंध है, हाल के संकट के साथ तुलना करने पर इनमें से अधिकांश संकटें के निर्माण में असंतुलन छोटे थे। उन्नत देशों में बैंकिंग संकटों के लिए औसत चालू खाता शेष संकटों के अवसर पर विरले ही जीडीपी

सारणा 2.15: संपूर्ण संकट : स्थूल संकेतक

(प्रतिशत में)

संकट/देश	प्रारंभ दिनांक	संकट की औसत अवधि (तिमाहियों की संख्या)	संकट की औसत गहराई*	चरम स्थिति की तुलना में सापेक्ष संचित हानि	न्यूनतम वास्तविक जीडीपी संवृद्धि दर	सकल राजकोषीय लागत (जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)	चरम पर अनर्जक ऋणों का अंश
1	2	3	4	5	6	7	8
लातीन अमेरिकी संकट (1980 के बाद का दशक)							
अर्जेन्टीना	मार्च 1980	28	14.1	-44.5	-5.7	55.1	9
चिली	नवंबर 1981	21	20.2	-60.1	-13.6	42.9	35.6
कोलंबिया	जुलाई 1982	0	0.0	0.0	0.9	5	4.1
लातीन अमेरिकी संकट (1990 के बाद का दशक)							
अर्जेन्टीना	जनवरी 1995	7	6.1	-5.2	-2.8	2	17
ब्राजील	दिसंबर 1994	7	2.5	-1.9	2.1	13.2	16
मेक्सिको	दिसंबर 1994	9	10.4	-10.7	-6.2	19.3	18.9
ईआरएम संकट							
एस्तोनिया	नवंबर 1992	33	27.3	-116.8	-21.6	1.9	7
फिनलैंड	सितंबर 1991	25	11.8	-40.7	-6.2	12.8	13
नार्वे	अक्तूबर 1991	3	1.5	-0.6	2.8	2.7	16.4
स्वीडन	सितंबर 1991	16	5.8	-11.0	-1.2	3.6	13
स्पेन का बैंकिंग संकट	1977	20	–	–	0.2	5.6	-
1990 के बाद के दशक का जापानी संकट	नवंबर 1997	15	3.4	-6.7	-2	14	35
अमेरिकी बचत और ऋण संकट	1988	–	–	–	-0.2	3.7	4.1
एशियाई संकट							
इंडोनेशिया	नवंबर 1997	21	18.1	-50.7	-13.1	56.8	32.5
थाईलैंड	जुलाई 1997	23	14.9	-33.2	-10.5	43.8	33
मलेशिया	जुलाई 1997	9	11.2	-13.8	-7.4	16.4	30
कोरिया	अगस्त 1997	7	9.2	-9.3	-6.9	31.2	35
फिलीपीन्स	जुलाई 1997	6	2.7	-2.2	-0.6	13.2	20
वर्तमान वैश्विक संकट							
अमेरिका	अगस्त 2007	10	5	-20	-2.7	–	4.8
युनाइटेड किंगडम	अगस्त 2007	10	5	-20	-4.4	–	–

*: प्रतिशत में जीडीपी में शीर्ष से गर्त तक गिरावट

स्रोत : सेच्छेटी *ईटी एएल* (2009), लैवेन और वैलेन्शिया (2008) तथा आइएमएफ का डाटाबेस।

[7] 1990 के दशक के प्रारंभिक वर्षों में एस्तोनिया और फिनलैंड अपवाद हैं।

के 3 प्रतिशत से अधिक हुए, जबकि हाल के संकट से पहले अमेरिकी घाटे जीडीपी के 6 प्रतिशत से ऊपर पहुँच गए थे (सारणी 2.16, सारणी 2.3 भी देखें)। अधिकांश उन्नत देशों के बैंकिंग संकट, संकट से पहले की अवधि में आवास की कीमतों में उल्लेखनीय वृद्धियों के साथ संबद्ध थे यद्यपि यह वृद्धि अन्य घटनाओं की तुलना में 2006 के दौरान अमेरिका में काफी तीव्रतर रही है। इसके अलावा, जीडीपी के अंश के रूप में लोक ऋण, संकट से पहले के वर्षों में अमेरिका में काफी अधिक मंदगति से बढ़ा है, उस गति की तुलना में जिस गति से उसमें बड़े पाँच संकटों/विनिमय दर व्यवस्था अथवा अन्य उन्नत देशों के बैंकिंग संकट से पहले वृद्धि हुई थी। यह आवश्यक रूप से इसलिए था क्योंकि अन्य घटनाओं के असमान हाल के संकट ने निजी अमेरिकी ऋण के भारी निर्माण को देखा है।

2.113 एक और समानता वर्ष 2000 के बाद के वर्षों की तुलना में 1970 के बाद के वर्षों के दौरान पुन: निवेश होने वाले (रीसाइक्लिंग) पेट्रो डॉलरों की व्यवस्था है। 1970 के बाद के वर्षों के दौरान अमेरिकी बैंकिंग प्रणाली तेल-निर्यातक आधिक्य वाले देशों तथा लातीन अमेरिका में और अन्यत्र स्थित उभरते बाजार उधारकर्ताओं के बीच मध्यवर्ती की तरह उपस्थित थी जो अंतत: 1980 के बाद के वर्षों में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के ऋण संकटों के रूप में परिणत हुई। हाल के संकट में बड़ी मात्रा में पेट्रो डॉलर पुन: अमेरिका में प्रवाहित हो रहे थे; फिर भी कई उभरते बाजारों के चालू खाता आधिक्यों के साथ चलते हुए इन पेट्रो-डॉलरों का एक बड़ा खंड एक विकासशील अर्थव्यवस्था में पुन: निवेश किया गया जो अमेरिका के भीतर एक "विकासशील सब-प्राइम बंधक अर्थव्यवस्था" के रूप में विद्यमान थी (रेइनहार्ट *ईटी एएल.*, 2008)। इस प्रकार औद्योगिक देशों में पिछले युद्धोत्तर वित्तीय संकटों के निर्माणात्मक वर्षों के साथ अनेक गुणात्मक, समानांतर स्थितियाँ थीं, यद्यपि उनमें मात्रात्मक भिन्नताएं थीं।

सारणी 2.16: विभिन्न देशों में संकट : प्रारंभिक स्थितियाँ

	प्रारंभ दिनांक (टी)	मुद्रा संकट (हाँ/नहीं) (टी-1, टी+1)	टी-1 पर राजकोषीय शेष/ जीडीपी	टी-1 पर सरकारी क्षेत्र ऋण/ जीडीपी (प्रतिशत)	टी-1 पर मुद्रास्फीति	टी-1 पर निवल विदेशी आस्तियाँ/ एम2	टी-1 पर चालू खाता/ जीडीपी	उल्लेखनीय बैंक रन (हाँ/नहीं)	ऋण में तेजी (हाँ/नहीं)
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
लातीन अमेरिकी संकट (1980 के बाद का दशक)									
अर्जेन्टीना	मार्च 1980	हाँ	-2.7	10.2	139.7	34.2	0.6	हाँ	हाँ
चिली	नवंबर 1981	हाँ	5.0	0.0	31.2	42.2	-6.4	हाँ	हाँ
कोलंबिया	जुलाई 1982	नहीं	-2.3	–	26.3	46.0	-4.1	नहीं	नहीं
लातीन अमेरिकी संकट (1990 के बाद का दशक)									
अर्जेन्टीना	जनवरी 1995	नहीं	0.0	33.7	3.9	25.9	-2.8	हाँ	हाँ
ब्राजील	दिसंबर 1994	हाँ	0.3	23.0	2477.2	22.7	-0.1	हाँ	नहीं
मेक्सिको	दिसंबर 1994	हाँ	-2.5	27.3	8.0	18.1	-5.8	हाँ	हाँ
ईआरएम संकट									
एस्तोनिया	नवंबर 1992	हाँ	5.3	–	–	57.6	59.7	हाँ	–
फिनलैंड	सितंबर 1991	नहीं	5.6	14.0	4.9	12.7	-4.9	नहीं	नहीं
नार्वे	अक्तूबर 1991	नहीं	2.5	28.9	4.4	10.3	2.5	नहीं	नहीं
स्वीडन	सितंबर 1991	हाँ	3.4	–	10.9	4.8	-2.6	हाँ	–
1990 के बाद के दशक का जापानी संकट	नवंबर 1997	नहीं	-5.1	100.5	0.6	1.6	1.4	नहीं	नहीं
एशियाई संकट									
इंडोनेशिया	नवंबर 1997	हाँ	-1.1	26.4	6.0	21.6	-2.9	हाँ	नहीं
थाईलैंड	जुलाई 1997	नहीं	2.4	14.2	4.8	25.1	-7.9	नहीं	हाँ
मलेशिया	जुलाई 1997	हाँ	2.0	35.2	3.3	23.2	-4.4	हाँ	नहीं
कोरिया	अगस्त 1997	हाँ	0.2	8.8	4.9	15.6	-4.1	हाँ	नहीं
फिलीपीन्स	जुलाई 1997	हाँ	-0.2	–	7.1	19.0	-0.2	नहीं	हाँ
वर्तमान वैश्विक संकट									
अमेरिका	अगस्त 2007	नहीं	-2.6	60.1	2.6	1.0	-6.2	नहीं	नहीं
यूके	अगस्त 2007	नहीं	-2.6	43.0	2.8	1.4	-3.6	नहीं	नहीं

स्रोत : लैवेन और वैलेन्शिया (2008) और अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष का डाटाबेस।

2.114 उन्नत देशों के मामले में अध्ययन यह दर्शाते हैं कि वित्तीय संकटों के साथ संबद्ध मंदियाँ विशिष्ट रूप से अधिक तीव्र और दीर्घकालिक रही हैं, जबकि वित्तीय संकटों के साथ संबद्ध मंदियों से रिकवरी की गति विशिष्ट रूप से मंदतर रही है जो कमजोर निजी माँग और ऋण की समस्या से ग्रस्त थी। उन्नत देशों में अत्यधिक समकालिक मंदी की घटनाएँ अन्य मंदियों की तुलना में सामान्यत: अधिक लंबी और अधिक गहरी हैं, तथा रिकवरी बहुत कमजोर है। साथ ही, अमेरिका में होनेवाली गतिविधियों ने इन अत्यधिक समकालिक मंदियों की तीव्रता और अवधि में (दोनों मामलों में) सामान्यत: एक निर्णायक भूमिका निभाई है (अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, 2009बी)। हाल की मंदी भी अत्यधिक समकालिक है जैसी कि 1907 और 1939 की कुछ अन्य पिछली घटनाओं की स्थिति थी। अमेरिका में उपभोग में तेजी से गिरावट कई अन्य अर्थव्यवस्थाओ में बाह्य माँग में बड़ी कमियों के रूप में परिणत हुई। अत: उन्नत देशों के लिए अमेरिका में रिकवरी के महत्वपूर्ण निहितार्थ हैं।

हाल का संकट बनाम उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं का संकट

2.115 सारी दुनिया में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं ने विभिन्न संकटों का सामना किया है जो या तो क्षेत्रीय हैं - लातीन अमेरिकी और एशियाई संकट - अथवा अलग-अलग देश के संकट हैं जैसे कि अर्जेन्टीना, रूस और तुर्की में। समष्टि स्तर पर इन उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं ने अपने स्वयं के पिछले मुद्रा और वित्तीय संकटों से शिक्षा प्राप्त करके प्रारक्षित निधियों का निर्माण किया तथा सतर्कतापूर्वक अपने वित्तीय बाजारों का विकास करने के अतिरिक्त अपनी वित्तीय प्रणालियों को मजबूत कर लिया। यह सुनिश्चित करने के लिए भी वे सावधान रहीं कि बैंक विषाक्त परिसंपत्तियों अथवा नवोन्मेषी लेनदेनों में अत्यधिक संबद्ध न रहें (थोरात, 2009)। इसके बावजूद इन देशों को हाल के संकट के नतीजों तथा वैश्विक व्यापार और जीडीपी में परिणामी गिरावट, बेरोजगारी और मंद ऋण वृद्धि का सामना करना पड़ा है।

2.116 हाल का संकट अधिक तीव्र निकला जिसने एक ही समय उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के साथ ही विश्व के बड़े भागें को प्रभावित किया और इस कारण राष्ट्रीय और छोटे स्तरों पर पारंपरिक निर्वहण व्यवस्थाएँ अतीत की तुलना में कम प्रभावशाली हो गईं। उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के पिछले संकटों के दौरान, जो अलग-अलग देशों अथवा किसी विशिष्ट क्षेत्र तक सीमित थे, देशों ने समष्टि-आर्थिक आघातों का समायोजन करने के लिए बड़े विनिमय दर मूल्यह्रासों पर निर्भर होने की प्रवृत्ति दर्शाई । तथापि, 2009 के वैश्विक संकट के दौरान वास्तविक विनिमय दर के मूल्यह्रास के लिए गुंजाइश अधिक सीमित थी जिससे विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के लिए तेजी से बदल रही आर्थिक स्थितियों के चलते समायोजन करने की कम गुंजाइश रह गई थी। इसके साथ ही, पिछले अधिकांश उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं संकट निश्चित रूप से परंपरागत फुटकर बैंकिंग और मुद्रा संकट थे। इन संकटों के दौरान अधिक धनी देशों ने समस्याग्रस्त क्षेत्रों को आर्थिक सहायता प्रदान करके उनके पतन का प्रतिरोध किया। इसके विपरीत, हाल के संकट ने वैश्विक वित्त के हृदयस्थल में ही आघात किया जिससे कोई प्रतिरोध न किये जा सके। वास्तव में, अतीत के संकटों से हाल के संकट को अलग करने वाला प्रमुख तत्व यह है कि विकासशील देश 20 वर्ष पहले की अपनी स्थिति की तुलना में विश्व की अर्थव्यवस्था में वित्तीय और वाणिज्यिक (दोनों) रूप से अधिक एकीकृत हुए हैं। परिणामत: अंतरराष्ट्रीय बाजार में हो रहे परिवर्तनों का उनपर ज्यादा असर पड़ा।

2.117 यद्यपि हाल का वित्तीय संकट उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में उद्भूत नहीं हुआ है, तथापि उसने उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में आनेवाले पूँजी प्रवाहों को उन पिछले संकटों की तुलना में अधिक तीव्रता से प्रभावित किया है, जो वास्तव में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में उद्भूत हुए थे (उदाहरण के लिए लातीन अमेरिकी और एशियाई संकट)। उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को निवल पूँजी प्रवाह 1981 में जीडीपी के 4.2 प्रतिशत से घटकर 1986 में जीडीपी का 1.6 प्रतिशत हो गए। वे 1996-97 में विद्यमान जीडीपी के 5 प्रतिशत से भी अधिक की स्थिति से बहुत कम होकर 1998-99 में लगभग 3 प्रतिशत पर आ गए। हाल के संकट ने पूँजी प्रवाहों में एक अधिक तीव्रतर गिरावट की स्थिति देखी तथा ये पूँजी प्रवाह 2007 के जीडीपी के लगभग 7.5 प्रतिशत के चरम से गिरकर 2009 में अनुमानित सीमांत स्थिति पर आ गए (चार्ट II.4)। उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के पिछले संकटों की तुलना में यह गिरावट बहुत ही अल्प समय-सीमा के अंदर घटित हुई। यह वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के अधिकाधिक वित्तीय एकीकरण के प्रभाव, इन अर्थव्यवस्थाओं की बाह्य वित्तीयन की अपेक्षाएं पूरी करने में पूँजी प्रवाहों की बढ़ती हुई भूमिका तथा अमेरिका और अन्य उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में भारी डीलीवरेजिंग को प्रतिबिंबित करता है। 2007 में चरम पूँजी प्रवाह उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को पूंजी प्रवाहों की पिछली घटनाओं में पूँजी प्रवाहों की तुलना में काफी उच्चतर था। साथ ही, पिछली घटनाओं के विपरीत, हाल के संकट से पहले उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को हुए पूंजी प्रवाहों में उछाल सामान्यत: वैश्विक

चार्ट II.4: संकट की घटनाओं के दौरान विकासशील देशों को पूँजी प्रवाह (जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)

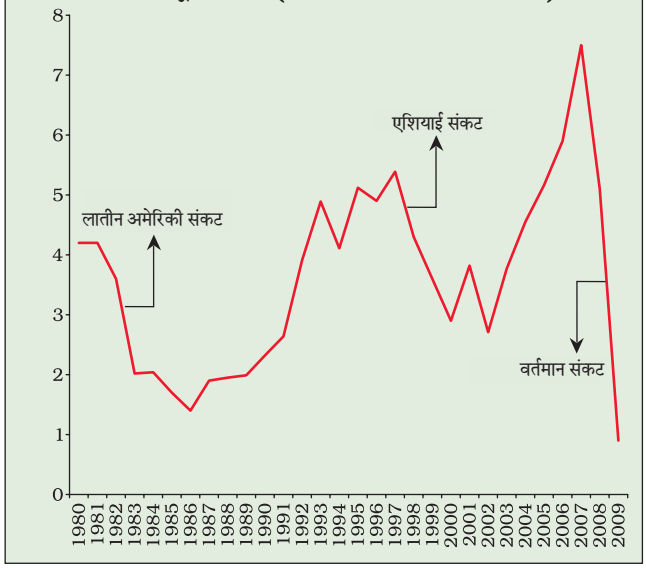

चार्ट II.5 : संकट की घटनाओं के दौरान ईएमई व्यापार परिमाण में विद्यमान प्रवृत्तियाँ (प्रतिशत में परिवर्तन)

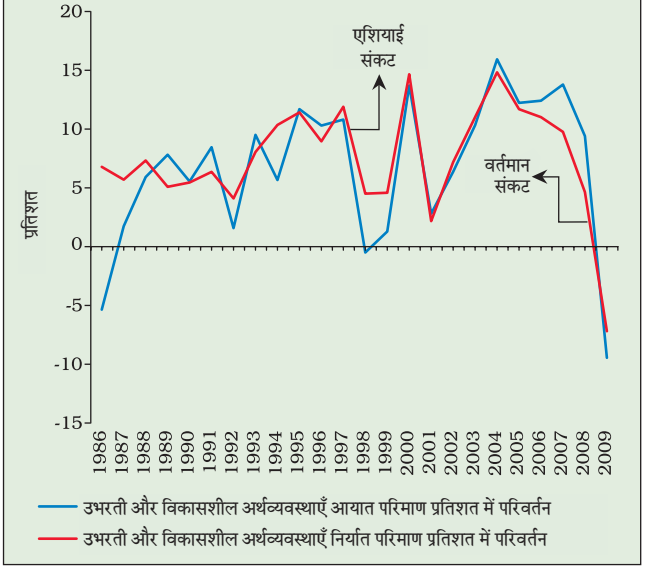

असंतुलनों से संबंधित खंड में की गई चर्चा के अनुसार चालू खाते में आधिक्यों के साथ संबद्ध किया गया है। एक क्षेत्र-वार तुलना से यह विदित होता है कि पूँजी प्रवाहों की उपलब्धता 1980 के बाद के दशक के प्रारंभिक वर्षों में लातीन अमेरिकी क्षेत्र को अधिकतम थी तथा एशियाई क्षेत्र को 1990 के बाद के दशक के मध्य से। संकट से पहले की अवधि के दौरान 2008 में सभी क्षेत्रों में तेजी से संकुचन होने से पहले 2007 में पूँजी प्रवाहों में सभी क्षेत्रों में उछाल आया, यद्यपि यह संकुचन 'उभरते यूरोप' के लिए अपेक्षाकृत तीव्रतर रहा है जो जीडीपी के 10 प्रतिशत से भी अधिक है।

2.118 हाल के संकट और संकटों की पिछली घटनाओं के बीच उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के विभिन्न वित्तीय परिवर्तियों (वेरियबल्स) की तुलना करते समय, पिछली घटनाओं में बारंबार मुद्रा संकट हुए थे जो अकसर ऋण संकटों के रूप में परिणत हुए और इसका कारण विदेशी कर्ज की स्थानीय मुद्रा के बड़े पैमाने पर अवमूल्यनों का प्रभाव था (सारणी 2.16)। हाल के संकट में मुद्रा के मूल्यह्रास यद्यपि मौजूद थे, तथापि पूर्वी यूरोपीय उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को छोड़कर अन्य देशों पर सामान्यत: इनका प्रतिकूल प्रभाव नहीं रहा। इसका श्रेय पिछली घटनाओं की अपेक्षा अधिक मजबूत बाह्य वित्तीय स्थितियों को दिया जा सकता है जो बड़ी विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों तथा अपेक्षाकृत सुदृढ़ देशी वित्तीय संस्थाओं[8] से युक्त हैं। इसके बावजूद व्यापार और पूँजी प्रवाहों के माध्यम से संवृद्धि पर प्रभाव हाल के संकट में बिलकुल तीव्र रहा है। उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के व्यापार की मात्रा ने हाल की अवधि में भारी गिरावट देखी है जो एशियाई संकट की अवधि की तुलना में काफी अधिक तेज थी (चार्ट II.5)। शेयर बाजार और निर्यात बाजारों में विद्यमान दुर्बलताओं ने निकट अतीत में उभरते विश्व को आघात पहुँचाने वाले संकटों की अपेक्षा हाल के संकट में एक बृहत्तर भूमिका निभाई है। जबकि पूर्व के संकटों की घटनाओं में बाह्य माँग की तुलना में घरेलू माँग में अधिक गिरावट आई, हाल के संकट में यह क्रम उलटा है। चीन, जो सबसे बड़ी और अग्रणी उभरती बाजार अर्थव्यवस्था है, पिछली घटनाओं में वस्तुत: अप्रभावित रहा था, परंतु हाल के संकट में वह भी प्रभावित हो गया।

महान मंदी और हाल के संकट की तुलना

2.119 हाल के संकट के लिए निकटतम समानांतर स्थिति महान मंदी रही है। दोनों ही स्थितियों में अमेरिका संकट के अधिकेंद्र में रहा है। दूसरे, दोनों संकटों का वैश्विक प्रभाव रहा। तीसरे, दोनों संकटों से पहले परिसंपत्ति और ऋण में तेजी आई थी। चौथे, दोनों ही संकटों में इस तेजी के साथ त्वरित ऋण विस्तार और वित्तीय नवोन्मेष विद्यमान थे। पाँचवें, दोनों ही घटनाओं के केंद्र में बैंकों और वित्तीय मध्यवर्ती

8 कोरिया इसका एकमात्र अपवाद है जहाँ अल्पावधि बाह्य बैंक देयताओं ने कुछ समस्याएँ पैदा कीं जिसके कारण बड़े मूल्यह्रास हुए।

संस्थाओं की चलनिधि और निधीयन की समस्याएँ रही हैं। छठवें, दोनों संकट निश्चित रूप से बैंकिंग और वित्तीय क्षेत्र के संकट थे जो आर्थिक मंदियों के रूप में परिणत हुए। वित्तीय क्षेत्र से संपदा क्षेत्र में संक्रमण का माध्यम (जिसने दोनों घटनाओं में कार्य किया) एकसमान था। वित्तीय क्षेत्र में विद्यमान समस्याओं ने उधारकर्ताओं के लिए निधियों की उपलब्धता को कम कर दिया जिससे निधियों की सीमांत लागत में वृद्धि हुई तथा गिरती हुई परिसंपत्तियों की कीमतों से हो रही हानियों ने उधारकर्ताओं की निवल मालियत को घटा दिया। सातवें, दोनों संकटों के दौरान वित्तीय और आर्थिक परिवर्तियों (वैरियेबल्स), जैसे ऋण अनुपात और शेयरों की कीमतें, के पथों और स्तरों के बीच बहुत बड़ी समानताएँ मौजूद हैं (अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, 2009बी)। अंततः दोनों संकटों ने अर्थव्यवस्थाओं के प्रबंधन के बौद्धिक ढाँचे को परिवर्तित किया है तथा किसी संकट से बचने में सरकारी नीति की भूमिका, तथाकथित कीनेशियनवाद, पर बहस को फिर से चालू किया है।

2.120 इन समानताओं के बावजूद हाल का संकट कई पहलुओं में महान मंदी से भिन्न है। पहला, यद्यपि दोनों ही वैश्विक संकट रहे हैं, तथापि प्रभावित देशों की संख्या के तौर पर असर का मान महान मंदी की तुलना में हाल के संकट के मामले में काफी अधिक है। इसका कारण वित्तीय और आर्थिक एकीकरण के आज के स्तर हैं जो महान मंदी से पहले की अवधि से बहुत अधिक हैं, इस प्रकार अमेरिका से शेष विश्व को आघातों के अधिकतर और तीव्रतर संक्रमण के लिए प्रेरणा मिलती है। दूसरा, महान मंदी की तुलना में हाल के संकट में समष्टि-आर्थिक स्थितियाँ अधिक अनुकूल थीं। हाल के संकट से पूर्व समष्टि-आर्थिक स्थिरता से युक्त उच्च संवृद्धि और निम्न मुद्रास्फीति की अवधि थी। दूसरी ओर 1929 के मध्य में वैश्विक आर्थिक स्थितियाँ कमजोर थीं; जर्मनी पहले से ही मंदी में था तथा मंदी के प्रारंभ से पहले जर्मनी, यूके और अमेरिका में उपभोक्ता मूल्य या तो अवरुद्ध थे या उनकी गिरावट शुरू हो चुकी थी। तीसरा, जबकि महान मंदी से पहले ऋण में उछाल अमेरिका-विशिष्ट अधिक था, लेकिन हाल के संकट से पहले विद्यमान तेजी उन्नत देशों और कई उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में प्रचलित रूप में बढ़े हुए लीवरेज और जोखिम-ग्रहण के साथ वैश्विक अधिक थी (अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, 2009ए)। चौथा, हाल के संकट के मूल फुटकर बैंकिंग के बजाय थोक बैंकिंग में थे (और इसलिए इसका निरोध करना अधिक कठिन था) जबकि महान मंदी के मामले में उसके मूल फुटकर बैंकिंग में थे। पाँचवाँ, 1930 के बाद के दशक के असमान, कोई स्वर्ण मानक नहीं है जो यह

सारणी 2.17: अमेरिका : महान मंदी की तुलना में वर्तमान संकट

(प्रतिशत)

	महान मंदी	वर्तमान संकट
1	2	3
अधिकतम वास्तविक जीडीपी की गिरावट	1932 में 13	6
बेरोजगारी की दर	1929 में 3 से 1933 में 25	2007 में 4.6 प्रतिशत से 2009 में 9; 2010 में अनुमानित 10
कीमतों में गिरावट	24	4
शेयर कीमतों में गिरावट	85	43
राजकोषीय घाटे में वृद्धि	1.5	3.0

सीमित करने में सहायता कर सके कि कितनी मुद्रा आपूर्ति का विस्तार किया जा सकता है। अंतिम रूप से महान मंदी के प्रारंभिक चरणों में प्रतिचक्रीय नीतिगत प्रतिक्रियाएँ नहीं थीं। नीतियों का प्रारंभ केवल 1933 तक किया गया था, जब स्वर्ण मानक को छोड़ दिया गया था। इसके विपरीत, हाल की गिरावट ने मजबूत और त्वरित मौद्रिक और राजकोषीय नीतिगत समर्थन देखा है, जो विश्व की अर्थव्यवस्था का समुत्थान करने के लिए वैश्विक और भलीभांति समन्वित (दोनों) था ।

2.121 केवल अमेरिका के लिए समष्टि-आर्थिक संकेतकों के आधार पर महान मंदी से तुलना यह धारणा प्रदान करती है कि हाल का संकट उतना बुरा नहीं है जितनी कि महान मंदी (सारणी 2.17)। 2009 में जीडीपी में गिरावट विश्वयुद्ध II के बाद की अवधि में तीव्रतम है, फिर भी जीडीपी में उक्त गिरावट महान मंदी के बाद और विश्वयुद्ध II के बाद की अवधियों की तुलना में कम है (चार्ट II.6)। तथापि, विश्व

चार्ट II.6 : 1930 के बाद के दशक से अमेरिका की जीडीपी संवृद्धि (वार्षिक प्रतिशत परिवर्तन)

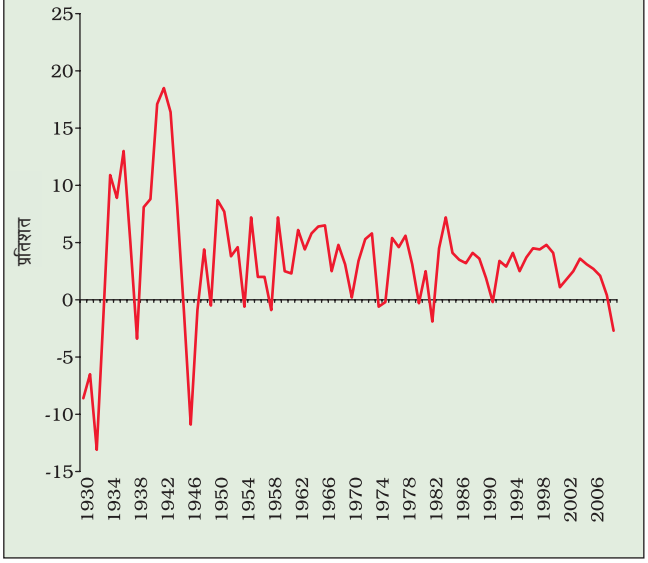

संकेतकों, जैसे विश्व उत्पादन, विश्व शेयर बाजार, विश्व व्यापार और कुल मुद्रा आपूर्ति, के आधार पर तुलना से यह विदित होता है कि हाल का संकट महान मंदी से बदतर है (ऐशेनग्रीन और राउरके, 2008)। केवल एक ही तत्व जो हाल के संकट को महान मंदी से बेहतर ठहराता है, वह संकट की लंबाई / अवधि। यह उस त्वरित, बड़े, स्थिर और समन्वित तरीके के कारण है जिसमें दुनिया भर के केंद्रीय बैंकरों और नीतिनिर्धारकों ने संभवत: आज की आर्थिक रिकवरी के लिए महान मंदी से सीख लेने के बाद हाल के संकट के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त की है (नीतिगत प्रतिक्रियाओं संबंधी विवरण अध्याय 4 में है)। इन्हीं उपायों ने हाल के रिसेशन को डिप्रेशन के रूप में बिगड़ने से रोक दिया है। एक ओर जहाँ मंदी से बचाव किया गया है, वहीं दूसरी ओर ग्रीस और यूरो क्षेत्र में हाल की समस्याएँ इस तथ्य को रेखांकित करती हैं कि रिकवरी अभी दुर्बल है। यहाँ इस बात को ध्यान में रखा जा सकता है कि जबकि ग्रीक अर्थव्यवस्था में समस्याएं हाल के वित्तीय संकट के कारण गंभीर हो गई हैं, लेकिन ग्रीक प्रणाली में निहित कमजोरियाँ अधिक संरचनात्मक हैं (बॉक्स II.7)।

2.122 समाहार के तौर पर यह प्रतीत होता है कि हाल का संकट अवधि की दृष्टि से संकटों की पिछली घटनाओं से कम प्रतिकूल है, यद्यपि यह अनुमान है कि हाल के संकट के लिए उत्पादन की हानि की सीमा अपेक्षाकृत अधिक है। ऐसा लगता है कि महान मंदी हाल के संकट के लिए निकटतम समकक्ष है। हालांकि दोनों संकटों के केंद्र में अमेरिका रहा है और दोनों ही निश्चित रूप से वित्तीय और बैंकिंग संकट हैं, फिर भी आज जो बढ़ी हुई वित्तीय संबद्धताएँ प्रचलित हैं, उनके कारण हाल का संकट अधिक वैश्विक रहा है। जबकि महान मंदी ने भू-राजनैतिक और आर्थिक संतुलन को युनाइटेड किंगडम और यूरोप से उत्तरी अमेरिका में अंतरित कर दिया, हाल के संकट के परिणाम के रूप में अमेरिका से एशिया में इसी प्रकार के एक अंतरण की चर्चा की जा रही है (रेड्डी, 2009बी)।

बॉक्स II.7
ग्रीस में संकट की उत्पत्ति

ग्रीस ने एक गहरे, संरचनात्मक और बहुमुखी संकट का सामना किया जिसके मुख्य लक्षण हैं बड़ा राजकोषीय घाटा, अत्यधिक लोक ऋण, निरंतर क्षीण हो रही प्रतियोगी स्थिति जो क्रमश: क्षीण हो रहे चालू खाता शेष के रूप में प्रकट हुए हैं। इस अर्थव्यवस्था ने दुहरे घाटे का सामना किया - 2009 में जीडीपी के लगभग 13 प्रतिशत का सामान्य सरकारी घाटा तथा जीडीपी की तुलना में 115 प्रतिशत पर लोक ऋण का अनुपात; एवं 2009 में जीडीपी के 11.2 प्रतिशत तक मामूली गिरावट के साथ 2008 में जीडीपी के 14.6 प्रतिशत का चालू खाता घाटा (सारणी 1)।

मंद हो रही संवृद्धि तथा घटी हुई वैश्विक जोखिम-वहन क्षमता के बीच विदेशी उधार पर देश की भारी निर्भरता ने पुराने राजकोषीय और बाह्य असंतुलनों के संबंध में चिंताएँ बढ़ा दीं। राजकोषीय विस्तार के अभाव सहित विनिमय दर में परिवर्तनों के माध्यम से स्थिति को सुधारने में देश की अक्षमता ने ग्रीस की अपनी बकाया ऋण देयताओं का भुगतान करने की क्षमता के बारे में प्रश्न उठाये हैं जिससे ग्रीक अर्थव्यवस्था में वैश्विक विश्वास को क्षति पहुँची है। यूरो क्षेत्र की अन्य अर्थव्यवस्थाओं अर्थात् पुर्तगाल, आयरलैंड, इटली और स्पेन में बड़े राजकोषीय और चालू खाता घाटों ने इस वर्ष के प्रारंभ से चिंताएँ बढ़ाई हैं (सारणी 2)। यूरो क्षेत्र की परिधि में समस्या की सघनता का मापन यूरोपीय बैंकों के पास सरकारी ऋण पत्रों की बड़ी धारिताओं से उत्पन्न होनेवाली प्रणालीगत चिंताओं से किया जा सकता है।

सारणी 1 : ग्रीक अर्थव्यवस्था के चयनित समष्टि-आर्थिक संकेतक

संकेतक	2005	2006	2007	2008	2009	2010(अ)
1	2	3	4	5	6	7
जीडीपी संवृद्धि (प्रतिशत)	2.2	4.5	4.5	2.0	-2.0	-2.0
मुद्रास्फीति (प्रतिशत)	3.5	3.3	3.0	4.2	1.4	1.9
बेरोजगारी (श्रमशक्ति का प्रतिशत)	9.9	8.9	8.3	7.6	9.4	12.0
सकल राजकोषीय घाटा (जीडीपी का प्रतिशत)	-5.1	-3.1	-3.7	-7.8	-12.9	-8.7
चालू खाता शेष (जीडीपी का प्रतिशत)	-7.5	-11.3	-14.4	-14.6	-11.2	-9.7
विनिमय दर (यूरो/अमेरीकी डॉलर)	0.80	0.80	0.73	0.68	0.72	0.74
सरकारी बांड से आय	3.6	4.1	4.5	4.8	5.2	6.2

अ- अनुमान

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वर्ल्ड इकनॉमिक आउटलुक डाटाबेस, अप्रैल 2010 ।

ग्रीस की समस्याएं अधिकांशत: संरचनात्मक हैं और ये संकट से पहले भी रही हैं। वैश्विक संकट ने केवल प्रणाली में विद्यमान दीर्घकालिक कमजोरियों का परिवर्धन किया है तथा उक्त अर्थव्यवस्था में गिरावट की गति बढ़ाई है।

राजकोषीय समस्या

- उसकी दुर्बल राजकोषीय स्थिति के बड़े हिस्से का कारण उसकी निम्न घरेलू बचत दर है। घरेलू बचत दर 2009 में जीडीपी का केवल 5.0 प्रतिशत ही थी जो अंशत: निजी उपभोग में तीव्र वृद्धि के कारण और बड़ी सीमा तक उच्च राजकोषीय घाटे के कारण थी।
- आबादी में वृद्धों की संख्या बढ़ने के कारण सेवानिवृत्ति लाभों पर व्यय, शिक्षा, अनुसंधान और बुनियादी संरचना में संवृद्धि को बढ़ाने वाले व्यय के सतत टांस के साथ ही कर-वंचन वर्षों से ग्रीस में उभरी हुई सरकारी क्षेत्र की संरचना में परिणत हुआ है।

(जारी...)

(... समाप्त)

- कर्ज न केवल वार्षिक घाटों के कारण, बल्कि "घाटा-ऋण" समायोजनों के कारण भी उच्च स्तर पर बना हुआ है। `अत्यधिक घाटा प्रक्रिया' को बारंबार प्रारंभ करने से भी राजकोषीय ऋण के सही आकार के बारे में संदेहास्पदता बढ़ जाती है। उदाहरण के लिए, ईडीपी को मार्च 2009 में प्रारंभ किया गया था, जिसके द्वारा जीडीपी की तुलना में कर्ज के अनुपात को 2008 में विद्यमान पूर्व के 95.4 प्रतिशत से संशोधित करके 115.1 प्रतिशत किया गया।
- ग्रीक सरकार की भारित औसत उधार लागत 2006 में विद्यमान 3.8 प्रतिशत से बढ़कर 2007 में 4.4 प्रतिशत और 2008 में 4.6 प्रतिशत हो गई तथा बाद में अप्रैल 2010 की पहली तिमाही में 5.0 प्रतिशत तक व्याप्त हो गई।

चालू खाता घाटा

- निम्न घरेलू बचत दर के कारण सरकारी ऋण का वित्तपोषण विदेशी स्रोतों से किया जाना चाहिए, जो व्यापक चालू खाता घाटा और वृद्धिशील बाह्य ऋण में परिणत हुआ। इस प्रकार राजकोषीय समस्या बाह्य ऋण के साथ अन्तर्जटित हुई तथा ऋण की समस्या और दुहरे घाटों ने स्वयंपूरक चक्र में एक दूसरे का पोषण किया।
- इसका कारण सीधे एक बड़ा व्यापार घाटा है, जो 2001-09 के बीच औसतन 20 प्रतिशत था, जिससे अंतरराष्ट्रीय बाजारों में इसकी लगातार गिरती कीमत और उत्पाद की प्रतियोगात्मकता प्रतिबिंबित होती है।
- बैंक ऑफ ग्रीस की वार्षिक रिपोर्ट 2008-09 के अनुसार निम्नतर उत्पादकता अधिकांश उप-क्षेत्रों में नई तकनीकों के अपर्याप्त प्रवेश, काम के दौरान निम्न व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा सार्वजनिक प्रशासन की अकुशलता के कारण था। विश्व बैंक की 'आराम से कार्य करने' (ईज़ ऑफ डूइंग बिजनेस) की दृष्टि से 181 देशों के बीच ग्रीस का स्थान 96वाँ है। आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (ओईसीडी) देशों में यह अंतिम है।

मंदी के पथ पर ग्रीस का पतन 2009 से हुआ है क्योंकि वहाँ जीडीपी का 2 प्रतिशत संकुचन हुआ तथा बेरोजगारी की दर बढ़कर 9.4 प्रतिशत हो गई। ऋण संकट अक्तूबर 2009 में गहराया तथा बाद में अप्रैल 2010 के बीच में यह और बढ़ा जब यह स्पष्ट हुआ कि बजट घाटे का अधारणीय रूप में उच्च स्तरों तक विस्तार हुआ। स्थिति का आकलन करते हुए मूडीस ने 22 अप्रैल 2010 को ग्रीस की सरकारी रेटिंग का ग्रेड घटाकर ए 3 कर दिया तथा उसके बाद स्टैंडर्ड एण्ड पूअर्स ने ग्रीस और पुर्तगाल के दीर्घकालिक ऋण का ग्रेड घटाकर क्रमश: बीबी+(जंक) और ए- कर दिया एवं जिसने वैश्विक शेयर बाजारों में विश्वास में उल्लेखनीय गिरावट को उजागर किया। तदुपरांत अनेक ग्रीक बैंकों का भी ग्रेड कम कर दिया गया जिससे अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में उनकी पहुँच की सीमा निर्धारित की गई। उनके सर्वाधिक महत्वपूर्ण पुनर्वित्तीयन के स्रोत, यूरोपीय केंद्रीय बैंक तक पहुँच को खो देने की संभावना भी अप्रत्याशित रूप से बढ़ गई। यूरोपीय केंद्रीय बैंक के निधीयन स्रोत की संभावित हानि ने ऋण चूक स्वैप प्रीमियमों और ग्रीक सरकारी बांडों में प्रतिफल के स्प्रेडों को ऊँचा कर दिया।

सारणी 2 : यूरो क्षेत्र में चालू खाता, सरकारी घाटा और लोक ऋण

देश	सीएडी/जीडीपी (%)			जीएफडी/जीडीपी(%)			लोक ऋण (जीडीपी का %)		
	2000	2005	2009	2000	2005	2009	2000	2005	2009
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
आस्ट्रिया	-0.7	2.0	1.4	-1.9	-1.7	-3.6	66.5	63.9	66.5
बेल्जियम	4.0	2.6	-0.3	0.0	-2.7	-5.8	107.9	92.1	96.7
साइप्रस	-5.3	-5.9	-9.3	-2.3	-2.4	-6.1	48.7	69.1	56.2
फिनलैंड	8.1	3.6	1.4	6.8	2.6	-2.4	43.8	41.8	44.0
फ्रांस	1.6	-0.4	-1.5	-1.5	-3.0	-7.9	57.3	66.4	77.6
जर्मनी	-1.7	5.1	4.8	1.3	-3.3	-3.3	59.7	68.0	73.2
ग्रीस	-7.8	-7.5	-11.2	-3.7	-5.1	-12.9	103.4	100.0	115.1
आयरलैंड	-0.4	-3.5	-2.9	4.8	1.6	-11.4	37.8	27.6	64.0
इटली	-0.5	-1.7	-3.4	-0.9	-4.4	-5.3	109.2	105.8	115.8
लक्ज़मबर्ग	13.2	11.0	5.7	6.0	0.0	-1.1	6.2	6.1	14.5
माल्टा	-12.5	-8.8	-3.9	-6.2	-2.9	-4.1	55.9	70.2	69.1
नेदरलैंड्स	1.9	7.3	5.2	2.0	-0.3	-4.9	53.8	51.8	60.9
पुर्तगाल	-10.2	-9.5	-10.1	-3.0	-6.1	-9.3	50.5	63.6	76.8
स्लोवैक गणतंत्र	-3.5	-8.5	-3.2	-8.7	-2.8	-6.3	50.3	34.2	35.7
स्लोवेनिया	-3.2	-1.7	-0.3	-1.2	-1.0	-6.1	..	27.0	35.9
स्पेन	-4.0	-7.4	-5.1	-1.0	1.0	-11.4	59.3	43.0	53.2
ज्ञापन									
युनाइटेड किंगडम	-2.6	-2.6	-1.3	1.3	-3.3	-10.9	41.0	42.2	68.1

स्रोत : वर्ल्ड इकॉनॉमिक आउटलुक डाटाबेस, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ।

1 ये सरकार के वित्तीय लेनदेन हैं, जो घाटे में दर्ज नहीं हैं, परंतु लोक ऋण को बढ़ा देते हैं।

2 अत्यधिक घाटा प्रक्रिया (ईडीपी) यूरोपीय संघ की आर्थिक और वित्तीय परिषद द्वारा तब प्रारंभ की जाती है जबयूरो क्षेत्र का कोई देश 3 प्रतिशत संदर्भ मूल्य से अधिक सरकारी घाटा दर्ज करता है।

IV. निष्कर्षात्मक टिप्पणियां

2.123 हाल के वैश्विक वित्तीय संकट, जिसने अंतिम रूप से लगभग सभी अर्थव्यवस्थाओं को अपने घेरे में लिया, ने व्यष्टि-स्तरीय विकृतियों और पिछली नीतिगत कार्रवाइयों से निर्मित प्रोत्साहनों सहित समष्टि स्तर पर विभिन्न असंतुलनों के एक कठिन समायोजन को दर्ज किया। इस संकट के विभिन्न कारणों के विश्लेषण ने विविध आर्थिक मतवादों की संगतता पर एक पूरी नई बहस छेड़ दी है तथा उस आर्थिक सिद्धांत को चुनौती दी है जिसने बाजारों की स्वयं-सुधारक व्यवस्था को स्वीकार किया है। अत्यधिक लीवरेज संकट का सर्व प्रमुख कारण था। यह अपर्याप्त विनियमन और त्रुटिपूर्ण ऋण रेटिंग के साथ मिश्रित था। निम्न ब्याज दर व्यवस्था, जो अनुकूलनकारी मौद्रिक नीति का परिणाम थी, ने ऋण स्तरों को अधारणीय अनुपात प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया। आवास वित्त संस्थाओं द्वारा आक्रामक विपणन के साथ संयुक्त वैश्विक बचत प्राचुर्य तथा जोखिमों के कम कीमत-निर्धारण ने सब-प्राइम बंधकों के निर्माण को बढ़ावा दिया।

2.124 इस प्रकार संकट के मूल उन समष्टि-आर्थिक कारणों में थे जिन्होंने वित्तीय बाजारों के कार्यचालन को पोषित किया क्योंकि निवेशक और वित्तीय संस्थाएँ (दोनों) उच्चतर प्रतिफलों की तलाश में अत्यधिक जोखिम उठाने के लिए प्रेरित हुईं। घर-परिवारों एवं वित्तीय मध्यवर्ती संस्थाओं (दोनों) द्वारा जोखिमों के कम कीमत-निर्धारण के साथ सुलभ ऋण ने स्थावर संपदा, ऊर्जा और अन्य क्षेत्रों में परिकल्पित बढ़ी हुई कीमतों का निर्माण किया। तथापि, कई मामलों में घरेलू समष्टि-आर्थिक नीतियाँ वित्तीय प्रणाली में प्रणालीगत जोखिमों के निर्माण अथवा घरेलू आर्थिक असंतुलनों और आस्ति-कीमत खतरों का ध्यान नहीं रख पाईं जिससे संकट में उन्होंने योगदान किया। यह इसलिए क्योंकि अनेक केंद्रीय बैंकों ने मुद्रास्फीति के लक्ष्य वाली व्यवस्थाओं के माध्यम से मूल्य-स्थिरता पर या तो ध्यान केंद्रित किया या केवल मूल्य-स्थिरता पर ही ध्यान केंद्रित करने के लिए उन्हें अधिदेशित किया गया। अन्य मामलों में यद्यपि केंद्रीय बैंकों ने यह अनुभव किया कि प्रणाली में अत्यधिक जोखिम विद्यमान हैं, तथापि उन्होंने विश्वास किया कि जोखिमों को व्यापक तौर पर दूर किया गया, विशेष रूप से उनके संबंध में जो बचाव निधियों जैसी नई मध्यवर्ती संस्थाओं के आविर्भाव और डेरिवेटिव्ज जैसे नये लिखतों के माध्यम से उन्हें वहन करने में सक्षम हैं तथा इस कारण से उन्होंने समग्र रूप में वित्तीय प्रणाली के लिए किसी प्रमुख जोखिम की उपस्थिति को नहीं समझा और इसलिए उचित कार्रवाई नहीं की। विनियामक निकाय यह पूर्वानुमान नहीं लगा सके कि वित्तीय लिखतों में तीव्र नवोन्मेष जोखिम न्यूनीकरण में परिणत नहीं हुआ था; बल्कि इसके विपरीत उसने जोखिम का केंद्रीकरण और विस्तार किया था। वित्तीय स्थिरता को बनाये रखने के लिए किसी भी सरकारी संस्था को औपचारिक अधिदेश नहीं था, और इसलिए सरकारी नीति में ऐटसी स्थिरता की उपेक्षा की गई थी। इसके अलावा, छाया बैंकिंग क्षेत्र प्रभावी विनियमन के दायरे से बाहर रहा। साथ ही, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष जैसी बहुपक्षी संस्थाएँ, जिन्हें निगरानी का दायित्व सौंपा गया था, वैश्विक स्तर पर और प्रणालीगत तौर (दोनों) पर महत्वपूर्ण उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के स्तर पर दुर्बलताओं की जाँच नहीं कर सकीं अथवा उन्हें व्यक्त नहीं कर सकीं (रेड्डी, 2009सी)।

2.125 संकट के लिए अंतिम प्रेरणा 2006 के मध्य तक अमेरिकी आवास कीमतों में गिरावट और फेड निधि लक्ष्य दर में क्रमिक वृद्धि से मिली जो सब-प्राइम बंधक बाजार में भारी हानियों और मोचन निषेधों के लिए कारण बनीं। वैश्विक वित्तीय बाजारों में परिणामी संकट, जोखिम विमुखता के चरम स्तर, बैंकों और वित्तीय संस्थाओं की बढ़ती हुई हानियों, परिसंपत्ति कीमतों के एक दायरे में तीव्र सुधार ने प्रमुख उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में विशेष रूप से 2008 की दूसरी छमाही से संवृद्धि की गति में तीव्र मंदी को प्रेरित किया। वैश्वीकरण ने अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों को खास तौर से ऋण के समूहन और वैश्विक आपूर्ति शृंखलाओं के तौर पर दुर्बल बना दिया जिसके परिणामस्वरूप मंदी का तेजी से संचरण हुआ। अन्य उभरते बाजारों और देशों में अत्यधिक एकीकृत वैश्विक वित्तीय बाजार इस अशांति की तीव्र व्याप्ति में सहायक रहे।

2.126 हाल के संकट ने वित्तीय संकटों के इतिहास में रुचि को पुन:जगा दिया है। वैश्विक अर्थव्यवस्था के इतिहास के विश्लेषण से यह विदित होता है कि वित्तीय संकट कोई हाल का परिदृश्य नहीं हैं तथा आर्थिक इतिहास ऐसी अनेक घटनाओं से भरा हुआ है। वित्तीय संकटों की अनेक परिभाषाएँ दी गई हैं, परंतु एक सामान्य सूत्र वित्तीय बाजारों/मध्यवर्ती संस्थाओं पर तीव्र दबाव है। अंतर्निहित कारणों और संकट के आविर्भाव के आधार पर वित्तीय संकटों का वर्गीकरण सामान्यत: बैंकिंग/मुद्रा/ऋण संकट और संक्रामकता के रूप में किया गया है। विविध विशेषताओं के दायरे के बीच इनमें विभिन्नता है अर्थात् मूलभूत तत्वों की भूमिका, विनिमय दर व्यवस्थाएँ और इतिहास, अंतर्निहित संरचना और स्वरूप तथा बैंक/ प्रतिभूतिकृत ऋण अथवा निजी/सरकारी ऋण का सापेक्ष महत्व। वित्तीय संकट नियमित रूप से घट रहे हैं। तथापि, उनकी घटनाएँ अत्यधिक त्रुटिपूर्ण रही हैं एवं प्रचलित

समष्टि आर्थिक स्थितियों, विनियामक व्यवस्था, वित्तीय संरचना, विनिमय दर व्यवस्था और वैश्विक पूँजी प्रवाहों की दृष्टि से उनमें विभिन्नता है। संकट का कार्य-कारण संबंध सदैव बिलकुल जटिल रहा है। यहाँ किसी एक ही कारण का सिद्धांत नहीं है, तथा प्रत्येक संकट में अंतर्निहित कारणों के बीच पारस्परिक क्रिया का स्वरूप अनोखा रहा है। इनका कारण सामान्यत: अधारणीय समष्टि-आर्थिक नीतियों, तुलन-पत्र की दुर्बलताओं, लीवरेज पर अत्यधिक निर्भरता, ऋण में तेजी की स्थितियों तथा परिसंपत्ति की कीमतों में वृद्धि का सम्मिश्रण रहा है। आम तौर पर वित्तीय संकटों के बाद तीव्र आर्थिक संकुचन हुए हैं। अधिकांश आर्थिक मानदंड संकट के दौरान चक्रीयता के अनुकूल व्यवहार दर्शाते हैं। समष्टि अर्थव्यवस्था सामान्य तौर पर विभिन्न सरणियों के माध्यम से प्रभावित हुई है। जोखिम विमुखता और डीलीवरेजिंग में वृद्धि ऋण की उपलब्धता और निवेश के कार्यकलाप में परिणत होती हैं जो फिर कुल माँग को कम कर देती हैं तथा अर्थव्यवस्था के पतन की स्थिति में पहुँच जाती है। मंदियों की विशेषता प्राय: निवेश की गतिविधि, औद्योगिक उत्पादन, व्यापार, विशेष रूप से आयातों, और परिसंपत्ति कीमतों में तीव्र गिरावटें तथा उपभोग और निर्यातों एवं कुल रोजगार में मामूली गिरावटें रही हैं।

2.127 अब एक आम सहमति यह है कि हाल का संकट अपनी गंभीरता और विस्तार की दृष्टि से 1930 के बाद के दशक की महान मंदी के उपरांत सबसे बुरा संकट है। हाल के संकट की विशेषता जाने-पहचाने तीव्र और व्यापक विस्तार (बूम एण्ड बस्ट) के स्वरूप के एक उदाहरण के रूप में है जिसे आर्थिक इतिहास के क्रम में कई बार दुहराया गया है। अंतर्निहित कारणों का विश्लेषण करते समय हाल के संकट और ऐसी पिछली घटनाओं के बीच कुछ समानताएँ पाई जा सकती हैं। अतीत की तरह हाल के संकट के मुख्य कारण प्रणालीगत दुर्बलताओं और असंतुलनों के साथ संबद्ध किए जाते हैं जिन्होंने वैश्विक अर्थव्यवस्था के अपर्याप्त कार्यचालन में योगदान किया है। हाल की स्थिति के संबंध में प्रमुख अंतर्निहित कारकों में अधारणीय और अपर्याप्त रूप से समन्वित समष्टि-आर्थिक नीतियाँ शामिल हैं। वित्तीय विनियमन, पर्यवेक्षण और वित्तीय क्षेत्र की निगरानी में बड़ी विफलताओं तथा अपर्याप्त चौकसी और समय रहते चेतावनी देने में चूक के चलते ये कारण और गंभीर बन गए थे। इन विनियामक विफलताओं ने बाजार के स्व-नियंत्रण पर अधिक निर्भरता, पारदर्शिता और वित्तीय ईमानदारी के समग्र अभाव, एवं गैर-जिम्मेदाराना व्यवहार द्वारा संयुक्त रूप में अत्यधिक जोखिम-ग्रहण, अधारणीय उच्च परिसंपत्ति कीमतें, गैर-जिम्मेदाराना लीवरेजिंग एवं उपभोग के उच्च स्तरों को बढ़ावा दिया जिन्हें सुलभ ऋण और बढ़ी हुई परिसंपत्ति कीमतों ने और तीव्र कर दिया था।

2.128 तथापि कुछ ऐसे पहलू हैं जो हाल के संकट को उसकी पूर्ववर्ती घटनाओं से अलग करते हैं। हाल का वित्तीय और आर्थिक संकट इसके पहले अनुभव किये गये संकटों से स्वरूप और परिमाण में भिन्न है। पहले, उक्त संकट अमेरिका में उद्भूत हुआ और उसके पहले की तेजी का - कम से कम उसके एक बड़े भाग का - पोषण उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में बचत द्वारा किया गया। वैश्विक असंतुलनों की पहले की घटनाएँ बड़ी सीमा तक उन्नत अर्थव्यवस्थाओं तक सीमित थीं और उनकी भूमिका ऋणदाता की थी, परंतु इसके विपरीत हाल के संकट में अमेरिका ऋणी राष्ट्र के रूप में रहा। दूसरे, व्यापकता की दृष्टि से हाल का संकट अधिक वैश्विक रहा है; इसने समग्र रूप में विश्व की अर्थव्यवस्था को तेजी से प्रभावित किया है जो उसके असामान्य परिमाण और वैश्वीकरण (दोनों) से संबंधित प्रसार की बड़ी सरणियों की उपस्थिति के कारण है। हाल के संकट का वैश्विक आयाम अर्थव्यवस्थाओं के भीतर और उनके बीच वित्तीय प्रणाली के मध्य बढ़ी हुई संबद्धताओं के कारण है जो अधिकेंद्र से परिधि तक संकट के तेज संचरण में परिणत हुईं। उत्पादन की हानि के अनुमान हाल के संकट को अतीत की अधिकांश घटनाओं से ऊपर रखते हैं, जहाँ अधिकांश उन्नत और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं ने एक 'वैश्वीकृत समकालिक मंदन' का सामना किया है। महान मंदी से तुलना करने पर हाल का संकट अधिक 'वैश्विक' और अधिक 'तीव्र' रहा है, फिर भी इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि त्वरित नीतिगत प्रतिक्रियाओं के साथ बेहतर प्रारंभिक स्थितियाँ हाल की मंदी के दौर को 1930 के बाद के दशक की मंदी की तरह बनने से रोकने में सफल हो सकती थीं। यह प्रतीत होता है कि उन्नत देशों और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं पर उक्त संकट का तत्काल प्रभाव 'उन्नत देशों के संकटों' और 'उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के पिछले संकटों' के प्रभाव से बदतर रहा है। तथापि, अलग-अलग आर्थिक मानदंडों के तौर पर संकट के प्रभाव का विस्तृत मूल्यांकन इस संकट के समग्र स्वरूप को समझने के लिए अत्यावश्यक है।

3 संकट का प्रादुर्भाव

3.1 जैसा कि पिछले अध्याय में विचार-विमर्श किया गया है, अत्यंत संश्लिष्ट वित्तीय प्रणाली द्वारा उत्पन्न किये गये प्रणालीगत जोखिमों को संकट से पहले एक दीर्घकालिक समयावधि के लिए देखे गए हितकर समष्टि-आर्थिक परिणामों द्वारा निष्प्रभावी किया गया। नये वित्तीय लिखतों के जटिल स्वरूप तथा ऋण और तेज हो रही परिसंपत्ति कीमतों में तीव्र वृद्धि के परिवेश में वित्तीय बाजारों में प्रतिपक्षी जोखिमों का आकलन करने में असमर्थता ने वित्तीय प्रणाली को दुर्बल बना दिया। द्रुत वैश्विक एकीकरण एवं वित्तीय संस्थाओं के बीच गहरी और संश्लिष्ट अंतरसंबंधों के कारण संकट जो अमेरिकी सब-प्राइम आवास बाजार में उभरा वह विभिन्न परिसंपत्तियों, बाजारों और अर्थव्यवस्थाओं में प्रकट हुआ। संकट के प्रारंभिक चरणों के दौरान इसका प्रभाव सब-प्राइम बंधकों और संरचित वित्त उत्पादों में बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के एक्सपोज़रों पर बढ़ती हुई हानियों में व्यक्त हुआ। ये हानियाँ उन लिखतों के लिए बाजारों में अनकदी द्वारा और बढ़ाई गईं जिन्होंने बाजार मूल्य को बही में अंकित करने के (मार्क-टू-मार्केट) आधार पर मूल्यांकनों में भारी कटौतियों के लिए मार्ग प्रशस्त किया।

3.2 लेहमैन ब्रदर्स के पतन के साथ ही, संकट ने सितंबर 2008 में एक अशांतिपूर्ण नये चरण में प्रवेश किया, जिसके बाद उक्त संकट तेजी से एक विश्वास के संकट के रूप में विकसित हुआ और उसने अमेरिका में समूची वित्तीय प्रणाली को अपने घेरे में ले लिया। तदुपरांत, यह अन्य विकसित अर्थव्यवस्थाओं में व्याप्त हुआ जिसका परिणाम अनेक यूरोपीय बैंकों की विफलता, शेयरों और पण्यों के बाजार मूल्य में परिणामी बड़ी कटौतियों सहित विभिन्न शेयर सूचकांकों में गिरावट, मुख्य व्यवसायों की असफलता, उपभोक्ता संपदा में गिरावट तथा आर्थिक कार्यकलाप में उल्लेखनीय अवनति के रूप में हुआ। इसके अतिरिक्त, चूँकि परिसंपत्तियों को देयताओं की वापसी अदायगी के लिए बेचा गया जिनके लिए अवरोधित ऋण बाजारों में पुनर्वित्त प्रदान नहीं किया जा सका, अत: वित्तीय संस्थाओं की अवनति (डीलीवरेजिंग) ने चलनिधि संकट की गति को और बढ़ा दिया। इस चरण में बैंक हानियाँ और अवलेखन (राइटडाउन्स) अधिक घनिष्ठ रूप से संबद्ध हुए तथा इसका प्रभाव बदतर हो रहे समष्टि-आर्थिक निष्पादन की पृष्ठभूमि में उधारकर्ताओं की चूकों में वृद्धि के तौर पर महसूस किया गया।

3.3 वैश्विक व्यापार और वित्तीय एकीकरण ने अमेरिका के वित्तीय बाजार संकट को एक वैश्विक रूप दिया था क्योंकि अधिकाधिक एकीकृत वैश्विक व्यापार और वित्तीय प्रणाली ने संचरण की प्रक्रिया को विस्तृत और अधिक गतिशील बना दिया। अमेरिका और यूरोप से शेष विश्व में आघातों का तेजी से संचरण हुआ था। संकट के प्रभाव को विश्व की लगभग सभी अर्थव्यवस्थाओं में विभिन्न परिमाणों में अनुभव किया गया। यह संकट उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में सभी चार सरणियों - व्यापार, वित्त, पण्य और विश्वास की सरणियों - के माध्यम से व्याप्त हुआ। उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में निर्यात की माँग के अभाव से उत्पन्न मंदी (स्लंप) और अधिक सख्त व्यापार ऋण के कारण कुल माँग में कमी आई; पूँजी प्रवाहों के उलटाव ने शेयर बाजारों की हानियों और मुद्राओं के मूल्यह्रासों को प्रेरित किया; वैश्विक चलनिधि की कठोर स्थिति निम्नतर बाह्य ऋण प्रवाहों में परिणत हुई; तथा बाजार की दृढ़ताओं और विश्वास में ह्रास ने ऋण स्प्रेडों की व्याप्ति को प्रेरित किया।

3.4 वित्तीय क्षेत्र में उद्भूत संकट का संचरण विभिन्न सरणियों के माध्यम से संपदा क्षेत्र में हुआ। संकट की गहराई और व्याप्ति का मापन अवलेखनों के अनुमानों में क्रमिक संशोधनों, व्यापार में गिरावट और अंतत: आर्थिक कार्यकलाप में संकुचन से किया जा सकता है। कमजोर ऋण बाजारों, गिरते हुए उत्पादन और तेजी से सिकुड़ रहे वैश्विक व्यापार के साथ सहयोजन सहित वित्तीय क्षेत्र की अवनति (डीलिवरेजिंग) ने एक दीर्घकालिक मंदी वाली स्थिति के लिए, विशेष रूप से उल्लेखनीय नरमी दर्शानेवाली ईएमई में वृद्धि के संबंध में प्रेरणा दी।वित्तीय क्षेत्र में बैंकों द्वारा धारित ऋणों और प्रतिभूतियों के वैश्विक अवलेखनों के अनुमान 2007-10 के संबंध में 2.3 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर रहे (वैश्विक आर्थिक संभावना - डब्ल्यूईओ, अप्रैल 2010)। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (वैश्विक आर्थिक संभावना, अप्रैल 2010) के अनुसार व्यापार के क्षेत्र में विश्व व्यापार की मात्रा (वस्तुएँ और सेवाएँ) में 2008 में देखी गई 2.8 प्रतिशत वृद्धि की तुलना में 2009 के दौरान 10.7 प्रतिशत की गिरावट आई है। वास्तविक अर्थव्यवस्था में संकट का अंतिम प्रभाव क्षीण होती हुई वैश्विक संवृद्धि की संभावना में प्रतिबिंबित हुआ जैसा कि अप्रैल 2008 में 3.8 प्रतिशत से अक्तूबर 2009 में (-) 1.1 प्रतिशत

तक 2009 के लिए संवृद्धि के पूर्वानुमानों में क्रमिक संशोधनो से देखा जा सकता है जिन्हें अप्रैल 2010 में (-)0.6 प्रतिशत तक आगे और संशोधित किया गया है।

3.5 तथापि, वैश्विक अर्थव्यवस्था में समुत्थान (रिकवरी) के आरंभिक संकेत हैं, जबकि वित्तीय स्थितियाँ स्थिर हो रही हैं। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आइएमएफ) के अनुसार एशिया में पुनरुत्थान द्वारा प्रेरित होकर उभरती हुई और विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ समुत्थान के पथ पर और भी आगे हैं। इन अर्थव्यवस्थाओं में सुधरी हुई समष्टि-आर्थिक स्थितियों, सुदृढ़ नीतिगत ढाँचे और वैश्विक निवेशकों की जोखिम-वहन क्षमता में पुन: सुधार तथा वित्तीय बाजार की भावनाओं के अनुरूप पूँजी प्रवाहों में मजबूत समुत्थान के संकेत मिल चुके हैं। पहले के संकटों की तुलना में उन्नत और उभरती अर्थव्यवस्थाओं में त्वरित और मजबूत नीतिगत प्रतिक्रियाओं ने वैश्विक अर्थव्यवस्था में दबाव को सीमित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई (अध्याय 2 देखें)।

3.6 इस पृष्ठभूमि के साथ इस अध्याय में अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों, जैसे वित्तीय बाजार, वित्तीय संस्थाएँ, अंतरराष्ट्रीय व्यापार, अंतरराष्ट्रीय पूँजी प्रवाह, विप्रेषण और वैश्विक संदर्भ में वास्तविक अर्थव्यवस्था पर संकट के प्रभाव का विश्लेषण किया गया है। खंड I में वित्तीय बाजारों पर संकट के प्रभाव की चर्चा की गई है, जबकि खंड II में वित्तीय प्रणाली पर प्रभाव को समाविष्ट किया गया है। व्यापार, सेवाओं, चालू खाता घाटे और पूँजी प्रवाहों को शामिल करते हुए बाह्य क्षेत्र पर प्रभाव का विवरण खंड III में दिया गया है। वास्तविक अर्थव्यवस्था पर प्रभाव की चर्चा खंड IV में की गई है, जबकि खंड V में कुछ निष्कर्षों से युक्त टिप्पणियाँ दी गई हैं।

I. वित्तीय बाजारों पर प्रभाव

3.7 नयो उत्पादों और लिखतों के विकास तथा कुल कारोबार (टर्नओवर) की मात्राओं के तौर पर पिछले दशक के दौरान वैश्विक वित्तीय बाजारों ने तेज परिवर्तनों को देखा है। कुछ श्रेणियों के वित्तीय नवोन्मेषण अधिकाधिक जटिल हो गए तथा हाल के वर्षों में उनका प्रयोग नाटकीय ढंग से बढ़ गया जिससे सट्टेबाजी से युक्त खतरे (बबल्स) उत्पन्न हुए। इन उत्पादों में शामिल थे समायोज्य दर बंधक (एआरएम), बंधक समर्थित प्रतिभूतियाँ (एमबीएस), संपार्श्विकीकृत ऋण देयताएँ (सीडीओ)और ऋण चूक अदला-बदलियाँ (स्वैप)। दिलचस्प बात यह है कि इन संश्लिष्ट उत्पादों को साख रेटिंग एजेंसियों द्वारा सुरक्षित रेटिंग दिये गये थे। साथ ही, सुलभ चलनिधि और मजबूत ऋण वृद्धि के परिवेश में इन लिखतों के लिए जबरदस्त माँग ने उधार देने के मानकों को गिरा दिया। अंतत: यह काल्पनिक खतरा अधारणीय साबित हुआ और अमेरिका में वित्तीय बाजार की अशांति के रूप में प्रकट हुआ, जो एक वर्ष के समय में अभूतपूर्व ऊँचाइयों तक पहुँच गया।

3.8 उक्त संकट अमेरिका के सब-प्राइम बाजार से यूरोप और अन्य उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के वित्तीय बाजारों तक तेजी से बढ़ा। वित्तीय संकट के प्रारंभ होने के बाद सबसे अधिक प्रभावित अर्थव्यवस्थाओं, विशेष रूप से अमेरिका और यूरोप के वित्तीय बाजारों में अनेक विशेषताएँ सामान्य बन गईं। ये थीं जोखिम का व्यापक रूप से पुन:कीमत-निर्धारण, कई प्रतिभूति और वाणिज्य पत्र बाजारों में बाजार की चलनिधि की तीव्र कमी, अंतर-बैंक बाजार में नकदी के निधीयन की कमी तथा कुछ यूरोपीय वित्तीय संस्थाओं के लिए अमेरिकी डॉलर के निधीयन की कमी। यद्यपि यह संकट अगस्त 2007 से विभिन्न वित्तीय संस्थाओं, बाजारों और देशों में व्याप्त होने लगा, फिर भी सितंबर 2008 में अमेरिका के बड़े निवेश बैंक, लेहमैन ब्रदर्स के समापन ने वित्तीय बाजारों में आतंक को गहन बना दिया। लेहमैन ब्रदर्स के पतन ने वित्तीय मध्यस्थता की प्रक्रिया को बिगाड़ दिया - उसने वित्तीय संगठनों एवं प्रतिपक्षी जोखिमों के बीच मध्यस्थता की लागत में तीव्र वृद्धि कर दी।

3.9 संकट की पिछली घटनाओं की अपेक्षा उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ (ईएमई) हाल के संकट द्वारा प्रारंभ में बहुत कम प्रभावित हुईं। वित्तीय बाजारों में कुछ फैलाव, विशेष रूप से वैश्विक जोखिम विमुखता में वृद्धि से संबद्ध फैलाव स्पष्ट थे। तथापि, चूँकि विकसित अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय बाजारों की उथल-पुथल खास तौर से सितंबर 2008 में लेहमैन की विफलता के बाद बनी रही, अत:ईएमई वित्तीय बाजार बढ़ी हुई अस्थिरता के साथ तीव्र दबाव में आ गए। सितंबर 2008 के बाद जैसे जैसे वैश्विक निवेशकों ने वित्तीय प्रणाली की निरंतर अवनति (डीलिवरेजिंग) के बीच उभरती बाजार परिसंपत्तियों की अपनी धारिताएँ वापस लीं, एशियाई शेयर और बाह्य निधीयन की स्थितियाँ तीव्रता से प्रभावित हुईं। एशियाई शेयर बाजारों का पतन परिपक्व बाजारों से भी अधिक तेजी से हुआ तथा सरकारी ऋण स्प्रेड उल्लेखनीय रूप में विस्तृत हुए। निधीयन की बढ़ी हुई लागतों के साथ ऊँची वित्तीय अस्थिरता और जोखिम-वहन क्षमता में तीव्र उलटाव ने एशियाई उधारकर्ताओं के लिए बाह्य निधीयन के स्रोतों को संकुचित कर दिया। इसके साथ ही एशियाई अपतटीय बांड निर्गम में तेजी से गिरावट, बड़ी मात्रा में पूँजी के बहिर्वाह तथा ढुलाई व्यापार का मोचन

(अनवाइंडिंग) घटित हुआ। इसके परिणामस्वरूप, इस क्षेत्र की मुद्राओं का तेजी से मूल्यह्रास हुआ। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में वित्तीय बाजारों के विभिन्न खंडों पर संकट के प्रभाव की चर्चा आगामी खंडों में विस्तार से की गई है।

अंतर- बैंक/मुद्रा बाजार पर प्रभाव

3.10 संकट द्वारा सर्वप्रथम वित्तीय बाजार के जो खंड प्रभावित हुए उनमें से एक अंतरबैंक बाजार था। संकट के शुरुआती लक्षण अगस्त 2007 में प्रकट हुए जब अंतर-बैंक बाजार में गंभीर विघटन हुए जिससे चलनिधि पर दबाव बढ़ गया। चूँकि अनिश्चितता सब-प्राइम संबंधी हानियों और उनके संकेंद्रण की सीमा तक हावी रही, अत: बैंक प्रतिपक्षी जोखिम के बारे में चिंतित हुए। बैंकों ने नकदी निधियों के लिए अपनी माँग बढ़ाई तथा एक दूसरे को उधार देने के लिए विमुख हो गये। इसके परिणामस्वरूप अंतर-बैंक ऋण बाजारों में निधीयन की स्थितियाँ गंभीर रूप से कठोर बन गईं। अनकदी और अनुभूत ऋण जोखिम में वृद्धि अंतर-बैंक दरों संबंधी स्प्रेडों की व्याप्ति के लिए कारण बनी। बाद में यह संकट मुद्रा बाजारों में भी फैल गया और इसने स्प्रेडों के असाधारण स्तरों, परिपक्वता अवधियों के न्यूनीकरण और कुछ बाजार खंडों के संकुचन अथवा समापन तक का भी रूप लिया। संसर्ग के माध्यम से ये तनाव गैर-वित्तीय निगमों और अर्थव्यवस्था के वित्तपोषण को भी प्रभावित किया।

उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में स्प्रेड

3.11 अंतर-बैंक बाजार में चलनिधि के दबाव की तीव्रता का एक संकेत तदनुरूपी परिपक्वता की लंदन अंतर-बैंक प्रस्ताव दर (लाइबोर) और एक दिवसीय सूचकांकित स्वैप (ओआइएस) दर में ब्याज दर के बीच स्प्रेड है। सिद्धांत के तौर पर यह स्प्रेड जोखिम प्रीमियम का एक माप उपलब्ध कराता है जिसमें दोनों ऋण और चलनिधि तत्व शामिल हैं। यह स्प्रेड अगस्त 2007 के प्रारंभ से बढ़ा, परंतु लेहमैन के बाद की अवधि में अमेरिका में 361 आधार अंक, यूके में 244 आधार अंक तथा यूरो क्षेत्र में 199 आधार अंक की अभूतपूर्व ऊँचाइयों पर पहुँचा (सारणी 3.1)। तथापि, संकट के दौरान जापान में अंतर-बैंक बाजार अपेक्षाकृत कम प्रभावित हुआ जहाँ संकट की ऊँचाई पर इसका स्प्रेड 80 आधार अंक के चरम पर था।

3.12 लेहमैन के बाद की अवधि में कुछ बड़ी वित्तीय संस्थाओं के पतन या लगभग पतन के उपरांत, स्प्रेड में इस तीव्र वृद्धि ने विशेष रूप से अमेरिकी डॉलर मूल्य वाले निधीयन के लिए चलनिधि जोखिम के बारे में बढ़ी हुई चिंताओं तथा बैंकिंग क्षेत्र के ऋण जोखिम में वृद्धि के

सारणी 3.1: अंतर-बैंक स्प्रेडों में उतार-चढ़ाव

(आधार अंक)

संकेतक	संकट से पूर्व मार्च 2007 के अंत में	लाइबोर-ओआइएस चरम स्तर	दिसंबर 2008 के अंत में	मार्च 2009 के अंत में	जून 2009 के अंत में
1	2	3	4	5	6
अमेरिका 3-माह लाइबोर-ओआइएस	8	361	123	99	37
यूरो 3-माह लाइबोर-ओआइएस	6	199	160	82	50
जापान 3 माह लाइबोर-ओआइएस	16	80	73	49	37
यूके 3-माह लाइबोर-ओआइएस	11	244	165	120	78

स्रोत : आइएमएफ, वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, (जीएफएसआर), अक्तूबर 2009.

बारे में चिंताओं को भी प्रतिबिंबित किया। यूरोप में वित्तीय बाजारों में इसी प्रकार की प्रवृत्तियाँ देखी गईं। खास तौर से विदेशी मुद्रा स्वैपों के लिए दबाव स्पष्ट थे, जहाँ बढ़ते हुए वित्तीय क्षेत्र ऋण स्प्रेड एवं अमेरिकी डॉलर निधियों के लिए बढ़ती हुई वैश्विक माँग ने डॉलरो की अंतर्निहित लागत को लाइबोर से ऊपर ऐतिहासिक रूप से उच्च स्तरों तक बढ़ा दिया। मुख्य खिलाड़ियों की सक्षमता के खतरे में होने और प्रतिपक्षी जोखिम की अनुभूति में वृद्धि होने के साथ अमेरिकी निवेश ग्रेड सीडीएक्स ऋण चूक स्वैप सूचकांक का स्प्रेड 42 आधार अंक उछला और अमेरिकी उच्च प्रतिफल के स्प्रेड केवल 15 सितंबर 2008 को ही 118 आधार अंक बढ़े। परिणामी अशांति घनिष्ठ रूप के एकीकृत वैश्विक वित्तीय प्रणाली के माध्यम से त्वरित रूप से व्याप्त हो गई जिसके कारण अन्य प्रमुख बाजारों में ऋण स्प्रेड और चौड़े हो गए (चार्ट III.1)।

3.13 अंतर-बैंक बाजार में निधीयन की समस्या वाणिज्य पत्र (सीपी) और बैंक जमा प्रमाणपत्रों (सीडी) के लिए बाजारों में तेजी से फैल गई जहाँ मुद्रा बाजार की निधियाँ एक मुख्य निवेशक समूह है। वाणिज्य पत्र बाजारों को तकलीफ प्रतिदानों/पुन:आबंटनों के कारण हुई तथा अनकदी अनुषंगी बाजारों को इन प्रतिभूतियों के लिए। अरक्षित वित्तीय पत्र ने सबसे अधिक बहिर्वाहों का नुकसान उठाया : अमेरिका में कुल बकाया वाणिज्य पत्रों (सीपी) की मात्राएँ कुल लगभग 1.76 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर से 10 सितंबर 2008 और 22 अक्तूबर 2008 के बीच 325 बिलियन अमेरिकी डॉलर से भी अधिक सीधे नीचे गिरीं। विदेशी बैंकों और उन अमेरिकी संस्थाओं ने जिनका अपना स्वयं का खुदरा जमा आधार नहीं था, इस प्रकार निधियों के एक महत्वपूर्ण स्रोत तक पहुँच को खो दिया, ऐसे समय जब उन्हें अपने द्वारा प्रवर्तित मुद्रा बाजार की निधियों का समर्थन देने अथवा उन्हें अपने तुलन-पत्रों में ले जाने की आवश्यकता थी। इसकी प्रतिक्रिया में अमेरिकी डॉलर

चार्ट III.1 : निधीयन नकदी और अंतर-बैंक स्प्रेड

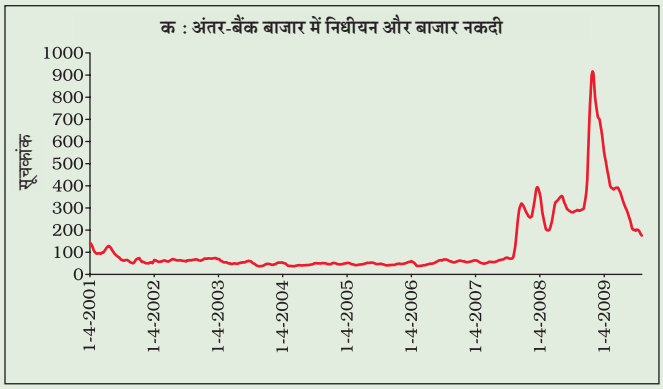

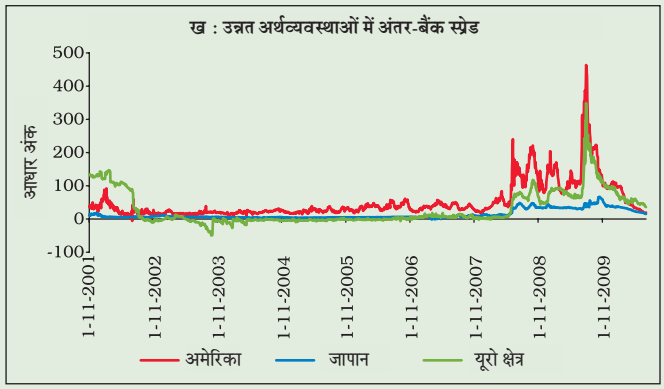

अंतर-बैंक निधियों के लिए माँग में जबरदस्त वृद्धि हुई जिसके कारण अल्पावधि ऋण और मुद्रा बाजार अवरुद्ध हो गए।

3.14 बाजार में ऐसी कठिन स्थिति के प्रत्युत्तर में फेडरल रिज़र्व ने विभिन्न ऋण सुविधाओं के साथ मुद्रा बाजार के तनाव दूर करने लिए कार्रवाई की जिन्हें 30 जुलाई 2008 को उपलब्ध कराया गया और उनमें वृद्धि की गई। तथापि, इन प्रयासों के प्रभाव ने बड़ी वित्तीय कंपनियों की चूक के बाद अनिश्चितता के बढ़ जाने से अंशत: प्रतिफल दिया। यूरो क्षेत्र में जमा दरों और एक दिवसीय सूचकांकित स्वैप (ओआइएस) दरों के बीच स्प्रेड अमेरिकी डॉलर चलनिधि के लिए यूरोपीय बैंकों से आई जबरदस्त माँग द्वारा प्रभावित हुए क्योंकि यूरो में उधार ली गई निधियों की अदला-बदली (स्वैप) अमेरिकी डॉलर के लिए करनी पड़ी ताकि यूरो क्षेत्र के बैंकों की निवेश स्थितियों का समर्थन किया जा सके जो इस मुद्रा में मूल्यवर्गीकृत थीं। यूरोपीय केंद्रीय बैंक (ईसीबी) ने अनुरक्षण की अवधियों के दौरान बैंकों को उनकी आरक्षित निधि संबंधी अपेक्षाएं पूरी करने की अनुमति देने के लिए अपने नियमित साप्ताहिक परिचालनों में विपुल चलनिधि उपलब्ध कराई। इसके अलावा, ईसीबी ने तीन और छह महीने की परिपक्वताओं के लिए अपने अनुपूरक दीर्घतर अवधि वाले पुनर्वित्तीयन परिचालनो का नवीकरण किया।

3.15 मात्रात्मक और ऋण को सुलभ बनानेवाली नीतियों, असाधारण चलनिधि उपायों और सरकार द्वारा गारंटीकृत निधीयन कार्यक्रमों ने अल्पावधि मुद्रा बाजारों के कार्यचालन को सुधारने में सहायता की है। मुद्रा बाजार की स्थितियों ने 2010 के शुरुआती महीनों में सुधरना लगातार जारी रखा है और इसके साथ ही बाजार और चलनिधि जोखिमों में गिरावट आई है क्योंकि परिसंपत्तियों की श्रेणियों के एक दायरे में परिसंपत्ति कीमतों का समुत्थान निरंतर जारी रहा है (अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, अप्रैल 2010)।

एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में स्प्रेड

3.16 बड़े अंतरराष्ट्रीय अंतर-बैंक बाजारों में विद्यमान चलनिधि के दबाव विभिन्न एशियाई अंतर-बैंक बाजारों - विशेष रूप से हांगकांग, सिंगापुर और दक्षिण कोरिया के मुख्य एशियाई वित्तीय केंद्रों में फैल गए, जहाँ अल्पावधि ब्याज दरें 2008 की दूसरी छमाही में उल्लेखनीय रूप से बढ़ गईं। स्थानीय मुद्रा में अंतर-बैंक बाजार दरों में वृद्धि ने उन देशों में मौद्रिक प्राधिकारियों को बाजार के परिचालनों को सामान्य बनाने के लिए चलनिधि का अंत:क्षेप करने के लिए प्रेरित किया। एशियाई मुद्रा बाजारों में घरेलू चलनिधि दबाव अनेक कारकों को प्रतिबिंबित करते हैं जिनमें शामिल हैं विदेशी और घरेलू मुद्रा बाजारों में अंतर-पणन, आर्थिक संभावना के बारे में बढ़ती हुई अनिश्चितता तथा संवर्धित जोखिम विमुखता। फिर भी, समग्र रूप में एशिया में घरेलू अंतर-बैंक बाजार उतनी तीव्रता से अवरुद्ध नहीं हुए जितनी तीव्रता से विकसित देशों में घरेलू अंतर-बैंक बाजार अवरुद्ध हुए। इन तीनों अर्थव्यवस्थाओं में घरेलू अंतर-बैंक बाजारों ने प्राधिकारियों की सहायता से सामान्य स्थिति की पुन: प्राप्ति का साक्षात्कार किया।

3.17 यह प्रतीत होता है कि अनेक नई केंद्रीय बैंक सुविधाओं के निर्माण और आवश्यक चलनिधि उपलब्ध कराने के लिए केंद्रीय बैंकों की इच्छा ने अल्पावधि चलनिधि की उपलब्धता के बारे में बैंकों में विद्यमान चिंताओं को दूर कर दिया है। तथापि, मुद्रा बाजार स्प्रेड तीन महीनों से अधिक परिपक्वता अवधियों के लिए बढ़ गए जो प्रतिपक्षी ऋण जोखिम की बढ़ती हुई चिंताओं का संकेत करते हैं। इस प्रकार के परस्पर लेनदेन की मुद्रा संबंधी कार्यकलाप तथा अन्य प्रमुख मुद्राओं के समतुल्य स्प्रेडों में परिवर्तनों के बीच अत्यधिक सहसंबंध यह दर्शाते हैं कि बाजार की अशांति के परिणामस्वरूप वैश्विक मुद्रा बाजार अधिकाधिक परस्पर संबद्ध हो गए हैं।

ऋण बाजार पर प्रभाव

3.18 विशेष रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में घटती हुई ऋण वृद्धि ने संकट के प्रभाव को बढ़ाने और उसका विस्तार एक बाजार से दूसरे बाजार में करने में उत्प्रेरक का काम किया। फिर भी, मुद्रा बाजार के असमान, ऋण प्रवाह संकट द्वारा एक समयांतर के बाद प्रभावित हुए थे क्योंकि ऋण प्रवाह संकट के प्रारंभिक चरणों के दौरान मजबूत थे। तथापि एक बड़ी सीमा तक इसने विशेष परिस्थितियों को प्रतिबिंबित किया। पहली, संकट के प्रारंभिक चरणों में प्रतिभूतिकरण संस्थाओं में पूर्व के तुलन-पत्र बाह्य एक्सपोज़रों को समेकित करने के लिए बैंकों पर बाजार और पर्यवेक्षी दबाव था। इसने कोई नये ऋण प्रदान किये बिना ही तुलन-पत्रों को फुला देने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया। दूसरी, उधारकर्ताओं ने संकट से पहले मंजूर की गई ऋण व्यवस्ताओं से आहरण करने के द्वारा ऋण की सख्ती की प्रत्याशा में अग्रक्रय के तौर पर प्राय: अत्यंत अनुकूल शर्तों पर निधियाँ जुटाईं।

ऋण वृद्धि में मंदी

3.19 कई उन्नत अर्थव्यवसाथाओं में लेहमैन के बाद के चरण के दौरान निजी क्षेत्र को ऋण की वृद्धि में एक तीव्र मंदी देखी गई, जहाँ लीवरेज को कम करने तथा पूँजी आधारों का पुन: निर्माण करने की बैंकों ने अपेक्षा की थी (चार्ट III.2)। निजी क्षेत्र को उधार देने में समग्र कमी मुद्रा धारित करनेवाले विभिन्न क्षेत्रों में व्यापक आधार से युक्त थी, यद्यपि समायोजन का स्तर अलग-अलग क्षेत्र में भिन्न था। उधार के मानक सभी श्रेणियों के ऋणों के संबंध में सख्त हो गये थे, हालांकि बंधकों सहित घरेलू ऋण के मामले में और अधिक तेजी से सख्त हुए थे। अधिकृत (नॉमिनल) आवास ऋण (गृह ईक्विटी ऋणों को छोड़कर) की अमेरिका में 2008 की दूसरी तिमाही से 2009 की पहली तिमाही तक 1-2 प्रतिशत की वार्षिक दर पर संविदा की गई तथा मार्च 2009 तक यूरो क्षेत्र में उसकी वृद्धि रुक गई। उधार के मानकों के सख्त होने के कारण अच्छे ऋण इतिहास से युक्त घर-परिवारों ने भी बंधक ऋण अथवा ऋण की गृह ईक्विटी व्यवस्था प्राप्त करने में कठिनाइयों का सामना किया। कई उन्नत देशों में उपभोक्ता ऋण की वृद्धि भी उल्लेखनीय रूप में मंद हो गई, इसका अपवाद केवल अमेरिका ही था जहाँ वह 2009 की पहली तिमाही में 9 प्रतिशत की वार्षिक दर से बढ़ी। बैंकों ने क्रेडिट कार्ड सीमाएं घटा दीं तथा आटोमोबाइल ऋण आवेदनपत्रों के अस्वीकरण को बढ़ा दिया। यद्यपि अनेक देशों में व्यावसायिक ऋण का विस्तार जारी रहा, तथापि वह नये उधार के बजाय मुख्य रूप से मौजूदा ऋण व्यवस्थाओं के उपयोग में वृद्धि द्वारा संचालित हुआ। आपूर्ति की ओर ऋण संबंधी बाधाओं के अतिरिक्त ऋण की वृद्धि में

चार्ट III.2 : ऋण बाजार पर प्रभाव

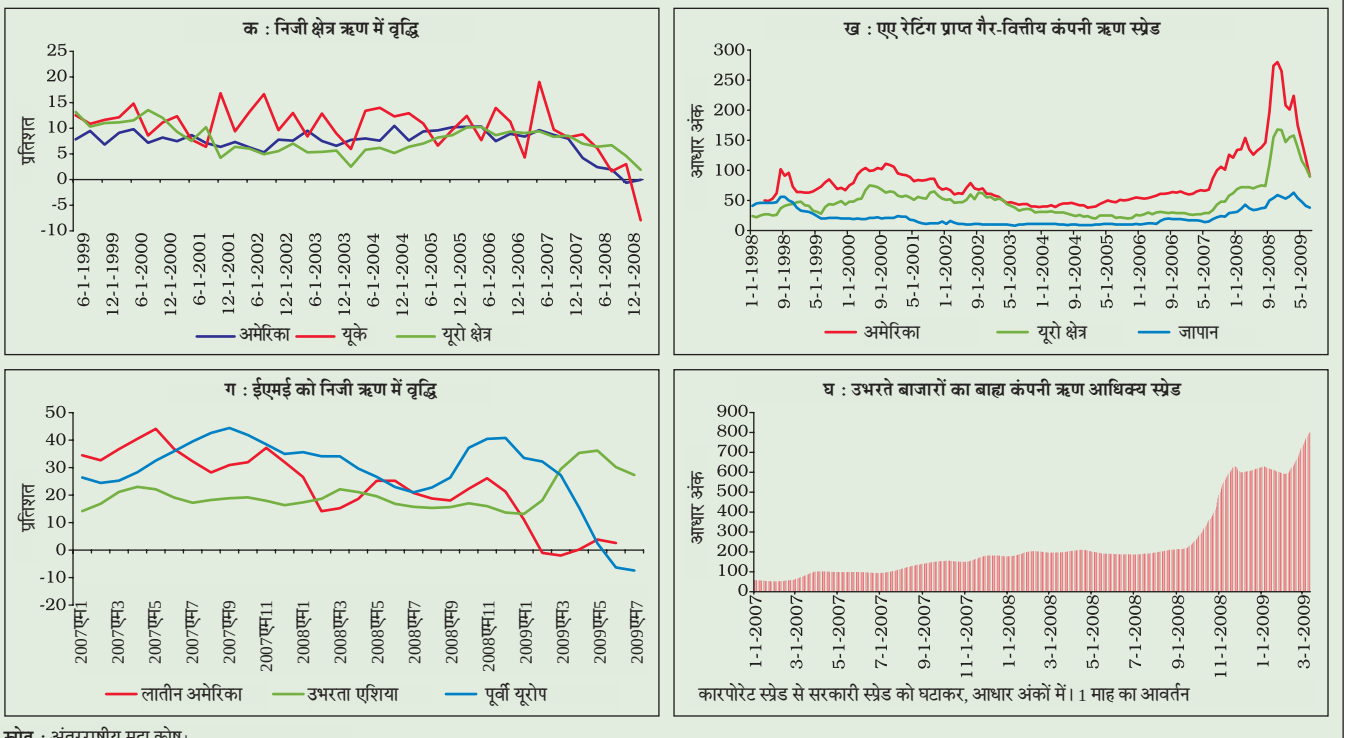

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

कुछ सीमा तक गिरावट ने भी माँग में मंदी को प्रतिबिंबित किया क्योंकि फर्मों और घर-परिवारों द्वारा पूँजी के परिरक्षण के प्रति एवं अधिक क्षमता और कर्ज के उच्च स्तरों का प्रबंधन करने के प्रति पुन: फोकस किये जाने के साथ ही बड़ी अर्थव्यवस्थाओं ने मंदी में प्रवेश किया।

3.20 सुधरे हुए निजी क्षेत्र के ऋण जोखिमों के बावजूद 2010 के प्रारंभिक महीनों के दौरान ऋण में वृद्धि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मंदी से युक्त बनी रही। बैंक पूँजी संबंधी कमियों और मंदी से भरी वित्तेतर ऋण वृद्धि ने उन अर्थव्यवस्थाओं में ऋण की आपूर्ति को कमजोर करना जारी रखा। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में ऋण वृद्धि के लिए संभावना मंदी से भरी और असमान बनी रही क्योंकि बैंक कर्ज को समेटने में लग गये और निजी मांग कमजोर रही।

3.21 उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) के भीतर सब-प्राइम और सीडीओ परिसंपत्तियों में एशियाई बैंकों के सीमित एक्सपोज़रों ने भली भाँति पूँजीकृत तुलन-पत्रों की स्थिति के होते हुए एशियाई अंतर-बैंक बाजारों को अपेक्षाकृत शांत रहने दिया। संकट के प्रारंभिक चरण के दौरान इस क्षेत्र में अधिकांश देशों में निजी घरेलू ऋण की वृद्धि में कोई उल्लेखनीय कमी नहीं थी (सारणी 3.2)। तथापि, जैसे जैसे संकट गहराता गया, अनेक देशों में ऋण वृद्धि दुर्बल हुई। 2009 की दूसरी छमाही के दौरान कई उभरती एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में ऋण वृद्धि लगातार मंदी से युक्त रही। जून-दिसंबर 2009 के बीच घरेलू क्षेत्र को ऋण में वृद्धि सिंगापुर में 7.8 प्रतिशत, इंडोनेशिया में 11.5 प्रतिशत, कोरिया में 2.4 प्रतिशत, ताइवान में 2.7 प्रतिशत और मलेशिया में 5.7 प्रतिशत रही। इन सभी अर्थव्यवस्थाओं के लिए घरेलू क्षेत्र की तुलना में कंपनी क्षेत्र को ऋण की वृद्धि निम्नतर रही (क्षेत्रीय आर्थिक संभावना : एशिया और पैसिफिक, अप्रैल 2010)। कई उभरती एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में ऋण वृद्धि की गति हाल के महीनों में बढ़ने लगी, जबकि उभरते हुए यूरोप में ऋण का निरंतर संकुचन हो रहा है यद्यपि उसकी गति मंद रही (अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, अप्रैल 2010)।

ऋण स्प्रेडों का विस्तारण

3.22 अमेरिका में ऋण चूक स्वैप (सीडीएस) के संकेतक दोनों वित्तीय और वित्तेतर क्षेत्रों के लिए सभी श्रेणियों में ऐतिहासिक ऊँचाइयों पर पहुँचे थे। इसी समय परिसंपत्ति-समर्थित प्रतिभूतियों (एबीएस) और संपार्श्विकीकृत ऋण दायित्वों (सीडीओ) का निर्गम मंद रहा। अमेरिकी सरकार की योजनाओं, संकटग्रस्त परिसंपत्ति राहत कार्यक्रम (टीएआरपी) जिसका उद्देश्य वित्तीय संस्थाओं के तुलन-पत्रों से संकटग्रस्त परिसंपत्तियों को बाहर लेने के लिए अमेरिकी खजाने को प्राधिकृत करने के द्वारा एबीएस बाजार में विश्वास को पुन:कायम करना था, तथा इसके बाद बैंकों को पूँजी के अंत:क्षेपणों ने आगे और चूकों के अनुभूत जोखिम को कम करने में सहायता की, जिसके परिणामस्वरूप बैंकों के सीडीएस स्प्रेड सख्त कर दिये गये (ईसीबी, 2009)(सारणी 3.3)। तथापि, वैश्विक बड़े और संश्लिष्ट बैंकिंग समूहों (एलसीबीजी) के लिए सीडीएस प्रीमियम अपेक्षाकृत उच्च स्तरों पर रहे जो उक्त कार्यक्रम के कार्यान्वयन, विशिष्ट संस्थाओं पर उसके प्रभाव तथा बैंकिंग क्षेत्र में उच्चतर निधीयन लागतों के असर के संबंध में चिंताओं के बारे में बाजार की अनिश्चितता को प्रतिबिंबित करता है।

सारणी 3.2: चयनित एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में निजी घरेलू ऋण की वृद्धि

(वर्षानुवर्ष, प्रतिशत)

	2006	2007	2008ति1	2008ति2	2008ति3	2008ति4
1	2	3	4	5	6	7
चीन	12.1	18.0	19.1	16.9	14.8	13.2
हांगकांग	4.3	7.6	9.6	14.6	18.3	0.6क
भारत	28.1	22.8	22.4	24.2	24.8	27.8क
इंडोनेशिया	13.9	18.9	27.4	31.5	34.2	36.5
कोरिया	10.8	14.3	14.3	16.0	16.2	16.4ख
मलेशिया	8.6	9.0	10.9	10.8	9.7	9.5क
फिलीपीन्स	1.2	5.9	8.4	8.9	16.9	16.5
सिंगापुर	3.6	10.2	18.5	20.5	20.7	17.5
थाईलैंड	6.4	3.3	5.4	6.8	9.5	9.7

क. नवंबर 2008। ख. अक्तूबर 2008।
स्रोत : एशियाई विकास बैंक संभावना, 2009।

सारणी 3.3: ऋण बाजार स्प्रेड

(आधार अंक)

	संकट से पूर्व 30/06/2007	लेहमैन पतन के समय 12/09/2008	एक वर्ष बाद 31/08/2009
1	2	3	4
आवासीय बंधक एबीएस			
युनाइटेड किंगडम	10	215	190
अमेरिका	26	875	1328
वाणिज्यिक बंधक एबीएस			
यूरोप	20	330	975
अमेरिका	30	290	650
उपभोक्ता एबीएस			
युनाइटेड किंगडम	12	255	465
अमेरिका	0-10	130-200	55-90

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, अक्तूबर 2009।

3.23 कुल मिलाकर, मुद्रा बाजार म्यूचुअल फंड क्षेत्र में संकुचन के संदर्भ में नकदी निधियों के लिए बढ़ती हुई माँग को देखते हुए वैश्विक अंतर-बैंक बाजार दबाव में आ गए जिससे अल्पावधि निधीयन तक बैंकों की पहुँच अवरुद्ध हो गई। मुद्रा बाजार जो पहले से ही दबावग्रस्त थे, बड़ी मात्रा में केंद्रीय बैंक द्वारा चलनिधि के अंत:क्षेपणों के बावजूद सामान्य स्थिति की पुन:प्राप्ति नहीं कर सके। फलस्वरूप अंतर-बैंक दरें ऐतिहासिक ऊँचाइयों पर तेजी से बढ़ीं। अन्य प्रमुख बाजारों, जैसे यूरो और स्टर्लिंग निधियों के लिए विद्यमान बाजारों की गतिविधियों ने भी इसी प्रकार के संकेत दिखाए, हालांकि साधारण ढंग से। इस प्रकार अशांति का प्रसार ऋण और मुद्रा बाजारों से वैश्विक वित्तीय प्रणाली में अधिक व्यापक रूप से हुआ। संक्रामकता उभरते बाजारों में भी व्याप्त हुई जिन्होंने जोखिम-वहन क्षमता के मंद स्तरों के बीच व्यापक आधार वाली परिसंपत्ति कीमतों में गिरावटों को देखा। जहाँ एक ओर एक अभूतपूर्व परिमाण में नीतिगत हस्तक्षेप ने मुद्रा बाजार की स्थितियों को स्थिर करने में मदद की, वहीं दूसरी ओर इसके बावजूद ऋण वृद्धि विशेष रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में हाल के महीनों में भी लगातार मंदी से युक्त बनी रही।

शेयर बाजार पर प्रभाव

3.24 शेयर बाजार वित्तीय क्षेत्र का एक और खंड है जिसने वैश्विक वित्तीय संकट की काफी गरमी को सहा है। हाल के वित्तीय संकट के दौरान विश्व भर के शेयर बाजारों ने अत्यधिक अस्थिरता और कीमतों में तेज गिरावटों को देखा है। तथापि, अन्य बाजारों के विपरीत इस संकट का प्रभाव परिपक्व शेयर बाजारों की तुलना में ईएमई शेयर बाजारों पर अधिक सुस्पष्ट था।

उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ

3.25 वर्ष के प्रारंभ से मार्च 2008 के मध्य तक यूरो क्षेत्र, अमेरिका और जापान में शेयरों की कीमतों ने एक गिरावट की प्रवृत्ति का अनुसरण किया। जब मार्च 2008 में जेपीमोर्गन चेज ने बियर स्टेर्न्स का अधिग्रहण किया तब यह प्रवृत्ति अंशत: उलट गई। बियर स्टेर्न्स बचाव पैकेज को बाजार सहभागियों द्वारा अनुकूल रूप में देखा गया, जिन्होंने अपने जोखिम-बोध को परिवर्तित कर लिया और इसके द्वारा शेयर बाजारों को स्थिर करने में अपना योगदान किया। इस पृष्ठभूमि में मार्च के मध्य से लेकर जून 2008 के प्रारंभ तक दी डोव जोन्स यूरो स्टोक्स में लगभग 10 प्रतिशत वृद्धि, दी स्टैंडर्ड एण्ड पूअर्स 500 में लगभग 8.5 प्रतिशत वृद्धि तथा दी निकेइ 225 में 22.5 प्रतिशत वृद्धि हुई। फिर भी, शेयरों की कीमतों में उतार-चढ़ाव सितंबर 2008 से सुस्पष्ट हुए जो लेहमैन ब्रदर्स के पतन और कई अन्य महत्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं की विफलता के बाद वैश्विक वित्तीय बाजारों में उत्पन्न अनिश्चितताओं को प्रतिबिंबित करता है। हानि उठा रही वित्तीय संस्थाओं की स्थिति तथा बदतर हो रही आर्थिक संभावना और कंपनी आय पर उसके प्रभाव के बारे में बढ़ती हुई चिंताओं ने 2008 की अंतिम तिमाही के दौरान बड़े शेयर सूचकांकों पर अधोमुखी दबाव डाला। इसके अलावा, गिरती हुई वास्तविक और प्रत्याशित आय वृद्धि ने भी अमेरिका और यूरो क्षेत्र में शेयर बाजारों के ऋणात्मक कार्यनिष्पादन में योगदान किया।

3.26 कीमतों में तीव्र गिरावटों के साथ ही, परिपक्व अर्थव्यवस्थाओं के शेयर बाजारों ने भी सितंबर 2008 से अत्यधिक अस्थिरता का अनुभव किया। सितंबर 2008 में दी एसएण्डपी 500 में ऐसे स्तरों तक तीव्र वृद्धि हुई जो 1987 के शेयर बाजार के पतन के बाद से नहीं देखे गये थे। समग्र रूप में 2008 के अंत में यूरो क्षेत्र, अमेरिका और जापान में दी डोव जोन्स यूरो स्टोक्स, दी स्टैंडर्ड एण्ड पूअर्स 500, और दी निकेइ 225 सूचकांकों द्वारा यथामापित शेयरों की कीमतें 2007 के अंत में उनके स्तरों की तुलना में क्रमश: लगभग 46 प्रतिशत, 39 प्रतिशत और 42 प्रतिशत निम्नतर थीं।

उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ

3.27 संकट के तीव्र प्रभाव को ईएमई शेयर बाजारों में मुख्य रूप से शेयरों की कीमतों में पतन के रूप में महसूस किया गया। अक्तूबर 2007 से अधिकांश उभरते एशियाई शेयर बाजारों में विदेशी संस्थागत निवेशकों (एफआइआइ) द्वारा शेयर उल्लेखनीय रूप में औने-पौने भाव पर (सेल ऑफ) बेचे गये। 2008 के दौरान ईएमई को ईक्विटी प्रवाहों में भारी गिरावट हुई जब इस वर्ष की अंतिम दो तिमाहियों में यह गिरावट अधिक स्पष्ट हुई थी। ईएमई को ईक्विटी प्रवाह 2007 के 207.8 बिलियन अमेरिकी डॉलर से तेजी से गिरकर 2008 में 54.2 बिलियन अमेरिकी डॉलर हो गये। ईक्विटी प्रवाहों के भीतर जबकि विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (एफडीआइ) के अंतर्गत अंतर्वाह संकट के दौरान अपेक्षाकृत आघात-सहनीय रहे, वहीं संविभाग प्रवाहों को सबसे अधिक कष्ट हुआ। तथापि, ईक्विटी प्रवाह 2009 की दूसरी तिमाही के दौरान वापस अपनी पुरानी स्थिति पर मजबूती के साथ लौट गए (सारणी 3.4)।

3.28 परिपक्व अर्थव्यवस्थाओं के विपरीत जहाँ शेयरों की कीमतों में गिरावट 2007 के मध्य प्रारंभ हुई, ईएमई में ईक्विटी कीमतों में गिरावट विशेष रूप से 2008 के मध्य से मजबूत रही।

सारणी 3.4: उभरते बाजारों के ईक्विटी निर्गम

(बिलियन अमेरिकी डॉलर)

देश	2007	2008	2009	2008		2009			
				ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
एशिया									
चीन	48.3	12.8	39.9	1.6	1.3	6.3	9.7	8.7	15.2
भारत	21.7	6.0	16.6	0.2	0.0	0.0	3.8	8.4	4.4
इंडोनेशिया	3.0	2.3	1.6	0.4	0.0	0.0	0.9	0.1	0.7
मलेशिया	1.8	0.7	4.0	0.0	0.0	0.1	0.4	0.5	3.0
फिलीपीन्स	2.2	0.2	0.3	0.0	0.0	0.0	0.0	0.3	0.0
थाईलैंड	0.8	0.4	0.1	0.0	0.0	0.0	0.0	0.1	0.0
यूरोप									
हंगरी	0.2	0.0	1.2	0.0	0.0	0.0	0.0	1.2	0.0
पोलैंड	0.5	1.2	2.8	0.0	0.6	0.0	0.2	0.4	2.2
रूस	29.6	2.9	1.0	0.0	0.0	0.0	0.2	0.5	0.3
लातीन अमेरिका									
अर्जेन्टीना	1.8	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0
ब्राजील	39.2	10.4	18.2	2.3	0.0	1.0	4.9	3.0	9.3
चिली	0.3	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0
मेक्सिको	2.1	2.1	1.6	0.0	0.0	0.0	0.0	1.6	0.0

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, अक्तूबर 2009, अप्रैल 2010।

एशियाई ईएमई के भीतर शेयर बाजार मूल्यांकन में जून और दिसंबर 2008 के बीच कोरिया में 35 प्रतिशत, भारत में 33 प्रतिशत और चीन में 36 प्रतिशत गिरावट हुई जो वैश्विक वित्तीय संकट के विस्तृत दायरे वाले प्रभाव को सूचित करता है (सारणी 3.5)। शेयर कीमतों में उक्त पतन अत्यधिक अस्थिरता की हालत में घटित हुआ तथा कुछ ईएमई ने अपने शेयर बाजारों में व्यापार को अस्थायी तौर पर बंद भी किया था।

3.29 कुल मिलाकर उभरते बाजार ईक्विटी मूल्यांकनों ने मई 2008 और नवंबर 2008 की समाप्ति के बीच लगभग 50 प्रतिशत हानि उठाई। उभरते बाजार बांड सूचकांक वैश्विक (ईएमबीआइजी) स्प्रेड 400 से अधिक आधार अंक विस्तृत हुआ तथा दीर्घकालिक घरेलू बांडों पर प्रतिफल 60 आधार अंक कम हुआ। जोखिम विमुखता, विदेशी पूँजी के प्रत्यावर्तन और कुछ मामलों में पण्य कीमतों में गिरावटों का भार ईएमई में ईक्विटी कीमतों पर आ पड़ा (सारणी 3.6)। ऐसे प्रभावों का भार अमेरिकी डॉलर की तुलना में ईएमई मुद्राओं के एक दायरे पर भी आ गया।

सारणी 3.5 : शेयर बाजार परिवर्तन - चयनित देश

(प्रतिशत)

देश	जून-दिसंबर 2008	दिसंबर 2008-दिसंबर 2009
1	2	3
उभरता एशिया		
चीन	-36	76
हांगकांग	-37	49
भारत	-33	80
दक्षिण कोरिया	-35	49
लातीन अमेरिका		
अर्जेन्टीना	-49	115
ब्राजील	-44	82
मेक्सिको	-24	46
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ		
जापान	-37	20
यूरो क्षेत्र	-33	24
अमेरिका (एस और पी 500)	-34	25

स्रोत : दी इकोनॉमिस्ट, विभिन्न अंक।

3.30 शेयरों की कीमतों में गिरावट के बीच 2008 में वैश्विक शेयर बाजार टर्नओवर में एक उल्लेखनीय गिरावट थी, यद्यपि यह गिरावट उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के संबंध में अधिक सुस्पष्ट थी। इसके अलावा, उक्त गिरावट पिछली तिमाहियों की तुलना में 2008 की अंतिम दो तिमाहियों के दौरान तीव्रतर थी।

सारणी 3.6: उभरती ईक्विटी कीमतों का कार्य-निष्पादन

(29 अगस्त 2008 से 16 मार्च 2009)

देश	सीडीएस स्प्रेड (आधार अंक)	ईक्विटी कीमतों में परिवर्तन (प्रतिशत)
1	2	3
ईएम एशिया औसत	205	-18.7
ईएम यूरोप औसत	524	-47.6
लातीन अमेरिका औसत	563	-27.6
अफ्रीका/मध्य पूर्व औसत	217	-43.0

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, अप्रैल 2009।

सारणी 3.7: विभिन्न देशों में शेयर बाजार पूँजीकरण

(बिलियन अमेरिकी डॉलर)

देश	1990	2000	2005	2006	2007	जून-08	सितं-08	दिसं-08	मार्च-09	जून-09	सितं-09	दिसं-09
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
अमेरिका												
अमेरिका	311	3,597	3,604	3,865	4,014	3,175	2,904	2,249	2,168	2,590	3,026	3,239
मेक्सिको	41	125	239	348	398	414	329	234	197	265	308	352
एशिया-पैसिफिक												
आस्ट्रेलिया	108	373	804	1,096	1,298	1,361	926	684	665	888	1,188	1,262
भारत	उ.न.	उ.न.	553	819	1,819	1,020	885	647	610	992	1,187	1,307
मलेशिया	48	113	181	236	325	270	217	189	181	231	261	286
श्रीलंका	1	1	6	8	8	7	6	4	5	7	8	10
हांगकांग	83	623	1,055	1,715	2,654	2,096	1,615	1,329	1,307	1,825	2,059	2,305
इंडोनेशिया	8	27	81	139	212	195	155	99	100	156	201	215
जापान	2,929	3,157	4,573	4,614	4,331	4,043	3,334	3,116	2,611	3,204	3,413	3,306
कोरिया	110	148	718	834	1,123	898	656	471	507	622	807	835
फिलीपीन्स	7	25	40	68	103	70	70	52	55	68	79	86
चीन	उ.न.	उ.न.	286	918	3,694	2,106	1,776	1,425	1,863	2,329	2,250	2,705
सिंगापुर	34	155	257	384	539	485	349	265	249	368	445	481
थाईलैंड	21	29	124	140	197	181	139	103	98	140	172	177
यूरोप-अफ्रीका-मध्य पूर्व												
स्पेन	111	504	960	1,323	1,781	1,715	1,222	948	831	1,089	1,322	1,435
इटली	149	768	798	1,027	1,073	867	663	522	418	532	680	656
हंगरी	उ.न.	12	33	42	46	41	32	18	14	21	29	30
तुर्की	19	70	162	162	287	192	188	118	110	165	216	234
दक्षिण अफ्रीका	137	131	549	711	828	748	535	483	445	608	709	799
लंदन	850	2,612	3,058	3,794	3,852	3,309	2,565	1,868	1,676	2,198	2,614	2,796
पोलैंड	उ.न.	31	94	152	212	182	146	91	69	93	123	151
आस्ट्रिया	26	30	126	199	236	198	118	76	72	91	119	114

स्रोत : शेयर बाजारों का वैश्विक महासंघ।

3.31 टर्नओवर में गिरावट के अनुरूप ही, प्रमुख शेयर बाजारों का बाजार पूँजीकरण जो 2008 की पहली छमाही से गिरने लगा, 2009 की पहली तिमाही तक यही प्रवृत्ति दर्शाता रहा। तथापि, वैश्विक शेयर बाजारों की सामान्य स्थिति में सुधार होने के साथ ही, ऐसे संकेत मिले हैं कि बाजार पूँजीकरण 2009 की दूसरी तिमाही से समुत्थान (रिकवरी) करने लगा। भारी समुत्थान के बावजूद 2009 की समाप्ति पर अधिकांश उभरती अर्थव्यवस्थाओं के लिए शेयर बाजार पूँजीकरण 2007 के स्तर से निम्नतर रहा (सारणी 3.7)।

3.32 एक क्षेत्रीय दृष्टिकोण से दोनों यूरो क्षेत्र और अमेरिका में वित्तीय उद्योग की शेयर कीमतों ने दिसंबर 2007 और दिसंबर 2008 के बीच सर्वाधिक भारी हानियाँ उठाईं जिनके संबंध में क्रमश: 57 प्रतिशत और 51 प्रतिशत गिरावट रही (चार्ट III.3)। वित्तेतर क्षेत्र की शेयर कीमतों का भी उल्लेखनीय रूप में पतन हुआ जो यूरो क्षेत्र में लगभग 41 प्रतिशत और अमेरिका में 36 प्रतिशत कम हो गईं। ऐसा प्रतीत होता है कि ईएमई में कुल शेयरों की तुलना में वित्तीय

चार्ट III.3: शेयर बाजारों में उतार-चढ़ाव

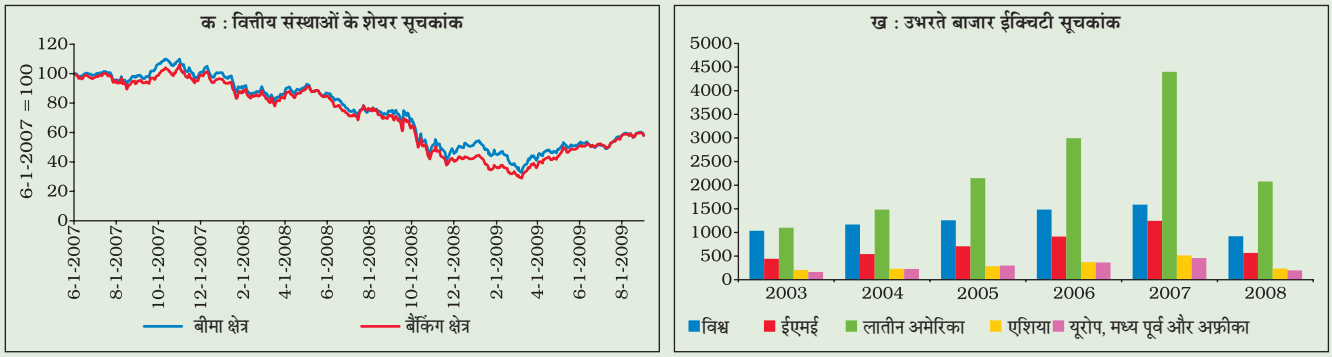

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

शेयरों में अधिकतर प्रारंभिक संक्रामकता के प्रभाव रहे हैं जो संभवत: बाह्य निधीयन पर उनकी कुछ वित्तीय संस्थाओं की निर्भरता को प्रतिबिंबित करता है। प्रतिबिंबित समग्र शेयर बाजार सूचकांक के सापेक्ष रूप में उभरते पूर्वी एशिया में बैंकों और वित्त कंपनियों के शेयर बाजार कार्यनिष्पादन में उल्लेखनीय गिरावट यह भय व्यक्त करती है कि आर्थिक वृद्धि के मंद होते ही, उभरते पूर्वी एशिया में बैंकों को संकट के परिणामस्वरूप भारी हानियाँ हो सकती थीं। सामान्य रूप से एशियाई शेयर बाजारों के पास सूचीबद्ध बैंकों और वित्त कंपनियों के अधिकांश सूचकांकों ने अगस्त 2007 से समग्र बाजार सूचकांकों से नीचे के स्तर का कार्यनिष्पादन किया है।

3.33 2009 के प्रारंभ में बिगड़ती हुई वैश्विक आर्थिक संभावना एवं वित्तीय प्रणाली की स्थिति के बारे में पुनर्नवीकृत चिंताओं ने परिपक्व अर्थव्यवस्थाओं की शेयर कीमतों में आगे और गिरावट को प्रेरित किया। 2008 की समाप्ति और 27 फरवरी 2009 के बीच दी डोव जोन्स यूरो स्टोक्स तथा स्टैंडर्ड एण्ड पूअर्स 500 संकेतांकों में क्रमश: लगभग 17 प्रतिशत और 19 प्रतिशत की गिरावट हुई। तथापि, 2009 की दूसरी छमाही में परिपक्व अर्थव्यवस्थाओं के शेयरों की कीमतों ने कुछ समुत्थान (रिकवरी) को दर्ज किया जब दिसंबर 2008 और अक्तूबर 2009 के बीच जापान, यूरो क्षेत्र और अमेरिका में प्रमुख शेयर सूचकांकों ने 10-15 प्रतिशत के दायरे में वृद्धि दर्शाई। अमेरिकी आर्थिक पुन:प्राप्ति के बारे में संकेतों की पृष्ठभूमि में दी डोव जोन्स औद्योगिक औसत ने 14 अक्तूबर 2009 को एक वर्ष में पहली बार 10,000 के संकेत को पार किया। फिर भी, 31 दिसंबर 2009 और 16 जून 2010 के बीच जापान और यूरो क्षेत्र के शेयर सूचकांकों में क्रमश: 5 प्रतिशत और 7 प्रतिशत की गिरावट हुई जो अंशत: यूरो क्षेत्र की संवृद्धि की संभावनाओं में अनिश्चितता के कारण है।

3.34 इसके विपरीत, ईएमई शेयर बाजारों ने 2009 की पहली छमाही में मजबूती से अपनी पूर्वस्थिति प्राप्त की जब एमएससीआइ (आल कंट्री) एशिया एक्स-जापान सूचकांक जोखिम-वहन क्षमता की कुछ वापसी को दर्शाते हुए नवंबर 2008 की अपनी निम्न स्थिति से 68 प्रतिशत ऊपर उठा। वर्ष 2009 के दौरान अक्तूबर तक चीन का संमिश्र शेयर बाजार सूचकांक 66.4 प्रतिशत बढ़ा, जो संभवत: चीन के बड़े राजकोषीय प्रोत्साहन पैकेज के प्रभावों को प्रतिबिंबित करता है। उभरते पूर्वी एशियाई शेयर बाजारों में पूर्वस्थिति की पुन:प्राप्ति के बावजूद वे 2008 के प्रारंभ में अपने स्तरों से नीचे ही रहे। इसके अलावा, शेयर बाजारों की पुन:प्राप्तियों के होते हुए भी वित्तीय शेयर कीमतों ने समग्र बाजार सूचकांकों की तुलना में कम अनुकूल रूप में कार्यनिष्पादन किया। भारत के बीएसई ने 16 महीने के अंतराल के बाद (मई 2008 के उपरांत पहली बार) 30 सितंबर 2009 को 17,000 का अंक पार किया। नवीनतम उपलब्ध प्रवृत्ति के अनुसार कुछ उभरते बाजार शेयर सूचकांकों ने दिसंबर 2009 की तुलना में गिरावट दर्ज की। उदाहरण के लिए चीन, हांगकांग और ब्राजील के शेयर सूचकांकों ने दिसंबर 2009 की समाप्ति और 11 जून 2010 के बीच क्रमश: 22 प्रतिशत, 8 प्रतिशत और 6 प्रतिशत की गिरावट दर्शाई जबकि अन्यों ने साधारण वृद्धि दर्ज की।

कारपोरेट बांड बाजार

3.35 उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) से कारपोरेट बांडों का निर्गम स्प्रेडों की बढ़ोतरी के बीच वित्तीय संकट के दौरान 2008 की दूसरी छमाही से तेजी से घट गया। इसके विपरीत, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के कारपोरेट बांड बाजारों ने संकट के दौरान अपेक्षाकृत आघात-सहनीयता प्रदर्शित की।

उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ

3.36 उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में हाल के वित्तीय संकट के दौरान वित्तेतर कारपोरेट बांड बाजारों में विघटन ऋण अथवा आवास बाजार में देखे गये विघटनों से कम तीव्र रहे थे। तथापि, वैश्विक वित्तीय बाजारों में बढ़ी हुई अनिश्चितता की अवधियों के दौरान स्प्रेडों के निर्गम और विस्तार में अस्थिरता की घटनाएँ रही थीं (चार्ट III.4)। समग्र रूप में अमेरिकी कारपोरेट बांड निर्गम अमेरिकी बंधक बाजार की तुलना में काफी कम प्रभावित हुआ, यद्यपि यह सूचना मिली कि संकट के दौरान बांड बाजारों में निधियाँ जुटाने में निम्नतर रेटिंग प्राप्त फर्मों ने कुछ कठिनाइयों का सामना किया।

उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ

3.37 हाल के वर्षों में चीन, ब्राजील और रूस जैसी कुछ उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं से आरंभिक सार्वजनिक प्रस्तावों (आइपीओ) के रूप में सीमापार कारपोरेट बांड निर्गम ने अपने पैमाने के तौर पर विकसित अर्थव्यवस्थाओं के साथ प्रतिद्वंद्विता की। वित्तीय अशांति के प्रारंभ से ईएमई से अंतरराष्ट्रीय कारपोरेट बांड निर्गमों में दोनों माँग और आपूर्ति कारकों की वजह से तेजी से गिरावट हुई (सारणी 3.8 और चार्ट III.4)। माँग की ओर फर्मों ने आगामी महीनों में अधिक सामान्य स्थितियों की वापसी की आशा में निर्गम में विलंब करने का निर्णय किया होगा। दूसरे, फर्मों के लिए अन्य निधियों तक पहुँच रही होगी और इसलिए वे अपेक्षाकृत अनकदी बाजार में बांड जारी करने के लिए अनिच्छुक थे। आपूर्ति की ओर, उधार देने के लिए कुछ

सारणी 3.8: उभरते बाजारों के बांड निर्गम - चयनित देश

(बिलियन अमेरिकी डॉलर)

क्षेत्र	2007	2008	2009
1	2	3	4
लातीन अमेरिका			
अर्जेन्टीना	3.4	0.1	0.5
ब्राजील	9.9	6.7	10.1
चिली	0.3	0.1	3.0
मेक्सिको	6.3	4.5	15.5
उभरता यूरोप			
हंगरी	4.1	5.3	3.0
पोलैंड	4.1	3.8	10.2
रूस	30.2	22.1	10.8
एशिया			
चीन	2.1	2.1	3.3
भारत	7.5	1.4	2.2
इंडोनेशिया	1.8	4.2	5.5
मलेशिया	0.9	0.4	0.1
फिलीपीन्स	1.0	0.4	5.4
थाईलैंड	0.8	0.5	-

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, अप्रैल 2010।

अनिच्छा रही होगी क्योंकि अनिश्चितता को देखते हुए ऋणदाता नकदी का संचय करना चाहते थे। ऐसी परिस्थिति में निम्नतर रेटिंग प्राप्त फर्में जोखिम के वैश्विक पुनर्निर्धारण के संदर्भ में सबसे अधिक दुर्बल बन गई थीं, जो अकसर बाह्य बाजारों में निधियाँ जुटाने पर निर्भर हैं जहाँ निवेशक सामान्य तौर पर जोखिम का वहन करने के लिए अधिक इच्छुक हैं।

3.38 सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स के पतन के अनुसरण में हाल के वित्तीय संकट के दौरान उभरते बाजार बांड स्प्रेड अपने शिखरों को छूते हुए ऐतिहासिक ऊँचाइयों तक पहुँच गए और 2009 की पहली और दूसरी तिमाहियों में लगातार उन्नत स्तरों पर बने रहे। तथापि, ये स्प्रेड उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं से कारपोरेट बांड निर्गम में सुधार के साथ 2009 की तीसरी और चौथी तिमाहियों के दौरान अत्यधिक संकुचित हुए (सारणी 3.9)।

3.39 2009 की दूसरी छमाही के दौरान कारपोरेट बांड बाजारों ने अधिक सामान्य ढंग से कार्य किया, जो अमेरिका जैसे देशों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है जो बैंकेतर बाजार वित्तपोषण पर अत्यधिक निर्भर हैं। कारपोरेट ऋण और परिसंपत्ति-समर्थित स्प्रेड उल्लेखनीय रूप में सख्त हो गए थे तथा निर्गम बढ़ गए थे क्योंकि फर्में दुर्लभ बैंक ऋण के लिए विकल्पों की अपेक्षा कर रही थीं। उच्च लागत और परिष्कृत तकनीक वाला (हाइ-एंड) निर्गम भी बढ़ गया था हालांकि वह अभी उच्चतर गुणवत्ता वाले ऋण तक सीमित था, एवं स्प्रेड ऐतिहासिक रूप से व्यापक रहे (अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट अपडेट, जुलाई 2009)। आर्थिक स्थितियों में सुधार

चार्ट III.4 : कारपोरेट बांड बाजार पर प्रभाव

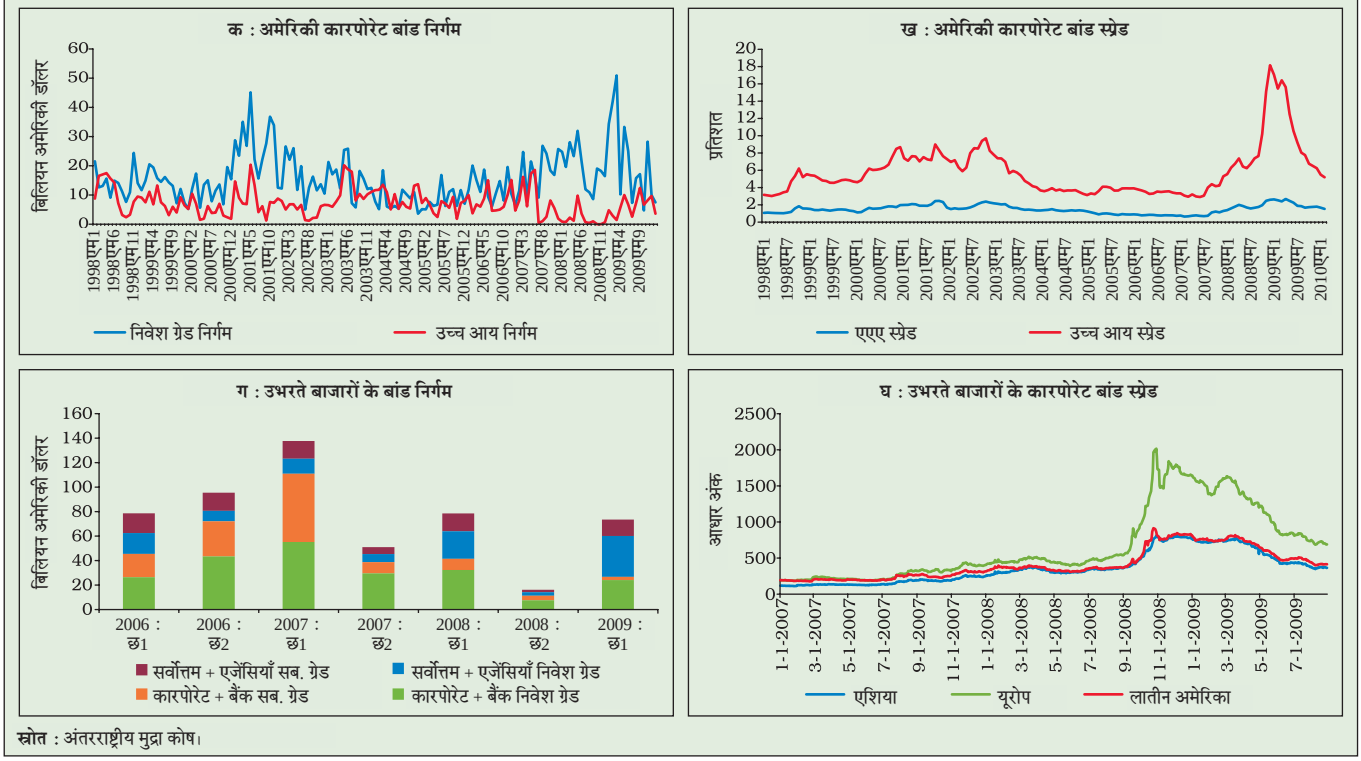

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

सारणी 3.9: उभरते बाजारों के बांड स्प्रेड - चयनित देश

(आधार अंक)

क्षेत्र	2007	2008	2009	2008				2009			
				ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
लातीन अमेरिका											
अर्जेन्टीना	410	1704	660	581	614	953	1704	1894	1062	784	660
ब्राजील	220	429	189	283	227	333	429	424	282	234	189
चिली	151	343	95	176	177	223	343	286	161	139	95
मेक्सिको	172	434	192	193	194	275	434	441	280	234	192
उभरता यूरोप											
हंगरी	84	504	186	163	134	174	504	540	373	220	186
पोलैंड	67	314	124	112	115	169	314	319	219	148	124
रूस	157	805	203	208	197	388	805	630	418	299	203
एशिया											
चीन	120	228	64	154	137	191	228	210	122	87	64
इंडोनेशिया	275	762	230	329	381	490	762	742	433	295	230
मलेशिया	119	370	136	144	153	194	370	344	167	174	136
फिलीपीन्स	207	546	206	273	303	324	546	432	324	265	206

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, अक्तूबर 2009, अप्रैल 2010।

के अस्थायी संकेतों के अनुरूप कारपोरेट बांड निर्गम 2009 में लातीन अमेरिका और एशिया की अधिकांश उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए बढ़ गया, यद्यपि हंगरी और रूस जैसी उभरते यूरोप की कुछ अर्थव्यवस्थाओं ने कुछ नरमी का अनुभव किया (सारणी, 3.8)।

सरकारी बांड बाजारों पर प्रभाव

3.40 विश्व भर में सरकारी बांड बाजारों की विशेषता संकट की अवधि में प्रतिफलों में बड़े परिवर्तनों (स्विंग्स) की रही, जो मुख्य रूप से गहन वित्तीय संकट के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभावों द्वारा संचालित थे। हाल के संकट के दौरान विश्वास के स्तरों में गिरावटों तथा प्रतिपक्षी जोखिमों में वृद्धियों के कारण निवेशकों ने अपना मार्ग बाहर मुख्य रूप से सरकारी लिखतों में अपेक्षित किया जो एक सीमा पर ऋणात्मक प्रतिफल दे रहे थे।

उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ

3.41 अत्यधिक दैनंदिन अस्थिरता के बीच दीर्घावधि सरकारी बांडों के प्रतिफलों की यूरो क्षेत्र और अमेरिका में उल्लेखनीय रूप में गिरावट हुई जो बड़ी सीमा तक अत्यधिक नकदी और सुरक्षित प्रतिभूतियों के लिए निवेशकों की निरंतर वरीयता, मौद्रिक नीति दरों में उल्लेखनीय कटौतियों, तथा अंतत: आर्थिक गतिविधि और मुद्रास्फीति के लिए बाजार की संभावना में तीव्र अधोमुखी संशोधनों को सूचित करता है।

3.42 जैसे जैसे संकट गहराता गया, सरकारी प्रतिभूतियों में प्रतिफलों में निरंतर गिरावट के साथ ही दोनों अमेरिका और यूरो क्षेत्र में अनेक उपाय घोषित किये गये जिनका उद्देश्य वित्तीय प्रणाली को समर्थन देना, उपभोक्ताओं के विश्वास को मजबूत करना, आर्थिक कार्यकलाप को स्थिर बनाना, एवं घर-परिवारों और कंपनी क्षेत्र को ऋण की उपलब्धता सुनिश्चित करना था। इन उपायों के बावजूद, दीर्घावधि सरकारी बांड प्रतिफलों में गिरावट की प्रवृत्तियाँ जारी रहीं, क्योंकि निवेशकों ने शेयरों और अन्य जोखिम-पूर्ण परिसंपत्तियों से सरकारी बांडों में परिवर्तन किया। अमेरिका में बांड प्रतिफलों में गिरावट यूरोप की तुलना में अधिक सुस्पष्ट थी क्योंकि अमेरिकी सरकारी बांडों को यूरो क्षेत्र के सरकारी बांडों की अपेक्षा औसतन अधिक तरल होने के रूप में देखा गया था। 2008 के अंत में यूरो क्षेत्र और अमेरिका के दस-वर्षीय सरकारी बांडों के प्रतिफल क्रमश: लगभग 3.6 प्रतिशत और 2.2 प्रतिशत रहे जो एक वर्ष पूर्व प्रचलित स्तरों से 75 और 184 आधार अंक कम थे (चार्ट III.5)।

उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ

3.43 उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) के अंतर्गत सामान्य रूप से सीडीएस स्प्रेडों ने पहले उन देशों में जो कुछ बाह्य दुर्बलताओं से युक्त थे अथवा जहाँ सरकारें बाह्य ऋण वित्तपोषण पर निर्भर थीं अथवा बाजार के कुछ विश्वास को खो दिया है, बढ़ने की प्रवृत्ति दर्शाई (सारणी 3.10)। ईएमई में अगस्त 2008 तक सरकारी ऋण बांड स्प्रेड सामान्यत: सीडीएस स्प्रेडों के साथ आनुपातिक तौर पर बढ़े जिसका अर्थ यह था कि जोखिम का पुन: कीमत-निर्धारण इस अवधि में बांड स्प्रेडों में वृद्धि को संचालित करने में एक महत्वपूर्ण कारक था।

चार्ट III.5 : सरकारी बांड आय में उतार-चढ़ाव

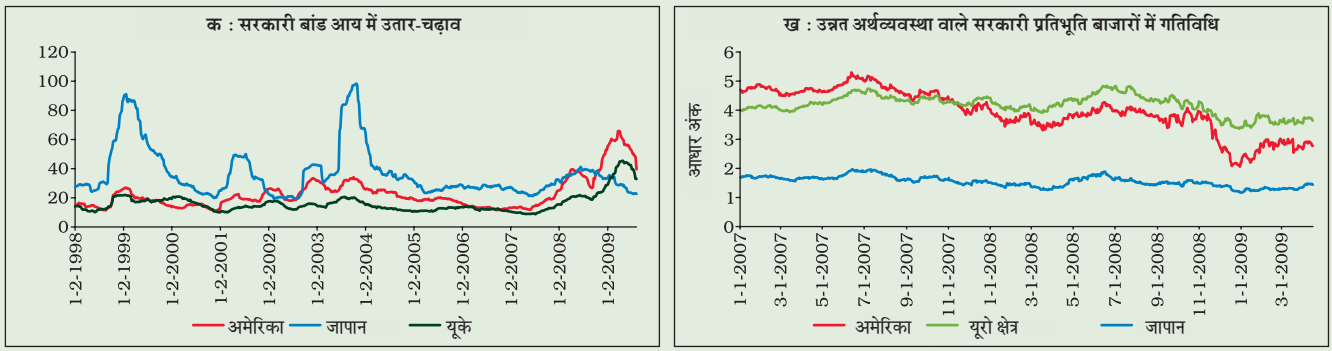

टिप्पणी : उतार-चढ़ाव की गणना 10-वर्षीय सरकारी बांड पर आय में परिवर्तनों के आवर्ती 100 दिवसीय वार्षिकीकृत मानक विचलन के रूप में की जाती है।
स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष

सारणी 3.10: उभरते यूरोप में सरकारी बाह्य उधार

देश	विदेशी मुद्रा में ऋण (कुल ऋणों का प्रतिशत)	सीडीएस स्प्रेडों में वृद्धि (आधार अंक)
1	2	3
चेक गणराज्य	9.1	276
हंगरी	61.9	451
पोलैंड	34.0	320
लात्विया	88.4	756
एस्तोनिया	85.3	588
बुल्गारिया	56.3	502
लिथुआनिया	64.0	670

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वैश्विक आर्थिक संभावना, अप्रैल 2009।

3.44 तथापि, सितंबर 2008 से ईएमई में स्प्रेड तेजी से बढ़ गए हैं जो उस वैश्विक जोखिम-विमुखता में बढ़ोतरी को सूचित करते हैं जो अंशत: इन चिंताओं से उत्पन्न हुई है कि विकसित अर्थव्यवस्थाओं में मंद हो रही वृद्धि और वित्तीय अशांति ईएमई में अधिकाधिक व्याप्त होगी। तथापि, विकसित अर्थव्यवस्थाओं के विपरीत, कई ईएमई के लिए जोखिम स्प्रेड उन स्तरों से नीचे रहे जो इन अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय संकट की अवधियों के दौरान पूर्व में पहुँच गए थे।

बाद में

3.45 सर्वोत्तम आय वक्र अत्यधिक ढालू हो गए क्योंकि पारंपरिक मौद्रिक नीति के सरलीकरण ने अल्पावधि दरें को नियंत्रित किया, जबकि उक्त वक्र का दीर्घतर अंत तेजी से बढ़ा जो अंशत: पुन:प्राप्ति की संभावनाओं और अपस्फीति के घटे हुए जोखिम को प्रतिबिंबित करता है। कई परिपक्व बाजार अर्थव्यवस्थाओं में लोक ऋण के स्तरों के उल्लेखनीय रूप में बढ़ जाने की प्रत्याशा के साथ ही राजकोषीय धारणीयता पर बढ़ा हुआ फोकस सरकारी ऋण चूक स्वैप स्प्रेडों में प्रतिबिंबित हुआ होगा जो उनके संकट-पूर्व स्तरों से काफी अधिक रहे (वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट - जीएफएसआर, जुलाई 2009 अपडेट, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष)। सरकारी ऋण स्प्रेडों में कमी रही है जो पूरी तरह प्राय: सुधरी हुई वैश्विक जोखिम-वहन क्षमता और मुख्य बाजार चलनिधि द्वारा संचालित रही है, जबकि कई देशों में घरेलू आर्थिक मूलभूत व्यवस्थाएँ 2009 की दूसरी तिमाही के दौरान निरंतर बिगड़ती रहीं। बहुत हाल ही में कुछ मूलभूत व्यवस्थाएँ पूर्व स्थिति में वापस आने लगी हैं, जैसे बाह्य संतुलन और सरकारी आरक्षित निधियाँ, तथा संवृद्धि की संभावनाएँ।

3.46 बांड आय वक्र 2009 की पहली छमाही में अधिकांश उभरते पूर्वी एशियाई बाजारों में ऊर्ध्वमुखी रूप में अंतरित हुए और ढालू भी हो गए। आय वक्रों की ऊर्ध्वमुखी गति और उनका ढालू होना अनेक कारणों से हो सकता है जिनमें शामिल हैं, (i) अतिरिक्त बाजार चलनिधि क्योंकि सरकारों ने राजकोषीय प्रोत्साहन का वित्तपोषण करने के लिए नये ऋण जारी किये; (ii) यह अनुमान कि नई चलनिधि भावी मुद्रास्फीतिकारी दबावों में वृद्धि कर सकती है; तथा (iii) आर्थिक पुन:प्राप्ति के बारे में निवेशकों की सुधरी हुई प्रत्याशाएं। चीन और कोरिया में जहाँ आर्थिक संवृद्धि मजबूत रही है, बांड आय वक्रों में एक उल्लेखनीय ऊर्ध्वमुखी अंतरण और एक अल्प ढालूपन रहा है। मलेशिया और थाईलैंड में राजकोषीय घाटों के परिमाण के बारे में चिंताएँ आय वक्रों के उल्लेखनीय रूप में सीधे होने एवं उन्हें ऊपर की ओर धकियाने में कारण रही होंगी।

हाल की गतिविधियाँ

3.47 राजकोषीय दुर्बलताओं से युक्त परिपक्व अर्थव्यवस्थाओं में सरकारी ऋण जोखिम प्रीमियम अभी हाल ही में व्यापक हो गए हैं। कुछ यूरोपीय अर्थव्यवस्थाओं के सरकारी बांड बाजार ग्रीस में ऋण संकट के बाद पुन: नवीकृत दबाव में आ गए। निवेशकों की बढ़ती हुई चिंताएँ ग्रीक बांडों और ऋण चूक स्वैप बाजारों में प्रतिबिंबित हुईं।

यूरोपीय केंद्रीय बैंक (ईसीबी) के निधीयन स्रोत की संभावित हानि ने ग्रीक सरकारी बांडों में ऋण चूक स्वैपों (सीडीएस) के प्रीमियमों और आय स्प्रेडों को बढ़ा दिया। आय स्प्रेड तब व्यापक हो गए जब पुर्तगाल और स्पेन में तीव्र राजकोषीय समस्याएँ उभर गईं। जर्मन बांडों की तुलना में ग्रीक दीर्घावधि सरकारी बांडों के स्प्रेड 27 अप्रैल 2010 को 650 आधार अंकों से भी अधिक बढ़ गए। मई 2010 में संकट से बाहर आने में ग्रीस की सहायता करने के लिए यूरोपीय संघ (ईयू) और अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आइएमएफ) ने एक करार किया। उक्त उपायों को अब तक वैश्विक वित्तीय बाजारों द्वारा भली भाँति अपनाया गया, जैसा कि ऋण, सरकारी प्रतिभूतियों और शेयर बाजारों के विभिन्न संकेतकों के रूप में प्रतिबिंबित है।

विदेशी मुद्रा बाजार पर प्रभाव

उन्नत अर्थव्यवस्थाएं

3.48 वर्तमान वित्तीय संकट के दौरान विदेशी मुद्रा बाजार का विकास मुद्रा और ऋण बाजारों जैसे अन्य वित्तीय बाजारों की गतिविधियों का एक उप उत्पाद है जो अगस्त 2007 से सख्त हो गए हैं। संकट के प्रारंभ से तत्काल बाद की अवधि में विदेशी मुद्रा स्वैप बाजारों में कुछ दबाव पाये गए, जिनमें उतार-चढ़ाव सामान्यत: रक्षित ब्याज समता स्थितियों द्वारा निर्देशित होते हें। तथापि, वित्तीय अशांति के प्रारंभ होने के बाद वास्तविक अमेरिकी डॉलर लाइबोर दरों और संबंधित विदेशी मुद्रा स्वैप द्वारा परिवर्तित यूरो, पौंड और येन की लाइबोर की अंतर्निहित अमेरिकी डॉलर दर के बीच भिन्नता है जो अमेरिकी डॉलर निधीयन प्राप्त करने मे दबाव का संकेत करती है। समय के चलते अपेक्षाकृत अधिक लंबी अवधि के विदेशी मुद्रा आधार वाले स्वैप बाजारों में भी बिखराव उभर गये थे (इनका उपयोग सामान्यत: एक वर्ष या अधिक अवधि की विदेशी मुद्रा देयताओं के लिए किया जाता है) क्योंकि यह महसूस किया गया था कि डॉलर निधीयन की आवश्यकताओं के बने रहने की संभावना है। संकट के गहराने के साथ ही अमेरिका से बाहर के बाजारों में, विशेष रूप से यूरोप में अमेरीकी डॉलर निधीयन एक बार फिर दुर्लभ हो गया जैसा कि स्प्रेड के उल्लेखनीय रूप में व्याप्त होने से स्पष्ट है। समुद्रपार से डॉलरों की माँग की समस्या को दूर करने के लिए फेडरल रिज़र्व ने अन्य प्रमुख केंद्रीय बैंकों के साथ अपने स्वैप परिचालनों का उल्लेखनीय रूप में विस्तार किया था।

3.49 अन्य बाजारों के अनुरूप विदेशी मुद्रा बाजारों में अस्थिरताओं में वृद्धि ने वित्तीय अशांति के दौरान ढुलाई व्यापार (कैरी ट्रेड) की स्थितियों के आकर्षण को कम कर दिया। सितंबर 2008 के प्रारंभ तक जी-7 की मुद्राओं की अस्थिरता ईएमई मुद्राओं की अस्थिरता से अधिक थी। ढुलाई व्यापार (केरी ट्रेड) में निवेशकों द्वारा कम प्रतिफल वाली मुद्रा में उधार लेना तथा उसकी आय का उपयोग अधिक प्रतिफल देनेवाली मुद्रा में निवेश के लिए करना संबद्ध है। कार्यनीति की अंतर्निहितता उन प्रत्याशाओं पर निर्भर है कि विनिमय दर में उतार-चढ़ाव ब्याज में अंतर वाली राशि के लिए पूर्णत: क्षतिपूर्ति नहीं करते। तथापि, बाजारों में अस्थिरता जोखिम को बढ़ाती है और ढुलाई व्यापारों (कैरी ट्रेड्स) के प्रतिफलों को कम कर देती है। वित्तीय अशांति के प्रारंभ से कैरी ट्रेड स्थितियों को अंशत: खोला गया है तथा ये कुछ शेयर बाजार की गतिविधियों अथवा गंतव्य देशों के लिए मुद्रा की गतिविधियों में एक कारक रही होंगी जिनकी सामान्यत: एक अपेक्षाकृत रूप में उच्च सांकेतिक ब्याज दरें होती हैं - उदाहरण के लिए ब्राजील, कोलंबिया, हंगरी, आइसलैंड, इंडोनेशिया, तुर्की और दक्षिण अफ्रीका। लेनदेनों की दूसरी ओर मूल्यवृद्धि के दबाव कुछ निधीयन मुद्राओं में कभी-कभी देखे गये हैं (जो प्राथमिक रूप से विकसित अर्थव्यवस्था की मुद्राएँ हैं), विशेष रूप से जापीनी येन में (अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, अप्रैल 2009)।

3.50 उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में वास्तविक प्रभावी रूप में जापानी येन ने एक मूल्यवृद्धि की प्रवृत्ति दर्शाई, जबकि यूरो और पौंड स्टर्लिंग का संकट की प्रारंभिक अवधि में मूल्यह्रास किया गया (चार्ट III.6)। 2007 के उत्तरार्ध से येन के वास्तविक प्रभावी मूल्य में तेजी से वृद्धि ने जापान के निर्यातों को मंद कर दिया। इसके विपरीत, यूके में व्यापार योग्य क्षेत्र स्टर्लिंग के प्रभावी मूल्य में भारी कमी से लाभान्वित हुआ। यूरो के एक वास्तविक मूल्यह्रास ने भी 2008 में यूरो क्षेत्र के निर्यातों की सहायता की, परंतु विनिमय दर की 2009 की पहली तिमाही में वृद्धि हुई। तथापि, अमेरिका में 2008 की दूसरी छमाही और 2009 की पहली तिमाही में डॉलर की मूल्यवृद्धि का अर्थ यह रहा कि संतुलन पर विनिमय दर पिछले वर्ष से व्यापार के विकास में अधिक तटस्थ बन गई है। सांकेतिक रूप में मार्च 2008 और मार्च 2009 के बीच अमेरिकी डॉलर की तुलना में यूरो और पौंड स्टर्लिंग का मूल्यह्रास मजबूती से हुआ, जबकि इसी अवधि में अमेरिकी डॉलर की तुलना में जापानी येन की मूल्यवृद्धि हुई। फिर भी, इन सभी मुद्राओं ने मार्च 2009 और फरवरी 2010 के बीच डॉलर की तुलना में नाम मात्र की मूल्यवृद्धि का अनुभव किया।

उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ

3.51 उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) के विदेशी मुद्रा बाजारों में गतिविधियों ने व्यापक तौर पर अपने शेयर बाजारों की गतिविधियों को प्रतिबिंबित किया। 2008 के दौरान और 2009 के

चार्ट III.6 : विनिमय दरों में उतार-चढ़ाव

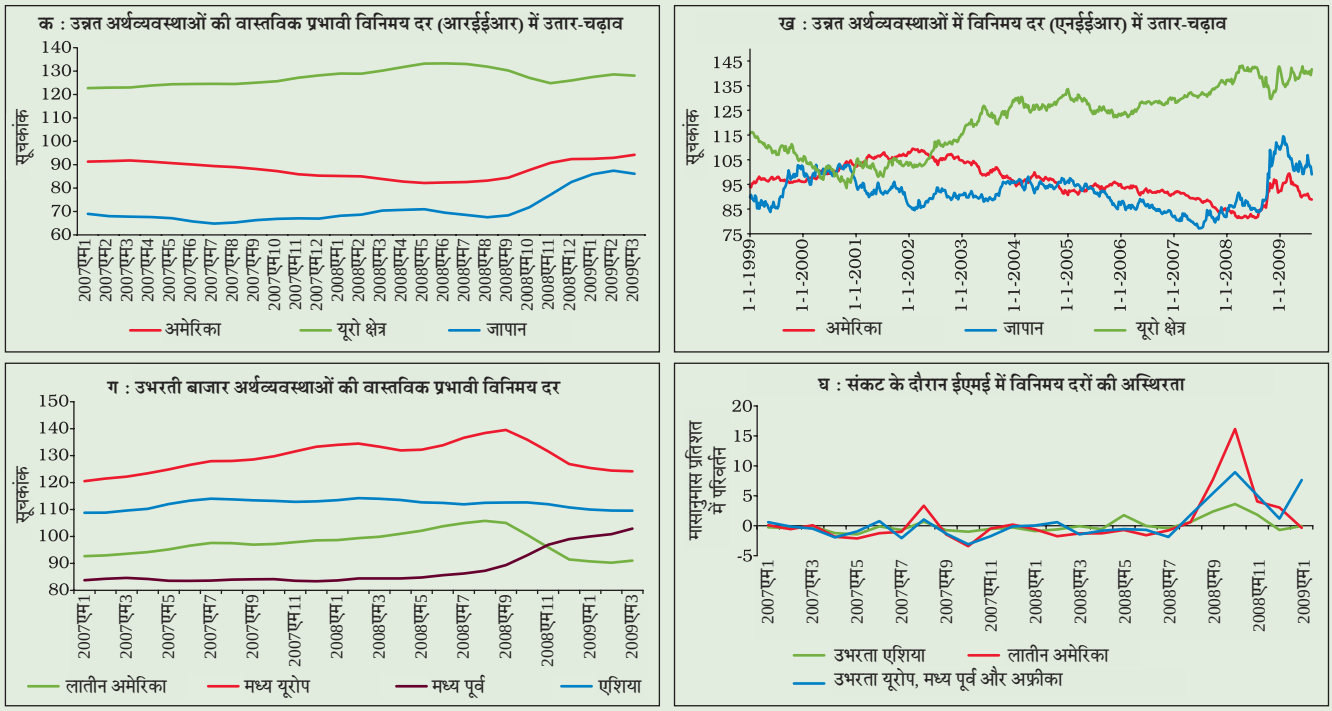

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

शुरुआती भाग में पूँजी बहिर्वाहों ने कुछ देशों, उल्लेखनीय रूप से भारत, कोरिया, न्यूजीलैंड और वियतनाम में मुद्राओं को विशिष्ट रूप से कमजोर कर दिया। पिछले कई वर्षों के विपरीत जब अधिकांश एशियाई देश अपनी मुद्राओं की तीव्र मूल्यवृद्धि के बारे में चिंतित थे, विभिन्न देशों ने उनकी मुद्राओं को सहारा देने के लिए हस्तक्षेप करने के द्वारा प्रतिक्रिया जताई (सारणी 3.11)।

सारणी 3.11: विनिमय दरें : अमेरिकी डॉलर की तुलना में मुद्राओं की मूल्यवृद्धि (+)/मूल्यह्रास (-)

(प्रतिशत)

मुद्रा	मार्च 2007 के अंत में मार्च 2006 के अंत की तुलना में	मार्च 2007 के अंत की तुलना में मार्च 2008 के अंत में	मार्च 2008 के अंत की तुलना में अगस्त 2008 के अंत में	अगस्त 2008 के अंत की तुलना में मार्च 2009 के अंत में	मार्च 2008 के अंत की तुलना में मार्च 2009 के अंत में	मार्च 2009 के अंत की तुलना में फरवरी 2010 के अंत में
1	2	3	4	5	6	7
यूरो	10.7	19.0	-7.4	-9.3	-16.0	1.4
पौंड स्टर्लिंग	13.7	2.0	-9.1	-21.4	-28.6	6.1
जापानी येन	-0.2	17.5	-8.2	11.2	2.0	9.9
चीनी युवान	3.8	10.1	2.8	-0.1	2.6	0.1
रूसी रूबल	6.7	10.6	-4.3	-27.7	-30.8	13.6
तुर्की लीरा	-2.9	5.3	11.0	-29.3	-21.6	8.4
भारतीय रुपया	2.3	9.0	-8.7	-14.1	-21.5	10.2
इंडोनेशियाई रुपैया	-0.5	-1.1	0.7	-20.9	-20.4	24.0
मलेशियाई रिंगिट	6.6	8.5	-5.9	-7.1	-12.6	7.0
दक्षिण कोरियाई वोन	3.3	-5.0	-9.1	-21.3	-28.4	19.4
थाई बाहट	11.0	11.2	-7.8	-3.8	-11.3	7.3
अर्जेन्टीनी पेसो	-0.6	-2.2	4.7	-18.6	-14.9	-4.4
ब्राजीली रियाल	5.9	17.1	7.4	-29.4	-24.2	-27.6
मेक्सिकी पेसो	-1.2	3.6	5.5	-29.2	-25.3	11.5
दक्षिण अफ्रीकी रैंड	-14.7	-10.1	5.1	-18.8	-14.7	23.1

3.52 वित्तीय संकट के दौरान अगस्त 2008 तक एशियाई, लातीन अमेरिकी और केंद्रीय यूरोपीय मुद्राओं की वास्तविक प्रभावी विनिमय दरें बढ़ गईं। तदुपरांत, वास्तविक प्रभावी विनिमय दरों (आरईईआर) का मूल्यह्रास अमेरिकी डॉलर की तुलना में इन मुद्राओं की विनिमय दर में सांकेतिक मूल्यह्रास के अनुरूप हुआ है (सारणी 3.12)। ये मूल्यह्रास अंशत: विश्व की सर्वाधिक महत्वपूर्ण मुद्राओं के संबंध में अमेरिकी डॉलर के मजबूत होने, एशियाई और लातीन अमेरिकी निर्यातों के लिए विश्वव्यापी माँग में कमी होने तथा क्षेत्र के वित्तीय बाजारों में सुदृढ़ ऋणात्मक दबावों के परिणामस्वरूप थे। तथापि, मध्य पूर्व के देशों के लिए वास्तविक प्रभावी विनिमय दरें (आरईईआर) अक्तूबर 2008 तक अधिकांशत: एक समान रहीं और उसके बाद उनकी मुद्राओं की मूल्यवृद्धि हुई।

बाद में

3.53 अर्जेंटीना और ब्राजील के अपवाद के साथ प्राय: सभी उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की मुद्राओं ने अपनी गिरावट को उलट दिया और 2009 की दूसरी तिमाही से अमेरिकी डॉलर की तुलना में मजबूत हो गईं। उभरते एशिया में इंडोनेशियाई रुपैया, कोरियन वोन, भारतीय रुपया और मलेशियाई रिंगिट के मूल्य में मार्च 2009 की समाप्ति और फरवरी 2010 के अंत के बीच अमेरिकी डॉलर की तुलना में क्रमश: 24.0 प्रतिशत, 19.4 प्रतिशत, 10.2 प्रतिशत और 7.0 प्रतिशत वृद्धि हुई। इसके अतिरिक्त, अधिकांश एशियाई देशों ने अपनी बाह्य स्थितियों को मजबूत कर लिया है - वे चालू खाता आधिक्य रख रहे हैं, बड़ी विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियाँ अनुरक्षित कर रहे हैं, तथा अपने निर्यातों में मंदी द्वारा प्रेरित अभूतपूर्व पतन को सहने के लिए निर्यातों का विविधीकरण कर रहे हैं। ईएमई को, विशेष रूप से चीन और भारत में पूँजी प्रवाहों की

सारणी 3.12: चयनित उभरते देशों की वास्तविक प्रभावी विनिमय दरों का उतार-चढ़ाव

(आधार 2005=100)

अवधि	भारत	चीन	ब्राजील	रूस	द. कोरिया	थाईलैंड	मेक्सिको	इंडोनेशिया	सिंगापुर
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
2006-07	98	102	112	112	107	111	99	117	102
2007-08	106	106	125	118	103	115	98	113	103
2008-09	98	118	122	122	79	113	92	107	108
2009-10	97	117	134	118	79	112	87	114	108
2008									
अगस्त 2008	102	115	140	125	89	112	103	116	107
सितंबर 2008	99	119	128	126	82	112	100	117	107
अक्तूबर 2008	96	123	111	127	72	113	87	112	108
नवंबर 2008	97	124	111	132	70	112	87	99	110
दिसंबर 2008	94	121	104	125	71	109	86	101	110
2009									
जनवरी 2009	95	121	110	113	72	110	83	103	109
फरवरी 2009	95	126	111	105	69	111	79	99	109
मार्च 2009	91	125	112	114	69	112	80	100	108
अप्रैल 2009	93	122	116	108	75	112	86	105	107
मई 2009	94	120	122	117	78	112	86	109	108
जून 2009	95	116	128	119	77	113	85	110	107
जुलाई 2009	95	116	129	115	77	112	85	111	108
अगस्त 2009	95	117	134	112	77	112	86	112	108
सितंबर 2009	94	117	135	115	78	111	83	112	107
अक्तूबर 2009	96	115	140	117	79	111	84	115	108
नवंबर 2009	98	113	141	120	80	111	85	115	108
दिसंबर 2009	99	115	140	118	80	111	88	116	108
2010									
जनवरी 2010	102	114	140	121	83	113	89	120	109
फरवरी 2010	102	118	138	122	82	114	89	120	108
मार्च 2010	105	116	142	131	84	116	92	121	109
अप्रैल 2010	107	116	145	123	86	117	94	123	111
मई 2010	108	120	144	131	83	119	90	123	112

टिप्पणी : आंकड़े व्यापार-आधारित भारों पर आधारित हैं जो विनिर्माण व्यापार प्रवाहों से व्युत्पन्न हैं, तथा दुहरे तौर पर भारित करने के द्वारा दोनों प्रत्यक्ष द्विपक्षीय व्यापार और तृतीयक बाजार प्रतियोगिता को ग्रहण करते हैं।

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक तथा भारतीय रिज़र्व बैंक।

पुन:प्राप्ति का स्पष्ट सबूत विद्यमान है। यह 2010 के प्रारंभ से वास्तविक प्रभावी तौर पर अधिकांश उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की मुद्राओं की मूल्यवृद्धि में परिणत हुआ। 19 जून 2010 को घोषित रेनमिनबी विनिमय दर व्यवस्था में आगे और सुधार के साथ कई उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) की विनिमय दर में वृद्धि हुई।

पण्य बाजार पर प्रभाव

लेहमैन से पहले : बढ़ती पण्य कीमतें

3.54 पण्य बाजार पर वित्तीय संकट का प्रभाव संकट के विभिन्न स्तरों पर विभिन्न पण्यों की माँग और आपूर्ति में परिवर्तनों के माध्यम से अप्रत्यक्ष रहा है। वित्तीय अशांति के प्रारंभिक चरणों के दौरान पण्य कीमतें उच्चतर स्तर पर पहुँच गई थीं जब निवेशकों ने मूल्यह्रास हो रहे अमेरिकी डॉलर और उच्चतर मुद्रास्फीति के विरुद्ध बचाव करने की अपेक्षा की। वित्तीय संकट के गहराने के साथ जैसे ही वित्तीय बाजारों में अनिश्चितताओ और जोखिम विमुखता में वृद्धि हुई, निवेशक पण्य बाजारों में अंतरण किया। इसने जुलाई-अगस्त 2008 तक पण्य कीमत खतरे (बबल) के निर्माण में सहायता पहुँचाई। तेल की कीमत 2007 के प्रारंभ में विद्यमान 50 अमेरिकी डॉलर से लगभग तिगुनी बढ़कर जुलाई 2008 में 140 अमेरिकी डॉलर हो गई। ब्रेन्ट कच्चे तेल की कीमतें 147.5 अमेरिकी डॉलर प्रति बैरल पर 11 जुलाई 2008 को चरम पर पहुँचीं। कई अन्य पण्यों के बारे में भी स्थिति यही थी जिन्होंने 2008 की पहली छमाही के दौरान बहुवर्षीय चरम कीमतों को दर्ज किया (चार्ट III.7)।

चार्ट III.7 : पण्य कीमतों में उतार-चढ़ाव

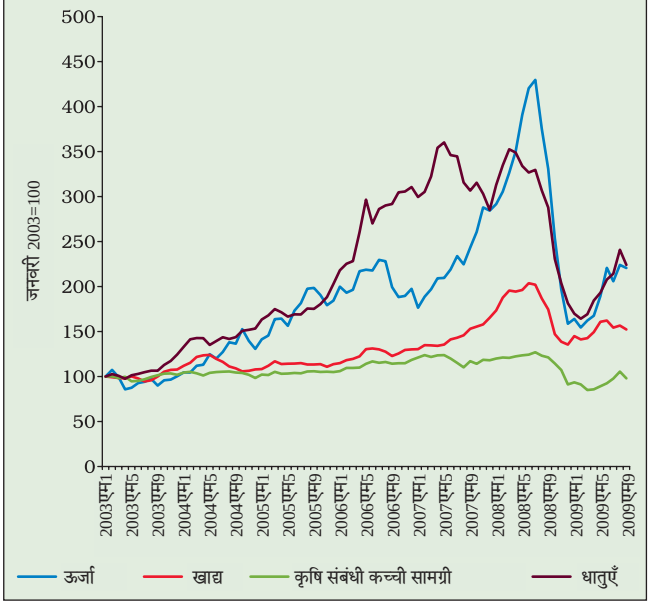

लेहमैन के बाद : गिरती पण्य कीमतें

3.55 सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स के पतन के बाद वित्तीय अशांति की गहनता एवं बिगड़ती वैश्विक आर्थिक संभावनाओं ने पण्य कीमतों में तेजी को समाप्त किया। मूल्य परिवर्तनों के परिमाण और उनकी अस्थिरता कुछ पण्यों के मामले में अभूतपूर्व स्तरों तक बढ़ गई। 2008 के अंत तक अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आइएमएफ) के प्राथमिक पण्य कीमत सूचकांक में जुलाई 2008 में उसकी चरम स्थिति से लगभग 55 प्रतिशत की गिरावट हुई थी। आर्थिक मंदी के कारण निम्नतर माँग की वजह से ब्रेन्ट कच्चे तेल की कीमतें लगभग 40 अमेरिकी डॉलर प्रति बैरल गिरीं। एक बड़े अंश तक आपूर्ति में कटौती करने का ओपेक (ओपीईसी) का निर्णय नये क्षेत्रों के उपलब्ध होने की प्रत्याशा में 2009 और 2010 में ओपेक की उत्पादन क्षमताओं में विस्तार होने के अनुमानों के बीच कीमतों को गिरने से नहीं बचा सका (यूरोपीय केंद्रीय बैंक की वार्षिक रिपोर्ट, 2008)। तथापि, समग्र रूप में वर्ष के लिए 2008 के दौरान ब्रेन्ट कच्चे तेल की औसत कीमत 98 अमेरिकी डॉलर प्रति बैरल थी जो पिछले वर्ष के औसत से 35 प्रतिशत अधिक थी।

3.56 तेल की तरह ऊर्जा से इतर पण्यों की कीमतें पूरे 2008 के दौरान अस्थिर थीं। 2008 की दूसरी छमाही के दौरान जैसे ही ऊर्जा की कीमतें कम होने लगी थीं, ऊर्जा से इतर पण्यों की कीमतों ने उनका अनुसरण किया। धातु कीमतें जिनकी गिरावट 2007 में शुरू हो चुकी थी, 2008 की दूसरी छमाही में और 2009 के प्रारंभ में अधिक तेजी से गिरीं। खाद्य कीमतों का भी पतन हुआ है, यद्यपि तेल कीमतों की तरह नाटकीय ढंग से नहीं, जो वैश्विक संवृद्धि के साथ उनकी अपेक्षाकृत दुर्बल संबद्धता के कारण है।

3.57 फरवरी 2009 में सबसे नीचे आने के बाद पण्य कीमतों ने तदुपरांत तेज पुन:प्राप्ति दर्ज की। 2009 के अंत तक आइएमएफ पण्य कीमत सूचकांक उसकी सर्वाधिक निचली स्थिति से 40 प्रतिशत से अधिक बढ़ गया था, जो मुख्य रूप से पेट्रोलियम और धातु की कीमतों में बड़ी वृद्धि के कारण था (सारणी 3.13)। सुधरी हुई वैश्विक आर्थिक और वित्तीय स्थितियों के साथ पेट्रोलियम की कीमते मजबूत हुईं। धातु में कीमतों में तेजी से वापसी मुख्य रूप से उभरती अर्थव्यवस्थाओं (खास तौर से चीन) में प्रत्याशित से अधिक मजबूत समुत्थान एवं उत्पादन में धारणीय कटौती से संचालित थी।

सारणी 3.13: वैश्विक पण्य कीमतों में उतार-चढ़ाव

(वास्तविक पण्य कीमत सूचकांक मासिक औसत 1990-99=100)

	दिसंबर 2009	अधिकतम मार्च 2008	न्यूनतम फरवरी 2009	औसत 2000-09
1	2	3	4	5
पण्य कीमत सूचकांक	172.1	230.6	123.2	133.6
ईंधन से इतर	106.2	131.4	85.2	89.0
खाद्य	97.4	122.7	88.9	82.6
पेय	120.1	110.7	99.6	77.6
औद्योगिक निविष्टियाँ	114.2	143.7	79.4	97.6
कृषि संबंधी कच्चा माल	73.8	77.7	58.9	75.2
धातु	162.3	222.3	103.9	124.3
ईंधन	271.9	380.9	180.7	201.1
कच्चा तेल	283.5	392.6	161.5	203.3

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वैश्विक आर्थिक संभावना, अप्रैल 2010।

आवास बाजार पर प्रभाव

उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ

3.58 अमेरिकी गृह कीमतों में गिरावट बाजार की अशांति के लिए सबसे अधिक महत्वपूर्ण प्रेरणा थी जिसने अगस्त 2007 से अनेक परिपक्व अर्थव्यवस्था की वित्तीय प्रणालियों को लगातार प्रभावित किया है। यूरो क्षेत्र के अधिकांश देशों में संपत्ति की कीमतों की वृद्धि में कमी जो 2007 की विशेषता थी, 2008 मे जारी रही जब कीमतें (वाणिज्यिक संपत्ति कीमतों सहित) कुछ देशों में गिरती रहीं। सकारात्मक दिशा में घरेलू क्षेत्र को ऋणों की वृद्धि में कमी तथा आवास कीमत वृद्धि में कमी ने जोखिमों को नरम बनाने में योगदान किया। तथापि, श्रम बाजार के लिए और घर-परिवारों की प्रयोज्य आय के लिए एक कम अनुकूल दृष्टिकोण अपने ऋणों की चुकौती करने के लिए घर-परिवारों की क्षमता में जोखिम के संभव आविर्भाव की ओर निर्दिष्ट करता है (बॉक्स III.1)।

उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ

3.59 उभरते एशिया में आवास की कीमतों ने उस तीव्र गिरावट का अनुभव नहीं किया जो अमेरिका अथवा यूरो क्षेत्र में देखी गई थी (चार्ट III.8)। उभरते एशिया की आवास कीमतों में गिरावटें साधारण रही हैं तथा इस क्षेत्र के शेयर बाजारों में देखी गई अधिघोषित कीमतों की गिरावटों के कहीं भी नजदीक नहीं हैं। सहज बोधनीय रूप से संपत्ति की कीमतें स्थानीय स्थितियों द्वारा निर्धारित की जाती हैं तथा औद्योगीकृत देशों, विशेष रूप से अमेरिका से संक्रामकता के प्रभावों के लिए काफी कम गुंजाइश है।

3.60 समाहार के तौर पर वैश्विक वित्तीय बाजारों के प्राय: सभी खंडों ने वित्तीय संकट के कंपनों का अनुभव किया, यद्यपि उनकी मात्रा भिन्न-भिन्न थी। अंतर-बैंक बाजार उक्त संकट द्वारा पहले प्रभावित वित्तीय बाजार के खंडों में से एक था। परिपक्व अर्थव्यवस्थाओं के अंतर-बैंक बाजार तीव्र चलनिधि संकट से पीड़ित हुए क्योंकि प्रतिपक्षी जोखिमों के भय से बैंक एक दूसरे को ऋण देने के लिए अनिच्छुक हो गए थे। बाद में यह संकट स्प्रेडों के असाधारण स्तर, परिपक्वताओं के न्यूनीकरण एवं कुछ बाजार खंडों के संकुचन और समापन के भी रूप में मुद्रा बाजारों में व्याप्त हो गया। ऋण की वृद्धि में तीव्र मंदी ने खास तौर से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में जहाँ बैंक उन्नयन (लीवरेज) को कम करने और पूँजीगत आधारों का पुनर्निर्माण करने की माँग करते हैं, उक्त संकट का संचरण वित्तीय संस्थाओं से वास्तविक अर्थव्यवस्था में करने के लिए एक माध्यम के रूप में कार्य किया। वैश्विक शेयर बाजारों, विशेष रूप से उभरते शेयर बाजारों ने संकट की काफी गरमाहट को वहन किया है क्योंकि विश्व भर के शेयर बाजारों ने कीमतें, टर्नओवर की मात्राओं और बाजार के पूँजीकरण में अत्यधिक अस्थिरता और तीव्र कमियों का साक्षात्कार किया है। तथापि, 2009 की दूसरी छमाही के दौरान वैश्विक शेयर बाजारों की स्थिति में समुत्थान (रिकवरी) के कुछ संकेत रहे हैं। पण्य बाजारों ने भी संकट के प्रतिकूल प्रभाव के उपरांत 2008 की दूसरी छमाही से उल्लेखनीय सुधारों को देखा है। विश्व भर के सरकारी बांड बाजारों ने प्रतिफलों में बड़े परिवर्तन (स्विंग) देखे हैं जो मुख्य रूप से गहन वित्तीय संकट के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभावों द्वारा संचालित हैं। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के कारपोरेट बांड बाजारों ने वर्तमान वित्तीय संकट के दौरान सापेक्ष आघात-सहनीयता प्रदर्शित की, भले ही 2008 की दूसरी छमाही से उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) से कारपोरेट बांड निर्गम उल्लेखनीय तौर पर स्प्रेडों के ऊँचे हो जाने की स्थिति के बीच कम हो गया।

3.61 अभूतपूर्व परिमाण में नीतिगत हस्तक्षेपों, परिवृत्त करनेवाली गुणात्मक और ऋण सरलीकरण नीतियों, असाधारण चलनिधि उपायों तथा सरकार द्वारा गारंटीकृत निधीयन कार्यक्रमों ने अल्पावधि मुद्रा बाजार, शेयर और कारपोरेट बांड बाजारों एवं विदेशी मुद्रा बाजार के कार्यचालन में सामान्य स्थिति को पुन: कायम करने में सहायता की। दूसरी ओर ऋण की वृद्धि अधिकांश उन्नत अर्थव्यवस्थाओं और कुछ उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में लगातार मंदी से युक्त रही जिससे दोनों आपूर्त और माँग की ओर की दुर्बलताएँ प्रतिबिंबित होती हैं। जबकि वैश्विक आर्थिक समुत्थान के साथ पण्य कीमतें सशक्त होने लगीं, कुछ परिपक्व बाजार अर्थव्यवस्थाओं में सरकारी बांड बाजार कमजोर राजकोषीय मूलभूत तत्वों के साथ दबाव में आ गये हैं।

बॉक्स III.1
घरेलू धन-संपदा पर गिरती परिसंपत्ति कीमतों का प्रभाव

पिछले कुछ वर्षों में परिसंपत्ति कीमत संबंधी तेजी, सशक्त आर्थिक संवृद्धि, तीव्र वित्तीय नवोन्मेषण तथा कम ब्याज दरों जैसे कारकों के एक समुच्चय ने परिपक्व अर्थव्यवस्थाओं में सट्टे से युक्त खतरे (बबल्स) उत्पन्न किये जिन्होंने बैंकों, अन्य वित्तीय संस्थाओं और फर्मों को अपने उधारों में वृद्धि करने के द्वारा अपने तुलन-पत्रों का उन्नयन (लीवरेज) करने के लिए प्रोत्साहित किया। अत: वित्तीय संकट के दौरान एक बार परिसंपत्ति कीमतें घटने लगीं, अत्यधिक ऋण भार अधारणीय हो गए, विशेष रूप से इसलिए कि घटी हुई गतिविधि आर्थिक संवृद्धि को सीमित करने लगी। इसने अन्य बातों के साथ-साथ घरेलू धन-संपदा में तेज गिरावट को प्रेरित किया जो फिर आर्थिक संवृद्धि में तीव्र पतन तक ले जानेवाले एक प्रमुख कारक के रूप में उभरा।

सब-प्राइम संकट के परिणामस्वरूप, परिसंपत्ति कीमतों का धन-संपदा प्रभाव और उपभोक्ता व्यवहार को उपयुक्त बनाने में उसकी संगतता तथा उपभोग और बचत से संबंधित निर्णयों ने प्रमुख नीतिगत महत्व प्राप्त कर लिया है। परिसंपत्ति कीमतों के भीतर शेयर कीमतों और नाममात्र की आवास कीमतों में गिरावट का घरेलू धन-संपदा पर सर्वाधिक सुस्पष्ट प्रभाव पड़ा। घटती हुई आवास कीमतें दोनों ही दिशाओं से घरेलू धन-संपदा को प्रभावित करती हैं। एक ओर जहाँ घटती हुई परिसंपत्ति कीमतों का घरेलू धन-संपदा पर प्रत्यक्ष ऋणात्मक प्रभाव है, वहीं दूसरी ओर गिरती हुई आवास कीमतों का अर्थ आवास की अंतर्निहित किराया लागत में कमी है, जो धन-संपदा के कुछ नकारात्मक प्रभावों को संतुलित करती है। इसके अलावा, निम्नतर कीमतें भावी मकान मालिकों के लिए एक निश्चित तत्काल भुगतान करने के लिए बचत करने की आवश्यकता को कम करते हुए आवासों को अधिक वहनीय बनाती हैं। तथापि, वर्तमान वित्तीय संकट के दौरान सामान्य रूप से ये सकारात्मक प्रभाव घरेलू धन-संपदा पर गिरती हुई परिसंपत्ति कीमतों के नकारात्मक प्रभाव को संतुलित नहीं कर सके।

कुल मिलाकर 2007 की दूसरी तिमाही से 2008 की चौथी तिमाही तक अमेरिकी घर-परिवारों ने अपनी निवल मालियत के लगभग 20 प्रतिशत (लगभग 13 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर) को खो दिया; प्रयोज्य आय के प्रतिशत के रूप में; यह हानि पिछले पाँच वर्षों में संचित धन-संपदा से अधिक थी। यूरो क्षेत्र में धन-संपदा की हानियाँ भी विभिन्न परिसंपत्तियों और देशों के बीच अधिक व्याप्त बन गई हैं। परिसंपत्ति कीमतों में ह्रास के कारण विशेष रूप से परिपक्व बाजार अर्थव्यवस्थाओं में घरेलू धन-संपदा में कमी का उपभोग व्यय के लिए प्रत्यक्ष निहितार्थ है। आर्थिक साहित्य यह सूचित करता है कि घर-परिवारों का उपभोग व्यय वास्तविक ब्याज दर, आय की अनिश्चितता, संपत्ति से इतर आय की वृद्धि दर, तरल परिसंपत्तियों, अनकदी वित्तीय परिसंपत्तियों और आवास धन-संपदा सहित अनेक कारकों पर आधारित है (म्यूएलबोएर, 2008)। उपभोग व्यय पर धन-संपदा के संकुचन का प्रभाव संस्थागत व्यवस्थाओं के आधार पर विभिन्न देशों में भिन्न-भिन्न होने की संभावना है। यद्यपि अनुसंधानकर्ता उपभोग पर धन-संपदा के प्रभाव के अनुमानों के संबंध में सहमत नहीं हैं, तथापि आवास धन-संपदा का प्रभाव सामान्यत: महत्वपूर्ण माना जाता है - जो विभिन्न अध्ययनों में आस्ट्रेलिया, कनाडा, अमेरिका और युनाइटेड किंगडम में 3 से 7 सेंट प्रति डॉलर के बीच के दायरे में है। यह यूरो क्षेत्र के लिए अपेक्षाकृत अल्प माना जाता है। आवास धन-संपदा से ईक्विटी कर्षण आस्ट्रेलिया, कनाडा, युनाइटेड किंगडम और अमेरिका में उन्नति के दौरान महत्वपूर्ण था, इसलिए अन्य देशों की तुलना में इन देशों में घरेलू व्यय के अधिक प्रभावित होने की संभावना है। कुछ अनुमान यह सुझाते हैं कि अमेरिका में वार्षिक रूप से उपभोग के लगभग 1.75 प्रतिशत का वित्तपोषण 2001-05 के दौरान आवास ईक्विटी आहरणों के माध्यम से किया गया, अथवा 3 प्रतिशत का यदि बंधकेतर ऋणों की चुकौती के लिए प्रयुक्त आहरण भी शामिल हैं। युनाइटेड किंगडम में आवास ईक्विटी आहरण उलट गया जो 2003 में करोत्तर आय के 7 प्रतिशत से अधिक से गिरकर 2008 में 1 प्रतिशत हो गया। इसके विपरीत यूरो क्षेत्र में ईक्विटी कर्षण ने समग्र रूप में घरेलू व्यय में एक अपेक्षाकृत छोटी भूमिका अदा की जो दोनों एक निम्न गृह स्वामित्व अनुपात और कुछ देशों में एक कम विकसित बंधक बाजार के कारण था।

आय की तुलना में उपभोग के अधिक तेजी से क्षीण होने के साथ अनेक उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में घरेलू बचत दरें बढ़ गईं, खास तौर से उन देशों में जहाँ वे कम थीं। अमेरिका ने बचत में 2007 की अंतिम तिमाही और 2009 की पहली तिमाही के बीच प्रयोज्य आय के लगभग 4 प्रतिशत अंक (4.2 प्रतिशत तक) की तीव्र वृद्धि दर्ज की। आस्ट्रेलिया और युनाइटेड किंगडम ने भी घरेलू बचत में एक छलांग देखी, जो 2008 की पहली तिमाही में लगभग शून्य और एक ऋणात्मक बचत दर थी तथा चौथी तिमाही में बढ़कर क्रमश: 8.5 प्रतिशत और 4.8 प्रतिशत हो गई। यूरो क्षेत्र के घर-परिवारों का बचत करने का रुझान भी उल्लेखनीय रूप में बढ़ा जहाँ बचत दर 2008 की अंतिम तिमाही में 1 प्रतिशत अंक (15.1 प्रतिशत तक) बढ़ी। इसके अतिरिक्त, पेंशन निधि परिसंपत्तियों के मूल्य में तीव्र गिरावट सेवानिवृत्ति के नजदीक विद्यमान उन व्यक्तियों को बचत को बढ़ाने अथवा सेवानिवृत्ति को आस्थगित करने के लिए मजबूर कर सकती है, जिन्होंने अंशदायी पेंशन योजनाओं को निश्चित किया है जिनमें लाभों को परिसंपत्तियों के बाजार मूल्य के साथ संबद्ध किया जाता है। परिभाषित लाभ योजनाओं के मामले में निधीयन के बड़े अंतर उनका प्रवर्तन करनेवाले निगमों की वित्तीय स्थिति को हानि पहुँचा सकते हैं तथा गारंटीकृत लाभ उपलब्ध कराने अथवा मौजूदा रोजगार को बनाये रखने की उनकी क्षमता को कम कर सकते हैं।

संदर्भ

1. अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक, 2009, 79वीं वार्षिक रिपोर्ट।
2. यूरोपीय केंद्रीय बैंक, 2009। ईसीबी वार्षिक रिपोर्ट 2008।
3. मुएलबोएर, जॉन, 2008। "हाउसिंग, क्रेडिट एण्ड कंज्यूमर एक्सपेंडिचर।" सीईपीआर डिस्कशन पेपर सं. 6782। अप्रैल।

चार्ट III.8: आवास कीमतों में उतार-चढ़ाव

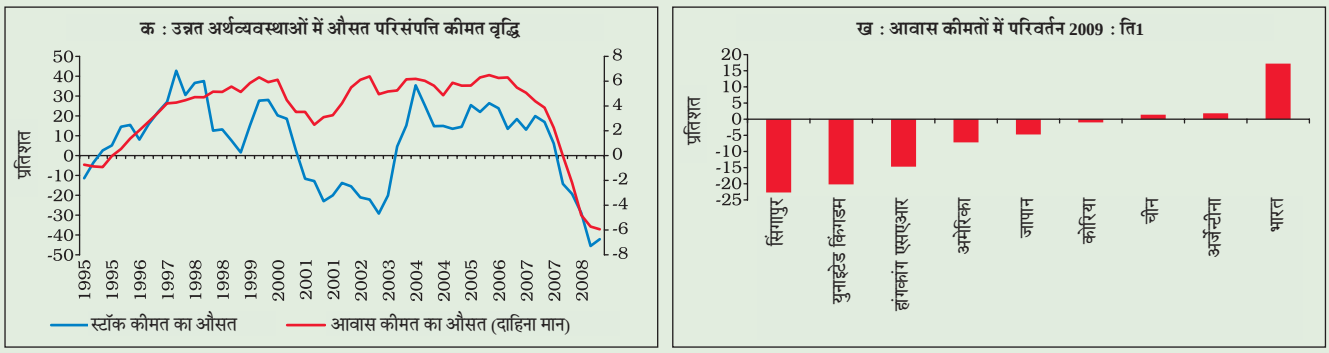

टिप्पणी : वर्षानुवर्ष मुद्रास्फीति ने प्रतिशत में परिवर्तन को समायोजित किया।
स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

II. वित्तीय प्रणाली पर प्रभाव

3.62 जैसी कि पिछले अध्याय में चर्चा की गई है, नई वित्तीय संरचना की दोषपूर्ण संस्थाएं और प्रथाएँ - जिनकी विशेषता बृहत् बैंक समूहों की वैश्विक रूप से एकीकृत प्रणाली एवं 'छाया बैंकिंग प्रणाली' है जिसके अंतर्गत निवेश बैंक, बचाव निधियाँ तथा बैंक-निर्मित विशेष निवेश संस्थाएँ आती हैं - हाल के वित्तीय संकट के पीछे संभावित कारक थे। अत: स्वाभाविक रूप से हाल के वित्तीय संकट का तीव्रतम प्रभाव विशेष रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की वित्तीय संस्थाओं पर रहा। यह संकट अमेरिकी वित्तीय प्रणाली और विनियामक ढाँचे में अंतर्निहित प्रमुख दुर्बलताओं को सामने लाया है जिन्होंने 'छाया बैंकिंग प्रणाली' द्वारा उत्पन्न किये गये प्रणालीगत जोखिमों एवं आवास और ऋण खतरों (बबल्स) के निर्माण को नहीं पहचाना। समय के चलते उक्त 'छाया बैंकिंग' संस्थाएं अमेरिकी अर्थव्यवस्था को ऋण उपलब्ध कराने में प्राय: वाणिज्य बैंकें के समान ही महत्वपूर्ण बन गईं, परंतु वे उन्हीं विनियामक नियंत्रणों के अधीन नहीं थीं। दूसरी ओर ये संस्थाएं दुर्बल थीं क्योंकि इन्होंने दीर्घावधि, अनकदी और जोखिमपूर्ण परिसंपत्तियों को खरीदने के लिए चलनिधि बाजारों में अल्पावधि उधार लिया। इसके अलावा, इन संस्थाओं एवं कुछ विनियमित बैंकों ने भी उल्लेखनीय ऋण भारों को स्वीकार किया था तथा इनके पास बड़ी ऋण चूकों अथवा बंधक समर्थित प्रतिभूतियों (एमबीएस) संबंधी हानियों का अवशोषण करने के लिए पर्याप्त वित्तीय गुंजाइश नहीं थी। इन सभी कारकों ने मिलकर अमेरिकी वित्तीय प्रणाली को अधिकाधिक कमजोर और संकट के प्रति असुरक्षित बना दिया।

3.63 संकट के प्रारंभ होने पर जैसे ही अमेरिकी स्थावर संपदा (रियल एस्टेट) के खतरे का विस्फोट हुआ, बंधक संबंधी परिसंपत्तियों के तेज अवमूल्यन ने वित्तीय संस्थाओं के तुलन-पत्रों पर बड़े पैमाने पर अवलेखनों को प्रेरित किया जिससे उनका पूँजी आधार घट गया। ऋण बाजारों में विघटन ने उन्हें तेजी से अवनति (डीलिवरेजिंग) तथा घटी कीमतों पर अपनी दीर्घावधि परिसंपत्तियों के औने-पौने विक्रय (सेल ऑफ) के अधीन कर दिया। इसने वित्तीय संस्थाओं के तुलन-पत्र पर भारी हानियों को उत्पन्न किया। जून 2007 में दो बियर स्टेर्न्स निधियों के पतन ने सब-प्राइम संकट के प्रारंभ को अंकित किया। तथापि, यह संकट सितंबर 2008 में बदतर हुआ जब कुछ ही दिन के अंदर लेहमैन ब्रदर्स ने दिवालियेपन के लिए दायर किया, मेरिल लिंच को बैंक ऑफ अमेरिका द्वारा खरीद लिया गया, तथा अमेरिकी अंतरराष्ट्रीय समूह (एआइजी) ने अमेरिकी फेडरल रिज़र्व (यूएस फेड) से एक बचाव पैकेज प्राप्त किया। इसके साथ ही अनेक महत्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं विफलता सामने आई। इन गतिविधियों का परिणाम बड़ी आर्थिक सहायताओं (बेल आउटों) सहित अमेरिकी सरकार और केंद्रीय बैंकों द्वारा अभूतपूर्व नीतिगत हस्तक्षेपों में हुआ जिसने अमेरिका के वित्तीय परिदृश्य में नाटकीय परिवर्तनों के लिए मार्ग प्रशस्त किया।

3.64 अमेरिकी वित्तीय प्रणाली में निर्मित दबाव तेजी से यूरोप में फैल गया। यूरोप में संकट का एक पहला शिकार ब्रिटिश बैंक, नॉर्थर्न रॉक था जिसे बैंक ऑफ इंग्लैंड से सुरक्षा के लिए अनुरोध करना पड़ा। इससे निवेशकों में आतंक व्याप्त हुआ और सितंबर 2008 के मध्य में बैंकों से जमाराशि वापस लेने की होड़ (बैंक रन) उत्पन्न हुई। यूरोप में यूके के अतिरिक्त, उक्त संकट का संचरण तेजी से यूरो क्षेत्र में भी हुआ जिसकी गहरी वित्तीय संबद्धताएँ अमेरिका के साथ थीं। यूरो क्षेत्र में स्थित अनेक बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं, जैसे बीमा कंपनियों और परिसंपत्ति प्रबंधकों, के अमेरिकी परिसंपत्तियों में बड़े एक्सपोज़र थे। उनमें से कई तो अधिक उन्नयन (ओवर लीवरेज)

वाले थे तथा निरंतर नकदी के प्रवाह के लिए हितकर स्थितियों पर निर्भर थे। इसके परिणामस्वरूप 2007 की दूसरी छमाही में संकट के प्रारंभ होने के साथ यूरो क्षेत्र में बड़े और संश्लिष्ट बैंकिंग समूहों (एलसीबीजी) सहित वित्तीय संस्थाएं प्रभावित होने लगीं। एलसीबीजी के लिए वित्तपोषण बहुत महँगा और पहुँच के लिए कठिन बन गया, जिसके द्वारा इन संस्थाओं पर दबाव बढ़ गए कि वे अपने तुलन-पत्रों का आकार कम करें (यूरोपीय केंद्रीय बैंक, वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, दिसंबर 2008)। शीघ्र ही सितंबर 2007 तक कंपनियों और गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं ने बैंकों के अल्पावधि वित्तपोषण से भी अपने आहरण को तेज किया तथा बैंक एक दूसरे को ऋण प्रदान करने में अपना विश्वास अधिकाधिक खो रहे थे, जिसके फलस्वरूप वित्तपोषण की लागतों में तीव्र वृद्धि हुई। इसके परिणामस्वरूप संपदा क्षेत्र (रियल सेक्टर) को ऋण लगभग बंद हो गया तथा अनेक संस्थाएं केवल एक दिवसीय उधार ही ले सकती थीं।

3.65 अधिक जोखिम वाली परिसंपत्तियों और डेरिवेटिव्ज़ में सीमित प्रत्यक्ष एक्सपोज़रों के साथ अधिकांश उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में वित्तीय क्षेत्र तीव्रता से प्रभावित नहीं हुए, यद्यपि निवेशकों के विश्वास में कमी ने कुछ ईएमई के मामले में बैंकें की असुरक्षितताओं के प्रति भय उत्पन्न किया। इसने उन ईएमई में प्राधिकारियों को जमा गारंटियाँ कार्यान्वित करने तथा जमाकर्ताओं और प्रतिपक्षियों को पुन: आश्वस्त करने के लिए देशी बैंकों को चलनिधि उपलब्ध कराने जैसे उपाय करने के लिए प्रेरित किया। उभरते यूरोप में बैंकिंग प्रणाली अधिक असुरक्षित थी क्योंकि वह उल्लेखनीय रूप में विदेशी बैंकों से और बांड निर्गम से निधीयन पर आधारित थी। इन देशों में निम्न रेटिंग वाले बैंक बाह्य वित्त का पूर्णत: उपयोग करने के लिए अधिकांशत: अरक्षित स्थिति में थे।

बैंकों पर प्रभाव

3.66 लंदन शिखर वार्ता, 2009 की रिपोर्ट ने तीन सुस्पष्ट चरण पहचान लिए जिनके माध्यम से बैंकिंग उद्योग वर्तमान वित्तीय संकट द्वारा प्रभावित हुआ है। पहले चरण में बाजार सहभागियों ने यह स्वीकार किया कि उन्होंने अनेक संरचित ऋणों के साथ संबद्ध जोखिमों का कम आकलन किया है। इन उत्पादों के लिए माँग तेजी से गिरी जिससे उनकी कीमतें नीचे आ गईं। चूँकि कोई भी बैंक यह नहीं जानता था कि कौन-सा अन्य बैंक इन परिसंपत्तियों के प्रति अधिक अरक्षित है, अत: वे एक दूसरे को उधार देने के लिए सतर्क रहे। संकट के दूसरे चरण में बैंक संरचित ऋणों और अन्य अनर्जक परिसंपत्तियों पर हानियों की घोषणा करने लगे। ये हानियाँ उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में बिगड़ रही समष्टि-आर्थिक स्थितियों के साथ संयुक्त रूप से अनर्जक परिसंपत्तियों के मूल्य के बारे में अनिश्चितता को अनेक बैंकों की शोधक्षमता के बारे में चिंताओं के रूप में परिवर्तित किया। तीसरे चरण में बड़े अमेरिकी निवेश बैंक, लेहमैन ब्रदर्स, की विफलता ने संकट की तीव्र गहनता को प्रेरित किया। बैंकों ने एक दूसरे पर विश्वास करना छोड़ दिया तथा उनके ग्राहकों ने अपने बैंकों पर विश्वास करना छोड़ दिया। अंतरराष्ट्रीय वित्तीय प्रणाली में विश्वास भंग हुआ था। अक्तूबर 2008 में यूके की पुन:पूँजीकरण योजना के साथ प्रारंभ करते हुए एक बड़ी संख्या में सरकारों ने ऐसी नीतियाँ अपनाईं जिन्होंने बैंकिंग प्रणाली में विश्वास को पुन: कायम कर दिया। तथापि, इस चरण में खराब हो रहे समष्टि-आर्थिक कार्यनिष्पादन के कारण बैंक हानियों को उधारकर्ताओं की चूकों के साथ अधिक घनिष्ठतापूर्वक संबद्ध किया गया। बैंक हानियाँ एशिया में सबसे कम थीं जो अनर्जक परिसंपत्तियों के प्रति सीमित प्रत्यक्ष एक्सपोज़रों एवं अपेक्षाकृत सुदृढ़ समष्टि-आर्थिक मूलभूत व्यवस्थाओं को प्रतिबिंबित करता है (चार्ट III.9)।

वाणिज्य बैंक

3.67 वर्तमान संकट के दौरान बैंकिंग में चक्रीयता के अनुकूल स्थिति (प्रो-साइक्लिकैलिटी) अर्थात् वृद्धि की स्थिति में उधार के मानदंडों को कम करना तथा गिरावट की स्थिति में उधार के मानदंडों को सख्त बनाना, प्रकट हो गई। बैंकों की लाभप्रदता 2008 में बाजार मूल्य को बही में अंकित करने (मार्क-टू-मार्केट)(प्रतिभूतियाँ) वाले संविभागों पर हानियों

चार्ट III.9: बैंकों के लिए हानि प्रावधान के कार्यान्वित और प्रत्याशित अवलेखन

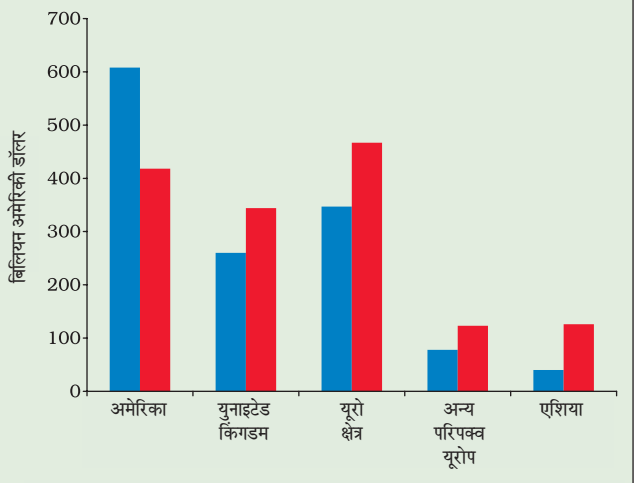

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

की पूर्ति, आर्थिक माँग अभावी मंदी के गहराने से ऋण बहियों के प्रगामी ह्रास, तथा परिचालन लागतों में वृद्धियों के कारण डूब गई। यद्यपि बैंक लाभों में कमी एक वैश्विक परिदृश्य है, तथापि जिस ढंग से बैंक उक्त संकट से प्रभावित हुए हैं वह उनके संबंधित देश के बाजारों में विद्यमान परिस्थितियों के अनुसार अलग-अलग रहा है (सारणी 3.14)।

उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ

3.68 अमेरिकी बैंकों के कर-पूर्व लाभ 2008 में पिछले वर्ष की तुलना में आधे से अधिक हो गए। 2008 में अमेरिकी बैंकों की विफलता में एक वृद्धि हुई थी जिस दौरान कुल 25 जमा-संग्रहण करनेवाली संस्थाएँ असफल हो गईं; उनकी संयुक्त परिसंपत्तियाँ 372 बिलियन अमेरिकी डॉलर थीं जो 1993 में बैंक विफलताओं में पिछली चरम स्थिति के दौरान विद्यमान परिसंपत्तियों से लगभग 10 गुनी अधिक थीं (चार्ट III.10)। केवल वाशिंगटन म्यूचुअल की विफलता ही कुल 307 बिलियन अमेरिकी डॉलर की थी जो इतिहास में सबसे बड़ी अमेरिकी बैंक विफलता थी। यह बैंक अंतत: एक और बड़े बैंक जेपीमोर्गन चेज़ द्वारा पर्यवेक्षी प्राधिकारियों की सहायता से आमेलित कर लिया गया। असफल बैंकों के साथ-साथ अमेरिका के जमा बीमाकर्ता के पास स्थित समस्याग्रस्त बैंकों की सूची पर विद्यमान संस्थाओं की संख्या बढ़कर 252 हो गई जिनकी कुल परिसंपत्तियाँ लगभग 159 बिलियन अमेरिकी डॉलर की थीं। इसके अलावा, बड़ी बैंक विफलताओं से बचा गया क्योंकि कमजोर संस्थाओं का अभिग्रहण अधिक स्वस्थ तुलन-पत्रों से युक्त अन्य संस्थाओं के द्वारा किया गया।

चार्ट III.10 : अमेरिका में बैंक विफलताएँ

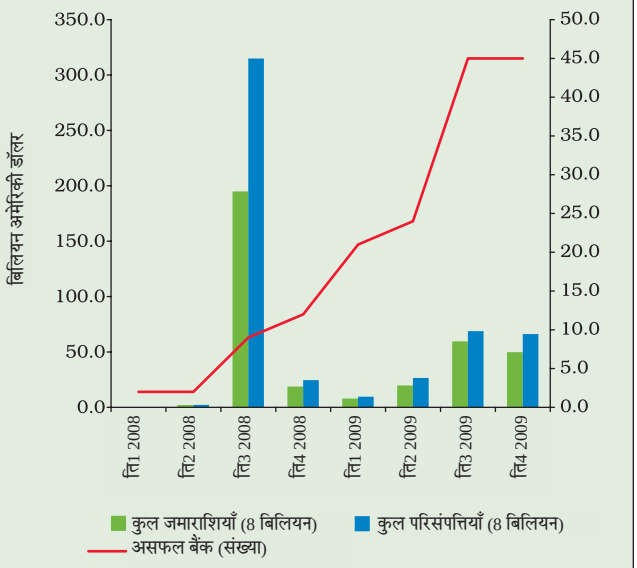

स्रोत : फेडरल डिपॉजिट इन्श्यूरेंस कारपोरेशन।

3.69 यूरोप में लाभ सभी स्तरों पर समान रूप से डूब गए जब यूके, स्विटजरलैंड और नेदरलैंड्स में स्थित बैंकों ने संरचित वित्त निवेशों में अपने एक्सपोज़र से निवल हानियाँ दर्ज कीं। स्थावर संपदा बाजारों में मंदी ने स्पेन, आयरलैंड और यूके में बैंकों के समक्ष बड़ी चुनौतियाँ प्रस्तुत कीं। कुछ जर्मन बैंक भी स्थावर संपदा एक्सपोज़रों द्वारा प्रभावित हुए यद्यपि वे मुख्य रूप से प्रतिभूतियों की स्थितियों और वाणिज्यिक संपत्ति में एक्सपोज़रों के माध्यम से अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित हुए थे। जर्मनी में संकट ने घरेलू बैंकिंग क्षेत्र की पुन:संरचना को प्रेरित किया क्योंकि उसने अनेक बैंक विलयों के लिए एक उत्प्रेरक

सारणी 3.14: कुल औसत परिसंपत्तियों के प्रतिशत के रूप में प्रमुख बैंकों की लाभप्रदता

	कर-पूर्व लाभ			ऋण हानि प्रावधान			परिचालन लागत		
	2006	2007	2008	2006	2007	2008	2006	2007	2008
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
आस्ट्रेलिया	1.5	1.4	1.0	0.1	0.1	0.3	1.6	1.4	1.5
कनाडा	1.2	1.1	0.5	0.1	0.1	0.2	2.4	2.3	2.0
फ्रांस	0.7	0.4	0.1	0.1	0.1	0.2	1.2	1.2	1.2
जर्मनी	0.4	0.3	-0.4	0.1	0.1	0.2	1.0	0.9	1.2
इटली	1.1	0.9	0.3	0.3	0.3	0.4	2.2	2.0	2.3
जापान	0.5	0.3	0.1	0.0	0.1	0.2	0.5	0.6	0.7
नेदरलैंड्स	0.5	0.3	-0.8	0.1	0.1	0.3	1.1	1.0	1.3
स्पेन	1.4	1.4	1.1	0.3	0.4	0.5	1.8	1.8	1.9
स्वीडन	1.0	0.9	0.7	-0.0	0.0	0.1	1.0	1.0	1.00
स्विटजरलैंड	0.8	0.4	-1.9	0	0.0	0.1	1.5	1.8	2.6
यूके	0.9	0.7	-0.1	0.3	0.2	0.4	1.6	1.4	1.3
अमेरिका	1.7	1.0	0.4	0.2	0.5	1.1	3.0	3.3	3.4

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक (2009), 79वीं वार्षिक रिपोर्ट, 2008-09।

के रूप में कार्य किया (यूरोपीय केंद्रीय बैंक वार्षिक रिपोर्ट, 2008)। फ्रांसीसी और इतालवी बैंक घरेलू फुटकर बाजार पर अपने अधिक मजबूत फोकस के कारण संरचित वित्त निवेशों पर हानियों द्वारा कम प्रभावित हुए। अनेक यूरोपीय ऋणदाता सरकारी क्षेत्र से प्रत्यक्ष सहायता द्वारा संपूर्ण दिवालियेपन से बच गए। वैश्विक वित्तीय संकट के प्रादुर्भाव के रूप में यूरो क्षेत्र के बड़े और संश्लिष्ट बैंक समूहों (एलसीबीजी) का बाजार पूँजीकरण संयुक्त रूप से सितबर के मध्य और नवंबर 2008 के अंत के बीच लगभग 200 बिलियन यूरो घट गया जिससे उक्त अशांति के विस्फुटन के बाद संचयी गिरावट लगभग 450 बिलियन यूरो तक आई जो अगस्त 2007 से तत्काल पहले इन बैंकों के कुल बाजार मूल्य के आधे से भी अधिक है।

3.70 यह समझा गया कि पिछले दशक की ऋण समस्याओं को अपने पीछे छोड़कर जापानी बैंक अपने अंतरराष्ट्रीय प्रतिस्पर्धियों की दुर्बलताओं से लाभान्वित होने की स्थिति में हैं। 2008 के प्रारंभिक महीनों में जापानी बैंकिंग उद्योग ने वित्तीय संकट के प्रति सापेक्ष आघात-सहनीयता दर्शाई जो मुख्य रूप से सब-प्राइम और संरचित उत्पादों में लघुतर एक्सपोज़रों के कारण था। तथापि, संकट के आगे बढ़ने के साथ ही, जापानी बैंकों की लाभप्रदता अत्यंत कम हो गई जो अंशत: उनके संरचनात्मक रूप से संकीर्ण निवल ब्याज मार्जिनों के कारण है। इसके परिणामस्वरूप, उनका पूँजी आधार कमजोर हो गया। इसके अलावा, अंतरराष्ट्रीय विस्तार के लिए कोई भी योजनाएँ 2008 की दूसरी छमाही में रोक रखी गईं जब घरेलू अर्थव्यवस्था मंदी में चली गई और हानियाँ प्रबल हो गईं।

3.71 कुल मिलाकर संकट के प्रारंभिक चरण के दौरान बैंकों ने अधिकांशत: निधीयन के दबावों और मार्क-टू-मार्केट हानियों का सामना किया। जैसे ही सितंबर 2008 से समष्टि-आर्थिक स्थिति बदतर हो गई, वित्तीय संस्थाओं ने अर्जन पर बढ़ते हुए दबावों और अपने ऋण जोखिम एक्सपोज़रों पर बढ़ती हानियों का सामना किया (सारणी 3.15)। बैंक हानियों ने संकट के विकास के अनुरूप एक परिवर्तन के स्वरूप को देखा। प्रारंभ में बैंक हानियों/अवलेखनों को संरचित वित्त उत्पादों के व्यापारित संविभागों के साथ तथा प्रतिभूतिकृत एक्सपोज़रों को सब-प्राइम बंधक बाजारों के साथ घनिष्ठ रूप से संबद्ध किया गया था।

सारणी 3.15 : बैंकिंग संकेतक - चयनित देश

क्षेत्र	अनर्जक ऋणों के प्रति बैंकों के प्रावधान (प्रतिशत)				परिसंपत्तियों पर बैंक प्रतिलाभ (प्रतिशत)			
	2007	2008	2009	नवीनतम	2007	2008	2009	नवीनतम
1	2	3	4	5	6	7	8	9
लातीन अमेरिका								
अर्जेन्टीना	129.6	131.4	123.0	नवंबर	1.5	1.6	2.4	नवंबर
ब्राजील	181.9	189.0	156.0	अक्तूबर	2.9	1.5	1.2	अक्तूबर
चिली	210.2	179.9	177.5	दिसंबर	1.1	1.2	1.2	दिसंबर
मेक्सिको	168.9	161.2	163.8	सितंबर	2.7	1.5	1.2	सितंबर
उभरता यूरोप								
हंगरी	64.8	58.9	51.2	सितंबर	1.2	0.8	1.1	सितंबर
पोलैंड	-	61.3	50.2	सितंबर	1.7	1.6	1.2	सितंबर
रूस	144.0	118.4	94.8	दिसंबर	3.0	1.8	0.7	दिसंबर
एशिया								
चीन	39.2	116.4	155.0	दिसंबर	0.9	1.0	1.1	जून
हांगकांग एसएआर	78.4	71.5	68.3	सितंबर	1.9	1.8	1.6	सितंबर
भारत	56.1	52.6	-	मार्च	0.9	1.0	1.0	मार्च
इंडोनेशिया	104.5	118.6	127.4	अप्रैल	2.8	2.3	2.6	सितंबर
कोरिया	205.2	146.3	125.2	सितंबर	1.1	0.5	-	दिसंबर
मलेशिया	77.3	89.0	93.3	नवंबर	1.5	1.5	1.2	सितंबर
फिलीपीन्स	81.5	86.0	91.4	सितंबर	1.3	0.8	1.1	सितंबर
सिंगापुर	115.6	109.1	91.0	सितंबर	1.3	1.0	1.1	सितंबर
थाईलैंड	86.5	97.9	-	दिसंबर	0.1	1.0	-	दिसंबर
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ								
आस्ट्रेलिया	181.8	74.8	68.0	सितंबर	1.0	0.7	0.6	जून
कनाडा	42.1	34.7	59.1	सितंबर	0.8	0.4	0.4	सितंबर
जापान	78.3	83.2	83.2	सितंबर	0.3	-0.2	0.2	सितंबर
अमेरिका	91.7	75.3	58.1	दिसंबर	0.8	0.0	0.1	दिसंबर

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, अप्रैल 2010।

हानियों को बाजारों में उन लिखतों के लिए अनकदी द्वारा तीव्र किया गया जिन्होंने अपने मार्क-टू-मार्केट मूल्यांकनों में भारी कटौतियों के लिए प्रेरित किया। जबकि हानियों के परिमाण और प्रणाली में उनके वितरण के बारे में काफी अनिश्चितता थी, उनके संबंध में यह देखा गया कि वे परिसंपत्तियों की एक खास श्रेणी के अंदर निहित हैं। एक अगले चरण में बैंक हानियाँ/अवलेखन उधारकर्ताओं की चूकों में वृद्धि और प्रत्याशित चूकों के साथ अधिक प्रत्यक्ष रूप से संबद्ध हो गए जैसा कि आर्थिक गतिविधि में मंदी के कारण मात्रा में वृद्धि और प्रावधानीकरण व्ययों के सापेक्ष महत्व से स्पष्ट है। बैंक परिसंपत्तियों के भाग के रूप में ऋण हानि प्रावधान पिछले वर्षों की तुलना में 2008 में अधिक थे। 2007 के साथ तुलना करने पर उक्त दर आस्ट्रेलियन, प्रांसीसी, स्विस और अमेरिकी बैंकों के लिए कम से कम दुगुनी हो गई तथा जर्मन, डच और स्वीडिश ऋणदाताओं के लिए उससे भी उच्चतर स्थिति में पहुँच गई।

उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ

3.72 यद्यपि अधिकांश उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) का बैंकिंग क्षेत्र सुदृढ़ रहा, फिर भी कुछ ईएमई में निवेशकों के विश्वास में कमी ने बैंक असुरक्षितता के बारे में आशंकाओं को प्रेरित किया। इसके अलावा कई ईएमई के भीतर विशेष रूप से यूरोप और लातीन अमेरिका में विदेशी बैंकों की उल्लेखनीय उपस्थिति ने वित्तीय तनाव की अवधियों के दौरान संक्रामकता का एक और संभावित स्रोत उत्पन्न किया। उभरते यूरोप में बैंक बाह्य वित्तीयन पर अत्यधिक निर्भर रहे जब विदेशी बैंकिंग क्षेत्र निधियों के लिए एक महत्वपूर्ण माध्यम रहा। एशिया में बैंक अपेक्षाकृत रूप में आघात-सहनीय रहे।

3.73 वर्तमान वित्तीय संकट के दौरान उभरते एशिया की बैंकिंग और वित्तीय प्रणालियों की सापेक्ष आघात-सहनीयता अनेक कारकों को प्रतिबिंबित करती है : (i) एशियाई वित्तीय प्रणाली बैंक-प्रधान थी और बैंकों ने सामान्यत: अनकदी परिसंपत्तियों में निवेश नहीं किया था जो वर्तमान वित्तीय संकट के केंद्र में थीं; (ii) एशियाई वित्तीय संस्थाओं का अमेरिकी सब-प्राइम बंधकों और संरचित ऋण उत्पादों में सीमित एक्सपोज़र था एवं यह मुख्य रूप से अधिक सतर्क जोखिम प्रबंधन और विनियामक संरचना के सुदृढ़ीकरण के कारण था जो दोनों 1990 के बाद के दशक में जापान के बैंकिंग संकट से और उभरते एशिया में 1997 के वित्तीय संकट से परिणत हुआ था (सारणी 3.16); (iii) अपेक्षाकृत मजबूत बैंक तुलन-पत्र जो लाभप्रदता की ओर वापसी से युक्त थे क्योंकि 1997/98 के एशियाई वित्तीय संकट से अनर्जक ऋण शनैशनै निस्सारित किये गये थे; (iv) जोखिम और चलनिधि

सारणी 3.16: लेहमैन ब्रदर्स के प्रति एक्सपोज़र से युक्त चयनित एशियाई बैंक

बैंक	अर्थव्यवस्था	एक्सपोज़र (मिलियन अमेरिकी डॉलर)
1	2	3
सिटी बैंक (हांगकांग, चीन शाखा)	हांगकांग, चीन	275
मेगा फाइनैंशियल	ताइपेइ, चीन	200
इंडस्ट्रियल एण्ड कमर्शियल बैंक ऑफ चाइना	चीन	152
बांको द ओरो	फिलीपीन्स	134
बैंक ऑफ चाइना	चीन	129
बैंकाक बैंक	थाईलैंड	101
बैंक ऑफ नोवा स्कोटिया (सिंगापुर शाखा)	सिंगापुर	93
डेवलेपमेंट बैंक ऑफ दी फिलीपीन्स	फिलीपीन्स	90
शिन कोंग फिन	ताइपेइ, चीन	80
मेट्रोपोलिटन बैंक एण्ड ट्रस्ट कंपनी	फिलीपीन्स	71

स्रोत : एशियाई विकास बैंक संभावना 2009।

प्रबंधन में सुधार; (v) पर्यवेक्षी और विनियामक प्रणालियों का सुदृढ़ीकरण; तथा (vi) बैंकों द्वारा नई और लाभप्रद घरेलू कारोबार व्यवस्थाओं, जैसे उपभोक्ता उधार, में अग्रसर होना। उपभोक्ता उधार की ओर अग्रसर होने कां निहितार्थ प्रतिफल के लिए मजबूत खोज का अभाव है जिसने औद्योगिक देशों में कई बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं को अत्यधिक उन्नयन (लीवरेज) और जोखिम उठाने के लिए प्रेरित किया (एशियाई विकास बैंक, 2009)।

3.74 अमेरिकी सब-प्राइम बंधकों में एशियाई बैंकों के सीमित एक्सपोज़र थे तथा सब-प्राइम संकट के बाद वैश्विक रूप से सूचित किये गये अवलेखनों का एक अत्यंत कम प्रतिशत एशिया में उत्पन्न हुआ जिसमें से एक भारी परिमाण में अवलेखन जापान में संकेंद्रित थे और एक न्यूनतर सीमा तक चीन में थे। इस बीच एशियाई बैंकों ने अपनी पूँजीगत स्थितियों को बढ़ाने के लिए विपुल राशियाँ जुटाई हैं। नई पूँजी ने न केवल रिक्त हुई राशियों की पुन:पूर्ति की, बल्कि भावी समस्यामूलक ऋणों से उत्पन्न होनेवाली संभावित हानियों के विरुद्ध एक अनुकूल स्थिति भी निर्मित की।

3.75 समूचे एशियाई क्षेत्र में भी बैंक सामान्यत: सुविधाजनक देशी मुद्रा चलनिधि की अनुकूल स्थितियों में रहे। वर्तमान वैश्विक संकट के दौरान कई देशों के मामले में जमाराशि की तुलना में ऋण का एक निम्नतर अनुपात (1 से कम) का तात्पर्य विदेशी देयताओं से उत्पन्न होनेवाले चलनिधि जोखिम का अभाव है (सारणी 3.17)। समूचे क्षेत्र में जमाराशि की तुलना में ऋण के अनुपात कोरिया के अपवाद के साथ अपेक्षाकृत पारंपरिक रहे हैं तथा कई बैंकिंग प्रणालियाँ देयताओं की तुलना में अल्पावधि परिसंपत्तियों के उच्च अनुपात सूचित करती

सारणी 3.17: बैंक अनुपात

(2008 की ति2 की स्थिति)

	घरेलू जमाराशियों की तुलना में ऋणो का अनुपात	कुल देयताओं की तुलना में ऋणों का अनुपात	घरेलू जमाराशियों की तुलना में विदेशी देयताओं का अनुपात
1	2	3	4
चीन	0.72	0.71	0.01
भारत	0.95	0.94	-
हांगकांग	0.54	0.30	0.80
कोरिया	1.40	1.15	0.22
सिंगापुर	0.85	0.51	0.68
ताइपेइ, चीन	0.79	0.71	0.10
इंडोनेशिया	0.78	0.73	0.06
मलेशिया	1.08	0.94	0.13
फिलीपीन्स	0.57	0.50	0.14
थाईलैंड	1.05	1.00	0.07
वियतनाम	1.04	0.96	0.09

स्रोत : एशियाई विकास बैंक इकनॉमिक्स वर्किंग पेपर सिरीज़ सं. 139।

हैं। ये अनुकूल स्थितियाँ हाल के वर्षों में कारपोरेट क्षेत्र को उधार के अपेक्षाकृत रूप में घटे हुए स्तरों के साथ 1997-98 के संकट से चलनिधि के प्रति बढ़े हुए ध्यान को प्रतिबिंबित करती हैं। विभिन्न संकेतक लाभप्रदता और परिचालनगत कुशलता के तौर पर क्षेत्र की बैंकिंग प्रणालियों की समग्र सुदृढ़ता को सूचित करते हैं। तथापि, संकट के परवर्ती चरण के दौरान अनेक देशों में घरेलू मुद्रा चलनिधि संबंधी कुछ दबाव देखे गये थे।

3.76 हाल के वर्षों में पूँजीगत अपेक्षाओं को मजबूत करने पर दिये जानेवाले बल को देखते हुए जोखिम-भारित पूँजी पर्याप्तता अनुपात (सीआरएआर) सुविधाजनक थे तथा उभरते एशिया और लातीन अमेरिका में बैंकों को ये निरंतर एक सुदृढ़ पूँजी की अनुकूल स्थिति उपलब्ध कराते रहे (सारणी 3.18)। यह कोरिया में भी सही था जहाँ बाह्य उधार पर अधिकाधिक निर्भरता को देखते हुए बैंकिंग प्रणाली अपेक्षाकृत अधिक असुरक्षित थी। 2008 के दौरान कुल ऋणों से अनर्जक ऋणों का अनुपात एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में सामान्यत: घट गया, जबकि संभवत: संकट के प्रभाव को प्रतिबिंबित करते हुए उन्नत देशों में यह बढ़ गया। एशिया के भीतर हांगकांग, कोरिया, इंडोनेशिया और फिलीपीन्स जैसे देशों में कुल ऋणों से अनर्जक ऋणों

सारणी 3.18: बैंकिंग संकेतक - चयनित देश

क्षेत्र	जोखिम-भारित पूँजी पर्याप्तता अनुपात (जोखिम-भारित परिसंपत्तियों का प्रतिशत)				अनर्जक ऋण (वाणिज्य बैंक ऋणों का प्रतिशत)			
	2007	2008	2009	नवीनतम	2007	2008	2009	नवीनतम
1	2	3	4	5	6	7	8	9
लातीन अमेरिका								
अर्जेन्टीना	16.9	16.8	18.6	नवंबर	2.7	2.7	3.1	नवंबर
ब्राजील	18.7	18.3	18.2	अक्तूबर	3.0	3.1	4.5	अक्तूबर
चिली	12.2	12.5	14.3	दिसंबर	0.8	1.0	1.4	दिसंबर
मेक्सिको	15.9	15.3	15.9	सितंबर	2.7	3.2	3.4	सितंबर
उभरता यूरोप								
हंगरी	10.4	11.1	13.1	सितंबर	2.3	3.0	5.9	सितंबर
पोलैंड	12.0	10.8	13.1	सितंबर	5.2	4.4	7.0	सितंबर
रूस	15.5	16.8	20.9	नवंबर	2.5	3.8	9.6	दिसंबर
एशिया								
चीन	8.4	12.0	10.0	नवंबर	6.2	2.4	1.6	दिसंबर
हांगकांग एसएआर	13.4	14.8	16.6	सितंबर	0.8	1.2	1.5	सितंबर
भारत	12.3	13.0	13.2	मार्च	2.5	2.4	2.4	मार्च
इंडोनेशिया	19.3	16.8	17.5	अक्तूबर	4.1	3.2	3.8	सितंबर
कोरिया	12.3	12.3	14.2	सितंबर	0.7	1.1	1.5	सितंबर
मलेशिया	13.2	12.7	14.6	नवंबर	6.5	4.8	3.8	नवंबर
फिलीपीन्स	15.7	15.5	15.8	सितंबर	5.8	4.5	4.6	सितंबर
सिंगापुर	13.5	14.7	16.5	सितंबर	1.5	1.7	2.3	सितंबर
थाईलैंड	14.8	13.8	—-	दिसंबर	7.9	5.7	—-	दिसंबर
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ								
आस्ट्रेलिया	10.2	11.4	11.7	सितंबर	0.2	0.8	1.1	सितंबर
कनाडा	12.1	12.2	14.5	सितंबर	0.7	1.1	1.2	सितंबर
जापान	12.3	12.4	14.3	सितंबर	1.4	1.6	1.8	सितंबर
अमेरिका	12.8	12.8	14.3	दिसंबर	1.4	2.9	5.4	दिसंबर

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, अप्रैल 2010।

का अनुपात तुलनात्मक रूप से 2009 में अधिक था; उभरते यूरोप में यही प्रवृत्ति देखी गई थी।

3.77 उभरते यूरोप की तरह कुछ लातीन अमेरिकी ईएमई में विदेशी बैंकों की बड़ी उपस्थिति थी। मेक्सिको के पास केवल दो विदेशी बैंकों के द्वारा धारित उसकी बैंकिंग परिसंपत्तियों के लगभग 40 प्रतिशत के साथ संकेंद्रित एक्सपोज़र था। तथापि, उभरते यूरोप के विपरीत, इनमें से कई विदेशी बैंकों के लिए स्थानीय तौर पर निधीयन किया जाता था, ये अत्यधिक लाभप्रद थे तथा समग्र सामूहिक आय के लिए इनका अंशदान था। इसके अलावा, लातीन अमेरिका में स्थित वाणिज्य बैंकों ने 'विषाक्त' वित्तीय लिखतों में किसी उल्लेखनीय मात्रा तक निवेश नहीं किया, परंतु बाह्य ऋण में तीव्र संकुचन द्वारा उन्हें आघात पहुँचा था। लातीन अमेरिका में संस्थाएँ बाह्य जोखिमों के प्रति उल्लेखनीय रूप में अरक्षित नहीं थीं क्योंकि उन्होंने मुख्य रूप से देशी बाजारों पर ध्यान दिया जिसका परिणाम उनके द्वारा उन्नत देशों और उभरते यूरोप में स्थित वित्तीय संस्थाओं के समान जोखिमों का सामना न करने में रहा। लातीन अमेरिका को भी राष्ट्रीय वित्तीय प्रणालियों के अपेक्षाकृत छोटे आकार तथा सुदृढ़ पर्यवेक्षण और विवेकपूर्ण विनियमो से सहायता मिली (एशियाई विकास बैंक, 2009)।

बाद में

3.78 अमेरिका में बैंक विफलताएँ 2009 और 2010 में जारी रहीं तथा अमेरिकी अर्थव्यवस्था ने भी समुत्थान के अस्थायी संकेत दर्शाये। फेडरल जमा बीमा निगम (एफडीआइसी) के अभिलेखों के अनुसार 2010 की पहली छमाही में अमेरिका में 83 बैंक विफलताओं की सूचना है। बैंक विफलताओं के होते हुए भी अमेरिकी बैंकिंग प्रणाली मे विश्वास को अनुमान से बेहतर आय, एक सफल तनाव परीक्षण अभ्यास, सबसे बड़े बैंकों के पीछे समर्थन देने के लिए अमेरिकी सरकार द्वारा प्रतिबद्धता तथा बैंक पूँजी संग्रहण की एक शृंखला द्वारा कायम कर दिया गया है। फिर भी हानियों के अनुपात लगातार उच्च बने हुए हैं। यूरोप में सर्वव्यापी (यूनिवर्सल) बैंक भी बेहतर अर्जन और पूँजी में वृद्धियों से लाभान्वित हुए हैं। अधिकांशत: देशी तौर पर केंद्रित व्यवसाय और अपेक्षाकृत रूप में मजबूत आर्थिक कार्यकलापों के होते हुए उभरते एशिया की बैंकिंग प्रणालियों की लाभप्रदता सामान्यत: उच्च रही है तथा एशियाई बैंकिंग और वित्तीय प्रणालियाँ वित्तीय अशांति को अपेक्षाकृत रूप में भली भाँति सहन कर सकी हैं। सामान्यत: अच्छे लाभों और निम्न अनर्जक ऋण अनुपातों के बावजूद वित्तीय क्षेत्र में दबाव के बढ़े हुए संकेत अनेक एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में उभरे हैं जो बड़ी सीमा तक आर्थिक मंदी के बीच शुल्क और कमीशनों से घटती आय के कारण है। तथापि, कुल मिलाकर उभरते एशियाई बैंक आज तक अच्छी स्थिति में निरंतर बने हुए हैं।

3.79 हाल के महीनों में बाजार के दबावों का सामना कर रहे यूरो क्षेत्र के देशों (ग्रीस, आयरलैंड, पुर्तगाल और स्पेन) को एक्सपोज़र रखनेवाले कुछ यूरोपीय बैंक पुनर्नवीकृत दबाव में आये हैं। विशेष रूप से फ्रांसीसी और जर्मन बैंक उन चारों देशों के निवासियों के प्रति एक्सपोज़र से युक्त थे जिनका संयुक्त एक्सपोज़र 2009 के अंत में 958 बिलियन अमेरिकी डॉलर था। दूसरी ओर युनाइटेड किंगडम में जिन बैंकों का मुख्यालय है, उनके बडे एक्सपोज़र आयरलैंड के प्रति थे (230 बिलियन अमेरिकी डॉलर)। तथापि, सरकारी ऋण निजी क्षेत्र पर दावों की तुलना में उन देशों के प्रति यूरो क्षेत्र के बैंकों के एक्सपोज़र का एक लघुतर भाग था।

निवेश बैंक

3.80 संकट ने समग्र रूप में बैंकिंग उद्योग को प्रभावित किया है, परंतु यह प्रतीत होता है कि निवेश बैंकिंग को वाणिज्य बैंकों की तुलना में इससे अधिक तीव्र आघात पहुँचा है। 2004-07 के तेजी के चरण के दौरान शीर्षस्थ पाँच अमेरिकी निवेश बैंकों (लेहमैन ब्रदर्स, बियर स्टेर्न्स, मेरिल लिंच, गोल्डमैन सैक्स तथा मोर्गन स्टैनली) ने उल्लेखनीय रूप में अपने वित्तीय उन्नयन (लीवरेज) में वृद्धि की जिसने उनकी असुरक्षितता को एक वित्तीय आघात तक बढ़ा दिया। इन पाँच संस्थाओं ने राजकोषीय वर्ष 2007 के लिए ऋण में 4.1 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर से अधिक व्यय किया जो अमेरिका के सांकेतिक जीडीपी का लगभग 30 प्रतिशत बना था। संकट ने इन संस्थाओं पर गहरे क्षतचिह्न छोड़ दिये। उनकी हानियों का परिमाण बहुत उच्च स्तरों पर पहुँचा और इससे कारोबार की सभी व्यवस्थाएँ प्रभावित हुईं। प्रतिभूति अवलेखन 2008 के दौरान घट गया क्योंकि प्राथमिक बाजार निर्गम मंद हो गया और संबद्ध राजस्वों में गिरावट हुई। तुलना करने पर विलय और अभिग्रहण सलाहकार व्यवसाय ने बेहतर प्रदर्शन किया, यद्यपि यह भी 2009 की पहली तिमाही में मंद हो गया। अधिक सामान्य तौर पर निवेश बैंकिंग परिचालन सभी स्तरों पर समान रूप से कम हो गए।

3.81 संकट के दौरान उच्च जोखिम वाली संरचित प्रतिभूतियों की बड़ी धारिताओं और प्रतिभूतिकरण सरणी (पाइपलाइन) में अरक्षित एक्सपोज़रों को नाटकीय ढंग से निम्नांकित किया गया। परिसंपत्ति और निधीयन बाजारों की अनकदी विशेष रूप से निवेश बैंकों के लिए चुनौतीपूर्ण सिद्ध हुई जो आय में वृद्धि उत्पन्न करने के लिए लेनदेनें

की बढ़ती हुई मात्रा पर अथवा उन्नयन (लीवरेज) के उच्च स्तरों को समर्थन देने के लिए सस्ते और तुरंत उपलब्ध अल्पावधि वित्तपोषण पर आगे और निर्भर नहीं हो सकते थे। इसके परिणामस्वरूप फर्मों के तुलन-पत्र आकार में छोटे हो गए और इन संस्थाओं में रोजगार स्वाभाविक रूप से कम हो गया। बियर स्टेर्न्स और लेहमैन ब्रदर्स में स्टाफ की संख्या में आधे से भी ज्यादा कटौती की गई क्योंकि उनके परिचालन अन्य संस्थाओं द्वारा अधिगृहीत किये गये। अन्य फर्मों की स्टाफ संख्या में कमी ने मोटे तौर पर उनके द्वारा उठाई गई हानियों के आकार को प्रतिबिंबित किया। अधिकतम निवेश बैंकिंग परिचालनों के लिए निवल राजस्व के संबंध में अनुमान किया गया कि बाजार की गतिविधि के अवरुद्ध हो जाने के कारण उसमें 2008 की तीसरी तिमाही में एक वर्ष पूर्व की इसी अवधि की तुलना में 90 प्रतिशत से अधिक गिरावट हुई।

3.82 संकट के गहरे प्रभाव के परिणामस्वरूप लेहमैन ब्रदर्स का परिसमापन किया गया, बियर स्टेर्न्स और मेरिल लिंच का कम कीमतों पर बेच दिया गया, तथा गोल्डमैन सैक्स और मोर्गन स्टैनली ने स्वयं को अधिक कठोर विनियमन के अधीन करते हुए वाणिज्य बैंकों के रूप में परिवर्तित कर लिया। लेहमैन ब्रदर्स के अपवाद को छोड़कर इन सभी संस्थाओं के लिए सरकार की सहायता अपेक्षित थी अथवा सरकारी सहायता उन्होंने प्राप्त की थी। दूसरी ओर फैनी माए और फ्रेडी मैक, अमेरिकी सरकार द्वारा प्रायोजित दो उद्यमों ने बंधक देयताओं में लगभग 5 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर ऐसे समय स्वाधिकृत अथवा गारंटीकृत किये जब सितंबर 2008 में अमेरिकी सरकार द्वारा उन्हें संरक्षकता (कन्जर्वेटिवशिप) में रखा गया था। ये सातों संस्थाएं अत्यधिक लीवरेज से युक्त थीं और यह अनुमान है कि ऋण अथवा गारंटी दायित्वों में इन सबके संयुक्त रूप से 9 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर थे जो जोखिम का एक अत्यधिक संकेंद्रण था, फिर भी ये निक्षेपागार बैंकों के रूप में उसी विनियम के अधीन नहीं थीं।

बीमा निधियाँ

3.83 संकट के दौरान बीमा कंपनियों ने निम्नतर दीर्घावधि ब्याज दरों और परिसंपत्ति कीमत गिरावटों के कारण अपने तुलन-पत्र के दोनों ओर प्रतिकूल स्थितियों का सामना किया। परिसंपत्ति बाजार की माँग अभावी मंदी का प्रभाव प्राथमिक रूप से बीमा कंपनियों के वित्तीय परिसंपत्ति संविभागों के कार्यनिष्पादन में प्रतिबिंबित हुआ। बीमा कंपनियों ने हानियाँ उठाईं क्योंकि कीमतें परिसंपत्ति वर्गों के एक व्यापक विन्यास में गिरीं। जीवन बीमा कंपनियों के लिए दीर्घावधि प्रतिफलों के स्तर में गिरावट का अर्थ भी दीर्घ परिपक्वता वाली पालिसियों पर देयताओं में वृद्धि थी।

3.84 बीमा कंपनियों का बाजार पूँजीकरण बैंकों की तरह उन्हीं दबावों के अंतर्गत आया जो जोखिमपूर्ण परिसंपत्तियों (उल्लेखनीय तौर पर बंधक संबंधी प्रतिभूतियों और वाणिज्यिक स्थावर संपदा ऋणों) में एक्सपोज़र के कारण तथा कमजोर हो रही समष्टि-आर्थिक स्थितियों के परिणामस्वरूप था। अधिकांश बीमा कंपनियों के लिए संकट का मुख्य प्रभाव उनकी प्रीमियम आय के बजाय उनके वित्तीय कार्यनिष्पादन पर रहा है। संकट द्वारा सर्वाधिक प्रभावित फर्में वे थीं जो ऋण जोखिम बीमा की व्यवस्था से संबद्ध थीं। एक व्यवस्था वाली (मोनोलाइन) बीमाकर्ता संस्थाएँ (वित्त गारंटी बीमाकर्ताओं के रूप में अधिक औपचारिक रूप से जानी जाती हैं) जो ऋण गारंटियों की व्यवस्था में विशेषज्ञ हैं, संकट के दौरान विभिन्न बाजारों में संक्रामकता के लिए एक सरणी रही हैं। वे जो सुरक्षा प्रदान करती हैं, वह उनके द्वारा एक उच्च क्रेडिट रेटिंग (सामान्यत: एएए) बनाये रखने पर निर्भर है। तथापि, जैसे ही हानियाँ अत्यधिक बढ़ गईं, अधिकांश मोनोलाइनों के क्रेडिट रेटिंग का ग्रेड कम किया गया जिससे उस समस्त ऋण, जिसका बीमा उन्होंने किया था, के रेटिंग पर दबाव आ गया जो इस उच्चतर संभावना को प्रतिबिंबित करता है कि निवेशकों को हानियों का सामना करना होगा। चूँकि उधारकर्ताओं की ऋणपात्रता घट गई, अत: उनकी गारंटियाँ स्वीकार करने के लिए मोनोलाइन बीमाकर्ताओं की क्षमता के बारे में चिंताएँ बढ़ गईं तथा इससे उन बैंकों के लिए उल्लेखनीय मार्क-टू-मार्केट हानियों का मार्ग प्रशस्त हुआ जिन्होंने बीमा खरीद लिया था।

3.85 कुछ वैश्विक बीमाकर्ताओं ने 2008 की दूसरी छमाही के दौरान बड़ी हानियों की सूचना देना जारी रखा जो विशेष रूप से ऋण और संरचित ऋण उत्पादों की उनकी बीमा हामीदारी के कारण था। अमेरिकी बीमाकर्ता एआइजी ने 2008 की दूसरी और तीसरी तिमाहियों के दौरान भारी हानियाँ उठाईं। इन परेशानियों ने सितंबर 2008 में रेटिंग का ग्रेड कम करने के लिए प्रेरित किया जिससे बीमाकर्ता संपार्श्विक भुगतान डेरिवेटिव्ज़ व्यापारों पर दर्ज करने के लिए विवश हुआ। संपार्श्विक प्रयोजन के लिए माँगों की पूर्ति हेतु एआइजी पर्याप्त पूँजी अपेक्षित शीघ्रता के साथ नहीं जुटा सकी जिसके परिणामस्वरूप फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ न्यूयार्क ने 85 बिलियन अमेरिकी डॉलर तक एआइजी को एक दो वर्षीय ऋण प्रदान किया ताकि पीड़ित बीमाकर्ता को एक क्रमबद्ध तरीके से अपनी कुछ परिसंपत्तियों की बिक्री करने का अवसर दिया जा सके। इसके प्रतिफल में अमेरिकी सरकार ने एआइजी में 79.9 प्रतिशत का एक ईक्विटी ब्याज प्राप्त किया। एआइजी के लगभग पतन की स्थिति को सीधे ऋण जोखिम की हामीदारी के साथ संबद्ध की गई। उसके अवलेखनों (राइटडाउन) में, बढ़ते हुए सीडीएस स्प्रेडों के साथ ही अत्यधिक वृद्धि हुई (चार्ट III.11)। उसकी

चार्ट III.11 : बीमा क्षेत्र ऋण चूक स्वैप स्प्रेड

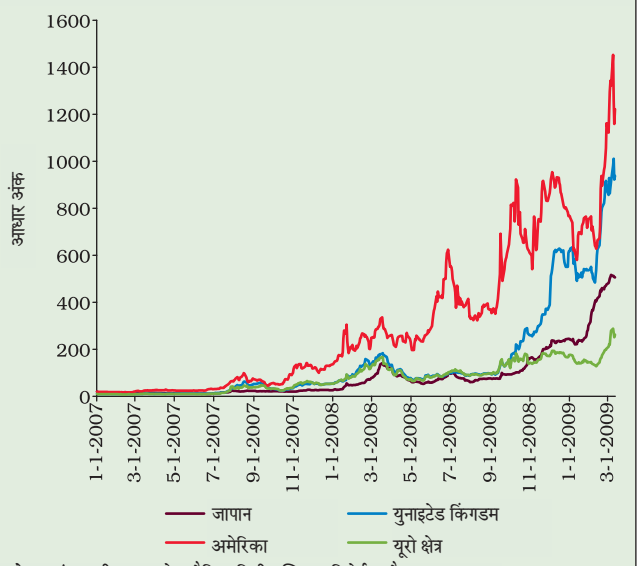

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, अप्रैल 2009।

देयताओं के आकार और उसके ऋण डेरिवेटिव्ज परिचालनों द्वारा अदा की गई केंद्रीय भूमिका जो बारंबार काउंटर पर (ओवर दी काउंटर) बाजार में प्रतिपक्षी के रूप में थी, ने भारी वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए असाधारण सरकारी हस्तक्षेप को आवश्यक बनाया।

बचाव निधियाँ

3.86 बचाव निधियाँ संस्थागत निवेशकों के साथ उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं तक वित्तीय संचरण की एक प्रमुख सरणी के रूप में मानी जाती हैं तथा स्थानीय बाजारों के विकास में वे सहायक रही हैं। विशेष रूप से बचाव निधियाँ उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में वित्तीय बाजारों के चलनिधि उपलब्ध कराने और वास्तविक बचाव व्यवस्था की गतिविधियों को सुसाध्य बनाने के लिए महत्वपूर्ण रही हैं। यद्यपि बचाव निधियों ने संकट के गति सिद्धांत को आकार देने में केंद्रीय भूमिका अदा नहीं की थी, तथापि वे भी वित्तीय संकट द्वारा गंभीर रूप से प्रभावित हुई हैं। 2008 में बचाव निधियों ने बहुत अल्प कार्यनिष्पादन किया जब प्राय: सभी निवेश कार्यनीतियों ने ऋणात्मक परिणाम दर्शाये क्योंकि परिसंपत्ति बाजारों में प्रतिफल अचानक त्वरित रूप से गिर गए तथा निधीयन की लागत में वृद्धि हुई। चूँकि प्रतिपक्षियों ने संवर्धित लेनदेन मार्जिनों के लिए दबाव डाला और निवेशकों ने एक अभूतपूर्व परिमाण में निधियों का आहरण किया, अत: उद्योग का तेजी से संकुचन हुआ। प्रबंधन के अंतर्गत परिसंपत्तियों के अनुमान 2008 की दूसरी छमाही के दौरान एक तिहाई से भी अधिक संकुचित हुए तथा इस गिरावट में खराब कार्यनिष्पादन और ग्राहकों के आहरणों ने समान भूमिका निभाई। अनेक निधियाँ बंद हो गईं। कई निधि प्रबंधकों ने आहरणों को सीमित करते हुए और उसके द्वारा निवेशकों की प्रभावी निश्चित अवरुद्धता अवधि (लॉक-इन-पीरियड) को बढ़ाते हुए पूँजी को सुरक्षित रखने का प्रयास किया।

3.87 उभरते शेयर बाजारों से विदेशी पूँजी के बहिर्वाहों तथा उसके बाद उनकी मुद्राओं के मूल्यह्रास के लिए कारण कुछ वैश्विक बचाव निधियों द्वारा स्थितियों का मोचन (अनवाइंडिंग) है (सारणी 3.19)। यह दिलचस्प बात है कि एशिया केंद्रित बचाव निधियाँ दुनिया भर में सबसे खराब कार्यनिष्पादकों में से रही हैं जिनके प्रतिफल अन्य उभरती बाजार निधियों के प्रतिफलों से सुसंगत रूप में कम हैं (वित्त और विकास, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, दिसंबर 2008)।

3.88 सकारात्मकता की ओर, यह संभावना है कि संकट बचाव निधि उद्योग के अंदर अधिकाधिक संस्थात्मकता और पारदर्शिता की ओर उन्मुख प्रवृत्ति को गतिशील बनाएगा। यह स्पष्ट हो चुका है कि निवेशकों के आहरणों के परिणमस्वरूप परिसमाप्त की गई लघुतर निधियों की नियति को दूर करने के लिए कई अपेक्षाकृत बड़ी निधियों ने अपने विपणन को संस्थागत निवेशकों की ओर उन्मुख कर दिया है। इस प्रकार के अंतरण के लिए निवेश की कार्यनीति के बारे में अधिकाधिक पारदर्शिता और जोखिम प्रबंधन की प्रक्रियाओं की अधिकाधिक छानबीन की अपेक्षा होती है। निवेश के परिवेश की चुनौतियों के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कुछ अपेक्षाकृत बड़ी निधियों ने ऐसे कम शुल्क वाले कार्यक्रमों और प्रक्रियाओं को लागू किया जो बड़े संस्थागत ग्राहकों की आवश्यकताओं के प्रति अधिक ध्यान देती हैं। अंत में, विवेकपूर्ण ढाँचे के सुधार के लिए अनेक सरकारी सिफारिशों का निहितार्थ उद्योग की अधिक सख्त निगरानी है। ऐसे

सारणी 3.19: उभरते बाजारों की बचाव निधियाँ

(बिलियन अमेरिकी डॉलर)

वर्ष	निवल परिसंपत्ति प्रवाह	अनुमानित परिसंपत्तियाँ
1	2	3
2002	-5.7	23.7
2003	3.4	34.2
2004	4.7	46.3
2005	5.3	55.1
2006	8.0	81.8
2007	9.1	116.7
2008 ति1	0.6	111.1
2008 ति2	1.0	122.7
2008 ति3	-2.6	90.4
2008 ति4	-6.7	67.0

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के अनुमान, वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, अप्रैल 2009।

सुधारों में शामिल हैं, सभी बचाव निधियों का पंजीकरण, अपेक्षाकृत बड़ी निधियों के लिए सूचना की अपेक्षाओं की अधिक माँग तथा ऐसी बचाव निधियों का प्रत्यक्ष पर्यवेक्षण जिनके परिचालनों का प्रणालीगत स्थिरता के लिए निहितार्थ हैं।

3.89 समाहार के तौर पर वित्तीय संस्थाएँ वित्तीय संकट से सर्वाधिक पीड़ित थीं। संकट के प्रारंभ होने पर वाणिज्य बैंकों ने लाभप्रदता में कमी और बड़ी मार्क-टू-मार्केट हानियाँ उठाईं जिसने बाद में अमेरिका एवं यूरोप में स्थित अन्य परिपक्व अर्थव्यवस्थाओं में बैंक विफलताओं को जन्म दिया। दूसरी ओर, उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की बैंकिंग प्रणाली ने संकट के दौरान सापेक्ष आघात-सहनीयता को प्रतिबिंबित किया जो प्रभावित परिसंपत्ति वर्गों में उनके सीमित एक्सपोज़र एवं पूर्वी एशियाई संकट को देखते हुए उनके तुलन-पत्रों को मजबूत करने के लिए किये गये विनियामक और पर्यवेक्षी उपायों के कारण था। उक्त संकट ने निवेश बैंकिंग उद्योग को लगभग महत्वहीन बना दिया जो संकट को प्रेरित करने में सहायक था। इस संकट ने एकप्रवण (मोनोक्लाइन) बीमाकर्ताओं और बचाव निधियों के वित्तीय कार्यनिष्पादन को भी अत्यधिक प्रभावित किया तथा बचाव निधियों के संबंध में इस संकट ने अधिकाधिक संस्थात्मकता और पारदर्शिता की ओर उन्मुख प्रवृत्ति को गतिशील बनाया।

III. बाह्य क्षेत्र पर प्रभाव

अंतरराष्ट्रीय व्यापार

व्यापार संबंधी खुलापन

3.90 उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में आर्थिक गतिविधियों में विद्यमान मंदी के साथ ही वित्तीय बाजारों में अस्थिरताएँ उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में दोनों व्यापार और वित्तीय सरणियों के माध्यम से संचरित की गईं जो हाल के वर्षों में देखे गये बढ़े हुए वैश्विक एकीकरण के कारण था। पिछली एक चौथाई शताब्दी में विश्व व्यापार में लगभग 6 प्रतिशत की संवृद्धि विश्व उत्पादन की दर की लगभग दुगुनी थी। इसके परिणामस्वरूप विश्व की जीडीपी में विश्व व्यापार का अंश बढ़कर 2008 में 53 प्रतिशत से अधिक रहा (चार्ट III.12)। व्यापार के उदारीकरण के अतिरिक्त, इसके लिए वित्तीय बाजारों में तेज गतिविधियाँ भी कारण हैं जिसने विश्व व्यापार के वित्तीयकरण को प्रेरित किया। परंतु इन्हीं गतिविधियों ने आर्थिक अशांति के लिए गुंजाइश को भी व्यापक कर दिया जब वैश्विक स्थितियाँ खराब हो गई थीं। उदाहरण के लिए व्यापार वित्त जिसका अब अधिकाधिक उपयोग व्यापार के वित्तपोषण के लिए किया जा रहा है, संकट के दौरान तीव्र रूप में प्रभावित हुआ था क्योंकि वित्तीय बाजार लुढ़क गये थे।

3.91 वैश्विक अर्थव्यवस्था में व्यापार का बढ़ता हुआ महत्व अंतर्निहित क्षेत्रीय विभिन्नताओं को आच्छादित कर देता है। उदाहरण के लिए एशियाई निर्यातों में 10 प्रतिशत से अधिक की औसत दर से वृद्धि हुई तथा लातीन अमेरिका और कैरीबीयन के निर्यात लगभग 7 प्रतिशत बढ़े जो पिछली एक-चौथाई शताब्दी के दौरान 6 प्रतिशत के विश्व औसत से अधिक हैं। इसने इन अर्थव्यवस्थाओं के बढ़ते हुए खुलेपन के लिए प्रेरणा दी जैसा कि जीडीपी में उनके व्यापार के अंश में प्रतिबिंबित है (सारणी 3.20)। विकासशील देशों के उत्पादन में अंतरराष्ट्रीय व्यापार का अंश 1980 में विद्यमान 35 प्रतिशत से बढ़कर 2007 में 57 प्रतिशत हो गया। व्यापार में तीव्र वृद्धि ने न केवल विकासशील विश्व में उत्पादकों के लिए नये बाजारों का निर्माण किया, बल्कि उपभोक्ताओं के लिए भी कीमतें कम कर दीं। वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के बढ़ते हुए एकीकरण तथा पिछले दशक में अंतरराष्ट्रीय वित्त में उनकी फर्मों और घर-परिवारों के बढ़ते महत्व ने विपुल आर्थिक और वित्तीय लाभ उत्पन्न किये हैं।

चार्ट III.12 : अंतरराष्ट्रीय व्यापार - प्रवृत्तियाँ और महत्व

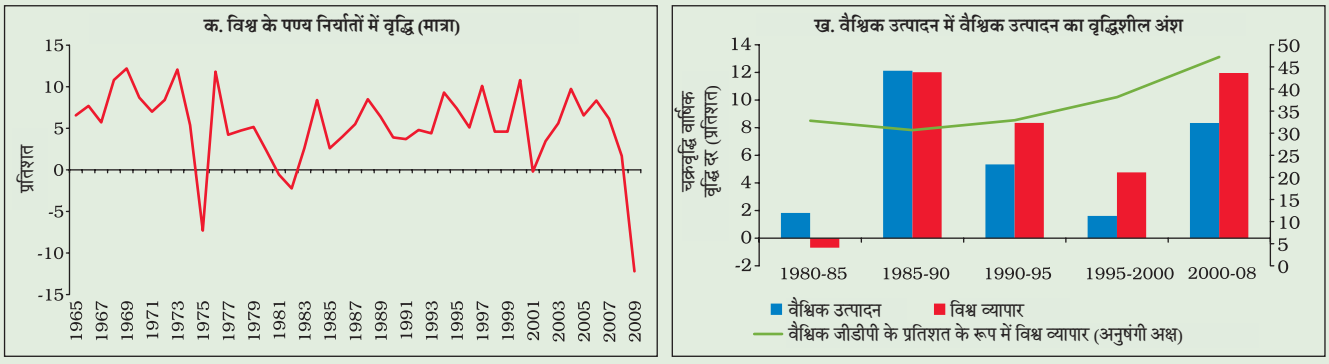

टिप्पणी : व्यापार और उत्पादन के आंकड़े मूल्य के तौर पर हैं।

सारणी 3.20: व्यापार का खुलापन - चयनित देश

(जीडीपी का प्रतिशत)

क्षेत्र	2001	2002	2003	2004	2005	2006	2007	2008
1	2	3	4	5	6	7	8	9
लातीन अमेरिका								
अर्जेन्टीना	17.0	34.9	33.7	36.8	37.3	37.2	37.8	38.5
ब्राजील	20.5	21.3	22.0	24.0	21.8	21.0	21.1	23.6
चिली	50.6	50.5	53.5	58.0	60.7	64.4	68.2	73.2
मेक्सिको	48.6	47.0	47.9	50.7	51.4	53.1	54.0	55.1
उभरता यूरोप								
चेक गणराज्य	113.0	105.2	109.4	123.2	123.2	131.5	137.6	131.7
पोलैंड	47.8	50.8	58.9	66.9	64.3	70.8	72.4	71.8
रूस	50.8	50.9	49.1	47.4	48.3	47.3	44.7	45.5
एशिया								
चीन	37.6	41.8	50.7	58.4	62.2	64.8	62.8	58.0
हांगकांग एसएआर	234.2	247.7	287.0	319.4	330.1	341.8	343.7	349.9
भारत	21.5	22.6	23.8	27.5	32.1	35.3	34.5	41.7
इंडोनेशिया	57.3	48.5	44.1	47.2	54.7	48.7	47.1	49.9
कोरिया	57.4	54.2	57.9	66.2	64.5	66.8	69.4	92.7
मलेशिया	169.8	167.2	167.2	181.2	181.5	181.5	169.5	उ.न.
फिलीपीन्स	96.7	96.8	96.1	95.8	89.4	84.9	74.6	65.3
सिंगापुर	298.8	297.5	315.4	335.3	353.9	364.4	333.7	उ.न.
थाईलैंड	101.8	97.0	101.7	111.1	122.1	116.9	111.6	121.7
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ								
आस्ट लिया	34.1	32.8	29.6	30.0	31.9	34.4	33.2	37.9
कनाडा	69.6	66.9	61.2	61.4	60.0	58.2	56.4	57.5
जापान	17.0	17.8	18.7	20.5	22.9	26.4	28.6	29.6
अमेरिका	18.2	17.5	17.8	19.3	20.4	21.5	22.1	23.5

टिप्पणी : व्यापार के खुलेपन का मापन जीडीपी की तुलना में निर्यातों और आयातों के योग के अनुपात से किया जाता है।
स्रोत : 1. अंतरराष्ट्रीय वित्तीय सांख्यिकी, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष। 2. वैश्विक आर्थिक संभावना डाटाबेस, अं.मु.कोष।

परंतु व्यापार के बढ़ते हुए एकीकरण ने भी उन सरणियों को विस्तृत बनाया जिनके माध्यम से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में आर्थिक गतिविधि में मंदी उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में फैल सकी।

3.92 हाल के वित्तीय संकट के दौरान अंतरराष्ट्रीय व्यापार के विकास ने आर्थिक गतिविधि के विकास को प्रतिबिंबित किया। अंतरराष्ट्रीय व्यापार प्रवाह जो मुख्य रूप से उदारीकरण की लहरों के कारण हाल के दशकों में तेजी से बढ़ा था, 2008 के अंत तक अचानक कम हो गया और तब कुछ क्षेत्रों में मजबूती से संकुचित हुआ जो विभिन्न देशों के बीच संकट के प्रभावों को आगे और प्रचारित करता है। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आइएमएफ) के अनुमानों के अनुसार विश्व व्यापार (वस्तुएँ और सेवाएँ) 2008 में 2.8 प्रतिशत की घटी हुई वृद्धि को दर्ज करने के बाद 2009 में 10.7 प्रतिशत संकुचित हुआ (सारणी 3.21)। विश्व व्यापार की मात्राएँ 1965 के बाद तीन अन्य अवसरों पर गिरी थीं (2001 में 0.2 प्रतिशत, 1982 में 2.0 प्रतिशत, और 1975 में 7.0 प्रतिशत), परंतु इनमें से कोई भी घटना 2009 में देखी हुई गिरावट के परिमाण तक नहीं पहुँच सकी। विश्व व्यापार की मात्रा में गिरावट पहले की अवनति (प्लंज) से काफी अधिक थी जो विभिन्न देशों के बीच वैश्विक

सारणी 3.21 : विश्व व्यापार के परिमाण में विकास

(प्रतिशत)

मद	2007	2008	2009	2010अ
1	2	3	4	5
विश्व व्यापार का परिमाण (वस्तुएँ और सेवाएँ)	**7.3**	**2.8**	**-10.7**	**7.0**
आयात				
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	4.7	0.6	-12.0	5.4
उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ	13.8	8.5	-8.4	9.7
निर्यात				
उन्नत अर्थव्यवस्थाएं	6.3	1.9	-11.7	6.6
उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ	9.8	4.0	-8.2	8.3
पण्य कीमतें (अमेरिकी डॉलर)				
तेल	10.7	36.4	-36.3	29.5
ईंधन से इतर (औसत विश्व पण्य निर्यात भारों पर आधारित)	14.1	7.5	-18.7	13.9

अ : अनुमान
स्रोत : वैश्विक आर्थिक संभावना, अप्रैल 2010, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

व्यापार के संवर्धित एकीकरण के माध्यम से हाल के वित्तीय संकट के व्यापक प्रभाव को दर्शाता है। विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) के अनुसार वर्ष 2009 ने 70 वर्ष से अधिक अवधि में विश्व व्यापार में 12.2 प्रतिशत की तीव्रतम गिरावट का साक्षात्कार किया। वर्तमान में विश्व व्यापार एक समुत्थान (रिकवरी) के चरण में है तथा 9.5 प्रतिशत पर वृद्धि करते हुए 2010 में अपनी पहले की स्थिति पुन: निश्चित रूप से प्राप्त करनेवाला है (विश्व व्यापार संगठन, 2010)।

व्यापार में तीव्र पतन क्या स्पष्ट करता है?

3.93 अक्तूबर 2008 से व्यापार प्रवाहों में गिरावटें पिछली मंदियों से अनेक कारणों से बड़ी थीं। पहला, अमेरिका के सब-प्राइम संकट का अपना पहले क्रम का प्रभाव परिसंपत्तियों की हानि के माध्यम से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में चलनिधि की कमियों पर रहा। धन-संपदा की हानि के साथ ही अमेरिका और यूरोपीय देशों में घर-परिवारों ने अपने विवेकपूर्ण व्यय में कटौती करके प्रतिक्रिया जताई। यह प्रतीत होता है कि इसका विशेष रूप से एक स्पष्ट प्रभाव विनिर्मित वस्तुओं के लिए माँग पर रहा है। प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में निवेश की माँग के साथ ही उपभोग की माँग में संकुचन ने उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के आयातों में एक तीव्रतर गिरावट को प्रेरित किया। ये घटनाएँ उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) से होनेवाले निर्यातों में अचानक पतन में प्रतिबिंबित हुईं विशेष रूप से जहाँ निर्यातों का एक बड़ा भाग संकट से आहत उन्नत देशों में जा रहा हो (चार्ट III.13)। दूसरा, अक्तूबर 2008 से व्यापार की वृद्धि में गिरावट केवल मात्रा में कमी के कारण ही नहीं, बल्कि माँग में कमी के अनुरूप कीमतों में तीव्र कटौतियों के कारण भी थी। ईएमई की निर्यात कीमतों में यह गिरावट उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की आयात कीमतों में गिरावट से अधिक तेज थी जो मूल्य के तौर पर ईएमई के निर्यातों में बड़ी कमी में प्रतिबिंबित हुई। तीसरा, व्यापार प्रवाहों में तीव्र कमियों का कारण कुल व्यापार में वैश्विक आपूर्ति की शृंखलाओं की बढ़ती हुई उपस्थिति मानी जा सकती है; उत्पादन की प्रक्रिया के दौरान वस्तुएँ कई सीमाएँ पार करती हैं तथा अंतिम उत्पाद में घटकों को हर बार गिना जाता है जब वे किसी सीमा को पार करते हैं (विश्व व्यापार संगठन, 2009)। चौथा, व्यापार वित्त की कमी थी (इसकी चर्चा बाद में की गई है)। पाँचवाँ, सुरक्षात्मक उपायों के लिए बढ़ती हुई प्रवृत्ति व्यापार संकुचन में योगदान कर सकती है यद्यपि इस संबंध में कोई स्पष्ट सबूत नहीं है। छठवाँ, 2008 की दूसरी छमाही में उन्नत देशों में उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं पर व्यय में कमी ने ईएमई के ऑटोमोबाइल और सूचना प्रौद्योगिकी (आइटी) उत्पादों के निर्यातों को तेजी से घटाया है। हाल की मंदी में इलैक्ट्रॉनिक वस्तुओं का विक्रय की तुलना में स्टॉक का (इन्वेंटरी-टू-सेल्स) अनुपात पूर्वी एशिया में तेजी से बढ़ा था, तथा उनके निर्यात और उत्पादन में कमी आई थी।

चार्ट III.13 : मासिक व्यापार निष्पादन

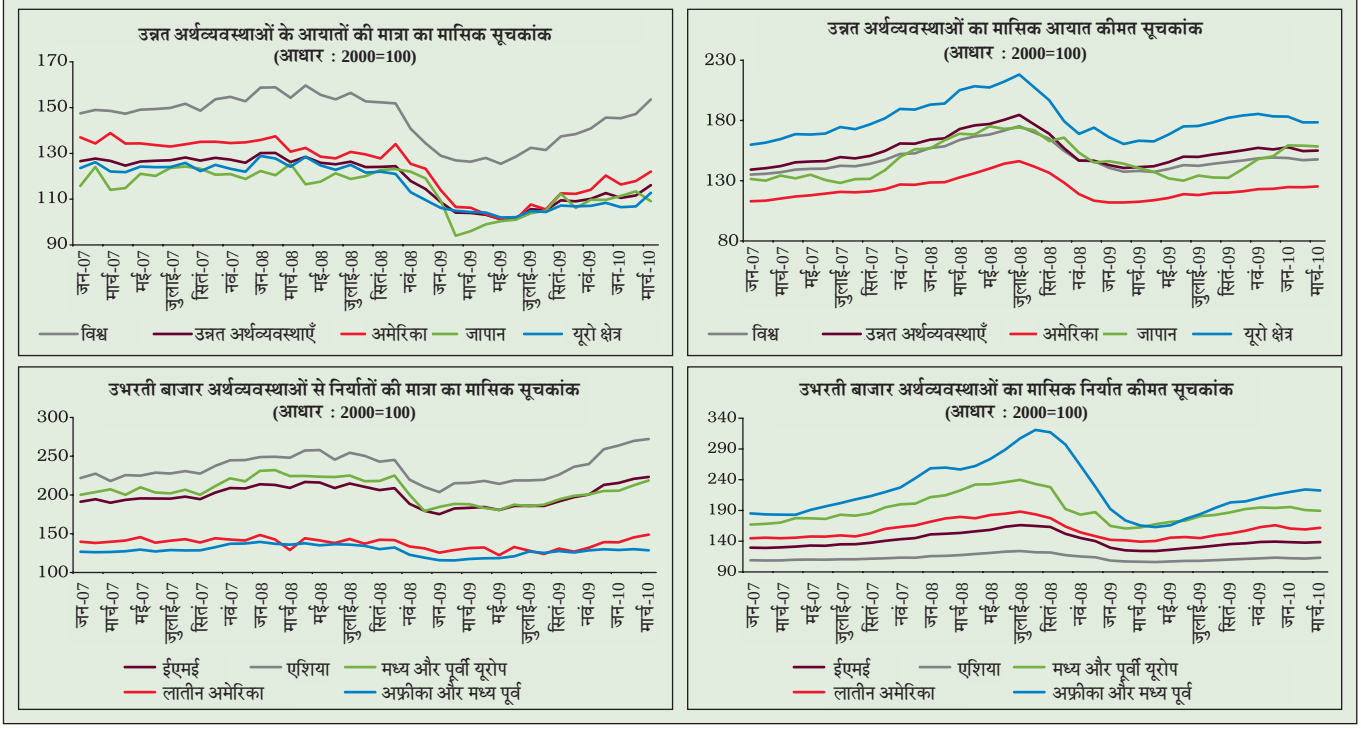

विभिन्न क्षेत्रों में प्रभाव

3.94 घटते हुए व्यापार का प्रभाव सभी क्षेत्रों में महसूस किया गया यद्यपि उसकी सीमा अर्थव्यवस्था में विनिर्माण निर्यातों के महत्व के आधार पर भिन्न-भिन्न रही (चार्ट III.14) ।विकसित देशों में उदाहरण के लिए अन्य देशों की तुलना में जर्मनी और जापान विनिर्माण के अपने घटते हुए निर्यातों के द्वारा अधिक बुरी तरह प्रभावित हुए हैं। यह मुख्य रूप से निवेश और टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुओं के लिए माँग ही है जो तीव्रता के साथ प्रभावित हुई थी। यह केवल इसी कारण से नहीं है कि ऐसी वस्तुओं का उपभोग खाद्य और मूलभूत सेवाओं के उपभोग की तुलना में अधिक आसानी से आस्थगित किया जा सकता है, बल्कि इस कारण से भी है कि उनका अधिग्रहण अंशत: ऋण पर निर्भर है जिसे प्राप्त करना अधिक कठिन और महँगा है। इसके परिणामस्वरूप उन देशों ने, जिनके कुल उत्पादन में निवेश और टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुओं का अंश अधिक है, अन्यों की अपेक्षा औद्योगिक उत्पादन और समग्र जीडीपी वृद्धि में अधिकतर गिरावट का अनुभव किया। आस्ट्रेलिया और कनाडा भी पण्य कीमतों में पतन के द्वारा प्रभावित हुए। लातीन अमेरिका में निर्यात सभी देशों में घट गए, परंतु संकट का प्रभाव विशेष रूप से मेक्सिको जैसे देशों में मजबूत रहा है जहाँ जीडीपी का 2008 की अंतिम तिमाही से तेजी से संकुचन हो रहा था। मेक्सिको अमेरिका को विनिर्मित वस्तुओं के निर्यातों पर अत्यधिक निर्भर है तथा पर्यटन और कामगारों के विप्रेषणों से कम आय के कारण वे पहले भी और अन्य देशों की तुलना में अधिकतर सीमा तक प्रभावित हुए थे।

3.95 बढ़े हुए वैश्विक एकीकरण और विनिर्माण उत्पादन की शृंखलाओं में विशेषीकरण की पृष्ठभूमि में एशिया में विकासशील अर्थव्यवस्थाओं ने उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मंदी के बाद आर्थिक गतिविधि में एक मजबूत संकुचन का अनुभव किया (बॉक्स III.2)। निर्यातों में समकालीन पतन 2009 की पहली तिमाही में गहराया जो अधिकांश ईएमई में लगभग 25 प्रतिशत की एक औसत वर्षानुवर्ष गिरावट के साथ था (सारणी 3.22)। चीन, भारत और इंडोनेशिया जैसे अन्य एशियाई देशों में विनिर्मित उत्पादों के घटते हुए निर्यातों का औद्योगिक उत्पादन और जीडीपी पर एक कम नाटकीय प्रभाव रहा है जो उनके बड़े और अभी विस्तृत हो रहे घरेलू बाजारों के कारण है।

3.96 वैश्विक अर्थव्यवस्था अब मंदी की जकड़ से बाहर निकलने लगी है। उभरता हुआ एशिया वैश्विक पुनरुत्थान में अग्रणी है तथा वैश्विक गिरावट से किसी भी अन्य क्षेत्र की तुलना पुन:प्राप्ति निवल निर्यातों से अवरोध को दूर करने की अपेक्षा नीतिगत प्रोत्साहन और जनसाधारण की माँग से बहुत अधिक लाभान्वित हुई। आगे बढ़ते हुए एशिया कम से कम निकट भविष्य में मजबूत बाह्य माँग के भरोसे नहीं रह सकेगा क्योंकि वैश्विक समुत्थान के मंद होने की आशा है। निर्यात की माँग पर अत्यधिक निर्भर रहने के बजाय बुनियादी संरचना तथा वित्तीय विकास और कारपोरेट प्रोत्साहनों में सुधारों के माध्यम से निरंतर वृद्धि की नींव का निर्माण करना आवश्यक है। इसके अलावा, सामाजिक सुरक्षा जालों और स्वास्थ्य रक्षा प्रणालियों को विकसित करने और उनमें सुधार लाने के द्वारा कई उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाएं घरेलू उपभोग में तेजी ला सकती हैं।

सेवाओं में व्यापार

3.97 वैश्विक वित्तीय और आर्थिक संकट ने सेवाओं में व्यापार को भी प्रभावित किया है। परिवहन, यात्रा और अन्य वाणिज्यिक

चार्ट III.14: क्षेत्र-वार व्यापार निष्पादन

(प्रतिशत में परिवर्तन स्थिर कीमतों पर)

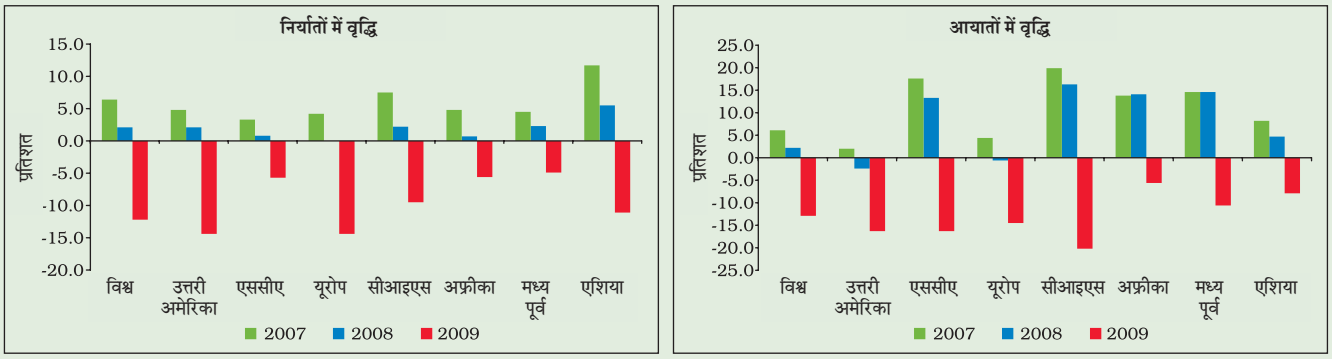

टिप्पणी : एससीए : दक्षिणी और मध्य अमेरिका जिसमें कैरीबियन भी शामिल है।

बॉक्स III.2
क्यों एशियाई निर्यातों पर सबसे बुरा प्रभाव पड़ा ?

व्यापार के उदारीकरण से विशेष रूप से पूर्वी एशिया लाभान्वित हुआ जैसा कि इन देशों में निर्यात-प्रेरित औद्योगीकरण में प्रतिबिंबित हुआ। समझा जाता है कि इसने प्रभावों की अंत:क्षेत्रीय व्याप्ति के प्रभावों को प्रेरित किया जो मुख्य रूप से जापान से प्रत्यक्ष निवेश के माध्यम से तथा औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं के "खोखला होने" (हॉलोइंग आउट) से अप्रत्यक्ष रूप से तकनीकी अंतरणों से उत्पन्न हुए। जापानी अर्थव्यवस्था के औद्योगिक फोकस में हल्के से भारी इलेक्ट्रानिक्स तक और उच्च तकनीक वाले (हाइ-टेक) उद्योगों में प्रत्येक अंतरण ने इस क्षेत्र में कोरिया और ताइवान जैसी अन्य अर्थव्यवस्थाओं के लिए बाजार के अवसर निर्मित किये। इलेक्ट्रॉनिकी उद्योगों के अंदर भी मध्य-दायरे वाली वस्तुओं की आपूर्ति क्रमश: कोरिया, ताइवान, सिंगापुर और मलेशिया द्वारा की जाने लगी तथा जापान में केवल सर्वाधिक परिष्कृत वस्तुओं का उत्पादन ही किया गया। बहुत हाल ही तक चूँकि कोरिया, ताइवान और सिंगापुर ने भारी और उच्च तकनीक वाली वस्तुओं के क्षेत्रों में विशेषज्ञता हासिल करना शुरू किया, अत: हलके उद्योग थाईलैंड, फिलीपीन्स और इंडोनेशिया द्वारा हथिया लिये गये।

औद्योगीकरण का यह क्रम जिसे अकसर "उड़ते हंसों का प्रतिमान" कहा गया, पूर्वी एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में विनिर्माण में तुलनात्मक लाभों को एक नेता से अनुयायियों तक, और तब अनुयायियों के अनुयायियों तक आगे बढ़ाने में सफल हुआ। कृषि क्षेत्र से औद्योगिक क्षेत्र तक औद्योगीकरण का एक क्रमिक ढाँचा देखा गया जो अल्प पूँजी अपेक्षाओं से भारी और पेट्रो-रसायन उद्योगों तक, तथा सूक्ष्मता और इलेक्ट्रॉनिकी उद्योगों तक व्याप्त था जहाँ विलंब से आनेवाले औद्योगिक संरचना में परिवर्तनों को दुहरा रहे थे। एशियाई देशों में उच्च निर्यात वृद्धि एक ऐसी मजबूत घरेलू औद्योगिक क्षेत्र की पृष्ठभूमि में संभव हुई है जिसने निरंतर वृद्धि के लिए एक आधार का निर्माण किया है। उच्च वृद्धि के चरण के दौरान औद्योगिक क्षेत्र में योजित मूल्य इन अर्थव्यवस्थाओं में 10 प्रति वर्ष से अधिक हुआ। आज एशिया में विभिन्न विकासशील अर्थव्यवस्थाएं उन्नत अर्थव्यवस्थाओं को किये जानेवाले निर्यातों के लिए एक विनिर्माण आपूर्ति शृंखला का भाग हैं। इनमें से कुछ देशों में, जैसे मलेशिया, कोरिया गणतंत्र, सिंगापुर, ताइवान और थाईलैंड, विनिर्माण उत्पादें के निर्यात उनके जीडीपी के एक बड़े अंश का प्रतिनिधित्व करते हैं।

विनिर्माण उत्पादों की बढ़ती हुई निर्यातों एवं मजबूत घरेलू मूलभूत व्यवस्थाओं की पृष्ठभूमि में एशियाई क्षेत्र उत्पादन, व्यापार और आरक्षित निधियों में एक वृद्धिशील अंश के साथ विश्व के लिए एक सुदृढ़ आर्थिक संचालक बन गया है (सारणी)। तथापि, वर्तमान संकट के दौरान एशिया में वृद्धि में आकस्मिक मंदन अन्य क्षेत्रों की तुलना में अधिक तीव्र था, तथा मुख्य देशों में वैश्विक संकट के अधिकेंद्र से भी अधिक तेज था जो इन अर्थव्यवस्थाओं के बृहत्तर एकीकरण के

सारणी : विकासशील एशिया : विश्व का उभरता हुआ आर्थिक संचालक

वर्ष	विश्व में अंश (प्रतिशत)			
	जीडीपी	निर्यात	आयात	आरक्षित निधियाँ
1	2	3	4	5
1980	7.2	4.2	4.6	8.6
1985	8.6	4.9	5.9	15.2
1990	10.1	5.3	5.8	6.9
1995	13.5	8.2	8.8	12.3
2000	15.2	9.6	8.5	15.7
2005	18.3	12.7	11.9	27.1
2010/नवीनतम	22.9	14.5	13.3	33.8

स्रोत : वैश्विक आर्थिक संभावना डाटाबेस; आइएफएस (अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष)।

कारण था। कई प्रकार से यह तीव्र प्रभाव अप्रत्याशित था। एशिया संकट के अधिकेंद्र से दूर है, केवल भौगोलिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि इस अर्थ में भी कि यह उन वित्तीय प्रथाओं में लिप्त नहीं था जिन्होंने उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की बैंकिंग प्रणालियों में गंभीर समस्याओं के लिए मार्ग प्रशस्त किया। इसके अलावा, संकट से पहले यह क्षेत्र मजबूत समष्टि-आर्थिक आकार में था और इस प्रकार यह उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से उत्पन्न होनेवाले दबावों का प्रतिरोध करने के लिए सुदृढ़ स्थिति में था। अत: प्रत्याशाओं के विरुद्ध परिणाम क्या स्पष्ट करता है ? इसका उत्तर वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ एशिया के असाधारण एकीकरण में निहित है। एशिया का काफी भाग तकनीकी रूप से परिष्कृत विनिर्माण निर्यातों पर अत्यधिक निर्भर है जिसके लिए माँग समाप्त हो गई थी। इसी समय शेष विश्व के साथ एशिया के वित्तीय संबंध पिछले दशक में गहरे हो चुके हैं जिससे यह क्षेत्र वैश्विक अवनति (डीलिवरेजिंग) की शक्तियों के समक्ष अरक्षित हो गया है।

जीडीपी में उन्नत विनिर्माण के बृहत्तर अंश से युक्त देशों ने तीव्रतर उत्पादन कमियों का अनुभव किया। अंतर्निहित कारण यह है कि अन्य मदों की तुलना में उन्नत विनिर्माण अधिक चक्रीय तौर पर संवेदनशील है। विनिर्माण में एक निम्नतर अंश, जैसे पण्य निर्यातकों से युक्त एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में वृद्धि की स्थिति प्रारंभ में सुदढ़ता के साथ प्रभावी ढंग से बेहतर रही, यद्यपि पण्य कीमतों में पतन ने उन्हें भी आघात पहुँचाया। माँग में पतन को अंत:क्षेत्रीय व्यापार पर नाटकीय प्रभावों के साथ एकीकृत आपूर्ति शृंखला के माध्यम से अंतरित किया गया है। वर्तमान संकट स्पष्ट रूप से यह उदाहरण के साथ समझाता है कि एशिया ने वैश्विक अर्थव्यवस्था से "संबंध-विच्छेद (डीकपल्ड) नहीं किया है"। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में समकालिक मंदन ने 1998 में प्राप्त उस अनुभव की तुलना में वर्तमान संकट के दौरान मामले को आगे और जटिल बना दिया है जब घरेलू माँग में गिरावट की हानिपूर्ति कुछ सीमा तक औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं से उत्पन्न होनेवाली माँग द्वारा की गई थी।

सेवाओं के वैश्विक निर्यातों में वृद्धि 2007 में विद्यमान 20 प्रतिशत से घटकर 2008 में 12 प्रतिशत हो गई (सारणी 3.23)। उपलब्ध आधार-सामग्री के आधार पर 2008 की चौथी तिमाही में वाणिज्यिक सेवाओं के वर्षानुवर्ष वैश्विक निर्यातों में 7-8 प्रतिशत की गिरावट हुई (विश्व व्यापार संगठन, 2009)। परिवहन सेवाओं के निर्यातों में 2008 में 16 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि यात्रा सेवाओं और अन्य वाणिज्यिक सेवाओं में क्रमश: 11 प्रतिशत और 12 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई। वैश्विक माँग के मंदन में समुद्री परिवहन सेवाओं ने त्वरित गति से प्रतिक्रिया व्यक्त की। दोनों शुष्क और तरल माल (बल्क) के अभिनियोजन एवं कंटेनर जहाजों संबंधी आंकड़े सेवा से जलयानों को अधिकाधिक हटाने की पुष्टि करते हैं। तदनुसार संकट ने पत्तन यातायात की कमी को प्रेरित किया। इसके अतिरिक्त, 2008 के अंतिम महीनों में मालभाड़ा दरों में भारी गिरावट हुई। मई 2008 में शीर्ष पर पहुँचने के बाद बाल्टिक शुष्क सूचकांक अक्तूबर 2008 के

सारणी 3.22: चयनित एशियाई देशों में व्यापार निष्पादन

(वर्षानुवर्ष प्रतिशत परिवर्तन)

	2007ति1	2007ति2	2007ति3	2007ति4	2008ति1	2008ति2	2008ति3	2008ति4	2009ति1	2009ति2	2009ति3	2009ति4
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
निर्यात वृद्धि (प्रतिशत में)												
चीन	28.0	27.5	26.2	22.2	21.3	22.4	23.3	4.4	-19.8	-23.5	-20.6	0.1
हांगकांग	8.3	11.1	7.8	8.3	10.7	8.1	5.6	-1.8	-21.5	-12.4	-13.8	-2.0
भारत	15.5	23.1	17.3	37.3	37.4	57.0	39.6	-8.4	-20.2	-34.9	-24.2	6.0
इंडोनेशिया	14.5	14.6	8.7	18.4	29.2	27.9	26.9	-7.5	-29.7	-24.7	-17.9	21.6
जापान	10.4	7.2	9.3	14.5	20.5	17.6	12.9	-10.0	-40.6	-33.9	-24.5	-1.0
कोरिया	14.6	14.1	9.4	18.2	17.4	23.1	27.0	-9.9	-25.2	-21.1	-17.6	11.7
मलेशिया	7.6	7.8	6.9	16.1	19.2	28.9	21.4	-12.9	-28.9	-33.3	-26.4	10.1
पाकिस्तान	0.0	4.6	4.4	12.4	22.3	24.3	17.9	-7.3	-20.0	-23.9	-13.2	10.0
फिलीपीन्स	9.4	4.6	2.3	9.9	2.8	5.5	4.1	-22.3	-36.8	-28.9	-21.5	5.1
सिंगापुर	9.9	7.2	8.4	14.8	21.2	26.4	21.2	-13.9	-32.7	-30.8	-22.4	11.8
श्रीलंका	13.0	12.5	12.1	12.1	11.5	11.1	12.0	2.8	-9.3	-22.7	-13.7	-5.6
थाईलैंड	17.3	17.8	13.3	25.8	23.1	28.2	26.1	-10.7	-20.7	-26.2	-17.7	11.9
आयात वृद्धि (प्रतिशत में)												
चीन	18.2	18.3	20.5	25.3	28.9	32.7	25.7	-9.1	-30.9	-20.2	-11.7	22.7
हांगकांग	8.3	12.1	8.9	10.6	11.8	9.4	6.9	-4.0	-22.4	-14.3	-9.9	3.4
भारत	18.9	40.3	25.3	29.2	45.9	49.0	61.2	7.4	-25.8	-30.9	-34.8	1.2
इंडोनेशिया	14.1	14.1	18.5	15.0	42.1	51.2	43.5	12.5	-35.7	-38.0	-29.5	-4.4
जापान	4.5	4.1	4.8	16.0	25.6	28.4	32.6	6.1	-29.3	-35.6	-30.6	-15.0
कोरिया	13.4	14.7	7.3	25.9	28.9	30.5	42.8	-9.0	-32.7	-35.6	-31.0	1.4
मलेशिया	12.4	8.2	8.0	19.7	15.8	17.3	14.4	-17.3	-36.9	-31.0	-22.6	11.8
पाकिस्तान	6.9	2.9	8.5	19.1	49.6	47.5	33.8	-6.5	-37.8	-27.3	-29.6	1.2
फिलीपीन्स	7.8	-0.7	8.5	13.9	24.1	12.1	10.4	-23.9	-33.6	-26.9	-28.9	-0.8
सिंगापुर	8.7	6.7	4.7	20.8	32.1	35.5	32.9	-9.1	-32.5	-33.6	-25.1	3.8
श्रीलंका	3.2	4.4	9.1	23.1	38.0	34.3	29.4	-0.1	-30.3	-42.2	-32.8	-10.1
थाईलैंड	3.7	7.3	7.9	15.4	36.4	30.6	40.1	6.1	-36.9	-33.3	-28.0	0.3

स्रोत : विश्व व्यापार संगठन।

अंत तक अपने निम्नतम स्तर पर नीचे आ गया। वाणिज्यिक सेवाओं के विश्व निर्यात में 2009 में 13 प्रतिशत गिरावट हुई जहाँ परिवहन सेवाओं में 21 प्रतिशत का संकुचन हुआ।

3.98 सेवाओं के अंतर्गत पर्यटन संकट द्वारा तीव्रता के साथ प्रभावित हुआ था। उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में अंतरराष्ट्रीय पर्यटक आगमन 2008 की पहली छमाही में दर्ज 6 प्रतिशत की वृद्धि की तुलना में इस वर्ष की दूसरी छमाही में 2 प्रतिशत कम हो गए। जनवरी और फरवरी 2009 के लिए आधार सामग्री इसमें लगभग 8 प्रतिशत का वर्षानुवर्ष पतन निर्दिष्ट करती है। अफ्रीका, मध्य और दक्षिणी अमेरिका के अपवाद के साथ सभी क्षेत्रों ने ऋणात्मक वृद्धि दर्ज की। पश्चिमी एशिया, दक्षिणी एशिया और यूरोप सबसे अधिक बुरी तरह प्रभावित क्षेत्रों मे से रहे हैं जहाँ गिरावट 2008 के दौरान क्रमश: 28.2 प्रतिशत, 14.6 प्रतिशत और 8.4 प्रतिशत रही है। विश्व पर्यटन संगठन (यूएनडब्ल्यूटीओ) के अनुसार 2009 में अंतरराष्ट्रीय पर्यटक आगमन अनुमानत: 4 प्रतिशत कम हो गए।

सारणी 3.23: पण्य और वाणिज्य सेवाओं के वैश्विक निर्यात

	मूल्य (बिलियन अमेरिकी डॉलर)	वार्षिक प्रतिशत परिवर्तन			
	2009	2005-09	2007	2008	2009
1	2	3	4	5	6
पण्य	12,147	4	16	15	-23
वाणिज्य सेवाएँ	3,312	7	20	12	-13
परिवहन सेवाएँ	704	5	20	16	-21
यात्रा	854	6	15	11	-11
अन्य वाणिज्य सेवाएँ	1,754	10	23	12	-10

स्रोत : विश्व व्यापार संगठन सचिवालय।

विप्रेषण

3.99 विप्रेषण पिछले दशक में वित्तीय संसाधनों के सर्वाधिक अंतरराष्ट्रीय प्रवाहों में से एक हैं। विप्रेषण प्राप्त करनेवाली कई

विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के लिए विप्रेषण विदेशी प्रत्यक्ष निवेश, वित्तीय बाजारों से संविभाग प्रवाहों और सरकारी विकास सहायता से अधिक रहे। कुछ देशों में विप्रेषण की कुल प्राप्तियाँ उनके आयातों के एक बड़े भाग और जीडीपी के एक उल्लेखनीय अंश के समान हैं। कुल विप्रेषण प्रवाहों के बड़े आकार को देखते हुए, व्यक्तिगत घर-परिवारों के कल्याण में सुधार लाने, घरेलू उपभोग को सुसाध्य बनाने, निवेश तथा भुगतान संतुलनों को सहारा देने के तौर पर प्राप्तकर्ता अर्थव्यवस्थाओं पर विप्रेषणों के महत्वपूर्ण समष्टि-आर्थिक प्रभाव हैं।

3.100 पिछले पद्रह वर्षों में विप्रेषणों में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, विशेष रूप से एशिया और लातीन अमेरिका में जहाँ भारत, मेक्सिको और फिलीपीन्स कामगारों के विप्रेषणों के सबसे बड़े प्राप्तकर्ता हैं। ये प्रवाह बहुत स्थिर रहे हैं तथा इन्होंने प्राप्तकर्ता देशों में एक प्रति-चक्रीय शक्ति के रूप में कार्य किया है। फिर भी वे मेजबान देशों में आर्थिक परिस्थितियों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील हैं। 2008 की तीसरी तिमाही में प्रारंभ करते हुए विप्रेषणों की गति में तीव्रता से मंदी आई क्योंकि उन देशों में जहाँ प्रवासी काम करते हैं, आर्थिक संकट ने बल पकड़ा। अमेरिका, यूरोप और मध्य पूर्व में अनेक उत्प्रवासियों के श्रम करते हुए 2008 में विप्रेषण एक चौथाई शताब्दी में पहली बार घटने लगे। अमेरिका और यूरोप से विप्रेषण बहिर्वाहों में 2008 के अंत और 2009 के प्रारंभ के दौरान गिरावट हुई (चार्ट III.15)।

चार्ट III.15 : विप्रेषण बहिर्वाह

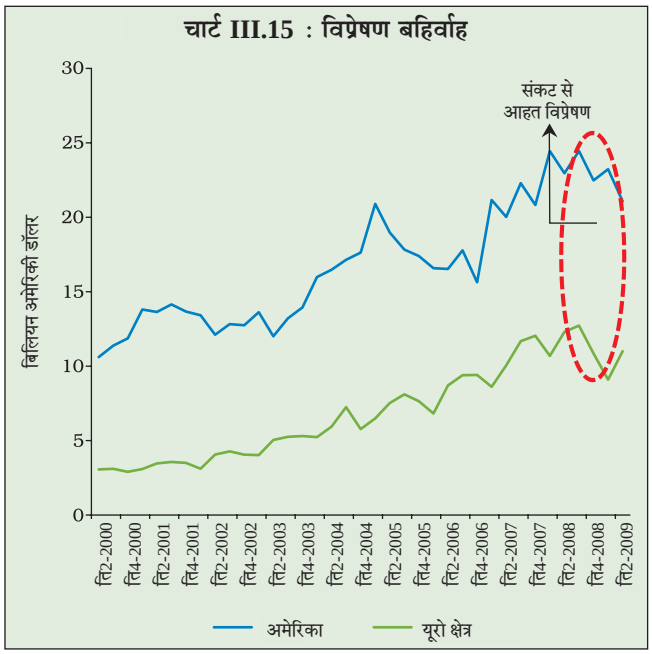

3.101 क्षेत्र की दृष्टि से पूर्वी एशिया और पैसिफिक विप्रेषणों का सबसे बड़ा प्राप्तकर्ता रहा है जिसके बाद दक्षिणी एशिया और लातीन अमेरिका तथा कैरीबीयन का स्थान है (सारणी 3.24)। ऐसे संकेत हैं कि इन देशों को विप्रेषणो के प्रवाह अमेरिका और अन्य उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में अपेक्षाकृत मंद गति के प्रत्युत्तर में मंद हो गए। लातीन अमेरिका और कैरीबीयन को अभिलिखित प्रवाह 2007 से अवरुद्ध हो चुके हैं क्योंकि अमेरिका की मंदी ने विशेष रूप से निर्माण के क्षेत्र में लातीन अमेरिकी (खास तौर से मेक्सिकन) प्रवासियों के रोजगार और आय को कम कर दिया। अमेरिका में निर्माण के क्षेत्र में आगे और मंदन होने के साथ ही विशेष रूप से ये देश प्रभावित हो सकते हैं क्योंकि इन क्षेत्रों से आए अनेक आप्रवासी निर्माण क्षेत्र में नियोजित हैं। उप-सहारन अप्रीका को विप्रेषण 2007 के दौरान विद्यमान 48 प्रतिशत की उच्च वृद्धि दर से तेजी से गिरी हैं, जो अंशत: नाइजीरिया को प्रवाहों में उल्लेखनीय शिथिलता के कारण है। दूसरी ओर विप्रेषण प्रवाह उभरते यूरोप और केंद्रीय एशिया (खाड़ी क्षेत्र को उल्लेखनीय प्रवास के साथ) को बढ़ गए जो कम से कम वर्ष 2008 के प्रारंभ में बढ़ गए और इससे उच्चतर तेल कीमतों से आय में वृद्धि से लाभ मिला। तथापि, इस क्षेत्र को विप्रेषण भी 2009 में गंभीरतापूर्वक आहत हो गए।

3.102 कुल मिलाकर विकासशील देशों को सरकारी तौर पर दर्ज विप्रेषण प्रवाह 2009 में 317 बिलियन अमेरिकी डॉलर तक पहुँचे, जो 2008 में दर्ज 338 बिलियन अमेरिकी डॉलर से 6 प्रतिशत नीचे हैं। 1980 के बाद के दशक से पहली बार विकासशील देशों को विप्रेषणों में 2009 में कमी आई, यद्यपि यह कमी साधारण तौर पर थी। विप्रेषण प्रवाहों में गिरावट सबसे अधिक यूरोप और केंद्रीय एशिया में (15 प्रतिशत) तथा लातीन अमेरिका और कैरीबियन में (10 प्रतिशत) थी , जबकि दक्षिण अफ्रीका और पूर्वी एशिया तथा पैसिफिक सबसे कम प्रभावित क्षेत्रों में से थे। इन क्षेत्रीय प्रवृत्तियों से यह विदित होता है कि : (क) प्रवास के गंतव्य जितने अधिक विविधतापूर्ण हैं, विप्रेषण उतने ही अधिक आघात-सहनीय हैं; (ख) श्रमिकों की गतिशीलता के लिए जितने कम अवरोध हैं, उतनी ही अधिक मजबूत उस गलियारे में विप्रेषणों और आर्थिक चक्रों के बीच की संबद्धता है; तथा (ग) विनिमय दर में उतार-चढ़ाव म्ल्यांकन प्रभाव उत्पन्न करते हैं, परंतु वे विप्रेषणों के लिए उपभोग-निवेश के उद्देश्य को भी प्रभावित करते हैं (राथा, *ईटी एएल,* विश्व बैंक,2010)। विप्रेषण अंतर्वाहों में एक साधारण गिरावट के बावजूद

सारणी 3.24: विकासशील देशों को विप्रेषण प्रवाह, 2002-09

(बिलियन अमेरिकी डॉलर)

देश/क्षेत्र	2002	2003	2004	2005	2006	2007	2008	2009अ
1	2	3	4	5	6	7	8	9
सभी विकासशील देश	112.6	140.4	164.4	198.9	235.4	289.4	337.8	317.2
(जीडीपी का प्रतिशत)	1.81	1.98	1.95	1.99	2.00	2.00	1.95	2.00
क्षेत्र वार								
पूर्वी एशिया और पैसिफिक	27.5	32.7	40.3	50.5	57.6	71.3	86.1	84.8
यूरोप और मध्य एशिया	12.8	14.4	21.0	30.1	37.3	50.8	57.8	49.3
लातीन अमेरिका और कैरीबियन	27.9	36.6	43.3	50.1	59.2	63.2	64.7	58.5
मध्य पूर्व और उत्तरी अफ्रीका	15.2	20.4	23.0	25.0	26.1	31.4	34.7	32.2
दक्षिण एशिया	24.1	30.4	28.7	33.9	42.5	54.0	73.3	72.0
उप-सहारन क्षेत्र	5.0	6.0	8.0	9.4	12.6	18.6	21.1	20.5

अ : अनुमान।

स्रोत : विश्व बैंक स्टाफ के अनुमान। विप्रेषणों को श्रमिकों के प्रेषणों, कर्मचारियों की क्षतिपूर्ति, और प्रवासी अंतरणों की राशि के रूप में परिभाषित किया गया है। आंकड़ों की परिभाषाओं और समूचे डाटासेट के लिए देखें - www.worldbank.org/prospects/migration and remittances.

ये प्रवाह निजी ऋण और ईक्विटी प्रवाहों की तुलना में अधिक आघात-सहनीय रहे हैं तथा अनेक विकासशील देशों में बाह्य वित्तपोषण के एक स्रोत के रूप में अधिक महत्वपूर्ण भी बन गए हैं।

3.103 यह दिलचस्प बात है कि प्रवासियों के विप्रेषण अपेक्षाकृत कम प्राप्तकर्ता देशों में संकेंद्रित हैं; 10 देश ऐसे हैं जहाँ कुल विप्रेषणों के आधे से अधिक प्राप्त किये गये हैं, तथा तीन सबसे अधिक प्राप्तकर्ता (भारत, चीन और मेक्सिको) कुल विप्रेषण अंतर्वाहों के एक-तिहाई से अधिक भाग प्राप्त करते हैं (सारणी 3.25)। विप्रेषणों का कई छोटी और मुख्य रूप से कम आय वाली अर्थव्यवस्थाओं में अपेक्षाकृत रूप से बड़ा महत्व है। ये देश विशेष रूप से मुख्य आप्रवास वाली अर्थव्यवस्थाओं में (अर्थात् यूरोपीय संघ के देश, खाड़ी सहयोग परिषद, रूसी महासंघ और अमेरिका) मंदी के प्रति अरक्षित हैं, जिन्होंने निर्माण और सेवा क्षेत्रों में तीव्र संकुचन को देखा जिनमें सबसे अधिक संख्या में विदेशी श्रमिकों को रोजगार मिला।

3.104 विकासशील देशों को विप्रेषणों में हाल की प्रवृत्ति यह सूचित करती है कि विप्रेषणों में गिरावट विकासशील देशों को निजी प्रवाहों की गिरावट की तुलना में अत्यंत कम है। विश्व बैंक के अनुसार विप्रेषणों की आघात-सहनीयता इस तथ्य से उत्पन्न होती है कि जहाँ नये आप्रवास प्रवाहों में गिरावट हुई है, वहीं प्रवासियों की संख्या अपेक्षाकृत रूप में संकट द्वारा अप्रभावित रही है। यद्यपि संकट के परिणामस्वरूप विश्वव्यापी विप्रेषण प्रवाहों में कुल गिरावट अल्प थी, तथापि स्थिति कुछ छोटे निर्धन देशों के लिए अधिक गंभीर सिद्ध हुई जहाँ विप्रेषण जीडीपी में अपेक्षाकृत बड़ा अंश बनाते है जैसे 2009 में ताजिकिस्तान (50 प्रतिशत), माल्दोवा (31 प्रतिशत), किरगिज गणराज्य (28 प्रतिशत) तथा लेसोथो (27 प्रतिशत)।

सारणी 3.25: 2009 में प्रमुख विप्रेषण प्राप्तकर्ता विकासशील और संक्रमणशील अर्थव्यवस्थाएँ

	प्रवासी विप्रेषणों के अंतर्वाह (बिलियन अमेरिकी डॉलर)	वार्षिक परिवर्तन (प्रतिशत)	जीडीपी में विप्रेषणों का अंश (प्रतिशत)
1	2	3	4
परिमाण द्वारा स्थान निर्धारित			
भारत	47.0	-8.9	4.2
चीन	47.0	-3.2	1.1
मेक्सिको	22.9	-13.1	2.4
फिलीपीन्स	19.4	4.1	11.2
बंगला देश	10.4	16.0	11.4
नाइजीरिया	9.6	-4.0	4.7
पाकिस्तान	8.6	22.4	4.2
पोलैंड	8.5	-20.8	2.0
रोमानिया	8.0	-14.7	4.7
मिस्र	7.8	-10.3	5.3
जीडीपी में अंश द्वारा स्थान निर्धारित			
ताज़िकिस्तान	1.8	-28.7	49.6
टोंगा	0.1	-3.7	37.7
मालदोवा	1.5	-21.4	31.4
किरगिज गणराज्य	1.0	-17.9	27.9
लेसोथो	0.5	12.0	27.3
समोआ	0.1	-2.7	25.8
लेबनान	7.0	-2.5	25.1
गुयाना	0.3	-4.6	24.0
नेपाल	3.0	10.4	21.6
होंडूरास	2.5	-10.6	20.1

स्रोत : लेखकों की गणनाएँ विश्व बैंक के डाटा पर आधारित हैं।

चालू खाता घाटा

3.105 2008 के दौरान विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के चालू खाते पर संकट का प्रभाव चालू खाता आधिक्य में कमी के तौर पर (अर्जेन्टीना, चीन, इंडोनेशिया, फिलीपीन्स, सिंगापुर और इज़राइल) अथवा चालू खाता आधिक्यों से युक्त देशों के लिए आधिक्य के घाटे में परिवर्तित होते हुए (ब्राजील, चिली और कोरिया) देखा गया, जबकि उन देशों का घाटा बढ़ गया जिनका चालू खाता घाटा पहले से ही था (मेक्सिको, हंगरी, पोलैंड और भारत)(सारणी 3.26)। दूसरी ओर कुछ देशों के लिए संकट का प्रभाव उनके चालू खाते में दर्शनीय नहीं था क्योंकि उनका चालू खाता आधिक्य बढ़ गया था (रूस, हांगकांग और सऊदी अरब)। 2009 के दौरान वैश्विक असंतुलन कुछ सीमा तक संकुचित हुए जहाँ अनेक देशों, उल्लेखनीय रूप में अमेरिका और चीन के चालू खाता घाटे/आधिक्य में कमी हुई थी। इस प्रवृत्ति को घाटे वाले देशों में तेल कीमतों में भारी गिरावट, परिसंपत्ति कीमतों में पतन जिससे घर-परिवारों की संवर्धित बचत के लिए विवश किया गया एवं आधिक्य वाले देशों को प्रभावित करते हुए निवेश वस्तुओं की निर्यात माँग में तीव्र पतन द्वारा समर्थन मिला।

सारणी 3.26: विभिन्न देशों के व्यापार शेष और चालू खाता शेष में उतार-चढ़ाव

(जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)

देश	व्यापार शेष					चालू खाता शेष				
	1990	2000	2007	2008	2009	1990	2000	2007	2008	2009
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
लातीन अमेरिका										
अर्जेन्टीना	6.1	0.9	5.1	4.7	6.0	3.3	-3.1	2.3	1.5	2.8
ब्राजील	2.1	-0.1	2.9	1.5	1.6	-0.7	-3.8	0.1	-1.7	-1.5
चिली	4.1	2.8	14.6	5.2	8.6	-1.5	-1.2	4.4	-1.5	2.2
मेक्सिको	-0.3	-1.3	-1.0	-1.6	–	-2.8	-3.0	-0.8	-1.5	-0.6
उभरता यूरोप										
चेक गणराज्य	–	-5.5	3.4	2.9	–	–	-4.7	-3.1	-3.1	-1.0
हंगरी	1.6	-6.2	0.2	0.0	–	1.1	-8.5	-6.8	-7.2	0.4
पोलैंड	5.8	-7.2	-4.0	-4.9	-1.0	1.9	-5.8	-4.8	-5.1	-1.6
रूस	–	23.2	10.1	10.8	9.1	–	18.0	6.0	6.2	3.9
तुर्की	-4.7	-8.3	-7.2	-7.2	–	-1.3	-3.7	-5.8	-5.7	-2.3
उभरता एशिया										
चीन	2.3	2.9	9.3	8.0	–	3.1	1.7	11.0	9.4	5.8
भारत	-1.6	-2.3	-5.3	-7.9	–	-2.5	-1.0	-1.0	-2.2	-2.1
इंडोनेशिया	4.3	15.1	7.6	4.5	6.5	-2.5	4.8	2.4	0.0	2.0
कोरिया	-0.9	3.2	2.7	0.6	6.7	-0.7	2.3	0.6	-0.6	5.1
मलेशिया	5.7	22.2	20.0	23.1	–	-2.1	9.0	15.7	17.5	16.7
फिलीपीन्स	-9.1	-7.9	-5.8	-7.7	–	-6.1	-2.9	4.9	2.2	5.3
थाईलैंड	-7.9	9.5	10.8	6.6	–	-8.3	7.6	6.3	0.6	7.7
अन्य ईएमई/एनआइई										
सिंगापुर	-4.4	15.1	27.4	16.4	–	8.5	11.6	27.6	19.2	19.1
हांगकांग एसएआर	–	-4.8	-9.5	-10.7	–	6.2	4.1	12.3	13.6	11.1
इज़राइल	-4.7	-3.1	-3.4	-3.6	-0.1	0.3	-1.8	2.9	0.7	3.7
सऊदी अरब	19.6	26.4	39.1	44.6	–	-3.6	7.6	24.3	27.9	5.5
दक्षिण अफ्रीका	5.8	3.5	-2.0	-1.6	0.2	1.4	-0.1	-7.2	-7.1	-4.0
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ										
आस्ट्रेलिया	0.1	-1.2	-1.9	-0.5	–	-4.8	-3.8	-6.1	-4.4	-4.1
आस्ट्रिया	-4.2	-2.1	0.5	-0.1	-0.8	0.7	-0.7	3.1	3.5	1.4
कनाडा	1.6	6.2	4.2	4.2	0.9	-3.4	2.7	1.0	0.5	-2.7
फ्रांस	-1.1	-0.2	-2.2	-3.0	–	-0.8	1.6	-1.0	-2.3	-1.5
जर्मनी	4.4	2.9	8.1	7.2	–	2.9	-1.7	7.6	6.7	4.8
जापान	2.3	2.5	2.4	0.8	–	1.5	2.6	4.8	3.2	2.8
युनाइटेड किंगडम	-3.2	-3.4	-6.4	-6.5	-5.8	-3.8	-2.6	-2.7	-1.5	-1.3
अमेरिका	-1.9	-4.5	-5.9	-5.8	-3.6	-1.4	-4.2	-5.2	-4.9	-2.9

–: उपलब्ध नहीं।

स्रोत : वैश्विक आर्थिक संभावना, अप्रैल 2009; अंतरराष्ट्रीय वित्तीय सांख्यिकी, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

3.106 यद्यपि संकट की उत्पत्ति उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के वित्तीय क्षेत्र में हुई, तथापि व्यापार सरणी के माध्यम से अनेक विकासशील देशों की चालू खाता स्थिति के लिए इसके निहितार्थ थे। इस संदर्भ में चालू खाता घाटे के एक धारणीय आकार के बहुविवादित मुद्दे ने एक देश-विशिष्ट दृष्टिकोण से पुन: ध्यान आकर्षित किया है। उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में पूँजी प्रवाहों के तीव्र उलटाव के आलोक में यह मुद्दा अधिक उपयुक्त हो जाता है, जिसने ऐतिहासिक अनुभवों के आधार पर उत्पन्न पारंपरिक नियमों के एक पुनरवलोकन को आवश्यक बना दिया है। ऐतिहासिक रूप से यह तर्क दिया गया था कि 5 प्रतिशत से अधिक सीएडी/जीडीपी अनुपात चेतावनी का कारण बन जाता है (समर्स, 1996), विशेष रूप से तब जब घाटे का वित्तपोषण अल्पावधि ऋण द्वारा किया गया हो (मिलेसी-फेरेती और राज़ीन, 1996)। 1980 के बाद के दशक के प्रारंभ में चिली का संकट 14 प्रतिशत से अधिक सीएडी/जीडीपी अनुपात के साथ संबद्ध किया गया था। 1990 के बाद के दशक के प्रारंभ में मेक्सिको में बाह्य संकट ने भी औसतन 7 प्रतिशत का एक उच्च सीएडी/जीडीपी अनुपात को देखा था। इंडोनेशिया, मलेशिया, फिलीपीन्स और थाईलैंड ने भी 1990 के बाद के दशक के मध्य, पूर्वी एशियाई संकट के दौरान निरंतर बने हुए बड़े चालू खाता घाटे देखे थे। इसी प्रकार 2001 में ब्राजील में भुगतान संकट ने इस धारणा को बल प्रदान किया कि चालू खाता घाटे का आकार कुछ मायने रखता है। धारणीयता के दृष्टिकोण से चालू खाता घाटों के स्तरों ने पूर्वी एशियाई संकट के दौरान नीतिगत वाद-विवादों में अधिक केंद्रीकृत ध्यान को आकर्षित किया। वास्तव में पूर्वी एशियाई संकट में बड़े चालू खाता घाटों को एक महत्वपूर्ण कारक माना गया था (कोरसेट्टी, पेसेन्टी और रूबिनी, 1998; रैडेलेट और सैक्स, 2000)।

वैश्विक पूँजी प्रवाहों पर प्रभाव

3.107 व्यापार के अतिरिक्त, सब-प्राइम संकट वित्तीय सरणी, विशेष रूप से पूँजी प्रवाहों के माध्यम से व्याप्त हुआ। सामान्य समय के दौरान व्यापार प्रवाह और पूँजी प्रवाह आम तौर पर एक दूसरे को प्रभावित करते हें, जबकि किसी संकट के दौरान संकट से जो पहले प्रभावित हो जाता है वह समग्र प्रभाव को बढ़ाते हुए अपने प्रतिरूप (काउंटरपार्ट) को प्रभावित कर देता है। सिद्धांत रूप में राष्ट्रों के बीच पूँजी का प्रवाह पूँजी-आयातक और पूँजी-निर्यातक दोनों देशों को लाभ पहुँचाता है। परंतु हाल के वैश्विक वित्तीय संकट द्वारा समर्थित ऐतिहासिक साक्ष्य स्पष्ट रूप से यह दर्शाता है कि वह भी नये एक्सपोज़र निर्मित कर सकता है तथा नये जोखिम उत्पन्न कर सकता है।

3.108 संकट से पहले विशेष रूप से 2002-2007 के दौरान विकासशील और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के पूँजी प्रवाह बहुत बड़े थे (सारणी 3.27)। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आइएमएफ) की वैश्विक आर्थिक संभावना, 2009 के अनुसार 143 उभरते बाजारों और पाँच छोटी खुली अर्थव्यवस्थाओं को निवल निजी पूँजी प्रवाह 2002 में विद्यमान 90 बिलियन अमेरिकी डॉलर से बढ़कर 2007 में लगभग 600 बिलियन अमेरिकी डॉलर हो गए। यद्यपि प्रवाहों की संरचना अधिक स्थिर बन गई है, तथापि पूँजी प्रवाह लगातार बहुत अस्थिर हैं तथा प्राप्तकर्ता देशों के लिए इसके बड़े समष्टि-आर्थिक निहितार्थ हैं। संकट से ठीक पहले के वर्षों में विकासशील देशों के कुल घरेलू पूँजी निर्माण का लगभग एक चौथाई हिस्से का निधीयन विदेशी पूँजी द्वारा किया गया।

3.109 यह उल्लेखनीय है कि पूँजी प्रवाहों का विस्तार अंतरराष्ट्रीय व्यापार प्रवाहों के विस्तार से काफी अधिक रहा है (गोल्डस्टेइन, मैथीसन और लेन, 1991; मोन्टिएल, 1993)। यह अनेक कारकों के संयुक्त प्रभाव को प्रतिबिंबित करता है जैसे अधिकाधिक वित्तीय उदारीकरण, म्यूचुअल फंडों और पेंशन निधियों जैसे संसथागत निवेशकों का उदय, वर्धमान वित्तीय नवोन्मेषण और वित्तीय बाजार की गतिविधियाँ, डेरिवेटिव उत्पादों में मध्यस्थता तथा सूचना प्रौद्योगिकी में सुधार। 1990 के बाद के दशक से विकासशील देशों में इस प्रक्रिया का समर्थन अवरोधों के निरंतर उन्मूलन और पूँजी नियंत्रणों तथा वित्तीय बाजारों के व्यापक उदारीकरण द्वारा किया गया है। इस प्रक्रिया में विकासशील देशों को पूँजी प्रवाहों ने अतीत में सरकारी प्रवाहों की प्रधानता के विपरीत हाल की अवधियों में निजी (बांड और ईक्विटी) प्रवाहों की प्रधानता के साथ संरचनात्मक अंतरण देखे। जबकि 1990 के बाद के दशक के मध्य तक बचाव निधियों और म्यूचुअल फंडों जैसे विशेषीकृत निवेशक संविभाग अंतर्वाहों के एक भारी हिस्सा बने थे, उसके बाद पेंशन निधियों, बीमा कंपनियों और अन्य संस्थागत निवेशकों

सारणा 3.27: उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में पूँजी प्रवाह : विभिन्न घटनाओं की तुलना*

(बिलियन अमेरिकी डॉलर)

	अंतर्वाह	बहिर्वाह	विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों में परिवर्तन	चालू खाता शेष
1	2	3	4	5
1993-1996	280	110	90	-85
1997-2001	269	193	89	21
2002-2007	951	818	584	429

* अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष की वैश्विक आर्थिक संभावना में यथापरिभाषित सभी ईएमई एवं हांगकांग एसएआर, कोरिया, इज़राइल, सिंगापुर और ताइवान (चीन); वार्षिक औसत।

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, भुगतान संतुलन सांख्यिकी; सेंट्रल बैंक ऑफ चाइना (ताइवान)।

ने उभरते बाजारों में अपनी उपस्थिति बढ़ाई। विकासशील देशों को अंतरराष्ट्रीय बैंक उधार भी 1990 के बाद के दशक के दौरान तेजी से बढ़ा तथा यह एशिया (एशियाई संकट से पहले) में सर्वाधिक सुस्पष्ट था और उसके बाद पूर्वी यूरोप और लातीन अमेरिका का स्थान था।

3.110 अंतरराष्ट्रीय पूँजी प्रवाहों के परिमाण, दिशा और संरचना के महत्वपूर्ण निहितार्थ प्राप्तकर्ता देशों के लिए हैं। 1990 के बाद के दशक में (अर्थात् 1997-98 में एशियाई वित्तीय संकट तक) और 2000 के बाद के वर्षों में विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को निजी पूँजी प्रवाहों में उत्कर्ष (सर्ज) एक ऐसी अवधि के साथ मेल खाता है जब उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में निम्न अंतरराष्ट्रीय ब्याज दरें थीं और विकासशील विश्व में घरेलू नीतिगत सुधार किये जा रहे थे। इससे साहित्य में इस बहस को प्रेरणा मिली कि उक्त उत्कर्ष (सर्ज) प्राथमिक रूप से घरेलू कारकों से संचालित था अथवा बाह्य कारकों से। साहित्य सामान्यत: पूँजी की गतिविधियों को प्रभावित करनेवाले कारकों के दो सेटों के बीच भेद करता है। प्रथम तो सुधरी हुई नीतियों से संबंधित देश-विशिष्ट "कर्षण" (पुल) कारक हैं जो दीर्घावधि में प्रत्याशित प्रतिफल को बढ़ाते हें अथवा वास्तविक घरेलू निवेश पर अनुभूत जोखिम को कम कर देते हैं, जबकि दूसरे तो वैश्विक अथवा "दबाव" (पुश) कारक हैं जैसे सुलभ चलनिधि तथा अमेरिका और अन्य उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में लाभों की खोज।

3.111 ऐतिहासिक रूप से 1980 के बाद के वर्षों और 1990 के बाद के वर्षों के अधिकांश उभरते बाजार के संकट सकल निजी पूँजी अंतर्वाहों में विपर्ययों के साथ संबद्ध किये गये थे जिन्होंने उभरते बाजार की नीतियों में विश्वास की हानि को प्रतिबिंबित किया। तथापि, वर्तमान संकट के दौरान पूँजी प्रवाहों संबंधी गतिविधियाँ कुछ भिन्न हैं। कुछ केंद्रीय और पूर्वी यूरोपीय देशों के उल्लेखनीय अपवाद को छोड़कर कई उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं ने संकट से पहले सुदृढ़ नीतियाँ अपनाई थीं और इस प्रकार वे कम से कम प्रारंभ में पूँजी प्रवाहों में उलटाव के प्रति अधिक आघात-सहनीय थीं। परंतु जैसे ही संकट गहराया, पूँजी प्रवाहों में कुछ गतिविधियों ने ऐसे प्रतिमान का अनुसरण किया जो बिलकुल पिछले संकटों के प्रतिमान जैसा ही था क्योंकि समय के चलते विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को पूँजी प्रवाहों के स्वरूप में नाटकीय परिवर्तन हुए हैं। जबकि अतीत में विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को पूँजी प्रवाहों पर सरकारी प्रवाह हावी हो गए थे, वर्तमान में पूँजी प्रवाहों का बहुत बड़ा भाग निजी (बांड और ईक्विटी) स्रोतों से आता है। इस प्रकार, यद्यपि अधिकांश विकासशील देश बेहतर नीतियाँ अनुरक्षित करते हैं तथा पिछले संकटों के दौरान उनके पास जितनी मजबूत संस्थाएँ थीं, उनसे कहीं अधिक सुदृढ़ संस्थाएँ उनके पास हैं, फिर भी उनमें से कई तो बाह्य विघटनों के प्रति असुरक्षित हैं। उभरते बाजार के शेयर और निवेश सदैव वैश्विक आर्थिक चक्र के प्रति संवेदनशील रहे हैं, परंतु हाल के संकट ने विकासशील देशाँ को तीव्रता से प्रभावित किया है। उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को निवल निजी पूँजी प्रवाह 2008 के दौरान तेज उलटाव के अधीन हो गए जब अनेक ईएमई को बाह्य वित्तपोषण पर काफी अधिक सख्त सीमाओं का सामना करना पड़ा, क्योंकि वैश्विक अवनति (डीलीवरेजिंग) और बढ़ती हुई जोखिम विमुखता ने इन बाजारों में निवेशकों के हित को कम कर दिया है। औसतन, संकट के वर्षों, अर्थात् 2008 और 2009 के दौरान ईएमई को निवल निजी अंतर्वाहों के स्तर लगभग 55 प्रतिशत थे जो 2007 के दौरान विद्यमान ऐसे स्तरों से कम थे (सारणी 3.28 और चार्ट III.16)। हालांकि प्रत्येक क्षेत्र संकट से प्रभावित हुआ था, तथापि समग्र रूप में उभरता हुआ यूरोप और एशिया सबसे अधिक आहत हुए थे, जबकि लातीन अमेरिका सापेक्ष रूप में कम प्रभावित हुआ था। अधिकतर चालू खाता और राजकोषीय घाटे रखनेवाले देश तथा अपने तुलन-पत्रों पर उल्लेखनीय विदेशी मुद्रा एक्सपोज़रों से युक्त क्षेत्र बाह्य वित्तपोषण की स्थितियों के सख्त होने से और पूँजी के आहरणों से ज्यादा प्रभावित हुए।

3.112 विकासशील देशों को कुल पूँजी प्रवाहों में 2007 में विद्यमान लगभग 1.2 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर से गिरावट हुई और वे 2008 के दौरान 780 बिलियन अमेरिकी डॉलर हो गए जो संविभाग ईक्विटी

सारणी 3.28: क्षेत्रवार उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) को निवल पूँजी अंतर्वाह

(बिलियन अमेरिकी डॉलर)

	2007	2008	2009अ	2010पू	2011पू
1	2	3	4	5	6
अ. निजी प्रवाह	**1252**	**588**	**531**	**709**	**746**
लातीन अमेरिका	229	130	157	190	183
उभरता यूरोप	446	263	44	179	212
अफ्रीका/मध्य पूर्व	155	88	48	66	81
उभरता एशिया	422	107	283	272	270
आ. सरकारी प्रवाह	**43**	**61.4**	**62.4**	**55.2**	**35.3**
लातीन अमेरिका	6	14	23	15	17
उभरता यूरोप	4	21	26	20	0
अफ्रीका/मध्य पूर्व	4	4	3	5	4
उभरता एशिया	29	23	10	15	14
इ. कुल प्रवाह (अ+आ)	**1295**	**650**	**593**	**764**	**782**

अ : अनुमान। पू : पूर्वानुमान।

स्रोत : उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को पूँजी प्रवाह (विभिन्न अंक), अंतरराष्ट्रीय वित्त संस्थान।

चार्ट III.16 : उभरते और विकासशील देशों को निवल पूँजी प्रवाह

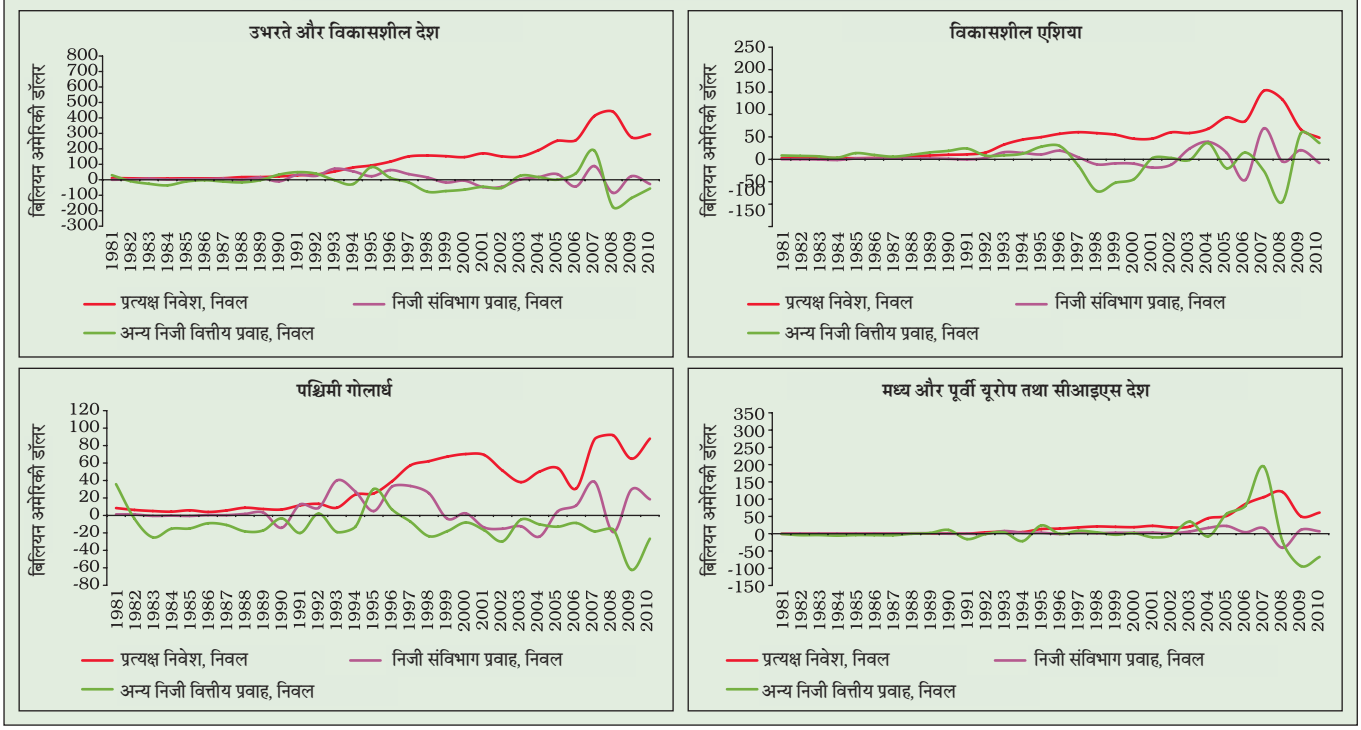

और ऋण प्रवाहों में तीव्र गिरावट के कारण था (सारणी 3.29)। दूसरी ओर प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआइ) प्रवाहों में निरंतर वृद्धि रही, यद्यपि उनकी गति मंद हुई थी। यूरोप और मध्य एशिया में हाल के वर्षों के दौरान ऋण प्रवाहों में तेज वृद्धि की प्रवृत्ति 2008 के दौरान उल्लेखनीय रूप में उलट गई जिससे वर्तमान संकट के दौरान यह सर्वाधिक असुरक्षित क्षेत्रों में एक हो गया।

3.113 संकट के दौरान ईएमई को पूँजी अंतर्वाह मंद हो गए, जबकि पूँजी बहिर्वाहों में वृद्धि हुई जो अंशत: बढ़ते हुए वित्तीय एकीकरण के कारण है। विपुल चलनिधि और अपनी परिसंपत्तियों का विविधीकरण करने की इच्छा से प्रेरित होकर विकासशील देशों में स्थित निवेशकों और बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने परिसंपत्तियों का अधिग्रहण किया तथा विदेश स्थित ऋण बाजारों में दोनों विकसित और विकासशील देशों में निवेश किया। निवल ईक्विटी बहिर्वाह 2008 में 244 बिलियन अमेरिकी डॉलर (जीडीपी के 1.5 प्रतिशत) तक पहुँचे जो 2007 में दर्ज 190 बिलियन अमेरिकी डॉलर (जीडीपी का 1.4 प्रतिशत) से अधिक थे। अवनति (डीलीवरार्जिंग) के भाग के रूप में तथा घरेलू प्रतिदान के दबावों को सहने के लिए उन्नत देशों ने उभरते बाजारों में अपने निवेशों में तेजी से कटौती की। जबकि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआइ) संबंधी निवेश अपेक्षाकृत स्थिर रहा, संविभाग और अन्य निवेशों (बैंकिंग सरणी के माध्यम से निवेशों सहित) ने तीव्र विपर्ययों (रिवर्सल्स) को देखा (सारणी 3.30)।

3.114 उभरती अर्थव्यवस्थाओं को निजी पूँजी प्रवाहों ने विश्व की अर्थव्यवस्था में संकट के बाद के समुत्थान के संदर्भ में पहले की स्थिति पुन: प्राप्त की। प्रमुख कारकों में शामिल हैं, परिपक्व अर्थव्यवस्थाओं की अपेक्षा उभरती अर्थव्यवस्थाओं के लिए संवृद्धि की अधिक उज्ज्वल संभावनाएँ; अधिकांश परिपक्व बाजारों में एक संवर्धित अवधि के लिए शून्य के निकट रहनेवाली अल्पावधि ब्याज दरें; तथा परिपक्व बाजारों में सर्वाधिक स्पष्ट रहनेवाले अल्पावधि वित्तीय जोखिम। फिर भी विकसित हो रहे वैश्विक आर्थिक परिदृश्य के बारे में अनिश्चितता जैसी कि यूरो क्षेत्र में अस्थिरता की हाल की शक्तिपरीक्षा (बाउट) में प्रदर्शित की गई, ईएमई को वित्तीय प्रवाहों की दिशा और मात्रा के लिए निर्देशक है।

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश

3.115 उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) को निजी पूँजी प्रवाहों के अंतर्गत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआइ) ने 1990 और 2000 के बीच लगभग सात गुनी छलांग देखी, जबकि इस अवधि में संविभाग ऋण प्रवाहों में कमी आई और ईक्विटी प्रवाह घटाये गये। इसके विपरीत, वर्तमान दशक के प्रारंभ से ये संविभाग प्रवाह, विशेष रूप से ऋण प्रवाह ही हैं जिन्होंने एक तेज छलांग लगाई है। हाल के संकट के दौरान ईएमई को निवल एफडीआइ प्रवाह अन्य प्रकार के पूँजी प्रवाहों की तुलना में अविरत रहे हैं, जो अधिकांश संविभाग निवेशकों और

सारणी 3.29: विकासशील देशों को निवल बाह्य पूँजी प्रवाह

(बिलियन अमेरिकी डॉलर)

क्षेत्र	1970	1980	1990	2000	2005	2006	2007	2008
1	2	3	4	5	6	7	8	9
कुल पूँजी प्रवाह	**9.3**	**102.7**	**87.8**	**167.3**	**501.5**	**659.0**	**1221.6**	**780.3**
सभी विकासशील देश								
विदेशी प्रत्यक्ष निवेश	2.9	10.1	23.5	158.9	281.1	363.2	528.4	593.6
संविभाग ईक्विटी	0.0	0.1	3.4	14.4	68.9	105.8	135.3	-57.1
ऋण	6.4	92.5	60.9	-6.0	151.5	190.0	557.8	243.8
पूर्वी एशिया और पैसिफिक								
विदेशी प्रत्यक्ष निवेश	0.4	1.5	10.5	45.2	104.4	105.7	177.0	187.1
संविभाग ईक्विटी	–	0.1	0.4	6.6	25.7	56.2	35.1	-8.1
ऋण	1.0	11.9	18.6	-17.3	54.0	32.1	79.6	-0.4
यूरोप और मध्य एशिया								
विदेशी प्रत्यक्ष निवेश	0.1	0.7	2.6	18.7	61.6	113.8	156.8	173.6
संविभाग ईक्विटी	–	0.0	0.1	1.4	8.0	10.2	26.5	-14.6
ऋण	0.5	12.6	3.7	20.4	85.8	156.0	302.5	153.8
लातीन अमेरिका और कैरीबियन								
विदेशी प्रत्यक्ष निवेश	1.3	6.2	8.1	79.5	71.9	72.0	109.4	125.0
संविभाग ईक्विटी	0.0	0.0	2.5	-0.6	12.2	11.3	29.6	-9.7
ऋण	2.8	45.6	19.9	-8.5	0.2	-14.1	92.2	58.0
मध्य पूर्व और उत्तरी अफ्रीका								
विदेशी प्रत्यक्ष निवेश	0.2	1.4	0.5	4.5	13.8	24.9	25.0	26.1
संविभाग ईक्विटी	–	0.0	0.0	0.3	2.4	1.0	-2.1	0.4
ऋण	0.4	6.8	3.4	-2.3	0.1	-13.8	3.3	-7.9
दक्षिण एशिया								
विदेशी प्रत्यक्ष निवेश	0.1	0.2	0.5	4.4	10.9	26.0	32.3	48.7
संविभाग ईक्विटी	–	0.0	0.0	2.5	12.4	10.4	36.1	-15.8
ऋण	0.8	5.7	8.3	3.5	4.7	24.9	65.9	29.8
उप-सहारन अफ्रीका								
विदेशी प्रत्यक्ष निवेश	0.8	0.2	1.2	6.7	18.5	20.7	27.9	33.1
संविभाग ईक्विटी	0.0	0.0	0.4	4.2	8.1	16.8	10.2	-9.3
ऋण	0.9	10.0	7.0	-1.8	6.7	5.0	14.5	10.5
ज्ञापन :								
मध्य आय								
विदेशी प्रत्यक्ष निवेश	2.3	10.1	22.4	154.5	273.6	351.5	507.5	567.2
संविभाग ईक्विटी	0.0	0.1	3.4	14.4	68.7	104.4	129.0	-56.5
ऋण	5.1	81.2	55.7	-7.9	146.0	183.0	546.8	234.5

–: उपलब्ध नहीं।

स्रोत : वैश्विक विकास वित्त, विश्व बैंक (2009)।

ऋणदाताओं के असमान ईएमई की वृद्धि संबंधी संभावनाओं और वित्तीय प्रणाली की सुदृढ़ता के बारे में एफडीआइ निवेशकों के अपेक्षाकृत अधिक दीर्घावधि के दृष्टिकोण को प्रतिबिंबित करता है। यद्यपि संवृद्धि दरों में मंदी रही है, तथापि अनेक ईएमई ने उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से बेहतर कार्यनिष्पादन किया है, जो सरकारी तौर पर 2008 की दूसरी छमाही के दौरान मंदी के अधीन थीं।

3.116 वैश्विक वित्तीय संकट के गहराने के बावजूद 2008 के दौरान चीन और भारत को एफडीआइ अंतर्वाह वास्तव में बढ़ गए थे (सारणी 3.31)। इन अर्थव्यवस्थाओं से एफडीआइ बहिर्वाहों में भी बढ़ोतरी हुई थी जो संभवत: संकट के दौरान उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में शेयर बाजार के सुधारों द्वारा उत्पन्न किये गये आकर्षक निवेश अवसरों का लाभ उठाने के लिए था। दूसरी ओर, कई उन्नत अर्थव्यवस्थाओं, जैसे यूके, कनाडा, फ्रांस और जर्मनी, के मामले में एफडीआइ अंतर्वाह घट गए जबकि वे अमेरिका और जापान में बढ़ गए जो जोखिम विमुखता और प्राप्तियों के वापस मूल देश में प्रत्यावर्तन के कारण निवेशकों द्वारा समुद्रपार स्थितियों के मोचन (अनवाइंडिंग) को प्रतिबिंबित करता है। इसी समय जापान और कनाडा जैसे देशों से एफडीआइ बहिर्वाह बढ़े जबकि अमेरिका और यूके के मामले में वे घट गए। वर्तमान वित्तीय संकट के दौरान उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से अंतर्वाहों और बहिर्वाहों में इस विपरीत ढाँचे का

सारणी 3.30: प्रमुख उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से बहिर्वाह

(बिलियन अमेरिकी डॉलर)

	2000	2005	2006	2007	2008	2009	2008ति1	2008ति2	2008ति3	2008ति4	2009ति1	2009ति2	2009ति3	2009ति4
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15
प्रत्यक्ष निवेश														
यूरो क्षेत्र	413	454	543	658	481	433	216	48	158	60	133	119	89	93
जापान	32	45	50	73	131	75	29	18	21	63	19	17	24	15
यूके	246	81	86	276	163	17	44	54	31	33	17	3	-8	5
अमेरिका	159	36	245	399	332	221	97	107	61	67	47	51	75	48
संविभाग निवेश														
यूरो क्षेत्र	385	515	650	600	24	113	145	203	-106	-218	-92	83	65	56
जापान	83	196	71	123	190	160	96	23	5	66	90	46	24	-1
यूके	97	273	257	180	-200	241	-37	3	5	-171	58	58	88	37
अमेरिका	128	258	499	396	-117	549	62	31	-101	-109	88	153	174	134
अन्य निवेश														
यूरो क्षेत्र	166	738	999	1,301	168	-689	440	-123	146	-295	-301	-200	-130	-58
जापान*	-103	-124	-57	72	-411	-537	-22	-96	-16	-277	-187	-100	-125	-125
यूके	374	926	708	1,484	-1,000	-500	519	-764	40	-796	-247	-86	-108	-58
अमेरिका	273	267	544	677	-219	-585	100	-243	18	-94	-224	-242	-23	-97
कुल														
यूरो क्षेत्र	965	1,668	2,136	2,485	583	-144	801	127	198	-454	-260	1	24	91
जापान	12	118	64	269	-91	-302	103	-56	10	-148	-78	-37	-76	-111
यूके	718	1,280	1,051	1,939	-1,004	-242	526	-706	77	-933	-172	-26	-28	-16
अमेरिका	560	561	1,288	1,472	-5	185	259	-105	-23	-135	-89	-38	227	85

*: विदेश में वित्तीय डेरिवेटिव्ज़ में निवेश शामिल है।
स्रोत : अंतरराष्ट्रीय वित्तीय सांख्यिकी, जून 2010, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

निहितार्थ निवेशकों के विभिन्न प्रकार के जोखिम-बोध और वैश्विक अवनति (डीलीवरेजिंग) का स्वरूप है।

3.117 विश्व बैंक के वैश्विक विकास वित्त (2009) के अनुसार निवेशकों ने 2008 की पहली तीन तिमाहियों के दौरान कई बड़े विकासशील देशों में प्रत्यक्ष निवेशों से अपने अर्जन के अपेक्षाकृत बड़े अंशों का प्रत्यावर्तन किया। इसके अलावा, कुछ बड़ी समस्याग्रस्त वित्तीय संस्थाओं ने अपने मुख्य व्यवसाय के प्रबंधन हेतु पूँजी जुटाने के लिए विकसित और विकासशील देशों में अपनी परिसंपत्तियों का विनिवेश किया। ऐसी बिक्री का मूल्य 2007 में दर्ज 5 बिलियन अमेरिकी डॉलर से दुगुना होकर 2008 में 11 बिलियन अमेरिकी डॉलर तक बढ़ गया तथा यह प्रवृत्ति 2009 में जारी रही।

3.118 हाल की रिपोर्टों से यह विदित होता है कि 2009 में एफडीआइ अंतर्वाह अनेक देशों में निम्नतर थे। एफडीआइ अंतर्वाहों में गिरावट के पीछे महत्वपूर्ण कारक सीमापार विलयनों में मंदी तथा विकासशील देशों में विलयों और अभिग्रहणों (एमएण्डए) में मंद गति है। एमएण्डए प्रवाह हाल के वर्षों में विकसित देशों में एफडीआइ अंतर्वाहों के मुख्य संचालकों में से एक रहे हैं, जो एफडीआइ का लगभग 30 प्रतिशत हैं। एमएण्डए गतिविधि अंतर्वाहों में 2009 की पहली तिमाही में पिछले दो वर्षों में दर्ज 30 बिलियन अमेरिकी डॉलर से अधिक की तुलना में घटकर 16 बिलियन अमेरिकी डॉलर हो गई है। विकसित देशों की बहुराष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा कम अभिग्रहण जो कम अर्जन और निवेश के लिए उपलब्ध कम वित्तपोषण को प्रतिबिंबित करता है, काफी हद तक इस गिरावट के लिए कारण है।

विदेशी संविभाग निवेश

3.119 एफडीआइ प्रवाहों के विपरीत, विकासशील और उभरती हुई बाजार अर्थव्यवस्थाओं को संविभाग प्रवाहों ने 2008 की दूसरी छमाही के दौरान एक व्यापक उलटाव को देखा जो वैश्विक निवेशकों की ओर से वैश्विक अवनति (डीलीवरेजिंग) की प्रक्रिया और जोखिम विमुखता को सूचित करता है। सितंबर 2008 के बीच में लेहमैन ब्रदर्स के पतन के बाद उभरते बाजार संविभाग प्रवाहों में विघटन अधिक व्याप्त हो गए। संविभाग ईक्विटी अंतर्वाहों में उलटाव ने, उल्लेखनीय रूप से एशिया में, उभरते बाजार की मुद्राओं के अशक्तीकरण, अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम बांडों पर स्प्रेडों के विस्तारण तथा कई ईएमई में घरेलू बांड प्रतिफलों में तीव्र वृद्धि को प्रेरित किया। दूसरी ओर, अनेक विकसित अर्थव्यवस्थाओं से संविभाग बहिर्वाह उल्लेखनीय रूप में घटे और ऋणात्मक रूप में परिवर्तित हुए जो विदेश में धारित स्थितियों के परिसमापन और धनराशि के मूल देशों में वापस प्रत्यावर्तन को सूचित करता है (सारणी 3.32)। तथापि, 2009 की दूसरी तिमाही से ईएमई को संविभाग प्रवाहों में पुनरुत्थान के संकेत हैं जो प्रमुख ईएमई

सारणी 3.31: विभिन्न देशों में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (एफडीआइ) प्रवाहों का उतार-चढ़ाव

(बिलियन अमेरिकी डॉलर)

देश	एफडीआइ अंतर्वाह							एफडीआइ बहिर्वाह						
	1990	2000	2005	2006	2007	2008	2009	1990	2000	2005	2006	2007	2008	2009
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	11	12
लातीन अमेरिका														
अर्जेन्टीना	1.8	10.4	5.3	5.5	6.5	9.7	4.9	0.0	0.9	1.3	2.4	1.5	1.4	0.7
ब्राजील	1.0	32.8	15.1	18.8	34.6	45.1	25.9	0.7	2.3	2.5	28.2	7.1	20.5	-10.1
चिली	0.7	4.9	7.0	7.3	12.5	15.2	12.7	0.0	4.0	2.2	2.7	2.6	8.0	8.0
मेक्सिको	2.5	18.0	22.3	19.8	27.3	23.2	11.4	0.0	0.0	6.5	5.8	8.3	1.2	7.6
उभरता यूरोप														
चेक गणराज्य	–	5.0	11.6	5.5	10.6	10.9	–	–	0.0	0.0	1.5	1.6	1.9	–
हंगरी	0.0	2.8	7.6	19.7	72.3	63.4	-5.7	0.0	0.6	2.2	18.6	67.7	61.4	-7.3
पोलैंड	0.1	9.3	10.3	19.9	23.7	14.8	11.5	0.0	0.0	3.4	9.1	5.7	3.1	2.9
रूस	–	2.7	12.9	29.7	55.1	75.5	38.7	n.a.	3.2	12.8	23.2	45.9	56.1	46.1
उभरता एशिया														
चीन	3.5	38.4	79.1	78.1	138.4	147.8	–	0.8	0.9	11.3	21.2	17.0	53.5	–
भारत	0.0	3.6	7.6	20.3	25.1	41.2	–	0.0	0.5	3.0	14.3	17.3	18.4	–
इंडोनेशिया	1.1	-4.6	8.3	4.9	6.9	9.3	5.3	0.0	0.0	3.1	2.7	4.7	5.9	3.0
कोरिया	0.8	9.3	6.3	3.6	1.6	2.2	–	1.1	5.0	4.3	8.1	15.3	12.8	–
मलेशिया	2.3	3.8	4.0	6.1	8.5	7.4	–	0.0	2.0	3.0	6.0	11.1	15.2	–
फिलीपीन्स	0.5	2.2	1.9	2.9	2.9	1.4	–	0.0	0.1	0.2	0.1	3.5	0.3	–
थाईलैंड	2.4	3.4	8.1	9.5	11.3	8.6	6.0	0.1	0.0	0.5	1.0	2.9	2.6	3.8
अन्य ईएमई/एनआइई														
सिंगापुर	5.6	16.5	14.4	27.7	31.6	22.7	–	2.0	5.9	11.2	13.3	24.5	8.9	–
हांगकांग	–	61.9	33.6	45.1	54.4	59.6	48.4	–	59.4	27.2	45.0	61.1	50.5	52.3
इज़राइल	0.2	5.9	4.8	15.3	8.8	10.9	3.8	0.2	3.3	2.9	15.5	8.6	7.2	1.2
दक्षिण अफ़्रीका	-0.1	1.0	6.5	-0.2	5.7	9.6	5.6	0.0	0.3	0.9	5.9	3.0	-2.1	1.8
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ														
आस्ट लिया	8.1	13.6	-35.6	26.4	41.1	47.3	–	1.0	3.3	-33.9	23.9	20.0	38.1	–
कनाडा	7.6	66.1	25.9	59.8	111.4	45.4	20.6	5.2	44.5	27.6	44.5	59.6	79.0	42.2
फ्रांस	13.2	42.4	85.0	71.8	105.9	100.4	61.6	34.8	174.3	113.8	111.4	172.0	204.8	162.4
जर्मनी	3.0	210.1	46.5	56.6	77.3	25.0	35.8	24.5	59.7	77.0	119.2	163.7	137.2	61.6
जापान	1.8	8.2	3.2	-6.8	22.2	24.6	11.8	50.5	31.5	45.4	50.2	73.5	130.8	74.6
यूके	33.5	122.2	177.4	154.1	197.8	93.5	47.0	20.1	246.3	80.8	85.6	275.5	163.1	16.7
अमेरिका	48.5	321.3	112.6	243.2	275.8	319.7	152.1	37.2	159.2	36.2	244.9	398.6	332.0	221.0

– : उपलब्ध नहीं।
स्रोत : अंतरराष्ट्रीय वित्तीय सांख्यिकी, जून 2010, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

शेयर बाजारों में समुत्थान (रिकवरी) और उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में तीव्रतर गति से पुन:प्राप्ति करनेवाली ईएमई में संवृद्धि के बारे में संभावनाओं के अनुरूप है।

ऋण प्रवाह

3.120 अंतरराष्ट्रीय ऋण बाजारों में प्राथमिक निर्गम अवरुद्ध हुए तथा उच्च रेटिंग प्राप्त निगमों एवं अपेक्षाकृत रूप में सुदृढ़ राजकोषीय स्थितियों (उदा. ब्राजील, मलेशिया और दक्षिण अफ़्रीका) से युक्त प्रभुताओं के लिए भी सितंबर और अक्तूबर 2008 में उभरते बाजार बांडों का अनुषंगी व्यापार बड़ी सीमा तक घटाया गया। विकासशील देशों में निगमो द्वारा बाह्य बांड निर्गम और बैंक उधार 2002 के 81 बिलियन अमेरिकी डॉलर से बढ़कर 2007 में 423 बिलियन अमेरिकी डॉलर हो गया था जो मुख्य रूप से यूरोप और मध्य एशिया द्वारा संचालित था जहाँ कारपोरेट उधार इसी अवधि में 19 बिलियन अमेरिकी डॉलर से तेजी से बढ़कर 197 बिलियन अमेरिकी डॉलर हो गया। फिर भी, वैश्विक वित्तीय अशांति के गहराने के बाद ऐसे उधार 2008 में 271 बिलियन अमेरिकी डॉलर हो गए। 2008 की पहली तीन तिमाहियों के दौरान 28 बिलियन अमेरिकी डॉलर के निवल उधार की तुलना में अंतिम तिमाही ने ईएमई द्वारा 27 बिलियन अमेरिकी डॉलर की निवल चुकौतियों को देखा, क्योंकि अनेक उभरते बाजार कारपोरेट उधारकर्ताओं ने अंतरराष्ट्रीय पूँजी बाजारों में अपनी पहुँच खो दी थी। समग्र रूप में उभरते बाजार का बांड निर्गम 2007 में विद्यमान 186 बिलियन अमेरिकी डॉलर से तेजी से घटकर 2008 में 106 बिलियन अमेरिकी डॉलर हो गया।

सारणी 3.32: विभिन्न देशों के संविभाग प्रवाहों में उतार-चढ़ाव

(बिलियन अमेरिकी डॉलर)

देश	संविभाग निवेश अंतर्वाह							संविभाग निवेश बहिर्वाह						
	1990	2000	2005	2006	2007	2008	2009	1990	2000	2005	2006	2007	2008	2009
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13		
लातीन अमेरिका														
अर्जेन्टीना	-1.1	-1.3	-1.7	7.9	7.1	-7.1	-3.0	0.2	1.3	-1.4	0.0	0.0	0.0	0.0
ब्राजील	0.6	8.7	6.7	9.1	48.1	-0.8	46.2	0.1	1.7	1.8	-0.5	-0.3	-1.9	-3.0
चिली	0.4	-0.1	1.4	0.8	-0.5	2.8	2.0	0.0	-0.8	4.2	10.1	16.0	11.6	13.9
मेक्सिको	3.4	-1.2	7.8	0.1	13.4	4.8	15.3	7.4	-1.3	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0
उभरता यूरोप														
चेक गणराज्य	–	0.5	0.1	1.9	2.2	0.5	–	–	2.2	3.5	3.0	4.8	0.5	–
हंगरी	0.0	-0.1	5.8	8.8	0.5	0.9	-3.7	0.0	0.3	1.3	2.4	2.9	3.9	0.9
पोलैंड	0.0	3.4	15.1	1.5	0.9	-4.4	16.2	0.0	0.1	2.5	4.6	6.3	-2.4	0.4
रूस	–	-12.8	-0.7	9.5	16.0	-27.4	8.2	–	0.4	10.7	-6.2	10.0	7.8	10.9
उभरता एशिया														
चीन	0.0	7.3	21.2	42.9	21.0	9.9	–	0.2	11.3	26.2	110.4	2.3	-32.7	–
भारत	0.0	2.5	12.2	9.5	35.0	-15.0	–	0.0	0.1	0.0	0.0	-0.2	0.0	–
इंडोनेशिया	-0.1	-1.9	5.3	6.1	10.0	3.0	10.3	0.0	0.0	1.1	1.8	4.4	1.3	0.2
कोरिया	0.7	12.7	14.1	8.1	30.0	-38.5	–	0.5	0.5	14.1	26.9	54.6	-23.1	–
मलेशिया	-0.3	-2.1	-3.0	5.6	9.3	-21.1	–	0.0	0.4	0.7	2.1	3.9	2.9	–
फिलीपीन्स	-0.1	0.3	3.4	6.1	3.9	-4.4	–	0.0	0.8	0.1	1.6	-0.8	-0.6	–
थाईलैंड	0.0	-0.6	7.1	5.7	2.9	-2.6	3.0	0.0	0.2	1.5	1.4	9.6	-0.4	12.2
अन्य ईएमई/एनआइई														
सिंगापुर	0.6	-1.2	6.3	12.0	18.6	-4.6	–	1.6	13.4	5.3	17.3	28.1	18.6	–
हांगकांग	–	46.5	9.3	15.0	75.2	-12.8	4.9	–	22.0	40.7	41.8	77.9	25.4	49.1
Israel	0.0	3.9	2.3	4.0	3.6	2.2	3.1	0.4	3.3	8.0	8.0	3.7	2.0	7.6
दक्षिण अफ्रीका	0.3	1.8	5.7	21.9	13.7	-7.6	13.4	0.3	3.7	0.9	2.2	3.4	6.7	1.9
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ														
आस्ट लिया	7.0	14.9	59.0	97.2	60.2	30.4	–	-0.4	10.9	21.3	43.9	77.3	-3.0	–
कनाडा	16.0	10.3	10.9	27.6	-32.5	29.6	95.9	2.2	43.0	44.2	69.4	42.8	-10.0	6.2
फ्रांस	43.2	132.3	225.2	191.3	114.5	242.6	417.2	8.4	97.4	243.6	350.3	282.1	126.8	92.4
जर्मनी	11.8	40.9	221.7	181.0	401.2	25.0	-26.0	14.0	191.5	257.3	203.4	199.9	-23.1	101.6
जापान	46.7	47.4	183.1	198.6	196.6	-103.0	-56.3	37.8	83.4	196.4	71.0	123.5	189.6	160.2
यूके	23.8	268.1	237.0	285.5	406.7	363.9	284.0	30.0	97.2	273.4	257.0	179.6	-199.6	241.1
अमेरिका	22.0	436.6	832.0	1126.7	1154.7	527.7	376.6	28.8	127.9	257.5	498.9	396.0	-117.4	549.4

– : उपलब्ध नहीं।

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय वित्तीय सांख्यिकी, जून 2010, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

3.121 चूँकि संकट के गहराने की दृष्टि से प्रमुख अंतरराष्ट्रीय मुद्राओं के मुकाबले विनिमय दरों का तेजी से मूल्यह्रास हुआ, अत:जिन निगमों ने निवेश का वित्तपोषण करने के लिए अंतरराष्ट्रीय कर्ज और ऋण बाजारों से भारी मात्रा में उधार लिया था (उदा. रूसी ऊर्जा कंपनियाँ), उन्होंने उस कर्ज को आगे जारी रखते हुए कठिनाइयों का सामना किया। जब डॉलर अथवा यूरो की तुलना में स्थानीय विनिमय दरों में गिरावट हुई, तब निगमों ने भारी हानियाँ उठाईं। तथापि, 2009 की पहली और दूसरी तिमाही में उभरते बाजार बांड निर्गम को पुन: कायम करने के संकेत हैं।

व्यापार ऋण

3.122 जैसी कि पहले चर्चा की जा चुकी है, संकट के दौरान व्यापार में पतन के लिए अंशत: निर्यातकों और आयातकों को ऋण में कमी को कारण माना गया था। इन अल्पावधि ऋणों का उपयोग, जिनकी विशिष्ट अवधि 120-180 दिन की होती है, एक दूसरे के संबंध में सीमित जानकारी अथवा व्यापार अनुभव रखनेवाले दूरस्थ भागीदारों के बीच सौदों को सुसाध्य बनाने के लिए किया जाता है। यद्यपि वे समूचे व्यापार के केवल 10 और 20 प्रतिशत के बीच हिस्से को ही समाविष्ट करते हैं (अधिकांश व्यापार नियमित कारोबार के भागीदारों के बीच एक "खुले खाते" के आधार पर संचालित किया जाता है), तथापि छोटे और मध्यम आकार वाले निर्यातकों के लिए अल्पावधि ऋणों के सर्वाधिक महत्वपूर्ण होने की प्रवृत्ति विद्यमान है। इस प्रकार व्यापार ऋण, जिन्होंने पहले के वर्षों में व्यापार में वृद्धि को सुगम बनाया, वर्तमान संकट के दौरान विभिन्न क्षेत्रों में व्यापार में गिरावट के लिए एक महत्वपूर्ण कारण के रूप में परिवर्तित हो गए (सारणी 3.33)।

3.123 वैश्विक वित्तीय संकट के गहराने के साथ ही, विशेष रूप से सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स के पतन के बाद अनेक अंतरराष्ट्रीय

सारणी 3.33: अल्पावधि व्यापार ऋण के संबंध में विभिन्न देशों की तुलना

(बिलियन अमेरिकी डॉलर)

देश	2005	2006	2007	2008ति1	2008ति2	2008ति3	2008ति4	2009ति1	2009ति2
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ									
आस्ट लिया	26.4	28.7	58.7	59.0	71.7	71.3	64.4	66.8	79.4
कनाडा	5.7	6.1	6.9	6.9	6.9	6.6	5.5	5.2	5.7
फ्रांस	87.8	96.6	107.4	116.9	117.5	105.3	100.9	123.0	129.6
जर्मनी	918.7	1,109.1	1,354.4	1,596.9	1,550.4	1,469.7	1,211.9	1,146.6	1,198.9
जापान	433.3	382.1	359.1	410.3	365.0	369.3	409.8	400.4	483.5
यूके	1.6	1.6	1.6	1.6	1.6	1.7	1.7	1.6	1.6
अमेरिका	492.3	557.3	726.0	734.0	737.9	778.9	907.8	802.0	796.5
हांगकांग	9.0	7.4	9.5	10.7	10.1	9.9	9.3	7.2	8.6
उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ									
अर्जेन्टीना	0.3	4.6	5.1	5.7	7.6	7.4	7.7	7.6	–
ब्राजील	16.5	16.7	31.0	31.1	33.5	38.2	31.2	28.5	32.4
चिली	6.2	8.3	9.2	9.9	13.2	14.1	10.3	8.8	9.9
चेक गणराज्य	3.8	4.5	6.6	6.4	8.0	7.6	6.9	5.8	6.2
हंगरी	6.4	7.6	13.0	4.7	5.6	5.7	4.4	4.4	5.5
भारत	NA	25.1	36.7	43.2	45.6	46.8	42.6	40.2	37.1
इंडोनेशिया	0.7	0.8	0.7	1.0	1.3	1.7	1.6	1.2	1.2
Israel	7.7	9.0	11.6	11.3	11.6	11.4	9.3	7.0	7.1
कोरिया	51.7	95.1	130.2	143.5	143.3	155.6	111.7	102.8	104.4
मलेशिया	10.2	8.1	12.6	23.4	26.4	27.0	20.6	21.6	21.5
मेक्सिको	8.4	9.2	9.7	9.9	10.2	10.1	9.2	9.1	8.1
पोलैंड	9.7	12.6	17.0	21.4	22.7	20.7	18.1	15.7	17.0
रूस	8.2	17.6	23.9	26.3	29.8	34.6	21.3	16.1	12.9
दक्षिण अफ्रीका	5.5	7.5	10.7	9.6	10.3	11.6	10.6	9.8	9.2
थाईलैंड	9.4	9.6	11.1	13.0	13.9	13.6	12.1	10.3	10.7
तुर्की	26.8	25.6	28.6	30.0	34.1	36.1	31.5	28.4	26.6

– : उपलब्ध नहीं।

स्रोत : बाह्य ऋण संबंधी बीआइएस-आइएमएफ-ओईसीडी-विश्व बैंक की संयुक्त सांख्यिकी।

बैंकों ने या तो ऋण के नवीकरण की अनुमति नहीं दी या किसी भी चेतावनी के बिना निधीकृत ओवरड्राफ्ट सुविधाओं को निरस्त कर दिया। जब बैंक जोखिम-विमुख होते हैं, तब वे अपने संविभाग अधिक ऋणपात्रता रखनेवाले ऐसे उधारकर्ताओं को अंतरित करने की प्रवृत्ति दर्शाते हैं जो अपेक्षाकृत अधिक परिपक्वता अवधि वाले ऋणों की चुकौती करने के लिए बेहतर स्थिति में हैं। बैंक निधीकृत खुले खाते की सुविधाओं से दूर हट गए हैं, जो हाल के वर्षों में सर्वाधिक आम बात हो गई है, तथा व्यापार वित्त के अधिक पारंपरिक रूपों की ओर प्रवृत्त हो गए हैं क्योंकि प्रतिपक्षी जोखिम तेजी से बढ़ गया है। विश्व बैंक के वैश्विक विकास वित्त 2009 के अनुसार इन परिवर्तनों ने उन उच्चतर पूँजी अपेक्षाओं को प्रतिबिंबित किया जिनका सामना बैंकों ने किया क्योंकि व्यापार ऋण के प्राप्तकर्ताओं की ऋणपात्रता का ग्रेड कम कर दिया गया था। वास्तव में व्यापार वित्त के लिए पूँजीगत अपेक्षाएँ बासेल I की तुलना में बासेल II समझौते के अंतर्गत तिगुनी हो गई हैं। प्राप्त सूचना के अनुसार स्प्रेड 100 से 150 आधार अंक (बीपीएस) से बढ़कर लाइबोर से लगभग 400 आधार अंक (बीपीएस) अधिक हो गए थे क्योंकि देश-जोखिम और प्रतिपक्षी चिंताएँ गहरी हो गई थीं जब कुछ मामलों में काफी उच्चतर स्प्रेडों की जानकारी मिली थी। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आइएमएफ) के अनुसार निधियों की उच्चतर लागत, चलनिधि प्रीमियमों और उच्चतर जोखिम के संयोजन का परिणाम अल्पावधि व्यापार वित्त की कीमत में तीव्र वृद्धि के रूप में हुआ। पूँजी तक घटी हुई पहुँच तथा ग्राहकों की ऋणपात्रता के बारे में बढ़ी हुई चिंताओं के परिणामस्वरूप अनेक निर्यातकों ने भी ऋण को सीमित कर दिया जिसे वे अपने ग्राहकों को उपलब्ध कराने के इच्छुक थे। यह स्वीकार करते हुए कि वित्त की घटती हुई उपलब्धता के साथ उच्चतर लागत की संभावना देशी अर्थव्यवस्थाओं को प्रोत्साहित करने के लिए किये गये प्रयासों को हानि पहुँचा सकती है, व्यापार वित्त को सहारा देने के लिए समन्वित वैश्विक पहलें घोषित की गईं। उदाहरण के लिए जी-20 ने व्यापार वित्त को समर्थन देने के लिए दो वर्ष की अवधि में कम से कम 250 बिलियन अमेरिकी डॉलर की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए सहमति दी।

3.124 यद्यपि व्यापार वित्त की लागतों में वृद्धि एक वैश्विक घटना बन गई है, तथापि व्यापार ऋण की उपलब्धता में गिरावट ईएमई द्वारा

अधिक महसूस की गई है। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष- वित्त और व्यापार के लिए बैंकर संघ (बीएएफटी) द्वारा अंतरराष्ट्रीय व्यापार वित्त के बैंक-मध्यस्थता वाले रूपों के संबंध में किये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार व्यापार वित्त की कीमत तेजी से जो बढ़ी वह बैंकों के लिए बढ़ी हुई निधियों की लागत के कारण थी, जो कई उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में कम प्रतिबंधित मौद्रिक नीतियों के मंदक कीमत प्रभाव से अधिक हो गई। उक्त बीएएफटी सर्वेक्षण के परिणाम यह भी सूचित करते हैं कि व्यापार में गिरावट ने व्यापार वित्त की कमी के बजाय बड़ी सीमा तक घटती हुई माँग को प्रतिबिंबित किया। 2008 के दौरान और 2009 की पहली छमाही में व्यापार का सामान्यत: व्यापार वित्त से कहीं अधिक पतन हुआ उन क्षेत्रों को भी मिलाकर जिन्हें संकट द्वारा सबसे अधिक आघात पहुँचा (औद्योगिक अर्थव्यवस्थाएँ, उभरता यूरोप, लातीन अमेरिका और 2009 की पहली छमाही में उभरता एशिया)। व्यापार वित्त की समस्या देश और प्रांत-विशिष्ट होने के अतिरिक्त क्षेत्र (सेक्टर)-विशिष्ट भी है। भारत अंतरराष्ट्रीय ऋण बाजारों में चलनिधि के दबाव (स्क्वीज) द्वारा अपेक्षाकृत रूप में कम प्रभावित है। सितंबर 2008 से विदेशी बाजारों में सख्त स्थिति के बावजूद भारत को अल्पावधि ऋण का संवितरण बाद के महीनों में 3 बिलियन अमेरिकी डॉलर से अधिक की अपनी मासिक प्रवृत्ति के आसपास मँडराता रहा, जो प्राधिकारियें द्वारा की गई विभिन्न नीतिगत पहलों के सकारात्मक प्रभाव को सूचित करता है।

अल्पावधि ऋण

3.125 विकासशील देशों को अल्पावधि ऋण (एक वर्ष या उससे कम मूल परिपक्वता अवधि से युक्त ऋण) के प्रवाह 2008 की पहली छमाही के दौरान सुदृढ़ थे। तथापि, ऐसे प्रवाह 2008 की तीसरी तिमाही में ऋणात्मक (नेगटिव) बन गए तथा उसके बाद वैश्विक वित्तीय बाजार की स्थितियों के बदतर होने पर उन्होंने 2008 की चौथी तिमाही में तीव्रतर गिरावट को दर्ज किया। कई देशों ने अपने वर्धमान व्यापार का वित्तपोषण करने के लिए अल्पावधि उधार लिये तथा फर्मों ने आयातों का वित्तपोषण करने के लिए अल्पावधि ऋणों तथा निर्यातों के पूर्व-भुगतान हेतु अल्पावधि ऋणों की संविदा की। उदाहरण के लिए चीन में व्यापार वित्त 2007 में 69 बिलियन अमेरिकी डॉलर था जो उस देश के अल्पावधि ऋण के आधे भाग से अधिक था। इसी प्रकार भारत के अल्पावधि ऋण में 45 बिलियन अमेरिकी डॉलर की सारी राशि व्यापार से संबंधित है। इसके परिणामस्वरूप अल्पावधि ऋण में तीव्र गिरावट ने व्यापार वित्त को भी दबावग्रस्त कर दिया। अल्पावधि ऋण में गिरावट को प्रतिबिंबित करते हुए एशिया और यूरोप में कई ईएमई की अल्पावधि अंतरराष्ट्रीय देयताओं में कमी आई। यह दिलचस्प बात है कि अमेरिका और यूके सहित अनेक उन्नत अर्थव्यवस्थाओं ने भी अपनी अल्पावधि अंतरराष्ट्रीय देयताओं में तीव्र गिरावट को दर्ज किया जो संभवत: निवेशकों द्वारा जोखिम-विमुखता के कारण गैर-राजकोषीय प्रतिभूतियों की विदेशी निजी धारिताओं में गिरावट को सूचित करता है (सारणी 3.34)।

बैंक वित्तपोषण

3.126 विकासशील देशों की वित्तीय प्रणालियों में विदेशी बैंकों की सहभागिता हाल के वर्षों में तेजी से बढ़ी है। 2007 के अंत में विकासशील देशों में उपस्थिति के साथ 910 विदेशी बैंकों ने 1.2 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर से अधिक संयुक्त परिसंपत्तियों का नियंत्रण किया जो कुल देशी बैंकिंग परिसंपत्तियों के 39 प्रतिशत से भी अधिक था। विदेशी स्वाधिकृत ऋणदाता तीन क्षेत्रों में स्थानीय बैंकिंग परिसंपत्तियों का एक विशिष्ट रूप से उच्च अनुपात रखते हैं - विभिन्न पूर्वी यूरोपीय देशों में 70 प्रतिशत, तथा कुछ लातीन अमेरिकी और उप-सहारन देशों में लगभग 40 प्रतिशत।

3.127 अंतरराष्ट्रीय बैंकों ने 2008 की तीसरी तिमाही में कुछ उभरते बाजारों से निधीयन को वापस लेना शुरू किया। प्रारंभ में सुदृढ़ और अपेक्षाकृत तरल बैंकिंग प्रणालियों से युक्त देश प्रभावित हुए। उदाहरण के लिए चीन, चीनी ताइपेइ, चेक गणतंत्र, मलेशिया और पोलैंड में बैंकों और बैंकेतर क्षेत्र को सीमापार ऋण 2008 की तीसरी तिमाही में 30 बिलियन अमेरिकी डॉलर घट गए। केंद्रीय बैंकों और तत्कालीन बाजार की व्याख्या ने यह सुझाया कि कुछ अंतरराष्ट्रीय बैंकों ने अपने घरेलू बाजारों में चलनिधि की तीव्र कमियों को पूरा करने के लिए इन ईएमई को ऋण कम किये होंगे।

3.128 सीमापार बैंकिंग प्रवाहों में उलटाव 2008 की चौथी तिमाही में अधिक तीव्र हो गया था। अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक (बीआइएस) की अंतरराष्ट्रीय बैंकिंग सांख्यिकी के अनुसार उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के बैंकों ने विकासशील देशों को सीमापार ऋणों में चौथी तिमाही के दौरान 2008 की पिछली तीन तिमाहियों के दौरान दर्ज अंतर्वाहों के 60 प्रतिशत से भी अधिक का विपर्यय (रिवर्सल) करते हुए 205 बिलियन अमेरिकी डॉलर (ईएमई के संयुक्त जीडीपी का 1 प्रतिशत) कम कर दिये। विशेष रूप से ब्राजील, चीन, कोरिया, तुर्की और रूस सहित तेल-निर्यातक देश प्रभावित हुए थे। बैंकेतर क्षेत्र को ऋणों की तुलना में बैंकों को ऋण अधिक तेजी से घट गए। इसी समय अनेक ईएमई के निवासियों ने (विशेष रूप से मध्य यूरोप और रूस सहित तेल-निर्यातक देश) अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक (बीआइएस) को सूचना देनेवाले बैंकों में धारित अपनी जमाराशियों और अन्य विदेशी

सारणी 3.34: परिपक्वता के लिए एक वर्ष तक शेष अंतरराष्ट्रीय अल्पावधि देयताएँ

(बिलियन अमेरिकी डॉलर)

देश	1990	2000	2005	2007	मार्च-08	जून-08	सितं-08	दिसं-08	मार्च-09	जून-09
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ										
आस्ट्रेलिया	25	35	54	119	118	125	110	81	95	107
आस्ट्रिया	–	49	87	98	116	111	97	67	64	59
कनाडा	–	76	129	201	219	190	186	191	199	197
फ्रांस	–	250	610	1,148	1,288	1,313	1,155	979	923	921
जर्मनी	–	356	685	938	1,086	1,000	920	739	750	736
जापान	–	193	410	405	444	400	365	352	368	480
यूके	–	731	1,530	2,409	2,704	2,404	2,175	1,789	1,713	1,796
अमेरिका	–	531	864	1,302	1,374	1,230	1,219	1,075	1,011	982
लातीन अमेरिका										
अर्जेन्टीना	7	39	7	11	12	12	11	11	11	12
ब्राजील	22	34	27	52	55	68	62	48	53	56
चिली	4	10	11	18	20	21	23	19	17	18
मेक्सिको	18	22	22	25	28	28	30	31	34	33
उभरता यूरोप										
चेक गणराज्य	–	6	11	17	21	19	19	15	13	11
हंगरी	3	5	15	27	31	28	29	30	27	28
पोलैंड	3	8	16	26	31	31	32	32	26	29
रूस	–	11	46	93	97	100	97	78	74	81
उभरता एशिया										
चीन	9	19	61	121	138	160	148	102	121	118
भारत	4	9	31	78	80	83	83	69	66	69
इंडोनेशिया	13	20	18	29	31	31	32	28	26	27
कोरिया	2	7	16	21	28	32	23	17	15	15
मलेशिया	20	33	53	127	157	152	145	100	110	114
फिलीपीन्स	3	7	10	11	12	11	10	7	7	8
थाईलैंड	9	10	11	9	10	10	10	10	9	10
अन्य ईएमई/एनआइई										
सिंगापुर	134	65	78	123	142	144	138	106	108	109
हांगकांग	131	70	70	93	110	110	99	82	86	89
इज़राइल	2	3	5	5	6	6	7	6	7	7

– : उपलब्ध नहीं।

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक।

परिसंपत्तियों का अंशत: आहरण किया। इसने उभरते बाजारों को एक महत्वपूर्ण अनुकूल स्थिति (कुशन) प्रदान की जो अतीत में उपलब्ध नहीं थी। तथापि, कुछ जमा आहरणों ने सीमापार वित्त की घटी हुई उपलब्धता के प्रति उभरते बाजार के बैंकों की स्वतंत्र प्रतिक्रिया की अपेक्षा सरकारी विदेशी मुद्रा हस्तक्षेप को प्रतिबिंबित किया होगा।

3.129 वैश्विक ऋण दबाव के होते हुए कुछ उभरती पूर्वी एशियाई अर्थव्यवस्थाओं ने तीव्र विदेशी मुद्रा चलनिधि की कमियों का अनुभव किया। 1997-98 के एशियाई वित्तीय संकट से विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों के बड़े पैमाने पर निर्माण के बावजूद डॉलर अनकदी ने एशियाई बैंकों की आघात-सहनीयता का परीक्षण किया क्योंकि अंतरराष्ट्रीय अंतरबैंक बाजारों में पहुँच कठिन हो गई थी। जैसे जैसे वैश्विक वित्तीय संकट सघन हो गया, प्रमुख अंतरराष्ट्रीय बैंकों ने एशियाई बैंकों को अंतर-बैंक ऋण में तीव्रता से कटौती की। यद्यपि इस कटौती ने एशियाई बैंकों की ऋणपात्रता में किसी परिवर्तन के बजाय प्रमुख वैश्विक बैंकों की चलनिधि की आवश्यकताओं को अधिक प्रतिबिंबित किया, तथापि इसने ऋण की अधिक सख्त शर्तों और विदेशी मुद्रा नकदी की कमियों को प्रेरित किया। विशेष रूप से कोरिया गणतंत्र और इंडोनेशिया में विदेशी मुद्रा नकदी के आहरण इतने बड़े पैमाने पर थे कि समय-समय पर वित्तीय स्थिरता के सामने महत्वपूर्ण चुनौतियाँ आई थीं। विदेशी मुद्रा चलनिधि और प्रतिपक्षी जोखिमों में तीव्र वृद्धि को देखते हुए विदेशी मुद्रा के आधार पर स्वैप स्प्रेड (स्थानीय मुद्रा को संपार्श्विक जमानत के रूप में प्रयुक्त करने के द्वारा डॉलर उधार लेने में एशियाई बैंकों को जो लागत वहन करनी है) तेजी से विस्तृत हो गए। इस विदेशी मुद्रा चलनिधि की समस्या के भी क्षेत्र के निवेश और व्यापार

सारणी 3.35: अंतरराष्ट्रीय आरक्षित निधि संचलन

(बिलियन अमेरिकी डॉलर)

देश	2006	2007	2008ति1	2008ति2	2008ति3	2008ति4	2009 ति1	2009ति2	2009ति3	2009 ति4
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
अर्जेन्टीना	31	45	49	46	46	45	45	44	46	46
ब्राजील	85	179	194	200	206	193	189	200	221	237
चिली	19	17	18	20	24	23	23	23	26	25
चीन	1,066	1,528	1684	1811	1908	1949	1957	2135	2288	–
हांगकांग	133	153	161	158	160	182	186	207	227	256
फ्रांस	43	46	50	46	41	34	25	29	45	47
जर्मनी	42	44	47	48	45	43	43	45	61	60
भारत	171	267	300	303	278	247	242	255	271	265
इंडोनेशिया	41	55	57	57	55	50	53	55	60	64
जापान	880	953	993	979	974	1009	996	996	1028	1022
मेक्सिको	76	87	91	94	99	95	85	81	88	100
फिलीपीन्स	20	30	33	33	33	33	34	35	38	39
पोलैंड	46	63	74	79	71	59	58	64	75	76
रूस	296	467	499	555	543	413	368	396	395	417
दक्षिण अफ्रीका	23	30	31	31	31	31	30	32	35	35
स्विट्जरलैंड	38	45	47	47	45	45	50	77	86	98
थाईलैंड	65	85	107	103	100	109	114	118	129	135
तुर्की	61	73	77	76	77	70	67	66	71	71
संयुक्त अरब अमीरात	28	77	83	61	45	32	34	36	39	–
यूके	41	49	51	49	42	44	40	45	58	56
अमेरिका	55	60	65	65	61	67	64	70	123	120

– : उपलब्ध नहीं।
स्रोत : अंतरराष्ट्रीय वित्तीय सांख्यिकी, जून 2010, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

के प्रवाहों के लिए हिस्सों में महत्वपूर्ण विस्तार थे। विगत वर्षों में जिन देशों ने पूँजी प्रवाहों से अपनी अंतरराष्ट्रीय आरक्षित निधियों का निर्माण किया था, उन्होंने हाल के संकट के दौरान अपनी आरक्षित निधियों के स्तरों में एक गिरावट का अनुभव किया (सारणी 3.35)। फिर भी, हाल के संकट के दौरान आरक्षित निधियों ने अस्थिर पूँजी प्रवाहें के मुकाबले प्रतिरोधक (बफ़र) के रूप में कार्य किया तथा भारत सहित विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं के समष्टि-आर्थिक मूल तत्वों की अंतर्निहित शक्ति में बाजार को विश्वास प्रदान किया।

3.130 समाहार के तौर पर वास्तविक अर्थव्यवस्था को वैश्विक वित्तीय संकट का संक्रमण मुख्य रूप से विश्व व्यापार में गिरावट के माध्यम से विशेषत: 2008 की दूसरी छमाही और 2009 के प्रारंभ में हुआ। व्यापार प्रवाहों में गिरावट माँग में कमी के अनुरूप पण्य कीमतों में तीव्र कटौती द्वारा आगे और उठाई गई। वैश्विक संकट के संक्रमण की व्यापार सरणी ने पूर्वी एशियाई अर्थव्यवस्थाओं जैसी वैश्विक व्यापार में अधिकाधिक एकीकरण से युक्त अर्थव्यवस्थाओं में विशेष रूप से महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। क्षीण हो रहे व्यापार प्रवाहों के साथ ही उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को निवल निजी पूँजी प्रवाह 2008 के दौरान एक तीव्र उलटाव से गुजरे जब कई उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ (ईएमई) बाह्य वित्तपोषण के संबंध में काफी अधिक सख्त सीमाओं का सामना कर रही थीं क्योंकि वैश्विक अवनति (डीलीवरेजिंग) और बढ़ती हुई जोखिम-विमुखता ने इन बाजारों में निवेशकों के हित को कम कर दिया। अपेक्षाकृत बड़े चालू खाता और राजकोषीय घाटों से युक्त देश तथा अपने तुलन-पत्रों पर उल्लेखनीय विदेशी मुद्रा एक्सपोज़रों से युक्त क्षेत्र बाह्य वित्तपोषण की स्थितियों के सख्त होने से तथा पूँजी के आहरणों द्वारा अधिक प्रभावित हुए। 2009 में विप्रेषण अंतर्वाहों में साधारण गिरावट के बावजूद निजी ऋण और ईक्विटी प्रवाहों की तुलना में ये प्रवाह अधिक आघात-सहनीय रहे हैं, यद्यपि प्रतिकूल गतिविधियाँ कुछ छोटे और निर्धन देशों के लिए अधिक गंभीर सिद्ध हुईं जहाँ ये सापेक्ष रूप में जीडीपी का एक बड़ा अंश बन जाते हैं। अंतत: 2009 के दौरान वैश्विक असंतुलन अनेक देशों, उल्लेखनीय रूप में अमेरिका और चीन के चालू खाता घाटों/आधिक्यों में कमी के साथ कुछ सीमा तक संकुचित हुए।

IV. वास्तविक अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

3.131 1990 के बाद के दशक के उत्तरार्ध से प्रारंभ हुई अवधि की विशेषता सामान्यत: हितकर मुद्रास्फीति, निम्नतर ब्याज दरों, उच्चतर जोखिम-वहन क्षमता तथा घर-परिवारों और कंपनियों के बीच तेजी से युक्त शेयर बाजार द्वारा प्रदत्त समृद्धि के रूप में मानी जाती है।

सारणी 3.36: वास्तविक जीडीपी में वृद्धि

(प्रतिशत में वार्षिक परिवर्तन)

	औसत 1992-2001	2006	2007	2008	2009	2010पू
1	2	3	4	5	6	7
विश्व	**3.2**	**5.1**	**5.2**	**3.0**	**-0.6**	**4.2**
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	**2.8**	**3.0**	**2.8**	**0.5**	**-3.2**	**2.3**
अमेरिका	3.5	2.7	2.1	0.4	-2.4	3.1
यूरो क्षेत्र	2.1	3.0	2.8	0.6	-4.1	1.0
जापान	0.9	2.0	2.4	-1.2	-5.2	1.9
अन्य उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	3.7	3.9	3.9	1.2	-2.3	3.0
उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ	**3.8**	**7.9**	**8.3**	**6.1**	**2.4**	**6.3**
क्षेत्रीय समूह						
मध्य और पूर्वी यूरोप	2.6	6.5	5.5	3.0	-3.7	2.8
स्वतंत्र राज्यों का राष्ट्रमंडल	—	8.5	8.6	5.5	-6.6	4.0
विकाशशील एशिया	7.3	9.8	10.6	7.9	6.6	8.7
मध्य पूर्व और उत्तरी अफ्रीका	3.4	5.7	5.6	5.1	2.4	4.5
पश्चिमी गोलार्ध	3.0	5.6	5.8	4.3	-1.8	4.0

पू : पूर्वानुमान
स्रोत : वैश्विक आर्थिक संभावना, अप्रैल 2010।

वित्तीय क्षेत्र की यह मजबूत संवृद्धि ने हाल के वित्तीय संकट के प्रारंभ से ठीक पहले की अवधि के दौरान वास्तविक आर्थिक गतिविधि की वृद्धि को सहारा दिया। 2000 के बाद के दशक के पूर्वार्ध में विश्व की अर्थव्यवस्था 5.1 प्रतिशत की रिकार्ड दर से बढ़ी जो 1992-2001 के दौरान प्राप्त 3.2 प्रतिशत की औसत वृद्धि से काफी अधिक थी। वैश्विक उत्पादन की वृद्धि मुख्य रूप से उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं द्वारा संचालित थी जिनमें चीन और भारत अग्रणी थे। यह वह अवधि थी जब विश्व की अर्थव्यवस्था अधिकाधिक विच्छिन्न (डीकपल्ड) दिख रही थी तथा संवृद्धि की संभावना अमेरिका से विकासशील एशिया में अंतरित की गई थी (सारणी 3.36)।

3.132 वैश्विक वित्तीय संकट का प्रभाव उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में संपदा क्षेत्र (रियल सेक्टर) में व्याप्त हुआ। भले ही नीति-निर्धारकों ने बैंकें को पतन के कगार से वापस लाने के लिए कार्य किया था, उपभोक्ताओं और कारोबार के विश्वास में भारी कमी आई। परिसंपत्ति कीमतों में गिरावट विभिन्न देशों में गृहनिर्माण में तेजी का अंत सूचित करती है तथा उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में सख्त ऋण बाजार की स्थितियों, उपभोक्ता और व्यवसाय के विश्वास-भंग, तथा घरेलू व्यय (गृह संबंधी व्यय सहित) में संकुचन को सूचित करती है। उपभोग पर प्रभाव तीव्र था क्योंकि कुछ प्रमुख उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में हाल की मंदी में आवास संबंधी विफलताएँ (बस्ट्स) एवं प्रणालीगत बैंकिंग संकट सम्मिलित थे। यह साहित्य में उपलब्ध निष्कर्षों के अनुरूप था कि चलनिधि संबंधी बाधाओं को दूर करने के लिए वित्तीय उदारीकरण के लाभों के बावजूद 1990 के बाद के दशक के उपरांत की अवधि में उपभोग पर बैंकिंग संकटों का प्रभाव बढ़ गया है (बैरल ईटी एएल., 2004)। उक्त अध्ययन में यह भी पाया गया कि यह प्रभाव उन देशों में अधिकतर हो जाता है जो अत्यधिक वैयक्तिक ऋण से युक्त हैं। दुर्बलता के संकेत भी कारपोरेट क्षेत्र में उभरे हैं, विशेष रूप से उनके संबंध में जिनका एक्सपोज़र उपभोग अथवा गृहनिर्माण के प्रति है अथवा उनके संबंध में जिनका उल्लेखनीय एक्सपोज़र ऊर्जा की कीमतों के प्रति है। ये गतिविधियाँ गिरती आय, क्षीण होती माँग तथा व्यापार में मंदी में प्रतिबिंबित हुईं जिन्होंने प्रमुख अग्रणी उन्नत अर्थव्यवस्थाओं, जैसे अमेरिका, यूरो क्षेत्र, यूके और जापान के लिए 2008 की चौथी तिमाही तक मंदी में अग्रसर होने के लिए मार्ग प्रशस्त किया है (सारणी 3.37)। मंदी सघन हो गई, विशेष रूप से इसलिए कि हाल के संकट ने उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में कुल माँग के सभी प्रमुख घटकों को प्रभावित कर दिया है (बॉक्स III.3)।

सारणी 3.37: जीडीपी में तिमाही वृद्धि

(प्रतिशत)

देश	ति1-2008	ति2-2008	ति3-2008	ति4-2008	ति1-2009	ति2-2009	ति3-2009	ति4-2009	ति1-2010
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
आस्ट्रेलिया	0.8	0.6	0.4	-0.8	0.6	0.8	0.3	1.1	0.5
कनाडा	-0.2	0.0	0.1	-0.8	-1.8	-0.7	0.2	1.2	1.5
जर्मनी	1.6	-0.6	-0.3	-2.4	-3.5	0.4	0.7	0.2	0.2
जापान	0.3	-1.0	-1.1	-2.5	-4.2	1.7	0.1	1.1	1.2
कोरिया	1.2	0.3	-0.1	-4.5	0.2	2.4	0.1	0.2	2.1
मेक्सिको	1.3	-0.3	-0.2	-2.0	-6.8	0.3	2.4	1.9	-0.3
न्यूजीलैंड	-0.3	-0.6	-0.6	-1.0	-0.8	0.1	0.3	0.8	..
यूके	0.7	-0.1	-0.9	-1.8	-2.6	-0.7	-0.3	0.4	0.3
अमेरिका	-0.2	0.4	-0.7	-1.4	-1.6	-0.2	0.6	1.4	0.8
यूरो क्षेत्र	0.8	-0.4	-0.5	-1.9	-2.5	-0.1	0.4	0.1	0.2
जी-7	0.2	-0.1	-0.7	-1.7	-2.4	0.1	0.4	1.0	0.7
नाफ्ता	0.0	0.3	-0.6	-1.4	-2.1	-0.2	0.7	1.4	0.7

स्रोत : आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (ओईसीडी) डाटाबेस।

बॉक्स III.3
कुल माँग पर प्रभाव

कुल माँग के विश्लेषण से यह विदित हुआ है कि वर्तमान वित्तीय संकट के दौरान उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में उत्पादन की वृद्धि में अवनति असाधारण रूप से गहरी रही है जिसमें व्यय के अधिकांश घटक शामिल हैं। 2008 के दौरान माँग में क्षीणता सभी जीडीपी घटकों, अर्थात् उपभोग, निवेश और निवल निर्यातों में व्यापक आधार से युक्त थी।

निजी उपभोग 2008 की अंतिम तिमाही में सभी प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में संकुचित हुआ। बढ़ती हुई पण्य कीमतों ने वर्ष की पहली छमाही में घर-परिवारों की वास्तविक आय को सशक्त रूप में प्रभावित किया। घटी हुई वास्तविक आय वृद्धि, गिरती हुई वित्तीय संपदा, सख्त हुई ऋण की शर्तों तथा बदतर हो रही श्रम बाजार की संभावनाओं का सामना करते हुए घरेलू व्यय वर्ष के दौरान अत्यधिक मंद हो गया जहाँ उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में निजी उपभोग समग्र रूप में 2008 में लगभग 0.3 प्रतिशत बढ़ा। उपभोक्ता विश्वास के संकेतक जो 2007 के मध्य में चरम पर थे, 2008 के शुरुआती महीनों में अपने दीर्घकालीन औसत स्तरों पर गिरे तथा आगे और तेजी से घटते हुए वर्ष के अंत तक अत्यंत निम्न स्तरों पर पहुँचे। अमेरिका में निजी उपभोग में कमी तेज थी, जहाँ उसकी गिरावट एक वार्षिकीकृत 0.2 प्रतिशत थी, जो उत्पादन की गिरावट का लगभग आधा भाग थी। सबसे अधिक आघात सहनेवाली श्रेणी टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुओं पर व्यय की थी जिसका 2008 की दूसरी छमाही में पतन हुआ। इसके विपरीत उपभोग यूरो क्षेत्र और जापान में उत्पादन में कमी का केवल एक छोटा सा भाग था। इन अर्थव्यवस्थाओं में गिरावट इसके बजाय अंतरराष्ट्रीय व्यापार में भारी पतन द्वारा प्रेरित थी जो जापान में क्रमश: 2008 की चौथी तिमाही में और 2009 की पहली तिमाही में उत्पादन में कमी का लगभग 75 प्रतिशत और 50 प्रतिशत थी, तथा यूरो क्षेत्र में 2008 की अंतिम तिमाही में गिरावट का लगभग 60 प्रतिशत थी।

यद्यपि निजी उपभोग का संकुचन हुआ, तथापि 2008 और 2009 में अधिकांश उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में सरकारी उपभोग जबरदस्त रहा, जो घरेलू माँग को प्रोत्साहित करने के लिए प्रभुत्व-संपन्न सरकार द्वारा किये गये राजकोषीय प्रोत्साहनों को प्रतिबिंबित करता है (सारणी)।

उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में कुल निवेश वृद्धि दो वर्षों की समुन्नत बढ़ोतरी के बाद 2008 में 1.9 प्रतिशत संकुचित हुई। वृद्धि में उक्त कमी अन्य निजी निवेश के बजाय आवासीय निवेश के लिए अधिक सुस्पष्ट थी। वास्तव में आवास निवेश मंद हो रही आवास कीमत वृद्धि के संदर्भ में 2007 में आवासीय निर्माण चक्र के विस्तारकारी चरण के अंत के बाद 2008 में संकुचित हुआ। यह मंदी सामान्यत: उन देशों में अधिक सुस्पष्ट थी जिन्होंने पिछले वर्षों में अत्यंत तीव्र वृद्धि का अनुभव किया था। क्षीण हो रही क्षमता के दबावों, नवीकृत अनिश्चितता और अधिक सख्त वित्तपोषण की स्थितियों ने कारपोरेट निवेश में कटौतियों को प्रेरित किया।

बाह्य परिवेश 2008 में उल्लेखनीय रूप में बिगड़ गया, वित्तीय संकट द्वारा इसे गंभीर बनाया गया, जहाँ उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में संवृद्धि मंद हुई तथा उभरते बाजार अधिकाधिक प्रभावित हुए। बाह्य माँग धीमी हुई क्योंकि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में गतिविधि में कमी आई तथा उभरते बाजार वित्तीय अशांति द्वारा अधिकाधिक प्रभावित हुए। यूरो क्षेत्र के निर्यातों में वृद्धि 2008 में उल्लेखनीय रूप में मंद हुई, जो 2007 के 6.0 प्रतिशत की तुलना में लगभग 1.8 प्रतिशत की वार्षिक दर पर रही एवं वर्ष की अंतिम तीन तिमाहियों में ऋणात्मक हो गई। वर्ष के कुछ अंतिम महीनों के दौरान औद्योगिक निर्यात आदेशों अथवा आदेश बहियों पर विभिन्न सर्वेक्षणों के संकेतक ऐतिहासिक रूप से निम्न स्तरों पर गिरे। तथापि, 2009 की दूसरी तिमाही से फुटकर बिक्री में पुन:प्राप्ति (रिकवरी) के संकेत हैं।

सारणी : उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में कुल माँग के घटक

(वार्षिक प्रतिशत परिवर्तन)

	निजी उपभोग व्यय			सरकारी उपभोग			सकल नियत पूँजीनिर्माण		
	2007	2008	2009	2007	2008	2009	2007	2008	2009
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	**2.5**	**0.3**	**-0.8**	**2.0**	**2.5**	**2.3**	**2.2**	**-1.9**	**-12.0**
अमेरिका	2.7	-0.2	-0.6	1.4	3.0	1.8	-1.2	-3.6	-14.5
युनाइटेड किंगडम	2.1	0.9	-3.2	1.2	2.6	2.2	7.8	-3.5	-14.9
यूरो क्षेत्र	1.6	0.4	-1.1	2.3	2.1	2.2	4.8	-0.4	-11.1
जापान	1.6	-0.7	-1.0	1.5	0.3	1.6	-1.2	-2.6	-14.3

स्रोत : वैश्विक आर्थिक संभावना अप्रैल 2010।

3.133 बड़े पूँजी आगमनों और हितकर समष्टि-आर्थिक स्थितियों से लाभान्वित होते हुए उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ संकट के प्रारंभिक महीनों के दौरान अपेक्षाकृत आघात-सहनीय प्रतीत हुईं। तथापि, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में आर्थिक कार्यकलापों में मंदी के अधिक गंभीर होने, वैश्विक व्यापार के क्षीण होने तथा वैश्विक वित्तीय बाजारों में अशांति के सघन होने के साथ यह संक्रामकता उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में व्याप्त हुई। इसके परिणामस्वरूप संकट विश्व भर में त्वरित रूप से फैल गया, तथा इससे वैश्विक अर्थव्यवस्था एक तीव्र और समकालीन मंदी में धकेली गई (चार्ट III.17)। कुल मिलाकर विश्व की जीडीपी संवृद्धि 2009 में 0.6 प्रतिशत संकुचित हुई जबकि इसने इससे पिछले वर्षों में एक स्वस्थ वृद्धि को दर्ज किया था।

3.134 विभिन्न देशों की पंद्रह उन्नत और उभरती अर्थव्यवस्थाओं की तुलना से यह विदित हुआ कि हाल का संकट वास्तविक जीडीपी

चार्ट III.17 : आर्थिक संवृद्धि पर संकट का प्रभाव

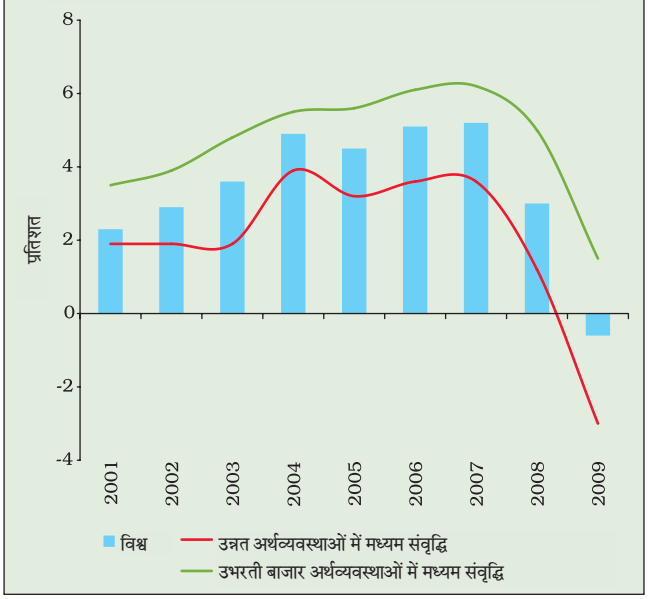

संवृद्धि के तौर पर अधिक ऋणात्मक रूप से अभिनत था तथा संवृद्धि दरें 2001 में डॉट-कॉम खतरे (बबल) के विस्फोट के बाद आर्थिक गतिविधि में मंदी की तुलना में अधिक संगुच्छित (क्लस्टर्ड) थीं (चार्ट III.18)। यह व्यापार और वित्तीय प्रवाहों के तौर पर देशों के बीच बढ़ती हुई अंतर-संबद्धताओं को सूचित करता है जिसने विभिन्न देशों के बीच संक्रामकता के त्वरित संचरण को सुसाध्य बनाया।

3.135 आर्थिक संवृद्धि पर वित्तीय संकट के प्रभाव की तीव्रता सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स के पतन से पहले और उसके बाद अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आइएमएफ) द्वारा 2009 के लिए प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं के संवृद्धि संबंधी पूर्वानुमानों में किये गये उल्लेखनीय अधोमुखी संशोधनों से मालूम की जा सकती है (सारणी 3.38)। एक

सारणी 3.38: 2009 के लिए जीडीपी वृद्धि के अनुमानों की तुलना

(प्रतिशत)

देश	अप्रैल 2008 लेहमैन से पूर्व	अप्रैल 2010 एक वर्ष बाद
1	2	3
अमेरिका	+0.6	-2.4
जापान	1.5	-5.2
चीन	+9.5	+8.7
यूके	+1.6	-4.9
कनाडा	+1.9	-2.6
फ्रांस	+1.2	-2.2
जर्मनी	+1.0	-5.0
रूस	+6.3	-7.9
भारत	+8.0	+5.7
ब्राजील	3.7	-0.2

स्रोत : वैश्विक आर्थिक संभावना, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष 2008 और 2010।

लेहमैन-पूर्व परिदृश्य में जहाँ प्रत्येक देश से 2009 में धनात्मक संवृद्धि दर्ज करने की प्रत्याशा की गई थी, उक्त घटना के एक वर्ष के बाद केवल मुट्ठी-भर देश अर्थात् चीन और भारत थे जिनके संबंध में वर्ष के दौरान धनात्मक आर्थिक संवृद्धि को देखने का अनुमान किया गया था। अन्य सभी देशों के बारे में यह अनुमान है कि वर्ष के दौरान आर्थिक संवृद्धि का संकुचन हुआ, यद्यपि उसकी मात्रा भिन्न-भिन्न थी।

3.136 गिरती हुई घरेलू आय, कमजोर हो रहे कारपोरेट कार्यनिष्पादन और वित्तीय संकट के अनुसरण में बढ़ी हुई अनिश्चितताओं की पृष्ठभूमि में समूचे क्षेत्र में बचत और निवेश की प्रवृत्ति में 2009 में कमी आई (सारणी 3.39)। यह प्रतीत होता है कि इसने फिर बड़ी उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मंदी की स्थितियों को सघन बनाने में तथा 2009 के दौरान कई उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईदएमई) में संवृद्धि में अनुमानित मंदी में योगदान किया है। चीन जैसे देशों ने भी जिनकी

चार्ट III.18 : जीडीपी संवृद्धि में समकालिक पतन

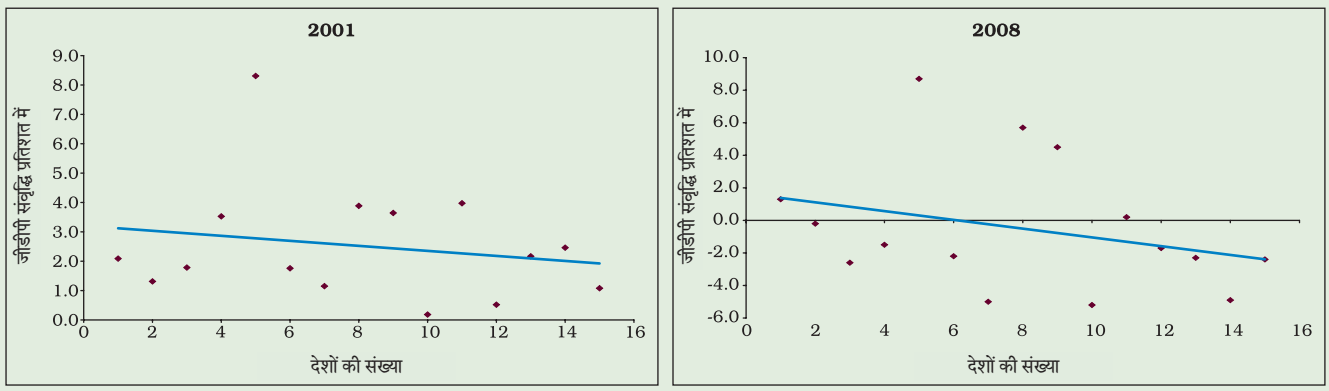

सारणी 3.39 : सकल बचत और निवेश

(जीडीपी का प्रतिशत)

	बचत					निवेश				
	1996-2003	2007	2008	2009	2010 (पू)	1996-2003	2007	2008	2009	2010 (पू)
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	21.1	20.7	19.5	17.1	17.8	21.3	21.5	21.0	18.0	18.4
अमेरिका	17.0	14.5	12.6	10.8	12.2	19.6	19.5	18.2	15.0	15.7
जापान	28.1	28.4	26.8	23.0	22.7	25.6	23.7	26.6	20.3	19.8
जर्मनी	20.1	26.0	25.9	21.8	21.6	20.2	18.3	19.2	17.0	16.1
युनाइटेड किंगडम	16.0	15.6	15.3	12.5	12.3	17.4	18.3	16.9	13.8	14.0
उभरती अर्थव्यवस्थाएँ	25.0	33.6	33.7	31.1	32.6	24.9	29.4	29.9	29.2	30.4
विकासशील एशिया	33.1	45.0	43.9	43.6	45.4	31.7	37.9	38.2	39.5	41.3
मध्य पूर्व और उत्तरी अफ्रीका	27.3	41.6	42.4	29.6	32.7	23.4	26.0	26.8	27.8	27.3

स्रोत : वैश्विक आर्थिक संभावना, अप्रैल 2010, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष। पू : पूर्वानुमान।

उच्च बचत और निवेश दरें थीं, वास्तविक जीडीपी संवृद्धि में उल्लेखनीय मंदी का अनुभव किया।

3.137 फिर भी, प्रभाव विभिन्न देशों/क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न रहा। उदाहरण के लिए यूरो क्षेत्र में घरेलू बचत अनुपात 2008 के दौरान बढ़ा जो अंशत: आर्थिक और वित्तीय अनिश्चितताओं में वृद्धि के कारण था। बचत दर में वृद्धि बहुत व्यापक रही है, विशेष रूप से उन देशों में जिन्होंने श्रमिक बाजार स्थिति में मजबूत ह्रास और आवास कीमतों में तेज गिरावटें को देखा तथा जहाँ घर-परिवार अत्यधिक रूप से ऋणग्रस्त थे।

3.138 विश्व की अर्थव्यवस्था पर हाल के संकट के प्रभाव की दो बड़ी विशेषताएँ सुस्पष्ट हुई हैं : (i) उन सभी अर्थव्यवस्थाओं में आर्थिक गतिविधि में एक समकालिक गिरावट अथवा कमी जो विश्व व्यापार में पतन के साथ संबद्ध हैं; तथा (ii) वास्तविक अर्थव्यवस्था और वित्तीय क्षेत्र के बीच एक प्रतिकूल प्रतिसूचना के घेरे के बढ़ते हुए संकेत। आर्थिक गतिविधि की दुर्बलता ने बैंक ऋणों की गुणवत्ता को क्षतिग्रस्त किया, उनकी पूँजीगत स्थितियों और निजी क्षेत्र को ऋण प्रदान करने के लिए उनकी इच्छा को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया। इसने फिर आर्थिक गतिविधि की गति और निजी क्षेत्र की अपनी ऋणों की चुकौती करने की क्षमता को बाधित किया तथा एक दुश्चक्र के जोखिम को अपरिहार्य बना दिया। आर्थिक गतिविधि के स्तर का उल्लेखनीय रूप में ह्रास करते हुए वित्तीय संकट ने प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में संभावित उत्पादन की हानि को भी प्रेरित किया। इसका समर्थन दोनों उन्नत और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को शामिल करते हुए किये गये विभिन्न अध्ययनों द्वारा भी किया गया है। 190 देशों में उत्पादन व्यवहार का एक पैनल अध्ययन वित्तीय संकटों से संबद्ध बड़ी और लगातार बनी हुई वास्तविक उत्पादन हानियों को दर्शाता है जहाँ उत्पादन का बैंकिंग संकट के घटित होने की स्थिति में 10 वर्ष की अवधि में विद्यमान प्रवृत्ति से सापेक्ष रूप में 7.5 प्रतिशत पतन हुआ है (सेरा और सक्सेना, 2008)। आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (ओईसीडी) की 30 अर्थव्यवस्थाओं के लिए एक और अध्ययन ने भी यह अनुमान लगाया है कि औसतन एक वित्तीय संकट पाँच वर्ष के अंदर संभावित उत्पादन को 1.5- 2.1 प्रतिशत कम कर सकता है (फुरसेरी और मूरूगाने, 2009)।

3.139 2008 के मध्य से अंतरराष्ट्रीय पण्य कीमतों में गिरावट के साथ वैश्विक आर्थिक कार्यकलापों में तेज गिरावट के मुद्रास्फीति पर उल्लेखनीय अधोमुखी दबाव थे तथा कई देशों में अपस्फीति की आशंकाएँ उठने लगी थीं (सारणी 3.40 और चार्ट III.19)। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आइएमएफ) के अनुसार यह अनुमान है कि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मुद्रास्फीति 2008 में विद्यमान 3.4 प्रतिशत से घटकर 2009 में 0.1 प्रतिशत होगी, जबकि इसी अवधि में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में यह अनुमान है कि मुद्रास्फीति 9.2 प्रतिशत से घटकर 5.2 प्रतिशत होगी। चीन में विदेशी निर्यात बाजारों की हानि ने अधिक्षमता (ओवरकैपेसिटी) का निर्माण किया जिसने कीमतों पर अधोमुखी दबाव बनाया। दूसरी ओर मुद्रास्फीति ने लातीन अमेरिका और रूस में 2009 के प्रारंभ तक अधिक स्थिरता दर्शाई। कुछ देशों में (उदा0 मेक्सिको और रूस) मुद्रास्फीति की चिंताओं को मूल्यह्रास के दबावों द्वारा बल प्रदान किया गया, जो मौद्रिक नीति के लिए उलझन पैदा करनेवाला एक संयोजन है। संतुलन पर 2010 के प्रारंभ में मुद्रास्फीति के दबाव सामान्यत: कम हुए, परंतु वे विविध प्रकार के थे।

उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ

3.140 उन्नत और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की वास्तविक अर्थव्यवस्थाओं पर संकट के प्रभाव का विश्लेषण आगामी खंडों में किया गया है।

सारणी 3.40: उपभोक्ता कीमत वृद्धि में विद्यमान प्रवृत्तियाँ

(प्रतिशत)

	औसत 1992-2001	2006	2007	2008	2009	2010पू
1	2	3	4	5	6	7
1. उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	**2.4**	**2.4**	**2.2**	**3.4**	**0.1**	**1.5**
अमेरिका	2.7	3.2	2.9	3.8	-0.3	2.1
यूरो क्षेत्र	2.3	2.2	2.1	3.3	0.3	1.1
जापान	0.4	0.3	0.0	1.4	-1.4	-1.4
2. उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ	**39.0**	**5.6**	**6.5**	**9.2**	**5.2**	**6.2**
3. क्षेत्रीय समूह						
स्वतंत्र राज्यों का राष्ट्रमंडल	—	9.5	9.7	15.6	11.2	7.2
मध्य और पूर्वी यूरोप	52.9	5.9	6.0	8.1	4.7	5.2
विकासशील एशिया	7.4	4.2	5.4	7.4	3.1	5.9
मध्य पूर्व और उत्तरी अफ्रीका	10.1	7.5	10.0	13.5	6.6	6.5
पश्चिमी गोलार्ध	51.9	5.3	5.4	7.9	6.0	6.2

पू : पूर्वानुमान।
स्रोत : वैश्विक आर्थिक संभावना रिपोर्ट, अप्रैल 2010।

अमेरिका

3.141 अमेरिका में आर्थिक गतिविधि ने वित्तीय बाजार के तनावों में वृद्धि से पहले ही मंदन के संकेत दर्शाये थे। आवास बाजार अमेरिका की वास्तविक अर्थव्यवस्था एवं वित्तीय बाजारों में दुर्बलता का एक प्राथमिक स्रोत था। राष्ट्रीय लेखा आंकड़ों के अनुसार अमेरिका में आवासीय निवेश में कमी 2008 की दूसरी तिमाही से प्रारंभ हुई थी (सारणी 3.41)। तथापि, संकट के दौरान आर्थिक गतिविधि में मंदी आवास क्षेत्र से बाहर फैल गई। एक ओर जहाँ वर्ष की दूसरी तिमाही में धनात्मक वृद्धि रही जो अंशत: अस्थायी राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों और विदेशी व्यापार से समर्थन के कारण थी, वहीं दूसरी ओर वित्तीय बाजार के दबावों की सघनता, प्रतिबंधात्मक ऋण शर्तों और अपेक्षाकृत कमजोर विदेशी माँग ने 2008 की दूसरी छमाही भर में उत्पादन में त्वरित संकुचन में योगदान किया। सरकार द्वारा यह घोषित किया गया कि अमेरिकी अर्थव्यवस्था दिसंबर 2008 से मंदी में प्रवेश कर चुकी है। समग्र रूप में अमेरिका की आर्थिक गतिविधि 2008 में उल्लेखनीय रूप में मंद हुई - वास्तविक जीडीपी में वृद्धि 2007 में दर्ज 2.1 प्रतिशत की तुलना में 2008 में 0.4 प्रतिशत थी। अमेरिकी आर्थिक विश्लेषण ब्यूरो के अनुसार 2008 में अमेरिकी आर्थिक संवृद्धि में मंदी के लिए विनिर्माण, फुटकर व्यापार और वित्त तथा बीमा उद्योगों में अवनतियों ने अग्रणी तौर पर योगदान किया। वित्त और बीमा उद्योगों का मूल्य-योजन 2008 में 3.2 प्रतिशत गिरा और 2009 में 2.7 प्रतिशत तक इसमें आगे और गिरावट हुई जो 1992 के बाद इसकी पहली गिरावट थी।

चार्ट III.19 : उपभोक्ता कीमत वृद्धि - चुनिंदा देश

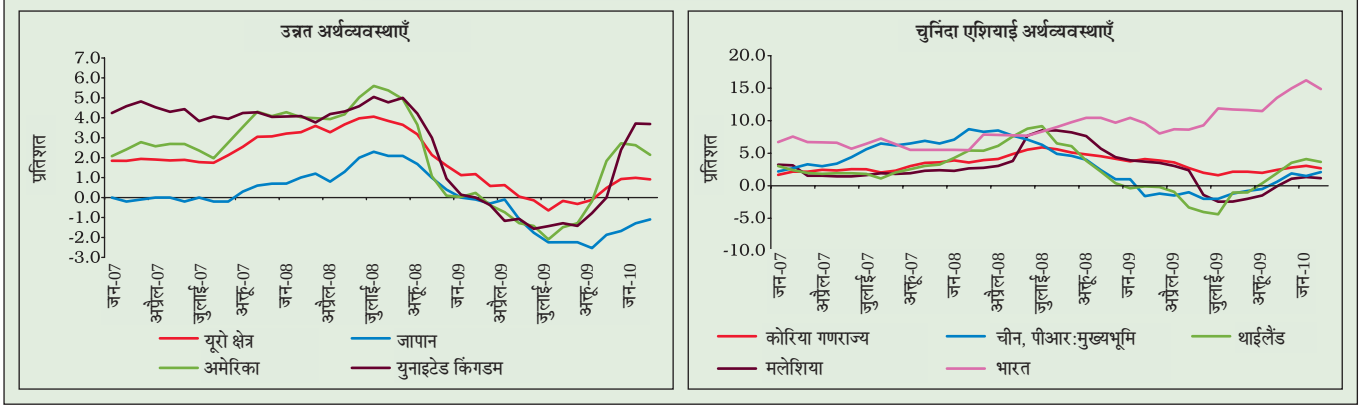

सारणी 3.41: वास्तविक घरेलू माँग की संरचना (मौसमी तौर पर समायोजित)

(प्रतिशत में वृद्धि)

मद	2006	2007	2008	2009	2008				2009				2010
					ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
जीडीपी	**2.7**	**2.1**	**0.4**	**-2.4**	**-0.7**	**1.5**	**-2.7**	**-5.4**	**-6.4**	**-0.7**	**2.2**	**5.6**	**3.0**
पीसीई	2.9	2.6	-0.2	-0.6	-0.6	0.1	-3.5	-3.1	0.6	-0.9	2.8	1.6	3.5
वस्तुएँ	3.3	3.1	-2.1	-1.9	-5.1	-0.5	-7.7	-10.0	2.5	-3.1	7.2	2.8	6.5
सेवाएँ	2.7	2.4	0.7	0.1	1.8	0.4	-1.3	0.5	-0.3	0.2	0.8	1.0	2.0
जीपीडीआइ	2.7	-3.8	-7.3	-23.2	-7.4	-10.4	-6.9	-24.2	-50.5	-23.7	5.0	46.1	14.7
गैर-आवासीय	7.9	6.2	1.6	-17.8	1.9	1.4	-6.1	-19.5	-39.2	-9.6	-5.9	5.3	3.1
आवासीय	-7.3	-18.5	-22.9	-20.5	-28.2	-15.8	-15.9	-23.2	-38.2	-23.3	18.9	3.8	-10.7
निर्यात	9.0	8.7	5.4	-9.6	-0.1	12.1	-3.6	-19.5	-29.9	-4.1	17.8	22.8	7.2
वस्तुएँ	9.4	7.4	5.9	-12.2	4.2	14.1	-1.8	-25.5	-36.9	-6.3	24.6	34.1	8.9
सेवाएँ	7.9	11.8	4.2	-4.1	-9.0	7.8	-7.7	-4.3	-13.6	0.1	5.6	2.6	3.8
आयात	6.1	2.0	-3.2	-13.9	-2.5	-5.0	-2.2	-16.7	-36.4	-14.7	21.3	15.8	10.4
वस्तुएँ	5.9	1.7	-3.9	-16.0	-3.5	-4.6	-3.7	-19.6	-41.0	-16.5	25.1	20.3	10.7
सेवाएँ	7.1	3.5	0.7	-3.6	3.0	-7.1	6.1	-0.9	-11.5	-7.5	7.0	-1.9	9.0
जीसीईएंडआइ	1.4	1.7	3.1	1.8	2.6	3.6	4.8	1.2	-2.6	6.7	2.6	-1.3	-1.9
ज्ञापन :													
कंपनी लाभप्रदता	10.5	-4.1	-11.8	-3.8	-2.6	-3.8	3.6	-22.8	5.3	3.7	10.8	8.0	5.5

पीसीई : वैयक्तिक उपभोग व्यय; जीपीडीआइ : सकल निजी घरेलू निवेश जीसीईएंडआइ : सरकारी उपभोग व्यय और सकल निवेश
स्रोत : आर्थिक विश्लेषण ब्यूरो, अमेरिका।

3.142 सब-प्राइम संकट का प्रभाव निजी उपभोग व्यय (पीसीई) की वृद्धि में मंदी में भी प्रतिबिंबित हुआ जो पतनशील आवास कीमतों और शेयर मूल्यांकनों के कारण घरेलू संपदा में कमी के अतिरिक्त ह्रासमान उपभोक्ता विश्वास और श्रमिक बाजार की स्थितियों के साथ 2008 के प्रारंभ से ऋणात्मक बन गया है। निजी वेतन चिट्ठों (पे रोल्स) में संकुचन, रोजगार में गिरावट तथा खाद्य और ऊर्जा कीमतों में पहले की वृद्धियों ने एकसाथ मिलकर घर-परिवारों की क्रय-शक्ति को कम कर दिया है। अमेरिका में दिसंबर 2008 में बेरोजगारी की दर 7 प्रतिशत तक बढ़ी जो पिछले डेढ़ दशक में उच्चतम स्तर की थी। तब से बेरोजगारी पर दबाव बना रहा तथा बेरोजगारी की दर 2009 और 2010 के दौरान 8-10 प्रतिशत के दायरे में रही। बढ़ती हुई कार्य हानियों और संपदा में परिणामी तीव्र गिरावटों के साथ 2008 की तीसरी तिमाही तक उक्त वर्ष में अमेरिकी की घरेलू निवल मालियत (नेट वर्थ) 5.6 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर गिरी थी। अधिक सख्त ऋण और घटती हुई घरेलू संपदा सहित वास्तविक आय में मंदी ने उपभोक्ता व्यय पर मजबूत अधोमुखी दबाव रखा था।

3.143 2005 और 2006 में तीव्र वृद्धि दर्ज करने के बाद कारपोरेट क्षेत्र की लाभप्रदता 2007 से घट गई जो व्यक्तिगत उपभोग व्यय में गिरावट और 2008 के मध्य तक ऊर्जा और अन्य पण्य कीमतों द्वारा संचालित उत्पादन की बढ़ी हुई लागतों के अनुरूप थी। वैश्विक वित्तीय संकट के गहराने के साथ भावी वृद्धि की संभावनाओं के बारे में बढ़ती हुई अनिश्चितता सहित कारपोरेट लाभों में गिरावट ने विलंबित निवेश योजनाओं को प्रेरित किया। वास्तव में व्यावसायिक निवेश गिरते हुए कारपोरेट लाभों, अधिक सख्त उधार मानकों, तथा माँग के लिए व्यापक तौर पर कमजोर हो रही संभावना के बीच दुर्बल हो गया।निरंतर आवास बाजार सुधार - वित्तीय अशांति द्वारा सघन होकर - अर्थव्यवस्था पर एक बड़े अवरोध के रूप में बना रहा, जहाँ 2007 और 2008 के दौरान आवासीय निवेश ने जीडीपी संवृद्धि को उल्लेखनीय तौर पर बाधित किया।

3.144 तथापि, विदेश व्यापार ने 2008 के अधिकांश समय के दौरान अमेरिका में संवृद्धि के लिए योगदान किया जो वर्ष के प्रारंभ में उत्फुल्ल बाह्य माँग और पिछले अमेरिकी डॉलर के मूल्यह्रास के विलंबकारी प्रभावों को सूचित करता है। फिर भी व्यापार का धनात्मक प्रभाव 2008 की दूसरी छमाही के दौरान हलका पड़ गया क्योंकि अमेरिकी व्यापार के अनेक भागीदारों में मंदी विदेशी माँग और निर्यातों पर भारी साबित हुई। इस स्थिति के होते हुए भी चालू खाता घाटा 2007 में दर्ज जीडीपी के 5.2 प्रतिशत से घटकर 2008 में जीडीपी

का 4.9 प्रतिशत हुआ और 2009 में आगे और घटकर 2.9 प्रतिशत हो गया। तदनुसार वास्तविक जीडीपी में संवृद्धि के लिए निवल निर्यातों का योगदान 2007 में विद्यमान उसके स्तर से 2008 में बदतर हो गया। कांग्रेशनल बजट कार्यालय (सीबीओ) द्वारा मार्च 2009 में किये गये अनुमानों के अनुसार अमेरिकी फेडरल बजट घाटा 2007 में दर्ज जीडीपी के 1.2 प्रतिशत से बढ़कर 2008 में जीडीपी का 3.2 प्रतिशत हो गया। बढ़ता हुआ यह घाटा कर-राजस्व में प्रत्याशित गिरावट और बढ़े हुए फेडरल व्यय, जिसमें से बड़ा अंश वित्तीय और आवास बाजारों में संकट का समाधान करने के लिए सरकार की कार्रवाइयों से संबंधित था, को प्रतिबिंबित करता है।

यूरो क्षेत्र

3.145 जबकि वर्ष 2008 अपेक्षाकृत उल्लेखनीय आघात-सहनीयता के साथ प्रारंभ हुआ, कमजोर होती हुई घरेलू माँग और वैश्विक अर्थव्यवस्था में सुस्पष्ट मंदी के चलते वर्ष के मध्य से आर्थिक गतिविधि में तेजी से ह्रास हुआ। संकट के प्रारंभ होने पर यूरो क्षेत्र और यूके में उपभोक्ता और कारोबार के विश्वास में गिरावट होने लगी। निवेश के उल्लेखनीय गिरावट को दर्ज करने और उपभोग के नरम होने के साथ 2008 की दूसरी तिमाही से यूरो क्षेत्र में घरेलू माँग घट गई है। 2008 के दौरान दोनों घरेलू माँग और निवल व्यापार ने संवृद्धि में उल्लेखनीय ऋणात्मक योगदान किया (चार्ट III.20)। एक ओर जहाँ यूरो क्षेत्र में 2009 के पहले भाग में तिमाही-दर-तिमाही संवृद्धि का आधा भाग आंतरिक माँग से उत्पन्न हुआ, वहीं दूसरी ओर खास तौर से घटे हुए उपभोग और कमजोर होते हुए आवासीय निवेश के बीच शेष आधा भाग निवल निर्यातों से परिणत हुआ। 2008 की दूसरी छमाही के दौरान कमजोर माँग और वित्तपोषण तक अधिक महँगी पहुँच के चलते फर्मों ने आदेश बहियों के तीव्र ह्रास के प्रति अपनी विस्तार योजनाओं को स्थगित करते हुए तथा स्टाकों में कटौती करते हुए सशक्त रूप से अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करना आरंभ किया। अमेरिकी अर्थव्यवस्था में नवीकृत कमजोरियों तथा उभरते बाजारों में गतिविधि के कारण - बाह्य परिवेश में उल्लेखनीय अवनति के चलते, जिसके संबंध में पहले समझा जाता था कि वैश्विक मंदी के प्रभावों से इसे सुरक्षित रखा जाएगा - यूरो क्षेत्र के निर्यातों में वर्षानुवर्ष वृद्धि में 2008 की तीसरी तिमाही तक 2003 के बाद उसके निम्नतम स्तर तक गिरावट हुई। चूँकि मंदी जारी रही, अत: बाह्य माँग का योगदान 2009 की पहली तिमाही तक ऋणात्मक बना रहा। जैसे ही वैश्विक आर्थिक परिवेश में सुधार आया, ऋणात्मक योगदान 2009 की चौथी तिमाही में सुधर गया। इस गिरावट के पीछे अनेक कारक विद्यमान हैं, इस तथ्य के सहित भी कि उपस्कर और मशीनरी में निवेश में वैश्विक गिरावट विशेष रूप से यूरो क्षेत्र के उन देशों को प्रभावित करती है जो पूँजीगत वस्तुओं में सबसे अधिक विशेषज्ञ हैं।

3.146 सख्त ऋण स्थितियों, पण्य कीमत संबंधी मुद्रास्फीतिकारी दबावों तथा ह्रासमान विश्वास ने आवास कीमतों में तीव्र वृद्धि को समाप्त कर दिया जो 2007 की तीसरी तिमाही तक देखी गई थी। घटी हुई वास्तविक आय वृद्धि, गिरती हुई वित्तीय संपदा, सख्त हो रही ऋण की स्थितियों तथा बदतर हो रही श्रमिक बाजार की संभावनाओं का सामना करते हुए घरेलू व्यय 2008 के दौरान और 2009 की पहली तिमाही के दौरान भी उल्लेखनीय रूप में मंद हो गया। घरेलू व्यय के निर्णय आजीवन आय के संबंध में अनुमानों द्वारा भी तीव्रता से प्रभावित हुए जिनमें प्रत्याशित भावी आय के अतिरिक्त वित्तीय

चार्ट III.20 : यूरो क्षेत्र में वास्तविक जीडीपी

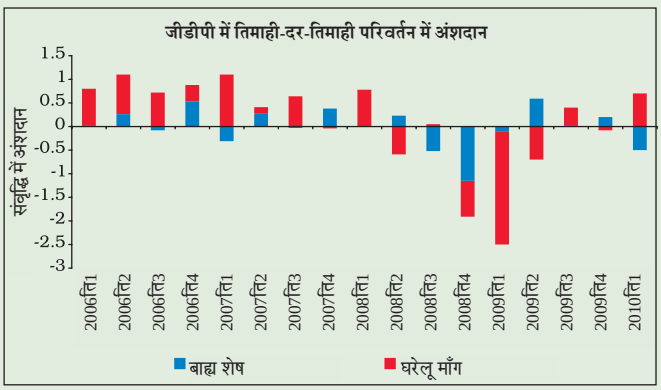

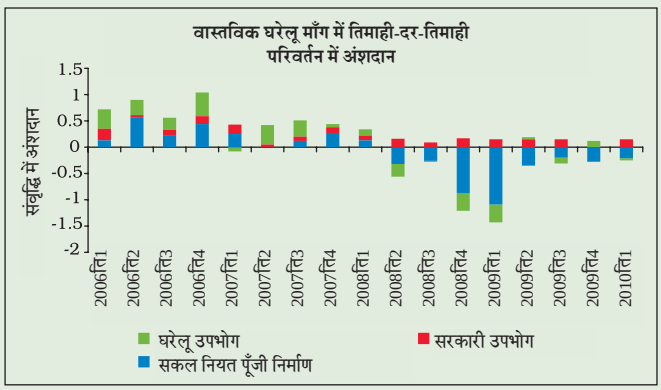

और जमीन-जायदाद की धन-संपदा पर प्रतिफल भी शामिल हैं। चूँकि वित्तीय बाजार की अशांति 2007 के मध्य में शुरू हुई थी, अत: यूरो क्षेत्र की वित्तीय परिसंपत्तियों संबंधी गतिविधियों का अधिकांश उपभोक्ताओं के लिए एक प्रतिकूल धन-संपदा प्रभाव रहा जो आवास कीमतों में गिरावट से युक्त गतिविधियों द्वारा बढ़ाया गया है। इसके परिणामस्वरूप, निजी उपभोग में वर्षानुवर्ष वृद्धि का यूरो क्षेत्र में 1993 के बाद अपनी सबसे धीमी दर पर पतन हुआ।

3.147 गिरती हुई आवास कीमतें निर्माण निवेश में आई मंदी में प्रतिबिंबित हुई थीं जिसमें दोनों आवीसीय और वाणिज्यिक भवन शामिल हैं, जिन्होंने 2008 के दौरान निवेश वृद्धि में नरमी के लिए अंशत: योगदान किया। विभिन्न देशों में गिरती हुई आवास कीमतों के अलावा, अधिक सख्त वित्तपोषण की स्थितियों और घट रही लाभप्रदता ने भी निवेश में नरमी को संचालित किया। यूरो क्षेत्र में आवासीय गृहों की कीमतें 2006 में दर्ज 6.6 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर से घटकर 2008 में 1.5 प्रतिशत हो गईं तथा 2009 में -3.1 प्रतिशत तक और कम हो गईं (सारणी 3.42)। गिरती हुई आवासीय गृहों की कीमतों ने आवासीय निवेश को कम लाभप्रद बनाते हुए निर्माण निवेश को मंद कर दिया। वाणिज्यिक संपत्तियों के मूल्य में उतार-चढ़ाव आवासीय संपत्तियों के लिए पाये गये उतार-चढ़ाव की तुलना में अधिक सुस्पष्ट थे। पिछले वर्ष में व्यावसायिक निवेश भी तेजी से घट गया है। यूरो क्षेत्र में व्यवसाय निवेश धीमा हो गया जो माँग में दुर्बलता, ऐतिहासिक रूप से क्षमता के कम उपयोग, लाभप्रदता में कमी, कारोबार में कम विश्वास, और अधिक सख्त उधार मानकों के कारण था जिन्होंने निधीयन की घटी हुई उपलब्धता के साथ वित्तपोषण की लागतों को बढ़ा दिया। इन गतिविधियों को देखते हुए यूरो क्षेत्र ने 2008 की दूसरी तिमाही में मंदी में प्रवेश किया जहाँ सबसे बड़ी तीनों अर्थव्यवस्थाएँ - जर्मनी, फ्रांस और इटली - संकुचित होने लगीं।

सारणी 3.42: यूरो क्षेत्र में आवासीय संपत्ति की कीमतें

(प्रतिशत में वार्षिक परिवर्तन)

	भार	1999-2005	2006	2007	2008	2009	2009		2009				2010
	प्रतिशत	औसत वार्षिक परिवर्तन					छ1	छ2	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
बेल्जियम[1]	3.7	7.5	11.8	9.3	4.8	-0.3	-0.6	-0.1	0.9	-2.1	-1.4	1.2	–
जर्मनी [2]	27.0	-0.9	0.2	0.7	1.0	-0.2	–	–	–	–	–	–	–
आयरलैंड[2]	2.1	12.0	13.6	-0.5	-9.1	-13.7	-11.3	-16.1	-11.0	-11.6	-13.8	-18.5	-18.9
ग्रीस[2]	2.5	9.5	13.0	6.2	1.5	-4.7	-4.1	-5.2	-4.2	-4.1	-5.2	-5.3	–
स्पेन[2])	11.7	13.8	10.4	5.8	0.7	-7.4	-7.6	-7.1	-6.8	-8.3	-8.0	-6.3	-4.7
फ्रांस[1]	21.1	11.2	12.1	6.6	1.2	-7.1	-8.1	-6.2	-6.9	-9.3	-7.9	-4.4	
इटली[2]	17.1	6.9	5.8	5.0	2.6	-0.5	-0.3	-0.7	–	–	–	–	–
साइरस[2),3)]	0.2	–	10.0	15.0	13.0	-6.0	–	–	–	–	–	–	–
लग्जमबर्ग[2]	0.4	11.1	10.8	10.1	–	–	–	–	–	–	–	–	–
माल्टा[2]	0.1	10.8	3.5	1.1	-2.7	-5.0	-7.9	-2.0	-9.9	-6.0	-2.5	-1.4	–
नेदरलैंड्स[1]	6.3	7.8	4.6	4.2	2.9	-3.3	-1.5	-5.1	-0.3	-2.8	-5.1	-5.0	-4.3
आस्ट्रिया[2,4]	3.0	0.7	4.0	4.1	1.3		4.6		4.3	4.9	3.4		
पुर्तगाल[2]	1.8	2.9	2.1	1.3	3.9	0.4	1.5	-0.7	2.7	0.3	-0.8	-0.6	–
स्लोवेनिया	0.4	–	17.6	22.6	3.1	-8.2	-8.4	-8.0	-7.1	-9.8	-10.9	-5.1	–
स्लोवाका[1]	0.6	–	16.8	23.9	22.1	-11.1	-8.9	-13.3	-4.3	-13.4	-14.3	-12.3	–
फिनलैंड[1]	2.0	–		5.5	0.6	-0.3	-4.5	4.1	-5.5	-3.6	0.4	7.9	11.3
यूरो क्षेत्र	100.0	6.4	6.6	4.5	1.5	-3.1	-3.1	-3.1	–	–	–	–	–

टिप्पणी : भार 2007 के सांकेतिक जीडीपी पर आधारित हैं।
1. मौजूदा निवास (मकान और फ्लैट); समूचा देश।
2. सभी निवास (नये और मौजूदा मकान और फ्लैट); समूचा देश।
3. संपत्ति कीमत सूचकांक साइप्रस के केंद्रीय बैंक द्वारा अनुमानित है।
4. 2000 तक; आंकड़े केवल वियना के लिए हैं।

स्रोत : यूरोपीय केंद्रीय बैंक बुलेटिन, मई 2010।

3.148 क्षेत्रीय दृष्टिकोण से सक्रियता में मंदी व्यापक आधार वाली थी, यद्यपि औद्योगिक क्षेत्र में अधिक अंकित थी, जो आर्थिक चक्रों के प्रति अधिकाधिक संवेदनशीलता प्रदर्शित करने की प्रवृत्ति रखती है (चार्ट III.21)। विनिर्माण के कार्यकलाप का 2008 की दूसरी छमाही में अचानक पतन हुआ, विशेष रूप से पूँजीगत वस्तुओं के संबंध में जिन्होंने अधिक कमजोर बाह्य माँग, पिछले बकाया आदेशों के त्वरित ह्रास, तथा कार उद्योग में सक्रियता में तीव्र कटौतियों से हानि उठाई। निर्माण 2009 की पहली तिमाही में अच्छे मौसम की स्थितियों के कारण अस्थायी तेजी के बावजूद लगातार अत्यंत कमजोर बना रहा, जहाँ आवासीय क्षेत्र में लगातार ह्रास कायम था, जो विशेष रूप से कुछ देशों में तीव्र था। अधिक आघात-सहनीय होने पर भी, सेवाएँ कमजोर निजी उपभोग और व्यवसाय की गतिविधि में शिथिलन की पृष्ठभूमि में 2004 से अपनी मंदतम गति से बढ़ीं।

3.149 यूरोप में एक कमजोर और असमान समुत्थान (रिकवरी) जारी है। समष्टि-आर्थिक नीतियाँ अभी भी उत्कर्ष को सहारा देती हैं तथा प्रभुत्व-संपन्न सरकारों के संकट का समाधान करने के लिए असाधारण उपाय किये जा रहे हैं। अब नीति-निर्धारक अर्थव्यवस्था के लिए अपना समर्थन जारी रखने और नीति के सामान्यीकरण के लिए एक विश्वसनीय मार्ग स्थापित करने के बीच संतुलन के कठिन कार्य का सामना कर रहे हैं। जनवरी 2010 में ग्रीस में सरकारी बांड स्प्रेडों में अचानक हुई वृद्धि और महत्वपूर्ण राजकोषीय चुनौतियों के साथ पुर्तगाल, स्पेन और अन्य उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में पैलाव ने लगातार बनी हुई दुर्बलताओं को रेखांकित किया है। एक वर्ष से अधिक समय के बाद यूरो क्षेत्र में वृद्धि की प्रवृत्ति लगातार विषम और अस्थिर बनी रही विशेष रूप से मध्य और पूर्वी यूरोपीय संघ के देशो में। अप्रैल 2010 के मध्य में सघन हुए ग्रीक ऋण संकट ने यूरो समुत्थान (रिकवरी) के लिए उल्लेखनीय जोखिम बढ़ा दिये। यूरो क्षेत्र का वास्तविक जीडीपी तिमाही आधार पर 2009 की अंतिम तिमाही में दर्ज 0.1 प्रतिशत की वृद्धि के बाद 2010 की पहली तिमाही में 0.2 प्रतिशत बढ़ा। फिर भी जीडीपी वृद्धि में सुधार होने के बावजूद बेरोजगारी की दर उच्चतर स्तर पर निरंतर बनी रही। अमेरिकी की तुलना में यूरो क्षेत्र में बेरोजगारी की दर बाद में बढ़ने लगी, परंतु वह मार्च 2010 में 10 प्रतिशत के स्तर पर स्थिर रही। निजी उपभोग तिमाही आधार पर 2009 की चौथी तिमाही में 0.2 प्रतिशत बढ़ने के बाद 2010 की पहली तिमाही में 0.1 प्रतिशत कम हुआ। घरेलू वास्तविक प्रयोज्य आय में निरंतर बनी हुई दुर्बलता ने मुख्य रूप से रोजगार में कमी को प्रतिबिंबित किया। आपूर्ति की ओर औद्योगिक उत्पादन का 2010 की पहली तिमाही में जनवरी में 1.6 प्रतिशत वृद्धि के अनुसरण में मासानुमास आधार पर फरवरी में 0.9 प्रतिशत विस्तार हुआ। इन वृद्धियों के परिणामस्वरूप औद्योगिक उत्पादन 2010 के पहले दो महीनों में औसतन 2009 की अंतिम तिमाही में उसके स्तर से काफी अधिक रहा। औद्योगिक क्षेत्र में मूल्य-योजन (वैल्यू ऐडेड) 2009 की तीसरी तिमाही में 2.1 प्रतिशत और चौथी तिमाही में 0.3 प्रतिशत की वृद्धियों के अनुसरण में 2010 की पहली तिमाही में 2.2 प्रतिशत बढ़ा।

चार्ट III.21: औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि (एसए)

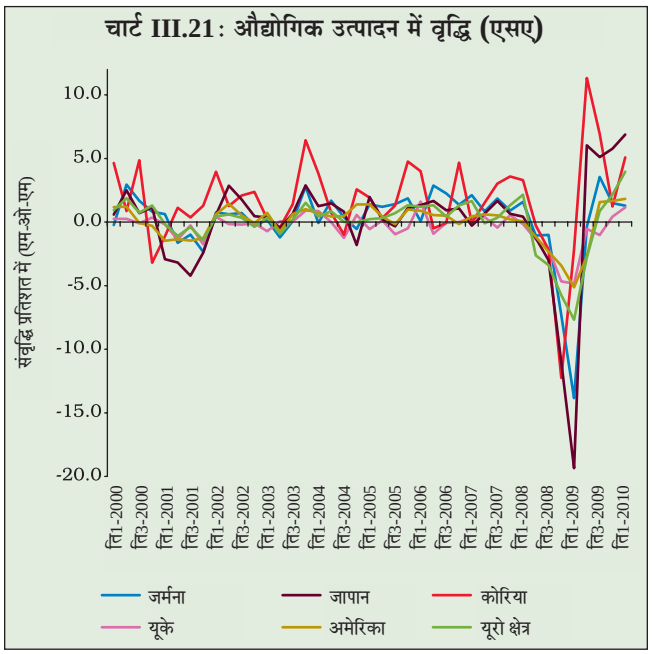

जापान

3.150 जापान के संबंध में आर्थिक संवृद्धि में एक दशक की अवरुद्धता से उसके समुत्थान (रिकवरी) को वित्तीय संकट के दौरान घरेलू आर्थिक गतिविधि पर गंभीर अप्रत्यक्ष प्रभावों के साथ बाह्य माँग के पतन के माध्यम से गतिरोध का सामना करना पड़ा। जापान में आर्थिक विस्तार 2008 में सहसा समाप्त हुआ जब पहली तिमाही में थोड़ी-सी धनात्मक वृद्धि के बाद समग्र उत्पादन में उल्लेखनीय कमी हुई। पहली तिमाही में मजबूत बाह्य माँग और घरेलू निवेश ने वास्तविक जीडीपी संवृद्धि को सहारा दिया। तथापि, निवल निर्यातें और व्यवसाय निवेश - जो पिछले वर्षों में जापानी समुत्थान की प्रेरक शक्ति रहे हैं - में भारी गिरावट ने बढ़ती हुई श्रमिक बाजार की अनिश्चितता और घटती हुई वास्तविक आय के कारण प्रतिबंधित उपभोग के साथ पहली तिमाही की धनात्मक वृद्धि को संतुलित किया तथा शेष वर्ष के लिए ऋणात्मक जीडीपी संवृद्धि दरों में परिणत हुई।

जापान के कैबिनेट कार्यालय के पहले प्रारंभिक डाटा निर्गम के अनुसार 2010 की पहली तिमाही में वास्तविक जीडीपी का विस्तार तिमाही-दर-तिमाही 1.2 प्रतिशत हुआ। आर्थिक गतिविधि मुख्य रूप से वस्तुओं और सेवाओं के निवल निर्यातों द्वारा संचालित थी जो तिमाही वास्तविक जीडीपी संवृद्धि का 0.7 प्रतिशत अंक तथा निजी माँग द्वारा (0.5 प्रतिशत अंक) थी। दो वर्षों में पहली बार वैयक्तिक उपभोग तथा आवासीय और व्यवसाय निवेश ने धनात्मक तिमाही संवृद्धि दरें दर्शाईं।

3.151 जबकि जापानी बैंकिंग क्षेत्र वैश्विक वित्तीय बाजार अशांति के प्रति अपेक्षाकृत आघात-सहनीय रहा, भारी शेयर बाजार हानियों और वित्तीय अशांति की गहनता का 2008 की दूसरी छमाही में फर्मों के निवेश और उपभोग पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा। जापानी येन की प्रभावी तौर पर मजबूत मूल्यवृद्धि ने निर्यात-उन्मुख उद्योगों में लाभप्रदता और निवेश पर अतिरिक्त अधोमुखी प्रभाव डाला। आर्थिक स्थितियों में तीव्र ह्रास को देखते हुए बैंक ऑफ जापान ने असंपार्श्विकीकृत एक दिन की माँग-दर के लिए अपने लक्ष्य को दिसंबर 2008 तक 0.1 प्रतिशत तक संचयी रूप से 40 आधार अंक कम कर दिये; उसने पूर्व में फरवरी 2007 से उक्त लक्ष्य को अपरिवर्तित रूप में छोड़ दिया था (यूरोपीय केंद्रीय बैंक वार्षिक रिपोर्ट, 2008)।

3.152 वास्तविक अर्थव्यवस्था पर वित्तीय संकट के प्रतिकूल प्रभाव, विशेष रूप से माँग में संकुचन का प्रतिरोध करने के लिए किये गये राजकोषीय नीतिगत उपायों ने प्रभुसत्ता से संपन्न सरकारों की राजकोषीय स्थिति में तीव्र गिरावट के लिए मार्ग प्रशस्त किया, जब 2009 में कई उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में राजकोषीय घाटा द्वि-अंकीय स्तरों तक बढ़ गया (सारणी 3.43)। जापान का उच्च राजकोषीय घाटा और निवल लोक ऋण राजकोषीय धारणीयता के बारे में चिंताएँ बढ़ा सकते हैं तथा आगामी वर्षों में बड़े आकार के राजकोषीय समायोजन की प्रत्याशा समुत्थान (रिकवरी) पर भारी पड़ सकती है। वित्तीय संकट के बाद यह अनुमान है कि जापान की संभावित संवृद्धि दर 2007 में दर्ज लगभग 1 1/2 (डेढ़) प्रतिशत से मध्यावधि में लगभग 1 प्रतिशत तक घटेगी, जो चक्रीय पुन:प्राप्ति पर तुषारपात करते हुए क्षीण हो रही श्रम शक्ति और अधिक मंद गति से पूँजी-संचयन द्वारा प्रेरित होगी।

सारणी 3.43: सरकारी राजकोषीय शेष

(जीडीपी का प्रतिशत)

	औसत 1994-2003	2006	2007	2008	2009	2010अ
1	2	3	4	5	6	7
प्रमुख उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	-3.6	-2.3	-2.1	-4.7	-10.0	-9.5
अमेरिका	..	-2.0	-2.7	-6.6	-12.5	-11.0
यूरो क्षेत्र	-2.7	-1.3	-0.6	-2.0	-6.3	-6.8
जापान	-6.0	-4.0	-2.4	-4.2	-10.3	-9.8
युनाइटेड किंगडम	-2.1	-2.6	-2.7	-4.8	-10.9	-11.4

अ : अनुमानित।
स्रोत : वैश्विक आर्थिक संभावना रिपोर्ट, अप्रैल 2010।

उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ

3.153 जबकि उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ तेजी से मंदी से ग्रस्त हो रही थीं, यह प्रतीत हो रहा था कि उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ प्रारंभिक चरणों में संकट से अपेक्षाकृत अलग हैं। तथापि, सितंबर 2008 से संकट के गहराने के साथ ही उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के मंदी के दायरे में आने के बाद वैश्विक संवृद्धि अत्यधिक मंद हुई तथा उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में भी संवृद्धि तेजी से नीचे आ गई। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ने अनुमान लगाया कि उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की जीडीपी संवृद्धि 2008 में दर्ज 6.1 प्रतिशत से घटकर 2009 में 2.4 प्रतिशत तक नीचे आएगी। यह गिरावट इस बात का स्पष्ट सबूत है कि वैश्वीकरण की शक्तियाँ इतनी मजबूत हैं कि विच्छेद (डीकपलिंग) की परिकल्पना कारगर नहीं हो सकती।

3.154 अंतरराष्ट्रीय व्यापार और वित्त ऐसी दो प्रमुख सरणियाँ थीं जिनके माध्यम से संकट ने ईएमई की वास्तविक अर्थव्यवस्थाओं को प्रभावित किया (बॉक्स III.4)। बाह्य निधियों, विशेष रूप से व्यापार ऋणों की अनुपलब्धता ने अंतरराष्ट्रीय व्यापार को अधिक कठिन बनाया तथा उभरती अर्थव्यवस्थाओं में कार्यशील पूँजी के थोड़े-से आंतरिक स्रोतों से युक्त अपेक्षाकृत छोटी फर्मों पर अधिक दबाव डाल दिया। मंदी से आक्रांत देशों से उत्पादों के लिए बाह्य माँग में कमी के साथ ही इसका परिणाम व्यापार और औद्योगिक उत्पादन में समकालीन वैश्विक पतन में हुआ। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ने अनुमान किया कि विश्व व्यापार में 2009 के दौरान परिमाण के तौर पर 10.7 प्रतिशत संकुचन हुआ (देखें सारणी 3.22)।

बॉक्स III.4
वित्तीय संकट के संक्रमण के माध्यम : वित्तीय और वास्तविक संबद्धताएँ

वर्तमान वित्तीय संकट का संक्रमण उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में तीन चरणों में किया गया। यह प्रतीत होता है कि फरवरी 2007 और मई 2008 के बीच की अवधि उभरती अर्थव्यवस्थाओं के विच्छेद (डीकपलिंग) का एक संक्षिप्त स्वर्णिम युग रही है जब वे बड़ी सीमा तक वित्तीय संकट से अलग रहीं। तथापि, दूसरे और तीसरे चरण में विश्व की अर्थव्यवस्था 'डीकपलिंग' सिद्धांत को मोटे तौर पर अस्वीकार करते हुए घनिष्ठता के साथ आगे बढ़ती रही।

भौगोलिक विस्तार के तौर पर उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में वित्तीय संकट के संक्रमण को तीन कारकों ने प्रेरित किया। वित्तीय बाजार से मिले आघात अपेक्षाकृत कम स्थिर थे, यद्यपि वित्तीय बाजारों में अनिश्चितता तथा अधिक सुरक्षित गंतव्यों की दिशा में मोड़े गये विभिन्न देशों के बीच के पूँजी प्रवाहों में नाटकीय वृद्धि हुई थी। ऋण की कमी (क्रंच) की इस अवधि में शेयर बाजार ढह गए तथा वित्तीय बाजार अस्थिर हो गए। अमेरिकी वित्तीय बाजार की गतिविधियों से ईएमई सापेक्ष रूप में अलग रहे थे जो प्राथमिक रूप से विषाक्त नवोन्मेष उत्पादों के प्रति उनकी वित्तीय प्रणाली के सीमित एक्सपोज़र के कारण था। वास्तविक आर्थिक गतिविधि के लिए सतत बना हुआ आघात व्यापार के माध्यम से उत्पन्न हुआ जो एकल सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक के रूप में उभरा जिसने बाह्य माँग को कमजोर बनाने की प्रत्याशा में आर्थिक गतिविधि में तीव्र गिरावटों के लिए योगदान किया। विश्वास का माध्यम बड़ी वित्तीय संस्थाओं के पतन के कारण उभरा जिसने वैश्विक आर्थिक परिवेश में अनिश्चतता को बढ़ाया तथा निवेश की एक नकारात्मक संभावना को फैलाया।

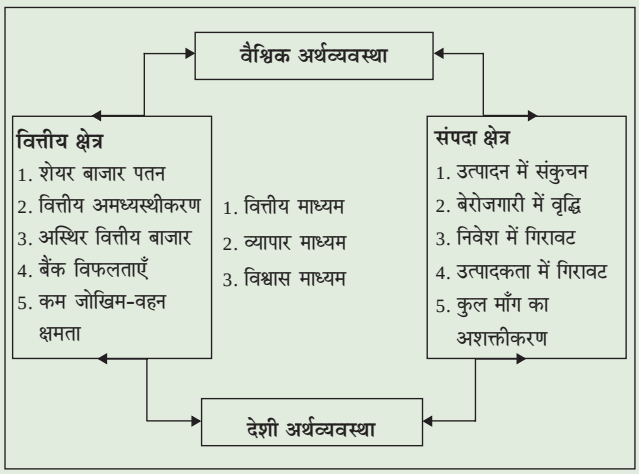

1. वित्तीय माध्यम

उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में वित्तीय बाजार अपेक्षाकृत निरापद थे जो बहुत हद तक यूरोपीय देशों के असमान, सब-प्राइम और संबंधित उत्पादों, तथाकथित विषाक्त परिसंपत्तियों, में अपने सीमित एक्सपोज़र के कारण था। मई 2008 की स्थिति के अनुसार विश्व के 100 सबसे बड़े बैंकों और प्रतिभूतियों की कुल रिपोर्ट किये गये अवलेखन और ऋण हानियाँ 379 बिलियन अमेरिकी डॉलर की थीं। इनमें से एशिया (जापान को छोड़कर) का हिस्सा 10.8 बिलियन अमेरिकी डॉलर था, जो वैश्विक हानियों के 3 प्रतिशत से कम था (विलियम ई. जेम्स, 2008)। तथापि, वित्तीय माध्यम द्वारा वास्तविक आर्थिक प्रभावों की उपेक्षा नहीं की जा सकती। विशेष रूप से ऋण-योग्य निधियों की उपलब्धता एक ऐसा प्रमुख तत्व थी जिसने पूँजी की लागत से स्वतंत्र रूप में निवेश व्यवहार को प्रभावित किया था। निजी क्षेत्र को उपलब्ध बैंक ऋण गुणात्मक रूप से विकासशील देशों में वास्तविक निवेश की राशि का निर्धारण करने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण परिवर्ती तत्व (वेरियबल) हो सकता है (गेर्टियर, 1988; हबर्ड, 1998; जोंगवैनिक और कोहपाइबून, 2008)।

2. व्यापार माध्यम

प्रारंभ में उन्नत देशों में आर्थिक गतिविधि के मंदन के कारण वैश्विक व्यापार का पतन नहीं हुआ, क्योंकि समय के चलते उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) के बीच व्यापार संबंधों का उल्लेखनीय विस्तार था। जी-3 अर्थव्यवस्थाओं में आर्थिक मंदी ने अंतत: उनकी आयात-माँग में संकुचन को प्रेरित किया, जिसके द्वारा विकासशील ईएमई से निर्यातों को निरुत्साहित किया गया। जी-3 माँग में मंदन के प्रभाव विभिन्न उद्योगों और देशों में भिन्न-भिन्न रहे। इलेक्ट्रॉनिकी क्षेत्र गंभीर रूप से प्रभावित हुआ क्योंकि इस उद्योग में भागों और घटकों में अंत:एशियाई व्यापार संभवत: किसी भी अन्य उद्योग की तुलना में अधिक है। इसके अतिरिक्त, यह उद्योग संभवत: अन्य बाजारों की अपेक्षा जी-3 बाजारों पर अधिक निर्भर है तथा इस उद्योग के उत्पाद अत्यधिक विश्व आय लोच प्रदर्शित करते हैं।

3. विश्वास माध्यम

विश्वास माध्यम का परिचालन व्यापक रूप से शेयर बाजार के जरिये हुआ। वित्तीय स्थिरता के लिए निहितार्थों के साथ लेहमैन ब्रदर्स के पतन जैसी प्रमुख घटनाओं का नकारात्मक व्यापन प्रभाव ईएमई के शेयरों पर पड़ा। ईएमई के शेयर बाजारों में निवेशकों के विश्वास-भंग ने घनिष्ठ रूप से अमेरिका की ऐसी ही स्थिति को प्रतिबिंबित किया तथा दोनों बाजार अगस्त 2007 से कुछ आगे-पीछे अग्रसर होते रहे। गिरते हुए शेयर बाजारों ने कारोबार और उपभोक्ताओं के विश्वास को आगे और अवमंदित किया जो आर्थिक गतिविधि और बैंकिंग व्यवसाय की मंदी के रूप में परिणत हुआ। शेयर बाजार की माँग अभावी मंदी का भी बैंकों के तुलन-पत्रों पर, विशेष रूप से उन बैंकों के संबंध में जिनका भारी एक्सपोज़र शेयरों में है, उल्लेखनीय नकारात्मक प्रभाव पड़ा होगा।

समाहार के तौर पर, वित्तीय संकट तीन प्रमुख माध्यमों द्वारा व्याप्त हुआ, जिनमें से वित्तीय माध्यम ने बढ़ती हुई वित्तीय सघनता और वैश्विक वित्तीय एकीकरण के कारण संपदा क्षेत्र में आई हुई मंदी में प्रभावी भूमिका निभाई। व्यापार माध्यम के संबंध में उक्त प्रभाव को व्यापार माध्यम द्वारा प्रभावित सभी देशों द्वारा आर्थिक गतिविधि का पुन: संतुलन करते हुए कुछ सीमा तक कम कर दिया गया। तथापि, समग्र वित्तीय संकट पर वित्त और व्यापार माध्यमों के प्रभाव को तीव्र करने में विश्वास माध्यम की भूमिका महत्वपूर्ण थी।

3.155 वित्तीय बाजार की अशांति और निर्यातों में दुर्बलता के बावजूद उभरते एशिया में आर्थिक संवृद्धि अच्छी बनी रही जिसे मुख्य रूप से उच्च बचत द्वारा समर्थित मजबूत देशी निवेश दरों का सहारा प्राप्त था (सारणी 3.44)। इसका कारण उन समष्टि-आर्थिक मूल तत्वों को भी माना जा सकता है जो अपनी 10 वर्ष पहले की स्थिति की तुलना में काफी बेहतर हालत में थे- जैसा कि उक्त देशों के सुधरे हुए सर्वोत्तम ऋण रेटिंग में प्रतिबिंबित है। एशियाई देशों ने अपने देशी व्यय में कटौती की है, राजकोषीय घाटों को कम किया है, तथा अपनी अर्थव्यवस्थाओं में सुधार कर लिया है। इसके अलावा, एशिया में कारपोरेट तुलन-पत्रों में सुधार आया है क्योंकि ईक्विटी की तुलना में कर्ज के अनुपात तेजी से घटे हैं तथा अधिकांश देशों में विदेशी मुद्रा उधार निधीयन के कंपनी स्रोतों का बड़ा घटक नहीं रहा है।

3.156 आर्थिक मंदी का व्यापकता और सख्त वैश्विक वित्तीय स्थितियों के बीच 2008 की दूसरी छमाही में निर्यात वृद्धि में तेजी से कमी आई, विशेष रूप से सिंगापुर, ताइवान और हांगकांग जैसी छोटी खुली अर्थव्यवस्थाओं में। आर्थिक गतिविधि में समग्र मंदी भी उपभोक्ता और कारोबार के ह्रासमान विश्वास और स्थावर संपदा निवेश में गिरावट के कारण घरेलू माँग में दुर्बलता द्वारा संचालित हुई थी (यूरोपीय केंद्रीय बैंक वार्षिक रिपोर्ट, 2008)। उभरते एशिया के अंदर आर्थिक संवृद्धि पर व्यापार में संकुचन का प्रतिकूल प्रभाव इन अर्थव्यवस्थाओं में कुल मूल्य-योजन के प्रति अंतिम बाह्य माँग के योगदान के आधार पर भिन्न-भिन्न रहा। मलेशिया और थाईलैंड ने निर्यातों में एक द्वि-अंकीय गिरावट से सर्वाधिक हानि उठाई। वैश्विक गिरावट ने भी इंडोनेशिया और फिलीपीन्स में संवृद्धि को प्रभावित किया। तथापि, चूँकि दोनों ही देश अपने कई उभरते पूर्वी एशियाई पड़ोसियों की तुलना में निर्यातों पर कम निर्भर थे, अत: उनका संबंधित मंदन नाटकीय जैसा नहीं था। चार मध्यम आय वाली दक्षिण-पूर्व एशियाई राष्ट्र संघ (एएसईएएन) की अर्थव्यवस्थाएँ (इंडोनेशिया, मलेशिया, फिलीपीन्स और थाईलैंड) 2009 की पहली तिमाही में 1.0 प्रतिशत संकुचित हुईं। आर्थिक गतिविधि में मंदी के अनुरूप इंडोनेशिया को छोड़कर सभी एएसईएएन-4 अर्थव्यवस्थाओं के लिए औद्योगिक उत्पादन में गिरावट हुई। अद्यावधि तक एएसईएएन-4 अर्थव्यवस्थाएँ 1997-98 के दौरान की तुलना में वर्तमान संकट द्वारा काफी कम प्रभावित हुई हैं।

3.157 एशिया के भीतर नई औद्योगीकृत अर्थव्यवस्थाओं (एनआईईएस) में आर्थिक संकुचन निर्यातों में विषम गिरावट और कमजोर घरेलू माँग के कारण 1997-98 के एशियाई वित्तीय संकट के बाद सबसे बुरा था। निर्यात वृद्धि में पतन निर्यात-प्रेरित वृद्धि के मॉडल पर इन देशों की भारी निर्भरता के कारण जीडीपी संवृद्धि में अत्यधिक कमी के रूप में परिणत हुआ। अत्यधिक अनिश्चित आर्थिक परिवेश के कारण आय में गिरावट और उपभोक्ता विश्वास में कमी के अनुरूप उपभोग का भारी पतन हुआ। अंश के तौर पर निर्यातों और आयातों में गिरावट कुछ सीमा तक जीडीपी में सरकारी उपभोग व्यय के अंश में वृद्धि द्वारा पूरी की गई है जो मुख्य रूप से घरेलू क्षेत्रों के प्रति अर्थव्यवस्था का पुन:संतुलन करने के कारण है। वैश्विक माँग में पतन ने 2009 के पहले पाँच महीनों के दौरान एनआईईएस के निर्यातों में नाटकीय मंदन को प्रेरित किया। घरेलू माँग में विषम गिरावट के साथ ही औद्योगिक उत्पादन तेजी से घट गया। फिर भी, गिरावट की

सारणी 3.44 : वास्तविक जीडीपी वृद्धि, निवेश और निर्यात - चुनिंदा एशियाई अर्थव्यवस्थाएँ

(जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)

	वास्तविक जीडीपी वृद्धि			निवेश दर जीडीपी का प्रतिशत)			पण्य निर्यात वृद्धि		
	2007	2008	2009	2007	2008	2009	2007	2008	2009
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
चीन	13.0	9.6	8.7	41.7	42.5	45.8	25.8	17.6	-16.1
हांगकांग	6.4	2.1	-2.7	20.9	20.5	22.5	8.9	5.6	-11.9
भारत	9.2	6.7	7.2	37.6	35.6	34.5	28.9	13.7	-15.0
इंडोनेशिया	6.3	6.0	4.5	24.9	27.8	31.0	14.0	18.3	-14.4
कोरिया	5.1	2.3	0.2	29.4	31.2	25.9	14.2	14.2	-13.7
मलेशिया	6.2	4.6	-1.7	21.7	19.1	14.0	9.6	13.1	-21.1
फिलीपीन्स	7.1	3.8	0.9	15.4	15.2	14.0	6.4	-2.5	-22.3
सिंगापुर	8.2	1.4	-2.0	20.7	30.1	27.6	10.1	13.0	-20.3
थाईलैंड	4.9	2.5	-2.3	26.4	28.9	21.9	18.2	15.9	-13.9

स्रोत : एशियाई विकास संभावना 2010, एशियाई विकास बैंक।

गति नरम होने लगी है। सबसे अधिक बुरी तरह जिन अर्थव्यवस्थाओं को आघात पहुँचा वे थीं ताइवान और सिंगापुर जहाँ पहली तिमाही में जीडीपी में क्रमश: 10.2 प्रतिशत और 9.6 प्रतिशत गिरावट हुई। नियत निवेशों और निर्यातें में द्वि-अंकीय गिरावटों ने ताइवान की जीडीपी में तीव्र पतन में योगदान किया। 2009 की पहली तिमाही में हांगकांग की अर्थव्यवस्था भी लगातार संकुचित हो रही थी जहाँ 7.8 प्रतिशत गिरावट हुई तथा दोनों बाह्य और घरेलू माँग संकुचित हो रही थी। इस बीच कोरिया गणराज्य की अर्थव्यवस्था 2009 की पहली तिमाही में 4.2 प्रतिशत संकुचित हुई; फिर भी, यह गिरावट रुक गई होगी क्योंकि अर्थव्यवस्था में 2008 की अंतिम तिमाही से तुलना करने पर 0.5 प्रतिशत वृद्धि हुई (मौसम के तौर पर समायोजित वार्षिकीकृत दर)। सामूहित रूप से एनआईईएस में आर्थिक संवृद्धि में 1997-98 के एशियाई वित्तीय संकट की तुलना में अधिक गिरावट हुई, यद्यपि इस गिरावट की गति कम तीव्र रही। संवृद्धि में गिरावट 2009-10 की पहली छमाही तक लगातार होती रही तथा 2009 की चौथी तिमाही में यह धनात्मक रूप में परिणत हुई। 2009 की चौथी तिमाही में कोरिया ने संवृद्धि में 6.0 प्रतिशत तक उल्लेखनीय बढ़ोतरी को देखा जबकि यह हांगकांग में 2.6 प्रतिशत और सिंगापुर में 4.0 प्रतिशत थी।

3.158 अधिकांश उभरते पूर्वी एशिया में मंदी के बीच चीन एक प्रमुख उज्ज्वल स्थान के रूप में है क्योंकि वह 2009 की पहली छमाही के दौरान एक अच्छी दर पर संवृद्धि करता रहा। 2009 की पहली तिमाही में उसकी 6.1 प्रतिशत जीडीपी संवृद्धि 1999 की चौथी तिमाही में जीडीपी के तिमाही आंकड़े लागू करने के बाद सबसे कम रही। परंतु संवृद्धि का निष्पादन दूसरी तिमाही में सुधरा जब 7.9 प्रतिशत बढ़ोतरी हुई तथा 2010 की पहली तिमाही में यह 11.9 प्रतिशत तक पहुँची। तथापि, अन्य उभरती पूर्वी एशियाई अर्थव्यवस्थाओं की तरह बाह्य माँग में कमी द्वारा चीनी निर्यात बुरी तरह प्रभावित हुए जिनमें मई 2009 में 22.2 प्रतिशत गिरावट हुई। फिर भी, नियत परिसंपत्ति निवेश में लगातार बनी हुई मजबूत वृद्धि जिसे सरकार के व्यापक प्रोत्साहन पैकेज द्वारा अतिरिक्त बल मिला, घटते हुए निर्यातों के प्रभावों का प्रतिरोध कर सकी (बॉक्स III.5)। नियत परिसंपत्ति निवेश वृद्धि में मई 2009 में 38.7 प्रतिशत तक गति आई जबकि मई 2008 में यह 25.4 प्रतिशत थी तथा अप्रैल 2010 में 26.1 प्रतिशत तक यह नरम हुई। तथापि, उपभोक्ता माँग जैसी कि फुटकर बिक्री में वृद्धि द्वारा प्रतिबिंबित है, मई 2009 में पुन: 14.9 प्रतिशत तक बढ़ने से पहले अप्रैल में 13.7 प्रतिशत तक कमजोर हुई तथा अप्रैल 2010 में 18.5 प्रतिशत तक बढ़ गई।

लातीन अमेरिका

3.159 लातीन अमेरिका में आर्थिक संवृद्धि 2008 की पहली छमाही में सशक्त थी। मुद्रास्फीतिकारी दबाव पूरे वर्ष भर में बढ़े जब इस क्षेत्र के लिए मुद्रास्फीति दरें 2007 के 6.1 प्रतिशत से बढ़कर 2008 में 8.7 प्रतिशत हो गईं। नियत अथवा नियत-वत् विनिमय दरों से युक्त देशों ने मुद्रास्फीति-लक्षित व्यवस्था वाले देशों की तुलना में उच्चतर मुद्रास्फीति दर्ज की। सुधरे हुए समष्टि-आर्थिक मूल तत्वों, उच्च पण्य कीमतों और मजबूत घरेलू माँग ने 2008 की पहली छमाही में आर्थिक संभावना को सहारा देना जारी रखा, यद्यपि वे भी बढ़े हुए मुद्रास्फीतिकारी दबावों में परिणत हुए। तथापि, सितंबर 2008 के मध्य से बाह्य वित्तीय स्थितियाँ खराब हुईं क्योंकि वैश्विक वित्तीय संकट प्रकट हुआ। विशेष रूप से लातीन अमेरिकी सर्वोत्तम ऋण संबंधी ऋण चूक स्वैपों पर स्प्रेड काफी विस्तृत हो गए खास तौर से अर्जेन्टीना और वेनेजुएला में (वर्ष के अंत में क्रमश: लगभग 4,000 और 3,000 आधार अंक बढ़े)। इसके अतिरिक्त, मुद्राएं अमेरिकी डॉलर की तुलना में गिरीं, वर्ष में शेयर बाजारों का उल्लेखनीय रूप में लगभग 50 प्रतिशत पतन हुआ तथा चलनिधि की कमियाँ सामने आईं। खास तौर से ब्राजील और मेक्सिको नकदी की कमियों से आहत हुए क्योंकि बड़ी मात्रा में बहिर्वाहों ने क्षेत्र के वित्तीय परिदृश्य को प्रभावित किया। 2010 के लिए क्षेत्रीय जीडीपी में 4 प्रतिशत की वृद्धि होने का अनुमान किया गया - जो ऐतिहासिक मानकों के अनुसार अच्छा कार्यनिष्पादन है। लातीन अमेरिकी क्षेत्र के साथ ग्रीक संकट की वास्तविक संबद्धताएं सीमित हैं, परंतु यदि विरल जोखिम उत्पन्न होते हैं, तो यह क्षेत्र प्रभावित हो सकता है। ग्रीस,इटली आदि को निर्यात लातीन अमेरिकी क्षेत्र के कुल निर्यातों के 5 प्रतिशत से कम होते हैं, जो संक्रामकता को वास्तविक सरणियों के माध्यम से सीमित करते हैं। तथापि, एक चरम परिदृश्य में दक्षिणी यूरोप में एक सरकारी ऋण संकट का फैलाव बाजार विश्वास प्रभावों के माध्यम से हो सकते हैं। वैश्विक पूँजी बाजारों में समुत्थान अनुमान से अधिक गतिशील रहा है, जिसने उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में एक धनात्मक अल्पावधि वृद्धि में योगदान किया है तथा उभरते बाजारों के लिए सुगम हो रही बाह्य वित्तपोषण की स्थितियों ने 2010 में लातीन अमेरिका में समग्र आर्थिक परिवेश को उल्लेखनीय रूप में

बॉक्स III.5
एशिया पर वैश्विक संकट का प्रभाव

एशियाई अर्थव्यवस्था पर वर्तमान वैश्विक आर्थिक मंदी का एक उल्लेखनीय प्रभाव उसकी बाह्य क्षेत्र की संबद्धताओं के माध्यम से रहा है। एशियाई अर्थव्यवस्थाएँ एक निर्यात-संचालित वृद्धि मॉडल द्वारा संचालित उच्च वृद्धि का साक्षात्कार कर रही थीं। 1990 के बाद के दशक के दौरान विश्व व्यापार में औसतन 7 प्रतिशत की वृद्धि हुई जिससे एशियाई अर्थव्यवस्थाओं के संवृद्धि निष्पादन को प्रोत्साहन मिला। एशियाई क्षेत्र निर्यातों पर, विशेष रूप से अमेरिकी उपभोग पर अत्यधिक निर्भर है जो एशिया के निर्यात मूल्य-योजन के लगभग एक चौथाई हिस्से के लिए जिम्मेदार है। वैश्विक वित्तीय संकट के मध्य में एशियाई निर्यातों के लिए माँग उल्लेखनीय रूप में कम हो गई, जो व्यापार में समग्र संकुचन में परिणत हुआ। 2008 की अंतिम तिमाही में वास्तविक निर्यात अमेरिका में 6.5 प्रतिशत, यूरो क्षेत्र में 6.7 प्रतिशत, जापान में 13.8 प्रतिशत और चीन में अनुमानित 10 प्रतिशत घट गए। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से माँग में तीव्र कमी के अनुरूप एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में औद्योगिक उत्पादन में उल्लेखनीय रूप में गिरावट हुई (चार्ट)। एशियाई अर्थव्यवस्थाएँ निर्यात क्षेत्रों पर अत्यधिक निर्भर हैं और यह निर्भरता कुल मूल्य संयोजन की तुलना में अंतिम बाह्य माँग के योगदान को दर्शाती है।

जैसे ही संकट ने वैश्विक अर्थव्यवस्था को आहत किया, व्यापार और वित्तीय प्रवाह, जो वैश्वीकरण के सशक्त संचालकों के रूप में कार्य करने के लिए प्रयुक्त होते थे, 2008 के अंत में क्षीण हो गए जिससे संकट के प्रभाव का संचरण आगे सीमाओं के पार हो गया। संकट का परिणाम उपभोक्ता और निवेशक के विश्वास में उल्लेखनीय कमी के रूप में हुआ। घरेलू क्षेत्रों के माध्यम से संवृद्धि को पुन: संतुलित करने के प्रयासों के बावजूद अल्प उपभोक्ता और निवेशक विश्वास ने संकट से समुत्थान (रिकवरी) को लंबा खींचा। संकट से उभरा हुआ एक दिलचस्प तथ्य यह है कि विश्वास में एक समकालिक गिरावट थी जिसने अनिश्चितता को बढ़ाया। परिसंपत्ति कीमतों में सुधारों के कारण आर्थिक गतिविधि और धन-संपदा की संपत्तियों में दुर्बलता का परिणाम उपभोग और निवेश की गतिविधि में भारी गिरावट के रूप में हुआ।

दोनों देशी तौर पर और बाह्य रूप से माँग के कमजोर होने की अवधि में एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में विवेकपूर्ण राजकोषीय उपाय किये गये। इसके परिणामस्वरूप मजबूत राजकोषीय प्रतिक्रिया ने 2009 की पहली छमाही के दौरान एशियाई अर्थव्यवस्थाओं को स्थिर करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के अनुसार आइएमएफ के वैश्विक एकीकृत मौद्रिक और राजकोषीय (जीआइएमएफ) मॉडल का प्रयोग करते हुए अनुकरणों ने अनुमान लगाया कि एशिया में 2009 की पहली छमाही में राजकोषीय प्रोत्साहन औसतन जीडीपी संवृद्धि के लगभग 1 3/4 (पौने दो) प्रतिशत अंक होते हैं।

चार्ट : एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में व्यापार पर संकट का प्रभाव

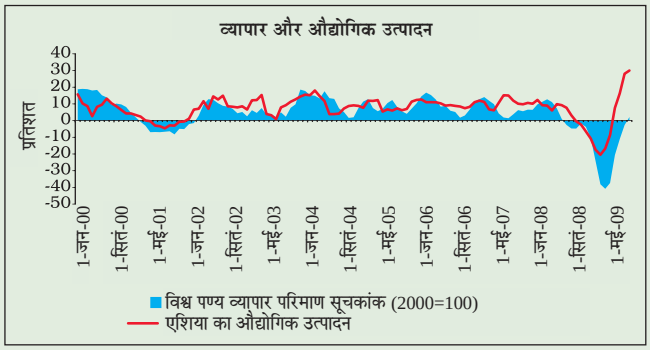

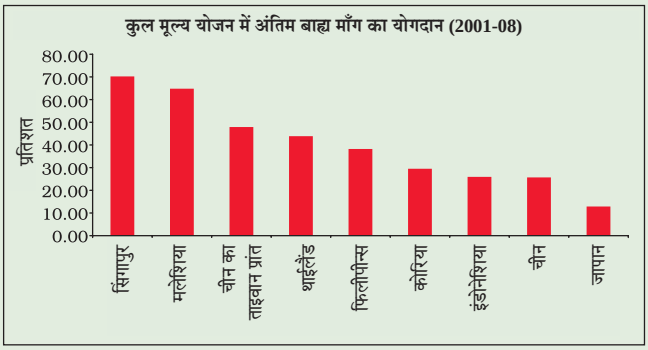

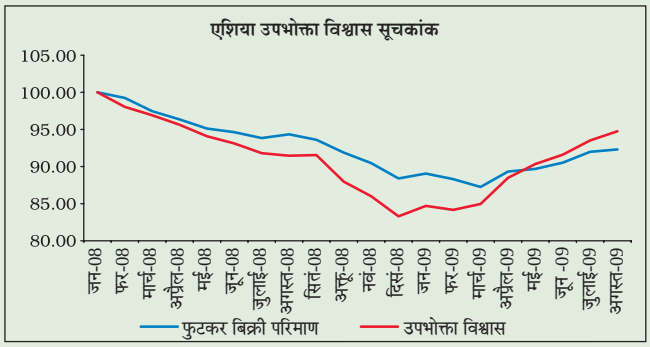

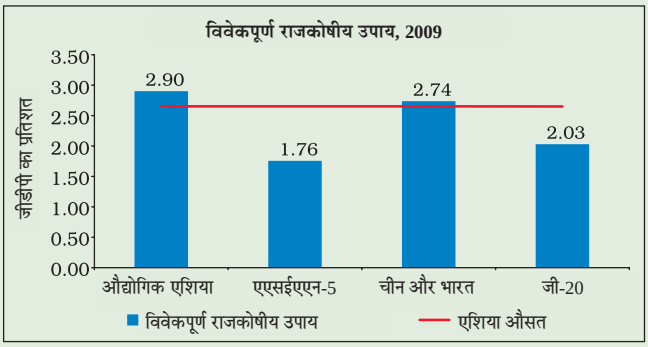

संदर्भ

1. ऐडम्स, सी. 2006। "ग्लोबल करेंट अकाउंट इंबैलेन्सेस।" ली कुआन यू स्कूल ऑफ पब्लिक पॉलिसी, नैशनल यूनिवर्सिटी ऑफ सिंगापुर।

2. जोंगवानिच, जे. 2007। "डिटर्मिनैन्ट्स ऑफ एक्सपोर्ट परफार्मेन्स इन ईस्ट एण्ड साउथ ईस्ट एशिया।" *ईआरडी वर्किंग पेपर* नं. 106, अर्थशास्त्र और अनुसंधान विभाग, एशियाई विकास बैंक, मनीला।

3. एशियाई विकास बैंक, 2009। *एशियन डेवलपमेंट आउटलुक 2009*, मनीला, फिलीपीन्स।

आधिक्य से युक्त कर दिया है। फिर भी, राजकोषीय विवेक और कमजोर वृद्धि इस क्षेत्र के लिए प्रमुख चुनौती के रूप में बनी हुई हैं।

श्रमिक बाजार पर प्रभाव

3.160 रोजगार के स्तर पर वित्तीय संकट का प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। आर्थिक गतिविधि के ह्रास एवं मंदी से युक्त आर्थिक परिवेश ने दोनों निजी कारपोरेट व्यवसायों और कारखानों में तीव्र काम बंदी (ले ऑफ़्स) को प्रेरित किया। रोजगार में गिरावट प्रमुख रूप से विनिर्माण क्षेत्र में थी जो अंतरराष्ट्रीय व्यापार पर अपनी निर्भरता के कारण वित्तीय संकटों के प्रति अत्यधिक संवेदनशीलता रखता है। श्रमिक प्रवसन के उलटाव के कारण श्रमिक बाजार की स्थितियाँ और बिगड़ गईं। पूँजी और श्रम जैसे उत्पादन के अकुशल आबंटन कारकों ने वर्तमान वित्तीय संकट के दौरान उत्पादकता में तीव्र गिरावट को प्रेरित किया (बॉक्स III.6)।

बॉक्स III.6
तेजी और मंदी की अवधि के दौरान श्रमिक उत्पादकता का विश्लेषण

आर्थिक साहित्य इस बात का मजबूत साक्ष्य उपलब्ध कराता है कि वित्तीय संकट अशांति की अवधियाँ हैं जो अकसर कामबंदी, एक दबावग्रस्त श्रमिक बाजार और कभी-कभी संकटग्रस्त क्षेत्रों से संकटरहित क्षेत्रों में कामगारों के विस्थापन से कुशलताओं की अत्यधिक हानियों के रूप में परिणत होते हैं (ल्जुंगक्विस्ट और सार्जन्ट, 1998)। संकट की अवधि में उत्पादन में गिरावट के लिए बड़ी हद तक उत्पादन के उपादानों की उच्चतर कीमतों, संरक्षणवादी प्रवृत्तियों तथा अनुसंधान और विकास में उल्लेखनीय गिरावट के कारण उपादान उत्पादकता में पतन को कारण माना जाता है। विभिन्न देशों के बीच की स्थिति के विश्लेषण में उत्पादन पर उत्पदकता के आघात के प्रभाव के अनुभवजन्य अनुमान यह दर्शाते हैं कि उत्पादन में लगभग 4.5 प्रतिशत गिरावट है, जो जीडीपी पर संकट के समग्र प्रभाव के आधे (46 प्रतिशत) के नजदीक है (चार्ट)। व्यापार संवर्धन कार्यक्रम (टीएफपी) (वाइ/के के रूप में मापित) लगभग 4 प्रतिशत घट जाता है, जो तदनुरूपी गिरावट का लगभग 43 प्रतिशत है।

वित्तीय संकट की अवधि के दौरान तीव्र और बड़े सापेक्ष मूल्य परिवर्तनों के कारण अनेक श्रमिकों को ऐसे व्यवसायों और क्षेत्रों में जाना पड़ता है जो उनके पूर्व रोजगार अनुभव से बहुत भिन्न हैं। इस प्रकार अनेक विस्थापित श्रमिकों का अनुमान किया जा सकता है जो स्वयं को ऐसे कार्यों में पाते हैं जिनके लिए उनके संचित कौशल अनुपयुक्त हैं, और जहाँ नये कौशल अनिवार्यत: प्राप्त करने चाहिए, वहाँ इसके कारण उत्पादकता में कम से कम अस्थायी हानियाँ होती हैं। सामान्य समय में यह प्रभाव अदृश्य हो जाता है तथा मजदूरी में परिवर्तन में अंतर छोटे हैं अथवा गलत रूप में मापित हैं। संकट के दौरान स्थिर रहनेवालों की अपेक्षा अपने स्थान से दूसरे स्थान पर जानेवालों के लिए अर्जन की हानियां 14 प्रतिशत से भी अधिक हैं। संकट से बाहर ये सापेक्ष हानियाँ कोई स्पष्ट स्वरूप नहीं दर्शातीं तथा विरल रूप से ये सांख्यिकीय तौर पर महत्वपूर्ण हैं। श्रम की गुणवत्ता में अचानक गिरावट पूँजी-उत्पादन अनुपात में पतन का कारण बनती है तथा इस वजह से इसे पूँजी के उपयोग का कारण भी बनना चाहिए। अत: उपयोग की अंतर्जनित प्रतिक्रिया

चार्ट : श्रमिक उत्पादकता वृद्धि और जीडीपी वृद्धि की प्रवृत्तियाँ

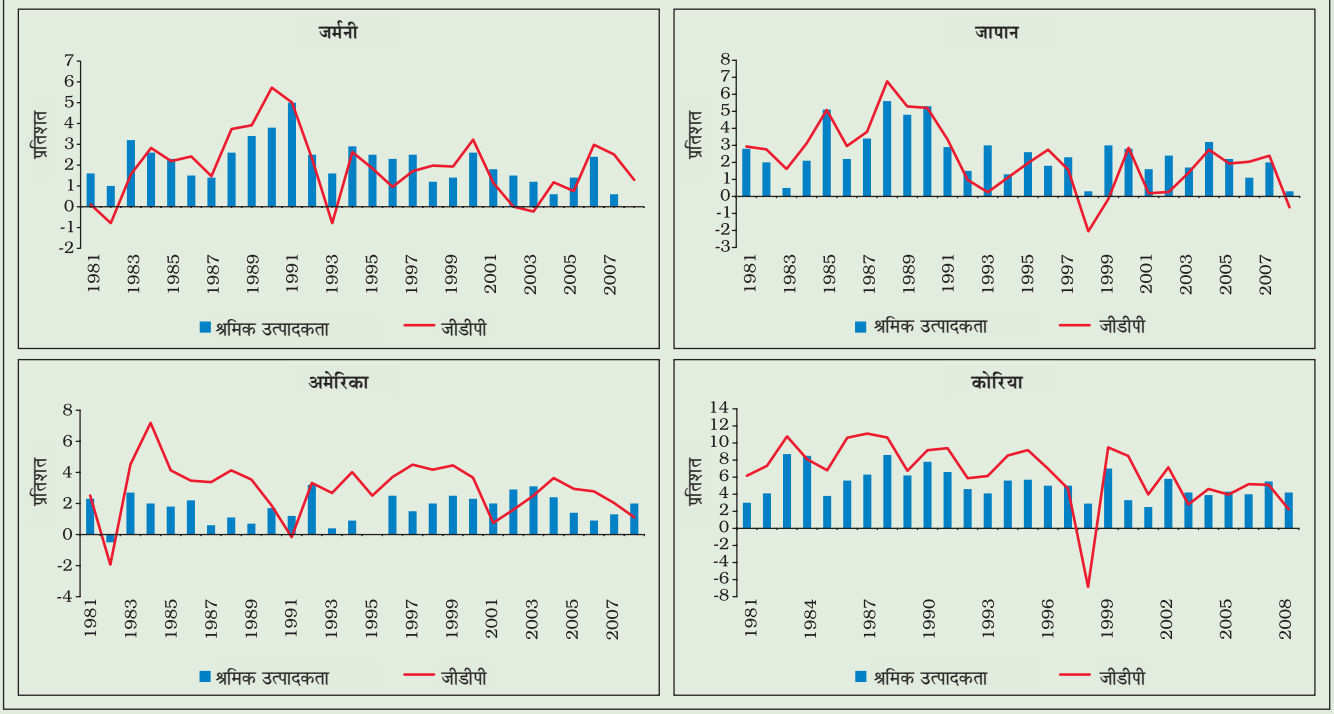

(जारी...)

(... समाप्त)

को चाहिए कि वह टीएफपी पर श्रमिक अशांति के प्रभाव का आवर्धन करे।

वर्तमान वित्तीय संकट आवास क्षेत्र में गिरावट से उत्पन्न हुआ जिसकी निर्माण क्षेत्र के साथ प्रत्यक्ष संबद्धताएँ हैं। निर्माण क्षेत्र अमेरिका में श्रमिक उत्पादकता में हुए पतन में एक महत्वपूर्ण प्रेरक के रूप में उभरा। निर्माण क्षेत्र कुल जीडीपी का लगभग 5 प्रतिशत है, लेकिन उत्पादकता के खराब निष्पादन के कारण वह कुल उत्पादकता पर एक उल्लेखनीय अवरोध रहा है। 2007 में निर्माण में एक अथाह ऋणात्मक 12 प्रतिशत श्रमिक उत्पादकता वृद्धि कुल उत्पादकता वृद्धि के ऋणात्मक 0.6 प्रतिशत अंक रही (ओईसीडी 2009)।

अमेरिका में नये आवास-भवनों का निर्माण 2006 के प्रारंभ तक अत्यधिक रहा, परंतु उसके बाद वह क्रमश: घटने लगा। समांतर रूप में निर्माण क्षेत्र में ऋणात्मक श्रमिक उत्पादकता वृद्धि 2005 में एक अल्पकालिक सुधार के बाद 2006 और 2007 में पुन: कम होने लगी। इसने एक अत्यधिक गंभीर आपूर्ति की समस्या को सूचित किया। इसके विपरीत, 2005 में आवास कीमत का खतरा (बबल) अभी बढ़ रहा था; वह 2006 के दौरान उपयुक्त स्तर पर आ गया, परंतु 2007 के प्रारंभ में इसमें गिरावट होने लगी। यह उल्लेखनीय महत्व की बात है कि बंधक और सब-प्राइम व्यापार में तेजी के वर्ष (2005-2006) उन अवधियों के साथ निश्चित रूप से मेल खाते हैं जहाँ उत्पादकता के निष्पादन में तेजी से गिरावट हो रही थी, मानो विस्तारित ऋण की स्थितियों के माध्यम से माँग में बड़ी तेजी आपूर्ति की ओर की समस्याओं की क्षतिपूर्ति कर सकी हो। यह स्पष्ट सबूत उपलब्ध था कि आवास क्षेत्र पर दबाव मुख्य रूप से आवास बाजार के वास्तविक रूप में निक्रिय होने से पहले उत्पादकता में गिरावट से उत्पन्न हुआ। दूसरी ओर आवास क्षेत्र में वास्तविक गतिविधि से दूर आवास बाजार में वित्तीय गतिविधि की अनुपातहीन वृद्धि आवास कीमतों के बारे में आशावाद के असंतुलन तथा वित्तीय प्रणाली के पतन में परिणत हुई।

साधारण न्यूनतम समान अनुमान सूचित करते हैं कि वित्तीय संकट का जापान की तुलना में अमेरिका और कोरिया में उत्पादन पर उच्चतर ऋणात्मक प्रभाव पड़ा, जो संभवत: जापान में मंदी के लंबे चरण के कारण है। वित्तीय संकट का यह ऋणात्मक प्रभाव एक छद्म प्रकार द्वारा ग्रहण किया गया; उस अवधि के लिए जब संकट ने अर्थव्यवस्था को आहत किया तब वह 1 था, जबकि सामान्य वर्षों के लिए उसे 0 के रूप में परिभाषित किया गया।[1]

ऐतिहासिक रूप से यह देखा जा सकता है कि श्रमिक उत्पादकता का वित्तीय संकट के साथ महत्वपूर्ण संबंध है। चयनित देशों में श्रमिक उत्पादकता वृद्धि का औसत संबंध वित्तीय संकट कै दौरान और बढ़ जाने की प्रवृत्ति दर्शाता है। यह सूचित करता है कि उत्पादकता वृद्धि श्रमिक बाजार में आघात की प्रतिक्रिया में विस्तृत/संकुचित होती है।

समाहार के तौर पर उपर्युत विश्लेषण यह सुझाता है कि वित्तीय संकट की अवधि श्रमिक बाजार खंड पर दबावग्रस्त प्रभाव के कारण उत्पादकता वृद्धि को प्रभावित करती है। श्रमिक बाजार के आघात कुल उपादान उत्पादकता में गिरावट को प्रेरित करते हैं जो मंदी से ग्रस्त व्यावसायिक भावनाओं में निम्न निवेश गतिविधि के साथ अर्थव्यवस्था में उत्पादन पर वित्तीय संकट के प्रभाव को तीव्र बनाती है।

संदर्भ

1. अधियोन, पी., पी. अस्केनाजी, एन. बेर्मान, जी. सेट्टे और एल. एयमार्ड। 2008। "क्रेडिट कन्स्ट्रेन्ट्स एण्ड दी साइक्लिकैलिटी ऑफ आर एण्ड डी इन्वेस्टमेंट : एविडेंस फ्रॉम फ्रांस।" *पीएसई वर्किंग पेपर्स* 2008-26, पीएसई। (एकोलनर्माल सुपेरियेर)।
2. ब्यूलियो, जे.जे. और जे. मैटी। 1998। "दी वर्कवीक ऑफ कैपिटल एण्ड कैपिटल यूटिलाइजेशन इन मैन्युफैक्चरिडग।" *जर्नल ऑफ प्रोडक्टिविटी एनैलिसिस* / खंड 10:199-223।
3. बसानीनी, ए. और आर. दुवाल। 2006। "दी डिटैर्मिनैन्ट्स ऑफ अनएम्प्लायमेंट एक्रॉस ओईसीडी कंट्रीस : रीएसेसिंग दी रोल ऑफ पॉलिसीस एण्ड इनस्टीट्यूशन्स।" *ओईसीडी एकानॉमिक स्टडीज़* सं. 42, 2006।

[1] चयनित देशों के लिए 5 प्रतिशत से 10 प्रतिशत पर सूचक गुणांक सहित साधारण न्यूनतम समान (ओएलएस) पद्धति का विशेष विवरण निम्नानुसार है : डीएफआइएन =वित्तीय संकट।
अमेरिका वाय =2.17+पीडी 0.49-डीएफआइएन 3.18 एडीजे आर-एसक्यू 0.60 डीडब्ल्यू एसटीएटी 1.6
जापान वाय =0.03+पीडी 0.98-डीएफआइएन 1.19 एडीजे आर-एसक्यू 0.67 डीडब्ल्यू एसटीएटी 1.8
कोरिया वाय=1.13+पीडी 1.1-डीएफआइएन 2.4 एडीजे आर-एसक्यू 0.43 डीडब्ल्यू एसटीएटी 1.5

3.161 उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के अंतर्गत अमेरिका में 2009 की पहली तिमाही में श्रम किये गये कुल घंटों को 9 प्रतिशत की वार्षिकीकृत गति पर कम किया गया जब इससे पिछली तिमाही में भी इतनी ही बड़ी कटौती की गई थी जिससे मई 2009 तक बेरोजगारी की दर 9.4 प्रतिशत तक बढ़ गई। पिछले कुछ वर्षों में यूरो क्षेत्र के श्रमिक बाजारों ने बहुत सकारात्मक ढंग से कार्य किया जब रोजगार में मजबूत वृद्धि हुई थी, सहभागिता के स्तर बढ़ गए थे तथा बेरोजगारी की दरें निम्न थीं। तथापि, संकट के दौरान यूरो क्षेत्र मे बेरोजगारी की दर मार्च 2008 में 7.2 प्रतिशत तक पहुँच गई थी जो 25 वर्ष में सबसे ऊँची दर थी। वित्तीय अशांति और उससे संबद्ध तीव्र आर्थिक मंदी के प्रारंभ होने पर बेरोजगारी उल्लेखनीय रूप मे बढ़ने लगी (सारणी 3.45)। अगस्त 2009 में यूरो क्षेत्र की बेरोजगारी की दर 9.6 प्रतिशत पर थी - जो एक दशक में दर्ज उच्चतम दर थी। तब से वह और आगे बढ़कर अप्रैल 2010 में 10.1 प्रतिशत हो गई। बेरोजगारी दर में निरंतर

सारणी 3.45: बेरोजगारी की दरें

(प्रतिशत)

	यूरो 16 क्षेत्र 16	बुल्गारिया	चेक गणराज्य	डेनमार्क	एस्तोनिया	युनाइटेड किंगडम	हंगरी	लिथुआनिया	लात्विया	पोलैंड	रोमानिया	स्वीडन
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
2005ति1	9.4	10.8	8.1	5.2	9.0	4.7	6.8	9.6	9.4	18.2	7.7	7.4
2005ति2	8.9	10.2	8.0	5.1	8.2	4.7	7.3	8.7	9.4	18.3	7.4	7.9
2005ति3	8.7	9.6	7.8	4.7	7.2	4.7	7.3	7.7	8.8	17.7	6.7	7.8
2005ति4	8.9	9.8	7.9	4.2	7.1	5.1	7.4	7.1	8.0	16.9	6.9	7.6
2006ति1	9.2	9.2	7.7	4.2	6.1	5.2	7.4	5.8	7.4	15.6	7.0	7.5
2006ति2	8.2	9.2	7.2	4.1	6.3	5.4	7.4	5.7	7.3	14.4	7.2	7.3
2006ति3	8.0	9.2	7.0	3.7	5.6	5.5	7.5	6.1	6.4	13.3	7.6	6.9
2006ति4	8.1	8.4	6.6	3.7	5.6	5.5	7.6	4.9	6.2	12.3	7.3	6.6
2007ति1	8.0	7.6	5.8	4.1	5.0	5.5	7.2	4.5	6.4	10.8	6.4	6.4
2007ति2	7.3	7.0	5.5	3.7	5.1	5.3	7.2	4.2	5.9	9.8	6.7	6.1
2007ति3	7.3	6.9	5.1	3.9	4.3	5.3	7.3	4.3	6.1	9.3	6.4	6.0
2007ति4	7.3	6.2	5.0	3.4	4.1	5.1	7.8	4.4	5.5	8.6	6.2	6.1
2008ति1	7.6	6.1	4.5	3.2	4.0	5.2	7.6	4.3	6.1	7.5	5.7	5.9
2008ति2	7.3	5.9	4.4	3.1	4.1	5.3	7.8	4.5	6.2	7.3	5.8	6.0
2008ति3	7.3	5.3	4.3	3.3	6.4	5.8	7.8	6.4	7.5	7.0	5.8	6.2
2008ति4	7.9	5.1	4.5	3.7	7.7	6.3	8.1	8.2	10.3	7.0	5.9	6.7
2009ति1	9.3	5.9	5.5	4.8	11.0	7.0	9.2	11.2	13.3	7.5	6.2	7.5
2009ति2	9.2	6.4	6.5	6.1	13.5	7.7	9.8	13.5	16.4	8.0	6.4	8.4
2009ति3	9.4	7.0	7.3	6.2	15.2	7.8	10.5	14.3	18.8	8.5	7.2	8.6
2009ति4	9.8	8.0	7.4	7.1	15.6	7.8	10.6	15.9	20.2	8.9	7.6	8.8
2010ति1	10.5	8.6	7.8	7.1	19.0		10.9	17.4	21.5	9.7	उ.न.	8.9

स्रोत : यूरोपीय केंद्रीय बैंक।

बढ़ोतरी के पीछे यूरो क्षेत्र में श्रम के लिए कमजोर माँग के साथ श्रम की आपूर्ति में स्थिर वृद्धि थी। 2009 के प्रारंभ से आवेदकों को नौकरी के प्रस्तावों के अनुपात में उल्लेखनीय गिरावट सूचित करती है कि जापान में रोजगार में गिरावट और गहरी होने की संभावना है। उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के बीच वर्तमान संकट के दौरान भारत और चीन में से प्रत्येक ने दक्षिण अफ्रीकी खनन में क्रमश: 10 मिलियन नौकरियाँ और 14,000 नौकरियाँ खो दी हैं।

3.162 एकीकृत विश्व में आर्थिक संरचनाओं अथवा नीतिगत ढाँचों में भिन्नताओं का विचार किये बिना वर्तमान वैश्विक संकट द्वारा प्रत्येक क्षेत्र प्रभावित हुआ है। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में आर्थिक कार्यकलापों में मंदी के साथ वित्तीय बाजारों में अस्थिरताएँ वास्तव में हाल के वर्षों में देखे गये संवर्धित वैश्विक एकीकरण के कारण सभी तीनों सरणियों - व्यापार, वित्तीय और विश्वास - के माध्यम से उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में संक्रमित हुई थीं।इसके परिणामस्वरूप, संकट से पहले की अवधि में प्रमुखता प्राप्त विच्छेद (डीकपलिंग) सिद्धांत अमान्य किया गया है। वर्तमान वित्तीय संकट के संदर्भ में व्यापार प्रवाहों में तेज गिरावटों के लिए कारण कुल व्यापार में वैश्विक आपूर्ति शृंखलाओं की बढ़ती हुई उपस्थिति तथा वित्तीय बाजारों में तीव्र गतिविधियों को माना जा सकता है जिन्होंने वैश्विक व्यापार के वित्तीयकरण को प्रेरित किया। पण्य कीमतों में गिरावट वैश्विक व्यापार के मूल्य के लिए एक और आघात है तथा इसने निवल पण्य निर्यातकों को प्रतिकूल रूप में प्रभावित किया है। इस प्रकार इस संकट ने संवृद्धि की कार्यनीति की असुरक्षितता को रेखांकित किया है जो निर्यात की माँग पर अति-निर्भरता पर आधारित है। उपभोग और निवेश ने उत्पादन और उत्पादकता में गिरावट के अनुरूप तीव्र संकुचनों का साक्षात्कार किया। औद्योगिक उत्पादन का वैश्विक व्यापार में संकुचन की प्रतिक्रिया में पतन हुआ जबकि बेरोजगारी की दरों ने अब तक की सर्वाधिक ऊँचाइयों का स्पर्श किया है।

V. निष्कर्षात्मक टिप्पणियां

3.163 राष्ट्रों के बीच पूँजी का प्रवाह सिद्धांत रूप में दोनों पूँजी-आयातक और पूँजी-निर्यातक देशों को लाभान्वित करता है। परंतु ऐतिहासिक साक्ष्य, वर्तमान वैश्विक वित्तीय संकट द्वारा समर्थित होकर स्पष्ट रूप से यह दर्शाता है कि यह भी नये एक्सपोज़र निर्मित कर

सकता है तथा और नये जोखिम उत्पन्न कर सकता है। इस प्रकार के जोखिमों का विश्लेषण न करना और उन्हें न समझना, पूँजी खाते का उदारीकरण करने में अत्यधिक जल्दबाजी, पूँजी के आबंटन के अधिक बाजार-आधारित रूपों में अधिकाधिक अस्थिरता को संभालने के लिए अपर्याप्त विवेकपूर्ण सुरक्षित निधियों ने अनेक उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय अथवा मौद्रिक स्थिरता के साथ समझौता कर लिया है। एक एकीकृत विश्व में आर्थिक संरचनाओं, वित्तीय प्रणालियों और नीतिगत ढाँचों का विचार किये बिना वर्तमान वैश्विक संकट द्वारा प्रत्येत क्षेत्र प्रभावित हो गया है।

3.164 वैश्विक वित्तीय बाजारों के प्राय: सभी खंडों ने वित्तीय संकट के प्रकंपनों का अनुभव किया, यद्यपि उनकी मात्राएँ भिन्न-भिन्न थीं। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में अंतर-बैंक बाजार संकट द्वारा सर्वप्रथम प्रभावित हुए थे - बाजार का यह खंड एक तीव्र नकदी के संकट से पीड़ित हुआ क्योंकि प्रतिपक्षी जोखिमों की आशंका से बैंक एक दूसरे को उधार देने से विमुख हो गए थे। इसके बाद यह संकट मुद्रा बाजारों में व्याप्त हुआ, जैसा कि स्प्रेडों के असामान्य स्तरों, परिपक्वता अवधियों के न्यूनीकरण, तथा कुछ बाजार खंडों के संकुचन अथवा समापन में भी प्रकट हुआ। ऋण और मुद्रा बाजारों द्वारा अवरुद्धता का सामना करने तथा शेयर कीमतों का अचानक पतन होने के संदर्भ में बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं ने संचित हो रही मार्क-टू-मार्केट हानियों के कारण निधीयन और पूँजी आधार तक अपनी पहुँच में ह्रास का अनुभव किया। वित्तीय बाजारों पर दबाव अत्यंत बढ़ गया जब रिकार्ड स्तरों तक क्रेडिट स्प्रेड विस्तृत हुए और शेयर कीमतों का ऐतिहासिक रूप से निम्न स्तरों पर पतन हुआ जिससे बाजार के परिदृश्य में व्यापक अस्थिरता के लिए मार्ग प्रशस्त हुआ।

3.165 तथापि, उभरती अर्थव्यवस्थाओं में देशी अंतर-बैंक बाजार उन्नत देशों में स्थित ऐसे अंतर-बैंक बाजारों के समान गंभीर रूप से अवरुद्ध नहीं हुए, यद्यपि उन्होंने बड़ी सीमा तक कुछ चलनिधि दबावों का अनुभव किया जो संकट के परोक्ष (नॉक-ऑन) प्रभावों के कारण था। दूसरी ओर उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के शेयर बाजारों ने संकट की काफी गरमाहट को सहन किया क्योंकि विश्व भर में शेयर बाजारों ने अत्यधिक अस्थिरता, कीमतों, टर्नओवर परिमाणों में तीव्र गिरावटों और बाजार पूँजीकरण का साक्षात्कार किया। फिर भी, 2009 की दूसरी छमाही में वैश्विक शेयर बाजारों की स्थिति में समुत्थान (रिकवरी) के कुछ संकेत रहे हैं। विश्व भर के सरकारी बांड बाजारों ने आय में बड़े परिवर्तन (स्विंग) देखे जो मुख्य रूप से घनीभूत वित्तीय संकट के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभावों के परिणामस्वरूप था। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के कारपोरेट बांड बाजारों ने वर्तमान वित्तीय संकट के दौरान अपेक्षाकृत आघात-सहनीयता दिखाई, यद्यपि उभरती अर्थव्यवस्थाओं से कारपोरेट बांड निर्गम 2008 की दूसरी छमाही से स्प्रेडों की बढ़ोतरी के बीच उल्लेखनीय रूप में कम हो गया। पण्य कीमतों, जो संकट के प्रारंभिक चरणों के दौरान अभूतपूर्व ऊँचाइयों पर पहुँच गईं क्योंकि निवेशकों ने मूल्यह्रास हो रहे अमेरिकी डॉलर के मुकाबले बचाव की अपेक्षा की थी और संभवत: उच्चतर मुद्रास्फीति के विरुद्ध बचाव के रूप में भी उनकी अपेक्षा थी, ने सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स के पतन के बाद प्रवृत्ति में एक उलटाव को देखा जिसने आर्थिक गतिविधियों में एक मंदी को प्रेरित किया।

3.166 अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में बड़े पैमाने पर विघटनों तथा ह्रासमान समष्टि-आर्थिक स्थितियों की पृष्ठभूमि में वित्तीय संस्थाओं ने भी उल्लेखनीय रूप में हानि उठाई। वाणिज्य बैंकों ने लाभप्रदता में गिरावट और बड़ी मार्क-टू-मार्केट हानियों से पीड़ित हुए; तथा इसके परिणामस्वरूप चलनिधि समस्याएँ शोधक्षमता समस्या के रूप में परिवर्तित हुईं जिससे अमेरिका और यूरोप की अन्य परिपक्व अर्थव्यवस्थाओं में बैंक विफलताओं के लिए मार्ग प्रशस्त हुआ अर्थव्यवस्थाओं में सरकारों और केंद्रीय बैंकों द्वारा बड़े पैमाने पर प्रयास किये गये। दूसरी ओर उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की बैंकिंग प्रणाली ने संकट के दौरान विषाक्त परिसंपत्तियों के प्रति उनके सीमित एक्सपोज़र के कारण तथा पूर्वी एशियाई संकट के फलस्वरूप उनके तुलन-पत्रों को मजबूत करने के लिए किये गये विनियामक और पर्यवेक्षी उपायों की वजह से अपेक्षाकृत आघात-सहनीयता दर्शाई। उक्त संकट ने निवेश बैंकिंग उद्योग को लगभग महत्वहीन बना दिया, जबकि एक ही प्रकार की व्यवस्था वाले (मोनोलाइन) बीमाकर्ताओं और बचाव निधियों का कार्यनिष्पादन तीव्रता से प्रभावित हुआ। इसके परिणामस्वरूप, इस संकट ने अधिकाधिक संस्थाकरण और पारदर्शिता की दिशा में गति को बढ़ा दिया।

3.167 बैंकों और वित्तीय संस्थाओं द्वारा अवनति (डीलीवरेजिंग) और जोखिम-विमुखता के साथ ही ऋण की स्थितियों के सख्त होने से निजी क्षेत्र की ऋण वृद्धि में विशेष रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में एक तीव्र मंदी को प्रेरणा मिली जिसने वित्तीय संस्थाओं से वास्तविक अर्थव्यवस्था में संकट के संक्रमण के लिए माध्यम के रूप में कार्य किया। निजी क्षेत्र को बैंक उधार में समग्र गिरावट व्यापक आधार से युक्त थी, यद्यपि वह बंधकों सहित घरेलू ऋण के मामले में अधिक सुस्पष्ट थी। समन्वित नीतिगत प्रयासों के बावजूद उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में बैंक उधार हाल के महीनों के दौरान सीमित रहा, जबकि उभरती

बाजार अर्थव्यवस्थाओ में ऋण की वृद्धि को अभी आगे और बढ़ना है। एक और सरणी जिसके माध्यम से वित्तीय संकट ने वास्तविक अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया, विश्व व्यापार में संकुचन के माध्यम से था और विशेष रूप से 2008 की दूसरी छमाही के दौरान था। वर्तमान वित्तीय संकट के संदर्भ में व्यापार प्रवाहों में तीव्रतर गिरावटें कुल व्यापार में वैश्विक आपूर्ति शृंखलाओं की बढ़ती हुई उपस्थिति तथा वित्तीय बाजारों में तेज गतिविधियों के भी कारण थीं जिन्होंने विश्व व्यापार के वित्तीयकरण को प्रेरित किया। पण्य कीमतों में पतन वैश्विक व्यापार के मूल्य में एक और आघात रहा है तथा इसने निवल पण्य निर्यातकों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया। इस प्रकार इस संकट ने निर्यात की माँग पर अधि-निर्भरता पर आधारित संवृद्धि की कार्यनीति की असुरक्षितता को रेखांकित किया। व्यापार प्रवाहों में गिरावट के अतिरिक्त, उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को निवल निजी पूँजी प्रवाह भी उलट गये जिसने वैश्विक अवनति (डीलीवरेजिंग) तथा निवेशकों की ओर से जोखिम-विमुखता को प्रतिबिंबित किया और जिसने बाह्य वित्तपोषण की स्थितियों को सख्त बनाया। तथापि, यह प्रभाव देश की चालू खाता और राजकोषीय स्थिति के आधार पर भिन्न-भिन्न रहा। दूसरी ओर, विप्रेषण प्रवाह निजी पूँजी प्रवाहों की तुलना में अधिक स्थिर रहीं। विभिन्न देशों में चालू और पूँजी खाता संबंधी गतिविधियाँ हाल की अवधि में वैश्विक असंतुलनों को पुनः संतुलित करने के संकेत निर्दिष्ट करती हैं।

3.168 वैश्विक संकट जो मुख्य रूप से वित्तीय क्षेत्र में संकट से उद्भूत हुआ, व्यापक मंदी के रूप में परिणत हुआ तथा गंभीर उत्पादन हानि एवं बढ़ी हुई वैश्विक अनिश्चितताओं के लिए कारण बना। यह दिलचस्प बात है कि वैश्वीकरण, व्यापार और पूँजी प्रवाह जैसे कारकों ने, जो विश्व अर्थव्यवस्था की संवृद्धि और समृद्धि के प्रमुख संचालक थे, तीव्र संकुचन का साक्षात्कार किया। समकालिक वैश्विक आर्थिक मंदी ने विच्छेद (डीकपलिंग) सिद्धांत को चुनौती दी जो आर्थिक संकट से पहले की अवधि के दौरान उभर रहा था। वास्तव में, ईएमई में यह संकट सभी माध्यमों, जैसे व्यापार, वित्तीय और विश्वास सरणियों द्वारा संक्रमित हुआ जो हाल के वर्षों में देखे गये संवर्धित वैश्विक एकीकरण के कारण था। इसके परिणामस्वरूप जीडीपी संवृद्धि ने तीव्र संकुचन को देखा तथा 2009 के लिए आधारभूत (बेसलाइन) वैश्विक वृद्धि का परिदृश्य एक ऋणात्मक गतिमार्ग पर आ गया। अनेक देशों ने अपने संभावित उत्पादन में उल्लेखनीय हानियों को देखा। उपभोग और निवेश ने उत्पाद और उत्पादकता में गिरावट के अनुरूप तीव्र संकुचन का साक्षात्कार किया। औद्योगिक उत्पादन का वैश्विक व्यापार के संकुचन के प्रतिक्रियास्वरूप पतन हुआ, जबकि बेरोजगारी ने अभूतपूर्व ऊँचाइयों का स्पर्श किया।

3.169 जैसा कि वर्तमान संकट के दौरान प्रदर्शित हुआ, जबकि वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ व्यापार के बढ़ते हुए एकीकरण और पिछले एक दशक में अंतरराष्ट्रीय वित्त में उनकी फर्मों और घर-परिवारों के बढ़ते हुए महत्व ने उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए विपुल आर्थिक और वित्तीय लाभ पहुँचाये हैं, उन्होंने उन माध्यमों को भी विस्तृत कर दिया है जिनके द्वारा उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में आर्थिक गतिविधि में मंदी उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में व्याप्त हो सकी है। संक्रामकता के तीन प्रमुख माध्यमों से व्यापार माध्यम जिसकी वित्तीय और वास्तविक क्षेत्र के साथ दृढ़तम संबद्धताएँ हैं, ने उत्पादन और विश्वास की भारी हानि पहुँचाई है। कमजोर हो रही वैश्विक आर्थिक माँग की प्रतिक्रिया में विभिन्न देशों ने माँग को प्रोत्साहित करने के लिए समन्वित मौद्रिक-राजकोषीय उपाय किये हैं। राजकोषीय उपायों का प्रभाव 2009 की दूसरी तिमाही में समुत्थान (रिकवरी) के कुछ संकेत देने लगा है। एशिया में पुनरुत्थान द्वारा प्रेरित उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं से यह प्रत्याशित है कि वे समुत्थान की प्रक्रिया में अग्रणी रहें। तथापि, अधोमुखी जोखिम समग्र वैश्विक आर्थिक संभावना के लिए लगातार चुनौती प्रस्तुत कर रहा है तथा समुत्थान का स्वरूप विवेकपूर्ण उपायें के प्रति निर्गम की नीति के आधार पर निरंतर अनिश्चित बना हुआ है। वित्तीय बाजार की स्थितियाँ भी मजबूत सरकारी नीतियों द्वारा समर्थन पाकर उल्लेखनीय रूप में सुधर गई हैं, परंतु संकट से पूर्व की स्थिति तक वापस पहुँचने में अभी काफी यात्रा तय करना बाकी है। हाल के महीनों में दोनों उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में सर्वोत्तम आय वक्र काफी ढालू हो गए हैं जो कुछ कारकों के सम्मिश्रण को प्रतिबिंबित करते हैं, जैसे मौद्रिक नीति को सुकर बनाना, सुधरी हुई समुत्थान की संभावनाएं एवं अपस्फीति की न्यूनीकृत जोखिम।

4 संकट के प्रति अंतरराष्ट्रीय अनुक्रियाएं

4.1 हाल का वित्तीय संकट प्रबलता और गहनता, दोनों रूपों में अत्यधिक भयानक रहा है, जो कई देशों में इसके प्रभाव के प्रसारण की गति और वैश्विक मंदी के फैलाव के रूप में प्रतिबिम्बित हुआ है। जैसाकि पूर्व अध्याय में वर्णन किया गया है, इसके दूरव्यापी प्रभाव के कारण विनियामक, पर्यवेक्षी, केंद्रीय बैंकिंग और राजकोषीय नीति संबंधी अनुक्रियाएं पैमाने में अभूतपूर्व रही हैं जब उनको विश्वभर के विभिन्न क्षेत्राधिकारों में समन्वित किया गया। लगभग एक वर्ष के अल्पकाल में वैश्विक वित्तीय संकट से बचाने में प्रभावशाली और समन्वित नीतिगत कार्रवाइयां सफल रहीं और उसके बाद से कई प्रकार के सरकारी कार्यक्रमों की सहायता से विश्वभर में वित्तीय स्थितियां काफी सुधर गई हैं। हालांकि सबसे बुरे वित्तीय और आर्थिक परिणामों से बच गये, लेकिन नीतिनिर्माता और अकादमियां भविष्य में इस प्रकार के संकट की संभाव्यता और प्रचण्डता को कम करने के लिए समुचित नीतियां तैयार करने में जुटी हुई हैं।

4.2 हाल के वित्तीय संकट के कारण वित्तीय प्रणाली द्वारा अपने प्रमुख कार्यों - बचतों का आबंटन, निवेशों का वित्तपोषण, आस्तियों का मूल्यनिर्धारण और जोखिम अंतरण, को निष्पादित करने में असफलता, रहे थे। इसने अनुक्रियाओं के मूल्यांकन और अंशांकन के रूप में नीति निर्माताओं के सामने मुश्किल चुनौती प्रस्तुत की। इसके अतिरिक्त, जहां अर्थव्यवस्थाओं के बीच उच्च अंतर-संबद्धता के मद्देनजर घरेलू स्तर पर संकट का प्रबंध मुश्किल पाया गया, वहीं वैश्विक स्तर पर अधिक जटिल पाया गया। यह महसूस किया गया कि नीति-निर्माताओं को संकट की अभिव्यक्तियों पर सरसरी प्रतिक्रिया नहीं देनी चाहिए, बल्कि ऐसी घटनाओं की पुनरावृत्ति को कैसे रोका जाये, उस पर दीर्घकालिक नज़रिया रखना चाहिए। इस प्रकार, संकट के उभरने के बाद, सुव्यवस्थित नीतिगत अनुक्रिया का अत्यधिक महत्त्व हो गया, क्योंकि केवल वही तेज गति से सामान्य स्थिति बहाल कर सकती थी। सु-सम्मिलित नीतिगत अनुक्रिया के अभाव में बहाली की प्रक्रिया लंबी हो सकती थी जिससे व्यापक आर्थिक संकट खड़ा हो सकता था।

4.3 वित्तीय संकट मुश्किल से ही पिछले स्वरूप को दोहराते हैं। हालांकि, इन तमाम वर्षों में संकट से प्राप्त सबकों और प्रत्येक क्रमिक संकट से प्राप्त ज्ञान ने आने वाले संकट के प्रबंध के बारे में दूरदृष्टि प्रदान की है। हाल के संकट के अनुभव ने काफी हद तक न्यून मुद्रास्फीति और अपेक्षाकृत उच्चतर विकास के अंतर्गत स्थिर समष्टि-आर्थिक स्थितियों के स्थापित पूर्वकथित तथ्यों को चुनौती प्रदान की है। इसके अलावा, भिन्न-भिन्न देशों में एक जैसी प्रतीत होती समस्याओं के बावजूद नीतिगत अनुशंसाएं काफी भिन्न थीं। दीर्घकालिक और अल्पकालिक, दोनों प्रकार की कई शक्तियां कार्य कर रही थीं, जिन्होंने नीति संबंधी दुविधाएं उत्पन्न की।

4.4 हाल के वित्तीय संकट के मामले में यह देखा गया कि संकट के फैलने के साथ, इसके समाधान ने भी पूर्ववर्ती ऐसी घटनाओं की तुलना में कुछ विशिष्ट विशेषाताएं प्रदर्शित की हैं। पूर्व में ऐसी घटनाएं बिना ऋण चूक अदला-बदली, विशेष निवेश माध्यम या क्रेडिट रेटिंग के घटित हुई थीं। वर्तमान संकट ने वित्तीय प्रणाली की भयंकर समस्याओं को उजागर किया। विश्व अर्थव्यवस्था की वर्धित अंतर-संबद्धतता के कारण कई देशों में आर्थिक प्रभाव का फैलाव जिस तेजी से हुआ वह बिल्कुल नयी बात थी।

4.5 हाल के वित्तीय संकट की एक और विशिष्ट विशेषता यह रही कि वैश्विक स्वरूप का होने के बावजूद, प्रभाव और नीतिगत अनुक्रियाओं के रूप में उन्नत देशों और उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) के बीच इसके स्वरूप में स्पष्ट अंतर दिखाई दिया। उन्नत देशों में, नीतियों की प्राथमिकता वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण को सुदृढ़ करने की थी। उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में नीतियों का ध्यान व्यापार में जबरदस्त गिरावट को कम करने और पूंजी के बहिर्वाह को रोकने पर रहा। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि पूर्वी एशियाई संकट के बाद कई उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं का नीति निर्धारण चलनिधि को नियंत्रित करने के उपाय शुरू करने पर था, जिसके कारण आर्थिक विकास में कमी हुई। इसके विपरीत, हाल के संकट में उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में विकास पर बल प्रदान करने के लिए दरों में कटौती और चलनिधि को बढ़ाने की अनुशंसाएं की गईं। इसके अलावा, वैश्विक समस्याओं के अर्थपूर्ण समाधान तलाशने के प्रयास में सहभागिता के लिए पहली बार उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं को आमंत्रित किया

गया। इस प्रकार संकट ने उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं की स्पष्ट भूमिका को रेखांकित किया है और उनको वैश्विक आर्थिक मंच के केंद्र पर ले आया। जी-20 की बढ़ती संलग्नता इसका उदाहरण है।

4.6 इस अध्याय में हाल के वित्तीय संकट के दौरान अंतरराष्ट्रीय समुदाय द्वारा किये गये उपायों पर परंपरागत संकट प्रबंध रणनीतियों के परिप्रेक्ष्य में चर्चा की गई है। भाग I में वित्तीय संकट के संबंध में नीतिगत अनुक्रियाओं का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य प्रदान किया गया है। भाग II में मौद्रिक नीति की अनुक्रियाओं का उल्लेख किया गया है। वित्तीय क्षेत्र की सहायता के लिए राजकोषीय नीति संबंधी अनुक्रियाएं और प्रति-चक्रीय उपायों के रूप में उनके सक्रिय अंगीकरण को क्रमश: भाग III और IV में बताया गया है। भाग V में राजकोषीय मौद्रिक समन्वय संबंधी मुद्दों का जिक्र है। बहुदेशीय संस्थाओं से प्राप्त अनुक्रियाएं भाग VI में दी गई हैं। भाग VII में इस आकार के वित्तीय संकट की पुनरावृत्ति के अवसर कम करने के लिए वित्तीय क्षेत्र संबंधी नीतियों के संबंध में की जा रही कार्रवाई के बारे में ब्योरा दिया गया है। अंतिम भाग में भविष्य में उभरती नीतिगत चुनौतियों के संदर्भ में निष्कर्षात्मक टिप्पणियां दी गई हैं।

I. वित्तीय संकट के दौरान नीतिगत अनुक्रियाएं : ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

4.7 जैसाकि अध्याय 2 में चर्चा की गई है, विगत में कई बैंकिंग और वित्तीय संकट आये हैं। ऐसे संकटों की आवृत्ति ने नीति-निर्माताओं और अकादमियों को संकट को नियंत्रित करने और ऐसी पुनरावृत्ति को रोकने के लिए पूर्ववर्ती संकट निवारण कार्यप्रणालियों से प्राप्त व्यापक सीखों के बारे में सोचने के लिए मजबूर कर दिया।

4.8 वित्तीय संकट की अनुक्रिया में पूंजीवादी दृष्टिकोण रखने वाले 'कोई प्रबंध नहीं' की बात करते हैं जबकि व्यावहारिक दृष्टिकोण रखने वाले अनेक विविध युक्तियों को शामिल करते हैं। पूंजीवादी दृष्टिकोण के अनुसार विकासकाल के चरण में बाज़ार तर्कपूर्ण होता है। अत: अपस्फीति और दिवालियापन तेजी के दौर की गलतियों को स्वत: ठीक कर देते हैं। 'इसे अपने हाल पर छोड़ दो' वाले परिसमापनवादी का यह मत है कि सरकार को इससे दूर रहना चाहिए और मंदी को स्वत: समाप्त होने देना चाहिए (हूवर, 1952)। हालांकि, असल में वित्तीय संकटों को कभी अपने हाल पर नहीं छोड़ा जाता है। प्राधिकारी और व्यक्ति, कुछ लिखतों अथवा अन्य का उपयोग कर बाज़ार में व्यवस्थित स्थिति लाने के प्रयास करते हैं। सैद्धांतिक स्थिति कि संकट में ही सुधार की शक्ति निहित है, को व्यवहार में लागू करना मुश्किल है, क्योंकि संकट को सहज रूप से दूर होने तक रुकने का किसी के पास धैर्य नहीं रखता। असल में प्राधिकारी उसी दिशा में कार्य करते हैं अर्थात् दिवालियापन को फैलने और गिरती मांग को रोकने के लिए एक या अधिक उपायों के जरिये हस्तक्षेप करते हैं।

4.9 जब संकट का पहला लक्षण दिखाई देता है, प्राधिकारी तत्काल और अस्थायी उपायों के जरिये इसका विलोपन करते हैं। उदाहरण के लिए, बैंकों से जमाराशि वापस लेने की होड़ की स्थिति में बैंक अपने जमाकर्ताओं को भुगतान करने के लिए कुछ समय लेने का प्रयास इस आशा में कर सकते हैं कि इस बीच की अवधि में कुछ हो सकता है। बाज़ार को पूरी तरह से बंद करने की तुलना में, जिससे दहशत और बढ़ती है, यह अधिक व्यावहारिक दृष्टिकोण साबित हो सकता है। ऐसे मामले में, बेहतर विकल्प विधिक अवकाश या ऋण-स्थगन की घोषणा करना हो सकता है और ऐसे स्थगन की अवधि अधिक लंबी नहीं हो सकती। दूसरी युक्ति संकट से घिरे बैंक के शेयर के लिए सर्किट-ब्रेकर लगाने की हो सकती है (जब दैनिक मूल्य परिवर्तन सीमा तक पहुंच जाता है तो बाज़ार स्वत: बंद हो जाता है)। हालांकि ये संकट का पहला लक्षण दिखाई देने पर तत्काल और अस्थायी उपाय करने के स्वरूप वाले अधिक हैं। लेकिन जब एक बार संकट पूरी तरह से सामने आ जाता है तो अधिक व्यापक और संपूर्ण नीति की जरूरत होती है। संकट निवारण नीतियों को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है : वित्तीय लिखतों के जरिये जैसे कि तात्कालिक समस्याओं के निवारण के लिए बैंकों को सीधे अंतरण; परिचालन संबंधी लिखत, जो अभिशासन, बैंक की कार्यकुशलता और लाभप्रदता में सुधार करने पर ध्यान केंद्रित करते हैं और संरचनागत लिखत, जो अंतर्निहित समस्याओं का निवारण करते हैं और प्रतिस्पर्धा एवं स्थिरता को बहाल करने पर ध्यान केंद्रित करते हैं (डजिओबेक, 1998)।

4.10 परम्परागत रूप से, वित्तीय संकट संबंधी नीतिगत अनुक्रियाएं द्वि-स्तरीय दृष्टिकोण अपनाती हैं। पहले चरण में, परम्परागत मौद्रिक नीति संबंधी लिखत जैसे नीतिगत दरों में कटौती, को चलनिधि बढ़ाने और तदर्थ हस्तक्षेप या संस्था विशेष को बचाने, की संयुक्त कार्रवाई की जाती है। दूसरे चरण में, पहले चरण में किये गये उपाय बाज़ार में विश्वास बढ़ाने में असफल हो जाते हैं तो बचाव योजना के रूप में व्यापक

नीतिगत अनुक्रिया लागू की जाती है (फरसेरी और मौरोगन, 2009क)। पूर्ववर्ती घटनाओं के समय संकट निवारण रणनीतियों में प्राय: तीन मुख्य कारकों के संदर्भ में कार्रवाई किये जा चुके हुते हैं : (i) देयताओं की गारंटी देना, (ii) प्रभावित संस्थाओं का पुन: पूंजीकरण और (iii) खराब आस्तियों को अलग करना प्राय: शर्तबंदी कार्यक्रमों के जरिये बैंकों का पुन: पूंजीकरण, निर्बंध गारंटी, विनियामक स्थगन, बैंक पुनर्संरचना एजेंसियां और आस्ति प्रबंध कंपनियां गठित करना संकट निवारण रणनीतियों की विशेषताएं रही हैं (लावेन और वालेन्सिया, 2008)।

4.11 विभिन्न समयों में हुए संकटों ने बाज़ार की प्रतिस्पर्धी शक्तियों पर पूर्णत: विश्वास करने के बजाय अंतिम ऋणदाता की भूमिका को बल दिया है। क्या अंतिम ऋणदाता की भूमिका कारोबारी मंदी, जो वित्तीय संकट के बाद आती है, को कम करने में समर्थ रही है? इसकी कई बार जांच की गई है। 1873, 1890, 1921 और 1929 के संकटों के दौरान अंतिम ऋणदाता की भूमिका की कारगर उपस्थिति का अभाव रहा था। अत: इनके बाद आई मंदी अन्य मंदियों की तुलना में काफी लंबी और गहन थी - 1870 और 1930 के दशक की मंदियां महामंदियों के रूप में जानी जाती हैं। तथापि, जब अंतिम ऋणदाता के विकल्प का प्रयोग किया गया, तब भी मंदी के बाद की प्रचण्डता को कम करने के लिए प्रयुक्त युक्ति की प्रभावशीलता के बारे में निर्णय लेना काफी कठिन था (किंडलबर्गर, 2000)। अंतिम ऋणदाता की भूमिका के बारे में किया गया बड़ा दावा यह है कि इनकी मदद से वित्तीय संकट से पूरी तरह बचा जा सकता है। इसके उदाहरण 1866 के बाद ब्रिटेन और 1929 के बाद अमरीका के अनुभव में मिलते हैं। अंतिम ऋणदाता की भूमिका के जुड़ने से संकटों की आवृत्ति और इनकी भयानकता में कमी आयी। 1930 के दशक में प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के एक समूह ने इस दृष्टिकोण का समर्थन किया कि अंतिम ऋणदाता की उपस्थिति अतिव्यापार की स्थिति में चिंताओं को कम कर सकती है (बॉक्स IV.1)।

बॉक्स IV.1
अंतिम ऋणदाता

हाल के वित्तीय संकट ने अंतिम ऋणदाता (एलओएलआर) और मौद्रिक नीति की समुचित भूमिका के बारे में गंभीर सवाल उठाये हैं। शिक्षाविदों और नीति निर्माताओं ने इस बात पर चर्चा की है कि केंद्रीय बैंक किस हद तक बाज़ार में हस्तक्षेप करें, चलनिधि प्रदान करें और मुसीबत वाली वित्तीय संस्थाओं की गैर-निष्पादक आस्तियों की खरीद करें। असल में, हाल की घटनाओं ने विश्वभर के केंद्रीय बैंकों को अपनी अंतिम ऋणदाता की सुविधाओं की सीमाओं की समीक्षा करने पर जोर दिया है।

अमरीकी इतिहास वित्तीय संकट के समय अंतिम ऋणदाता के महत्त्व पर कुछ अंतर्दृष्टि प्रदान करता है, विशेषकर अल्पकाल के लिए नकदी की तंगी वाली फर्मों को सहायता प्रदान करने के लिए वित्तीय संस्थाओं द्वारा चलनिधि का प्रावधान करना। 1907 की विपत्ति, जिसके साथ अमरीकी इतिहास का सबसे कम अवधि लेकिन सर्वाधिक भयानक वित्तीय संकट आया था, के बाद अमरीकी कांग्रेस ने कुछ महत्त्वपूर्ण विधान पारित किये, जिन्होंने अंतिम ऋणदाता के महत्त्व को प्रमाणित किया: (i) एल्डरिच व्रीलैंड अधिनियम 1908, जिसने वित्तीय संकट के दौरान बैंकों द्वारा अस्थायी रूप से मुद्रा आपूर्ति बढ़ाने की अनुमति प्रदान की, और (ii) फेडरल रिज़र्व अधिनियम 1913, जिसने एल्डरिच व्रीलैंड अधिनियम को प्रतिस्थापित किया और अमरीका में सार्वजनिक केंद्रीय बैंक स्थापित किया (मोएन और टालमैन, 2000)।

विधानों को मुद्रा आपूर्ति की लोच को बढ़ाने के लिए तैयार किया गया था। मुद्रा की आपूर्ति लोच मुख्यत: स्वर्ण की आपूर्ति द्वारा तय की जाती थी और यह अपेक्षित था कि बैंक केवल तभी नोट जारी कर सकते थे जब वे अमरीकी सरकार के बांडों द्वारा पर्याप्त रूप से समर्थित हों। मुद्रा की आपूर्ति विशेषकर फसली मौसम के दौरान लोचहीन होती थी, जब वित्तीय बाज़ारों में तरलता नहीं होती, क्योंकि नकदी केंद्रीय बैंकों से फसलें उगाने के लिए वित्त प्रदान करने के लिए दी जाती थी। वित्तीय सख्ती ने न्यूयार्क वित्तीय बाज़ार को शरत् मौसम में बैंकिंग और वित्तीय संकटों से असुरक्षित कर दिया, क्योंकि उम्मीद से बेहतर फसल होने पर वित्तीय संस्थाएं प्राय: नकदी के बड़े अप्रत्याशित आहरणों के कारण शेयर बाज़ार के ऋणों को मांगने के लिए बाध्य होती थीं। असल में, राष्ट्रीय बैंकिंग की अवधि (1870-1913) के बड़े वित्तीय संकटों में से कई शरत् फसली मौसम के दौरान हुए जिनमें 1870, 1890, 1893 और 1907 के संकट शामिल हैं (किम्मरर, 1910; मिरोन, 1986; स्प्राग, 1910)।

कुछ अध्ययनों से यह पता चलता है कि अंतिम ऋणदाता वित्तीय अस्थिरता को कम कर देता है। पहला, वित्तीय संकटों से बड़े आर्थिक प्रभाव हो सकते हैं। दूसरा, अंतिम ऋणदाता द्वारा चलनिधि का प्रावधान वित्तीय संकट, जिसके उल्लेखनीय समष्टि-आर्थिक प्रभाव हो सकते हैं, को फैलने से रोकने में सहायता कर सकता है। तीसरा, अंतिम ऋणदाता से जुड़ी अनिश्चितता से निवेश के बढ़ने और मंदी की अवधि के कम होने की संभावना होती है। चौथा, हालांकि कुछ अध्ययन चलनिधि संकट को रोकने के महत्त्व के बारे में सूक्ष्मदृष्टि प्रदान करते हैं, लेकिन वे अंतिम ऋणदाता की उस भूमिका के बारे में कुछ नहीं कहते, जब वित्तीय संस्थाओं की शोधक्षमता अनिश्चित हो (असाफ आदि 2008)।

केंद्रीय बैंक द्वारा अंतिम ऋणदाता के रूप में कार्य करने के बागेहोट परम्परा के अनुरूप, केंद्रीय बैंकों को तत्काल चलनिधि तक पहुंच की सुविधा प्रदान करनी चाहिए, लेकिन दंडस्वरूप ब्याज दरों और अच्छी संपार्श्विक प्रतिभूति पर। केंद्रीय

(जारी...)

(... समाप्त)

बैंक, अंतिम ऋणदाता के रूप में, ऐसी संस्था को उधार देना पसंद कर सकते हैं जो अल्पकालिक निधिक समस्याओं का सामना कर रही है, विशेषकर यदि संबंधित संस्था प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण है। इस संदर्भ में अनेक बातें सामने आती हैं। पहली, संस्था की शोधक्षमता का मूल्यांकन, क्योंकि व्यवहार में विशेषकर संकट की स्थितियों के दौरान ऐसे मूल्यांकन करना प्राय: कठिन होता है। दूसरी बात केंद्रीय बैंक द्वारा, प्रदान की जा रही संपार्श्विक प्रतिभूति की गुणवत्ता का मूल्यांकन करने की सामर्थ्यता। ऐसी संपार्श्विक प्रतिभूति अर्थसुलभ नहीं भी हो सकती है और केंद्रीय बैंक को ऋण जोखिम का सामना करने की संभावना रहती है। तीसरी, ऐसी सहायता के प्रकटन का समय निर्धारण करने की समस्या है। चौथी, अंतिम ऋणदाता के ऋण के बस पूरक ऋण होने की संभावना रहती है जब संस्था के अधिग्रहण या बड़ी पुनर्संरचना की जा रही होती है। पांचवीं, असफल होने वाली संस्थाओं का सुव्यवस्थित समाधान सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त उपकरणों की जरूरत होती है अर्थात् प्राधिकारियों द्वारा असफल बैंक पर पूर्ण या आंशिक नियंत्रण करने की सामर्थ्यता, समुचित पुनर्संरचना की व्यवस्था करना और समुचित वित्तीय सहायता प्रदान करना। अंत में, जब सहायता की जरूरत पड़े, तो व्यवस्था पहले से ही करने की आवश्यकता होती है जिसमें सरकार, केंद्रीय बैंक या जमाकर्ताओं का बीमा करने वाले बीमाकर्ता शामिल हो सकते हैं। जमाकर्ताओं के दावों के शीघ्र भुगतान में मदद करने के लिए सही विधिक और संस्थागत संरचना होना भी महत्त्वपूर्ण है (जी-20 अध्ययन दल)।

संदर्भ

1. मोएन, जोन और एलीस टालमैन, 2000, "1907 की हड़बड़ाहट के दौरान समाशोधन गृह सदस्यता और जमाराशि संकुचन" जर्नल ऑफ इकॉनॉमिक हिस्ट्री 60(1) : 145-63।
2. केम्मरर, ई. डब्ल्यू. 1910, "न्यूयार्क मुद्रा बाज़ार में मौसमी विचरण", अमरीकन इकॉनॉमिक रिव्यू, 1(1): 33-49।
3. मिरॉन, जे. 1986, "वित्तीय संकट, सांकेतिक ब्याज दर की सामयकिता और फेड का प्रवृत्तन ", अमरीकन इकॉनॉमिक रिव्यू, 76(1): 125-140
4. वैश्विक ऋण बाज़ार विघटन 2008 से संबंधित जी-20 अध्ययन समूह। आस्ट्रेलिया द्वारा तैयार आलेख।

4.12 गत संकटों से कई सबक उभर कर आये हैं:

(i) संकट के विरुद्ध सफल नीतिगत अनुक्रिया के लिए बाज़ार सहभागियों को प्रोत्साहन देने की जरूरत होती है। उदाहरणार्थ, अमरीका में 1932 में वित्तीय संस्थाओं, कारोबारी निगमों, राज्य और लोक निर्माण एवं कृषि को वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए पुनर्संरचना वित्त निगम की स्थापना करना संकट के निवारण के लिए महत्त्वपूर्ण था। यह मामला मेक्सिको में 'पुन्टो अंतिम ऋण राहत कार्यक्रम (1998)' की तरह ही था, जिसका लक्ष्य बंधकधारक, कृषि-कारोबार और एसएमई था।

(ii) लिखतों का चयन विधिक, विनियामक, राजनीतिक संस्थाओं और आर्थिक संरचना पर निर्भर करता है। इस संदर्भ में, विनियामक, पर्यवेक्षी और लेखांकन ढाँचे में किसी प्रकार की कमजोरी का प्राथमिकता के आधार पर निवारण करने की जरूरत होती है।

(iii) संकट के कारणों और इसकी गहराई की पहचान करने तथा उनको दूर करने के लिए तत्काल कार्रवाई शुरू करने की जरूरत होती है (कालोमिरिस आदि, 2005; ओईसीडी, 2002)।

(iv) पुनर्संरचना कार्यक्रमों के बारे में स्पष्टता और पारदर्शिता के साथ सुव्यवस्थित नीतियों से समाधान प्रक्रिया तेज हो सकती है और लागत एवं भावी जोखिम, दोनों कम हो सकते हैं। नीतिगत उपाय व्यापक और विश्वसनीय हों। कमजोर और दिवालिया वित्तीय संस्थाओं की वित्तीय समस्याओं तथा संरचनागत कमजोरियों को तत्काल दूर करने में समर्थ हों, साथ ही नैतिक खतरे की समस्याओं से बच सकें।

(v) बैंकों का पूंजीकरण, हालांकि संकट के सफल निवारण के लिए महत्त्वपूर्ण कारक है, फिर भी इसे केवल न्यून पूंजीकृत लेकिन व्यवहार्य संस्थाओं तक ही सीमित रखा जाये।

(vi) जहां निर्बंध गारंटी व्यापक विपत्ति के समय आवश्यक है वहीं इससे नैतिक जोखिम न हो और यह मुसीबत वाली संस्थाओं द्वारा अत्यधिक जोखिम उठाने की प्रवृत्ति को रोके। और उनके विश्वसनीय होने के लिए गारंटी तभी प्रदान किया जाये जब सरकार इसे चुकाने में समर्थ हो (फरसेरी और मोरोगन, 2009 ख)।

(vii) संकट निवारण की वह कार्यप्रणाली, जिसे अस्सी के दशक के अंत में और नब्बे के दशक के प्रारंभ में फिनलैंड, नार्वे और स्वीडन ने अपने बैंकिंग संकटों के निवारण के लिए अपनाया था, से पता चलता है कि बैंकिंग समस्याओं के स्वरूप और आकार की जल्दी पहचान की जानी चाहिए। अंतर्निहित आस्ति गुणवत्ता में आगे हो सकने वाली अवनति, जो निवारण की लगत को बढ़ा

सकती है, से बचने के लिए आवश्यक नीतिगत हस्तक्षेप जल्दी शुरू किये जायें।

(viii) वित्तीय संकट के कारण समष्टि-आर्थिक असंतुलनों के समायोजन में देरी से संकट की लागत काफी बढ़ सकती है और ऐसी स्थिति में विशेषकर गरीबों को चोट पहुंचा सकती है। इसका उदाहरण अस्सी के दशक में पेरू के अनुभव का अनुभव है (लस्टिग, 2000)।

(ix) नीतिगत हस्तक्षेप गहन और व्यापक होने चाहिए। स्थिति को काबू में करने के लिए आवश्यक उपाय करने के बाद प्राधिकारियों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि हानियों को हिसाब में लिया गया है, खराब आस्तियों का निपटान कर दिया गया है, प्रणाली में पुन: पूंजी डाल दी गई है और आधिक्य क्षमता को निकाल लिया गया है (बीआईएस 2009)।

4.13 वित्तीय संकटों के दौरान राजकोषीय नीतिगत अनुक्रियाओं से उभरे प्रमुख सबक इस प्रकार हैं:

(i) विकास को प्रेरित करने वाली नीति की तुलना में ऐसी राजकोषीय नीति अधिक सफल रही है जिसका उद्देश्य सीधे वित्तीय संकट का निवारण करना है। दूसरे शब्दों में, सतत विकास को हासिल करने के लिए वित्तीय संकट का सफल निवारण करना पूर्व शर्त है। इसका अर्थ यह हुआ कि वित्तीय अस्थिरता की समस्याओं का समाधान समष्टि-आर्थिक संकट के समाधान से पहले होना चाहिए। यह बात 1997 में जापान और कोरिया के वित्तीय संकट की अनुक्रियाओं के दौरान स्पष्ट हो गयी थी। जापानी सरकार ने प्रारंभ में बैंकिंग समस्याओं के निवारण के लिए अधिक कार्रवाई किये बिना अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने के लिए बड़े राजकोषीय प्रोत्साहन पैकेज के सहारे संकट के निवारण के प्रयास किये। अर्थव्यवस्था को राजकोषीय प्रोत्साहन से लाभ नहीं हुआ और वह लगातार मंदी के असर में रही। बाद में, मुसीबत वाले बैंकों की सहायता के लिए जब बड़ी निधियां उपलब्ध कराई गईं तथा साथ ही और प्रोत्साहन पैकेज शुरू किये गये, आर्थिक विकास में उछाल आया। इसके विपरीत, कोरियाई सरकार की राजकोषीय अनुक्रिया वित्तीय और कॉरपोरेट क्षेत्रों के तुलनपत्र को सुधारने पर केंद्रित रही। सकल मांग को बढ़ाने के लिए मामूली प्रयास किये गये। कोरियाई अर्थव्यवस्था जापानी अर्थव्यवस्था की तुलना में अधिक तेजी से पटरी पर लौटी।

(ii) जब-जब वित्तीय संकट कॉरपोरेट और घरेलू क्षेत्रों में फैला तब-तब राजकोषीय प्रोत्साहन प्रभावी रहा। यह तर्क दिया जाता रहा है कि महामंदी के दौरान आर्थिक गिरावट का दौरा पर्याप्त राजकोषीय प्रोत्साहन के अभाव में लंबा रहा। हालांकि 1930 के दशक के दौरान अमरीका में सकल मांग को बढ़ाने के लिए सरकारी खर्चों में बढ़ोतरी की गई, लेकिन उनके साथ ही करों की दरों में अत्यधिक वृद्धि की गई थी (ब्राउन, 1956)। जब तक अमरीका में 1940 के दशक की शुरुआत में युद्ध के कारण सरकारी खर्च में अत्यधिक वृद्धि होती, उससे पहले सुदृढ़ स्वत:सुधारक शक्तियों के चलते अर्थव्यवस्था पटरी पर आ चुकी थी (बर्नानके और पार्किन्सन, 1989)।

(iii) वित्तीय क्षेत्र की समस्याओं के निवारण में देरी करने और अपर्याप्त मात्रा में निधियां आबंटित किये जाने से संकट की राजकोषीय लागत काफी बढ़ सकती है। यह अस्सी और नब्बे के दशक में अमरीका में हुए बचत और ऋण संकट से यही बात स्पष्ट होती है। संकट को जल्दी पहचानने और इसकी अनुक्रिया से जीडीपी के लगभग 3.3 प्रतिशत की सकल राजकोषीय लागत के बड़े हिस्से को बचाया जा सकता था।

(iv) यदि अनुक्रिया में संकट की विशिष्ट विशेषताओं पर उचित ध्यान दिया जाये तो सकल मांग पर राजकोषीय अनुक्रिया का प्रभाव बढ़ाया जा सकता है। नब्बे के दशक के प्रारंभ में नार्डिक संकट ने वित्तीय बाज़ारों में कमजोर आर्थिक कार्यकलाप को फैलने से रोकने के औचित्य को प्रमाणित किया था। इस प्रकार, संकट के शुरुआती दौर में लागू की गई कर और अंतरण नीतियां सकल मांग को प्रेरित नहीं कर पाईं (स्पिलिम्बर्गो, आदि, 2008)।

4.14 हाल का वैश्विक संकट कई मायनों में आर्थिक महामंदी से मिलता-जुलता है। दोनों ही संकटों के दौरान विश्वव्यापी वित्तीय संकुचन में अमरीकी अर्थव्यवस्था केंद्र में थी। दोनों ही घटनाओं में वित्तीय क्षेत्र में संकट के फैलने में चलनिधि और निधिक समस्याओं ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। हालांकि, नीतिगत अनुक्रियाएं एक जैसी नहीं रहीं। महामंदी के दौरान स्टार्लिंग ब्लॉक के अपवाद को छोड़कर प्रति-चक्रीय नीतिगत अनुक्रियाओं का पूरी तरह से अभाव रहा। इसके विपरीत, हाल के संकट में समष्टि-आर्थिक और वित्तीय क्षेत्र को नीतिगत सहायता का सुदृढ़ और तत्काल सहारा मिला (बॉक्स IV.2)।

बॉक्स IV.2
महामंदी और हाल के संकट के दौरान नीतिगत अनुक्रियाएं

महामंदी के बाद हाल के संकट से सबसे गंभीर मंदी आई। दोनों संकटों के बीच कुछ बातों की समानताएं थीं जैसे दोनों ही वित्तीय क्षेत्र में शुरू हुईं और मोटे तौर पर संपदा क्षेत्र में फैल गईं। दोनों ही मामलों में, वित्तीय संस्थाओं ने या तो चूक की अथवा उनको संकट से बाहर लाना पड़ा। दोनों ही संकट बुलबुले के फटने से शुरू हुए, बैंक ऋण बंद हो गये और न्यूनतर शून्य आबद्ध होने के कारण नीतिगत दरें अप्रभावी हो गईं। दोनों ही संकट अमरीका से शुरू हुए और बाद में अन्य देशों में फैले (कुकीरमैन, 2009)।

महामंदियों से जो सबक हमें मिले हैं आज उनके बारे में तीन मोटी सीखों पर सर्वसम्मति है अर्थात् (क) यदि केंद्रीय बैंक ने वित्तीय प्रणाली के अल्पकालिक स्थिरीकरण के लिए अंतिम ऋणदाता के रूप में अपने कार्य को महसूस कर लिया होता तो वित्तीय प्रणाली की विफलता से बचा जा सकता था; (ख) संकट के गहराने में अपस्फीति ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। अत: केंद्रीय बैंकों के लिए शून्य मुद्रास्फीति का लक्ष्य निर्धारित करना खतरनाक हो सकता है; और (ग) निश्चित विनिमय दर प्रणाली के समर्थन की विधि के रूप में स्वर्ण मानक अनर्थकारी था (सेछेट्टी, 1997)। वित्तीय संस्थाएं, जो जमा बीमा और विनियामक संरचना की प्रणाली शुरू करने के लिए गठित की जाने वाली थी, यह आश्वस्त करने के लिए कि बाज़ार सहभागी विभिन्न वित्तीय लिखतों के जोखिमपन के बारे में पर्याप्त जानकारी प्राप्त कर सकें, के गठन के लिए सबक।

महामंदी की शुरुआत कीन्स की क्रांति के पहले हुई थी। उसके बाद से कीन्स के नीति निर्धारणों की विचार एवं नीति निर्माण के अधिक व्यावहारिक मॉडलों हेतु प्रयास किये गये, आलोचना हुई और संश्लेषित किया गया। इसके परिणामस्वरूप, आज की दुनिया प्रसरणशील मौद्रिक नीतियों के संभाव्य हितकारी प्रभाव के बारे में बेहतर सुविज्ञ है। महामंदी और हाल के संकट के दौरान नीतिगत अनुक्रियाओं और नीति निर्माण संस्थाओं के रूप में काफी अधिक अंतर थे। पहला, हाल के संकट के दौरान मौद्रिक नीतिगत अनुक्रिया महामंदी के पहले तीन वर्षों के दौरान की तुलना में अधिक तीव्र और अधिक प्रभावशाली थी। दूसरा, महामंदी के पहले तीन वर्षों के दौरान संघ ने सहन किया, यहां तक कि मुद्रा आपूर्ति में पर्याप्त कमी को पुन: प्रबलित किया। वित्तीय प्रणाली में चलनिधि को बढ़ाने के बजाय अपने तुलनपत्र में और अधिक हानियों से बचाने के लिए प्राय: चूककर्ता संदेहास्पद बैंकों से निधियां निकाल लीं (फ्राइडमैन और शवार्ट्ज, 1963)। इसके विपरीत, हाल की घटना के दौरान प्रणाली में अत्यधिक चलनिधि डाली गई। तीसरा, महामंदी के समय बैंकिंग जमा राशि का कोई बीमा नहीं था जबकि हाल के संकट के गहराने पर बीमित राशि की सीमा बढ़ा दी गई। 1930-1933 की अवधि में जमाराशि का बीमा मौजूद होता, तो उस समय विफल हए अनेक बैंकों और संबद्ध मौद्रिक विघटनों को बचाया जा सकता था। उस समय बैंकों से कोई पूंजी की अपेक्षा नहीं होती थी जैसाकि अब है (कुकीरमैन, 2009)। चौथा, महामंदी के दौरान कई बैंकों के लुप्त होने के कारण बैंकिंग की संभाव्य उधारकर्ताओं की ऋणपात्रता के बारे में 'सूचना संबंधी पूंजी' का विनाश हो गया था जिसके कारण बैंकों की ऋण आपूर्ति में गंभीर और दीर्घकालिक कमी हुई थी। महामंदी के दौरान निवेश बैंकों द्वारा अदा की गई भूमिका को स्वीकार करते हुए ग्लास-स्टीगल अधिनियम, 1933 (बाद में 1999 में निरसन) पारित कर निवेश बैंकिंग और वाणिज्यिक बैंकिंग को यह सुनिश्चित करने के लिए अलग कर दिया कि निवेश बैंक की सट्टेबाजी वाणिज्यिक बैंकों को फिर से अस्थिर नहीं करेगी, जैसाकि महामंदी के दौरान किया था, जिससे अमरीका की बचत को हानि पहुंची थी। इसके विपरीत, हाल के संकट के दौरान प्राधिकारियों ने या तो दिवालिया वित्तीय संस्थाओं को स्वयं ने ले लिया या अन्य संस्थाओं द्वारा अधिग्रहण की व्यवस्था की। इसके परिणामस्वरूप, ऋण के प्रवाह पर संबद्ध प्रतिकूल प्रभाव कम रहे। हालांकि, बंधक समर्थित प्रतिभूतियों और अन्य संपार्श्वीकृत संरचना बाध्यताओं की जटिल संरचना के कारण पारदर्शिता में कमी के कारण ऐसी पूंजी का विनाश हुआ। अंत में, महामंदी को 'बैगर-दाइ-नेबर' नीतियों द्वारा पहचाना गया; स्मूट-हावले प्रशुल्क अधिनियम, 1930 में अमरीकी प्रशुल्कों में ऐतिहासिक रूप से अत्यधिक वृद्धि की और दूसरे देशों ने ऐसी ही कार्रवाइयां एवं प्रतिस्पर्धी अवमूल्यन कर बदला लिया, जिसके कारण अंतरराष्ट्रीय व्यापार में काफी कमी आई। ऐसी नीतियों के प्रतिकूल परिणामों के कारण व्यापारिक साझेदारों ने हाल के संकट के दौरान ऐसी कार्रवाइयां नहीं कीं। कुछ देशों द्वारा चुनिंदा माल पर प्रशुल्क लगाने के छुटपुट प्रयासों को छोड़कर, गुणवत्ता एवं स्वास्थ्य मानकों, साथ ही सुरक्षा कारणों से लगाने की सूचना मिली थी। असल में, विभिन्न नीतिगत कार्रवाइयों के रूप में देशों के बीच बेहतर समन्वय दिखाई दिया।

संदर्भ

1. कुकीरमैन, ए। 2009, "वर्तमान संकट और महामंदी - वे कितनी एक जैसी हैं? ", बरग्लास स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स और सीईपीआर।
2. सेछेट्टी, एस.जी। 1997, "महामंदी को समझना : वर्तमान नीति से सबक", एनबीईआर कार्य पेपर 6015, अप्रैल।
3. फ्रीडमैन, एम. और ए. श्वार्ट्ज, 1963, "अमरीका का मौद्रिक इतिहास, 1867-1960", प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।

4.15 इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वित्तीय संकटों को स्वत: ही ठीक हो जाने के लिए नहीं छोड़ा गया। नीतियों ने उनको रोकने में किसी न किसी रूप में मदद की। सभी संकट एक जैसे नहीं थे। अत: समस्याएं एक जैसी होने पर भी नीतिगत अनुक्रियाएं एक जैसी नहीं थीं। हालांकि, अनुभव ने संकट के निवारण के लिए अंतिम ऋणदाता के महत्त्व को प्रदर्शित किया है। समस्या की जल्दी पहचान, संकट के कारणों एवं

उसकी गहराई की पहचान और त्वरित कार्रवाई संकट के सफल निवारण के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। इसके अलावा, मौद्रिक नीति न केवल नीतिगत अनुक्रियाओं की मूल में रही बल्कि प्राय: यह संकट निवारण की रणनीति में कार्रवाई हेतु सबसे पहली कार्रवाई भी रही।

4.16 हाल के संकट में निधिक समस्याओं और नकदी समस्याओं के प्रारंभिक लक्षणों के संदर्भ में, वर्तमान वित्तीय संकट के प्रति पहले दौर की अनुक्रिया मुख्यत: केंद्रीय बैंकों और विनियामक प्राधिकारियों से आई। इसका उद्देश्य वित्तीय प्रणाली में लोगों का विश्वास बहाल करना और इसके द्वारा वित्तीय प्रणाली में स्थिरता के लिए आधार सृजित करना था। हालांकि, जैसे ही संकट का प्रभाव वैश्विक विकास पर दिखाई दिया, राजकोषीय, मौद्रिक और विनियामक नीतियां सहित अनुक्रियाओं का एक और दौर ऋण हानियों में परिवर्तित होती मंदी के दुष्चक्र को तोड़ने और बैंकिंग उद्योग को और प्रभावित करने से रोकने के लिए आवश्यक समझा गया। वित्तीय संकट और सकल मांग में कमी की दोहरी समस्या, जो एक दूसरे को हवा देती हैं, को दूर करने के लिए धीरे-धीरे यह राय बनी कि नीतिगत पैकेज के दो घटक होने चाहिए। दोनों के बीच स्पष्ट पारस्परिक क्रिया और सामंजस्य के मद्देनजर रखते हुए, एक घटक का उद्देश्य वित्तीय प्रणाली को पुन: सुदृढ़ कराना और दूसरे का उद्देश्य सकल मांग को बहाल करना था। संकट की अनुक्रिया में अंतरराष्ट्रीय सहयोग अभूतपूर्व स्तर का रहा है। सरकारें और केंद्रीय बैंक इस तथ्य को मानने में काफी लचीले रहे हैं कि कुछ देशों में अविचारित अनुक्रिया से अन्य देशों में धीरे-धीरे नैतिक खतरे का जोखिम बढ़ गया था। साथ ही, दूसरी ओर कुछ देश द्वारा इस कार्रवाई में साथ देने में हुई देरी ने अनुक्रिया के प्रभाव को कम करने का खतरा पैदा किया। अध्याय के आगे के भागों में मौद्रिक, राजकोषीय और विनियामक अनुक्रियाओं तथा इन अनुक्रियाओं के शुरू करने में अंतरराष्ट्रीय सहयोग के बारे में चर्चा की गई है।

II. मौद्रिक नीतिगत अनुक्रियाएं

4.17 ऋण स्प्रैड के रिकॉर्ड स्तरों तक व्यापक होने के साथ वित्तीय बाज़ारों पर दबाव बढ़ने और शेयरों के मूल्य अब तक के न्यूनतम तक पहुंचने के कारण सभी बाज़ारों में व्यापक अस्थिरता आ गई। यह हलचल ऋण और मुद्रा बाज़ारों से वैश्विक वित्तीय बाज़ारों के अन्य खंडों में पहुंची। यह संक्रमण उभरते बाज़ारों में भी फैल गया। इस वैश्विक वातावरण के मध्य कई देशों के केंद्रीय बैंकों ने प्रणालीगत जोखिम से बचने, बैंकिग प्रणाली में विश्वास बढ़ाने और आर्थिक मंदी को रोकने के लिए परंपरागत और गैर-परंपरागत, दोनों प्रकार के अभूतपूर्व नीतिगत उपाय प्रारंभ किये। अगस्त 2007 में शुरू हुए संकट के प्रारंभिक चरणों में नीति निर्माताओं का मुख्य ध्यान चलनिधि दबाव पर रहा। केंद्रीय बैंकों ने प्रारंभिक चरण में ही यह महसूस कर लिया था कि उन्हें कार्रवाई करनी है और चलनिधि के लिए बाज़ार की मांग में अचानक और तेजी से वृद्धि के कारण तेजी से कार्रवाई करनी है क्योंकि चलनिधि की आपूर्ति के स्रोत केवल वे ही थे।

4.18 मौद्रिक नीतिगत अनुक्रियाएं बाद में अधिक समन्वित हो गईं जो अलग अलग केंद्रीय बैंकों द्वारा नीतिगत दर में कटौती के रूप में शुरू हुईं थीं। यह प्रमुख केंद्रीय बैंकों द्वारा अदला-बदली व्यवस्थाओं के जरिये सीमापारीय चलनिधि प्रावधान, साथ ही नीतिगत दरों में अनेक बार की गयी कटौती के रूप में परिलक्षित हुई। अंतर-बैंक बाज़ारों में चलनिधि दबावों के निधीयन के साथ प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण संस्थाओं के सामने आई शोधक्षमता जोखिमों को संभालना नीति निर्माताओं के लिए महत्त्वपूर्ण बन गया। केंद्रीय बैंकों ने प्रारंभ में अपने बाज़ारों पर ही ध्यान केंद्रित किया। लेकिन सीमापारीय विश्वास, साथ ही कई बाज़ारों में विदेशी मुद्रा चलनिधि की जरूरत के कारण उन्होंने तेजी से सहयोग के अनेक माध्यम विकसित कर लिये। इनमें समन्वित नीतिगत घोषणाएं और विदेशी मुद्रा अदला-बदली ऋण व्यवस्थाएं शामिल थीं।

4.19 संकट के धीरे-धीरे फैलने के साथ, जहां उन्नत अर्थव्यवस्थाओं ने अपने प्रयासों को उस दिशा में समन्वित किया, वहीं उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं की अनुक्रिया इसके बिलकुल विपरीत थी। प्रारंभ में, कई उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं ने मुख्यत: अपनी घरेलू अर्थव्यवस्थाओं से उबरी चुनौतियों का सामना करने के लिए नीतिगत दरों को बढ़ाया। हालांकि, सितम्बर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स के असफल होने और संकट के गहराने के बाद उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं ने भी अपनी नीतिगत दरों को घटा दिया।

हाल के संकट के दौरान मौद्रिक नीतिगत अनुक्रियाएं

4.20 परंपरागत रूप से, केंद्रीय बैंक सामान्य परिस्थितियों में मूल्य स्थिरता के अनुरूप उत्पादन को सुगम बनाकर मूल्य स्थिरता को बनाये

रखने पर ध्यान केंद्रित करते हैं। कुछ मामलों में वे विदेशी मुद्रा विनिमय बाज़ारों में अस्थिरता को कम करने के लिए भी हस्तक्षेप करते हैं। हालांकि हाल के वित्तीय बाज़ार हलचल के दौरान प्रणालीगत वित्तीय दबाव ने मौद्रिक संप्रेषण को काफी रोका है। इसने मूल्य स्थिरता और उत्पादन के समष्टि-आर्थिक उद्देश्यों के संबंध में मौद्रिक नीति संबंधी अवस्थिति को काफी आसान बनाया है तथा वित्तीय स्थिरता को सामने लाया है। प्राथमिकताओं में परिवर्तन को एक से अधिक तरीके से व्यक्त किया गया है। नीतिगत अनुक्रियाओं के लिए बाज़ार का चुनाव असामान्य और कुछ मामलों में अभूतपूर्व रहा है जिसने केंद्रीय बैंक के हाल के कार्यों को "गैर-परंपरागत" बना दिया है (दिसयातात, 2009)। नीतिगत उद्देश्यों और कार्यान्वयन के प्रमुख लिखतों के आधार पर विभिन्न अनुक्रियाओं को परंपरागत और गैर-परंपरागत उपायों में बांटा जा सकता है (सारणी 4.1)।

उन्नत अर्थव्यवस्थाएं

4.21 हाल के वैश्विक वित्तीय बाज़ार की हलचल के परिणामस्वरूप मौद्रिक नीतिगत अनुक्रियाओं को आसन्न उद्देश्यों के अनुसार तीन श्रेणियों में बांटा जा सकता है। पहली श्रेणी में वे उपाय हैं जिनका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि बाज़ार दर नीतिगत दर के अनुरूप है। दूसरी श्रेणी में थोक अंतर-बैंक बाज़ारों में दबाव को कम करने के पहलकार्य शामिल हैं। तीसरी श्रेणी में ऐसी अनुक्रियाओं को शामिल किया गया है जिनका उद्देश्य विशिष्ट ऋण बाज़ारों, विशेषकर गैर-बैंक खंड, को

सारणी 4.1: केंद्रीय बैंकों के परंपरागत और गैर-परंपरागत उपायों का वर्गीकरण

	उपाय	तर्काधार	लिखत
1	2	3	4
I	**परंपरागत**		
1.	खुले बाज़ार के परिचालन (ओएमओ) और स्थायी सुविधाएं (एसएफ)	सामान्य अवलंब प्राप्त करना	रेपो, ऋण देना और केंद्रीय बैंक के बिल जारी करना
2.	खुले बाज़ार के विदेशी विनिमय मुद्रा संबंधी परिचालन	सामान्य अवलंब प्राप्त करना या सहज विनिमय दर	नकदी, अदला-बदली, व्युत्पन्न
3.	प्रत्यक्ष लिखत	ओएमओ और एसएफ का पूरक होना	रिज़र्व की अपेक्षा और ऋण सीमाएं
4.	संस्थाओं और बाज़ारों का अंतिम ऋणदाता	वित्तीय स्थितियों या बाज़ार चलनिधि दबाव को कम करना	विवेकाधीन उधार देना
II	**गैर-परंपरागत**		
क.	*चलनिधि बढ़ाने संबंधी उपाय*		
1.	मुद्रा बाज़ार में सीधे लिखत	मौद्रिक संप्रेषण को सुधारना और बाज़ार स्थिरता को बहाल करना	रिज़र्व की अपेक्षा और विनियामक चलनिधि अनुपात
2.	प्रणालीगत घरेलू चलनिधि व्यवस्थाएं	मौद्रिक संप्रेषण को सुधारना और बाज़ार स्थिरता को बहाल करना	असीमित घरेलू चलनिधि प्रावधान, प्रतिपक्षियों की सूची को व्यापक बनाना और संपार्श्विक अपेक्षाओं को आसान करना
3.	प्रतिभूति चलनिधि प्रावधान	मौद्रिक संप्रेषण को सुधारना और बाज़ार स्थिरता को बहाल करना	गैर-अर्थसुलभ को अर्थसुलभ प्रतिभूतियों में बदलना
ख.	*ऋण आसान करने के उपाय*	मौद्रिक संप्रेषण को बढ़ाना और ऋण बाज़ार के कार्यों को बहाल करना	लक्षित निजी प्रतिभूतियों की खरीद, प्रत्यक्ष ऋण प्रावधान, लक्षित प्रतिभूतियों में निवेशकों के लिए चलनिधि का प्रावधान
ग.	*मात्रात्मक सुगमता संबंधी उपाय*	जब नीतिगत दर शून्य से नीचे पहुंच जाये तब मौद्रिक संप्रेषण को समर्थ बनाना	सरकारी प्रतिभूतियों और विदेशी विनिमय की संक्रमित एकमुश्त खरीद
घ.	*विदेशी विनिमय को सुगम बनाने संबंधी उपाय*		
1.	विदेशी विनिमय चलनिधि बढ़ाना	विदेशी विनिमय के चलनिधि दबाव को कम करना	असीमिति चलनिधि प्रावधान, संपार्श्विक और प्रतिपक्षियों को व्यापक बनाना
2.	परस्पर केंद्रीय बैंक मुद्रा अदला-बदली व्यवस्थाएं	राष्ट्रीय बैंकों के विदेशी विनिमय परिचालनों को सहायता प्रदान करना	अदला-बदली

सहायता करना और वित्तीय स्थितियों को अधिक व्यापक करना है (बीआईएस, 2009)।

नीतिगत दर को कम करना

4.22 कम होती वैश्विक चलनिधि के जवाब में मौद्रिक नीतियां अत्यधिक अनुक्रियाशील और सहयोगी रहीं। 8 अक्तूबर 2008 को छह प्रमुख केंद्रीय बैंकों ने नीतिगत दरों में कटौती की समन्वित कार्रवाई का पहला दौर शुरू किया। इसी प्रकार, अन्य केंद्रीय बैंकों ने त्वरित कार्रवाई की। मई 2009 के अंत तक फेडरल रिज़र्व, बैंक ऑफ जापान, बैंक ऑफ इंग्लैण्ड, बैंक ऑफ कनाडा और स्विस नेशनल बैंक ने नीतिगत दरों को शून्य के करीब ला दिया। सितम्बर 2008 और मार्च 2009 के बीच फेडरल रिज़र्व ने जहां अपनी नीतिगत दरों में 200 आधार बिन्दु की कटौती की, वहीं बैंक ऑफ इंग्लैण्ड ने 450 आधार बिन्दु और ईसीबी ने 275 आधार बिन्दु की कटौती की। इस प्रकार, ब्याज दरों में कमी को व्यापक और सभी क्षेत्रों में लागू किया गया (सारणी 4.2)।

4.23 सभी केंद्रीय बैंकों के पास नीतिगत दरों को कम करने की गुंजाइश नहीं थी। मुद्रा को बदलने की आपाधापी ने हंगरी, आइसलैण्ड और रूस के केंद्रीय बैंकों को 2008 के अंत में अपनी नीतिगत दरों को बढ़ाने के लिए बाध्य किया हालांकि वहां मुद्रास्फीति में गिरावट आ रही थी और वास्तविक कार्यकलाप का स्तर धीमा था। तथापि, उन्होंने भी आगामी महीनों में धीरे-धीरे नीतिगत दरों को कम करना आरंभ कर दिया था।

4.24 उपायों की पहली श्रेणी में नीतिगत लक्ष्य के लिए अल्पकालिक दरों का सहारा लिया गया था। बैंक ऑफ इंग्लैण्ड और फेडरल रिज़र्व ने स्थायी सुविधाओं के लिए दिवसांत पर लागू दरों में परिवर्तन कर एक दिवसीय दरों पर प्रभावी अंतराल के विस्तार को कम कर दिया। इसके साथ ही, केंद्रीय बैंकों को काफी विस्तारित परिचालनों की एक दिवसीय ब्याज दरों पर प्रभाव को निष्फल करने के लिए आधिक्य आरक्षित निधियों को पुन: अवशोषित करना था। इसे कई प्रकार से लागू किया गया। बैंक ऑफ इंग्लैण्ड, स्विस नेशनल बैंक और रिक्सबैंक के केंद्रीय बैंक ने बिल जारी करना शुरू किया। ईसीबी और रिज़र्व बैंक ऑफ आस्ट्रेलिया ने धीरे-धीरे ब्याज वाली जमाराशियां स्वीकार करने के उपाय का सहारा लिया। फेडरल रिज़र्व ने ट्रेजरी से बड़ी जमाराशियां स्वीकार कीं और आरक्षित निधियों पर ब्याज अदा करना आरंभ किया।

4.25 नीतिगत दरों में तेजी से और काफी मात्रा में कमी किये जाने के बावजूद कई देशों में नीतिगत उपाय के रूप में ब्याज दर की सीमाएं उभर कर सामने आईं। वित्तीय बाज़ारों पर सतत दबाव और ऋण एवं चलनिधि जोखिम प्रीमियम में वृद्धि के साथ संप्रेषण कार्यप्रणाली में अत्यधिक बाधाएं आईं। उदाहरणार्थ, नीतिगत दरों और सरकारी बांडों के प्रतिफल में अत्यधिक कमी के बावजूद कॉरपोरेट बांडों का प्रतिफल बढ़ा। हालांकि बैंकों ने प्राय: अपनी निधिक लागतों में कमी को अपने ग्राहकों को अंतरित किया, लेकिन उन्होंने समग्र वित्तीय स्थितियों पर दर में कटौती के प्रभाव को निर्धारित कर ऋण मानकों को काफी सख्त बना दिया। कई उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में नीतिगत दरें ज्योंही ऐतिहासिक रूप से न्यून स्तरों पर पहुंची, न्यूनतर शून्य स्तर एक बाध्यकारी अवरोध बन गया और नीतिगत नियमों का पालन करना असंभव हो गया, क्योंकि ऐसे में बढ़ते उत्पादन अंतराल और मुद्रास्फीति की गिरती दरों के मद्देनजर ऋणात्मक सांकेतिक ब्याज दरों की जरूरत होती (बीआईएस, 2009) (चार्ट IV.1)।

सारणी 4.2 : उन्नत देशों में नीतिगत दरों में कटौती

देश/क्षेत्र	प्रमुख नीतिगत दर	नीतिगत दर (9 जुलाई 2009 को)		नीतिगत दरों में परिवर्तन (आधार बिन्दु)		
				सितं.08-जुला.09	अप्रैल 09-अग.09	सितं.09-अप्रैल 10
1	2	3	4	5		
आस्ट्रेलिया	नकदी दर	3.00	(8 अप्रैल 2009)	(-) 400	(-) 25	125
कनाडा	एक दिवसीय दर	0.25	(21 अप्रैल 2009)	(-) 250	(-) 25	0
यूरो क्षेत्र	मुख्य पुनर्वित्त परिचालनों पर ब्याज दर	1.00	(13 मई 2009)	(-) 275	(-) 50	0
जापान	गैर-संपार्श्वीकृत एक दिवसीय मांग दर	0.10	(19 दिसम्बर 2008)	(-) 40	0	0
यूके	आधिकारिक बैंक दर	0.50	(5 मार्च 2009)	(-) 450	0	0
अमरीका	फेडरल निधि दर	0.00 से 0.25	(16 दिसम्बर 2008)	(-) 200	0	0

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष और संबंधित केंद्रीय बैंकों की वेबसाइटें।

चार्ट IV.1 : मौद्रिक नीतिगत दरें : टेलर नियम से विचलन

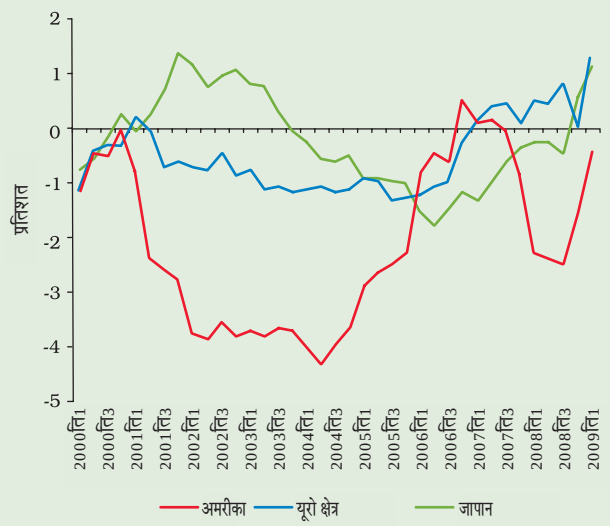

स्रोत: विश्व आर्थिक परिदृश्य डाटाबेस (अप्रैल 2009), आईएमएफ (2009 ग)

चलनिधि बढ़ाने संबंधी उपाय

4.26 इस जटिल और चुनौतीपूर्ण माहौल के बीच केंद्रीय बैंकों को ब्याज दर माध्यम से परे देखने और ऋण बाज़ारों की कार्यप्रणाली को बहाल करने एवं वित्तीय स्थितियों को सुगम बनाने के लिए सभी संभव तरीके ढूंढने के लिए बाध्य होना पड़ा। इस प्रकार उपायों का दूसरा समूह शुरू किया गया। इन उपायों का मुख्य ध्यान मीयादी अंतर-बैंक बाज़ार स्प्रेड, जिसे प्रमुख बाज़ार खंड में तनाव के संकेतक के रूप में देखा गया, को कम करने पर केंद्रित रहा। इसका दो प्रकार से निवारण किया गया। पहला, बाज़ार आपूर्ति में कुछेक कमी को पूरा करने के लिए प्रत्यक्ष रूप से अधिक मीयादी निधीयन प्रदान किया गया। दूसरा तरीका, अप्रत्यक्ष रूप से प्रणाली में आरक्षित निधियों के सुगम वितरण की बाधाओं को दूर कर तथा केंद्रीय बैंक से निधियों तक पहुंच सुनिश्चित कर किया गया (सारणी 4.3)।

4.27 उन्नत देशों के कई केंद्रीय बैंकों ने चलनिधि में सुधार के परंपरागत उपायों को विस्तारित किया जैसे केंद्रीय बैंक की मौजूदा सुविधाओं यथा - स्थायी उधार खिड़की, की शर्तों एवं उपलब्धता को आसान किया। दूसरा, इसके बाद वित्तपोषण की अवधि और प्रतिपक्षी वित्तीय संस्थाओं की श्रृंखला को बढ़ाकर केंद्रीय बैंक की उधार तक पहुंच को बढ़ाया गया। तीसरा, कई केंद्रीय बैंकों ने कम तरल बाज़ार प्रतिभूतियों की तुलना में अत्यधिक तरल प्रतिभूतियों, विशिष्टतया सॉवरिन बांडों, के लिए उधार देने की शुरुआत की या शर्तों को आसान बनाया, ताकि मुद्रा बाज़ार में निधीयन की स्थितियों को सुधारा जा सके। चौथा,

सारणी 4.3 : केंद्रीय बैंकों के हाल के चुनिंदा उपाय

श्रेणी	उद्देश्य	संख्या	अपनाया गया उपाय	फेड	ईसीबी	बीओई	बीओजे	बीओसी	आरबीए	एसएनबी
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
I	मौद्रिक नीति की	क	अपवादस्वरूप सही तालमेल के साथ कार्य करना	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ
	आधिकारिक अवस्थिति	ख	आरक्षित निधि अपेक्षाओं में परिवर्तन			हाँ				
	को प्राप्त करना	ग	एक दिवसीय दरों में अंतर को कम करना	हाँ	हाँ	हाँ				
		घ	आरक्षित निधियों पर ब्याज अदा करना	हाँ			हाँ			
		ङ	ट्रेजरी जमाराशि में वृद्धि	हाँ				हाँ		
		च	अल्पकालिक जमाराशि या केंद्रीय बैंक के बिल		हाँ	हाँ	हाँ		हाँ	हाँ
II	थोक अंतर-बैंक	क	बट्टा खिड़की सुविधा में संशोधन	हाँ		हाँ				
	बाज़ार स्थितियों को	ख	अपवादस्वरूप दीर्घकालिक परिचालन	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ
	प्रभावित करना	ग	पात्र संपार्श्विक प्रतिभूति को व्यापक करना	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ
		घ	पात्र प्रतिपक्षियों का दायरा बढ़ाना	हाँ		हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	
		ङ	अंतर केंद्रीय बैंक विदेशी मुद्रा अदला-बदली की ऋण व्यवस्थाएं	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ
		च	प्रतिभूतियां उधार देने की शुरुआत करना या स्थितियों को आसान करना	हाँ		हाँ	हाँ	हाँ		
III	ऋण बाज़ार को	क	सीपी निधीयन/खरीद/संपार्श्विक पात्रता	हाँ		हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	
	प्रभावित करना और	ख	एबीएस निधीयन/खरीद/संपार्श्विक पात्रता	हाँ	हाँ	हाँ			हाँ	
	व्यापक वित्तीय	ग	कॉरपोरेट बांड निधीयन/खरीद/संपार्श्विक पात्रता			हाँ	हाँ	हाँ		
	स्थितियां	घ	सार्वजनिक क्षेत्र की प्रतिभूतियों की खरीद	हाँ		हाँ	हाँ			
		ङ	गैर-सार्वजनिक क्षेत्र की प्रतिभूतियों की खरीद				हाँ			हाँ

खाली स्थान: नहीं

टिप्पणी : फेड : फेडरल रिज़र्व, ईसीबी: यूरोपीय केंद्रीय बैंक, बीओई : बैंक ऑफ इंग्लैण्ड, बीओजे : बैंक ऑफ जापान, बीओसी : बैंक ऑफ कनाडा, आरबीए : रिज़र्व बैंक ऑफ आस्ट्रेलिया, एसएनबी : स्विस नेशनल बैंक

स्रोत : बीआईएस की वार्षिक रिपोर्ट 2008-09 से लिया गया है।

पात्र संपार्श्विवक प्रतिभूतियों और प्रतिपक्षी कवरेज की सूची को बढ़ाकर आरक्षित निधियों संबंधी प्रावधान की शर्तों को काफी आसान बनाया गया तथा पुनर्वित्त परिचालनों की परिपक्वता को बढ़ाया गया। उदाहरणार्थ, अमरीका में संपार्श्विक प्राय: केवल बट्टा खिड़की पर उपलब्ध होता है, जिसे खुले बाज़ार के परिचालनों के लिए उपलब्ध कराया गया। यूके में कुछ अच्छी रेटिंग वाली आस्ति-समर्थित प्रतिभूतियों और रक्षित बांडों सहित अतिरिक्त प्रतिभूतियों को तीन महीने के रेपो परिचालन में स्वीकार किया गया। पांचवां, कई केंद्रीय बैंकों ने भी विदेशी मुद्रा विनिमय की अत्यधिक कमी को दूर करने के लिए विदेशी मुद्रा अदला-बदली या अन्य केंद्रीय बैंकों से ऋण लिये।

4.28 हालांकि ये चलनिधि बढ़ाने के उपाय अधिकांशत: केंद्रीय बैंक के अंतिम ऋणदाता के मानक कार्य के अनुरूप थे, लेकिन उनका दायरा और परिमाण परंपरागत स्तरों से काफी ऊपर थे। अधिकांश केंद्रीय बैंकों ने काफी संस्थाओं को पहले से अधिक और विगत की तुलना में व्यापक संपार्श्विकता के बदले मीयादी निधीयन सुविधा प्रदान की। कुछ मामलों में, वे विपदग्रस्त संस्थाओं को सीधे उधार देने के लिए आगे बढ़े और ऋण बाज़ारों में निधीयन की स्थिति में सुधार करने के लिए आम तौर पर न किये जाने वाले अन्य उपाय किये। संयुक्त राज्य अमरीका में फेडरल रिज़र्व ने अपने पुनर्वित्त परिचालनों की परिपक्वता अवधि को बढ़ाया। इसके अलावा, इसका बड़ा हिस्सा प्राथमिक डीलरों को फेड की मीयादी प्रतिभूति उधार सुविधा के द्वारा अपने तुलनपत्रों को सुधारने में सहायता करने के लिए कम तरल प्रतिभूतियों की व्यापक श्रृंखला के बदले उधार दिया गया। इसी प्रकार, बैंक ऑफ इंग्लैण्ड (बीओई) ने अपनी विशेष चलनिधि योजना के अंतर्गत अधिक चलनिधि प्रतिभूतियों की तुलना में कम चलनिधि प्रतिभूतियों में अदला-बदली करने की अनुमति प्रदान की। बीओई, ईसीबी और स्विस नेशनल बैंक (एसएनबी) ने दीर्घकालिक खुले बाज़ार के परिचालनों (ओएमओ) के स्थान पर अल्पकालिक परिचालन शुरू किये। पूर्ण आबंटन के साथ नियत दर पर अधिक नीलामियां भी की गईं। डॉलर अदला-बदली ऋण व्यवस्थाएं और संबद्ध डॉलर चलनिधि प्रदान करने वाले लेनदेनों की अधिकतम राशियों को काफी बढ़ाया गया और बाद में असीमित किया गया।

अंतर केंद्रीय बैंक अदला-बदली ऋण (स्वैप) व्यवस्थाएं और संपार्श्वीकृत उधार

4.29 अमरीकी डॉलरों की कमी की वजह से फेडरल रिज़र्व ने अंतर-केंद्रीय बैंक अदला-बदली ऋण व्यवस्थाओं का उपयोग किया। सितम्बर 2008 के मध्य में अमरीकी डॉलर की कमी बढ़ने तथा उसके और व्यापक होने पर फेडरल रिज़र्व के साथ अदला-बदली ऋण व्यवस्थाएं संख्या, समय-क्षेत्र, भौगोलिक विस्तार और आकार की दृष्टि से बढ़ गईं। अमरीकी डॉलर के वितरण परिचालनों की श्रृंखला के भागीदार केंद्रीय बैंकों के प्रस्ताव भी व्यापक हो गये। मुख्यत: दीर्घकालिक (एक और तीन महीनों के) प्रस्तावों को विस्तारित कर एक-सप्ताह को शामिल किया गया और एक निश्चित अवधि के लिए एक दिवसीय प्रस्ताव भी शामिल किये गये तथा मुख्यत: रेपो और संपार्श्वीकृत ऋणों, विदेशी मुद्रा विनिमय अदला-बदली को भी शामिल किया गया (बीआईएस, 2008)।

ऋण और मात्रात्मक सुधार संबंधी उपाय

4.30 जैसे ही संकट गहराया और ब्याज दर माध्यम अप्रभावी हो गया, इन देशों के केंद्रीय बैंक मात्रात्मक सुधार करने के लिए बाध्य हो गये। यह अनुक्रिया सीधे तौर पर गैर-बैंक क्षेत्र में ऋण स्थितियों की सख्ती में कमी करने और व्यापक वित्तीय स्थितियों को सुगम बनाने पर केंद्रित थी। इस मात्रात्मक सुधार के दो दृष्टिकोण रहे हैं। पहले दृष्टिकोण में, चलनिधि में सुधार करने के लिए गैर-बैंकिंग संस्थाओं को निधियां प्रदान की गईं और विशिष्ट बाज़ारों जैसे वाणिज्यिक पत्र, आस्ति-समर्थित प्रतिभूतियां और कॉरपोरेट बांड, में जोखिम स्प्रेड को कम किया गया। आधार प्रतिफलों को अधिक उदार ढंग से प्रभावित करने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र की प्रतिभूतियों को सीधे खरीदा गया। दूसरे दृष्टिकोण में, केंद्रीय बैंकों ने सरकारी या सरकार से गारंटीप्राप्त प्रतिभूतियों को बैंकों या अन्य संस्थाओं से खरीदा ताकि चलनिधि स्थितियों में सुधार हो। निजी बनाम सार्वजनिक क्षेत्र की प्रतिभूतियों और बैंक बनाम गैर-बैंक बाज़ार पर दिया गया सापेक्ष बल सभी देशों में भिन्न-भिन्न रहा। सरकारी प्रतिभूतियों को शामिल करने वाले गुणात्मक सुधार बैंक-केंद्रित प्रणालियों (जापान और यूनाइटेड किंगडम) में अधिक महत्त्वपूर्ण रहे। निजी प्रतिभूतियों से ऋण को सुगम बनाने में प्राय: बाज़ार-केंद्रित प्रणालियों (संयुक्त राज्य अमरीका) ने बड़ी भूमिका अदा की (बीआईएस, 2009)।

4.31 फेडरल रिज़र्व ने गैर-बैंक ऋण बाज़ारों, साथ ही निजी क्षेत्र की प्रतिभूतियों जैसे वाणिज्यिक पत्र निधीयन सुविधा और मीयादी आस्ति-समर्थित प्रतिभूति ऋण सुविधा, वाले परिचालनों पर अत्यधिक ध्यान केंद्रित किया। दूसरी ओर बैंक ऑफ इंग्लैण्ड ने प्रारंभ में मुख्यत: सरकारी बांडों की खरीद वाली अपनी आस्ति खरीद सुविधा पर ध्यान केंद्रित

किया। ईसीबी ने 12 महीने की अवधि तक की परिपक्वता के साथ नियत दर पर पूर्ण आबंटन वाले पुनर्वित्त परिचालनों का संचालन कर और रक्षित बांडों की खरीद कर बैंकिंग प्रणाली की चलनिधि पर ध्यान केंद्रित किया। बैंक ऑफ जापान के मामले में काफी प्रयास वाणिज्यिक पत्रों और कॉरपोरेट बांडों से संबंधित विभिन्न उपायों के जरिये फर्मों की निधीयन स्थितियों में सुधार करने की ओर निर्देशित रहे। केंद्रीय बैंक के बाज़ार परिचालनों के विभिन्न गैर-परंपरागत प्रयोग स्तरों को सारणी 4.4 से देखा जा सकता है।

सारणी 4.4 : केंद्रीय बैंकों द्वारा शुरू किये गये प्रमुख संकट निवारण हस्तक्षेप

केंद्रीय बैंक के हस्तक्षेप	अधिकतम राशि	जून 2009 के अंत में प्रयुक्त राशि
1 2	3	4
I. अमरीकी फेडरल रिज़र्व (बिलियन अमरीकी डॉलर में)		
1. *अल्पकालिक चलनिधि संबंधी प्रावधान*		
टीएएफ	**	282
सीपीएफएफ	***	114
2. *दीर्घकालिक चलनिधि प्रावधान*		
टीएएलएफ	1,000	25
3. *आस्तियों की एकमुश्त खरीद*		
एजेंसी बंधक-समर्थित प्रतिभूतियां	1,250	462
एजेंसी ऋण	200	97
ट्रेजरी प्रतिभूतियां	300	184
II बैंक ऑफ इंग्लैण्ड (बिलियन पौंड में)		
1. *आस्तियों की एकमुश्त खरीद*		
आस्ति खरीद सुविधा #	175	105
III. यूरोपीय केंद्रीय बैंक (बिलियन यूरो में)		
1. *अल्पकालिक चलनिधि प्रावधान*		
दीर्घकालिक पुनर्वित्त परिचालन @	असीमित	728
2. *आस्तियों की एकमुश्त खरीद*		
रक्षित बांड	60	0
IV. बैंक ऑफ जापान (बिलियन येन में)		
1. *अल्पकालिक चलनिधि प्रावधान*		
एसएफएसओएफसीएफ^	असीमित	7,467
2. *आस्तियों की एकमुश्त खरीद*		
वाणिज्यिक पत्र	3,000	197
कॉरपोरेट बांड	1,000	174

टिप्पणी : टीएएफ = मीयादी नीलामी सुविधा, सीपीएफएफ=वाणिज्यिक पत्र निधीयन सुविधा, टीएएलएफ= मीयादी आस्ति-समर्थित प्रतिभूति ऋण सुविधा, एसएफएसओएफसीएफ=कॉरपोरेट वित्तपोषण में सहायता के लिए विशेष निधि-आपूर्ति परिचालन।

** : राशि का निर्धारण प्रत्येक नीलामी में किया जाता है।

*** : प्रत्येक जारीकर्ता के लिए एक सीमा है।

: वाणिज्यिक पत्र, कॉरपोरेट बांड और उपहारों की खरीद।

@ : नियत दर पर एक वर्ष तक पूर्ण आबंटन आधार पर चलनिधि प्रदान करना।

^ : नियत दर पर 3 महीने तक आबंटन आधार पर, निजी ऋण लिखतों की संपार्श्विक प्रतिभूति पर चलनिधि प्रदान करना।

स्रोत : वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, अक्तूबर 2009।

4.32 कुछ मामलों में केंद्रीय बैंकों ने कॉरपोरेट उधारकर्ताओं को सीधे ही वित्त प्रदान किया। केंद्रीय बैंकों ने प्राय: लक्ष्य स्तरों की तुलना में ऋण प्रदान करने की शर्तों को आसान करने की सुविधाओं पर ऊपरी सीमाओं की प्राय: पहले ही घोषणा कर दी और ये ऊपरी सीमाएं स्वत: ही बदलती स्थितियों के अनुरूप समायोजित की गईं। चूंकि इन उपायों में महत्त्वपूर्ण अर्ध-राजकोषीय कारक निहित थे, अत: वे प्राय: सरकार के गहन समन्वय से किये गये। अपनाया गया दृष्टिकोण कोई भी हो, मात्रात्मक सुधार ने केंद्रीय बैंकों के तुलनपत्रों में कई गुणा विस्तार किया (बॉक्स IV.3)।

उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाएं

4.33 सितम्बर 2008 से पहले उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाएं पूंजी अंतर्वाह और मुद्रास्फीतिकारी दबावों में जकड़ी हुई थीं और नीतिगत दरों को वास्तव में बढ़ा कर चलनिधि स्थितियों को कठोर बना रही थीं। ज्योंही वित्तीय संकट ने उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं को निगला, इन देशों के केंद्रीय बैंकों ने वैश्विक चलनिधि स्थितियों के अचानक कठोर होने की अनुक्रिया में परंपरागत और गैर-परंपरागत, दोनों उपाय शुरू कर दिये। उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं ने चलनिधि को बढ़ाने और विदेशी मुद्रा विनिमय के कई उपाय किये, हालांकि ऋण को सुगम बनाने और मात्रात्मक सुधार के उनके प्रयोग अधिक सीमित रहे (सारणी 4.5)।

4.34 वैश्विक डॉलर बाज़ारों में दबाव के तीव्र होने पर इन अर्थव्यवस्थाओं की विनिमय दरें दबाव में आ गईं और निवल पूंजी अंतर्वाह वापस होने लगा तो उन्होंने विदेशी मुद्रा विनिमय चलनिधि को बढ़ाने के उपाय शुरू किये। नवम्बर 2008 के शुरू में ही कई उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में नीतिगत ब्याज दरें कम की गईं, जिन्होंने यह संकेत दिया कि गैर-परंपरागत उपायों की तुलना में परंपरागत घरेलू मौद्रिक नीति की सुगमता पीछे रह गई (इशी आदि 2009)। कई उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंकों ने चलनिधि बढ़ाने और नीतिगत दरों, जो काफी अधिक थी, में बारबार कटौती का सहारा लिया (चार्ट IV.2)।

उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में घरेलू चलनिधि बढ़ाने के उपाय

4.35 कई उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंकों ने घरेलू चलनिधि में कमी को दूर करने की दृष्टि से आरक्षित निधि अपेक्षा अनुपात में कटौती, आरक्षित निधि औसतन की शुरुआत और छूट की न्यूनतम सीमाओं में वृद्धि का सहारा लिया। उनमें से अधिकांश ने मौजूदा स्थायी और बाज़ार-आधारित चलनिधि सुविधाएं यथा परिपक्वताओं में वृद्धि, संपार्श्विक अपेक्षाओं को कम करना और नीलामियों की आवृत्ति में बढ़ोतरी करने की शर्तों को भी आसान बनाया। कई केंद्रीय बैंकों ने

बॉक्स IV.3
मात्रात्मक सुधार और केंद्रीय बैंक का तुलनपत्र

मात्रात्मक सुधार से केंद्रीय बैंक का तुलनपत्र बढ़ता है जिसके फलस्वरूप आरक्षित धनराशि में बढ़ोतरी होती है। फेड और बीओई की आस्तियां कुछ सप्ताहों में दुगुनी से अधिक हो गईं, जबकि ईसीबी और एसएनबी की आस्तियों में 30% से अधिक बढ़ोतरी हुई। फेड के मामले में, यह मौजूदा और नई ऋण सुविधाओं के जरिये बैंकों और डीलरों को सीधे उधार के रूप में प्रतिबिम्बित हुई। इसमें मुद्रा बाज़ार निधियों को अप्रत्यक्ष उधार प्रदान करना और विशेष प्रयोजन माध्यम के जरिये वाणिज्यिक पत्र की खरीद करना तथा डॉलर अदला-बदली ऋण व्यवस्थाओं से विदेशी केंद्रीय बैंकों द्वारा आहरण शामिल हैं। यूरोप में केंद्रीय बैंकों की स्थायी सुविधाओं के उपायों में थोड़ी वृद्धि, यद्यपि मामूली सी, हुई। केंद्रीय बैंकों के तुलनपत्रों में अधिकांश वृद्धि घरेलू और डॉलर चलनिधि प्रदान करने वाले ओएमओ की उच्चतर निवल राशियों में प्रतिबिम्बित हुई जो अधिकांशत: मीयादी निधीयन को निरूपित करती है। उन्नत देशों में इन आक्रामक गैर-परंपरागत उपायों जैसे मात्रात्मक सुधार, के कारण आरक्षित राशि और केंद्रीय बैंक के तुलनपत्रों के आकार में वृद्धि हुई (चार्ट क)।

सितम्बर 2008 से कई उभरते बाज़ार वाले देशों ने विदेशी मुद्रा विनिमय और घरेलू मुद्रा चलनिधि स्थितियों में सुधार करने के उपाय आरंभ कर दिये थे लेकिन गैर-परंपरागत उपायों ने उतनी महत्त्वपूर्ण भूमिका नहीं निभाई जितनी उन्होंने उन्नत देशों में निभाई थी। आरक्षित मुद्रा द्वारा प्रदत्त विदेशी मुद्रा विनिमय चलनिधि द्वारा कुछ मामलों में चलनिधि को बढ़ाने के उपाय जहां पुन:प्रबलित किये, वहीं केंद्रीय बैंकों ने अल्पकालिक चलनिधि दबावों को कम करने में कुछ सफलता प्राप्त कर ली लगती है। हालांकि, उभरते बाज़ार वाले देशों के केंद्रीय बैंक का तुलनपत्र उस आकार में नहीं बढ़ा जिसमें उन्नत देशों के प्रतिपक्षियों का बढ़ा है (जीएफएसआर अक्तूबर 2009)। उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंक के तुलनपत्र का आकार मात्रात्मक और ऋण को सुगम बनाने संबंधी उपायों के लगभग अभाव तथा कई मामलों में अंतरराष्ट्रीय आरक्षित निधि में कमी के कारण काफी कम बढ़ा (ईशी, आदि 2009)।

यह भारत और चीन जैसी उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में नकदी आरक्षित निधि अनुपात (सीआरआर) में बड़ी कटौती को भी प्रदर्शित करता है। सीआरआर में कटौती से बैंकों के पास चलनिधि और बढ़ती है, यह केंद्रीय बैंकों के तुलनपत्र और आरक्षित धन राशि के आकार में कटौती के रूप में भी दिखाई देता है।

केंद्रीय बैंक के तुलनपत्र में परिवर्तनों के प्रभाव

हाल के परिवर्तनों से केंद्रीय बैंक के तुलनपत्रों पर कई प्रभाव हो सकते हैं। पहला, संयोजन में बदलाव से केंद्रीय बैंक की जोखिम रूपरेखा में परिवर्तन हुए। केंद्रीय बैंकों द्वारा आस्तियों की खरीद जैसे बंधक-समर्थित प्रतिभूतियां और वाणिज्यिक पत्र, से उनके ऋण एवं मूल्य जोखिम बढ़ गये। पात्र प्रतिभूतियों, जो नई सुविधाओं के जरिये ऋण प्रदान करने के लिए संपार्श्विक प्रतिभूति के रूप में केंद्रीय बैंक स्वीकार करते हैं, के समूह और साथ ही पात्र प्रतिपक्षियों

चार्ट क : केंद्रीय बैंक के तुलनपत्रों का आकार

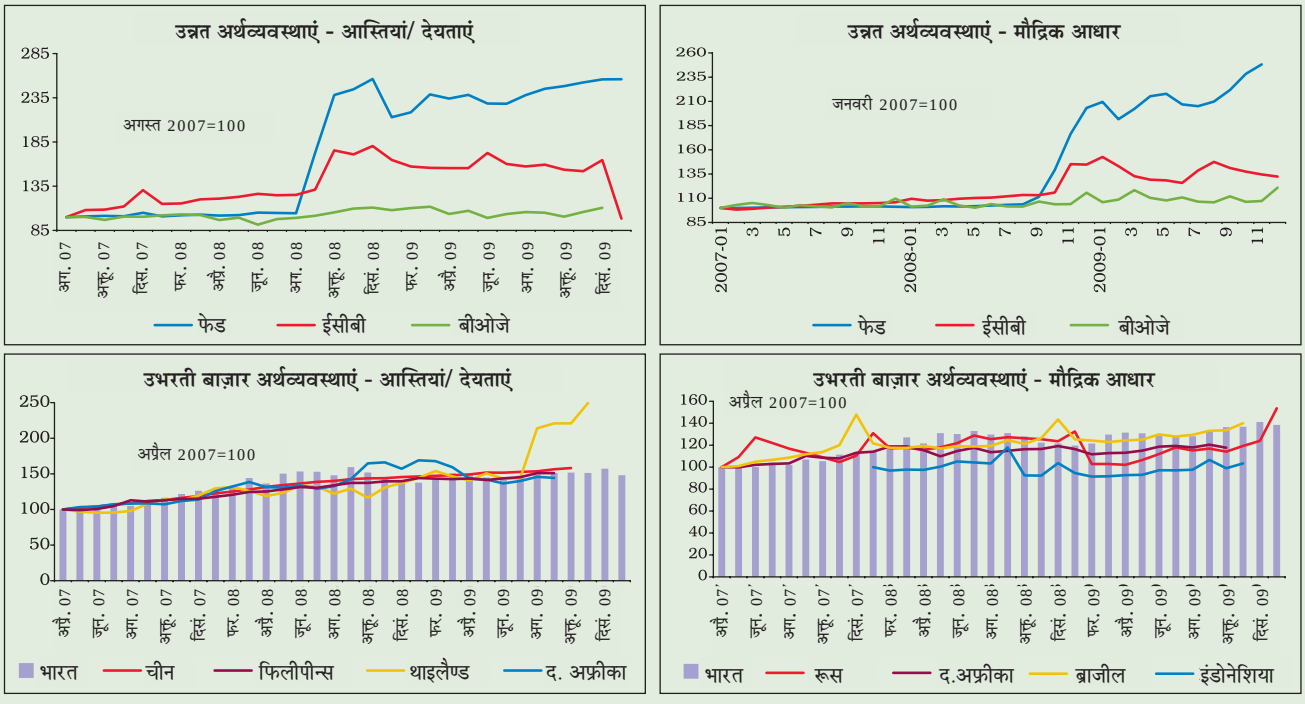

(जारी)

(समाप्त)

की संख्या में बढ़ोतरी करने से प्रतिपक्षी ऋण जोखिम बढ़ गया। दूसरा, केंद्रीय बैंकों की आय स्थिति में भी परिवर्तन हुआ। जहां बैंक नोट और आरक्षित निधियों से संबंधित आस्तियों पर केंद्रीय बैंक को कम प्रतिलाभ ने आय को घटाया, वहीं चलनिधि में बढ़ोतरी ने आरक्षित निधियों को बढ़ाया जिस पर ब्याज प्राप्त होता है, जिससे केंद्रीय बैंक का लाभ बढ़ता है। तीसरा, भविष्य में निकास रणनीति आरक्षित निधियों में चरणबद्ध कटौती की अपेक्षा कर सकती है जिससे आरक्षित निधियों को अचानक कम करने से वित्तीय बाज़ार विघटित हो सकते हैं। साथ ही, यदि मुद्रास्फीति की प्रत्याशाएं बढ़ जाती हैं तो केंद्रीय बैंकों को लक्षित नीतिगत दर सुनिश्चित करने के उपाय के रूप में पारिश्रमिक दर, जो वे आधिक्य आरक्षित निधियों पर अदा करते हैं, को बढ़ने की जरूरत पड़ सकती है। इसके कारण केंद्रीय बैंकों पर अतिरिक्त लागत का भार पड़ेगा, हालांकि तुलनपत्र में विस्तार के परिणामस्वरूप अतिरिक्त आय के द्वारा कुछ हद तक इसकी पूर्ति हो जायेगी, पर वे पर्याप्त आय जोखिम का सामना करते हैं (जीएफएसआर, अक्तूबर 2009)।

संदर्भ

1. इशी, कोटारो, मार्क स्टोन और एटीन्न बी. येहोऊ, 2009, "उभरती अर्थव्यवस्थाओं के लिए केंद्रीय बैंक के गैर-परंपरागत उपाय"। आईएमएफ कार्य आलेख डब्ल्यूपी/09/226
2. वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, अक्तूबर 2009

बाज़ार संस्थाओं को आगे उधार देने के लिए लक्षित संस्थाओं को घरेलू चलनिधि प्रदान की (सारणी 4.6)।

4.36 उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंकों ने मौजूदा विदेशी विनिमय सुविधाओं जैसे परिपक्वता बढ़ाने और संपार्श्विकता का दायरा बढ़ाने की शर्तों को आसान किया। उन्होंने डॉलर रेपो और अदला-बदली सुविधाएं जैसी नई विदेशी विनिमय सुविधाएं भी शुरू कीं। गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं और प्रमुख गैर-वित्तीय संस्थाओं (अर्थात् निर्यातक या ऊर्जा आयातकों) को शामिल कर प्रतिपक्षियों की सूची को विस्तृत किया गया। अपतटीय विदेशी मुद्रा विनिमय की बैंक खरीद की सीमाएं हटाने सहित विदेशी मुद्रा विनिमय चलनिधि सीमाओं में भी

सारणी 4.5 : उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंकों द्वारा चुनिंदा गैर-परंपरागत उपाय

	प्रकार	देश	उपाय
	1	2	3
I.	**घरेलू चलनिधि में सुधार**		
	1. प्रत्यक्ष मुद्रा बाज़ार लिखत	चीन, हंगरी, नाइजीरिया	आरक्षित निधि अपेक्षा में कटौती
	2. प्रणालीगत घरेलू चलनिधि व्यवस्थाएं	फिलीपीन्स	विदेशी मुद्रा मूल्यवर्ग की सावॅरिन ऋण प्रतिभूतियों को शामिल करने के लिए स्थायी रेपो सुविधा के लिए पात्र संपार्श्विक का विस्तार
		इज़राइल	विभिन्न प्रकार और परिपक्वता वाले सरकारी ऋण में ओएमओ लेनदेन करने की केंद्रीय बैंक की घोषणा
		चिली	वाणिज्यिक पत्रों को शामिल करने के लिए मौद्रिक परिचालनों के लिए पात्र संपार्श्विक की सूची को व्यापक बनाना
II.	**विदेशी विनियम को आसान बनाना**		
	1. *विदेशी मुद्रा चलनिधि बढ़ाना*	ब्राजील	केंद्रीय बैंक की 1 महीने की डॉलर चलनिधि ऋण-व्यवस्थाएं बेचने की घोषणा
		फिलीपीन्स	डॉलर रेपो सुविधा खोलने की केंद्रीय बैंक का अनुमोदन
		टर्की	दैनिक डॉलर बिक्री नीलामी की शुरुआत
		इंडोनेशिया	वाणिज्यिक बैंकों के लिए विदेशी मुद्रा विनिमय आरक्षित निधि अपेक्षा में कटौती
		सर्बिया	विदेशी आस्तियों की तुलना में अपेक्षित आरक्षित निधि में कटौती
	2. *परस्पर केंद्रीय बैंक मुद्रा अदला-बदली ऋण व्यवस्थाएं*	ब्राजील	फेडरल रिज़र्व, बान्को सेन्ट्रल डे ब्राजील, बान्को डे
		मेक्सिको	मेक्सिको, बैंक ऑफ कोरिया और सिंगापुर मौद्रिक
		कोरिया	प्राधिकारी के साथ अस्थायी परस्पर अदला-बदली
		सिंगापुर	ऋण व्यवस्थाएं
III.	**ऋण और मात्रात्मक सुधार**		
		कोरिया	वाणिज्यिक पत्र खरीदने के लिए बांड फंड को वित्तपोषण (एक सीमा तक) के लिए केंद्रीय बैंक की घोषणा
		इज़राइल	सरकारी बांडों की खरीद के लिए केंद्रीय बैंक की घोषणा

इशी आदि (2009) से लिया गया।

चार्ट IV.2 : सितम्बर 2008 से मार्च 2009 के दौरान नीतिगत दरों में कटौती

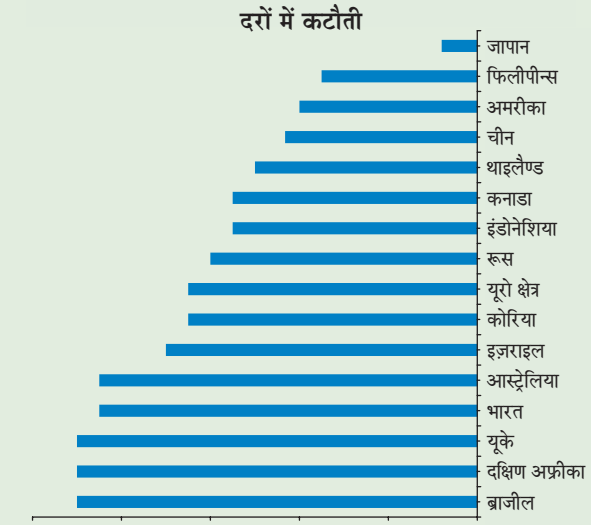

छूट दी गई और पूंजी अंतर्वाह सीमाओं को बढ़ाया गया। इसके अलावा, कुछ केंद्रीय बैंकों द्वारा बैंक की विदेशी मुद्रा देयताओं के लिए अपेक्षित आरक्षित निधि को कम किया गया और अपेक्षित आरक्षित निधियों की मुद्रा संरचना को विदेशी मुद्रा विनिमय से दूर अंतरित किया गया। विदेशी मुद्रा विनिमय चलनिधि स्थितियों को सुगम बनाने के लिए ब्राजील, कोरिया, मेक्सिको और सिंगापुर जैसे देशों के केंद्रीय बैंकों ने फेडरल रिज़र्व के साथ डॉलर अदला-बदली की व्यवस्थाएं कीं।

सारणी 4.6: चुनिंदा उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में कार्यान्वित उपाय (सितम्बर 2008 - मई 2009)

देश	चलनिधि बढ़ाने के उपाय	विदेशी मुद्रा विनिमय को सुगम बनाने के उपाय	
		विदेशी विनिमय चलनिधि बढ़ाना	परस्पर-केंद्रीय बैंक मुद्रा अदला-बदली
1	2	3	4
ब्राजील	12	9	2
मेक्सिको	1	1	2
चीन	4	1	
हांगकांग एसएआर	3	1	1
भारत	5	7	1
इंडोनेशिया	11	4	
कोरिया	5	4	5
मलेशिया	3	–	–
फिलीपीन्स	3	4	–
सिंगापुर	–	–	2

स्रोत: इशी आदि., (2009)।

4.37 अधिकांश प्रमुख उभरते बाज़ारों के केंद्रीय बैंकों ने विदेशी मुद्रा निधीयन की स्थानीय बाज़ार की मांग को पूरा करने में सहायता करने और विनिमय दर पर दबाव को कम करने के लिए विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों की एकमुश्त बिक्री की। इसके अलावा, कुछ केंद्रीय बैंकों (ब्राजील और फिलीपीन्स) ने पुनर्खरीद करारों के अंतर्गत प्रतिपक्षियों से विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों का प्रस्ताव मांगा। कुछ केंद्रीय बैंकों (कोरिया और इंडोनेशिया) ने विदेशी मुद्रा के वितरण को अधिक कार्यक्षम और लचीला बनाने के लिए अपनी मौजूदा विदेशी मुद्रा विनिमय अदला-बदली सुविधाओं में संशोधनों (प्रतिपक्षी पात्रता को व्यापक करने, अवधि को बढ़ाने) की घोषणा की। अन्य (ब्राजील, चिली और पोलैण्ड) ने नई अदला-बदली सुविधाएं शुरू कीं या यथा जरूरत प्रतिपक्षियों (हांगकांग एसएआर) के साथ अदला-बदली करने की अपनी तैयारी की घोषणा की (बीआईएस, 2008)।

ऋण एवं मात्रात्मक सुगमता संबंधी उपाय

4.38 उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के संबंध में ऋण एवं मात्रात्मक सुगमता संबंधी उपाय सीमित रहे हैं। उदाहरणार्थ, बैंक ऑफ कोरिया ने कॉरपोरेट बांड और वाणिज्यिक पत्र खरीदे, जबकि बैंक ऑफ इज़राइल ने मार्च और अगस्त 2009 के दौरान मात्रात्मक सुगमता संबंधी उपाय अपनाये।

4.39 जहां विकसित अर्थव्यवस्थाओं और उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं ने गैर-परंपरागत मौद्रिक उपायों का सहारा लिया वहीं उनके समय, प्रकार और परिमाण में अंतर था, (i) उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में नीतिगत दरों के शून्य या शून्य के नजदीक पहुंचने के कारण बदलाव परंपरागत मौद्रिक उपायों से गैर-परंपरागत उपायों की ओर था। इसके विपरीत, कई उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में वैश्विक चलनिधि के अचानक घटने के कारण मुद्रा अदला-बदली जैसे विदेशी मुद्रा विनिमय में ढील के गैर-परंपरागत उपायों से पहले घरेलू चलनिधि को बढ़ाने के उपाय किये गये। इसके बाद नीतिगत दरों में कमी के परंपरागत उपाय अपनाये गये। (ii) चलनिधि बढ़ाने के लिए उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंक अधिकांशत: प्रत्यक्ष उपायों जैसे आरक्षित निधि संबंधी अपेक्षाओं पर निर्भर रहे। दूसरी ओर उन्नत देशों ने प्रतिपक्षियों की उपलब्धता को व्यापक बनाने और चलनिधि प्रदान करने वाले परिचालनों की परिपक्वता को बढ़ाने जैसे उपायों का सहारा लिया। उन्नत देशों के केंद्रीय बैंकों ने प्रतिभूति चलनिधि प्रावधान अर्थात् अपनी बहियों में रखी हुई गैर-अर्थसुलभ वाली निजी क्षेत्र की प्रतिभूतियों के बदले प्रतिपक्षियों द्वारा धारित अर्थसुलभ सरकारी प्रतिभूतियां लेने के जरिये

चलनिधि को भी बढ़ाया। उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंकों ने प्रतिभूति चलनिधि के इस प्रावधान का मुश्किल से ही सहारा लिया। इसके अलावा, उन्नत देशों के केंद्रीय बैंकों ने ऋण एवं मात्रात्मक ढील संबंधी उपायों का काफी उपयोग किया, जबकि उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं द्वारा इनका मुश्किल से ही प्रयोग किया गया। (iii) ऋण एवं मात्रात्मक ढील के व्यापक उपयोग के मद्देनजर उन्नत देशों के केंद्रीय बैंकों के तुलनपत्र में वृद्धि उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना काफी अधिक थी (इशी आदि, 2009)।

नीति की प्रभावशीलता

4.40 अर्थव्यवस्था को प्रेरित करने के लिए केंद्रीय बैंकों के पास उपलब्ध मौद्रिक नीति संबंधी उपायों की सूची उस वक्त काफी व्यापक हो जाती है जब आधिकारिक दरें शून्य या इसके नजदीक हों। इनमें शामिल हैं : (i) मात्रात्मक ढील संबंधी नीति अर्थात् मुद्रा आधार को उस स्तर से भी अधिक बढ़ाना, जितना आधिकारिक दरों को शून्य रखने के लिए पूरी तरह से जरूरत है। इसका उद्देश्य चलनिधि जोखिमों को घटाना और वित्तीय मध्यवर्तियों को अपने ऋण बढ़ाने के लिए प्रोत्साहन प्रदान करना रहा है। (ii) दीर्घकालिक सरकारी प्रतिभूतियों की सीधी खरीद कर दीर्घकालिक ब्याज दरों को घटाने के उपाय और/या बाज़ार प्रत्याशाओं को प्रभावित करने के लिए भलीभांति तैयार किया गया संप्रेषण, और (iii) प्रतिभूतियों से लेकर इक्विटी तक निजी आस्तियों की व्यापक श्रृंखला की खरीद।

4.41 कुल मिलाकर केंद्रीय बैंकों द्वारा ऐसे व्यापक और गैर-परंपरागत हस्तक्षेपों ने चलनिधि पर अत्यधिक दबाव को कम करने में सहायता प्रदान की, जिससे कई प्रमुख बाज़ारों में गोचर सुधार हुए। उन्होंने चूक-मुक्त प्रतिभूतियों पर न केवल ब्याज दरों को कम किया, बल्कि ऋण स्प्रेड को कम करने में भी सहायता की।

4.42 आईएमएफ की वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट (अक्तूबर, 2009) के अनुसार:

(i) ब्याज दरों में कटौती की घोषणा प्रभावी सिद्ध हुई, हालांकि यह बहुत ही कम अवसरों पर प्रभावी रही जो आर्थिक दबाव सूचकांक (ईएसआई) में कटौती (सांख्यिकी रूप से सार्थक) के रूप में हुई परिलक्षित हुई। सामान्यत: कम नीतिगत दरों से वित्तीय संस्थाओं की निधीयन लागत कम रही जिसके चलते अतिरिक्त चलनिधि की जरूरत पड़ी (सारणी 4.7)।

सारणी 4.7: संकटकाल में हस्तक्षेप की प्रभावशीलता

सूचकांक/ संकेतक	आर्थिक दबाव सूचकांक		वित्तीय दबाव सूचकांक	
	ब्याज दर में कटौती	चलनिधि सहायता	ब्याज दर में कटौती	चलनिधि सहायता
1	2	3	4	5
अवधि I: लेहमन से पूर्व (जून 1, 2007 से सितम्बर 14, 2008)				
अमरीका	x	√	x	x
यूके	√	√	x	√
यूरो क्षेत्र	–	x	–	x
जापान	–	–	–	–
स्वीडन	–	√	–	x
स्विटजरलैण्ड	–	x	–	x
अवधि II: वैश्विक संकट 1 (सितम्बर 15, 2008 से दिसम्बर 31, 2008)				
अमरीका	x	x	√	x
यूके	x	x	x	x
यूरो क्षेत्र	x	x	√	√
जापान	x	x	√	√
स्वीडन	–	x	–	x
स्विटजरलैण्ड	√	x	√	x
अवधि III: वैश्विक संकट 2 (जनवरी 1, 2009 से जून 30, 2009)				
अमरीका	x	√	x	x
यूके	x	–	x	–
यूरो क्षेत्र	x	x	√	x
जापान	–	√	–	√
स्वीडन	–	x	–	x
स्विटजरलैण्ड	√	x	√	x

√ : 10 प्रतिशत के स्तर पर सांख्यिकीय रूप से उल्लेखनीय हस्तक्षेप निर्दिष्ट करता है।

X : सांख्यिकीय रूप से नगण्य को निर्दिष्ट करता है।

– : यह सूचित करता है कि दी गई उप-अवधि के दौरान दो नीतिगत घटनाओं से कम हुईं।

हस्तक्षेप संबंधी घोषणाओं के अल्पकालिक प्रभाव की सांख्यिकीय सार्थकता को इस प्रकार जांचा जाता है : (1) ब्याज दर कटौती का आर्थिक दबाव सूचकांक पर; (2) चलनिधि सहायता का तीन महीने के लिबॉर-एक दिवसीय सूचकांक अदला-बदली (ओआईएस) स्प्रेड पर; और (3-5) स्थानीय बैंकों के ऋण चुकौती अदला-बदली स्प्रेड पर वित्तीय क्षेत्र का हस्तक्षेप, जिसमें भारांक कुल आस्तियों के आकार का होता है।

स्रोत: वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट अक्तूबर, 2009 ।

(ii) हालांकि अधिकांश देशों ने चलनिधि सहायता संबंधी उपाय अपनाये, लेकिन लिबॉर-ओआईएस अदला-बदली स्प्रेड में कमी के रूप में उनकी घोषणा का प्रभाव मुख्यत: संकट के प्रारंभिक चरण के दौरान कारगर रहा था। चलनिधि बढ़ाने के उपाय संकट के बाद वाले चरण में कम कारगर रहे क्योंकि तब चलनिधि जोखिम की तुलना में ऋण जोखिम अधिक चिंता का कारण बन गया था।

(iii) हालांकि लिबॉर-ओआईएस स्प्रेड के संबंध में किये गये विभिन्न हस्तक्षेपों के दीर्घकालिक प्रभाव में सुधार दिखाई दिये। जून 2009 के अंत में विभिन्न देशों के स्प्रेड के स्तर में उनके संबंधित सर्वोच्च स्तरों से 53 से 90 प्रतिशत के बीच गिरावट आयी (सारणी 4.8)।

(iv) संयुक्त राज्य अमरीका में चलनिधि सहायता योजनाओं जैसी मीयादी नीलामी सुविधा (टीएएफ) और वाणिज्यिक पत्र निधीयन सुविधा (सीपीएफएफ) के प्रति तत्काल सकारात्मक बाज़ार प्रतिक्रिया ने यह प्रकट किया कि 2008 के बाद वाले समय से लिबॉर-ओआईएस स्प्रेड में लगातार गिरावट हुई।

(v) वित्तीय दबाव सूचकांक के प्रभाव के मूल्यांकन से यह प्रकट हुआ कि आर्थिक दबाव की तुलना में वित्तीय दबाव को कम करने में मौद्रिक ढील की घोषणाएं अधिक कारगर रहीं।

4.43 ऋण को सुगम बनाने के कुछ शुरुआती उपायों ने वाणिज्यिक पत्र, बंधक और कॉरपोरेट बांड बाज़ारों में दबाव को कम करने में सहायता की। कई बाज़ार सहभागियों ने बताया कि विस्तारित अदला-बदली सुविधाओं ने मीयादी निधीयन स्थितियों में सुधार किया। असल में इसका वास्तविक उपयोग अक्तूबर 2008 के अंत में चरम पर था और इसके बाद धीरे-धीरे कम हो गया, कुछ केंद्रीय बैंकों ने अदला-बदली ऋण व्यवस्थाओं से वास्तव में कभी कोई आहरण ही नहीं किया। विदेशी मुद्रा विनियम अदला-बदली बाज़ार विचलन, विशेषकर यूरो/अमरीकी डॉलर और स्विस फ्रैंक/अमरीकी डॉलर और समग्र रूप से लिबॉर-ओईएस स्प्रेड कम हो गये। जहां उस समय कई अन्य नीतिगत कार्य किये गये, वहीं इन सुधारों में से कुछ केंद्रीय बैंक की अदला-बदली ऋण व्यवस्थाएं शुरू करने के कारण हुए।

सारणी 4.8: 3-महीने की लिबॉर-एक दिवसीय सूचकांक अदला-बदली स्प्रेड : चरम बिन्दु से गिरावट

मद	अमरीका	यूके	यूरो क्षेत्र	जापान	स्वीडन	स्विटजरलैण्ड
1	2	3	4	5	6	7
लिबॉर-ओआईएस चरम स्तर (आधार बिन्दुओं में) *	361	244	199	80	155	159
लिबॉर-ओआईएस स्प्रेड 30 जून 2009 को गिर गई (आधार बिन्दुओं में)	-324	-166	-149	-43	-112	-127
चरम स्तर प्रतिशत में	-90	-68	-75	-53	-72	-80
चरम स्तर से मानक विचलन में **	-1.5	-1.8	-2.0	-3.4	-1.8	-0.5

* : लिबॉर-ओआईएस के चरम स्तर प्रत्येक देश या क्षेत्र विशिष्ट हैं : यूरो क्षेत्र (10/13/2008), जापान (12/18/2008), स्वीडन (11/27/2008), स्टिजरलैण्ड (11/12/2008), यूनाइटेड किंगडम (12/4/2008), और संयुक्त राज्य अमरीका (10/10/2008)।

** : लिबॉर-ओआईएस स्प्रेड श्रृंखला में उनके चरम स्तर से कमी को प्रत्येक उप-अवधि में उस उप-अवधि (लेहमन से पूर्व, वैश्विक संकट 1 और वैश्विक संकट 2) में दिनों की संख्या द्वारा भारांक प्रदान कर औसत परिवर्तन से मानक विचलनों के रूप में व्यक्त किया गया है। लिबॉर-ओआईएस स्प्रेड में परिवर्तन की ऐसे मानकीकृत उपाय का उपयोग करने से सभी नमूना देशों में बेहतर तुलना होती है (और भिन्न-भिन्न उप-अवधियों में भिन्न भिन्न अवधियों का उपयोग करने से दीर्घकाल में नीति की सापेक्ष प्रभावशीलता को परिमाणित करने में सहायता मिलती है)।

स्रोत: वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट अक्तूबर, 2009 ।

4.44 गैर-परंपरागत उपायों की प्रभावशीलता को मापना कठिन है क्योंकि अर्थव्यवस्था में इनका संप्रेषण जटिल और अस्पष्ट है। अधिकांश गैर-परंपरागत उपायों की सफलता न केवल उपायों की डिजाइन और परिमाण पर निर्भर करती है बल्कि लेनदारों द्वारा ऋण देने और उधारकर्ताओं द्वारा उधार लेने की इच्छा तथा सामर्थ्य पर भी निर्भर करता है। इसके अलावा, गैर-परंपरागत उपायों की अतिव्याप्ति होती है, उदाहरणार्थ, वित्तीय संस्थाओं की विशिष्ट श्रेणी के लिए लक्षित चलनिधि सुधार उपाय को यदि निष्प्रभावी नहीं किया गया तो इससे आरक्षित धन राशि में वृद्धि हो सकती है।

4.45 हालांकि संकट के प्रभाव को कम करने में केंद्रीय बैंक के कार्यों की प्रभावशीलता और बाज़ारों की कार्यप्रणाली को बहाल करना उस हद तक निर्भर करता है जिस तक वे निजी क्षेत्र के मध्यस्थीकरण पर उत्प्रेरक प्रभाव रखते हैं। इस प्रकार केंद्रीय बैंक के हस्तक्षेपों की पूरी सफलता उचित डिजाइन और नीतियों के प्रभावशाली ढंग से कार्यान्वयन पर निर्भर करता है जो बैंक के तुलनपत्र की बुनियादी कमजोरी को सीधे दूर करती है।

जोखिम और चुनौतियां

4.46 चलनिधि, ऋण और मात्रात्मक सुधारों के गैर-परंपरागत उपायों से कई चुनौतियां और जोखिम सामने आते हैं (आईएमएफ, 2009)।

(i) गैर-परंपरागत उपाय असावधानीवश ऋण का आबंटन कार्यक्षम बाज़ारों के बजाए ऋण अकार्यक्षम बाज़ारों में कर सकते हैं, जो अल्पकाल में वित्तीय क्षेत्र की पुनर्संरचना को नियंत्रित और भावी आर्थिक विकास को विकृत कर सकते हैं।

(ii) केंद्रीय बैंकों के तुलनपत्रों में उच्च गुणवत्ता और अर्थसुलभ आस्तियों का धीरे-धीरे गैर-अर्थसुलभ दावों में प्रतिस्थापन परिचालन संबंधी लचीलेपन को कम करता है और इससे भावी मौद्रिक प्रबंध प्रभावित हो सकता है।

(iii) कुछ गैर-परंपरागत उपायों का अर्ध-राजकोषीय स्वरूप मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के बीच अंतर को धुंधला कर देता है और वित्तपोषण को जारी रखने के दबाव के कारण केंद्रीय बैंक को अपनी स्वायत्तता से समझौता करना पड़ सकता है।

(iv) केंद्रीय बैंकों द्वारा गैर-परंपरागत उपायों की घोषणाओं के चलते आरक्षित मुद्रा के बढ़ने से संभाव्य मुद्रास्फीति की प्रत्याशाएं अस्थिर हो सकती हैं।

(v) जब मूल्य स्थिरता दाँव पर हो तो अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने में ये गैर-परंपरागत मौद्रिक नीति संबंधी उपाय कारगर तो हो सकते हैं लेकिन उनके व्यापक निहितार्थों के कारण उनकी अपनी सीमाएं हैं।

- पहली, चूंकि ऐसी नीतियों के प्रभाव सुविदित नहीं हैं, अत: मौद्रिक नीति का संचालन सामान्य परिस्थितियों की अपेक्षा काफी अधिक अनिश्चितता से घिरे होना लाजमी है। उदाहरणार्थ, यह अस्पष्ट है कि दीर्घकालिक दरें, विशेषकर उन दरों में सन्निहित जोखिम प्रीमियम को आर्थिक संभावनाओं के बारे में व्यापक अनिश्चितता की स्थिति में चलनिधि को बढ़ाकर कितना नीचे लाया जा सकता है। इस प्रकार, केंद्रीय बैंकों द्वारा सुव्यवस्थित संप्रेषण महत्त्वपूर्ण हो सकता है।
- दूसरी, जब वित्तीय मध्यवर्तियां लगातार कमजोर बनी रहें तो चलनिधि बढ़ाना अत्यधिक प्रभावी हो, जरूरी नहीं है।
- तीसरी, उपायों को ठीक से तैयार किये बिना लागू किये जाने पर वित्तीय मूल्यों में विकृति शुरू होने का जोखिम हो सकता है।
- चौथी, गैर-परंपरागत उपायों का अर्थव्यवस्था के विशिष्ट क्षेत्रों या समाज की श्रेणियों पर सामान्य मौद्रिक नीतिगत कार्यों की तुलना में अधिक प्रत्यक्ष पुनर्वितरणशील प्रभाव पड़ सकता है। संबंधित जिम्मेदारियों और कार्य-क्षेत्रों की स्पष्ट परिभाषा के हिस्से के रूप में यह राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकारियों के बीच एक जैसी समझ और सहयोग का उच्च सोपान सूचित करता है।

4.47 इन जोखिमों में से कुछ को पारदर्शिता और प्रभावी संप्रेषण के जरिये कम किया जा सकता है। इसके लिए अर्ध-राजकोषीय उपायों में लगे केंद्रीय बैंकों और राजकोषीय एजेंटों को गैर-परंपरागत नीतिगत साधनों के उद्देश्यों, प्रत्याशित प्रभावों और संभाव्य राजकोषीय प्रभावों को सार्वजनिक रूप से स्पष्ट करना चाहिए। समष्टि-आर्थिक परिदृश्य के बारे में केंद्रीय बैंक के विचारों का सतर्क बयान भी सकारात्मक नीतिगत ब्याज दरों की बहाली और चलनिधि के अवशोषण में सहायता करेगा (आईएमएफ, 2009)।

4.48 संक्षेप में संकट निवारण के लिए उन्नत देशों में मौद्रिक नीति संबंधी अनुक्रिया नीतिगत दरों को कम करने के परंपरागत उपाय के साथ शुरू हुई। जैसे-जैसे संकट गहराया, इसे धीरे-धीरे प्रमुख केंद्रीय बैंकों के बीच समन्वित ढंग से आगे बढ़ाया गया। लेकिन नीतिगत दर को शून्य या शून्य के करीब के स्तर पर लाने के बाद भी वित्तीय दबाव के बने रहने पर अब तक अनदेखे स्तर के कई गैर-परंपरागत उपाय शुरू किये। हालांकि उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में विदेशी मुद्रा प्रदान करने के गैर-परंपरागत उपाय नीतिगत दर में कटौती के परंपरागत उपाय से पहले किये गये क्योंकि चलनिधि संबंधी अवरोध पहले विदेशी मुद्रा बाज़ार में दिखाई दिये। अन्य गैर-परंपरागत उपायों का प्रयोग अपर्याप्त या बहुत ही कम स्तर पर किया गया। इसके परिणामस्वरूप उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंकों के तुलनपत्रों में उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में काफी अधिक वृद्धि हुई। इससे भविष्य में कई नीतिगत चुनौतियां और जोखिम उभर सकते हैं। फिर भी सभी देशों के केंद्रीय बैंक के कार्यों ने बैंकों की निधियों की तात्कालिक जरूरतों को पूरा किया और कुछ हद तक सामान्य स्थिति को बहाल किया। तथापि, मौद्रिक नीतिगत उपाय कुछ प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण संस्थाओं की शोधक्षमता संबंधी चिंताओं को नहीं रोक पाये। इससे संपदा क्षेत्र पर प्रतिकूल प्रभावों के साथ बाज़ार में भयंकर अव्यवस्था पैदा हुई। इस प्रकार सरकारों को वित्तीय संस्थाओं को बड़े स्तर की राजकोषीय सहायता प्रदान कर उनके डूब जाने को रोकने हेतु कई कार्य करने के लिए बाध्य होना पड़ा।

III. वित्तीय क्षेत्र को राजकोषीय सहायता

4.49 विगत की तरह वर्तमान वैश्विक संकट की विशेषता वित्तीय अस्थिरता और सकल मांग में गिरावट के रूप में अनुभव की गई जो एक दूसरे से जुड़ी हुई है। इस प्रकार राजकोषीय नीतिगत अनुक्रिया में उनके बीच स्पष्ट सामंजस्य वाले दो घटक शामिल हैं। पहला घटक

वित्तीय प्रणाली को पुन: सुदृढ़ करने की ओर निर्देशित संकट प्रबंधन रणनीति रहा है। इस रणनीति में सीधे वित्तीय सहायता प्रदान करना और/या विपदग्रस्त वित्तीय संस्थाओं को जमा बीमा/गारंटी प्रदान करना शामिल है ताकि उनको शोधक्षम बनाया जा सके और वित्तीय प्रणाली को स्थिर किया जा सके। दूसरा कदम सकल मांग को बढ़ाने के लिए विवेकाधीन राजकोषीय उपायों को क्रियाशील करना रहा है ताकि आर्थिक मंदी को रोका जा सके, जिसके बारे में अगले भाग में चर्चा की गई है।

4.50 वित्तीय संस्थाओं को राजकोषीय सहायता की जरूरत उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में उन्नत देशों को काफी अधिक थी। उन्नत देशों में प्रारंभ में यह वित्तीय क्षेत्र का संकट था जिससे संपदा क्षेत्र तेजी से गिरावट की ओर अग्रसर हुआ, जिसका प्रभाव पुन: वित्तीय क्षेत्र पर पड़ा। वित्तीय संकट की गंभीरता को देखते हुए अकेले केंद्रीय बैंकों द्वारा वित्तीय क्षेत्र को आवश्यक सहायता प्रदान करना अपर्याप्त पाया गया। उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में संकट का संप्रेषण मुख्यत: संपदा क्षेत्र से वित्तीय क्षेत्र को हुआ। उन्नत देशों में आर्थिक मंदी ने वस्तुओं एवं सेवाओं के निर्यात और सकल मांग को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया। इसका प्रभाव वित्तीय क्षेत्र पर पड़ा। पूंजी के अंतर्वाह में तेजी से कमी या विदेशी निवेशकों द्वारा उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के शेयर बाज़ारों में बिक्री के कारण बहिर्वाह में वृद्धि से समस्या और बढ़ गई। सुरक्षा की तलाश या उन्नत देशों में मूल कंपनियों के समक्ष वित्तीय शोधक्षमता की समस्याओं से निपटने के प्रयास के चलते पूंजी के प्रवाह की दिशा भी बदल गयी। इस प्रकार, राजकोषीय नीति का केंद्रबिन्दु विपदग्रस्त वित्तीय संस्थाओं को वित्तीय सहायता प्रदान करने के बजाय सकल मांग को बढ़ाने के लिए प्रति-चक्रीय उपायों की ओर हो गया।

4.51 वित्तीय क्षेत्र को राजकोषीय सहायता में पूंजी निवेश एवं आस्तियों की खरीद और ट्रेजरी द्वारा उधार देने, बैंक जमाराशियों, अंतर-बैंक ऋणों एवं बांडों के लिए गारंटी प्रदान करने के रूप में प्रारंभिक सरकारी सहायता का मिश्रण शामिल है। पूंजी निवेश शोधक्षमता की समस्याओं को सीधे दूर करने के लिए किया गया। आस्तियों की खरीद का उद्देश्य अनर्जक आस्तियों को ठीक करना था। ट्रेजरी द्वारा वित्तीय संस्थाओं को उधार देकर यह सुनिश्चित करना था कि इन संस्थाओं के पास निधियों की कमी नहीं है। जमाराशि और ऋण की गारंटियां, जमाकर्ताओं और उधारकर्ताओं को आश्वासन प्रदान करने के के इरादे से प्रदान की गई थी।

प्रत्यक्ष वित्तीय सहायता

4.52 बैंकों में चलनिधि की कमी और दिवालियापन को दूर करने के लिए अमरीका, यूके, स्विटजरलैण्ड और अन्य यूरोपीय देशों में शुरू किये गये कार्यक्रमों में दुर्विक्रेय और गैर-अर्थसुलभ आस्तियों की बिक्री तथा सरकार द्वारा इक्विटी निवेश का मिश्रण शामिल था। मुख्यत: अधिमान शेयरों के निर्गम के जरिये इक्विटी निवेश को धीरे-धीरे वरीयता दी गई। हालांकि, सरकार द्वारा निकास की योजना को केवल कुछेक कार्यक्रमों में ही निर्दिष्ट किया गया। इन कार्यक्रमों में सहभागिता में प्रबंधन क्षतूपर्ति और लाभ वितरण की शर्तें शामिल थीं। यूके और नीदरलैण्ड जैसे कुछ देशों ने बोर्ड में प्रतिनिधित्व सहित विशेष अभिशासन व्यवस्थाएं भी शुरू की हैं जबकि अमरीका जैसे अन्य देशों का इरादा निक्रिय निवेशक बने रहना रहा। यह वर्तमान शेयरधारकों एवं प्रबंधन को दंड देने के असमंजस बनाम बैंक परिचालनों में राजनीतिक हस्तक्षेप से बचने की विभिन्न प्रतिक्रियाओं में प्रतिबिम्बित हुआ।

4.53 बड़े स्तर के अधिकांश बैंक पुनर्संरचना कार्यक्रमों के दो प्रमुख घटक रहे : आस्ति बिक्री/ बैंक पुनर्पूंजीकरण और समस्याग्रस्त आस्तियों का समाधान। हालांकि, समस्याग्रस्त आस्तियों के समाधान के लिए अलग-अलग देशों ने अलग-अलग दृष्टिकोण अपनाये हैं। कुछ देशों में सरकार ने तुलनपत्रों से खराब ऋणों को हटा दिया, लेकिन उन्होंने प्रवर्तक बैंकों से ऋणों को वसूल करने के लिए प्रबंध संविदा पर हस्ताक्षर किये। अन्य देशों ने अच्छे बैंक/बुरे बैंक के विकेंद्रीकृत दृष्टिकोण को अपनाया, जिसमें विशिष्टत: बुरी आस्तियों को बैंक की सहायक संस्था को अंतरण करना शामिल है। दूसरे देशों में समस्याग्रस्त आस्तियों के समाधान का कार्य केंद्रीय एजेंसी द्वारा देखा गया है। यह एजेंसी अलग-अलग ऋणों को ऋण, उधारकर्ता और क्षेत्र के आधार पर समूहित करती है और उन्हें (या अंतर्निहित संपार्श्विक प्रतिभूति) निवेशकों को बेच देती है।

4.54 यूके और अमरीकी बैंकों को सार्वजनिक रूप से अधिगृहीत अधिमान शेयरों के द्वारा पुनर्पूंजीकरण का प्रयास समस्या का पूरी तरह से निदान नहीं कर पाया। बैंकों ने इन निवेशित निधियों का उपयोग केवल अपनी दूषित आस्तियों को धारित करने के लिए प्रयुक्त किया।

इस प्रकार, उनकी सुदृढ़ स्थिति को बहाल करने के लिए संबंधित बैंकों के तुलनपत्रों से दूषित आस्तियों को हटाना आवश्यक समझा गया। दूषित आस्तियों के निपटान की प्रस्तावित योजना में या तो बैंकों का आंशिक रूप से राष्ट्रीयकरण कर दिया जाये या उनको निजी क्षेत्र में ही रहने दिया जाये, लेकिन उनकी दूषित आस्तियों को सार्वजनिक 'खराब' बैंक के रूप में राष्ट्रीयकरण कर दिया जाये। अमरीका में बैंकों को उनकी 'दूषित' आस्तियों से छुटकारा पाने की ओबामा प्रशासन की योजना 23 मार्च 2009 को घोषित की गई। ओबामा की योजना में 'पुराने ऋण कार्यक्रम' और 'पुरानी प्रतिभूति कार्यक्रम' के जरिये बैंकों से ऋण और प्रतिभूतियां लेने के लिए सार्वजनिक-निजी साझेदारी बनाना परिकल्पित था। पहली योजना में ऋणों के समूह की निजी निवेशकों को नीलामी की जानी थी जिनको ऐसे ऋण अभिग्रहण के लिए फेडरल जमा बीमा निगम (एफडीआईसी) से वित्तपोषण प्रदान किया जायेगा। प्रारंभिक पूंजी में सरकार और निजी क्षेत्र, दोनों को अंशदान करना था। यदि और जब ऋणों की वूसली या उनकी ब्रिकी हो जाये, सरकार को लाभ में हिस्सा मिलेगा। 'पुरानी प्रतिभूति कार्यक्रम' भी वैसा ही था। इनका उद्देश्य बैंकों को नई विशेष प्रयोजन संस्था को अपनी गैर-अर्थसुलभ बंधक-समर्थित प्रतिभूतियों का निपटान करने में समर्थ बनाना था। संस्था को निधिक सहायता फेड द्वारा अपनी मीयादी आस्ति-समर्थित प्रतिभूति ऋण कार्यक्रम के अंतर्गत प्रदान की जायेगी।

गारंटियां

4.55 अमरीका, यूरोप और अन्य विकसित देशों की सरकारों ने बैंक जमाकर्ताओं और लेनदारों को अनेक आश्वासन दिये। कुछ मामलों में ये म्यूच्युअल फंड जैसी गैर-बैंक वित्तीय संस्थाओं को भी प्रदान किये गये। ये आश्वासन प्रणालीगत स्थिरता से प्रेरित थे और कुछ मामलों में प्रतिस्पर्धी चिंताओं के कारण थे। इन व्यवस्थाओं में जमाराशियों के लिए निर्बंध गारंटियां और नये ऋण निर्गमों के लिए गारंटियां शामिल थीं। ये व्यवस्थाएं जिस स्तर की थीं उनके बराबर का पहले का कोई रिकॉर्ड नहीं है और इनके कारण आमूलचूक परिवर्तन हुआ।

4.56 सामान्य सीमाओं से अधिक जमा बीमा का विस्तार या विशिष्ट स्थितियों में निर्बंध गारंटी का उपयोग केवल अस्थायी और आपातकालीन उपाय के रूप में ही किया जा सकता था। इनका उपयोग सभी देशों में समन्वित रूप से किया गया था। इसके बाद कई क्षेत्रों में बैंक जमाराशियों की गारंटी की ऐसी ही घोषणाएं की गईं। इनका उद्देश्य अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में हलचल का उनकी बैंकिंग प्रणाली पर प्रभाव को निक्रिय करना था तथा ऋण संस्थाओं के प्रतिपक्षियों और ग्राहकों की ओर से किसी अनिश्चितता को दूर करना था। कुछ देशों में बैंक जमाराशियों के लिए सरकार द्वारा गारंटी की घोषणा ने ऐसा परिवर्तन किया कि उन्होंने अन्य देशों को कार्रवाई करने के लिए दबाव डाला। अन्यथा उनकी अपनी वित्तीय संस्थाओं और वित्तीय क्षेत्र के लिए हानिकारक और संभाव्य रूप से कमजोर होने का जोखिम था। कुछ विकसित देशों ने घोषणा की कि नये ऋण निर्गमों के लिए गारंटी 18-36 महीने के लिए बढ़ाई जायेगी। कुछ उभरते देशों ने अपनी व्यवस्थाओं का इस प्रकार से तालमेल किया, ताकि पूंजी बहिर्वाह या सरकारी बैंकों से जमाराशियों के हस्तांतरण को रोका जा सके, जहां सुरक्षित माना जाता है (बॉक्स IV.4)।

बॉक्स IV.4
जमाराशि की गारंटी से संबंधित उपाय

हाल के वित्तीय संकट की अत्यधिक अनुक्रियाओं को कम करने के लिए कुछ देशों ने बैंक जमाराशियों के लिए अल्पावधि गारंटियों की घोषणा की और इस उद्देश्य के लिए निधियां अलग रखीं। हालांकि बैंकिंग प्रणाली सुदृढ़ और लचीली बनी रही, लेकिन कुछ सरकारों ने बैंक जमाराशियों के आधार को कम होने से बचाने के लिए एहतियाती कार्रवाई करने का निर्णय लिया और अपने क्षेत्राधिकार वाले बैंकों के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर के समान अवसर देना सुनिश्चित किया।

अमरीका

3 अक्तूबर 2008 को कांग्रेस ने एफडीआईसी जमा बीमा को अस्थायी रूप से 31 दिसम्बर 2009 तक प्रति जमाकर्ता 100,000 डॉलर से बढ़ाकर 250,000 डॉलर कर दिया। 14 अक्तूबर 2008 से एफडीआईसी बीमित संस्था के पास सभी गैर-ब्याज वाले लेनदेन जमा खातों, जिनमें सभी वैयक्तिक और कारोबारी जांच जमा खाते शामिल है जिनमें कोई ब्याज नहीं मिलता, को जमा खाते में पूर्ण राशि का पूरा बीमा किया गया है। यह असीमित बीमा व्याप्ति अस्थायी है और सहभागी संस्थाओं के लिए 31 दिसम्बर 2009 तक प्रभावी रहेगा।

ट्रेजरी और फेड द्वारा घोषित कार्यों के अलावा, एफआईडीसी ने 14 अक्तूबर 2008 को अंतर-बैंक ऋण बाज़ारों को खोलने और ऋण प्रसार की तर्कसंगतता को बहाल करने के लिए नया 'अस्थायी चलनिधि गारंटी कार्यक्रम' घोषित किया।

(जारी...)

(... समाप्त)

यूरोप

यूके : 7 अक्तूबर 2008 से वित्तीय सेवा प्राधिकरण (एफएसए), यूके ने वित्तीय सेवा क्षतिपूर्ति योजना (एफएससीएस) के अंतर्गत असफल बैंकों, भवन सोसायटियों एवं ऋण संघों के पास जमाराशि के लिए क्षतिपूर्ति सीमा को प्रति जमाकर्ता 35,000 पौंड से बढ़ाकर 50,000 पौंड कर दिया। संयुक्त खातों वाले ग्राहक उनके बीच 100,000 पौंड तक के दावे करने के लिए पात्र होंगे।

डेनमार्क : डैनिश वित्तीय पर्यवेक्षी प्राधिकारण ने 6 अक्तूबर 2008 से 3.5 बिलियन डैनिश क्रोन परिसमापन निधि स्थापित करने के लिए बैंकों के साथ हुए सौदे के हिस्से के रूप में सभी बैंक जमाराशियों के लिए गारंटी प्रदान की। पहले गारंटी कवर बैंक के सभी ऋणों एवं अन्य देयताओं को घटाने के बाद प्रति जमाकर्ता 300,000 डैनिश क्रोन तक ही उपलब्ध था।

जर्मनी : 6 अक्तूबर 2008 को जर्मन सरकार ने बैंक जमाराशियों के लिए निर्बंध गारंटी प्रदान की, जिसमें बचत एवं चेकिंग खातों, साथ ही सावधि जमाराशियों या सीडी में जमा 568 बिलियन यूरो (785 बिलियन अमरीकी डॉलर) की राशि शामिल होगी। इससे पहले जर्मन बैंकों की क्षतिपूर्ति योजना में बकाया जमाराशि का 90% कवर होता था जो प्रति जमाकर्ता 20,000 यूरो तक सीमित था।

आयरलैण्ड : छह बेंकों और ऐसी विशिष्ट सहायक संस्थाओं, जो सरकार द्वारा अनुमोदित हों, की सभी जमाराशियों (खुदरा, वाणिज्यिक, संस्थागत और अंतर-बैंक), रक्षित बांडों, वरिष्ठ ऋणों और दिनांकित गौण ऋण (निम्नतर टीयर II) को सुरक्षित बनाये रखने के लिए गारंटी व्यवस्था करने का निर्णय लिया गया। यह गारंटी संबंधित संस्था के प्रभार पर प्रदान की गई और यह विशिष्ट निबंधनों एवं शर्तों के अधीन होगी ताकि करदाताओं के हितों को संरक्षित किया जा सके। गारंटी में इन संस्थाओं की ऊपर वर्णित सभी मौजूदा सुविधाएं और 29 सितम्बर 2008 की मध्यरात्रि से जारी नई सुविधाएं शामिल होंगी। यह गारंटी 28 सितम्बर 2010 को समाप्त हो जायेगी।

आस्ट्रिया : आस्ट्रिया की संसद ने देश के बैंकिंग क्षेत्र को स्थिर बनाने के लिए 20 सितम्बर 2008 को 100 बिलियन यूरो (196.8 बिलियन अमरीकी डॉलर) की संकट से उबारने की योजना को अनुमोदन प्रदान किया। इस पैकेज में अन्य बातों के साथ-साथ व्यक्तियों की बैंक जमाराशियों को 31 दिसम्बर 2009 तक असीमित संरक्षण प्रदान करना शामिल है। इसके बाद सरकारी गारंटी प्रति खाता 100,000 यूरो तक उपलब्ध रहेगी। कारोबारी खाता धारकों की बैंक जमाराशियों के लिए 50,000 यूरो तक गारंटी उपलब्ध होगी। कानून के पारित हेने से पहले 20,000 यूरो प्रति व्यक्ति/कारोबारी खाते तक संरक्षित था।

स्वीडन : स्वीडन सरकार ने 6 अक्तूबर 2008 को घोषणा की कि यह जमाराशि के बीमा को बढ़ाकर 500,000 क्रोनर (71,000 अमरीकी डॉलर) कर देगी। स्वीडन में पहले बचत जमाराशि का बीमा 250,000 क्रोनर था।

यूनान : जमाराशि के बीमा की विधिक सीमा को मौजूदा 20,000 यूरो से बढ़ाकर 100,000 यूरो करने के लिए 6 अक्तूबर 2008 को संसद में बिल प्रस्तुत किया गया। गारंटी के अगले तीन वर्षों तक लागू रहना प्रस्तावित है।

यूरो क्षेत्र : यूरो कानूनों के अंतर्गत यूरो क्षेत्र के सदस्यों को प्रदत्त न्यूनतम जमाराशि बीमा को 7 अक्तूबर 2008 को 20,000 यूरो से बढ़ाकर 50,000 यूरो किया गया। सह-बीमा को समाप्त कर दिया है और यूरो क्षेत्र के सदस्य देशों ने तद्नुसार कार्रवाई कर दी है/कर रहे हैं।

एशिया

इंडोनेशिया : सरकार ने में बीमा कवर को बढ़ाकर 2 बिलियन इंडोनेशियाई रुपया कर दिया।

मलेशिया : 30 अक्तूबर 2008 को एक निर्बंध सरकारी गारंटी सभी रिंगगिट और वाणिज्यिक, इस्लामिक और निवेश बैंकों, बैंक नेगड़ा मलेशिया द्वारा नियंत्रित जमाराशि लेने वाली विकास वित्त संस्थाओं को दिसम्बर 2010 तक फिलीपीन्स जमा बीमा निगम (पीडीआईसी) के द्वारा प्रदान की गई। यह गारंटी सभी घरेलू और स्थानीय निगमित विदेशी बैंकिंग संस्थाओं के लिए लागू है तथा बैंक नेगड़ा मलेशिया की चलनिधि सुविधा तक पहुंच बीमा कंपनियों और बैंक द्वारा नियंत्रित एवं पर्यवेक्षित टकाफुल परिचालकों की होगी।

सिंगापुर : सिंगापुर सरकार ने मौद्रिक प्राधिकारी, सिंगापुर से लाइसेंस प्राप्त बैंकों, वित्त कंपनियों और व्यापारी बैंकों के सभी व्यक्तिगत और गैर-बैंक ग्राहकों को सभी सिंगापुर डॉलर और विदेशी मुद्रा जमाराशियों के लिए 31 दिसम्बर 2010 तक के लिए गारंटी प्रदान की। बड़े और छोटे, कॉरपोरेट और व्यक्ति, सिंगापुर जमाराशि बीमा योजना द्वारा नियंत्रित वर्तमान जमाराशि बीमा योजना के अंतर्गत आने वालों सहित, सभी जमाकर्ताओं को गारंटी की अवधि के दौरान उनकी जमाराशियों की संपूर्ण राशि के लिए सरकार से संरक्षण प्राप्त होगा। सरकारी गारंटी सहकारी समितियों की रजिस्ट्री के पास पंजीकृत ऋण सहकारिताओं के पास रखी गई जमाराशियों पर भी लागू होगी। यह गारंटी सिंगापुर सरकार के 150 बिलियन सिंगापुर डॉलर से समर्थित होगी।

हांगकांग : हांगकांग मौद्रिक प्राधिकारी ने 14 अक्तूबर 2008 को ग्राहकों की जमाराशियों के लिए निर्बंध गारंटी जारी की और अपने बैंकों के पुनर्पूंजीकरण का प्रस्ताव किया। गारंटी हांगकांग मौद्रिक प्राधिकारी की विनिमय निधि द्वारा समर्थित होगी।

अन्य

आस्ट्रेलिया : 12 अक्तूबर 2008 को आस्ट्रेलियाई सरकार ने सभी बैंक जमाराशियों के लिए निर्बंध गारंटी की घोषणा की, जिसमें लगभग 700 बिलियन आस्ट्रेलियाई डॉलर की राशि शामिल थी। व्यापक आलोचना और नकदी प्रबंध न्यासों एवं बंधक निधियों से निधियां आहरित करने के बाद सरकार ने योजना को संशोधित करने का विचार किया। इसने सरकारी गारंटी के लिए सीमा प्रदान करने पर विचार किया और पूरी गारंटी के लिए पात्र होने के लिए बड़े जमाकर्ताओं के लिए बीमा प्रीमियम की शर्त रखी।

न्यूजीलैण्ड : सरकार ने प्रारंभ में "क्राउन खुदरा जमा गारंटी योजना " के अंतर्गत बैंक जामाराशियों के लिए निर्बंध गारंटी की घोषणा की लेकिन इसे 22 अक्तूबर 2008 को संशोधित किया गया। प्रति जमाकर्ता प्रति गारंटीकृत संस्था के लिए 1 मिलियन आस्ट्रेलियाई डॉलर की अधिकतम सीमा निर्धारित की गई जिसे दो वर्ष तक जारी रखा जाएगा।

स्रोत: संबंधित केंद्रीय बैंकों की वेबसाइटें

4.57 अधिकांश अग्रणी अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय प्रणाली में विश्वास के स्तर को और बढ़ाने के लिए उपर्युक्त बचाव पैकेजों के साथ यह बयान जारी किये गये कि सरकार प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण संस्थाओं को असफल नहीं होने देगी। इसके अलावा, डेनमार्क, नीदरलैण्ड, यूके और अमरीका में जमाकर्ताओं के हित के संरक्षण और इनके संक्रमण को रोकने के लिए सरकारों ने कुछ दिवालिया वित्तीय संस्थाओं को या तो राष्ट्रीयकृत किया या उनमें अधिसंख्यक हिस्सा अधिगृहीत कर लिया (बीआईएस, 2009)।

वित्तीय सहायता और उपयोग का पैमाना

4.58 उन्नत देशों में वित्तीय संस्थाओं को अभीष्ट प्रारंभिक सरकारी सहायता उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में काफी अधिक रही थी। जून 2009 में यह इटली में जीडीपी के 0.7 प्रतिशत से लेकर यूके में 20.0 प्रतिशत के उच्च स्तर तक रही, जबकि अधिकांश देशों ने जीडीपी के 5.0 प्रतिशत से अधिक की सहायता प्रदान की। उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के लिए प्रारंभिक सरकारी सहायता कई देशों में शून्य थी तो हंगरी में यह जीडीपी के 3.5 प्रतिशत तक रही। उन्नत जी-20 देशों में औसत सहायता के जीडीपी के लगभग 5.5 प्रतिशत तक होने का अनुमान है। उभरते जी-20 देशों का औसत जीडीपी का 0.4 प्रतिशत रहा है। इटली, पुर्तगाल और स्विटजरलैण्ड को छोड़कर उन्नत देशों में गारंटियां भी काफी अधिक रहीं। यह यूनान में जीडीपी के 6.2 प्रतिशत से लेकर आयरलैण्ड में जीडीपी के 198.1 प्रतिशत के उच्च स्तर तक रही। उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में गारंटियां काफी कम रही हैं जिनमें सर्वाधिक पोलैण्ड में जीडीपी का 3.2 प्रतिशत रही। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के विपरीत उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय संस्थाओं को सहायता अधिकांशत: केंद्रीय बैंकों द्वारा चलनिधि सहायता के रूप में रही (सारणी 4.9)।

4.59 कुछ देशों में घोषित राजकोषीय पैकेज गत बड़े वित्तीय संकटों के अनुभव की तुलना में काफी बड़े थे। विगत में संकट की 42 घटनाओं के नमूने में वित्तीय बाजारों को ठीक करने और/या जमाकर्ताओं एवं बैंकों के अंशधारकों को बचाने की राजकोषीय लागत औसतन जीडीपी का लगभग 13 प्रतिशत रही। लेकिन कुछ मामलों में जीडीपी के 31 प्रतिशत से अधिक रही (सारणी 4.10)। गत अनुभव से यह भी पता चलता है कि उदार नीतिगत उपाय जैसे- चलनिधि सहायता, निर्बंध गारंटियां और विवेकपूर्ण विनियमनों के स्थगन के कारण राजकोषीय लागत में वृद्धि होती है, जबकि यह आवश्यक नहीं कि इससे आर्थिक सुधार की गति में तेजी आयी हो (ओईसीडी, 2009ए)।

सारणी 4.9 : जून 2009 को वित्तीय क्षेत्र को सहायता (2008 के जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)

देश	पूंजी निवेश	आस्तियों की खरीद और ट्रेजरी द्वारा उधार देना	केंद्रीय बैंक द्वारा सहायता	गारंटी	कुल	प्रारंभिक गारंटी सहायता
1	2	3	4	5	6	7
उन्नत देश						
आस्ट्रेलिया	0.0	0.7	0.0	8.8	9.5	0.7
आस्ट्रिया	5.3	0.0	0.0	30.1	35.4	8.9
बेल्जियम	4.8	0.0	0.0	26.4	31.2	4.8
कनाडा	0.0	10.9	1.5	13.5	25.9	10.9
फ्रांस	1.4	1.3	0.0	16.4	19.1	1.6
जर्मनी	3.8	0.4	0.0	18.4	22.2	3.7
यूनान	2.1	3.3	0.0	6.2	11.6	5.4
आयरलैण्ड	5.9	0.0	0.0	198.1	204.0	5.9
इटली	0.6	0.0	0.0	0.0	0.7	0.6
जापान	2.4	11.4	1.9	7.3	33.8	0.8
कोरिया	2.3	5.5	6.5	14.5	26.8	0.8
नीदरलैण्ड	3.4	11.2	0.0	33.6	47.3	14.6
नार्वे	2.0	15.8	0.0	21.0	32.5	15.8
पुर्तगाल	2.4	0.0	0.0	12.0	14.4	2.4
स्पेन	0.8	3.9	0.0	15.8	22.2	4.6
स्वीडन	1.6	4.8	13.9	47.5	68.0	5.2
स्विटजरलैण्ड	1.1	0.0	24.9	0.0	25.5	1.1
यूनाइटेड किंगडम	3.9	13.8	19.0	53.2	81.8	20.0
संयुक्त राज्य अमरीका	5.2	1.5	8.1	10.6	25.8	6.9
उभरती अर्थव्यवस्थाएं						
अर्जेन्टिना	0.0	0.9	5.4	0.0	5.1	0.9
ब्राजील	0.0	0.8	10.8	0.0	13.3	0.0
चीन	0.0	0.0	22.5	0.0	21.3	0.0
भारत	0.4	0.0	8.3	0.0	9.6	0.4
इंडोनेशिया	0.0	0.0	1.2	0.1	1.4	0.1
हंगरी	1.1	2.4	13.6	1.1	20.3	3.5
पोलैण्ड	0.0	0.0	5.4	3.2	8.7	0.0
रूस	1.2	1.2	11.6	0.5	17.2	2.3
सऊदी अरब	0.0	1.2	30.6	–	34.3	1.2
टर्की	0.0	0.3	3.7	0.0	3.4	0.0

टिप्पणी: 1. आईएमएफ स्टाफ अनुमान घोषित या प्रतिभूत राशि इंगित करती है न कि वास्तविक उद्ग्रहण।

2. केंद्रीय बैंक द्वारा सहायता जून 2007 से अप्रैल 2009 के बीच केंद्रीय बैंक के तुलनपत्र में वास्तविक परिवर्तनों को इंगित करती है। जहां ये परिवर्तन अधिकांशत: बाज़ार चलनिधि को बढ़ाने वाले और वित्तीय क्षेत्र को सहायता प्रदान करने के उपायों से संबंधित हैं, वहीं अक्सर अन्य कारण भी हो सकते हैं। यह भी कि विनियामक नीतियों में परिवर्तनों के कारण सहित अन्य प्रकार की सहायता को शामिल न किया गया हो।

स्रोत : आईएमएफ स्टाफ स्थिति नोट, राजकोषीय मामला विभाग, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, नवम्बर 2009।

सारणी 4.10: विगत में चुनिंदा संकटों की राजकोषीय लागत (जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)

	सकल राजकोषीय लागत	निवल राजकोषीय लागत*	उत्पादन हानि
1	2	3	4
अर्जेन्टिना, 1980	55.1	55.1	10.8
चिली, 1981	42.9	16.8	92.4
इंडोनेशिया, 1997	56.8	52.3	67.9
जापान, 1997	24.0	13.9	17.6
कोरिया, 1997	31.2	23.2	50.1
स्वीडन, 1991	3.6	3.4	30.6
रूस, 1998	6.0	6.0	0.0
संयुक्त राज्य अमरीका, 1988	3.7	–	4.1
42 घटनाओं का औसत	13.3	–	20.0

* सकल राजकोषीय लागत घटाएं वसूली से प्राप्त राशियों के रूप में निरूपित।
स्रोत: लाइवन और वालेन्सिया (2008)।

4.60 हालांकि हाल के संकट के दौरान सरकारों द्वारा प्रदान की गई वास्तविक सहायता घोषणा से काफी कम रही है। पूंजी निवेश के लिए स्विटजरलैण्ड और यूके जैसे देशों ने आबंटित राशि का पूरा उपयोग किया है। तथापि, इटली और नार्वे जैसे देशों ने कोई भी राशि का उपयोग नहीं किया है। उन्नत देशों में पूंजी निवेश के लिए आबंटित राशि के औसत उपयोग का हिस्सा 2/5 रहा है। आबंटित राशि के 1/5वें हिस्से का उपयोग आस्तियों की खरीद और ट्रेजरी उधार देने के लिए किया गया जो काफी कम है। उपयोग दरें उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में भी अच्छी नहीं थी, हालांकि घोषित राशि उन्नत देशों की तुलना में काफी कम थी। फिर भी उन्नत देशों के विपरीत, पूंजी निवेश की तुलना में ट्रेजरी द्वारा आस्तियों की खरीद और उधार के उपयोग की दरें काफी उच्च थीं (सारणी 4.11)।

4.61 आबंटित राशि के उपयोग का स्तर कम रहने के पीछे कई कारक थे जैसे- प्रारंभिक घोषणाओं का एहतियाती स्वरूप, बढ़ती स्थिरता और उन्नत बैंक चलनिधि के संकेत, पुनर्पूंजीकरण और आस्तियों की खरीद के कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में देरी। यहां तक कि ऐसा प्रतीत होता है कि केंद्रीय बैंक की ऋण सुविधाओं का भी सीमित मात्रा तक ही उपयोग किया गया क्योंकि घोषणा के समय की तुलना में स्थितियां कम गंभीर पाई गईं (हॉर्टन आदि, 2009)।

सारणी 4.11: घोषणाओं की तुलना में वित्तीय क्षेत्र को की गई सहायता की उपयोगिता (2008 के जीडीपी के % के रूप में)

देश	पूंजी निवेश		आस्तियों की खरीद और ट्रेजरी द्वारा उधार	
	प्रयुक्त राशि	घोषणा का प्रतिशत	प्रयुक्त राशि	घोषणा का प्रतिशत
1	2	3	4	5
उन्नत देश				
आस्ट्रेलिया	...	...	0.5	71.3
आस्ट्रिया	1.7	32.7	...	...
बेल्जियम	4.7	97.6	...	...
कनाडा	...	...	5.6	51.6
फ्रांस	0.8	57.0	0.4	26.5
यूनान	1.7	82.0	1.8	55.0
आयरलैण्ड	3.8	63.6	...	...
इटली	0.0	0.0	...	...
जापान	0.0	1.0	0.8	3.6
कोरिया	0.8	33.0	0.3	4.8
नीदरलैण्ड	2.3	68.8	10.2	99.4
नार्वे	0.0	0.0	4.8	30.3
पुर्तगाल	1.5	62.5	...	...
स्पेन			1.8	44.6
स्विटजरलैण्ड	1.1	100.0	...	...
यूनाइटेड किंगडम	3.9	100.0	3.4	24.4
संयुक्त राज्य अमरीका	2.2	41.9	0.7	53.8
उभरती अर्थव्यवस्थाएं				
ब्राजील	...	...	0.3	43.5
भारत*	0.0	5.0	0.0	...
इंडोनेशिया	...	...	...	...
हंगरी	0.1	9.3	2.1	87.0
रूस	0.5	40.6	0.4	31.0
सऊदी अरब	...	...	0.6	51.4

* 2 जनवरी 2009 को भारत सरकार द्वारा घोषित राजकोषीय उपायों में यह इंगित किया गया था कि अगले दो वर्षों में भारत में सरकारी क्षेत्र के बैंकों का 20,000 करोड़ रुपये तक पुनर्पूंजीकरण किया जायेगा। बजट 2009-10 और 2010-11 के अनुसार सरकार ने क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के पुनर्पूंजीकरण के लिए 2008-09 (संशोधित अनुमान) में 595 करोड़ रुपये का प्रावधान किया, जबकि बैंकों के पुनर्पूंजीकरण के लिए 2009-10 के संशोधित अनुमानों में कोई प्रावधान नहीं किया गया। वर्ष 2010-11 में सरकारी क्षेत्र के बैंकों के पुनर्पूंजीकरण के लिए 15,000 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।
स्रोत: आईएमएफ स्टाफ स्थिति नोट, राजकोषीय कार्य विभाग, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, जुलाई 2009।

4.62 बैंकों के पुनर्पूंजीकरण में सरकारों ने अधिकांशत: अधिमान शेयर खरीदे जिनमें जोखिम कम होता है लेकिन उनको मताधिकार प्राप्त नहीं होता। सरकारों द्वारा जमाराशि और ऋणों के लिए गारंटी ने

बैंकों के वित्तपोषण के स्रोतों को बचाया। असल में, कम से कम 2009 की पहली तिमाही तक वित्तपोषण का प्रमुख स्रोत सरकारी गारंटीप्राप्त बांडों का निर्गम रहा। हालांकि, सरकारी ऋण गारंटी का उठाव कठोर शर्तों और लागतों तथा कार्यक्रमों की जटिलताओं एवं परिचालन मुद्दों के कारण अनुमान से कम रहा। फिर भी अग्रणी अर्थव्यवस्थाओं में सरकार द्वारा शुरू किये गये बचाव पैकेज प्रमुख बैंकों के दिवालियापन को रोक सके। हालांकि, वे बैंकिंग क्षेत्र में आम शेयरधारकों की नकारात्मक भावनाओं को पूरी तरह से दूर नहीं कर पाये, क्योंकि बचाव पैकेज शेयरधारकों के हितों की रक्षा करने के लिए तैयार नहीं किये गये थे। प्रारंभ में बढ़ने के बाद बैंकिंग क्षेत्र के शेयर गिर गये और बाज़ार में कमजोर बने रहे। बैंकिंग शेयरों के भीतर सरकार से प्राप्त सहायता वाले बैंक सरकार से बिना सहायता वाले बैंकों की तुलना में कमजोर रहे। हालांकि, लेनदारों ने बचाव पैकेज की अधिक सकारात्मक ढंग से अनुक्रिया दी क्योंकि सीडीएस स्प्रेड सभी देशों में कम हो गया, हालांकि वह उच्च स्तर पर बनी रही। इसके अलावा, पूर्व के संकट की घटनाओं के अनुभव के आधार पर वहनीय बहाली की पूर्व शर्तें- अर्थात् बैंकिंग प्रणाली को हानि उठाने के लिए मजबूर करना, अनर्जक आस्तियों का निपटान करना, आधिक्य क्षमता को समाप्त करना और इसके पूंजी आधार को पुन: बनाना- नहीं रखी गयीं। अब तक उठाये गये कदमों में मुख्य ध्यान गारंटियां देने और अनुदान के रूप में पूंजी प्रदान करने पर रहा है। इस प्रकार, इस बात का काफी जोखिम था कि वर्तमान राहत उपाय से विकास में अस्थायी वृद्धि ही हो पाएगी जिसके बाद दीर्घकालिक एकरूपता बनी रहेगी (बीआईएस, 2009)।

4.63 संक्षेप में, अभूतपूर्व मौद्रिक नीतिगत उपायों के बावजूद प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं के दिवालियापन ने सरकारों को बड़ी वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए बाध्य किया। सहायता का स्वरूप (i) पूंजी निवेश, आस्तियों की खरीद और ऋण देने के रूप में प्रत्यक्ष शीर्ष सहायता प्रदान करना, और (ii) बैंकों की जमाराशियों, अंतर-बैंक ऋणों एवं बांडों के लिए गारंटी प्रदान करने के रूप में था। दोनों प्रकार की सहायता की मात्रा उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में काफी अधिक थी। ऐसा कम से कम दो कारणों से था, यथा (i) उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय संकट अधिक गंभीर था; (ii) संकट का संचारण उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय क्षेत्र से संपदा क्षेत्र में हुआ, जबकि उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में यह संपदा क्षेत्र से वित्तीय क्षेत्र में फैला। हालांकि, कई देशों ने घोषित राजकोषीय सहायता का पूरा उपयोग नहीं किया है। इसका उपयोग न करने के पीछे कई कारक जिम्मेवार हैं जिनमें घोषणाओं का एहतियाती स्वरूप, स्थिरता और चलनिधि स्थितियों में सुधार, कार्यान्वयन में विलंब शामिल हैं। कुल मिलाकर ये कदम सरकारों को वित्तीय संस्थाओं के दिवालिएपन को रोक पाने में समर्थ बना पाये। हालांकि, निजी क्षेत्र की मांग में काफी कमी होने के कारण अर्थव्यवस्थाएं गिरती रहीं। इस प्रकार, विश्वभर में सरकारों को एक साथ अभूतपूर्व स्तर के विवेकाधीन प्रति-चक्रीय राजकोषीय नीतिगत उपाय शुरू करने के लिए आगे आना पड़ा।

IV. प्रति-चक्रीय राजकोषीय नीति : कीन्स के उपाय

प्रति-चक्रीय राजकोषीय नीति की प्रभावशीलता

4.64 हाल के संकट के कारण राजकोषीय नीति का समष्टि-आर्थिक स्थिरीकरण के प्रति-चक्रीय साधन के रूप में पुनरुत्थान हुआ। इस संदर्भ में, सभी देशों में अपनाये गये प्रति-चक्रीय उपायों के प्रलेखन से पहले प्रति-चक्रीय राजकोषीय नीति की प्रभावशीलता पर चर्चा की समीक्षा करना प्रासंगिक होगा।

4.65 सामान्य कारोबारी चक्रों में प्रति-चक्रीय उपायों के रूप में विवेकाधीन राजकोषीय नीति की प्रभावशीलता पर चर्चा की गई है और अस्सी के दशक तक कई कारणों से यह नीति काफी बदनाम रही। नियम-आधारित नीति की आम प्रथा होने के कारण मौद्रिक नीति प्रति-चक्रीय नीति के लिए मुख्य नीतिगत साधन बन गयी। प्रति-चक्रीय राजकोषीय उपायों के लिए राजकोषीय नीति की एकमात्र भूमिका स्वचालित स्थिरीकारियों का परिचालन लागू होना था अर्थात् आर्थिक गिरावट के दौरान राजस्व संग्रहण में कमी और सामाजिक सुरक्षा कवच पर खर्च में वृद्धि, जिसके कारण राजकोषीय घाटे में वृद्धि और आर्थिक वृद्धि के दौरान इसके विपरीत स्थिति होती है (बॉक्स IV.5)।

4.66 तथापि वर्तमान संकट की गंभीरता और अभूतपूर्व स्वरूप के कारण प्रति-चक्रीय उपायों के रूप में विवेकाधीन राजकोषीय नीति की सार्थकता एक बार फिर से सामने आ गई है। यह तर्क दिया जाता है कि ऐसे स्थितियों में चलनिधि के फसने की स्थिति के कारण मौद्रिक नीति अप्रभावी और विश्वास में सामान्य कमी एवं ऋण बाज़ारों की निक्रियता से उत्पन्न मौद्रिक संचारण प्रणाली असफल हो सकती है। स्वचालित स्थिरीकारियों का आकार भी उत्पादन में कमी की तुलना में

बॉक्स IV.5
प्रति-चक्रीय उपायों के रूप में विवेकाधीन राजकोषीय नीति

अनेक अंतर-संबद्ध कारणों से समष्टि-आर्थिक स्थिरीकरण के उद्देश्य से विवेकाधीन राजकोषीय नीति ने अस्सी के दशक के प्रारंभ में अपनी विश्वसनीयता खो दी थी। धीरे-धीरे यह समझा जाने लगा कि अस्थायी कर कटौती में बचत की सीमांत प्रवृत्ति उच्च होगी और इस प्रकार, सकल मांग को बढ़ाने में राजकोषीय नीति अप्रभावी होगी। सकल मांग को बढ़ाने के लिए सरकारी खर्च में वृद्धि भी दीर्घकालिक ब्याज दरों में बढ़ोतरी के कारण आखिरकार निष्प्रभावित हो जायेगी। उपभोग की आयात प्रवृत्ति के बढ़ने से अर्थव्यवस्थाओं का बढ़ता वैश्वीकरण राजकोषीय नीति के द्वारा प्रदत्त राष्ट्रीय आर्थिक प्रोत्साहन के रिसाव में वृद्धि हुई। वित्तीय बाज़ारों के विनियमन और ऋण बाज़ारों तक पहुंच आसान करने के बाद ऋण-नियंत्रित परिवारों के अनुपात में कमी ने राजकोषीय नीति के प्रवर्धक प्रभाव को भी कम कर दिया। राजकोषीय नीति की बड़ी खुराक के द्वारा कम राजकोषीय प्रवर्धक की क्षतिपूर्ति को भी वांछनीय नहीं समझा गया, क्योंकि बढ़ते राष्ट्रीय ऋण से उत्पन्न भारी हानियां बहुत अधिक होंगी और सकल मांग पर उनका अस्थिरकारी प्रभाव हो सकता है (फेल्डस्टीन, 2002)। राजकोषीय नीति के अनुसरण में शामिल प्रशासनिक और राजनीतिक प्रक्रिया के कारण कई विलंब शामिल हैं जैसे मान्यता विलंब, कार्यान्वयन विलंब और सकल मांग पर विलंब प्रभाव। ये अंतराल राजकोषीय नीति के प्रभाव की अनिश्चितता को बढ़ा देते हैं जिनका अर्थव्यवस्था पर अस्थिरकारी प्रभाव हो सकता है।

दूसरी ओर, मौद्रिक नीति धीरे-धीरे कई कारणों से प्रति-चक्रीय उद्देश्यों के लिए पहली नीतिगत पसंद बन गई। पहला, चक्रीय गिरावट की विशिष्ट अल्पावधि में मौद्रिक नीति राजकोषीय नीति की तुलना में तेजी से समायोजनों के लिए अधिक जिम्मेदार है। दूसरा, मौद्रिक नीति राजकोषीय नीति की तुलना में आवश्यक प्रोत्साहन के समय और परिमाण का निर्णय अच्छे से करने में समर्थ है। तीसरा, नियम-आधारित ब्याज दर नीति के संबंध में नीति-निर्माण में पर्याप्त परिवर्तन हुए, जो मुद्रास्फीति और उत्पादन अंतराल, दोनों के परिवर्तनों की व्यवस्थित ढंग से अनुक्रिया करती है। टेलर (2000) ने विवेकाधीन राजकोषीय नीति की भूमिका का पुनर्निर्धारण करते समय यह निष्कर्ष निकाला था कि केवल स्वचालित स्थिरीकारियों को प्रति-चक्रीय राजकोषीय नीति की भूमिका अदा करनी चाहिए। विवेकाधीन राजकोषीय नीति, जो स्थिरीकरण भूमिका में हस्तक्षेप कर सकती है जो मौद्रिक नीति द्वारा व्यवस्थित ढंग से निभाया जाता है, को कर सुधार और सामाजिक सुरक्षा सुधार जैसे दीर्घकालिक मुद्दों पर ही अपना ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

हालांकि ऐसे भी विचार हैं जो विशिष्ट आर्थिक स्थितियों में मौद्रिक नीति की तुलना में विवेकाधीन राजकोषीय नीति का समर्थन करते हैं। इस विचार के अनुसार लगातार गिरावट की स्थिति में, जब सकल मांग और ब्याज दरें कम हों एवं मूल्य गिर रहे हों या शीघ्र ही गिरने वाले हों, विवेकाधीन राजकोषीय नीति रचनात्मक भूमिका निभा सकती है। अपेक्षित राजकोषीय प्रोत्साहन भी बजट घाटे में वृद्धि किये बिना, लेकिन वर्धित निजी खर्च के लिए प्रोत्साहन प्रदान कर प्राप्त की जा सकती है (फील्डस्टीन 2002)। एलमेंडॉर्फ और फर्मैन (2008) भी यह तर्क देते हैं कि तेजी से बिगड़ती आर्थिक स्थितियों में एक सु-व्यवस्थित विवेकाधीन राजकोषीय प्रोत्साहन मौद्रिक प्रोत्साहन की तुलना में आर्थिक कार्यकलाप को अधिक तेजी से बढ़ाने का संभाव्य लाभ होता है। इसके अलावा, विश्वास खोने के साथ तेज गिरावट के दौरान नीतिगत दरों के लगभग शून्य होने के कारण मौद्रिक नीति न केवल अप्रभावी हो सकती है बल्कि मौद्रिक नीति की संचारण व्यवस्था में वियोजन भी हो सकता है। ऐसी स्थिति में किसी अन्य प्रोत्साहन की तुलना में राजकोषीय प्रोत्साहन की जरूरत होगी। इस प्रकार राजकोषीय और मौद्रिक प्रोत्साहन मिलकर अर्थव्यवस्था में प्रोत्साहन की कुल राशि के बारे में अनिश्चितता को कम कर सकते हैं।

संदर्भ

1. एल्मेंडोर्फ, डगलस डब्ल्यू और जसोन फर्ममान, 2008, "यदि, कब, कैसे: राजकोषीय प्रोत्साहन का परिचय", हमिलटन परियोजना, रणनीति आलेख, जनवरी।
2. फील्डस्टीन, मार्टिन, 2002, "कम ब्याज दर वाले माहौल में विवेकाधीन राजकोषीय नीति की भूमिका", एनबीईआर कार्यकारी आलेख 9203।
3. टेलर जॉन बी. 2000, विवेकाधीन राजकोषीय नीति का पुनर्मूल्यांकन करना'', जर्नल ऑफ इकॉनॉमिक पर्सपेक्टिव्ज, 14(3), 21-36.

अपेक्षाकृत छोटा हो सकता है। दूसरी ओर, अन्य कई कारक विवेकाधीन राजकोषीय नीति को प्रासंगिक बना सकते हैं। इनमें शामिल हैं: सरकार द्वारा लक्षित खर्च की संभावना, मौद्रिक और राजकोषीय नीति की पूरक भूमिका, सरकारी प्रतिभूतियों की अधिक मांग जो बिना परेशानी के सरकारी उधार में सहायता करती है और गिरावट के दीर्घकालिक स्वरूप के मद्देनजर विवेकाधीन राजकोषीय नीति के कार्यान्वयन विलंब की निरर्थकता। हालांकि वर्तमान संदर्भ में विवेकाधीन राजकोषीय नीति की बढ़ती सार्थकता पर बल देने वाले ये विचार निर्विरोध नहीं रहे हैं (बॉक्स IV.6)।

4.67 विवेकाधीन राजकोषीय नीति को आगे लाने की जरूरत के संबंध में विरोधाभाषी विचार होने के बावजूद अनुभव से यह पता चला है कि कई देशों ने विगत गिरावटों के दौरान विवेकाधीन राजकोषीय नीति को क्रियाशील किया था। जी-7 देशों में विगत चार दशकों के दौरान आर्थिक गिरावटों के 23 प्रतिशत मामलों में विवेकाधीन राजकोषीय नीति को अपनाया गया था, हालांकि इसे गिरावट के शुरू होने के कुछ समय बाद शुरू किया गया था। उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में गिरावट में राजकोषीय अनुक्रिया की बारंबारता उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में आधी रही लेकिन भारी गिरावट के के समय उनकी कार्रवाई का

बॉक्स IV.6
हाल के संकट में राजकोषीय नीति की सार्थकता

विगत गिरावटों की तुलना में हाल की वैश्विक मंदी के बहुत गंभीर होने और लंबी अवधि तक चलने की संभावना थी। विश्वव्यापी मंदी के कारण अलग-अलग देशों के स्तर पर निर्यात द्वारा मंदी से निकलने को विकास के पुनरुद्धार का विकल्प नहीं माना गया। ब्याज दरें कम करने की सामान्य मौद्रिक नीति के भी निजी उपभोग मांग में तेजी से ऐसी गिरावट के प्रतिवर्ती होने की संभावना नहीं थी। विश्वास की कमी और ऋण बाज़ारों की दुक्रिया ने मौद्रिक नीति की संचारण व्यवस्था को अप्रभावी बना दिया। इसके अलावा, कई देशों में मौद्रिक नीति को और आसान करने की संभावना बहुत ही सीमित थी। इस प्रकार, आर्थिक गिरावट को रोकने के लिए प्रति-चक्रीय विवेकाधीन राजकोषीय नीति का कोई विकल्प नहीं था (समर्स, 2008)।

हाल की वैश्विक मंदी में मौद्रिक नीति की सहायता के लिए राजकोषीय नीति की जरूरत के लिए पेश तर्कों का सारांश निम्नानुसार है: पहला, राजकोषीय नीति को लागू करने पर यह मौद्रिक नीति की तुलना में तेजी से कार्य करती है। दूसरा, राजकोषीय नीति हिताधिकारियों को लक्ष्य बना सकती है और सीधे रोजगार के अवसर बढ़ा सकती है। तीसरा, मौद्रिक नीति पर पूरा विश्वास होने पर ब्याज दरें ऐसे स्तरों पर आ सकती है जिनका विनिमय दर, पण्य मूल्यों, भावी आस्ति मूल्यों और नैतिक पतन पर प्रतिकूल प्रभाव हो सकता है। चौथा, जब नीतिगत प्रभाव अनिश्चित होते हैं तो प्रोत्साहन उपायों के विशाखीकृत समूह पर विश्वास करना विवेकसम्मत होगा। पांचवां, मौद्रिक संचारण प्रणाली कई देशों में अप्रभावी हो गई है। छठा, अत्यधिक गिरावट के दौरान मौद्रिक और राजकोषीय नीति के बीच पूरक भूमिका कम गिरावट की अवधि के दौरान की तुलना में अधिक होगी। सातवां, गंभीर मंदी के दौरान कमजोर मांग स्थितियों और क्षमता के अत्यधिक उपयोग की स्थिति में राजकोषीय विस्तार में मुद्रास्फीतिकारी दबाव की जोखिम नहीं भी हो सकती है। आठवां, कई देशों में परंपरागत मौद्रिक नीति को आसान करने की संभावना पहले से ही सीमित है। नौवां, दीर्घकाल तक चलने की संभावना वाली वर्तमान गिरावट कार्यान्वयन विलंब के कारण राजकोषीय नीति के प्रति-चक्रीय होने का जोखिम कम है। दसवां, निजी क्षेत्र की वर्धित जोखिम प्रतिकूलता ने सरकारी ऋण की मांग को बढ़ाया है, अत: सरकार बिना परेशानी के अपेक्षाकृत कम लागत पर उधार ले सकती है। ग्यारहवां, जब वित्तीय संकट कॉरपोरेट और घरेलू क्षेत्रों में फैलता है तो संकट की पूर्ववर्ती घटनाओं ने राजकोषीय प्रोत्साहन की जरूरत प्रदर्शित की है। बारहवां, स्वचालित स्थिरीकारियों का परिचालन गिरावट को रोकने के लिए पर्याप्त नहीं होगा। तेरहवां, राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों की अनुक्रिया करने वाले ऋण-नियंत्रित परिवारों का अनुपात बेरोजगारी के बढ़ने के साथ बढ़ गया है और वित्तीय बाज़ार सहभागियों के जोखिम अवबोधन को तेज कर दिया है। चौदहवां, यदि विवेकाधीन राजकोषीय उपाय नहीं अपनाये गये तो बेरोजगारी की दर में तेज और दीर्घकालिक वृद्धि मानव पूंजी में कमी की ओर उन्मुख हो सकती है तथा मध्य से दीर्घावधि में संभाव्य वृद्धि को कम कर सकती है (एचएम ट्रेजरी, 2008, कोहलर-टोगल्होफर और रीस, 2009; स्पिलिम्बर्गो आदि, 2008; समर्स, 2008)।

उपर्युक्त विचारों पर विवाद यह है कि वैश्विक संकट के प्रति नीतिगत अनुक्रियाओं में स्थिरीकरण और प्रेरण के उद्देश्यों के बीच अंतर करना चाहिए। किसी भी संकट में दर्द को कम करने के लिए स्थिरीकरण उपायों के जरिये समायोजन अपरिहार्य है। लेकिन प्रेरण समायोजन अवधि को समाप्त करना चाहता है, जो अरक्षणीय है। चूंकि बड़े स्तर की गिरावट में प्रत्याशाएं महत्त्वपूर्ण होती हैं अत: वर्तमान अल्पकालिक नीतिगत कार्यों में दीर्घकालिक धारणीयता की चिंताओं को ठीक से शामिल किया जाना चाहिए। एक बड़े विवेकाधीन राजकोषीय प्रोत्साहन में तीन मध्यकालिक जोखिम शामिल होते हैं। पहला, वर्तमान वैश्विक आर्थिक असंतुलनों के बने रहने या तीव्र होने का जोखिम है। कम बचत वाले देशों में मांग प्रोत्साहन प्रदान करने से उनके चालू खातों में घाटों को ठीक करने में रूकावट होगी जो उच्च बचत वाले देशों में उच्चतर घरेलू मांग के जरिये वैश्विक पुनर्संतुलन से असंगत होगी। दूसरा, राजकोषीय धारणीयता को क्षति पहुंचाई जा सकती है और राजकोषीय स्थिति एवं ऋण गुणवत्ता की धारणीयता के बारे में बाज़ारों द्वारा सवाल उठाना शुरू करने पर राजकोषीय संकट खड़ा कर सकते हैं। तीसरा, ऋण धारणीयता चिंताओं और मुद्रास्फीतिकारी वित्तपोषण के कारण आर्थिक कारकों द्वारा उच्चतर मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं का जोखिम होता है। मांग को बढ़ाने के लिए अत्यधिक राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों के कारण भी वित्तीय प्रणाली को स्थिर करने के लिए बहुत कम संसाधन उपलब्ध होने का जोखिम रहता है (हन्नोउन, 2009)। वित्तीय प्रणाली को और स्थिर करने तथा सुदृढ़ करने के लिए मजबूत उपायों के बिना राजकोषीय कार्यों द्वारा मंदी से स्थायी रूप से उबारने की संभावना नहीं है (बर्नानके, 2009)।

संदर्भ

1. बर्नान्के, बेन एस. 2009, "संकट और नीतिगत अनुक्रिया", स्टाम्प व्याख्यान, लंदन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स, लंदन, इंग्लैण्ड।
2. हन्नोउन, हर्वे, 2009, "दीर्घकालिक वहनीयता बनाम अल्पकालिक प्रोत्साहन: क्या समायोजन है", कुआलालम्पुर में नये वैश्विक वित्तीय माहौल में मौद्रिक और वित्तीय स्थिरता को संरक्षित करने से संबंधित 44वें सीसेन गवर्नरों के सम्मेलन में दिया गया व्याख्यान, बैंक फॉर इंटरनेशनल सेटलमेंट्स।
3. एच एम ट्रेजरी, 2008, "ठोस अतंर्राष्ट्रीय राजकोषीय अनुक्रिया का मामला", नवम्बर।
4. कोहलर-टोगल्होफर, वाल्पुरगा और लुकास रीस, 2009, "संकट के समय राजकोषीय प्रोत्साहन पैकेजों की प्रभावशीलता", मौद्रिक नीति और अर्थव्यवस्था, आर्थिक नीति की तिमाही समीक्षा, क्यू 1/09, ओसटेरीचिश नेशनल बैंक।
5. स्पिलिम्बर्गो, ए., एस. सिमनस्काई, ओ. ब्लानचार्ड और सी. कोटारेल्ली, 2008, " संकट के लिए राजकोषीय नीति", आईएमएफ स्टाफ स्थिति नोट, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, 29 दिसम्बर।
6. सम्मर्स, लारेंस एच. 2008, "राजकोषीय प्रोत्साहन के मुद्दे", संयुक्त आर्थिक समिति के समक्ष प्रमाण, 16 जनवरी।

स्तर काफी बड़ा था (आईएमएफ, 2008)। डैनियल आदि (2009) ने जी-7 देशों में गिरावट के दौरान विवेकाधीन राजकोषीय और मौद्रिक नीति के बीच अनुक्रिया की समय-सीमा और अस्थायीपन की तुलना की। उन्होंने पाया कि विवेकाधीन राजकोषीय नीतिगत अनुक्रिया कमजोर थी और मौद्रिक नीति की तुलना में कम तेज थी। परंतु यह परंपरागत अनुभव की तुलना में सामयिक थी। वर्ष 1960 से 2005 के दौरान 197 देशों के आंकड़ों पर आधारित साक्ष्य भी यह प्रदर्शित करते हैं कि राजकोषीय प्रोत्साहन कारोबारी चक्र के किसी भी अन्य चरण की तुलना में मंदी से उबरने के दौरान अधिक प्रभावी हो सकते हैं। ऐसा विशेषकर औद्योगिक देशों में बैंकिंग संकट से संबद्ध मंदी से उबरने में होता है (सेरा, आदि 2009)।

4.68 प्रति-चक्रीय उपायों के रूप में राजकोषीय नीति को प्रभावी बनाने के लिए अनेक विशेषताएं प्रस्तावित की गई हैं। राजकोषीय उपाय की विशेषताओं में ये शामिल होनी चाहिए (i) समय पर, कार्रवाई की तत्काल जरूरत को देखते हुए; (ii) काफी बड़े, क्योंकि मांग में कमी बड़ी होती है; (iii) टिकाऊ, क्योंकि मंदी के लंबे समय तक चलने की संभावना होती है; (iv) विशाखीकृत, क्योंकि विशिष्ट राजकोषीय उपायों की प्रभावशीलता के बारे में अनिश्चितता रहती है; (v) आकस्मिक, यह बताने के लिए कि जरूरत होने पर और कार्रवाई की जायेगी; (vi) देशों के बीच सामूहिक प्रयास, गिरावट की गंभीरता और वैश्विक स्वरूप के कारण, (vii) धारणीय, दीर्घकाल में किसी ऋण विस्फुटन न होने के रूप में ताकि अल्पकाल में कोई प्रतिकूल प्रभाव न हों (स्पिलम्बर्गो आदि, 2008)। जहां उपर्युक्त सभी विशेषताएं महत्त्वपूर्ण होंगी, वहीं देशों के बीच सामूहिक कार्य और धारणीयता संबंधी चिंताएं वर्तमान गिरावट के के संदर्भ में प्रासंगिक होंगी। इसके अलावा, यह महत्त्वपूर्ण है कि मौद्रिक नीति का स्वरूप समाहित करने वाला हो (बॉक्स IV.7)।

बॉक्स IV.7
राजकोषीय नीति की प्रभावशीलता के लिए कुछ अपेक्षाएं

राजकोषीय नीति की प्रभावशीलता के लिए ऋण की दीर्घकालिक धारणीयता महत्त्वपूर्ण प्रतिफल है। मुख्यत: ऋण चिंताओं के कारण संकट की विगत घटनाओं में उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाएं में राजकोषीय प्रोत्साहन का विकास पर सीमित प्रभाव था। जब ऋण के बारे में चिंताएं हों तो ब्याज दर जोखिम प्रीमियम बढ़ जायेगा, जिससे विवेकाधीन राजकोषीय नीति प्रति-उत्पादक हो जाती है (आईएमएफ, 2008)। बहु-देशीय संरचनागत मॉडल के साथ अनुरूपण से यह पाया गया है कि यदि राजकोषीय प्रोत्साहन से वर्धित राजकोषीय घाटा राजकोषीय अनुशासन में कमी के अवबोधन की अग्रसर होता है तो राजकोषीय प्रोत्साहन का प्रभाव अत्यधिक सीमित होगा या नकारात्मक प्रभाव भी हो सकता है (फ्रीडमैन आदि, 2009)। इस प्रकार, राजकोषीय प्रोत्साहन के केवल तब ही प्रभावी हेने की संभावना है जब विश्वसनीय प्रतिबद्धताओं के साथ इसे वापस मापने या मंदी से उबरने पर इसे उलटा कर पाये। इसके द्वारा राजकोषीय धारणीयता सुनिश्चित करने के लिए मध्यमावधि राजकोषीय ढाँचे को सुदृढ़ करने के महत्त्व को कम आंकना है। यह घोषित राजकोषीय उपायों को प्रतिवर्ती या आर्थिक स्थिति पर स्पष्ट सावधि विधि खंड के अनिश्चित होने; स्वचालिक स्थिरीकारियों का दायरा बढ़ाने; उन भावी नीतियों के प्रति पूर्व वचनबद्धताएं जो राजकोषीय खातों को सुधारने में सहायता करती हैं और विशिष्ट तारीख को या आकस्मिक आधार पर उपायों को नरम करने तथा राजकोषीय अभिशासन को सुदृढ़ करने की अपेक्षा करेगा।

गिरावट के वैश्विक स्वरूप और परिमाण के अनुसार प्रभावी विवेकाधीन राजकोषीय नीति के लिए अन्य महत्त्वपूर्ण प्रतिफल है, देशों के बीच समन्वित दृष्टिकोण। खुली अर्थव्यवस्थाओं में आयातों के जरिये राजकोषीय विस्तार में क्षरण होता हैं और अर्थव्यवस्था के बढ़ते खुलेपन के साथ क्षरण ज्यादा होता है। इन क्षरणों को व्यापारिक भागीदारों के बीच संगठित राजकोषीय प्रोत्साहन के जरिये निष्प्रभावी किया जा सकता है और घरेलू विस्तार पर राजकोषीय प्रोत्साहन के प्रभाव को काफी बढ़ाया जा सकता है। इसके अलावा, संगठित अनुक्रिया परिवारों और फर्मों के बीच विश्वास के स्तर को मिलकर बढ़ाने की सरकारों की इच्छा का सुदृढ़ संकेत भेजा जा सकता है तथा विश्वास की कमी से उत्पन्न विरोधाभाषी बलों का सामना किया जा सकता है।

जब सांकेतिक ब्याज दर को स्थिर रखकर मौद्रिक नीति उदार हो तो उच्चतर मांग के कारण मुद्रास्फीति में वृद्धि से वास्तविक ब्याज दरें गिरावट की ओर अग्रसर होंगी, जिससे राजकोषीय नीति की प्रभावशीलता बढ़ती है। फ्रीडमैन आदि (2009) ने पाया कि आयकरों में कमी के अलावा सभी प्रकार के राजकोषीय लिखतों का प्रवर्धक उदार मौद्रिक नीति बजाय इसके साथ काफी उच्च था।

संदर्भ

1. फ्रीडमैन, सी., एम. कुम्होफ, डी. लक्षटन और जे.ली, 2009, "वैश्विक राजकोषीय प्रोत्साहन का मामला", आईएमएफ स्टाफ स्थिति नोट, 6 मार्च।
2. एचएम ट्रेजरी, 2008. " ठोस अंतरराष्ट्रीय राजकोषीय अनुक्रिया का मामला", नवम्बर।
3. अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, 2008. "प्रति-चक्रीय साधन के रूप में राजकोषीय नीति", विश्व आर्थिक परिदृश्य, सितम्बर।

विभिन्न देशों में किये गये राजकोषीय प्रोत्साहन उपाय

4.69 विभिन्न देशों के संदर्भ में हंगरी, आइसलैण्ड और आयरलैण्ड को छोड़कर वस्तुत: सभी ओईसीडी देशों ने वर्तमान संकट के दौरान विवेकाधीन राजकोषीय उपाय अपनाये हैं। इन तीन देशों को अत्यधिक बजट घाटे या संकट से संबद्ध खर्च के कारण सार्वजनिक ऋण जुटाने में समस्याओं का सामना करना पड़ा था। इसके परिणामस्वरूप इन तीनों देशों की सरकारों को राजकोषीय नीति को कठोर बनाने के लिए बाध्य होना पड़ा। ये कार्रवाइयां साथ-साथ और एक जैसे कारण से करनी पड़ी, जो अभूतपूर्व थीं। वर्ष 2008-10 की अवधि में राहत पैकेज चलाने वाले ओईसीडी देशों के लिए संकट की सीधी अनुक्रिया के कारण राजकोषीय प्रोत्साहन पैकेज का औसत आकार वर्ष 2008 के क्षेत्र-वार जीडीपी का 3.5 प्रतिशत अनुमानित है। फिर भी, अलग-अलग देशों में राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों के आकार में काफी अंतर रहा है जो आंशिक रूप से संकट की तीव्रता में भिन्नता, प्रारंभिक राजकोषीय स्थिति और स्वचालित स्थिरीकारियों के आकार को प्रतिबिम्बित करता है। पाँच देशों (आस्ट्रेलिया, कनाडा, कोरिया, न्यूजीलैण्ड और अमरीका) ने जीडीपी के 4.0 प्रतिशत से अधिक के पैकेजों की घोषणा की है (चार्ट IV.3)।

4.70 इसी प्रकार जी-20 देशों के बीच भी राजकोषीय प्रोत्साहन का आकार जीडीपी के 0.2 प्रतिशत (यूके) से लेकर जीडीपी के 2.4 प्रतिशत (सऊदी अरब) के बीच भिन्न-भिन्न है। 2009 के दौरान सभी जी-20 देशों ने जीडीपी के 0.2 प्रतिशत (इटली) से लेकर जीडीपी के 4.1 प्रतिशत (रूस) के बीच राजकोषीय प्रोत्साहन के उपाय घोषित किये तथा उनमें से लगभग आधे देशों के ऐसे उपायों का आकार जीडीपी का 2.0 प्रतिशत या अधिक था। वर्ष 2009 के दौरान राजकोषीय प्रोत्साहन पैकेज उन्नत जी-20 देशों की तुलना में उभरते जी-20 देशों में कुछ अधिक था। वर्ष 2010 के दौरान अधिकांश देशों में प्रोत्साहन उपाय जारी रहेंगे, अलबत्ता इनकी मात्रा में कुछ कमी आयेगी। हालांकि फ्रांस, जर्मनी, कोरिया तथा सऊदी अरब जैसे देशों में वर्ष 2010 के दौरान राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों का स्तर अन्य देशों के मुकाबले बड़ा रहेगा (सारणी 4.12)।

चार्ट IV.3 : वर्ष 2008-10 के दौरान ओईसीडी देशों में राजकोषीय पैकेजों (राजस्व और खर्च उपायों) का आकार (2008 के जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)

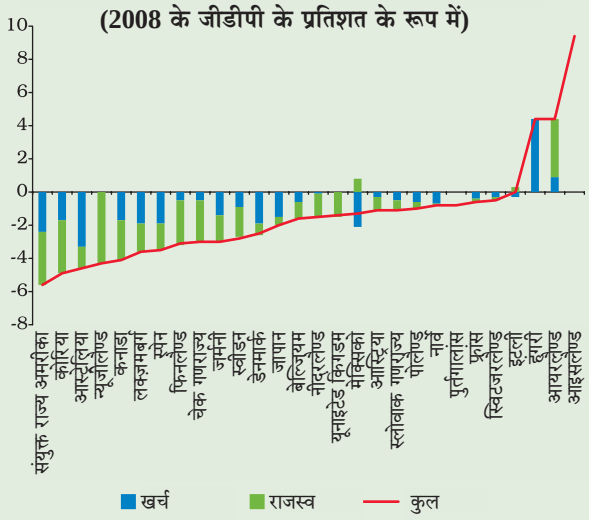

स्रोत: ओईसीडी आर्थिक परिदृश्य, 2009

4.71 अन्य बातों के साथ-साथ विवेकाधीन राजकोषीय नीति की जरूरत तब पड़ती है जब स्वचालित स्थिरीकारियों का परिचालन कमजोर हो। अत: गिरावट के दौरान नकारात्मक उत्पादन अंतराल को देखते हुए यह आशा की जाती है कि विवेकाधीन राजकोषीय प्रोत्साहन उपयों के आकार और स्वचालित स्थिरीकारियों के आकार का संबंध उलटा होगा। ओईसीडी देशों के बीच उन देशों ने सामान्यत: कम विवेकाधीन राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों की घोषणा की जिनमें उच्चतर स्वचालित स्थिरीकारी उपाय लागू किये गये थे (चार्ट IV.4)।

सारणी 4.12 वर्ष 2008-10 में जी-20 देशों में विवेकाधीन उपायों का आकार

देश	विवेकाधीन		
	2008	2009	2010
1	2	3	4
अर्जेन्टिना	0.0	1.5	0.0
आस्ट्रेलिया	0.7	2.9	2.0
ब्राजील	0.0	0.6	0.6
कनाडा	0.0	1.9	1.7
चीन	0.4	3.1	2.7
फ्रांस	0.0	0.7	0.8
जर्मनी	0.0	1.6	2.0
भारत	0.6	0.6	0.6
इंडोनेशिया	0.0	1.4	0.6
इटली	0.0	0.2	0.1
जापान	0.3	2.4	1.8
कोरिया	1.1	3.6	4.7
मेक्सिको	0.0	1.5	1.0
रूस	0.0	4.1	1.3
सऊदी अरब	2.4	3.3	3.5
दक्षिण अफ्रीका	1.7	3.0	2.1
टर्की	0.0	0.8	0.3
यूनाइटेड किंगडम	0.2	1.6	0.0
संयुक्त राज्य अमरीका	1.1	2.0	1.8

स्रोत: आईएमएफ स्टाफ स्थिति नोट, राजकोषीय कार्य विभाग, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, जुलाई 2009।

चार्ट IV.4: ओईसीडी देशों में विवेकाधीन राजकोषीय प्रोत्साहन और स्वचालित स्थिरीकारी

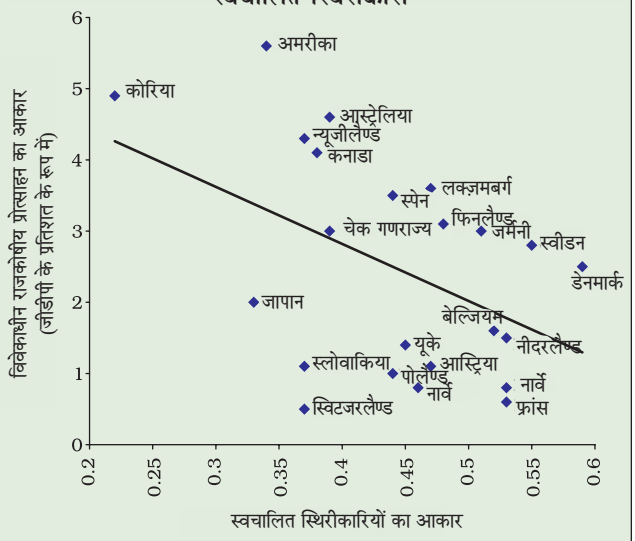

स्रोत: ओईसीडी आर्थिक परिदृश्य, 2009 ।

4.72 यह भी आशा की जाती है कि स्वचालित स्थिरीकारियों के आकार के आधार पर प्रोत्साहन पैकेजों का आकार गिरावट या नकारात्मक उत्पादन अंतरालों के परिमाण में अंतरों द्वारा स्पष्ट किया जायेगा। जी-20 देशों के चुनिंदा समूह के लिए यह कुछ हद तक सही था (चार्ट IV.5)।

4.73 विवेकाधीन राजकोषीय प्रोत्साहन की विशिष्ट खुराक प्रदान करने की सरकार की क्षमता उपलब्ध राजकोषीय गुंजाइश द्वारा निर्धारित की जायेगी। इस उपलब्ध राजकोषीय गुंजाइश का महत्त्वपूर्ण संकेतक प्रारंभिक ऋण का स्तर है। इस संबंध में पूर्ववर्ती संकटों के अनुभव से पता चला है कि कुछ कमजोर राजकोषीय स्थितियों के कारण कुछ विकासशील देशों को राजकोषीय संकुचन नीति अपनाने के लिए बाध्य होना पड़ा था, जिससे संकट की लागत अधिक उच्च हो गई थी (पेरी, सर्वेन और सुएसकुन, 2007)। जी-20 देशों के बीच विवेकाधीन प्रोत्साहन का आकार सार्वजनिक ऋण के प्रारंभिक स्तर द्वारा नियंत्रित होता लगता है अर्थात् प्रारंभिक सार्वजनिक ऋण का स्तर जितना अधिक होगा, विवेकाधीन राजकोषीय प्रोत्साहन का आकार उतना ही कम होगा (चार्ट IV.6)। हालांकि ओईसीडी देशों के लिए पैकेज के आकार और बकाया ऋण के स्तर के बीच कोई उल्लेखनीय संबंध नहीं पाया गया (बीआईएस, 2009)। इसका अर्थ यह है कि ओईसीडी देशों में राजकोषीय प्रोत्साहन प्रदान करने का निर्णय लेते समय ऋण धारणीयता की चिंताओं पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता होगा।

4.74 प्रोत्साहन उपायों के आकार के अलावा उनका संघटन भी अलग-अलग देशों में अलग-अलग था। ओईसीडी देशों में अधिकांश ने खर्चों को बढ़ाने के बजाय करों में कटौती को प्राथमिकता प्रदान की है। करों में कटौती व्यक्तियों, कारोबारियों, उपभोग और सामाजिक अंशदान में की गई है। खर्च उपायों में अंतिम उपभोग पर खर्च, निवेश, परिवारों का स्थानांतरण, कारोबारों का अंतरण और उप-राष्ट्रीय सरकारों

चार्ट IV.5: जी-20 देशों में विवेकाधीन राजकोषीय प्रोत्साहन और उत्पादन अंतराल

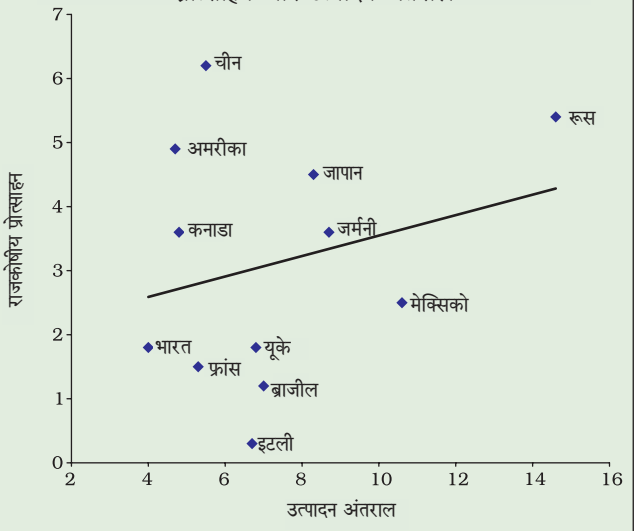

स्रोत: आईएमएफ स्टाफ स्थिति नोट, जुलाई 2009 ।

चार्ट IV.6: जी-20 देशों में विवेकाधीन राजकोषीय प्रोत्साहन और प्रारंभिक ऋण स्थिति

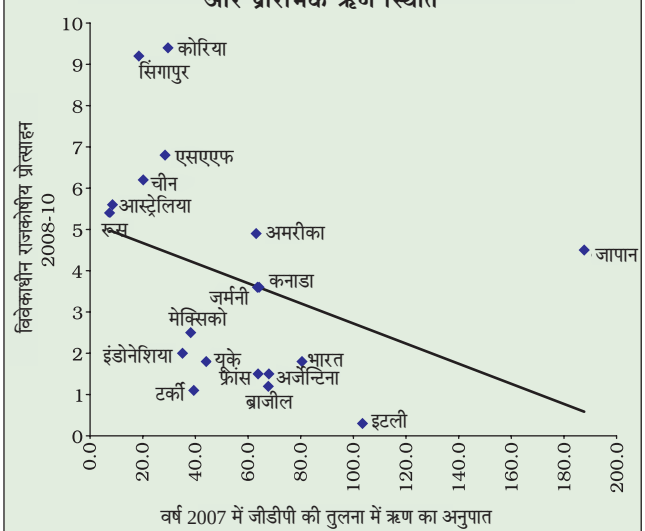

स्रोत: आईएमएफ स्टाफ स्थिति नोट, जुलाई 2009 ।

को अंतरण शामिल थे। अधिकांश देशों ने करों में कटौती को व्यक्तिगत आयकर तक और कुछ कम स्तर पर कारोबार कर तक संकेंद्रित रखा। खर्च के उपायों में अनेक देशों ने निवेश (बुनियादी संरचना) पर खर्च और अंतरणों के द्वारा सुरक्षा कवचों के प्रावधान पर खर्च में वृद्धि की है (सारणी 4.13)।

4.75 गत अनुभव से पता चलता है कि आर्थिक संकट के दौरान कर कटौती कम प्रभावी होती है क्योंकि अनिश्चितताओं के कारण इस कटौती से बचत की प्रवृत्ति बढ़ जाती है। इस प्रकार ओईसीडी देशों में कर कटौती पर बल जीडीपी पर प्रभाव तक सीमित रहा। हालांकि कर कटौती व्यक्तिगत करों तक अधिक केंद्रित रही है जो पारिवारिक क्षेत्र की आय को बढ़ाने में सहायक है। यह अल्पकाल में विकास पर कम प्रभाव के बावजूद आगे चलकर मंदी से उबरने की गति को बढ़ा सकती है (बीआईएस 2009)। लातीनी अमरीका में संकट के अनुभव से पता चला है कि संकट से उत्पन्न राजकोषीय मितव्ययता बुनियादी संरचना वाली परियोजनाओं पर खर्च में असंगत कटौती की ओर अग्रसर होती है जिससे दीर्घकालीन विकास संभावनाओं में बाधा पड़ती है (ईस्टर्नली और सर्वेन, 2003)। ओईसीडी देशों ने कर कटौती की तुलना में खर्च में बढ़ोतरी पर कम बल दिया है। हालांकि, बुनियादी संरचना और सामाजिक सुरक्षा कवच पर खर्च पर संकेंद्रण जीडीपी पर प्रभाव को

सारणी 4.13 : वर्ष 2008-10 के दौरान ओईसीडी देशों में राजकोषीय पैकेजों का संघटन (जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)

देश	कर उपाय					खर्च उपाय					
	व्यक्ति	कारोबार	उपभोग	सामाजिक अंशदान	कुल	अंतिम उपभोग	निवेश	परिवारों को अंतरण	कारोबार को अंतरण	उप-राष्ट्रीय को सरकारी अंतरण	कुल
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
आस्ट्रेलिया	-1.1	-0.2	0.0	0.0	-1.3	0.0	2.6	0.8	0.0	0.0	3.3
आस्ट्रिया	-0.8	-0.1	0.0	0.0	-0.8	0.0	0.1	0.1	0.0	0.1	0.3
बेल्जियम	-0.3	-0.6	-0.1	0.0	-1.0	0.0	0.1	0.5	0.0	0.0	0.6
कनाडा	-0.8	-0.3	-1.1	-0.1	-2.4	0.1	1.3	0.3	0.1	-	1.7
चेक गणराज्य	0.0	-0.4	-0.1	-2.0	-2.5	-0.1	0.2	0.0	0.4	0.0	0.5
डेनमार्क	0.0	0.0	0.0	0.0	-0.7	0.9	0.8	0.1	0.0	0.0	1.9
फिनलैण्ड	-1.9	0.0	-0.3	-0.4	-2.7	0.0	0.3	0.1	0.0	0.0	0.5
फ्रांस	-0.1	-0.1	0.0	0.0	-0.2	0.0	0.2	0.1	0.0	0.0	0.4
जर्मनी	-0.6	-0.3	0.0	-0.7	-1.6	0.0	0.8	0.2	0.3	0.0	1.4
हंगरी	-0.1	-1.5	1.6	0.0	0.0	-	0.0	-	-	0.0	-4.4
आयरलैण्ड	2.0	-0.2	0.5	1.2	3.5	-0.7	-0.2	-0.1	0.0	0.0	-0.9
इटली	0.0	0.0	0.1	0.0	0.3	0.3	0.0	0.2	0.1	0.0	0.3
जापान	-0.1	-0.1	-0.1	-0.2	-0.5	-0.2	0.3	0.5	0.4	0.3	1.5
कोरिया	-1.4	-1.2	-0.2	0.0	-3.2	0.0	0.9	0.1	0.5	0.2	1.7
लक्ज़मबर्ग	-1.2	-0.5	0.0	0.0	-1.7	0.0	0.7	1.0	0.2	0.0	1.9
मेक्सिको	0.0	0.0	-0.4	0.0	0.8	0.0	1.1	0.3	0.4	0.0	2.0
नीदरलैण्ड	-0.2	-0.4	0.0	-0.8	-1.4	0.0	0.0	0.1	0.0	0.0	0.1
न्यूज़ीलैण्ड	-4.3	0.0	0.0	0.0	-4.3	0.1	0.6	-0.6	0.0	0.0	0.0
नार्वे	0.0	-0.1	0.0	0.0	-0.1	0.0	0.3	0.0	0.0	0.3	0.7
पोलैण्ड	0.0	-0.1	-0.2	0.0	-0.4	0.0	1.3	0.1	0.0	0.0	0.6
स्लोवाक गणराज्य	-0.6	-0.1	0.0	0.0	-0.6	0.0	0.0	0.0	0.5	0.0	0.5
स्पेन	-1.6	0.0	0.0	0.0	-1.6	0.3	0.7	0.2	0.7	0.0	1.9
स्वीडन	-1.5	-0.2	0.0	-0.2	-1.8	0.7	0.3	0.1	0.0	0.0	0.9
स्विटजरलैण्ड	-0.2	0.0	0.0	0.0	-0.2	0.3	0.0	0.0	0.0	0.0	0.3
यूनाइटेड किंगडम	-0.6	-0.1	-0.7	0.0	-1.5	0.0	0.1	0.1	0.0	0.0	0.0
संयुक्त राज्य अमरीका	-2.4	-0.8	0.0	0.0	-3.2	0.7	0.3	0.5	0.0	0.9	2.4

नोट : कुल के कॉलम योग के कॉलम नहीं हैं क्योंकि कुछ घटक या तो स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट नहीं किये गये हैं या इस विश्लेषण में वर्गीकृत नहीं हैं।

स्रोत : ओईसीडी आर्थिक परिदृश्य, अंतरिम रिपोर्ट, मार्च 2009। आर्थिक सहयोग और आर्थिक विकास संगठन।

बढ़ायेगा और उन गरीबों को लाभ पहुंचेगा जो संकट के दौरान अधिक अरक्षित होते हैं।

4.76 जी-20 देशों के संबंध में वर्ष 2009 में घोषित राजकोषीय प्रोत्साहन का तीन-चौथाई से अधिक और वर्ष 2010 में लगभग दो-तिहाई खर्च उपायों को निरूपित करता है। खर्च उपाय भी स्वरूप की दृष्टि से अधिकांशत: अस्थायी थे जिनमें खासकर उभरते जी-20 देशों में विशेष ध्यान बुनियादी संरचना पर खर्च पर रहा। बुनियादी संरचना पर खर्च अधिकांशत: यातायात नेटवर्क पर है जो या तो केंद्र सरकार द्वारा प्रत्यक्ष रूप से या स्थानीय सरकारों को पूंजी अंतरण के द्वारा किया गया। इन देशों में से कई ने असुरक्षित समूहों को बचाने के लिए भी योजनाओं की घोषणा की है। कुछ अन्य ने लघु और मझोले उद्यमों को सहायता प्रदान के लिए कदम उठाए हैं। कुछ देशों ने स्वास्थ्य और शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए भी दीर्घकालिक नीतिगत मुद्दों के समाधान के लिए उपाय किये हैं और पर्यावरण के अनुकूल प्रौद्योगिकियों के लिए प्रोत्साहन योजनाएं शुरू की हैं। दूसरी ओर, व्यक्तिगत आयकर में घोषित कर कटौती लगभग सभी जी-20 देशों में स्थायी रही है। अप्रत्यक्ष कर छूटें कुछ देशों में स्थायी और अन्य में अस्थायी या स्वत: उलटने वाली रही हैं (सारणी 4.14)।

4.77 जी-20 देशों में राजकोषीय प्रोत्साहन पैकेज में खर्च संबंधी उपायों का अस्थायी स्वरूप यह इंगित करता है कि विकास पर प्रभाव अन्यथा लंबा हो सकता है। अस्थायी होने के कारण, घाटे पर प्रभाव भी अस्थायी होगा, जिससे ऋण धारणीयता चिंताएं मध्यम से दीर्घकाल में कम हो जायेंगी। इसके परिणामस्वरूप बढ़ी हुई दीर्घकालिक ब्याज दरों पर इसका प्रभाव कम होगा, जो प्रोत्साहन पैकेज के प्रभाव को कम कर सकती हैं। इसके अलावा, बुनियादी संरचना पर खर्च का संकेंद्रण बढ़ती दीर्घकालिक आपूर्ति क्षमता और विकास संभावना का अतिरिक्त लाभ होगा। गरीबों के संरक्षण के लिए विशिष्ट घोषणाएं भी गरीबों पर संकट के प्रतिकूल प्रभाव को कम कर सकेंगी, जो प्राय: पूर्ववर्ती संकटों की मार झेल चुके हैं। दूसरी ओर, प्रत्यक्ष कर कटौती के स्थायी स्वरूप के प्रयोज्य आय के स्थायी रूप से बढ़ाने से उपभोग में वृद्धि की संभावना है। हालांकि, इससे ऋण धारणीयता चिंताएं बढ़ सकती हैं क्योंकि उनका घाटे और ऋण पर स्थायी प्रभाव होगा। अत: कर

सारणी 4.14: जी-20 प्रोत्साहन उपाय, 2008-10

उपाय	अर्जेन्टिना	आस्ट्रेलिया	ब्राजील	कनाडा	चीन	फ्रांस	जर्मनी	भारत	इंडोनेशिया	इटली	जापान	कोरिया	मेक्सिको	रूस	सऊदी अरब	स्पेन	यूके	अमरीका
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19
खर्च																		
बुनियादी संरचना पर निवेश	अ	अ		अ	अ	अ	अ	अ	अ		अ	अ	अ		अ	अ	स्व	अ
लघु एवं मझौले उद्यमों और/ या कृषकों को सहायता							अ				अ	अ						
सुरक्षा कवच	अ	अ	अ	अ	अ	अ	अ		अ	अ	अ	अ	अ	अ		अ	अ	अ
आवास/निर्माण सहायता		अ	अ	अ	अ	अ	अ				अ			अ		अ	अ	
रणनीतिक उद्योगों को सहायता				अ	अ		अ	अ						अ		अ		
सार्वजनिक मजदूरी बिल में वृद्धि																		
अन्य		अ		अ	अ	अ	अ				अ	अ	अ			अ	अ	अ
राजस्व																		
सीआईटी/ मूल्यह्रास/ प्रोत्साहन		स्थायी	स्थायी	स्थायी		स्थायी	स्थायी		स्थायी		स्थायी	स्थायी	स्थायी	स्थायी				स्थायी
पीआईटी/ छूट / कटौतियां			स्थायी	स्थायी		अ	स्थायी		स्थायी		स्थायी					स्थायी	स्थायी	स्थायी
अप्रत्यक्ष कर कटौती/ छूट			अ		स्थायी		स्थायी	अ	स्थायी							स्व	स्व	
अन्य											स्थायी						स्थायी	

अ : अस्थायी उपाय (स्पष्ट सावधि निधि प्रावधानों या समय-बद्ध खर्च के साथ)
स्व : स्वत: उलटे होने वाले उपाय (ऐसे उपाय जिनकी लागत भावी वर्षों में क्षतिपूरक उपायों द्वारा पूरी की जाती है)
स्थायी : स्थायी उपाय (आवर्ती राजकोषीय लागतों के साथ)
स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (2009), 'लोक वित्त की स्थिति : 2008 के संकट के बाद का परिदृश्य और मध्यकालिक नीतियां', मार्च।

कटौती उपाय, विशेषकर अत्यधिक गिरावट की स्थिति में कम प्रभावी हो सकते हैं जहां कर कटौती में उपभोग की सीमांत प्रवृत्ति प्राय: कम मानी जाती है।

4.78 राजकोषीय प्रोत्साहन पैकेज अफ्रीका महाद्वीप के अनेक देशों में भी शुरू किये गये हैं। इन अधिकांश पैकेजों में बुनियादी संरचना के विकास पर बल दिया गया है। हालांकि कुछ देशों ने केवल सार्वजनिक क्षेत्र के वेतन में बढ़ोतरी के रूप में अनुक्रिया की, जबकि अन्य में व्यापक दृष्टिकोण अपनाया गया, जिनमें सार्वजनिक निवेश कार्यक्रम, सार्वजनिक क्षेत्र में रोजगार के अवसरों का विस्तार, सामाजिक खर्च में वृद्धि और निजी क्षेत्र को सहायता प्रदान करना शामिल है। दूसरी ओर, सरकार की आय में कमी के कारण कुछ देशों ने आर्थिक सहायता पर खर्च में कटौती कर राजकोषीय मितव्ययिता को अपनाया है (यूएनईएससीईसीए, 2009)।

राजकोषीय प्रोत्साहन का विकास पर प्रभाव

4.79 आर्थिक कार्यकलाप पर विवेकाधीन राजकोषीय प्रोत्साहनों के प्रभाव का मूल्यांकन करना अत्यधिक जटिल है और उनमें काफी अनिश्चितता निहित है। यह राजकोषीय प्रवर्धकों के अनुमान के लिए आर्थिक प्रतिमानों और विशिष्टताओं पर निर्भर व्यापक श्रृंखला वाले परिणामों से प्रतिबिम्बित होता है। उल्लेखनीय समस्या करों, अंतरणों और उन खर्चों में निक्रिय परिवर्तनों में अंतर की कठिनाई है जो राजकोषीय नीति में सही विवेकाधीन समायोजन को निरूपित करते हैं। प्रवर्धक भी देश की परिस्थितियों पर निर्भर करते हैं जिसमें प्रयुक्त लिखतों का प्रकार, व्यापार में खुलापन, उधार लेने पर प्रतिबंध, मौद्रिक नीति की अनुक्रिया और दीर्घकालिक धारणीयता शामिल हैं (बॉक्स IV.8)।

बॉक्स IV.8
राजकोषीय प्रवर्धक के निर्धारक

विकास पर राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों का प्रभाव राजकोषीय प्रवर्धकों पर निर्भर करता है। राजकोषीय प्रवर्धक अपनी संबंधित आधार रेखाओं के संबंध में राजकोषीय घाटे में बहिर्जात परिवर्तन की तुलना में उत्पादन में परिवर्तन (ΔY)का अनुपात है (स्पिलिम्बर्गो आदि, 2009)। दूसरी ओर राजकोषीय प्रवर्धक प्रयुक्त लिखत, मौद्रिक नीति के उदार होने की मात्रा और अर्थव्यवस्था के प्रकार पर निर्भर करते हैं। प्रवर्धक अपेक्षाकृत छोटी और खुली अर्थव्यवस्थाओं, वित्तीय बाज़ार प्रतिबंधों के प्रति अधिक भावप्रवण और मौद्रिक नीति के समायोजन के अधीन, छोटे होंगे। दूसरी ओर, ये उस स्थिति बड़े होंगे, जब पैकेज के संयोजन में संकट की विशिष्ट विशेषताओं को शामिल किया जाये। विश्वास समाप्त होने के साथ विशेषकर कर कटौती वाले राजकोषीय प्रवर्धकों में बचत की प्रवृत्ति के बढ़ने के कारण कम गिरावट की संभावना होती है। इस प्रकार सरकारी खर्च संबंधी उपायों से कर कटौती या एक मुश्त अंतरणों की तुलना में सकल मांग में अधिकतम अल्पकालिक प्रभाव होने की संभावना है। यदि कर कटौतियों को लागू किया जाना है तो इनको चलनिधि अवरोधों का सामना करने वालों को लक्ष्य बनाना चाहिए। यह पाया गया है कि अपेक्षाकृत गरीब परिवारों को लक्षित अंतरण प्रवर्धक होते हैं जो एक मुश्त अंतरण की तुलना में दो गुना होते हैं। इसके अलावा, अपेक्षाकृत गरीब परिवारों का बड़ा हिस्सा होने के कारण उभरते एशिया और अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाओं में प्रवर्धक अपेक्षाकृत बड़े होते हैं (फ्रीडमैन आदि, 2009)। अलग-अलग उपायों का चयन करने का मानदंड ऐसा होना चाहिए जो अल्पकाल में सकल मांग को बढ़ाएं और दीर्घकाल में सकल आपूर्ति को बढ़ाएं, जैसे बुनियादी संरचना पर खर्च और सक्रिय श्रम बाज़ार नीति तथा आयकर में कटौती विशेषकर कम आय अर्जकों के लिए (ओईसीडी, 2009)। अमरीका के मामले में एलमेंडोर्फ और फरमान (2008) विभिन्न विकल्पों को उनके अधिक प्रभावी, कम प्रभावी और अप्रभावी या प्रति-उत्पादक के रूप में वर्गीकृत कर अंतर करते हैं। अधिक प्रभावी विकल्पों में बेरोजगारी लाभों में अस्थायी वृद्धि, खाद्य स्टाम्प और सपाट एवं वापसीयोग्य कर जमाएं जारी करना शामिल हैं। प्रभावी विकल्प हैं- बुनियादी संरचना में निवेश में वृद्धि और अस्थायी निवेश कर प्रोत्साहन। दूसरी ओर, स्थायी स्वरूप वाले कर दर में कटौती जैसे विकल्प प्रति-उत्पादक हो सकते हैं।

संदर्भ

1. स्पिलिम्बर्गो, एंटोनिओ, स्टीव सिमनस्काई और मार्टिन शिंडलर, 2009, "राजकोषीय प्रवर्धक"। आईएमएफ स्टाफ स्थिति नोट, एसपीएन/09/11. 20 मई।
2. एल्मेंडोर्फ, डगलस डब्ल्यू. और जसोन फर्मान. 2008. "यदि, कब, कैसे : राजकोषीय प्रोत्साहन का परिचय", हमिलटन परियोजना, रणनीति आलेख, जनवरी।
3. फ्रीडमैन, सी., एम. कुम्होफ, डी. लक्षटन और जे. ली, 2009, "वैश्विक राजकोषीय प्रोत्साहन का मामला", आईएमएफ स्टाफ स्थिति नोट, 6 मार्च।
4. आर्थिक सहयोग और विकास संगठन, 2009. "राजकोषीय प्रोत्साहन की प्रभावशीलता और कार्यक्षेत्र", ओईसीडी आर्थिक परिदृश्य।

4.80 प्रवर्धक के अनुमान में आई समस्याओं के अलावा, कनाडा, फ्रांस और संयुक्त राज्य अमरीका जैसे कुछ देशों को छोड़कर घोषित प्रोत्साहन उपायों के वास्तविक कार्यान्वयन की जानकारी तत्काल उपलब्ध नहीं है। जून 2009 में इन तीन देशों में उपयोग की दर अमरीका में घोषित पैकेज के 41 प्रतिशत से लेकर कनाडा में 81 प्रतिशत तक है (हॉर्टन आदि, 2009)। यह बताना भी महत्त्वपूर्ण है कि सामान्य कारोबार चक्रों के दौरान अनुमानित राजकोषीय प्रवर्धक उस स्थिति में अत्यधिक भ्रामक हो सकते हैं जब विश्वास खोने जैसे गहरे और दीर्घकालिक संकट की अवधि के दौरान प्रयुक्त किये जायें। उपर्युक्त अनिश्चितताओं की स्थिति में राजकोषीय प्रवर्धक एक श्रृंखला में अनुमानित किये जाते हैं। ओईसीडी देशों में यह पाया गया है कि खर्च संबंधी उपायों के प्रवर्धक राजस्व संबंधी उपायों की तुलना में अधिक होते हैं। खर्च संबंधी उपायों में बुनियादी संरचना में निवेश में सर्वाधिक प्रवर्धक होता है जिसके बाद सरकार द्वारा माल की सीधी खरीद और सरकारी अंतरणों का स्थान है। राजस्व संबंधी उपायों में वैयक्तिक आय कर में कटौती का अप्रत्यक्ष कर कटौती की तुलना में अधिक प्रवर्धक होता है। प्रोत्साहन उपायों के प्रत्येक घटक का पहले वर्ष की तुलना में दूसरे वर्ष में प्रवर्धक अपेक्षाकृत उच्च होता है। प्रवर्धक भी अलग-अलग देशों में अलग-अलग होते हैं, जीडीपी की तुलना में व्यापार अनुपात के रूप में खुली अर्थव्यवस्था में सामान्यत: कम प्रवर्धक होते हैं (सारणी 4.15)।

सारणी 4.15: ओईसीडी देशों में प्रवर्धक

	उपभोग		निवेश		अंतरण		आयकर कटौती		अप्रत्यक्ष कर कटौती	
	वर्ष 1	वर्ष 2	वर्ष 1	वर्ष 2	वर्ष 1	वर्ष 2	वर्ष 1	वर्ष 2	वर्ष 1	वर्ष 2
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
अमरीका	0.7	0.8-1.1	0.9	1.1-1.3	0.5	0.8-0.9	0.3-0.5	0.5-0.9	0.2-0.3	0.3-0.5
जापान	0.7	0.8-1.1	0.9	1.1-1.3	0.5	0.8-0.9	0.3-0.5	0.5-0.9	0.2-0.3	0.3-0.5
जर्मनी	0.4	0.5-0.8	0.8	1.1-1.2	0.3	0.5-0.7	0.2-0.3	0.3-0.7	0.1-0.2	0.2-0.4
फ्रांस	0.6	0.7-1.0	0.8	1.0-1.2	0.4	0.7-0.8	0.2-0.4	0.4-0.8	0.2	0.2-0.4
इटली	0.6	0.7-1.0	0.8	1.0-1.2	0.4	0.7-0.8	0.2-0.4	0.4-0.8	0.2	0.2-0.4
यूके	0.5	0.6-0.9	0.8	1.0-1.2	0.4	0.6-0.8	0.2-0.4	0.4-0.8	0.2	0.2-0.4
कनाडा	0.5	0.6-0.9	0.8	1.0-1.2	0.4	0.6-0.7	0.2-0.4	0.4-0.7	0.1-0.2	0.2-0.4
आस्ट्रेलिया	0.3	0.4-0.7	0.7	0.9-1.1	0.2	0.4-0.6	0.1-0.2	0.3-0.6	0.1	0.2-0.3
आस्ट्रिया	0.3	0.4-0.7	0.7	0.9-1.1	0.2	0.4-0.6	0.1-0.2	0.3-0.6	0.1	0.2-0.3
बेल्जियम	0.3	0.4-0.7	0.7	0.9-1.1	0.2	0.4-0.6	0.1-0.2	0.2-0.6	0.1	0.1-0.3
चेक गणराज्य	0.3	0.4-0.7	0.7	0.9-1.1	0.2	0.4-0.6	0.1-0.2	0.2-0.6	0.1	0.1-0.3
डेनमार्क	0.3	0.4-0.7	0.7	0.9-1.1	0.2	0.4-0.6	0.1-0.2	0.3-0.6	0.1	0.2-0.3
फिनलैण्ड	0.4	0.5-0.8	0.8	1.0-1.2	0.3	0.5-0.7	0.2-0.3	0.3-0.7	0.1-0.2	0.2-0.4
यूनान	0.5	0.6-0.9	0.8	1.0-1.2	0.4	0.6-0.7	0.2-0.4	0.4-0.7	0.1-0.2	0.2-0.4
हंगरी	0.3	0.4-0.7	0.7	0.9-1.1	0.2	0.4-0.6	0.1-0.2	0.2-0.6	0.1	0.1-0.3
इजरायल	0.4	0.5-0.8	0.7	0.9-1.1	0.3	0.5-0.6	0.2-0.3	0.3-0.6	0.1-0.2	0.2-0.3
आयरलैण्ड	0.3	0.4-0.7	0.7	0.9-1.1	0.2	0.4-0.6	0.1-0.2	0.2-0.6	0.1	0.1-0.3
कोरिया	0.3	0.4-0.7	0.7	0.9-1.1	0.2	0.4-0.6	0.1-0.2	0.2-0.6	0.1	0.1-0.3
लक्ज़मबर्ग	0.3	0.4-0.7	0.7	0.9-1.1	0.2	0.4-0.6	0.1-0.2	0.2-0.6	0.1	0.1-0.3
मेक्सिको	0.5	0.6-0.9	0.8	1.1-1.2	0.4	0.6-0.8	0.2-0.4	0.4-0.8	0.2	0.2-0.4
नीदरलैण्ड	0.3	0.4-0.7	0.7	0.9-1.1	0.2	0.4-0.6	0.1-0.2	0.2-0.6	0.1	0.1-0.3
न्यूज़ीलैण्ड	0.5	0.6-0.9	0.8	1.0-1.2	0.4	0.6-0.7	0.2-0.4	0.4-0.8	0.2	0.2-0.4
नार्वे	0.5	0.6-0.9	0.8	1.0-1.2	0.4	0.6-0.8	0.2-0.4	0.4-0.8	0.2	0.2-0.4
पोलैण्ड	0.4	0.5-0.8	0.8	1.0-1.2	0.3	0.5-0.7	0.2-0.3	0.3-0.7	0.1-0.2	0.2-0.4
ताइवान	0.4	0.5-0.8	0.8	1.0-1.2	0.3	0.5-0.7	0.2-0.3	0.3-0.7	0.1-0.2	0.2-0.4
स्पेन	0.5	0.6-0.9	0.8	1.0-1.2	0.4	0.6-0.7	0.2-0.4	0.4-0.7	0.1-0.2	0.2-0.4
स्वीडन	0.4	0.5-0.8	0.7	0.9-1.1	0.3	0.5-0.6	0.2-0.3	0.3-0.6	0.1-0.2	0.2-0.4
टर्की	0.6	0.7-1.0	0.8	1.0-1.2	0.4	0.7-0.8	0.2-0.4	0.4-0.8	0.2	0.2-0.4

स्रोत: ओईसीडी आर्थिक परिदृश्य, अंतरिम रिपोर्ट, ओईसीडी, मार्च 2009 ।

4.81 उपर्युक्त प्रवर्धकों के आधार पर ओईसीडी देशों में घोषित प्रोत्साहन पैकेज का विकास पर प्रभाव आसन्न उत्पादन अंतराल के परिमाण की तुलना में कम (जीडीपी के 1.0 प्रतिशत से कम) होने का अनुमान है। यह स्लोवाकिया में जीडीपी के 0.1 प्रतिशत से लेकर आस्ट्रेलिया में जीडीपी के 1.6 प्रतिशत के बीच रहा। छह देशों यथा आस्ट्रेलिया, कनाडा, न्यूजीलैण्ड, पोलैण्ड, स्पेन और संयुक्त राज्य अमरीका में प्रभाव एक प्रतिशत से अधिक हो सकता था। वर्ष 2009 और 2010 के दौरान ओईसीडी में राजकोषीय प्रोत्साहन से जीडीपी को केवल 0.5 प्रतिशत की मदद मिलेगी। (ओईसीडी, 2009)।

4.82 जी-20 देशों के लिए भी आईएमएफ ने राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों के विभिन्न घटकों के लिए राजकोषीय प्रवर्धकों की एक श्रृंखला का अनुमान किया है। यह श्रृंखला कर कटौती के लिए 0.3 से 0.6; बुनियादी संरचना में निवेश के लिए 0.5 से लेकर 1.8 प्रतिशत और अन्य उपायों के लिए 0.3 से लेकर 1.0 के बीच है। ये अनुमान विभिन्न देशों में शुरू किये गये एक साथ उपायों को ध्यान में लेकर हैं जो आयातों के द्वारा क्षरण को कम करते हैं। इन प्रवर्धकों के होते हुए यदि वर्ष 2009 और 2010 में घोषित राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों को पूरी तरह से लागू किया जाता है तो जी-20 देशों के विकास पर संपूर्ण औसत प्रभाव जीडीपी के 0.7 से लेकर 2.8 प्रतिशत के बीच में होगा (सारणी 4.16)।

राजकोषीय जोखिमें

4.83 जहां विकास पर राजकोषीय प्रोत्साहन का प्रभाव अनिश्चित हो सकता है वहीं घाटे और ऋण का स्तर काफी बढ़ेगा। आर्थिक विकास के सुदृढ़ पुनरारंभ की मान्यता पर 2014 में उन्नत जी-20 देशों में समग्र राजकोषीय घाटा 2007 के स्तर से 2.5 प्रतिशत बिन्दु अधिक होने का अनुमान लगाया गया है। उभरते जी-20 देशों में यह 1.5 प्रतिशत बिन्दु अधिक होगा। इसी अवधि में उन्नत जी-20 देशों में ऋण अनुपातों के 40 प्रतिशत बढ़ने की आशा है। उभरते जी-20 देशों में प्रारंभ में कुछ वृद्धि के बाद इसके थोड़ा कम होने की संभावना है (हॉर्टन आदि, 2009)। गिरावट के जोखिम के सही साबित होने पर स्थिति अधिक खराब हो जायेगी। यह माना जा रहा है कि दीर्घकालिक गिरावट की संभावना को देखते हुए राजकोषीय प्रोत्साहन पहले से घोषित उपायों के परे जाने चाहिए बशर्ते पर्याप्त राजकोषीय गुंजाइश हो (फ्रीडमैन आदि, 2009)। इसने मध्य से दीर्घकाल में राजकोषीय धारणीयता और अन्य संबद्ध प्रभावों की चिंता बढ़ा दी है। उन देशों में समस्या और भी गंभीर होगी जो जनसंख्या की बढ़ती आयु की आसन्न चुनौती का पहले से ही सामना कर रहे हैं। पेंशन और स्वास्थ्य देखभाल, दोनों की संभावी लागत संकट की लागतों की दस गुणा से अधिक हो सकती है। अत: आवश्यक संस्थागत व्यवस्थाओं के साथ विश्वसनीय निकास रणनीति की आवश्यकता होगी।

सारणी 4.16: जी-20 देश - विकास पर राजकोषीय विस्तार का प्रभाव

(जीडीपी के प्रतिशत में और परिवर्तन प्रतिशत बिन्दुओं में)

	2009	2010	औसत
1	2	3	4
कम-उच्च श्रृंखला प्रभाव जी-20 का योग	1.2 to 4.7	0.1 to 1.0	0.7 to 2.8
उन्नत जी-20 देश	1.3 to 4.4	0.1 to 1.1	0.7 to 2.7
उभरते बाज़ार जी-20 देश	1.1 to 5.0	0.0 to 0.8	0.6 to 2.9

स्रोत: आईएमएफ स्टाफ स्थिति नोट, जुलाई 2009।

4.84 जहां राजकोषीय प्रोत्साहन पैकेज से निकलने की जरूरत को भलीभाँति माना गया है वहीं निकलने के सही समय को पहचानना मुश्किल है। यह नीतिगत दुविधा उत्पन्न करता है। राजकोषीय प्रोत्साहनों को बहुत जल्दी वापस लेने से मंदी से उबरने की प्रक्रिया निष्फल हो सकती है। दूसरी ओर, ऋण धारणीयता की चिंताएं बढ़ाकर देरी से वापस लेने पर ब्याज दरें बढ़ सकती हैं और प्रोत्साहनों की खुद की ही प्रभावशीलता को कम कर सकता है। यदि प्रोत्साहन उपायों को तेजी से वापस ले लिया जाये तो सार्वजनिक ऋण पर वित्तीय बचाव पैकेज का प्रभाव कई वर्षों तक रहेगा। उच्च सरकारी ऋण वास्तविक ब्याज दरों को बढ़ाकर निजी निवेश कम कर सकता है (बीआईएस, 2009)। इसके अलावा, समन्वित प्रोत्साहन उपाय करने के विपरीत पैकेज से बाहर निकलने का समय अलग-अलग देशों में अलग-अलग होना चाहिए। मुद्रास्फीति, विकास और बेरोजगारी की दृष्टि से देशों के बीच उल्लेखनीय भिन्नताएं हैं। कुछ देशों में अपस्फीति का डर है और उत्पादन अभी-भी घट रहा है, ऐसे देशों में पैकेज से बाहर सावधानी से और देरी से निकला जा सकता है। इसी प्रकार बहुत अधिक बेरोजगारी की दर वाले देशों में देरी से निकला जा सकेगा। दूसरी ओर अपेक्षाकृत उच्च मुद्रास्फीति और विकास वाले देशों में पैकेज से बाहर बहुत जल्दी निकलना होगा। फिर भी कुछ ऐसे देश हैं जहां विकास गति पकड़ रहा है लेकिन मुद्रास्फीति की स्थिति बहुत अच्छी है।

4.85 पैकेज से बाहर निकलने का समय कोई भी हो, विशेषकर उच्च ऋण वाली उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में समायोजन की मात्रा बहुत बड़ी होगी। ऐसा आर्थिक विकास में सुदृढ़ पुनरुत्थान के अधीन भी होगा। इन देशों में 2014 से शुरू होने वाले 15 वर्षों की अवधि में ऋण अनुपात को 60 प्रतिशत तक स्थिर करने के लिए आईएमएफ द्वारा वर्ष 2014 में पूर्वानुमानित प्राथमिक शेष की तुलना में प्राथमिक शेष में 5.4 प्रतिशत बिन्दु सुधार की अपेक्षा होगी। हालांकि उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के लिए अपेक्षित समायोजन सीमित होने का अनुमान है फिर भी उच्च ऋण वाली उभरती अर्थव्यवस्थाओं को पुनर्वित्त की चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है (सारणी 4.17)।

4.86 संक्षेप में, वर्तमान संकट की गंभीरता और अभूतपूर्व स्वरूप के कारण कीन्स की राजकोषीय नीति का पुनरुत्थान हुआ। आर्थिक गिरावट से उबरने के लिए विश्वभर के देशों ने साथ-साथ प्रतिचक्रीय राजकोषीय नीति को सक्रिय किया है। हालांकि प्रोत्साहन उपायों का आकार, संयोजन और अवधि अलग-अलग देशों में अलग-अलग रही है। प्रोत्साहन उपायों का आकार आंशिक रूप से स्वचालित स्थिरीकारियों के आकार, आर्थिक गिरावट के परिमाण और प्रोत्साहन प्रदान करने के लिए राजकोषीय गुंजाइश पर निर्भर रहा है। कुछ देशों ने कराधान संबंधी उपायों की तुलना में खर्च संबंधी उपायों पर अधिक विश्वास किया है।

सारणी 4.17: ऋण गतिकी और ऋण स्थिरीकारी प्राथमिक शेष

(प्रतिशत में)

	ऋण		प्राथमिक शेष		ऋण स्थिरीकारी प्राथमिक शेष[1]
	2009	2014	2009	2014	
उन्नत अर्थव्यवस्थाएं					
उच्च ऋण	101.8	121.7	-8.5	-0.9	4.5
न्यून ऋण	30.0	37.8	-2.8	1.1	0.4
उभरती अर्थव्यवस्थाएं					
उच्च ऋण	64.7	60.0	-1.3	1.0	1.8
न्यून ऋण	18.7	18.6	-3.3	0.9	0.2

1. 2014 के अंत के स्तर पर ऋण को स्थिर करने के लिए आवश्यक औसत प्राथमिक शेष, यदि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में संबंधित ऋण-जीडीपी अनुपात 60 प्रतिशत या उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं (न्यून ऋण अर्थव्यवस्थाओं) के लिए 40 प्रतिशत से कम हो; या 2029 में ऋण-जीडीपी अनुपात को 60 प्रतिशत तक लाने के लिए (उच्च ऋण वाले देश), यह मानते हुए कि 2014 के बाद ब्याज दर-विकास दर अंतर 1 प्रतिशत होगा।

स्रोत : हॉर्टन आदि (2009), 'लोक वित्त की स्थिति : सीमापार राजकोषीय निगरानी', आईएमएफ स्टाफ स्थिति नोट, जुलाई।

बुनियादी संरचना या उपभोग खर्च पर बल तथा प्रोत्साहन उपायों के अस्थायी या स्थायी स्वरूप भी भिन्न-भिन्न रहे हैं। हालांकि प्रोत्साहन उपायों का विकास पर सकारात्मक प्रभाव पड़ने की संभावना है लेकिन इसे किसी भी स्तर की निश्चितता से मापा नहीं जा सकता है। दूसरी ओर, कई देशों, विशेषकर उन्नत अर्थव्यवस्थाओं, का घाटा और ऋण अत्यधिक बढ़ जायेगा और लंबे समय तक बढ़े हुए स्तर पर बना रहेगा। इस प्रकार, मध्य से दीर्घकाल में ऋण धारणीयता चिंताएं एक महत्वूपर्ण मुद्दे के रूप में उबरी हैं। इसके परिणामस्वरूप पैकेज से यथाशीघ्र निकलने की जरूरत है। लेकिन सही समय की पहचान करना मुश्किल है। किसी भी मामले में राजकोषीय समायोजन की मात्रा, विशेषकर उन्नत देशों में बहुत बड़ी होगी। उदार मौद्रिक नीति के साथ बड़े स्तर के राजकोषीय विस्तार ने भी सक्रिय राजकोषीय और मौद्रिक नीति के समन्वय की जरूरत को बढ़ा दिया है।

V. राजकोषीय और मौद्रिक नीति का समन्वय

4.87 हालांकि राजकोषीय और मौद्रिक नीतियां दो भिन्न प्राधिकारियों द्वारा लागू की जाती हैं लेकिन यह आवश्यक नहीं हैं कि वे एक दूसरे से स्वतंत्र हों। किसी एक नीतिगत लिखत का एक से अधिक नीतिगत लक्ष्य पर प्रभाव होता है। इस प्रकार, एक नीति की प्रभावशीलता दूसरी नीति में परिवर्तनों द्वारा प्रभावित होती है। इस परस्पर-निर्भरता में दोनों के बीच विवाद उत्पन्न हो सकता है, विशेषकर उस स्थिति में जब वे भिन्न-भिन्न उद्देश्यों के लिए अपनाई जाती हों। इस प्रकार नीतिगत समन्वय की जरूरत उत्पन्न होती है जिसके बिना प्रत्येक नीति के उद्देश्यों को हासिल करना संभव नहीं है। हालांकि समन्वय का स्वरूप वित्तीय बाज़ारों के विकास के चरण पर निर्भर करेगा। जहां सरकारी ऋण के लिए कोई बाज़ार नहीं हैं और राजकोषीय घाटों का वित्तपोषण केंद्रीय बैंकों द्वारा किया जाता है वहां समन्वय अत्यधिक मुद्रास्फीति दरों से बचने के लिए घरेलू ऋण के अत्यधिक विस्तार को नियंत्रित करने के रूप में होगा। वित्तीय बाज़ारों में कुछ विकास और ब्याज दरों की संकेतक भूमिका में वृद्धि होने से समन्वय की जरूरत उच्च ब्याज दरों से बचने के लिए होगी, जो विकास को नुकसान पहुंचा सकती हैं। सुविकसित वित्तीय बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में, जहां केंद्रीय बैंकों ने मुद्रास्फीति को नियंत्रण में रखने में विश्वसनीयता प्रमाणित की है, नीतिगत समन्वय में कमी उच्च राजकोषीय घाटे का जोखिम उत्पन्न करता है जो ब्याज दरों,

मुद्रास्फीति और विकास के लक्ष्यों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है (हसन और इस्गुट, 2009)।

4.88 इसका और विस्तार करने पर राजकोषीय नीति का मौद्रिक नीति पर प्रभाव मोटे तौर पर सरकारी खर्च के वित्तपोषण के पैटर्न द्वारा निर्धारित किया जाता है। यदि मौद्रिक प्राधिकारी स्वतंत्र नहीं है और सरकार विस्तारकारी राजकोषीय नीति को अपनाती है तो राजकोषीय घाटे के मुद्रीकरण हेतु अधिक आग्रह रहता है जिससे मुद्रा आपूर्ति में अनैच्छिक विस्तार होगा। इसका मुद्रास्फीति को बढ़ाने, विनिमय दर में वास्तविक वृद्धि होने तथा भुगतान संतुलन की समस्याओं में अनभिप्रेत प्रभाव हो सकता है। जब घाटे का वित्तपोषण बाज़ार उधार से किया जाता है तो इससे ब्याज दरें बढ़ सकती हैं, निजी क्षेत्र के लिए उधार की लागत बढ़ सकती है और निजी निवेश कम हो सकता है। अप्रत्यक्ष करों को बढ़ाकर सरकारी खर्च के वित्तपोषण किये जाने का भी मूल्यों पर सीधा प्रभाव होता है जो मौद्रिक नीति के मूल्य स्थिरता उद्देश्यों के विरूद्ध जा सकता है। बड़े और सतत घाटे के अवबोधन और प्रत्याशाएं आर्थिक संभावनाओं में विश्वास की कमी उत्पन्न कर सकती हैं और वित्तीय बाज़ारों में अस्थिरकारी कारक बन सकती हैं। इस प्रकार सामान्य परिस्थितियों में वित्तीय बाज़ार के सहभागी आशा करेंगे कि राजकोषीय विस्तार के चलते मौद्रिक नीति अल्पकालिक ब्याज दरों को बढाने की दिशा में कार्य करेगी, जिससे दीर्घकालिक ब्याज दरों में प्रत्याशित वृद्धि होगी। इसका परिणाम अर्थव्यवस्था में सकल मांग में किसी प्रकार के उल्लेखनीय निवल लाभ के बिना सार्वजनिक खर्च में वृद्धि को समायोजित करने के लिए घरेलू खर्च, निजी क्षेत्र में निवेश और निवल निर्यातों में कमी होगी। इस प्रकार कारोबार के सामान्य गिरावट के दौरान आर्थिक स्थिरीकरण के लिए प्रसरणशील राजकोषीय नीति को प्रभावी साधन नहीं माना जाता है। इसके अलावा, मौद्रिक नीति की प्रभावशीलता आर्थिक एजेंटों के वित्तीय व्यवहार पर निर्भर करती है जो राजकोषीय धारणीयता के बारे में एजेंटों के अवबोधन द्वारा बदला जा सकता है। जब आर्थिक एजेंट यह प्रत्याशा करते हैं कि आज का उच्चतर घाटा भविष्य में उच्चतर कराधान की ओर अग्रसर होगा ('रिकार्डियन समानता' तरीके से व्यवहार), तब वे अधिक बचत कर अपने वित्तीय व्यवहार को बदल सकते हैं।

4.89 सामान्य काल में खुली अर्थव्यवस्था में प्रसरणशील राजकोषीय नीति भी मौद्रिक नीति व्यवस्था की धारणीयता को जोखिम में डाल सकती है। मौद्रिक नीति मुद्रास्फीतिकारी दबाव के प्रति प्रतिक्रिया करेगी और ब्याज दरों को बढ़ाकर प्रसरणशील राजकोषीय नीति द्वारा पूंजी खाते को खराब करेगी। बढ़ती ब्याज दरें पूंजी अंतर्वाह को आकर्षित करेंगी, विनिमय दर पर दबाव डालेंगी और चालू खाते की स्थिति को और बिगाड़ेंगी। विनिमय दर दबाव को कम करने के लिए पूंजी अंतर्वाह का आरक्षिति निधियों में अन्तर्लयन करने से मौद्रिक आधार और मुद्रास्फीतिकारी दबाव बढ़ेंगे। हालांकि निष्प्रभावीकरण के जरिये मुद्रास्फीतिकारी दबाव से बचा जा सकता है, पर इसकी लागत की एक सीमा हो सकती है जिसे केंद्रीय बैंक वहन कर सकता है।

4.90 तथापि वर्तमान आर्थिक गिरावट की विशेषता निजी क्षेत्र की मांग में अत्यधिक कमी, नीतिगत दरों में और कमी का सीमित दायरा और विश्वास में कमी के कारण ऋण बाज़ारों द्वारा सही प्रकार से कार्य न किया जाना रही है। गिरावट बड़ी और दीर्घकालिक है जो अपस्फीतिकारी वातावरण से जुड़ी हुई है। ऐसी स्थिति में दोनों नीतियों के उद्देश्यों में विवाद कम-से-कम अल्पकाल में कम रहने की संभावना है। इस प्रकार बाज़ार सहभागियों द्वारा यह अपेक्षा करने की संभावना नहीं है कि मौद्रिक नीति राजकोषीय नीति के प्रति प्रतिक्रियाशील होगी। असल में आर्थिक कार्यकलाप को सतत बढ़ावा देने के लिए राजकोषीय नीति को अधिक शक्तिशाली साधन बनाने के लिए मौद्रिक नीति राजकोषीय नीति की सहायक हो सकती है। यह तथ्य कि प्रसरणशील मौद्रिक नीति कम प्रभावी हो सकती है, भी प्रसरणशील राजकोषीय नीति के जरिये सहायता मांगती है। यदि राजकोषीय प्रोत्साहन के कारण मुद्रास्फीति की प्रत्याशाएं बढ़ती हैं तो उदार मौद्रिक नीति पहले से ही कम स्तर पर ब्याज दरों को निश्चित कर वास्तविक अल्पकालिक ब्याज दरों में कमी की ओर अग्रसर होगी। इस प्रकार अल्प से मध्यकाल में आर्थिक कार्यकलाप को बढ़ावा देने के लिए उदार मौद्रिक नीति राजकोषीय कार्यवाहियों की प्रभावशीलता में उल्लेखनीय वृद्धि कर सकती है। दूसरे शब्दों में, दो नीतिगत लिखत कम से कम अल्पकाल में मुद्रास्फीतिकारों दबाव के बारे में चिंता किये बिना गिरावट को रोकने में एक दूसरे को पुन: प्रबलित कर सकते हैं। आनुभविक अनुमानों से पता चला है कि मौद्रिक नीतिगत सहायता के साथ, न कि इसके बिना, राजकोषीय प्रोत्साहन संबंधी उपायों का प्रभाव काफी अधिक (दो गुना से अधिक) होता है।

4.91 दूसरी ओर ऐसे देशों में जहां केंद्रीय बैंकों ने मात्रात्मक/ऋण आसान करने के गैर-परम्परागत मौद्रिक नीतिगत उपायों का सहारा लिया है, मौद्रिक नीति के राजकोषीय प्रभावों में अत्यधिक वृद्धि हुई। इस घटनाक्रम ने दोनों नीतियों के बीच अधिक समन्वय की जरूरत को रेखांकित किया है। केंद्रीय बैंकों द्वारा दीर्घकालिक सरकारी प्रतिभूतियों और एजेंसी ऋण एवं बंधक-समर्थित प्रतिभूतियों जैसी व्यापक गैर-परंपरागत आस्तियों की खरीद का उद्देश्य वास्तविक अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने के लिए मध्यवर्ती और दीर्घकालिक ब्याज दरों को नीचे रखना रहा था। इससे केंद्रीय बैंकों के तुलनपत्रों का अत्यधिक विस्तार हुआ। दूसरे शब्दों में, केंद्रीय बैंकों ने संसाधनों के आबंटन को प्रभावित करने के लिए सार्वजनिक धनराशि का उपयोग कर कई जिम्मेदारियों का भार ले लिया है जिन्हें राजकोषीय प्राधिकारी को लेना चाहिए था। इससे न केवल केंद्रीय बैंक और राजकोषीय प्राधिकारी की अपनी-अपनी भूमिकाओं के बारे में भ्रांति पैदा हुई बल्कि केंद्रीय बैंकों के तुलनपत्र में ऋण जोखिम भी समा गया। इस प्रकार मौद्रिक प्राधिकारी की मूल्य स्थिरता, वित्तीय स्थिरता और आर्थिक विकास करने की सामर्थ्यता को संभाव्य रूप से कम आंका जा सकता है। इस संबंध में यह सुझाव दिया जाता रहा है कि केंद्रीय बैंकों के तुलनपत्र में गैर-खज़ाना आस्तियों और अन्य ऋणों को समन्वित दृष्टिकोण के जरिये केंद्रीय बैंकों को सरकारी प्रतिभूतियां जारी कर सरकार के तुलनपत्र में अंतरित कर दिया जाये (प्लोसर, 2009)। तथापि, यह राय बनी हुई है कि केंद्रीय बैंकों द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों की बड़ी मात्रा में खरीद के बाद सार्वजनिक क्षेत्र के ऋण की समग्र रूपरेखा में परिवर्तन भी दोनों प्राधिकारियों के बीच गहन समन्वय की जरूरत को बढ़ाता है। इसके अलावा, जब केंद्रीय बैंक संपार्श्विक प्रतिभूति के रूप में निजी क्षेत्र की अधिक प्रतिभूतियों को स्वीकार कर अधिक ऋण एवं बाज़ार जोखिम उठाता है तो मौद्रिक और राजकोषीय प्राधिकारी के बीच गहन समन्वय यह सुनिश्चित करने के लिए जरूरी है कि संभाव्य हानियां केंद्रीय बैंकों की परिचालन संबंधी स्वायतता को दुर्बल नहीं करती हैं (बीआईएस, 2009)।

4.92 इसके अलावा, वित्तीय संस्थाओं को सरकार से बड़ी सहायता और घोषित प्रोत्साहन पैकेजों से सभी देशों में राजकोषीय घाटे और ऋण में अत्यधिक वृद्धि हुई है। इसने राजकोषीय गुंजाइश को काफी कम कर दिया है, वहीं सरकार के लिए बड़ी मात्रा में उधार जरूरी कर दिया है। सरकार की बड़ी उधारराशियां, जिससे ब्याज दरें बढ़ती हैं, मौद्रिक नीति संबंधी लिखतों के प्रयोग को अत्यधिक नियंत्रित कर सकती है। ऐसा विशेषकर विकास के पुनरुत्थान होने पर ऐसे देशों में होगा, जहां घरेलू वित्तीय बाज़ार सुविकसित नहीं हैं। केंद्रीय बैंक विकास को बढ़ावा देने के लिए जहां ऋण की लागत को कम करने का प्रयास कर रहे हैं, वहीं मुद्रास्फीतिकारी दबाव का जोखिम भी पैदा कर रहे हैं। प्रोत्साहन उपायों और वित्तीय क्षेत्र को सहायता के चलते बड़े राजकोषीय घाटे के कारण दोनों नीतियों के बीच परंपरागत तनाव पुन: कई देशों में दिखाई देने लगा है। हालांकि इन परिस्थितियों में राजकोषीय प्रोत्साहन जरूरी था, लेकिन मौद्रिक नीति के उद्देश्यों के साथ किसी प्रकार के विरोध से बचने के लिए लेकिन विश्वसनीय राजकोषीय समेकन के पथ पर लौटना जरूरी है। लेकिन कई उन्नत देशों में जनसांख्यिकी कारकों और पेंशन देयताओं में सतत तेज वृद्धि के कारण राजकोषीय घाटे और सरकारी उधारराशियों के उच्च स्तर पर बने रहने की संभावना है। इस प्रकार राजकोषीय नीति के समन्वय के साथ मौद्रिक नीति के संचालन की जरूरत संकट के समाप्त होने पर भी जारी रहने की संभावना है (सुब्बाराव, 2009)।

4.93 वित्तीय स्थिरता के संदर्भ में भी दोनों नीतियों के बीच समन्वय जरूरी है। मौद्रिक नीति के समायोजन के साथ प्रसरणशील राजकोषीय नीति से मुद्रास्फीति की प्रत्याशाएं और सरकारी प्रतिभूतियों पर ब्याज दरों के बढ़ने की संभावना है। जब ऐसा होगा, तब वित्तीय संस्थाएं, विशेषकर बैंक बाज़ार दरों को बहियों में दर्ज करने की अपेक्षा के कारण काफी हानियां उठा सकते हैं जो वित्तीय स्थिरता को जोखिम में डाल सकता है। हालांकि दोनों नीतियों से विकास में गिरावट के पुनरुत्थान की अपेक्षा की जाती है, लेकिन उनको किसी समय कसने की जरूरत होगी। हालांकि प्रसरणशील उपायों को समन्वित ढंग से वापस नहीं लिया गया तो वित्तीय अस्थिरता के लंबे समय तक बने रहने का जोखिम है।

4.94 उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के लिए दीर्घकालिक और बड़ी चलनिधि उपलब्धता असरकारक नहीं भी हो सकती है क्योंकि इससे बड़ी और संभाव्य रूप से अस्थिरीकारी पूंजी अंतर्वाह आकर्षित हो सकते हैं। चूंकि उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में मूल्यों, राजकोषीय और वित्तीय स्थिरता के उद्देश्यों के बीच तालमेल ज्यादा जटिल है अत: केंद्रीय बैंकों द्वारा ऋण को आसान करने का आधार भी कमजोर है। राजकोषीय नीति ऋण नीति के उद्देश्यों को बेहतर ढंग से संभाल सकती है। उन्नत देशों की तुलना में उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में मात्रात्मक

ढील कम उपयुक्त है। पहला, जब वित्तीय संकट कम गंभीर है और मुद्रास्फीति उच्चतर है, तब नीतिगत दरें शून्य से काफी दूर होती हैं। दूसरा, अस्थिर पूंजी प्रवाह के प्रति उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं की असुरक्षितता के लिए मुद्राधारकों को विनिमय जोखिम के लिए क्षतिपूर्ति करने हेतु नीतिगत दरें उच्च रखने की अपेक्षा होगी। अन्यथा इन देशों में मात्रात्मक ढील से पूंजी बहिर्वाह हो सकता है (इशी आदि, 2009)।

4.95 संक्षेप में, वर्तमान संकट ने मौद्रिक और राजकोषीय नीति की समन्वित अनुक्रिया की जरूरत पर विशेष बल डाला है। बड़े स्तर की आर्थिक गिरावट और मौद्रिक संप्रेषण की कार्यप्रणाली की क्षति ने मौद्रिक नीति को राजकोषीय नीति के प्रति उदार होने के लिए जरूरी बना दिया है। केंद्रीय बैंक द्वारा अपने ऋण/मात्रात्मक ढील देने के कुछ अर्ध-राजकोषीय कार्यों के जरिये तुलनपत्रों का अत्यधिक विस्तार किये जाने से दोनों प्राधिकारियों के बीच गहन सहयोग की जरूरत को भी बढ़ा दिया है। इसके अलावा, चूंकि बड़ा राजकोषीय घाटा निकट भविष्य में मौद्रिक नीति और वित्तीय स्थिरता के बीच संभाव्य रूप से द्वंद्व पैदा कर सकता है, अत: समन्वय की जरूरत बनी रहेगी। एक देश में दोनों नीतियों के बीच समन्वय के अलावा, वर्तमान संकट ने अंतरराष्ट्रीय सहयोग की जरूरत को भी सावित कर दिया है। कई विकासशील देशों और उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में राष्ट्रीय नीतिगत सहायता पर्याप्त नहीं रही है अत: उनके लिए बहुदेशीय संस्थाओं से सहायता की जरूरत पड़ी।

VI. बहुदेशीय संस्थाओं की अनुक्रिया

4.96 इस संकट के दौरान बहुदेशीय संस्थाओं ने बहुत ही सक्रिय भूमिका निभाई। हालांकि प्रसरणशील प्रति-चक्रीय समष्टि-आर्थिक नीतियों की जरूरत पर व्यापक सर्वसम्मति बन गई थी लेकिन कई विकासशील और उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं को संसाधन अवरोधों का सामना करना पड़ा। संसाधन-अवरोध वाली विकासशील और उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाएं प्रसरणशील समष्टि-आर्थिक नीतियों को जारी रखने के कारण पर्याप्त बाह्य वित्तपोषण के प्रावधान पर निर्भर रहीं (अक्युज, 2009)। अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं (आईएफआई) को विश्व की अर्थव्यवस्था में परिवर्तनों और वैश्वीकरण की नई चुनौतियों को प्रतिबिम्बित करने के लिए उनके अधिदेशों, कार्यक्षेत्र और अभिशासन को शामिल कर सुधार करने का कार्य भी प्रगति पर है।

जी-20 और अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ)

4.97 कम आय वाले देशों द्वारा सामना किये गये संसाधनों के भयंकर दबावों को देखते हुए जी-20 और ब्रेटन वुड्स संस्थाओं द्वारा अनेक पहलकार्य आरंभ किये गये है। इन पहलकार्यों में शामिल हैं - (i) बहुदेशीय वित्तीय संस्थाओं के लिए वर्धित निधीयन, (ii) विकासशील और उभरती अर्थव्यवस्थाओं की बहुदेशीय निधीयन तक पहुंच को व्यापक बनाना, और (iii) बहुदेशीय ऋण प्रदान करने की शर्तों में सुधार।

4.98 अप्रैल 2009 में जी-20 के लंदन सम्मेलन में वैश्विक वित्तीय सुरक्षा कवच को मजबूत करने के लिए बहुदेशीय वित्तीय संस्थाओं से निधीयन में वृद्धि करने के लिए 1.1 ट्रिलियन अमरीकी डॉलर की अतिरिक्त अंतरराष्ट्रीय सहायता प्राप्त की गई। इसमें (i) आईएमएफ के पास उपलब्ध संसाधनों को तिगुना कर 750 बिलियन अमरीकी डॉलर करना, (ii) बहुदेशीय विकास बैंकों (एमडीबी) के लिए 100 बिलियन अमरीकी डॉलर अतिरिक्त जुटाना, और (iii) ऋण एजेंसियों सहित विभिन्न सार्वजनिक और निजी संस्थाओं से व्यापार वित्त के रूप में 250 बिलियन अमरीकी डॉलर की राशि जुटाना।

4.99 विकासशील और उभरती अर्थव्यवस्थाओं की बहुदेशीय ऋण तक पहुंच को व्यापक करने के संबंध में शुरू किये गये पहलकार्यों में शामिल हैं : (i) आईएमएफ की वर्धित निधि में सामान्य पहुंच सीमाओं को दुगुना करना, (ii) गरीबी में कमी और विकास सुविधा (पीआरजीएफ) तथा बहिर्जात आघात सुविधा (ईएसएफ) के लिए पात्र कम आय वाले देशों की उधार सीमाओं को दुगुना करना, (iii) वैश्विक संकट के संक्रमण का सामना कर रही उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में संकट की रोकथाम के लिए नई लचीली ऋण व्यवस्था (एफसीएल) करना। एफसीएल की कोई अधिकतम सीमा नहीं है, पर यह सुदृढ़ बुनियादी संरचना, नीतियों और नीति कार्यान्वयन में ट्रेक रिकॉर्ड वाले उन देशों को उपलब्ध होगी, जिनका मूल्यांकन आईएमएफ करेगा, और (iv) गरीबी में कमी और विकास के नये न्यास के आवरण के अंतर्गत रियायती वित्तपोषण सुविधाओं की नई संरचना शुरू की गई है। इनमें लचीली मध्यावधि सहायता के लिए विस्तारित ऋण सुविधा, अल्पकालिक और एहतियाती जरूरतों के लिए आपाती ऋण सुविधा, और सीमित शर्तबंदी के साथ आपातकालीन सहायता के लिए त्वरित ऋण सहायता शामिल हैं।

4.100 आईएमएफ ने अपने ऋण देने के ढाँचे के अंतर्गत उधारकर्ताओं के लिए शर्तबंदी के आधुनिकीकरण के लिए भी कदम उठाए हैं ताकि कम शर्तों के साथ इसे अधिक लचीला बनाया जा सके और किसी देश की विशिष्ट स्थितियों के अनुरूप बनाया जा सके। पहला, एफसीएल सुविधा तक पहुंच विगत की तरह पूर्व-प्रभावी होने के बजाय प्रत्याशित शर्तबंदी पर आधारित होगी। दूसरा, कम आय वाले देशों सहित सभी निधि व्यवस्थाओं में संरचनागत कार्यनिष्पादन मानदंड की शर्तबंदी को समाप्त किया जायेगा। तीसरा, आईएमएफ की रियायती उधार के अंतर्गत कम-आये वाले देश (एलआईसी) 2011 में सभी ब्याज भुगतानों पर असाधारण राहत प्राप्त करेंगे।

4.101 मौद्रिक और वित्तीय मुद्दों पर बहुदेशीय परामर्श और सहयोग, साथ ही अंतरराष्ट्रीय वित्तीय और मौद्रिक स्थिरता को बढ़ावा देने के लिए महत्त्वपूर्ण मंच के रूप में आईएमएफ की केंद्रीय भूमिका को पुन: पुष्ट करते हुए जी-20 के सदस्य मानते हैं कि वैश्विक वित्तीय संकट ने आईएमएफ में परिवर्तनों को त्वरित करने की अत्यावश्यकता पर विशेष बल डाला है ताकि यह अपने अधिदेश को अधिक प्रभावी ढंग से पूरा कर सके (बॉक्स IV.9)।

बॉक्स IV.9

जी-20 कार्यदल 3 : आईएमएफ में सुधार

अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं (आईएफआई) में सुधार की जरूरत को मानते हुए आईएमएफ में सुधार के संदर्भ में नवम्बर 2008 के लीडरों की घोषणा में शामिल कार्यों को आगे बढ़ाने की जिम्मेदारी कार्यदल 3 को सौंपी गई। इसने नोट किया कि जी-20 सदस्य मौद्रिक और वित्तीय मुद्दों पर बहुदेशीय परामर्श और सहयोग, साथ ही अंतरराष्ट्रीय वित्तीय और मौद्रिक स्थिरता को बढ़ावा देने के लिए महत्त्वपूर्ण मंच होने के रूप में आईएमएफ की केंद्रीय भूमिका को पुन: पुष्ट करते हैं। इसने इस बात पर बल दिया कि वैश्विक वित्तीय संकट ने आईएमएफ में परिवर्तनों को तेज करने की अत्यावश्यकता पर प्रकाश डाला है ताकि यह अपने अधिदेश को अधिक प्रभावी ढंग से पूरा कर सके। ऐसे परिवर्तनों की वैधता, स्वामित्व और कार्यकुशलता को बढ़ाने तथा निधि की भूमिका एवं जिम्मेदारियों का वर्गीकरण करने की दृष्टि से संसाधनों, उधार देने के लिखतों और अभिशासन संरचनाओं में किसी अंतर्निहित घाटों को पूरा करना चाहिए। कोष में सुधार के लिए तत्काल और मध्यावधि उपायों के रूप में प्रस्तुत कार्य योजना निम्नानुसार है:

तत्कालिक उपाय

1) *संकट से सीख लेने में आईएमएफ को अग्रणी भूमिका निभानी है*

आईएमएफ को एफएसएफ और अन्य के साथ गहन समन्वय के साथ अपनी सर्वप्रयोजन सदस्यता और प्रमुख समष्टि-वित्तीय विशेषता के मद्देनजर अपने अधिदेश के अनुरूप वर्तमान संकट से सीख लेने में अग्रणी भूमिका निभानी चाहिए।

2) *आईएमएफ के संसाधनों की पर्याप्तता की समीक्षा*

आईएमएफ, विश्व बैंक समूह और अन्य बहुदेशीय विकास बैंकों के संसाधनों की पर्याप्तता की समीक्षा की जरूरत पर बल देते हुए कार्य-दल ने अनुशंसा की कि जहां आवश्यक हो, उनके संसाधन बढ़ाने के लिए हमें तैयार रहना चाहिए।

3) *आईएमएफ के ऋण देने के लिखतों और ऋण देने की भूमिका की समीक्षा*

आईएफआई को अपने सदस्यों की जरूरतों को पर्याप्त रूप से पूरा करने के लिए अपने ऋण देने के लिखतों की समीक्षा और उसको स्वीकार करना भी जारी रखना चाहिए तथा चालू वित्तीय संकट के मद्देनजर उधार देने की अपनी भूमिका में परिवर्तन लाना चाहिए। इनमें कोष के वित्तपोषण में सदस्यों की उनके कोटा के अनुपात में पहुंच सीमा में पर्याप्त वृद्धि और साथ ही शर्तबंदी की समीक्षा एवं उनको सरल बनाना शामिल है ताकि आईएमएफ के संसाधनों को सुरक्षित रखते हुए कार्यक्रम के उद्देश्यों से संबद्ध क्षेत्रों पर सीधे ध्यान केंद्रित किया जा सके। इस समीक्षा में ऋण देने के अपने रियायती लिखतों में दानदाता की सहायता को व्यापक करने सहित कम आय वाले देशों को रियायती वित्तपोषण प्रदान करने की कोष की क्षमता में वृद्धि करने की जरूरत की भी जांच करनी चाहिए। यह ऋण और निजी पूंजी प्रवाह तक उभरते और विकासशील देशों की पहुंच को बहाल करने में विश्व बैंक के साथ आईएमएफ की कार्यप्रणाली में सहायता भी करती है तथा प्रतिचक्रीय राजकोषीय अनुक्रियाओं के लिए वित्त के प्रावधान में सहायता करती है।

4) *आईएमएफ/एफएसएफ सहयोग*

आईएमएफ को निगरानी पर अपना ध्यान केंद्रित कर तथा विस्तारित एफएसएफ को मानक स्थापित करने पर अपना ध्यान केंद्रित कर अपने सहयोग को सुदृढ़ करना चाहिए, बृहत्त-विवेकपूर्ण नीतिगत ढाँचे में विनियामक और पर्यवेक्षी अनुक्रियाओं को बेहतर ढंग से एकीकृत करने और शीघ्र चेतावनी अभ्यास करने के लिए प्रयास बढ़ाने चाहिए।

मध्यकालिक उपाय

1) *कोष की निगरानी को सुदृढ़ करना*

आईएमएफ को सभी देशों की सशक्त और निष्पक्ष निगरानी समीक्षा करनी चाहिए और साथ ही अपने वित्तीय क्षेत्रों पर अधिक ध्यान देना चाहिए तथा आईएमएफ/विश्व बैंक के वित्तीय क्षेत्र मूल्यांकन के संयुक्त कार्यक्रमों की समीक्षा का बेहतर समाकलन करना चाहिए। इस आधार पर समष्टि-वित्तीय नीति संबंधी सलाह प्रदान करने में आईएमएफ की भूमिका सुदृढ़ होगी।

(जारी...)

(... समाप्त)

2) *उभरते बाज़ारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं का आईएमएफ में अधिक अधिकार और प्रतिनिधित्व*

यह रेखांकित किया जाता है कि ब्रेटन बुड्स संस्थाओं का व्यापक रूप से सुधार होना चाहिए ताकि वे विश्व अर्थव्यवस्था में बदलते आर्थिक भारों को अधिक पर्याप्त ढंग से प्रतिबिम्बित कर सकें और भावी चुनौतियों के प्रति अधिक अनुक्रियाशील हो सकें। उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं का इन संस्थाओं में अधिक अधिकार और प्रतिनिधित्व होना चाहिए।

3) *क्षमता-निर्माण में आईएमएफ का शामिल होना*

उन्नत अर्थव्यवस्थाओं, आईएफआई और अन्य अंतरराष्ट्रीय संगठनों को अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप नये प्रमुख विनियमनों के निर्माण और कार्यान्वयन में उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं और विकासशील देशों के लिए क्षमता-निर्माण कार्यक्रम चलाने चाहिए।

अतिरिक्त अनुशंसाएं

1) आईएमएफ के अधिदेश एवं अभिशासन की समीक्षा करने के संबंध में कार्यदल ने जी-20 के वित्त मंत्रियों से अतिरिक्त अनुशंसाएं तैयार करने का अनुरोध किया, जिनमें आईएफआई के अधिदेश, अभिशासन और संसाधन जरूरतों की समीक्षा का क्षेत्र शामिल है। हालांकि कार्यदल ने यह उल्लेख किया कि जी-20 सदस्यों ने आईएमएफ द्वारा अपने प्रशासनिक व्ययों के लिए मुख्यत: अपने ऋण देने के कार्यकलापों से आय पर आश्रित होना बंद करने के महत्त्व को पहचान लिया है। इस संबंध में कार्यदल ने आईएमएफ के आय के नये मॉडल को तेजी से सक्रिय किया है जिसमें आईएमएफ के स्वर्ण की सीमित मात्रा की सम्मत बिक्री के लिए अपेक्षित प्रक्रिया शीघ्र शुरू करना और आईएमएफ के निवेश प्राधिकार को बढ़ाने के लिए अपेक्षित विधायी कदम उठाना शामिल है।

विश्व बैंक

4.102 विभिन्न नीतिगत पहलकार्यों को प्रतिबिम्बित करते हुए राजकोषीय वर्ष 2009 में 60 बिलियन अमरीकी डॉलर की प्रतिबद्धता के साथ विश्व बैंक समूह ने विकासशील देशों के लिए अपनी वित्तीय सहायता को बढ़ाया, जिससे गत वर्ष की तुलना में 54 प्रतिशत वृद्धि दर्ज हुई। अंतरराष्ट्रीय विकास संघ (आईडीए) की वचनबद्धता उसी वर्ष में 25 प्रतिशत बढ़कर 14 बिलियन अमरीकी डॉलर को छू गई और वह अगले दो वर्षों में 28 बिलियन अमरीकी डॉलर प्रदान करेगा। आईडीए वित्तीय संकट अनुक्रिया त्वरित सुविधा के अंतर्गत प्रक्रिया को कारगर बनाया गया है और परियोजना पुनर्संरचना एवं वितरण को सुगम बनाया गया है। आईडीए अपनी गैर-रियायती उधार नीति (एनसीबीपी) के कार्यान्वयन को भी समायोजित करेगा। संकटकालीन पहलकार्यों के लिए जुटाई गई निधियों के अलावा अंतरराष्ट्रीय वित्त निगम ने वर्ष 2009 में निजी क्षेत्र के विकास के लिए 12.9 बिलियन अमरीकी डॉलर प्रदान किये और निवेश एवं परामर्शी सेवाओं, दोनों क्षेत्रों में कई नई संकटकालीन-अनुक्रिया सुविधाएं शुरू कीं। वर्ष 2009 में बहुदेशीय निवेश गारंटी एजेंसी (एमआईजीए) ने 1.4 बिलियन अमरीकी डॉलर की गारंटियां जारी कीं और महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं को अपनी सहायता में वृद्धि की है।

4.103 विकासशील देशों, विशेषकर कम आय वाले देशों, पर संकट के प्रभाव को कम करने के लिए विश्व बैंक समूह ने तीन विषयों पर ध्यान केंद्रित करते हुए संकटकालीन-अनुक्रिया पहलकार्य शुरू किये: (i) संकट से सर्वाधिक असुरक्षित संस्थाओं का संरक्षण करना, (ii) दीर्घकालिक बुनियादी संरचना निवेश कार्यक्रमों को चालू रखना, और (iii) निजी क्षेत्र की अगुवाई में आर्थिक विकास और रोजगार सृजन, विशेषकर एसएमई और सूक्ष्मवित्त के जरिये संभावना को बनाये रखना। इन विषयों को परिचालन संबंधी तीन प्लेटफॉर्मों के जरिये दूर किया जा रहा है यथा - असुरक्षितता वित्तपोषण सुविधा, बुनियादी संरचना को बहाल करना और आस्तियां (इना) प्लेटफॉर्म और ऊपर वर्णित आईएफसी की अगुवाई में निजी क्षेत्र का प्लेटफॉर्म। असुरक्षितता वित्तपोषण सुविधा का उद्देश्य वैश्विक खाद्य संकट अनुक्रिया कार्यक्रम (जीपीआरएफ) और त्वरित सामाजिक अनुक्रिया कार्यक्रम (आरएसआर) के जरिये गरीब और असुरक्षित को संकटकालीन सहायता को कारगर बनाना है। जीपीआरएफ में अप्रैल 2009 में 1.2 बिलियन अमरीकी डॉलर की कुल राशि की बैंक निधीयन परियोजनाएं थीं जो सामाजिक संरक्षण और प्राथमिकता खाद्य नीति के हस्तक्षेप पर ध्यान केंद्रित करती है। आरएसआर संकट से उत्पन्न अत्यावश्यक सामाजिक जरूरतों को पूरा करने के लिए संस्थागत क्षमताओं का निर्माण करने में सहायता करने के लिए तैयार किया गया है।

एशियाई विकास बैंक (एडीबी)

4.104 एशियाई विकास बैंक (एडीबी) ने विभिन्न माध्यमों और गारंटियों के अंतर्गत उधार देने की मात्रा में काफी वृद्धि कर संकट का सामना किया। मध्य-आय वाले देशों को उधार देने के लिए गैर-रियायती सामान्य पूंजी संसाधन (ओसीआर) के अंतर्गत प्रतिबद्धताओं को वर्ष 2007-08 के 17 बिलियन अमरीकी डॉलर से बढ़ाकर वर्ष 2009-10 के

दौरान 26.1 बिलियन अमरीकी डॉलर किया जिसमें प्रति-चक्रीय सहायता सुविधा शामिल है। उसी अवधि के दौरान कम आय वाले देशों को रियायती ऋण और अनुदान प्रदान करने के लिए एशियाई विकास निधि (एडीएफ) के रियायती संसाधनों को 4.9 बिलियन अमरीकी डॉलर से बढ़ाकर 6.2 बिलियन अमरीकी डॉलर किया गया। इसी प्रकार सह-वित्तपोषण को 2.5 बिलियन अमरीकी डॉलर से बढ़ाकर 4.5 बिलियन अमरीकी डॉलर तथा तकनीकी सहायता को 524 मिलियन अमरीकी डॉलर से बढ़ाकर 567 मिलियन अमरीकी डॉलर किया गया।

4.105 ऋणराशि और सहायता तीन स्तरों पर प्रदान की जाती है यथा उप-क्षेत्रीय, सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र। उप-क्षेत्रीय पहलकार्यों का उद्देश्य संस्थागत क्षमता-निर्माण और संकट से मुकाबला करने में सहायता करने के लिए समर्थनकारी नीति बनाना; संकट से मुकाबला करने के लिए ज्ञान सहायता; और आर्थिक निगरानी एवं संकट मॉनिटरिंग को सुदृढ़ करना। सार्वजनिक क्षेत्र को सहायता में ये शामिल हैं : राजकोषीय विस्तार के लिए मांग-आधारित सहायता, सामाजिक संरक्षण, विकास की गति को बनाये रखना और राष्ट्रीय मॉनिटरिंग एवं निगरानी को सुदृढ़ करना; प्रति-चक्रीय सहायता सुविधा और बुनियादी संरचना के विकास में विस्तार करना। निजी क्षेत्र के लिए यह दृष्टिकोण इस प्रकार रहा है: चलनिधि अवरोधों को आसान करने के लिए मांग-आधारित सहायता और कारोबारी विश्वास पैदा करना; व्यापार वित्त सुविधा कार्यक्रम के अंतर्गत व्यापार को सहायता करना और बुनियादी संरचना के विकास के लिए वित्तपोषण।

4.106 वर्तमान संकट ने ब्रेटन बुड्स संस्थाओं की भावी भूमिका और सुधारों पर भी पुनर्विचार करने के लिए विवश कर दिया है। बहुदेशीय वित्तीय संस्थाओं ने न केवल विकासशील देशों और उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के लिए अपने वित्तपोषण को बढ़ाया है बल्कि वित्तीय शर्तों को भी काफी आसान कर दिया है। ऐसा इन संस्थाओं के सदस्य देशों द्वारा प्रदत्त निधियों को काफी बढ़ाने के कारण हो पाया है। इन संस्थाओं के सुधार की प्रक्रिया भी जारी है ताकि उनकी सहभागिता को बढ़ाया जा सके और गरीब देशों को लाभ पहुंचाया जा सके। इस बीच वैश्विक वित्तीय और आर्थिक स्थिरता तथा वृद्धि एवं विकास में सहायता सुनिश्चित करने के लिए केंद्रीय बैंकों, बहुदेशीय संस्थाओं और पर्यवेक्षकों के बीच समन्वय को बढ़ाने के लिए सतत प्रक्रिया के रूप में कदम उठाये गये हैं।

VII. वित्तीय क्षेत्र की नीतियां

4.107 बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं द्वारा अत्यधिक जोखिम उठाने के साथ प्रमुख विनियामक और पर्यवेक्षी विफलता संकट के बुनियादी कारणों में से थे। बैंक प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण संस्थाएं हैं क्योंकि उनकी जमाराशियां परिवारों और गैर-वित्तीय निगमों की भुगतान प्रणाली का प्रमुख अंग हैं। बैंक बड़े मूल्य वाले समाशोधन और निपटान लेनदेनों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। विश्वभर में बैंकिंग प्रणाली के वैश्वीकरण और अधिक समेकन ने वित्तीय संकट के संक्रमक और डॉमिनो प्रभाव को काफी बढ़ाया है। इसके परिणामस्वरूप कुछ बड़ी वैश्विक वित्तीय संस्थाओं की विफलता का विश्वभर की अर्थव्यवस्था पर गंभीर प्रभाव हुआ।

4.108 इस प्रकार वर्तमान संकट ने कारगर वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण की तत्काल जरूरत को निरूपित किया है। वित्तीय प्रणाली में विश्वास बहाल करने और फिर से भरोसे का माहौल बनाने की तत्काल जरूरत ने वित्तीय सुधारों के लिए व्यापक पहलकार्य करने का मार्ग प्रशस्थ किया। वित्तीय क्षेत्र की नीति के संचालन में संभावी मध्यकालिक परिवर्तनों के अलावा संकट प्रबंध व्यवस्थाओं का पुनर्मूल्यांकन किया गया है। मध्यकालिक परिवर्तन मुख्यत: न्यूनतम पूंजी अपेक्षाओं, चलनिधि अपेक्षाओं, अनुज्ञेय देयताओं और आस्तियों के अन्य विवेकपूर्ण अवरोधों, रिपोर्टिंग अपेक्षाओं और अभिशासन अपेक्षाओं के क्षेत्र के हैं। विनियामक ढाँचे के कुछ अन्य क्षेत्रों जैसे चलनिधि जोखिम और प्रतिभूतिकरण ढाँचे के कतिपय पहलुओं के निरूपण को भी पुन: देखा गया है। विकासशील वित्तीय क्षेत्र के पहलकार्यों में ऐसी वित्तीय प्रणाली सृजित करने के लक्ष्य के संबंध में प्राधिकारियों के बीच मोटी अंतर्निहित सहमति है जो कम उत्तोलक, बेहतर पूंजीकृत और अधिक पारदर्शक है तथा प्रणाली में सभी सहभागियों के लिए सुदृढ़ प्रोत्साहन की विशेषताएं हैं। वित्तीय क्षेत्र के सुधारों का मुख्य ध्यान भविष्य में वित्तीय क्षेत्र के लिए अधिक सुदृढ़, अंतरराष्ट्रीय रूप से अधिक सुसंगत पर्यवेक्षी और विनियामक ढाँचा बनाने पर रहा है जो धारणीय वैश्विक विकास में सहायता करेगा। इस बात पर बल दिया जाता रहा है कि वित्तीय संस्थाओं के विनियमन और पर्यवेक्षण में वित्तीय क्षेत्र में बढ़ती अंतर-सहलग्नता और साथ

[1] 2 अप्रैल 2009 को 'मंदी से उबरने और सुधार के लिए वैश्विक योजना' पर जी-20 के लंदन सम्मेलन के समापन अवसर पर जारी आधिकारिक विज्ञप्ति।

ही प्रणालीगत जोखिमों को रोकने की अधिक जरूरत को ध्यान में रखना चाहिए। फोकस कठोर विनियमन के बजाए बेहतर और प्रभावी विनियमन पर है।

4.109 विश्वभर के पर्यवेक्षक संकट से प्राप्त सबकों को शामिल करने के लिए विवेकपूर्ण मानकों और पर्यवेक्षी दृष्टिकोणों की सक्रिय रूप से समीक्षा कर रहे हैं। इसने वर्तमान समय की सर्वाधिक व्यापक वित्तीय क्षेत्र की समीक्षा तैयार की है जिसका अनेक आधिकारिक रिपोर्टों में उल्लेख किया गया है। इनमें से प्रमुख हैं : जी-30 (जनवरी 2009); जिनेवा रिपोर्ट (ब्रुनरमीयर आदि, जनवरी 2009); दि डी लारोसीयर ग्रुप (यूरोपीय संघ, फरवरी, 2009); टर्नर समीक्षा (एफएसए, मार्च 2009); जी-20 की विज्ञप्ति; अंतरराष्ट्रीय मौद्रिक और वित्तीय प्रणाली में सुधार से संबंधित विशेषज्ञों का संयुक्त राष्ट्र संघ आयोग (2009); ओबामा प्रशासन की 'वित्तीय सुधार योजना', जुलाई 2009 और अन्य। संकट के दौरान की घटनाओं के प्रकटन की रिपोर्टों/समीक्षाओं की श्रृंखला ने एक महत्त्वपूर्ण विश्लेषण प्रदान किया है और संकट का समाधान ढूंढने के लिए खाका तैयार करने के लिए एक उपयोगी अंतर्दृष्टि प्रदान की है।

4.110 जुलाई 2008 में पाल वॉकर की अध्यक्षता में 30 के समूह (जी-30) की संचालन समिति ने वैश्विक वित्तीय संकट की जांच की और विधान, विनियमन और पर्यवेक्षण की जरूरत को रेखांकित करते हुए 18 विशिष्ट अनुशंसाओं का सुझाव दिया। राष्ट्रीय प्रशासनिक व्यवस्थाओं पर समुचित फोकस और स्वरूप संबंधी प्रश्नों से निपटने के बजाय, रिपोर्ट इस बात पर पर ध्यान केंद्रित करती है कि स्थिरता के समुचित स्तर के बेहतर आश्वासन के लिए वर्तमान संकट के एक बार समाप्त हो जाने पर वित्तीय प्रणाली को किस प्रकार उचित ढंग से व्यवस्थित किया जाये (बॉक्स IV.10)।

बॉक्स **IV.10**

वित्तीय सुधार के संबंध में जी-30 की रिपोर्ट : वित्तीय स्थिरता के लिए ढाँचा

जुलाई 2008 में 30 के समूह (जी-30) ने पाल ए. वॉकर की अध्यक्षता और टोमासो पाडोशिओप्पा एवं अर्मिनियो फ्रागा नेटो की उपाध्यक्षता में संचालन समिति के नेतृत्व में वित्तीय सुधार परियोजना आरंभ की। जनवरी 2009 में जारी जी-30 समूह की रिपोर्ट ने इस बात पर ध्यान संकेंद्रित किया कि वर्तमान संकट के एक बार समाप्त होने जाने के बाद वित्तीय प्रणाली को किस प्रकार उचित ढंग से व्यवस्थित किया जाये ताकि स्थिरता के बारे में बेहतर आश्वासन दिया जा सके। रिपोर्ट की प्रमुख अनुशंसाएं संक्षेप में निम्नानुसार हैं:

- **प्रमुख अनुशंसा I : विवेकपूर्ण विनियमन और पर्यवेक्षण की व्याप्ति में अंतरालों और कमजोरियों को समाप्त किया जाना चाहिए।** सभी प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण संस्थाएं, जिनका स्वरूप कैसा भी हो, विवेकपूर्ण निरीक्षण के उचित स्तर के अधीन होनी चाहिए। सबसे बड़े और सर्वाधिक जटिल बैंकिंग संगठन विशेषकर गहन विनियमन और पर्यवेक्षण के अधीन होने चाहिए, जो उच्च और सामान्य अंतरराष्ट्रीय मानकों को पूरा करते हों। बड़ी प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण बैंकिंग संस्थाओं को ऐसे स्वामित्व संबंधी कार्यकलाप करने के लिए प्रतिबंधित किया जाना चाहिए, जिनमें विशेषकर उच्च जोखिम और हित का गंभीर टकराव हो। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सक्रिय बड़ी बीमा कंपनियों के लिए राष्ट्रीय-स्तर का समेकित विवेकपूर्ण विनियमन और पर्यवेक्षण का ढाँचा बनाया जाये। पूंजी के निजी समूह के ऐसे प्रबंधक जो काफी बड़ी उधार निधियां नियोजित करते हैं, को समुचित राष्ट्रीय विवेकपूर्ण विनियामक के पास पंजीकृत करवाने की अपेक्षा होनी चाहिए।
- **प्रमुख अनुशंसा II : विवेकपूर्ण विनियमन और पर्यवेक्षण की गुणवत्ता और प्रभावशीलता में सुधार किया जाना चाहिए।** इसके लिए बेहतर साधन-संपन्न विवेकपूर्ण विनियामकों और ढाँचे के भीतर परिचालित ऐसे केंद्रीय बैंकों की जरूरत होगी जो राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय नीतिगत समन्वय के काफी उच्च स्तरों को अपनाते हैं। सभी मामलों में देशों को राजनीतिक और बाज़ार दबावों से राष्ट्रीय विनियामक प्राधिकारियों के पृथक्करण को स्पष्ट रूप से पुन: पुष्ट करना चाहिए तथा ऐसे प्राधिकारियों के पास उपलब्ध संसाधनों की गुणवत्ता में सुधार करने और पर्याप्तता की जरूरत का पुन: मूल्यांकन करना चाहिए। राष्ट्रीय विनियामक प्राधिकारियों और वित्त मंत्रियों को अंतरराष्ट्रीय विनियामक और पर्यवेक्षी समन्वय की मौजूदा कार्यप्रणाली को अपनाने और संवृद्धि करने के लिए जोरदार ढंग से प्रोत्साहित किया जाता है। आवश्यक वृद्धि का संकेंद्रण निम्नलिखित पर होना चाहिए : (i) जानकारी अधिक सामयिक और खुले तौर पर आपस में बांटने के साथ सबसे बड़ी अंतरराष्ट्रीय बैंकिंग संस्थाओं का बेहतर समन्वित निरीक्षण तथा संकट प्रबंधन सहित गृह और मेजबान की जिम्मेदारियों पर अधिक स्पष्टता, (ii) समन्वित नियम बनाने और मानक स्थापित करने से परे ऐसे मानकें के अनुप्रयोग एवं प्रवर्तन में उल्लेखनीय राष्ट्रीय मतभेदों की पहचान और सुधार करना; (iii) अपतटीय बैंकिंग केंद्रों के संबंध में, जहां जरूरत हो, विनियामक अंतराल को समाप्त करना और मानक बढ़ाना, और (iv) प्रणालीगत जोखिम चिंताओं और विनियामक एवं पर्यवेक्षी नीतियों के चक्रीय प्रभावों के संयुक्त प्रतिफल के लिए साधन तैयार करना। अंतरराष्ट्रीय मानकों के कार्यान्वयन और प्रवर्तन को बढ़ावा देने के लिए सदस्य देशों में समुचित एजेंसियों को अपने कार्यों को मजबूत करना चाहिए। इसके अलावा, केंद्रीय बैंकों की भूमिका के संबंध में यह अनुशंसा की गई कि:

(जारी...)

(... समाप्त)

क) केंद्रीय बैंकों को वित्तीय स्थिरता को बढ़ावा देने और बनाये रखने की भूमिका स्वीकार करनी चाहिए। प्रत्याशा यह होनी चाहिए कि वित्तीय स्थिरता संबंधी चिंताएं वित्तीय संकट के समय ही प्रासंगिक नहीं हैं बल्कि त्वरित ऋण विस्तार और लीवरेज के बढ़ते उपयोग के समय भी हैं, जिससे संकट पैदा हो सकता है।

ख) जिन देशों में केंद्रीय बैंक विवेकपूर्ण विनियामक नहीं है, वहां केंद्रीय बैंक को (i) विवेकपूर्ण और बाज़ार विनियामक की शासी निकाय पर सुदृढ़ भूमिका; (ii) प्रमुख विवेकपूर्ण नीतियों, विशेषकर पूंजी एवं चलनिधि नीतियों और मार्जिन व्यवस्थाओं, में प्रस्तावित परिवर्तनों के संबंध में औनचारिक समीक्षा की भूमिका; (iii) सबसे बड़ी प्रणालीगत उल्लेखनीय फर्मों और महत्त्वपूर्ण भुगतान एवं समाशोधन प्रणालियों के संबंध में पर्यवेक्षी भूमिका, होनी चाहिए।

ग) केंद्रीय बैंक की चलनिधि सुविधाओं तक सामान्य पहुंच वाली नियंत्रित बैंकिंग संस्थाओं और अन्य प्रकार की वित्तीय संस्थाओं, जिनकी पहुंच, यदि हो, विवेचित प्रणालीगत महत्त्व की अत्यधिक आपातकालीन स्थितियों तक सीमित हो, के बीच स्पष्ट अंतर बनाये रखा जाना चाहिए।

घ) केंद्रीय बैंक की अत्यधिक असामान्य एवं जरूरी परिस्थितियों में आपातकालीन ऋण प्राधिकारी की भूमिका को संरक्षित रखा जाना चाहिए लेकिन गैर-बैंक संस्थाओं को ऐसा ऋण प्रदान करने के लिए समुचित राजनीतिक प्राधिकारियों का सहयोग, कानून या प्रथा द्वारा, ऐसे प्राधिकारण के उपयोग के लिए शामिल होना चाहिए।

ङ) केंद्रीय बैंक के चलनिधि सहायता परिचालन ऐसे रूपों तक सीमित होने चाहिए जिनमें उच्च जोखिम वाली आस्तियों के विरुद्ध या एक मुश्त खरीद अथवा दीर्घकालिक प्रत्यक्ष या परोक्ष पूंजी सहायता के अन्य रूपों में ऋण शामिल नहीं होना चाहिए। सिद्धांत रूप में सहायता के वे रूप प्रत्यक्षत: जिम्मेदार सरकारी संस्थाओं द्वारा अधिक समुचित प्रकार से प्रदान किये जाते हैं। व्यवहार में जहां तक केंद्रीय बैंक इस प्रकार की प्रणालीगत सहायता प्रदान करने में तेजी से कार्य करने के लिए संसाधनों एवं प्राधिकार के साथ अकेली संस्था है, वहां उस संस्था को अनुवर्ती जोखिम अंतरण के लिए समुचित सरकारी संस्था का उत्तरवर्ती अनुमोदन होना चाहिए।

- **प्रमुख अनुशंसा III : अभिशासन के मानकों, जोखिम प्रबंध, पूंजी और चलनिधि पर विशेष बल के साथ संस्थागत नीतियों और मानकों को सुदृढ़ किया जाना चाहिए।** विनियामक नीतियां और लेखांकन मानक भी प्रति-चक्रीय प्रभावों से सुरक्षा प्रदान करने वाले होने चाहिए और विवेकपूर्ण कारोबारी पद्धतियों को बनाये रखने के साथ सुसंगत होने चाहिए। अभिशासनऔर जोखिम प्रबंध के विनियामक मानकों को निम्नलिखित पर विशेष बल देने के साथ बढ़ाया जाना चाहिए (i) वित्तीय, उद्योग और जोखिम प्रबंध विशेषज्ञता वाले स्वतंत्र सदस्यों की अधिक नियुक्ति कर निदेशक मंडल को सशक्त करना, (ii) क्षतिपूर्ति और जोखिम प्रबंध नीतियों के निदेशक मंडल के निरीक्षण का समन्वय करना, (iii) सुव्यवस्थित बोर्ड स्तर की समीक्षाएं और अभ्यास सुनिश्चित करना, जिनका उद्देश्य फर्म के जोखिम वहन के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मानदंड स्थापित करना और उन मानदंडों के सापेक्ष अपनी जोखिम रूपरेखा का मूल्यांकन करना, (iv) यह सुनिश्चित करना कि जोखिम प्रबंध और लेखा परीक्षा कार्य पूर्णत: स्वतंत्र हैं, (v) ऋण संकेंद्रण, अत्यधिक परिपक्वता बेमेल, अत्यधिक लीवरेज या आस्ति बाज़ार चलनिधि पर अनावश्यक आश्रितता से उत्पन्न जोखिम से फर्म की संभाव्य असुरक्षितता की आवधिक समीक्षाएं करना, और (vi) यह सुनिश्चित करना कि सभी बड़ी फर्में कुछ घंटों में पूरे उद्यम के अपने सबसे बड़े प्रतिपक्षी ऋण एक्सपोजर को सतत आधार पर निगरानी रखने की क्षमता रखती हैं और उस जानकारी को अपने वरिष्ठ प्रबंधन, अपने बोर्ड और अपने विवेकी विनियामक या केंद्रीय बैंक, जो भी उचित हो, को उपलब्ध कराती हैं। सुधार के अन्य क्षेत्र हैं : (i) चक्रीय-अनुकूलता के प्रति प्रवृत्तियों के समाधान के लिए विनियामक पूंजी मानक; (ii) दीर्घकालिक निधीयन और भाररहित अत्यधिक अर्थसुलभ आस्तियों के लिए विस्तृत विशाखीकृत मिश्रण बनाये रखने के लिए चलनिधि जोखिम प्रबंध के मानक के लिए उपलब्ध गुंजाइश; और (iii) कम तरल लिखतों और संकटग्रस्त बाज़ारों में कारोबार के लिए अधिक यथार्थवादी दिशानिर्देश तैयार करने की दृष्टि से उचित मूल्य लेखांकन का पुनर्मूल्यांकन।

- **प्रमुख अनुशंसा IV : वित्तीय बाज़ारों और उत्पादों को बेहतर सुयोजित जोखिम और विवेकपूर्ण प्रोत्साहनों के साथ अधिक पारदर्शक बनाया जाना चाहिए।** बड़ी वित्तीय संस्थाओं की संभाव्य असफलता के लिए बुनियादी संरचना के समर्थकारी बाज़ारों को अधिक सुदृढ़ और प्रतिरोधक बनाया जाना चाहिए। विशेषकर इन पर बल देना चाहिए (i) प्रतिभूतिकृत ऋण बाज़ारों में विश्वास बहाल करना, (ii) रेटिंग एजेंसी सुधार, (iii) ऋण चूक अदला-बदली (सीडीएस) और ओवर-दि-काउंटर (ओटीसी) बाज़ारों का निरीक्षण, (iv) वित्तीय संस्थाओं के लिए संकल्प कार्यप्रणाली, (v) संरचित उत्पाद बाज़ारों की पारदर्शिता में सुधार करना, और (vi) बाज़ार कार्यकलाप और मूल्यांकन जानकारी को आपस में बांटना।

4.111 चालू कार्य की समीक्षा करते समय मार्च 2009 में जी-20 ने अंतरराष्ट्रीय विनियामक मानकों को सुदृढ़ करने, वैश्विक वित्तीय बाज़ारों में पारदर्शिता बढ़ाने और परिस्थितियों के अनुसार सभी वित्तीय बाज़ार, उत्पाद और सहभागियों के उचित प्रकार से नियंत्रण या निगरानी सुनिश्चित करने की की अनुशंसा की (बॉक्स IV.11)।

बॉक्स IV.11
सुदृढ़ विनियमन को बढ़ाने और पारदर्शिता को मजबूत करने से संबंधित जी-20 कार्यदल 1 की रिपोर्ट : प्रमुख अनुशंसाएं

वैश्विक वित्तीय और आर्थिक संकट के प्रति अंतरराष्ट्रीय अनुक्रिया पर वाशिंगटन सम्मेलन (15 नवम्बर 2008) के दौरान जी-20 के वित्त मंत्रियों को निम्नलिखित पाँच क्षेत्रों में कार्य को आगे बढ़ाने की जिम्मेदारी सौंपी गई थी: (i) पारदर्शिता और जवाबदेही को सुदृढ़ करना, (ii) सुदृढ़ विनियमन को बढ़ावा देना, (iii) वित्तीय बाज़ारों में अखंडता को बढ़ावा देना, (iv) अंतरराष्ट्रीय सहयोग को पुन:प्रबलित करना, और (v) अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं को सुधारना। तद्नुसार इन मुद्दों की जांच करने के लिए चार कार्यदल गठित करने का निर्णय लिया गया। सुदृढ़ विनियमन को बढ़ावा देने और पारदर्शिता को मजबूत करने से संबंधित जी-20 कार्यदल-1 (सह-अध्यक्ष : टिफ मैकलेम और राकेश मोहन) ने अपना ध्यान सुक्ष्म-विवेकपूर्ण नीति पर केंद्रित किया, वहीं विनियमन के प्रणाली-व्यापी दृष्टिकोण पर अधिक बल देकर इसकी सहायता की ताकि प्रणालीगत जोखिमों के बनने को बेहतर ढंग से कम किया जा सके। अंतिम रिपोर्ट (25 मार्च 2009) में 25 अनुशंसाएं दी गई थीं जो आर्थिक विकास को बढ़ावा देने में वित्तीय प्रणाली की सक्रिय भूमिका में सहायता प्रदान करेंगी, वहीं साथ ही भविष्य में ऐसे संकट के आने की संभावना को कम करेंगी तथा वित्तीय दबाव की भावी अवधियों के दुष्परिणाम को कम करेंगी। प्रमुख अनुशंसाओं का सारांश निम्नानुसार है:

(i) विनियमन का प्रणाली-व्यापी दृष्टिकोण

- यह अनुशंसा की गई थी कि अपने प्रमुख अधिदेश के पूरक के रूप में सभी राष्ट्रीय वित्तीय विनियामकों, केंद्रीय बैंकों, निरीक्षण प्राधिकारियों और सभी अंतरराष्ट्रीय वित्तीय निकायों और मानक निर्धारकों (आईएएसबी, बीसीबीएस, आईएआईएस और आईओएससीओ) के अधिदेशों में वित्तीय प्रणाली की स्थिरता को ध्यान में रखना चाहिए।
- पूरी वित्तीय प्रणाली में प्रणालीगत जोखिमों का संयुक्त रूप से मूल्यांकन करने और प्रणालीगत जोखिम उत्पन्न होने को सीमित करने के लिए घरेलू नीतिगत अनुक्रिया के समन्वय के लिए घरेलू वित्तीय क्षेत्र के समुचित प्राधिकारियों की प्रभावी कार्यप्रणाली होनी चाहिए। इस समन्वयकारी कार्यप्रणाली की संरचना पारदर्शक होनी चाहिए, जिसमें प्रत्येक प्राधिकारी की भूमिकाएं, जिम्मेदारियां और जवाबदेही स्पष्ट रूप से नियत होनी चाहिए।
- वित्तीय क्षेत्र के प्राधिकारियों के पास प्रणालीगत असुरक्षितता को दूर करने के लिए उचित सूक्ष्म-विवेकपूर्ण साधन होने चाहिए।
- आईएमएफ के साथ विस्तारित एफएसएफ को पूरे विश्व की वित्तीय प्रणाली में प्रणालीगत जोखिमों का संयुक्त रूप से मूल्यांकन करने और नीतिगत अनुक्रियाओं के समन्वय के लिए अंतरराष्ट्रीय मंच पर नियमित रूप से आकर प्रत्येक देश के प्रमुख वित्तीय प्राधिकारियों के लिए कारगर कार्यप्रणाली सृजित करनी चाहिए।

(ii) विनियमन का दायरा

- सभी प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थाएं, बाज़ार और लिखत उचित स्तर के विनियमन और निरीक्षण के अधीन होने चाहिए, अनवरत रूप से लागू किये जाने चाहिए तथा उनको स्थानीय एवं वैश्विक प्रणालीगत महत्त्व का आनुपातिक होना चाहिए।
- बीआईएस, विस्तारित एफएसएफ और अन्य निकायों की परामर्श से आईएमएफ को राष्ट्रीय प्राधिकारियों को यह मूल्यांकन करने में सहायता के लिए साझा अंतरराष्ट्रीय ढाँचा और दिशानिर्देश संयुक्त रूप से तैयार करने चाहिए कि क्या वित्तीय संस्था, बाज़ार या लिखत यथासंभव सुसंगत रूप से संपूर्ण क्षेत्रों में प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण है। संस्था का विधिक स्वरूप कोई भी हो, इस ढाँचे को विनियामक या निरीक्षण के उद्देश्य से समरूप कार्यकलापों को अधिक समरूप ढंग से करने का प्रयास करना चाहिए ताकि विनियामक विवाचन से बचा जा सके।
- वित्तीय नवोन्मेष और वित्तीय प्रणाली में व्यापक प्रवृत्तियों के मद्देनजर राष्ट्रीय कार्यक्षेत्र के भीतर विनियामक ढाँचे की सीमाओं की आवधिक रूप से समीक्षा की जानी चाहिए। अंतरराष्ट्रीय निकाय अच्छी पद्धति और इस क्षेत्र में सुसंगत दृष्टिकोणों को बढ़ावा देंगी।
- सभी साख-निर्धारण एजेंसियां, जिनकी रेटिंग का उपयोग विनियामक उद्देश्यों के लिए किया जाता है, विनियामक निरीक्षण की प्रणाली के अधीन होनी चाहिए जिसमें पंजीकरण शामिल है और जिनसे आईओएससीओ आचार संहिता की बुनियादी बातों के भाव के अनुपालन की अपेक्षा होती है। राष्ट्रीय प्राधिकारियों को अनुपालन के प्रवर्तन और रेटिंग एजेंसी की पद्धतियों और प्रक्रियाओं में अपेक्षित परिवर्तनों के लिए प्राधिकार प्राप्त करना चाहिए। कुछ साख-निर्धारण एजेंसियों का कार्यक्षेत्र वैश्विक होने के मद्देनजर निरीक्षण ढाँचा साख-निर्धारण एजेंसियों के निरीक्षण के लिए जिम्मेदार राष्ट्रीय प्राधिकारियों के बीच जानकारी के उचित बंटवारे के साथ सभी क्षेत्रों के लिए सुसंगत होना चाहिए।
- वित्तीय प्रणाली के अन्य हिस्सों के साथ बचाव निधियों सहित पूंजी के निजी समूह की अंतरसंबद्धता के कारण उनको या उनके प्रबंधकों को वित्तीय प्राधिकारियों के पास पंजीकरण करवाना आवश्यक होना चाहिए और उनमें निहित जोखिमों के मूल्यांकन के लिए उचित जानकारी का प्रकटन करना चाहिए।

(iii) विनियामक व्यवस्था का पारदर्शक मूल्यांकन

- सभी जी-20 सदस्यों को वित्तीय क्षेत्र मूल्यांकन कार्यक्रम (एफएसएपी) की रिपोर्ट तैयार करने और इसके निष्कर्षों को प्रकाशित करने की प्रतिज्ञा करनी चाहिए। राष्ट्रीय प्राधिकारियों को भी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सहमत कार्यप्रणालियों और साधनों के आधार पर अपने विनियामक ढाँचे का आवधिक आधार पर स्व-मूल्यांकन करना चाहिए। एफएसएपी प्रक्रिया, वह आधार जिस पर देशों का मूल्यांकन किया जाता है, को समष्टि-विवेकपूर्ण निरीक्षण, विनियमन का दायरा और जोखिम उठाने पर वित्तीय संस्थाओं की क्षतिपूर्ति योजनाओं की संरचना के प्रभाव का पर्यवेक्षी निरीक्षण को शामिल कर व्यापक करना चाहिए।

(जारी...)

(... समाप्त)

- एफएसएफ और अन्य निकायों, विशेषकर बीसीबीएस, को आर्थिक विस्तार के दौरान पूंजी बफर के निर्माण को बढ़ावा देकर और दबाव के समय उचित मूल्यांकन, लीवरेज और परिपक्वता बेमेल के बीच प्रतिकूल परस्पर क्रिया को कम कर वित्तीय प्रणाली में चक्रीय-अनुकूलता को कम करने के लिए पर्यवेक्षी और विनियामक दृष्टिकोण तैयार और लागू करने चाहिए।
- लेखांकन मानक निर्धारकों को ऋण हानियों को पहचानने और मापने के लिए वैकल्पिक दृष्टिकोणों पर विचार कर ऋण हानि प्रावधानों का लेखांकन मान्यता को सुदृढ़ करना चाहिए जिसमें उपलब्ध ऋण जानकारी की व्यापक श्रृंखला शामिल है।
- वित्तीय प्रणाली में स्थितियों के एक बार ठीक हो जाने पर पूंजी और चलनिधि बफरों के अंतरराष्ट्रीय मानकों को बढ़ाया जाना चाहिए तथा अच्छे समय में पूंजी बफर और प्रावधान करने को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ताकि पूंजी हानियों को अवशोषित कर सके और मुश्किल समय जैसा कि वर्तमान समय में इनमें से राशि निकाली जा सके। इस संदर्भ में बीसीबीएस को अच्छे समय में ऐसे पूंजी बफर तैयार करने के लिए प्रेरित करने हेतु मानक तैयार करने चाहिए जिनमें से दबाव के समय राशि निकाली जा सके।

(iv) चलनिधि

- विवेकी पर्यवेक्षकों और केंद्रीय बैंकों को सीमापारीय संस्थाओं सहित बैंकों को सुदृढ़ चलनिधि बफर के लिए प्रोत्साहित करने के लिए वैश्विक ढाँचा उपलब्ध कराना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि वे बाज़ार में लंबी अवधि तक रुक सके और चलनिधि दबाव के लिए निधि उपलब्ध करा सके।

(v) ओटीसी व्युत्पन्नियों के लिए बुनियादी संरचना

- वित्तीय संस्थाओं को ओटीसी व्युत्पन्नी बाज़ारों को सहायता करने वाली बुनियादी संरचना को सुदृढ़ करना जारी रखना चाहिए।
- केंद्रीय प्रतिपक्षियों को विवेकी पर्यवेक्षकों और केंद्रीय बैंकों सहित अन्य संबद्ध प्राधिकारियों द्वारा पारदर्शक और कारगर निरीक्षण के अधीन होना चाहिए तथा जोखिम प्रबंधन, परिचालन संबंधी व्यवस्थाओं, चूक प्रक्रियाओं, उचित अभिगम एवं पारदर्शिता के रूप में उच्च मानकों को पूरा करना चाहिए। सीपीएसएस और आईओएससीओ को व्युत्पन्नियों के केंद्रीय प्रतिपक्षियों के लिए अपनी अनुशंसाओं को लागू करने में अपने अनुभवों की समीक्षा करनी चाहिए।

(vi) **क्षतिपूर्ति योजनाएं और जोखिम प्रबंध**

- बड़ी वित्तीय संस्थाओं को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उनके क्षतिपूर्ति ढाँचे उनके दीर्घकालिक लक्ष्यों और विवेक सम्मत जोखिम उठाने के अनुरूप हैं।
- विवेक सम्मत जोखिम उठाने के लिए प्रोत्साहनों को बढ़ावा देने के लिए प्रत्येक वित्तीय संस्था को अपने क्षतिपूर्ति ढाँचे की समीक्षा यह सुनिश्चित करने के लिए करनी चाहिए कि यह एफएसएफ द्वारा तैयार सुदृढ़ व्यवहार सिद्धांतों को अपनाती है।

(vii) **लेखांकन मानक**

- लेखांकन मानक निर्धारकों को वित्तीय लिखतों के लेखांकन मानकों की जटिलता को कम करने के लिए प्रयास तेज करने चाहिए और प्रस्तुतीकरण मानकों को बढ़ाना चाहिए ताकि वित्तीय विवरणों के प्रयोक्ता वित्तीय लिखतों के मूल्यांकन में अनिश्चितता का बेहतर ढंग से निर्धारण कर सकें।
- आईएएसबी को ऐसे देशों के अनुभव को बांटकर और तकनीकी सहायता प्रदान कर उच्च गुणवत्ता वाले लेखांकन मानकों के एकल सेट के लिए वैश्विक समरूपता में मदद के लिए अपने प्रयासों को बढ़ाना चाहिए जिन्होंने इस प्रक्रिया को पूरा कर लिया है और तकनीकी सहायता प्रदान करनी चाहिए।

(viii) **प्रवर्तन**

- विनियमन का प्रभावी प्रवर्तन सभी वित्तीय विनियामकों की प्राथमिकता होनी चाहिए।
- सभी जी-20 सदस्यों में वित्तीय प्रणाली के विकास के स्तर में काफी अंतर को मानते हुए राष्ट्रीय प्राधिकारियों को विनियामक ढाँचों को सुदृढ़ करने की अपनी क्षमता को बढ़ाने में एक दूसरे की सहायता की प्रतिज्ञा करनी चाहिए। इसके अलावा, आईओएससीओ, आईएआईएस और बीसीबीएस के पास तकनीकी सहायता प्रदान करने के लिए समुचित क्षमता होनी चाहिए। उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं की जरूरतें विशेष महत्त्व के योग्य हैं।

4.112 यूके में वित्तीय सेवा प्राधिकारी (एफएसए) के अध्यक्ष लॉर्ड टर्नर को वित्त मंत्री ने उन घटनाओं की समीक्षा करने, जिनके कारण वित्तीय संकट उत्पन्न हुआ और उनके सुधार के लिए अनुशंसा का दायित्व सौंपा था। वैश्विक बैंकिंग विनियमन की टर्नर द्वारा की गई समीक्षा में तीन ऐसे अंतर्निहित कारणों की पहचान की गयी जिनके कारण संकट उत्पन्न हुआ- समष्टि-आर्थिक असंतुलन, कम सामाजिक महत्व के वित्तीय नवोन्मेष और बैंक की प्रमुख पूंजी एवं चलनिधि विनियमनों में महत्त्वपूर्ण कमियां। इनको तर्कसंगत और स्वत: ठीक होने वाले बाज़ारों के संबंध में बढ़े हुए विश्वास का समर्थन मिला। यह विशिष्ट फर्मों पर ही केंद्रित होने के बजाय प्रणाली-व्यापी 'समष्टि-विवेकपूर्ण' दृष्टिकोण पर आधारित विनियमन और पर्यवेक्षण के महत्त्व पर बल देता है (बॉक्स IV.12)।

बॉक्स IV.12
टर्नर समीक्षा : प्रमुख अनुशंसाएं

टर्नर समीक्षा मार्च 2009 में प्रस्तुत की गई थी। बैंकिंग और बैंक-जैसी संस्थाओं पर ध्यान केंद्रित करते हुए टर्नर समीक्षा में विनियमन और पर्यवेक्षी दृष्टिकोण में परिवर्तनों के बारे में निम्नलिखित अनुशंसाएं की गईं, जिनकी भविष्य में अधिक सुदृढ़ बैंकिंग प्रणाली तैयार करने के लिए जरूरत है:

- **प्रणालीगत दृष्टिकोण** : बैंकिंग विनियमन में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण चुनौतियों में से कई स्वभावगत के बजाय प्रणालीगत हैं। प्रणालीगत जोखिम और संपूर्ण कारोबारी मॉडलों की धारणीयता तथा उभरती प्रणालीगत जोखिमों की अनुक्रिया के लिए विनियामक साधन तैयार करने में विफलता के विश्लेषण पर अपर्याप्त ध्यान दिया गया था। बैंकिंग विनियमन और पर्यवेक्षण के भावी दृष्टिकोण को इस तथ्य में गहरा डूबा होने की जरूरत है कि निष्पादनकारी बैंक या बैंक-जैसे कार्यों में निहित जोखिमें न केवल गैर-वित्तीय कार्यकलापों में निहित से भिन्न हैं बल्कि उनसे से भिन्न हैं जो जीवन बीमा जैसे निष्पादनकारी गैर-बैंक वित्तीय कार्यकलापों से उत्पन्न होते हैं।

- **विनियामक दृष्टिकोण में बुनियादी परिवर्तन - पूंजी, लेखाकन और चलनिधि** : पूंजी पर्याप्तता, लेखांकन और चलनिधि नीतियों के बारे में सात प्रमुख उपाय हैं : (i) बैंक पूंजी की मात्रा और गुणवत्ता को बढ़ाना, (ii) व्यापार बही पूंजी में उल्लेखनीय वृद्धि और बुनियादी समीक्षा की जरूरत, (iii) बासेल-II कार्यान्वयन में चक्रीय-अनुकूलता से बचना, (iv) प्रति-चक्रीय पूंजी बफर तैयार करना, (v) प्रकाशित लेखों में चक्रीय-अलुकूलता का समायोजन करना, (vi) सकल लीवरेज अनुपात बैकस्टॉप और (vii) अलग-अलग बैंकों और प्रणालीगत स्तर पर चलनिधि जोखिमों को नियंत्रित करना।

- **संस्थागत और भौगोलिक विस्तार-आर्थिक तत्व न कि विधिक रूप** : संकट के उद्भव का महत्त्वपूर्ण कारक प्रमुख संस्थाओं और वित्तीय उपकरणों का विकास था, जिन पर कभी-कभी बैंक के समीपस्थ या आभासी बैंक का लेबल लगाया गया, जिन्होंने बैंक जैसे कार्य किये लेकिन उन पर विनियमन बैंक जैसे नहीं किया गया। अत: वह आवश्यक सिद्धांत जिस पर सहमत होने और अंतरराष्ट्रीय रूप से कार्यान्वित करने की जरूरत है वह है विनियमन आर्थिक तत्व पर केंद्रित होना चाहिए, न कि विधिक रूप पर। वित्तीय संस्थाओं का विवेक सम्मत निरीक्षण आदर्शत: एकीकृत विनियामकों (जिनमें बैंक, निवेश बैंक और बीमा कंपनियां शामिल हों) में समन्वित होना चाहिए, जिससे एक देश के भीतर विभिन्न प्राधिकारियों के बीच असंगतता और विवाचन के खतरों को कम किया जा सके। विनियामक प्राथमिकताओं के वैश्विक करार में ऐसे सिद्धांत को शामिल करना चाहिए कि अपतटीय केंद्रों को अंतरराष्ट्रीय रूप से सहमत वित्तीय विनियमन की परिधि के भीतर लाया जाना चाहिए (जो भले ही बैंकिंग, बीमा या किसी अन्य वित्तीय क्षेत्र से संबंधित हो)।

- **जमा बीमा और बैंक समाधान** : बैंक विनियमन और पर्यवेक्षण की प्रणाली को खुदरा जमा बीमा की व्यवस्थाओं (चूक की स्थिति में जमाकर्ताओं को संरक्षण प्रदान करने) और बैंक समाधान (सुव्यवस्थित समापन सुनिश्चित करना और शेष बैंकिंग प्रणाली पर आघाती प्रभाव से बचने के) द्वारा पुष्ट करने की जरूरत है।

- **अन्य महत्त्वपूर्ण परिवर्तन - साख रेटिंग** : बासेल-II ढाँचे में संरचित वित्त रेटिंग के प्रयोग की बुनियादी समीक्षा होनी चाहिए। विनियमन रेटिंग एजेंसियों के उचित अभिशासन और संचालन तथा हित में टकराहट के प्रबंधन से जुड़े मुद्दों का समाधान कर सकते हैं और करना चाहिए। **पारिश्रमिक** : पारश्रमिक नीतियां अनुचित जोखिम उठाने के लिए प्रोत्साहन से बचने के लिए तैयार करनी चाहिए; जोखिम प्रबंध प्रतिफलों को पारिश्रमिक निर्णयों से गहनता से एकीकृत किया जाना चाहिए। यूके और वैश्विक संहिताओं के विकास और प्रवर्तन के जरिये इनको हासिल किया जाना चाहिए। सभी प्रमुख पर्यवेक्षी प्राधिकारियों द्वारा सिद्धांतों का अनुप्रयोग सुनिश्चित करने के लिए कार्यप्रणाली पर अंतरराष्ट्रीय सहमति हासिल करना महत्त्वपूर्ण उत्तरवर्ती कदम होगा। **प्रतिपक्षी जोखिम**: उन मानकीकृत संविदाओं को शामिल करने के लिए समाशोधन और केंद्रीय प्रतिपक्षी प्रणालियां तैयार की जानी चाहिए जो अधिकांश सीडीएस व्यपार के लिए हैं।

- **समष्टि-विवेकपूर्ण विश्लेषण और बौद्धिक चुनौती** : समष्टि-विवेकपूर्ण विश्लेषण में आर्थिक और वित्तीय प्रणाली में उन प्रवृत्तियों को पहचानने की जरूरत होती है जिनका वित्तीय स्थिरता पर प्रभाव होता है और इसके परिणामस्वरूप समष्टि-आर्थिक स्थिरता तथा उन उपायों की पहचान करना जिनको परिणामी जोखिम के समाधान के लिए अपनाया जाये।

- **पर्यवेक्षण का नया दृष्टिकोण - अधिक अन्तर्वेधी और अधिक प्रणालीगत**: यूके के संदर्भ में अप्रैल 2008 में पर्यवेक्षी विस्तारण कार्यक्रम (एसईपी) शुरू करने से लेकर एक नया दृष्टिकोण 'गहन पर्यवेक्षण' का अनुपालन किया जा रहा है। हालांकि, संकट ने ऐसे परिवर्तनों की जरूरत का निदर्शन किया है जो उनसे परे हैं जो एसईपी में प्रारंभ में प्रस्तुत किये गये थे। खासकर दो मुद्दे महत्त्वपूर्ण हैं यथा (i) समष्टि-विवेकपूर्ण, साथ ही खंडीय विश्लेषण और (ii) उस भूमिका में बड़ा परिवर्तन जो प्रकाशित लेखों और लेखांकन निर्णयों के संबंध में एफएसए निभाता है, साथ ही इन मुद्दों पर बैंक प्रबंधन और लेखापरीक्षक अधिक गहन संपर्क करते हैं। इसके अलावा, दृष्टिकोण में जिन महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों की जरूरत है, वे हैं : (i) पहले से नियोजित और कार्यान्वित किये जा रहे पर्यवेक्षी दृष्टिकोण में परिवर्तन, पर्यवेक्षण की प्रबलता को पर्याप्त रूप से बढ़ाना, लेकिन बैंक-जांचकर्ता मॉडल की प्रगति के बिना, (ii) विशिष्ट उच्च प्रभाव क्षेत्रों में पर्यवेक्षण को बढ़ाने के लिए और कदम उठाना अर्थात् लेखांकन निर्णयों का निरीक्षण, (iii) अधिक समष्टि-विवेकपूर्ण विश्लेषण और कारोबारी मॉडलों का अधिक विश्लेषण एवं निर्णय लेने की इच्छा; और (iv) विशेषकर पूंजी, चलनिधि और लेखांकन नीतियों से संबंधित उच्च-संघात वाले विवेकपूर्ण उत्तोलकों

(जारी...)

(... समाप्त)

की छोटी संख्या की अधिक कारगर डिजाइन और प्रयोग।

- **जोखिम प्रबंधन और अभिशासन - फर्म कौशल, जिम्मेदारियां और संरचनाएं** : संकट के कारणों का विश्लेषण संकेत देता है कि एक सीमा तक जोखिम को पहचाना जा सकता है और अलग-अलग फर्म के स्तर पर समायोजित किया जा सकता है। लेकिन आंतरिक जोखिम प्रबंध और फर्म के अभिशासन की प्रभावशीलता में सुधारों की जरूरत है। अपेक्षित सुधारों के प्रमुख आयाम इस प्रकार हो सकते हैं : (i) उन्नत व्यावसायिकता और जोखिम प्रबंध कार्यों की स्वायतता, (ii) पारिश्रमिक नीति में सन्निहित जोखिम प्रबंध प्रतिफल, (iii) कौशल स्तर में सुधार और गैर-कार्यपालक निदेशकों की समय वचनबद्धता, और (iv) कॉरपोरेट रणनीतियों पर शेयरधारक अनुशासन।
- **बड़े जटिल बैंकों का विनियमन - 'उपयोगिता बैंकिंग' बनाम 'निवेश बैंकिंग'** : हालांकि सीमित बैंकिंग बनाम निवेश बैंकिंग चर्चा ने ऐसे महत्त्वपूर्ण मुद्दे उठाए हैं जिनके लिए विनियामक अनुक्रिया की जरूरत है, पर इस मान्यता पर कार्य करना व्यावहारिक नहीं लगता कि हम 'निवेश बैंकों' से 'उपयोगिता बैंकों' के संपूर्ण संस्थागत पृथक्करण को हासिल कर सकते हैं या करना चाहिए।
- **सीमापार बैंकों के विनियमन और पर्यवेक्षण** : समुचित अनुक्रिया को अधिक अंतरराष्ट्रीय समन्वय और विशेष रूप से राष्ट्रीय चिंताओं पर केंद्रित कार्यों, दोनों को मिलाने की जरूरत है। बड़ी सीमापारीय संस्थाओं के प्रभावी पर्यवेक्षण को गृह और मेजबान देश के पर्यवेक्षकों के बीच जानकारी का अधिकतम प्रवाह, उन जोखिमों में अंतर्दृष्टि को बांटना, जिनका फर्में सामना कर रही हैं, सुधारा जा सकता है। असल में, एफएसएफ ने ऐसे उद्देश्य को निर्दिष्ट किया है कि सभी प्रमुख सीमापारीय वित्तीय संस्थाओं को 'पर्यवेक्षकों के कॉलेज' में शामिल किया जाना चाहिए। वर्धित अंतरराष्ट्रीय सहयोग के साथ यह अनिवार्य और समुचित है कि दुनियाभर के पर्यवेक्षी प्राधिकारी स्थानीय विधिक संस्थाओं के लचीलेपन पर अपना ध्यान केंद्रित करना बढ़ायेंगे।

टर्नर समीक्षा ने नीतिगत परिवर्तनों के भी व्यापक सेट तय किये हैं जो समुचित हो सकते हैं लेकिन निम्नलिखित के संबंध में बैंकों और बाज़ारों के विनियामकों की भूमिका के संबंध में सिद्धांतों पर चर्चा की जरूरत है: (i) खुदरा या थोक बाज़ारों में उत्पाद विनियमन, (ii) प्रति-चक्रीय प्रभावों को प्राप्त करने या कम से कम चक्रीयता-अनुकूल को समायोजित करने के लिए पूंजी और चलनिधि अपेक्षाओं में विचरण के अलावा अन्य साधनों का उपयोग करना, और (iii) क्या तकनीकी कार्यकुशलता और चलनिधि के लाभों के बीच तालमेल को पहचानने तथा हानिकारक असंगत संवेग प्रभावों की संभाव्यता के लिए बाज़ारों के विनियमन में अधिक खुले दृष्टिकोणों की जरूरत है.

4.113 जहां यूके में टर्नर रिपोर्ट व्यापक सुधारों के लिए खाका प्रस्तुत करती है वहीं यूरोपीय आयोग द्वारा यूरोपीय वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण के भविष्य के बारे में सलाह देने के लिए यूरोपीय संघ में वित्तीय पर्यवेक्षण का उच्च-स्तरीय समूह (अध्यक्षता : जेक्स डी लारोसीअर) की नियुक्ति की गई थी। रिपोर्ट में यह पाया गया कि संकट के प्रमुख कारण के लिए बासेल-II को दोषी ठहरना उचित नहीं था। हालांकि रिपोर्ट ने बासेल-II ढाँचे की बुनियादी समीक्षा करने पर बल दिया (बॉक्स IV.13)।

बॉक्स IV.13

यूरोपीय संघ में वित्तीय पर्यवेक्षण से संबंधित उच्च-स्तरीय समूह की अनुशंसाएं

यूरोपीय आयोग ने यूरोपीय वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण के भविष्य के बारे में सलाह देने के लिए वित्तीय पर्यवेक्षण से संबंधित उच्च-स्तरीय समूह (अध्यक्षता: जेक्स डी लारोसीअर) गठित किया। 25 फरवरी 2009 को जारी समूह की रिपोर्ट में यूरोपीय संघ की प्रगति के लिए नई विनियामक कार्यसूची, सुदृढ़ समन्वित पर्यवेक्षण और संकट प्रबंधन की कारगर प्रक्रिया के लिए ढाँचा निर्धारित किया। रिपोर्ट की प्रमुख अनुशंसाएं निम्नानुसार हैं:

विनियामक कमजोरियों को दूर करना

- न्यूनतम पूंजी अपेक्षाओं को धीरे-धीरे बढ़ाने की दृष्टि से बासेल-II नियमों की बुनियादी समीक्षा की जरूरत है; उदाहरणार्थ, गत्यात्मक प्रावधानीकरण या पूंजीगत बफर को प्रोत्साहित कर चक्रीय-अनुकूलता को कम करना, तुलनपत्र से इतर मदों के लिए कड़े नियम बनाना; चलनिधि प्रबंध के मानदंडों को कड़ा करना और बैंक के आंतरिक नियंत्रण और जोखिम प्रबंध के नियमों को सुदृढ़ करना, प्रबंधन और बोर्ड सदस्यों के लिए विशेष रूप से 'अनुरूप और उचित' मानदंड को पुन: प्रबलित करना।
- यूरोपीय संघ में विनियामक पूंजी की एक जैसी परिभाषा स्वीकार की जाये, यह स्पष्ट करते हुए कि बासेल समिति से पुष्टिकरण द्वारा टीयर 1 पूंजी के रूप में किस संमिश्र लिखत पर विचार किया जाये।
- क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों के पंजीकरण और पर्यवेक्षण के लिए यूरोपीय प्रतिभूति विनियामकों की सुदृढ़ समिति (सीईएसआर) प्रभारी होनी चाहिए। रिपोर्ट में इन बातों पर भी बल दिया गया (i) अपने कारोबारी मॉडल, वित्तपोषण और रेटिंग एवं सलाहकारी गतिविधियों को अलग करने की गुंजाइश की बुनियादी समीक्षा; (ii) निश्चित समय में वित्तीय विनियमनों में रेटिंग पर कम आश्रितता; और (iii) भिन्न कूट शुरू कर संरचित उत्पादों के लिए रूपांतरित रेटिंग।

(जारी...)

- लेखांकन नियमों के संबंध में बाज़ार मूल्यों को बहियों में आंकने के व्यापक प्रतिबिंब की जरूरत है। यह अनुशंसा की गई कि (i) जटिल उत्पादों से संबंधित शेष लेखांकन मुद्दों के लिए शीघ्र समाधान ढूंढे जायें, (ii) लेखांकन मानक पक्षपातपूर्ण कारोबारी मॉडल नहीं होने चाहिए, चक्रीय-अनुकूलता व्यवहार को बढ़ावा दें या दीर्घकालिक निवेश को निरुत्साहित करें, और (iii) आईएएसबी और अन्य लेखांकन मानक निर्धारकों को उन गैर-अर्थसुलभ बाज़ारों में आस्तियों के मूल्यांकन के लिए सामान्य, पारदर्शक कार्यप्रणाली स्पष्ट करनी चाहिए और सहमत होना चाहिए, जहां बाज़ार मूल्यों को बहियों में आंकने को लागू नहीं किया जा सकता।
- शोधक्षमता 2 निदेश - किसी बीमाकर्ता के असफल होने की संभावना को कम करने के दृष्टिकोण से बीमाकर्ताओं की पूंजी पर्याप्तता और जोखिम प्रबंध के बारे में नई और यूरोपीय संघ-व्यापी सुदृढ़ अपेक्षाएं तय करना - सुमेलित बीमा गारंटी योजनाएं बनाने के लिए स्वीकार किया जाना चाहिए।
- सभी सदस्य देशों में सक्षम प्राधिकारियों के पास मंजूरियों सहित वित्तीय संस्थाओं पर लागू नियमों का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त पर्यवेक्षी अधिकार होने चाहिए और सभी प्रकार के वित्तीय अपराधों का मुकाबला करने के लिए मजबूत, समतुल्य और निवारक व्यवस्था से भी लैस होने चाहिए।
- 'समांतर' बैंकिंग प्रणाली की चिंता के संबंध में यह अनुशंसा की जाती है कि (i) संभाव्य रूप से प्रणालीगत स्वरूप के वित्तीय कार्यकलाप करने वाली सभी फर्मों या संस्थाओं पर उचित विनियमन लागू किये जाये, भले ही उनका आम जनता से कोई सीधा संपर्क न हो; (ii) बचाव निधि प्रबंधकों पर पंजीकरण और सूचना संबंधी अपेक्षाएं, उनकी रणनीतियों, उनके विश्व-व्यापी कार्यकलापों सहित विधियों एवं लीवरेज पर लागू कर सभी वित्तीय बाज़ारों की पारदर्शिता में सुधार किया जाये; और ऐसे बैंकों पर उचित पूंजी संबंधी अपेक्षाएं लागू की जायें जिनके पास बचाव निधि का स्वामित्व है या उसको परिचालित करते हैं या अन्यथा उल्लेखनीय स्वामित्व व्यापार में लगे हुए हैं और उन पर गहनता से निगरानी रखें।
- ओवर-दि-काउंटर व्युत्पन्नियों को सरल बनाने और मानकीकरण करने की जरूरत है और ऋण चूक अदला-बदली के लिए कम से कम एक सु-पूंजीकृत केंद्रीय समाशोधन गृह शुरू करने और उपयोग करने की जरूरत है।
- परिभाषा, आस्तियों के संहिताकरण और प्रत्यायोजन के लिए नियमों के विषय में निवेश निधियों के लिए सामान्य नियम और तैयार करने, साथ ही डिपॉजिटरी और अभिरक्षकों की स्वतंत्र भूमिका पर सख्त पर्यवेक्षी नियंत्रण की जरूरत है।

नियमों के संगत सेट द्वारा यूरोप को सज्जित करना

- सदस्य देशों और यूरोपीय संसद को भावी विधान में असंगत पक्षान्तर और अनुप्रयोग की अनुमति से बचना चाहिए। यह एक वित्तीय बाज़ार की कार्यप्रणाली में सुधार करेगा; प्रतिस्पर्धा और विनियामक अंतरपणन में विकृति को कम करेगा; या यूरोपीय संघ में सीमापारीय वित्तीय कार्यकलाप की कार्यकुशलता में सुधार करेगा।

कॉरपोरेट अभिशासन

- क्षतिपूर्ति प्रोत्साहनों को शेयरधारक हितों और संस्तुत सिद्धांतों पर आधारित फर्म-व्यापी दीर्घकालिक लाभप्रदता के साथ बेहतर सामंजस्य होना चाहिए। पर्यवेक्षकों को वित्तीय संस्थाओं की क्षतिपूर्ति नीतियों की उपयुक्तता को देखना चाहिए, जहां क्षतिपूर्ति नीतियां अत्यधिक जोखिम उठाने के लिए प्रेरित करती हैं वहां परिवर्तन करवायें और जहां जरूरी हो बासेल II के पिलर 2 के अंतर्गत अतिरिक्त पूंजी अपेक्षा लागू करें।
- आंतरिक जोखिम प्रबंध कारगर, स्वतंत्र दबाव परीक्षण के लिए स्वतंत्र और जिम्मेदार होना चाहिए। बाहरी रेटिंग पर अधिक विश्वास कर आंतरिक जोखिम निर्धारण और उचित सम्यक तत्परता की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। पर्यवेक्षकों को वित्तीय संस्थाओं की आंतरिक जोखिम प्रबंध प्रणालियों के निरीक्षण के लिए बार-बार बुलाया जाना चाहिए।

संकट प्रबंध और समाधान

- यूरोपीय संघ में सभी संबंधित प्राधिकारियों को उचित और समतुल्य संकट निवारण और हस्तक्षेप साधनों से सज्जित कर तथा साधनों के उपयोग के लिए विधिक अवरोधों को दूर कर संकट के प्रबंध के लिए पारदर्शक और स्पष्ट ढाँचा तैयार किया जाना चाहिए।
- यूरोपीय संघ में जमा गारंटी योजनाओं को सुमेलित किया जाना चाहिए और अधिमानत: निजी क्षेत्र द्वारा पूर्व-निधीयन किया जाना चाहिए तथा बैंकों के सभी ग्राहकों को उच्च एवं समान संरक्षण प्रदान किया जाना चाहिए।

पर्यवेक्षी सुधार

- वित्तीय स्थिरता के लिए प्रासंगिक ऐसी सभी जानकारी के समूहन और विश्लेषण के लिए ईसीबी के तत्वावधान में यूरोपीय प्रणालीगत जोखिम परिषद (ईएसआरसी) गठित की जानी चाहिए, जो समष्टि-आर्थिक स्थितियों एवं सभी वित्तीय क्षेत्रों में समष्टि-विवेकपूर्ण घटनाक्रमों से संबंधित हो।
- ईएसआरसी और आर्थिक एवं वित्तीय समिति (ईएफसी) के तत्वावधान में कारगर जोखिम-चेतावनी प्रणाली शुरू की जानी चाहिए। ईएसआरसी को प्राथमिकताएं निर्धारित करनी चाहिए और अनिवार्य अनुवर्ती कार्रवाई के साथ समष्टि-विवेकपूर्ण जोखिम चेतावनियां जारी करनी चाहिए तथा उचित हो, यूरोपीय संघ में संबद्ध सक्षम प्राधिकारियों द्वारा कार्रवाई की जायेगी।
- वित्तीय पर्यवेक्षकों की यूरोपीय प्रणाली (ईएसएफएस) विकेंद्रीकृत नेटवर्क पर स्थापित की जानी चाहिए। पर्यवेक्षी मानकों के अनुप्रयोग में समन्वय करने और राष्ट्रीय पर्यवेक्षकों के बीच सुदृढ़ सहयोग की गारंटी के लिए सीईबीएस, सीईआईओपीएस और सीईएसआर के स्थान पर तीन नये यूरोपीय प्राधिकारी स्थापित किये जायेंगे; सभी सीमापारीय संस्थाओं के लिए पर्यवेक्षकों के कॉलेज भी स्थापित किये जायेंगे। ईएसएफएस को राजनीतिक प्राधिकारियों से स्वतंत्र होने की जरूरत है लेकिन उनके प्रति उत्तरदाई रहना चाहिए।

वैश्विक सुधार

- बैंकिंग पर्यवेक्षकों की बासेल समिति जैसे अंतरराष्ट्रीय मानक निर्धारकों के संयोजन में वित्तीय स्थिरता मंच (एफएसएफ) को अंतरराष्ट्रीय वित्तीय

(जारी...)

(... समाप्त)

विनियमन के उच्चतम स्तर के आधार मानदंड में अभिसरण को बढ़ावा देने के लिए प्रभारी बना देना चाहिए क्योंकि यह महत्त्वपूर्ण है कि एसएफएस को प्रणालीगत सभी महत्त्वपूर्ण देशों और यूरोपीय आयोग को मिलाकर विस्तारित किया जाता है। इसे अधिक संसाधन प्राप्त होने चाहिए और इसे आईएमएफ से अधिक गहनता से संबद्ध कर इसकी जवाबदेही और अभिशासन में सुधार किया जाना चाहिए। एफएसएफ को वर्तमान वित्तीय संकट से प्राप्त सबकों को लागू करने में विनियामक सुधार में हुई प्रगति के बारे में आईएमएफ की अंतरराष्ट्रीय मौद्रिक और वित्तीय समिति (आईएमएफसी) को नियमित रूप से रिपोर्ट करना चाहिए। आईएमएफसी को आईएमएफ करार के अनुच्छेद के अनुरूप निर्णय लेने वाली परिषद् के रूप में रूपांतरित किया जाना चाहिए।

पर्यवेक्षकों के बीच सहयोग बढ़ाना

- अंतरराष्ट्रीय स्तर पर वर्तमान में स्थापित किये जा रहे बड़े जटिल सीमापारीय वित्तीय समूहों के लिए 'पर्यवेक्षकों के कॉलेजों' को संतुलित व्यापक जोखिम निर्धारण कार्यक्रम चलाने चाहिए और बैंकों के आंतरिक जोखिम प्रबंध पद्धतियों पर विशेष ध्यान देना चाहिए तथा बासेल II के पिलर 2 द्वारा निजी क्षेत्र की पारिश्रमिक योजनाओं के समरूप प्रोत्साहन को बढ़ावा देने के लिए साझा दृष्टिकोण पर सहमत होना चाहिए। एफएसएफ को विभिन्न कॉलेजों के बीच सुसंगत वैश्विक पर्यवेक्षी पद्धति सुनिश्चित करनी चाहिए और बेहतरीन पद्धतियों को बढ़ावा देना चाहिए।

समष्टि-आर्थिक निगरानी और संकट निवारण

एफएसएफ, बीआईएस, केंद्रीय बैंकों और यूरोपीय प्रणालीगत जोखिम परिषद (ईएसआरसी) के गहन सहयोग से आईएमएफ को वित्तीय स्थिरता के लिए शीघ्र चेतावनी प्रणाली, साथ ही अंतरराष्ट्रीय जोखिम मानचित्र और साख रजिस्टर तैयार एवं परिचालित करने का प्रभारी बनाया जाना चाहिए। आईएमएफ के सभी सदस्य देशों को स्वतंत्र विश्लेषण (एफएसएपी सहित) करने में आईएमएफ को सहायता प्रदान करने के लिए स्वयं को प्रतिबद्ध करना चाहिए।

- आईएमएफ और एफएसएसफ को अन्य संबद्ध अंतरराष्ट्रीय निकायों के सहयोग से वित्तीय केंद्रों पर मौजूदा विनियामक मानकों का मूल्यांकन करना चाहिए, अंतरराष्ट्रीय मानकों के प्रवर्तन की मौजूदा कार्यप्रणाली की प्रभावशीलता पर निगरानी रखनी चाहिए तथा जहां मानक अपर्याप्त लगें, वहां अधिक प्रतिबंधकारी उपायों की अनुशंसा की जानी चाहिए।

संकट प्रबंधन और संकल्प

- यूरोपीय संघ के देशों को समष्टि-आर्थिक निगरानी में आईएमएफ की भूमिका को सुदृढ़ करने में अपना समर्थन प्रदर्शित करना चाहिए और आईएमएफ के संसाधनों को बढ़ाने में योगदान देना चाहिए ताकि यह अत्यावश्यक वित्तीय या भुगतान शेष में संकट का सामना कर रहे सदस्य देशों को सहायता प्रदान करने में अपनी क्षमता को बढ़ा सके।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर यूरोपीय अभिशासन और यूरोपीय संघ के द्विपक्षीय वित्तीय संबंधों को सुदृढ़ बनाना

- नये वैश्विक आर्थिक और वित्तीय संरचना में यूरोपीय संघ का संगत प्रतिनिधित्व आयोजित किया जाना चाहिए। इसका अर्थ आईएमएफ और अन्य बहुदेशीय मंचों पर यूरोपीय संघ के प्रतिनिधित्व का समेकन हो सकता है। अपने द्विपक्षीय संबंधों में यूरोपीय संघ को प्रमुख साझेदारों के साथ अपने वित्तीय विनियामक वार्ता को तेज करना चाहिए।

4.114 यूरोपीय आयोग ने फरवरी 2009 में डी लारोसीअर रिपोर्ट द्वारा किये गये प्रस्तावों के आधार पर क्षेत्र के विनियामक और पर्यवेक्षी ढाँचे में महत्त्वाकांक्षी सुधारों का अंतिम संस्करण 23 सितम्बर 2009 को जारी किया। यूरोपीय आयोग वर्तमान में लामफालुसी प्रक्रिया और बैंकिंग पर्यवेक्षी व्यवस्थाओं की समीक्षा कर रहा है। यूरोपीय संसद विभिन्न मंचों पर जारी कार्यक्रमों पर गहनता से निगरानी रख रही है और कई विधायी प्रस्ताव पहले से ही तैयार हैं।

4.115 अंतरराष्ट्रीय मौद्रिक और वित्तीय प्रणाली के सुधारों पर संयुक्त राष्ट्र महासभा के अध्यक्ष की विशेषज्ञों के आयोग की रिपोर्ट (सितम्बर 2009) में पता लगाया गया कि अंतरराष्ट्रीय आर्थिक नीति के समन्वय के अधिकांश प्रयास ऐसे देशों के लिए अवरोध खड़े करने पर केंद्रित रहे हैं जिनका व्यवहार प्रणालीगत रूप से उल्लेखनीय नहीं है, जबकि उन देशों के लिए बहुत कम किया गया है जिनकी नीतियों का प्रणालीगत रूप से उल्लेखनीय परिणाम हो सकते हैं (बॉक्स IV.14)। इसके अलावा, इस बात पर बल दिया गया कि अंतरराष्ट्रीय चलनिधि कुछ देशों, जो आरक्षित मुद्राएं जारी करते हैं, की मौद्रिक नीतियों पर धीरे-धीरे कम आश्रित होनी चाहिए। विशेषकर विकसित देशों को अपने नकारात्मक बाहरीपन के परिणामों के बारे में परिचित होने की जरूरत है और विकासशील देशों को प्रमुख औद्योगीकृत देशों में विनियामक और समष्टि-आर्थिक विफलताओं से अपने को संरक्षित करने में सहायता के लिए ढाँचे की जरूरत है।

4.116 वैश्विक वित्तीय संकट ने यह प्रदर्शित किया कि सामूहिक अनुक्रिया समन्वित और सामयिक रूप में होनी चाहिए जो बाज़ार या विश्वास को नुकसान नहीं पहुंचायेगी। इस संदर्भ में जी-20 देशों के कार्यदल

बॉक्स IV.14
अंतरराष्ट्रीय मौद्रिक और वित्तीय प्रणाली के सुधारों पर संयुक्त राष्ट्र महासभा की अध्यक्षता में विशेषज्ञों के आयोग की रिपोर्ट (अध्यक्षता : जोसेफ ई स्टिगलिट्ज)

वर्ष 2008 में वित्तीय संकट के प्रारंभ होने के बाद संयुक्त राष्ट्र महासभा के अध्यक्ष ने विशेषज्ञों का एक आयोग गठित किया, जिसका अधिदेश संकट के कारणों पर विचार करना, सभी देशों पर प्रभावों का मूल्यांकन करना और पर्याप्त अनुक्रियाओं का सुझाव देना था ताकि इसकी पुनरावृत्ति को रोका जा सके और वैश्विक आर्थिक स्थिरता को बहाल किया जा सके। सितम्बर 2009 में जारी रिपोर्ट में कुछ सुधारों को रेखांकित किया गया जो वैश्विक आर्थिक अभिशासन के लिए सही दिशा में जाने में सहायता प्रदान करेंगे। अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं में सुधारों के संदर्भ में रिपोर्ट से उबरे कुछ प्रमुख बिन्दु इस प्रकार हैं:

- अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं के परिचालनों में अंतर्निहित नीतियों और दर्शनशास्त्र पर ध्यान देने की जरूरत है। अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं के पर्याप्त सुधार के बिना वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करना मुश्किल होगा।
- मौजूदा संस्थाओं में पर्याप्त सुधारों की जरूरत के अलावा दीर्घकाल में नई संस्था अर्थात् वैश्विक आर्थिक समन्वय परिषद (जीईसीसी) गठित करने की भी जरूरत है जो विशेषज्ञों के अंतरराष्ट्रीय पैनल द्वारा समर्थित हो। यह परिषद संयुक्त राष्ट्र महासभा और सुरक्षा परिषद के समतुल्य स्तर की हो सकती है। इसका अधिदेश घटनाक्रमों का मूल्यांकन करना और उन आर्थिक मुद्दों के समाधान में नेतृत्व प्रदान करना होगा जिनके लिए वैश्विक कार्रवाई की जरूरत है, वहीं सामाजिक और पारिस्थितिक कारकों को ध्यान में रखेगी। इस अधिदेश के आधार पर यह विकास को बढ़ावा देगी, नीतिगत लक्ष्यों और प्रमुख अंतरराष्ट्रीय संगठनों में नीतियों में सुसंगतता खोजेगी तथा वैश्विक आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय मुद्दों के लिए कार्यक्षम और कारगर समाधान के लिए सरकारों के बीच सर्वसम्मति बनाने में सहायता करेगी। इसका कार्य मौजूदा संस्थाओं में समन्वय से आगे तक का होगा। विशेषज्ञों के पैनल के सहयोग से जीईसीसी सभी अंतरराष्ट्रीय आर्थिक संगठनों की जवाबदेही को भी बढ़ावा देगी, वैश्विक आर्थिक और वित्तीय प्रणाली के कार्यक्षम परिचालन सुनिश्चित करने के लिए उन अंतरालों की पहचान करेगी, जिन्हें भरा जाना है तथा वर्तमान प्रणाली में कमियों को दूर करने के लिए अंतरराष्ट्रीय समुदाय के समक्ष प्रस्ताव रखेगी।
- तत्काल कदम के रूप में विशेषज्ञों के अंतरराष्ट्रीय पैनल को वैश्विक अर्थव्यवस्था में अल्पकालिक और दीर्घकालिक, दोनों प्रणालीगत जोखिमों के मूल्यांकन एवं निगरानी का कार्य सौंपा जाना चाहिए। यह पैनल वैश्विक अभिशासन प्रणाली में बेहतर सुसंगति और प्रभावशीलता, नीतिनिर्माताओं, अकादमिक संसार, अंतरराष्ट्रीय संगठनों एवं मान्यताप्राप्त सामाजिक आंदोलनों के बीच वार्ता को प्रोत्साहन देने में सहायता प्रदान करने हेतु विशेषज्ञों के अंतरराष्ट्रीय रूप से मान्यताप्राप्त स्रोत के रूप में कार्य कर सकेगा। इस पैनल को प्रणालीगत जोखिमों के पहचान के लिए मानदंड स्थापित करना चाहिए और निवारक उपायों एवं सुदृढ़ आर्थिक नीति निर्माण के रूप में अनुशंसाएं जारी करनी चाहिए। इस प्रकार यह पैनल महत्त्वपूर्ण "जल्दी चेतावनी कार्य" भी कर सकेगा, जिसकी जरूरत जी-20 और अन्य देशों ने महसूस की है।
- वर्तमान संकट ऐसी समस्याओं को प्रतिबिम्बित करता है जो मौद्रिक नीति और वित्तीय क्षेत्र के विनियमन से बाहर की हैं। यह स्पष्ट कर दिया गया है कि व्यापार और वित्त के वैश्वीकरण के लिए वर्धित वैश्विक सहयोग और वैश्विक विनियमन की जरूरत है।
- अधिक आर्थिक वैश्वीकरण के कारण बाहरीपन की अधिक गुंजाइश से न केवल वैश्विक 'बाहरीपन' के मुद्दों का निवारण करने के लिए वैश्विक सामूहिक कार्रवाई की जरूरत है बल्कि वैश्विक सार्वजनिक कार्य के प्रावधान की भी आवश्यकता है। वैश्विक सार्वजनिक कार्यों में वैश्विक आर्थिक प्रणाली और उचित व्यापार नियम शामिल हैं।
- जहां वित्तीय संकट ने मौजूदा वैश्विक आर्थिक अभिशासन संरचना में कई संरचनागत कमियों, विशेषकर वैश्विक सामूहिक कार्रवाई के लिए प्रोत्साहनों की कमी और वैश्विक नीति निर्माण में सुसंगता सुनिश्चित करने के लिए संस्थागत ढाँचे की विफलता को सामने लाया है, वहीं कई समस्याएं लंबे समय से दिखाई दे रही हैं। वैश्विक आर्थिक नीति के समन्वय में पर्याप्त सुधार की अत्यावश्यक जरूरत है।
- आईएमएफ, बहुदेशीय और क्षेत्रीय विकास बैंकों की अंतरराष्ट्रीय आर्थिक वित्तीय संरचना में बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका बनी हुई है। आईएमएफ को पूरी तरह से कारगर बनाने के लिए अल्पकाल में संकट के निवारण और दीर्घकाल में विकास और स्थिरता को बढ़ावा देने, दोनों में पर्याप्त सुधार किया जाना है, न केवल अभिशासन में बल्कि उन नीतियों में भी जिन्हें यह परंपरागत रूप से अपनाता रहा है।
- स्वतंत्र और निष्पक्ष समष्टि-आर्थिक निगरानी की जरूरत है। आईएमएफ ने अपने अधिदेश को सतत रूप से और निष्पक्ष रूप से लागू नहीं किया है। उन देशों और क्षेत्रों पर विशेष निगरानी रखने की जरूरत है जो प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण हैं जिनमें अमरीका और यूरोप के वित्तीय क्षेत्र शामिल हैं। इसे 'सर्किट ब्रेकरों' की पर्याप्तता का भी समाधान करना है जो एक देश से दूसरे देश में फैलने की समस्या के संक्रामण को रोक सकते हैं।
- अभिशासन सुधार संबंधित अधिदेशों की संयुक्त समझ पर आधारित हों और संबंधित संस्थाओं की रणनीतिक दिशाओं की साझा समझ हो। अत: आईएफआई में विकासशील देशों का बेहतर मत और प्रतिनिधित्व कार्यसूची में उच्च स्थान पर हो। अभिशासन सुधार, विशेषकर कम आय वाले देशों का भार बढ़ाया जाना चाहिए।
- आईएमएफ में मताधिकार असंतुलन के मुद्दे को दूर करने के लिए प्रबंध निदेशक और आईएमएफ समिति के अध्यक्ष के चयन के लिए दुगुना अधिसंख्यक मताधिकार (अर्थात् शेयर और पद), साथ ही प्रमुख नीतिगत निर्णयों तथा ऋण प्रदान के लिए अभिगम का अनुमोदन प्रदान किया जाना चाहिए। साथ ही सुधार में करार के अनुच्छेदों में संशोधन के निर्णय के लिए

(जारी..)

(... समाप्त)

प्रभावी वीटो अधिकार को समाप्त करने पर विचार किया जाना चाहिए। दुगुना अधिसंख्यक (अर्थात् विकसित और विकासशील देशों) के वैकल्पिक रूपों पर विचार किया जाना चाहिए।

- विश्व बैंक में अभिशासन सुधारों के संबंध में बोलने के अधिकार में सुधार के पहले चरण को तेजी से लागू किया जाना चाहिए। मूल मताधिकारों को दुगुना करना और बोर्ड में अफ्रीका को तीसरी सीट देने से विकासशील देशों का प्रभाव बढ़ेगा। दूसरे चरण में क्वोटा में सुधार पर ध्यान केंद्रित कर त्वरित कार्रवाई की जानी चाहिए और वर्ष 2010 की वसंत बैठक तक पूरा किया जाना चाहिए।
- अप्रैल 2009 में वित्तीय स्थिरता मंच (एफएसएफ) को वित्तीय स्थिरता बोर्ड (एफएसबी) के रूप में पुन: गठित किया गया था और एफएसएफ की अवस्थिति से सुस्पष्ट प्रस्थान की जरूरत है। विनियामक ढाँचे में न्यूनतम परिवर्तन करने से न तो वर्तमान स्थिति में सुधार होगा और न ही भावी संकटों को रोकने में कारगर। तद्नुसार एफएसबी के अभिशासन, अधिदेश और आर्थिक परिप्रेक्ष्य में कमियों को दूर करने के लिए इसमें गहन सुधार किये जाने चाहिए।
- राष्ट्रीय प्राधिकारियों के बीच विनियामक सिद्धांतों में सुसंगतता सुनिश्चित करने का कार्य अंतरराष्ट्रीय मानक-निर्धारक करने वाले निकायों द्वारा किया जाना चाहिए। अंतरराष्ट्रीय वित्तीय विनियमन केंद्रीय बैंकों (बीआईएस का प्रमुख चुनाव-क्षेत्र) से परे समन्वय की जरूरत होगी और अपनी प्रमुख प्राथमिकताओं में प्रतिभूतियों और कॉरपोरेट विनियामकों, साथ ही लेखांकन मानकों को शामिल किया जाना चाहिए।
- महत्त्वपूर्ण निजी मानक निर्धारक निकायों की जवाबदेही की कमी चिंता का एक ओर क्षेत्र है। उदाहरण के लिए अंतरराष्ट्रीय लेखांकन मानक बोर्ड (आईएएसबी) और प्रतिभूति आयोगों का अंतरराष्ट्रीय संगठन (आईओएससीओ) जैसी निजी संस्थाओं ने सीमापारीय विनियमन के मानक तैयार किये हैं जिनका अंतरराष्ट्रीय वित्तीय प्रणाली पर प्रणालीगत प्रभाव है, फिर भी वे किसी राजनीतिक जवाबदेही से मुक्त हैं।
- संकट के मद्देनजर कई देशों द्वारा उठाये गये संरक्षणवादी उपायों का संज्ञान लेते हुए यह आवश्यक है कि डब्ल्यूटीओ करारों की भावनाओं से सुसंगत, स्थितियों की अत्यावश्यकताओं, विशेषकर विकासशील देशों पर प्रतिकूल प्रभावों पर उचित ध्यान देते हुए प्रोत्साहन और मंदी से उभरने के पैकेजों के ढाँचे में सदस्य देशों द्वारा अपनाई गई नीतियों का डब्ल्यूटीओ को प्रणालीगत रूप से मूल्यांकन करना चाहिए। हमें सभी तरह से 'बैगर-दाइ-नेबर' नीतियों पर लौटने से बचने की जरूरत है डब्ल्यूटीओ के गठन का उद्देश्य इन्हें रोकना था।

2 ने अपनी रिपोर्ट 10 मार्च 2009 को प्रस्तुत की जिसमें अंतरराष्ट्रीय नीति के समन्वय के विभिन्न क्षेत्रों को रेखांकित किया गया जिन्हें अल्प से मध्यावधि में दूर करने की जरूरत है (बॉक्स IV.15)।

4.117 जहां संकट का अधिकेंद्र लगातार उभरती स्थितियों की पकड़ में आने का प्रयास कर रहा था, वहीं वित्तीय फर्मों के पर्यवेक्षण और विनियमन में अंतरालों एवं कमजोरियों ने प्रणाली में बने जोखिमों पर निगरानी रखने, उन्हें रोकने और दूर करने की अमरीकी सरकार की सामर्थ्यता के समक्ष चुनौतियां प्रस्तुत कीं। हालांकि उपायों की घोषणा लगातार की जाती रही, लेकिन अमरीका द्वारा व्यापक वित्तीय क्षेत्र योजना की शुरुआत बहुत देरी से अर्थात् जून 2009 में की गई (बॉक्स IV.16)।

बॉक्स IV.15

जी-20 कार्यदल 2 : अंतरराष्ट्रीय सहयोग को पुन: प्रबलित करना और वित्तीय बाज़ारों में अखंडता को बढ़ावा देना

कार्यदल 2 को जी-20 द्वारा अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाज़ारों के विनियमन और निरीक्षण में अंतरराष्ट्रीय सहयोग और समन्वय को बढ़ावा देने, सीमापारीय वित्तीय संकटों के प्रबंधन और समाधान में सुधार करना तथा वैश्विक वित्तीय प्रणाली को अवैध कार्यकलापों एवं गैर-सहकारी कार्यक्षेत्रों से संरक्षण प्रदान करने के लिए प्रस्ताव तैयार करने का कार्य सौंपा गया था। कार्यदल 2 को निम्नलिखित कार्य करने के लिए कहा गया था : (i) विनियामक और पर्यवेक्षी सहयोग, (ii) आईएमएफ/एफएसएफ सहयोग और (iii) बाज़ार अखंडता को बढ़ावा देना।

विनियामक और पर्यवेक्षी सहयोग

तात्कालिक कार्रवाई:

पर्यवेक्षी कॉलेज : सीमापारीय फर्मों पर निगरानी को सुदृढ़ करने के प्रयासों के हिस्से के रूप में सभी प्रमुख सीमापारीय वित्तीय संस्थाओं के लिए पर्यवेक्षी कॉलेज स्थापित करने में पर्यवेक्षकों को सहयोग देना चाहिए। प्रमुख वैश्विक बैंकों को फर्म के कार्यकलापों और इसके सम्मुख उपस्थित जोखिमों के मूल्यांकन के लिए व्यापक चर्चा हेतु अपने पर्यवेक्षी कॉलेज से नियमित रूप से मिलना चाहिए।

सूचना के आदान-प्रदान की व्यवस्था : राष्ट्रीय और क्षेत्रीय प्राधिकारियों को बाज़ार स्थिरता के संबंध में घरेलू और सीमापारीय चुनौतियों के बारे में सूचना के आदान-प्रदान को बढ़ावा देने का कार्य करना चाहिए और यह सुनिश्चित करना चाहिए कि इन चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए राष्ट्रीय (या क्षेत्रीय, जहां लागू हों) विधिक प्रावधान पर्याप्त हैं।

सीमापार संकट प्रबंधन : विनियामकों को सीमापारीय संकट प्रबंध व्यवस्थाओं को मजबूत करने के लिए एक-दूसरे और उचित प्राधिकारियों के साथ सहयोग एवं संप्रेषण सहित सभी आवश्यक कदम उठाने चाहिए तथा व्यापक संपर्क सूची

(जारी...)

(...समाप्त)

तैयार करनी चाहिए और यथोचित अनुरूपण अभ्यास करना चाहिए। कार्रवाई योजना मद के अनुसार वित्तीय स्थिरता मंच (एफएसएफ) संकट प्रबंधन के लिए सीमापारीय सहयोग के लिए सिद्धांतों के एक सेट पर सहमत हो गया है।

मध्यावधि कार्रवाईयां:

संकल्प व्यवस्था और दिवालियापन संबंधी कानून : राष्ट्रीय और क्षेत्रीय प्राधिकारियों को हाल के अनुभव के मद्देनजर संकल्प व्यवस्थाओं और दिवालियापन संबंधी कानूनों की समीक्षा यह सुनिश्चित करने के लिए करनी चाहिए कि वे बड़ी जटिल सीमापारीय वित्तीय संस्थाओं के व्यवस्थित समापन की अनुमति प्रदान करते हैं। सीमापारीय बैंक संकल्पों के लिए अंतरराष्ट्रीय ढाँचा तैयार और चारों ओर घेराबंदी एवं वित्तीय भार को बांटने के मुद्दे का निवारण करने के लिए इसे रेखांकित किया गया है। यह भी अनुशंसा की जाती है कि एफएसएफ और बीसीबीएस सीमापारीय संकल्प योजनाओं के लिए स्वीकार्य पद्धतियों हेतु मार्गदर्शन के रूप में सामान्य मानक और सिद्धांतों की व्यवहार्यता की तलाश करें, जिसके द्वारा चारों ओर घेराबंदी सहित असमन्वित राष्ट्रीय अनुक्रियाओं के नकारात्मक प्रभावों को कम करने में सहायता मिलती है।

विनियामक पद्धतियों में अभिसरण : प्राधिकारियों, विशेषकर विनियामकों के कार्य में लगे, को ऐसे क्षेत्रों की जानकारी एकत्रित करनी चाहिए, जहां लेखांकन मानकों, लेखापरीक्षा और जमा बीमा जैसी विनियामक पद्धतियों में अभिसरण में प्रगति हो, वहां त्वरित प्रगति की जरूरत है या जहां प्रगति की संभावना हो सकती है।

निकास रणनीतियां : प्राधिकारियों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि स्थिरता और विश्वास बहाल करने के अस्थायी उपायों की विकृति न्यूनतम है और सामयिक, सुक्रमित और समन्वित ढंग में अक्षत हैं।

अंतरराष्ट्रीय निकायों की भूमिका : आईएमएफ /एफएसएफ सहयोग:

तात्कालिक कार्रवाईयां:

एफएसएफ सदस्यता : एफएसएफ को उभरती अर्थव्यवस्थाओं की व्यापक सदस्यता द्वारा बढ़ाना चाहिए। यह महत्त्वपूर्ण है कि एफएसएफ अंतरराष्ट्रीय वित्तीय स्थिरता को बढ़ावा देने में लगातार कारगर है। इस प्रकार, विशेषकर विस्तारित एफएसएफ का अधिदेश आईएमएफ के गहन सहयोग से एफएसएफ और जी-20 की अनुशंसाओं के कार्यान्वयन पर निगरानी रखने के लिए बढ़ाया जाना चाहिए।

आईएएसओ अभिशासन : वित्तीय स्थिरता को बढ़ावा देने की दृष्टि से अंतरराष्ट्रीय लेखांकन मानक निर्धारक निकाय के अभिशासन विशेषकर अपने सदस्यता की समीक्षा करने सहित, को और बढ़ाया जाना चाहिए ताकि इस स्वतंत्र निकाय और संबद्ध प्राधिकारियों के बीच पारदर्शिता, जवाबदेही और समुचित संबंध सुनिश्चित किये जा सकें।

आईएमएफ-एफएसएफ सहयोग : निगरानी पर अपना ध्यान केंद्रित करते हुए आईएमएफ और मानक निर्धारण पर अपना ध्यान केंद्रित करते हुए एफएसएफ को समष्टि-विवेकपूर्ण नीति के ढाँचे में विनियामक और पर्यवेक्षी अनुक्रियाओं के बेहतर एकीकरण के प्रयासों को बढ़ाते हुए अपना सहयोग बढ़ाना चाहिए तथा शीघ्र चेतावनी अभ्यास संचालित करने चाहिए।

सबक सीखना : अपनी सार्वभौमिक सदस्यता और प्रमुख समष्टि-वित्तीय विशेषज्ञता के आधार पर आईएमएफ को एफएसएफ और अन्य के गहन सहयोग से अपने अधिदेश के अनुरूप वर्तमान संकट से सबक सीखने में अग्रणी भूमिका निभानी चाहिए।

मध्यावधि कार्रवाईयां:

वित्तीय नवोन्मेष के प्रति विनियामक अनुक्रियाशीलता : अर्थव्यवस्थाओं और अन्य समुचित निकायों की व्यापक श्रृंखला के साथ कार्य करते हुए अंतरराष्ट्रीय मानक निर्धारक निकायों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि विनियामक नीति निर्माताओं को यह ज्ञात है और वित्तीय बाज़ारों एवं उत्पादों के उद्भव और नवोन्मेष के प्रति तेजी से अनुक्रिया करने में समर्थ हैं।

आस्ति मूल्य : प्राधिकारियों को समष्टि-अर्थव्यवस्था और वित्तीय प्रणाली के लिए आस्ति मूल्यों और उनके प्रभावों में पर्याप्त परिवर्तनों पर निगरानी रखनी चाहिए।

बाज़ार अखंडता को बढ़ावा देना

तत्काल कार्रवाईयां:

बाज़ार में हेराफेरी और धोखाधड़ी के विरुद्ध संरक्षण : राष्ट्रीय और क्षेत्रीय प्राधिकारियों को बाज़ारों और निवेशकों को विशेषकर बाज़ार में हेराफेरी एवं धोखाधड़ी से संरक्षण के लिए कारोबार करने के नियमों की भी समीक्षा करनी चाहिए तथा अवैध कर्ताओं से अंतरराष्ट्रीय वित्तीय प्रणाली को बचाने के लिए अपने सीमापारीय सहयोग को मजबूत करना चाहिए। दुराचार की स्थिति में समुचित दण्ड की व्यवस्था होनी चाहिए। इस बात को प्रोत्साहित किया जाता है कि आईओएससीओ अपने 'परामर्श एवं सहयोग तथा सूचना के आदान-प्रदान से संबंधित बहुदेशीय समझौता ज्ञापन (आईओएससीओ एमएमओयू)' के जरिये सीमापारीय प्रवर्तन-संबद्ध सहयोग का अपना कार्य जारी रखे तथा सभी फर्मों से कारोबार संचालन के उच्च मानकों बनाये रखने का आग्रह भी करे।

मध्यावधि कार्रवाईयां:

गैर-सहकारी और गैर-पारदर्शक अधिकार क्षेत्र जो अवैध वित्तीय कार्यकलाप के जोखिम प्रस्तुत करते हैं : राष्ट्रीय और क्षेत्रीय प्राधिकारियों को ऐसे राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय उपायों को लागू करना चाहिए जो वैश्विक वित्तीय प्रणाली को उन गैर-सहकारी और गैर-पारदर्शक अधिकार क्षेत्रों से बचाता है जो अवैध वित्तीय कार्यकलाप के जोखिम प्रस्तुत करते हैं।

वित्तीय कार्रवाई कार्य बल : वित्तीय कार्रवाई कार्य बल को काले धन को वैध बनाने और आतंकवादियों के वित्तपोषण के विरुद्ध अपने महत्त्वपूर्ण कार्य को जारी रखना चाहिए तथा इसे विश्व बैंक ॐ संयुक्त राष्ट्र संघ चोरी की आस्ति की प्रतिप्राप्ति (स्टार) पहलकदमी के प्रयासों का समर्थन प्राप्त है।

कर सूचना का आदान-प्रदान : आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन (ओईसीडी) जैसे संबद्ध निकायों से कार्य लेने वाले कर प्राधिकारियों को कर सूचना के आदान-प्रदान को बढ़ावा देने के प्रयास जारी रखने चाहिए। पारदर्शिता में कमी और कर सूचना के आदान-प्रदान में विफलता का प्रभावशाली ढंग से समाधान किया जाना चाहिए।

बॉक्स IV.16
अमरीकी प्रशासन की वित्तीय क्षेत्र की योजना

17 जून 2009 को ओबामा प्रशासन ने "वित्तीय विनियामक सुधार, एक नई नींव : वित्तीय पर्यवेक्षण और विनियमन का पुनर्निर्माण" और संलग्न आंकड़ा पत्रक की अपनी विज्ञप्ति द्वारा वित्तीय विनियामक सुधार ("वित्तीय सुधार योजना" या "योजना") काफी समय से अपेक्षित ढाँचे की रूपरेखा प्रस्तुत की। योजना की शुरुआत करते हुए राष्ट्रपति ओबामा ने एक ऐसे ढाँचे का निर्माण करने पर बल दिया जिसमें बाज़ार बिना कमजोरी, जिसके अंतर्गत सामान्य कारोबार चक्र अचानक वित्तीय विघटन का जोखिम लाता है, के निर्बाध और उचित ढंग से कार्य कर सकें। योजना की प्रमुख विशेषताओं में प्रणालीगत जोखिमों पर अधिक ध्यान देना, वित्तीय संस्थाओं के लिए अधिक पूंजी और चलनिधि संबंधी अपेक्षाएं, प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं के लिए सख्त विनियमन, विपदाग्रस्त वित्तीय संस्थाओं के अभिग्रहण के लिए विनियामकों हेतु विस्तारित "समाधान प्राधिकार", विनियामक कार्यों का मामूली समेकन, प्रतिभूतिकरण और व्युत्पन्नियों के लिए नये विनियमन, नई उपभोक्ता वित्तीय संरक्षण एजेंसी के नेतृत्व में अधिक मजबूत उपभोक्ता संरक्षण तथा अधिक अंतरराष्ट्रीय समन्वय शामिल हैं।

प्रणालीगत विनियमन : वित्तीय उद्योग के समेकित निरीक्षण में अवबोध अंतरालों को दूर करने के लिए वित्तीय सुधार योजना का पहला भाग अन्य बातों के साथ-साथ वर्तमान निरीक्षण संरचना में सुधार पर केंद्रित है : (i) नई वित्तीय सेवा निरीक्षण परिषद का गठन करना, (ii) प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं, भले ही उन संस्थाओं के पास बैंकों या अन्य बीमित जमाकर्ता संस्थाओं का स्वामित्व है, को नियंत्रित करने के लिए फेड के गवर्नर बोर्ड को नया प्राधिकार प्रदान करना, (iii) मुद्रा नियंत्रक के कार्यालय (ओसीसी) और बचत पर्यवेक्षण का कार्यालय (ओटीएस) का एकल राष्ट्रीय बैंक पर्यवेक्षक (एनबीएस) में समेकन करना, (iv) प्रतिभूति और विनिमय आयोग (सेक) के पास पंजीकरण के लिए बचाव निधियों और पूंजी के अन्य निजी समूहों के लिए सलाहकारों की जरूरत होना, (v) ऐसी परिस्थितियों से बचने के लिए मुद्रा बाज़ार म्यूचुअल फंडों के विनियमन को संशोधित करना, जो ऐसी निधियों से भारी मात्रा में राशि के आहरण की स्थिति पैदा करें और (vi) बीमा उद्योग के विनियमन में अंतरराष्ट्रीय सहयोग के लिए कार्य करने हेतु नया राष्ट्रीय बीमा कार्यालय (ओएनआई) का सृजन करना।

उच्चतर पूंजी और अन्य विवेकपूर्ण अपेक्षाएं : पूंजी अपेक्षा के संबंध में योजना में चक्रीय-अनुकूलता को कम करने सहित मुद्दों की समीक्षा करना, उच्च-स्तर के निवेश एवं जोखिमों के लिए पूंजी अपेक्षाओं में वृद्धि करना प्रस्तावित है, साथ ही बैंकों और बीएचसी के पर्यवेक्षण के संबंध में अधिक सरल उत्तोलक उपाय करना है।

प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं के लिए सख्त विनियमन : टीयर 1 वित्तीय धारित कंपनियां (टीयर 1 एफएचसी) के हाल में निर्दिष्ट समूह 'कोई भी फर्म जिसका आकार, लीवरेज या अंतर-संबद्धता का संयोजन वित्तीय स्थिरता के लिए चुनौती प्रस्तुत करती है, यदि वह असफल हो जाती है' के रूप में स्थापना एफएसओसी के साथ परामर्श कर फेड द्वारा की जायेगी। इन संस्थाओं को अधिक पूंजी धारित करने की जरूरत होगी और अन्य वित्तीय संस्थाओं पर न लागू होने वाले अतिरिक्त प्रतिबंध लागू होंगे।

प्रतिभूतिकरण और व्युत्पन्नियों के लिए नये विनियमन : वित्तीय सुधार योजना में आस्ति-समर्थित प्रतिभूति बाज़ार से संबंधित कई महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों की संस्तुति की गई है। फेडरल बैंकिंग एजेंसियों को इस अधिदेश से यह अपेक्षा होगी कि ऋण प्रवर्तक या प्रायोजक प्रतिभूतिकृत एक्सपोजर के ऋण जोखिम का 5 प्रतिशत रखें। प्रशासन का यह प्रस्ताव है कि प्रतिभूतिकरण प्रक्रिया में शामिल ब्रोकरों, प्रवर्तकों, प्रायोजक, हामीदारों और अन्य की क्षतिपूर्ति को केवल ऐसे उत्पादों के उत्पादन, सृजन या प्रारंभ से संबद्ध करने के बजाय प्रतिभूतिकृत आस्तियों के दीर्घकालिक कार्यनिष्पादन से जोड़ा जाना चाहिए। आस्ति-समर्थित प्रतिभूतियों के जारीकर्ताओं से ऋण-स्तर के आंकड़े, साथ ही प्रत्येक प्रतिभूतिकरण के लिए ब्रोकर, प्रवर्तक एवं प्रायोजक क्षतिपूर्ति के स्वरूप और सीमा के प्रकटन की भी अपेक्षा होगी।

मजबूत उपभोक्ता संरक्षण : प्रशासन ने एक नई फेडरल एजेंसी - उपभोक्ता वित्तीय संरक्षण एजेंसी (सीएफपीए) के सृजन का प्रस्ताव किया है जो कुछ अपवादों, जैसे म्यूचुअल फंड, जिनको सेक के लिए छोड़ा गया है को छोड़कर, बंधक, क्रेडिट कार्ड और अन्य उपभोक्ता संकेंद्रित वित्तीय उत्पादों के विनियमन के सभी पहलुओं के लिए जिम्मेदार होगी। फेडरल व्यापार आयोग (एफटीसी) के अलावा अन्य नियम-निर्माण करने वाली एजेंसियों को ऐसे प्राधिकार से वंचित कर दिया जायेगा।

विस्तारित संकल्प प्राधिकारी : फेडरल विनियामकों के पास बैंक-धारित कंपनियों के अलावा अन्य विपदग्रस्त वित्तीय संस्थाओं का कार्य देखने का काफी कम प्राधिकार है, बीमाकर्ताओं और बचाव निधियों के लिए प्राधिकार शून्य के स्तर तक गिर गया है। वित्तीय सुधार योजना में इंगित किया गया है कि व्यवस्था बीमित डिपॉजिटरी संस्थाओं के समाधान के लिए एफडीआईए के मॉडल की तरह होनी चाहिए, यह इसके परे कोई ब्योरा प्रदान नहीं करती है।

अधिक अंतरराष्ट्रीय सहयोग : अंत में योजना में अधिक अंतरराष्ट्रीय विनियामक सहयोग पर भी प्रकाश डाला गया है।

प्रस्ताव व्यापक हैं, हालांकि कुछ क्षेत्रों में पूर्ण समाधान प्रदान नहीं करते। फिर भी ये प्रस्ताव अमरीकी वित्तीय प्रणाली के पुनरुद्धार के लिए अत्यावश्यक सिद्ध हो सकते है जिससे वित्तीय संकट की उत्पत्ति हुई है।

संदर्भ :

1. http:// www.financialstability.gov/docs/regs/FinalReport_web.pdf पर उपलब्ध वित्तीय सुधार योजना।
2. www.whitehouse.gov/the_press_office/Remarks-ofthe- President-on-Regulatory-Reform/ पर उपलब्ध 17 जून 2009 का 21वीं शताब्दी में वित्तीय विनियामक सुधार पर राष्ट्रपति ओबामा का भाषण।
3. इकलैण्ड, विलियम एस., डेनिस सी. हेंसली और नॉर्मन डी. स्लोनाकर, 2009। "प्रशासन के वित्तीय विनियामक सुधार प्रस्ताव", वित्तीय धोखाधड़ी पर कानूनी रिपोर्ट, सितम्बर।

4.118 संकट का प्रभाव न केवल उन्नत देशों में बल्कि उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में भी वित्तीय क्षेत्र की नीतियों के निर्माण और विनियामक ढाँचों के डिजाइन पर पड़ा है। यह मुख्यत: उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थों पर संकट के सीधे प्रहार के प्रभावों, मानक निर्धारक निकायों (एफएसएफ, बीसीबीएस, आईएआईएस, आईएएसबी, आईओएससीओ, आदि) द्वारा शुरू 'खेल के नियमों' में परिवर्तनों और विकसित देशों द्वारा कार्यान्वित किये जा रहे नीतिगत उपायों से संबद्ध निदर्शन प्रभावों के कारण हुआ (विश्व बैंक, 2008)। वित्तीय क्षेत्र की नीतियों के पुनरीक्षण में अब तक हुई प्रगति की चर्चा नीचे अलग उप-खंड में की गई है।

पूंजी पर्याप्तता और जोखिम प्रबंध

4.119 हाल के संकट ने बैंकों और अन्य प्रमुख वित्तीय संस्थाओं द्वारा सुदृढ़ पूंजी स्थितियां बनाये रखने तथा उनकी जोखिम प्रबंध पद्धतियों में सुधार करने के महत्त्व को पुन: बल दिया है। संकट के बाद वाली अवधि में, विशेषकर उन्नत देशों में बैंकों के पूंजी स्तरों पर मार पड़ी है। हालांकि संकट से उबरने के पैकेजों ने उनकी पूंजी को बहाल करने में सहायता प्रदान की और अक्तूबर 2009 तक लगभग सभी क्षेत्रों के बैंकों ने अपनी पूंजी स्थितियों में स्थिरता का स्तर हासिल कर लिया है (जीएफएसआर, अक्तूबर 2009)। अमरीकी प्राधिकारियों द्वारा किये गये दबाव परीक्षण के बाद अमरीकी बैंकों के लिए पूंजी बाज़ार पुन: खोले गये। वर्ष 2009 की पहली छमाही के दौरान लगभग 104 बिलियन अमरीकी डॉलर की पूंजी जुटाई गई, जिससे उनकी टीयर 1 पूंजी जोखिम-भारित आस्तियों (आरडब्ल्यूए) के लगभग 11.5 प्रतिशत हो गई।

4.120 वर्तमान विनियामक पूंजी ढाँचे की समीक्षा को यह सुनिश्चित करने के लिए आगे ले जाया गया कि बैंकिंग संस्थाओं के पास ऋण देने के पूंजी का स्तर पर्याप्त है, साथ ही संपूर्ण आर्थिक चक्र में सुरक्षित और सुदृढ़ परिचालन सुनिश्चित करना है। जहां तक पूंजी पर्याप्तता का संबंध है, विभिन्न अंतरराष्ट्रीय मंचों पर जांच किये जा रहे प्रमुख मुद्दे हैं : (i) बैंक पूंजी की मात्रा और गुणवत्ता को बढ़ाना, (ii) ट्रेडिंग बही पूंजी में पर्याप्त वृद्धि, (iii) बासेल II कार्यान्वयन में चक्रीय-अनुकूलता से बचना, (iv) प्रति-चक्रीय पूंजी बफर सृजित करना, (v) प्रकाशित लेखाओं में चक्रीय-अनुकूलता का समायोजन करना, (vi) सकल लीवरेज अनुपात बैकस्टॉप, और (vii) अलग-अलग बैंकों और प्रणालीगत स्तर पर चलनिधि जोखिमों का समावेश करना। जहां बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के लिए विवेकपूर्ण मानदंडों के भावी डिजाइन पर विचार किया जा रहा है, वहीं राष्ट्रीय विनियामक ढाँचों में बासेल II को अपनाने की प्रगति उचित गति पर जारी है। बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति (बीसीबीएस) 2010 के अंत तक पूर्णत: अंशांकित, प्रस्तावों के व्यापक सेट जारी करने के निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार चल रही है। जुलाई 2009 में बीसीबीएस ने दबाव की भावी घटनाओं से निपटने की स्थिति में सुधार लाने की दृष्टि से पिलर 1, पिलर 2 और पिलर 3 के अंतर्गत स्तर उन्नयन प्रस्तावित किया (बॉक्स IV.17)। जुलाई 2009 में व्यापार बही में सुधारों के जारी होने के बाद बीसीबीएस ने 2011 की पहली छमाही में सार्वजनिक परामर्श के लिए ठोस प्रस्ताव जारी करने की दृष्टि से व्यापार बही की बुनियादी समीक्षा का कार्य आरंभ कर दिया है। बीसीबीएस पूंजी की गुणवत्ता, सुसंगतता और पारदर्शिता को काफी अधिक सुदृढ़ करने के लिए ठोस प्रस्ताव विकसित कर रहा है जिनको 2010 के अंत तक अंतिम रूप दे दिया जायेगा।

4.121 पूंजी मानकों के चक्रीय-अनुकूलता के संबंध में एक ऐसा दृष्टिकोण विकसित करना जारी है जो बैंकों को अच्छे आर्थिक समयों में अधिक पूंजी बनाये रखने की अनुमति प्रदान करेगा और जैसे ही आर्थिक चक्र खराब होगा, इस आधिक्य या बफर को कम करने की अनुमति होगी। इसका लक्ष्य पूंजी का ऐसा स्तर बनाना है जो ऋण देने में सहायता के लिए पर्याप्त हो, साथ ही, सुरक्षा और सुदृढ़ता बनाये रखनी होगी। एफएसबी ने वित्तीय प्रणाली में चक्रीय-अनुकूलता को कम करने के लिए निर्देशित विभिन्न कार्य धाराएं शुरू की हैं। बीसीबीएस द्वारा सितम्बर 2009 में न्यूनतम अपेक्षा से ऊपर प्रति-चक्रीय पूंजी बफर के लिए ढाँचे की शुरुआत करने के लिए भी करार किया गया था। इस ढाँचे में पूंजी वितरणों पर अवरोधों जैसे पूंजी संरक्षण उपाय और अर्जन और ऋण-आधारित चरों जैसे संकेतकों के उचित समूह की समीक्षा, पूंजी बफर बनाने और जारी करने की शर्त के तरीके के रूप में शामिल होंगे।

4.122 बीसीबीएस ने संकट के प्रमुख सबकों से जुड़ी अड़चनों को दूर करने के लिए बासेल II ढाँचे के पिलर 2 पर्यवेक्षी समीक्षा प्रक्रिया में उपयोग के लिए मार्गदर्शन को बल प्रदान किया है। बीसीबीएस ने मई 2009 में सुदृढ़ दबाव परीक्षण पद्धतियों और पर्यवेक्षण के लिए सिद्धांत जारी किये। बासेल II में परिवर्तन के बाद राष्ट्रीय प्राधिकारियों ने भी जोखिम प्रबंध पद्धतियों के लिए अपने दिशानिर्देशों को सुदृढ़ किया है। वे जोखिम प्रबंध और दबाव परीक्षण में सुधार करने और विकास करने के लिए फर्मों को प्रोत्साहित करने के लिए भी कदम उठा रहे हैं।

बॉक्स IV.17
बासेल II ढाँचे में सुधार

बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति (बीसीबीएस) ने 13 जुलाई 2009 को बासेल II ढाँचे में सुधार करने के प्रस्तावों की घोषणा की। समिति ने पिलर 1 (न्यूनतम पूंजी अपेक्षाओं) में कुछेक प्रतिभूतिकरणों के संव्यवहार को सुदृढ़ करने की घोषणा की। इसने पुनर्प्रतिभूतिकरण एक्सपोजर के लिए उच्चतर जाखिम भारों की शुरुआत की, ताकि इन उत्पादों में अंतर्निहित जोखिम को बेहतर ढंग से प्रदर्शित किया जा सके और यह प्रस्तावित किया है कि बाहरी रेटिंग प्राप्त प्रतिभूतिकरण एक्सपोजर के लिए बैंक अधिक कठोर ऋण विश्लेषण करें।

पूरक पिलर 2 (पर्यवेक्षी समीक्षा प्रक्रिया) निर्देशन कई उल्लेखनीय कमियों का समाधान करता है जो 2007 में शुरू हुई वित्तीय हलचल के दौरान बैंकों के जोखिम प्रबंध प्रक्रियाओं में प्रकट हुई हैं। इनमें शामिल हैं: फर्म-व्यापी अभिशासन और जोखिम प्रबंधन, तुलनपत्र से इतर एक्सपोजर और प्रतिभूतिकरण कार्यकलापों के जोखिम का अभिग्रहण, जोखिम संकेंद्रण का प्रबंध करना, दीर्घकाल में जोखिम और प्रतिलाभ के बेहतर प्रबंध के लिए बैंकों को प्रोत्साहन प्रदान करना और सुदृढ़ क्षतिपूर्ति पद्धतियां।

पिलर 3 (बाज़ार अनुशासन) अपेक्षाओं को कई प्रमुख क्षेत्रों में सुदृढ़ किया गया है जिनमें व्यापार बही में प्रतिभूतिकरण एक्सपोज़र, तुलनपत्र से इतर संस्थाओं की प्रायोजिकता, पुनर्प्रतिभूतिकरण एक्सपोजर, और प्रतिभूतिकरण एक्सपोजर के संबंध में पाइपलाइन और गोदामों का जोखिम शामिल है।

बैंकों और पर्यवेक्षकों से पिलर 2 के निर्देशन तत्काल लागू करने की शुरूआत करने की आशा है। नये पिलर 1 - पूंजी अपेक्षाएं और पिलर - 3 प्रकटनों को 31 दिसम्बर 2010 तक लागू किये जाने चाहिए।

आर्थिक और वित्तीय दबाव की संभाव्यता और गंभीरता को काफी कम करने की दृष्टि से बैंकिंग क्षेत्र में विनियमन, पर्यवेक्षण और जोखिम प्रबंध को सुदृढ़ करने के लिए उपायों के व्यापक समूह की समीक्षा हेतु 6 सितम्बर 2009 को केंद्रीय बैंक गर्वनरों और पर्यवेक्षण प्रमुखों (जीएचओएस) तथा बीसीबीएस के निरीक्षण निकाय मिले। जीएचओएस ने बैंकिंग क्षेत्र में विनियमन को सुदृढ़ करने के लिए कई प्रमुख उपायों पर करार किया जैसे टीयर 1 पूंजी आधार की गुणवत्ता, सुसंगतता और पारदर्शिता को बढ़ाना, समुचित समीक्षा और अंशांकन के आधार पर पिलर 1 में रूपांतरण की दृष्टि से बासेल II जोखिम-आधारित ढाँचे के पूरक उपाय के रूप में लीवरेज अनुपात कर शुरूआत करना, लेखांकन में अंतरों को पूरा समायोजित करते हुए तुलनात्मक सुनिश्चित करना, चलनिधि के निधीयन के लिए न्यूनतम वैश्विक मानक की शुरुआत करना जिसमें दीर्घकालिक संरचनात्मक चलनिधि अनुपात द्वारा मजबूत दबावग्रस्त चलनिधि व्याप्ति अनुपात की अपेक्षा शामिल है, और न्यूनतम अपेक्षा से अधिक प्रति-चक्रीय पूंजी बफर के लिए ढाँचे की शुरुआत करना।

जीएचओएस ने बैंकिंग प्रणाली में पूंजी के उच्चतर स्तर और गुणवत्ता के संक्रमण में पर्यवेक्षकों के मार्गदर्शन के लिए निम्नलिखित सिद्धांतों का समर्थन किया:

- प्रति-चक्रीय पूंजी बफरों के लिए ढाँचा निर्माण करना, पर्यवेक्षकों की बैंकों से पूंजी संरक्षण उपायों के संमिश्रण के द्वारा अपने पूंजी आधार को सुदृढ़ करने की अपेक्षा करना, जिसमें आधिक्य लाभांश भुगतानों को सीमित करने, शेयर पुनर्खरीद और क्षतिपूर्ति की कार्रवाइयां शामिल हैं।
- क्षतिपूर्ति विवेकपूर्ण जोखिम उठाने और दीर्घकालीन, धारणीय कार्यनिष्पादन, वित्तीय स्थिरता बोर्ड (एफएसबी) के सुदृढ़ क्षतिपूर्ति सिद्धांत के अनुरूप होनी चाहिए।
- बैंकों से पूंजी के स्तर और गुणवत्ता को नये मानकों तक शीघ्र बढ़ाने की अपेक्षा होगी, लेकिन यह इस ढंग से होगा जो राष्ट्रीय बैंकिंग प्रणाली और व्यापक अर्थव्यवस्था में स्थिरता को बढ़ावा देता है।

ढाँचे में पूंजी के वितरणों पर नियंत्रणों जैसे पूंजी संरक्षण उपाय शामिल होंगे। बीसीबीएस संकेतकों के समुचित सेट जैसे अर्जन और ऋण-आधारित चरों की पूंजी बफरों के निर्माण और जारी करने की शर्त के तरीके के रूप में समीक्षा करेगा। इसके अलावा, समिति अनुमानित हानियों पर आधारित अधिक उन्नत प्रावधानों को बढ़ावा देगी। समिति प्रणालीगत बैंकों के जोखिमों को कम करने के लिए पूंजी प्रभार की जरूरत का भी मूल्यांकन करेगी।

पर्यवेक्षकों से यह सुनिश्चित करने की अपेक्षा होगी कि उनके अधिकार क्षेत्र वाले बैंकों की पूंजी योजनाएं इनके सिद्धांतों के अनुरूप हैं।

संदर्भ :

1. बीआईएस, 2009, "वैश्विक बैंकिंग संकट के प्रति व्यापक अनुक्रिया", 7 सितम्बर की प्रेस विज्ञप्ति।
2. बीआईएस, 2009. "बासेल समिति द्वारा घोषित बासेल II पूंजी ढाँचे में वृद्धि", 13 जुलाई की प्रेस विज्ञप्ति।

4.123 बासेल समिति के सुदृढ़ चलनिधि जोखिम प्रबंध के संशोधित सिद्धांतों (2008) को अमरीका में नये अंतर-एजेंसी निर्देशन में शामिल किया जा रहा है जो पर्याप्त चलनिधि बफर के निर्धारण के लिए कठोर दबाव परीक्षण के महत्त्व पर पुन:बल देते हैं। दिसम्बर 2009 में 'चलनधि जोखिम मापन, मानक और निगरानी के लिए अंतरराष्ट्रीय ढाँचे' तथा 'बैंकिंग क्षेत्र में लचीलेपन को सुदृढ़ करने' से संबंधित दो प्रमुख परामर्शी पेपर जारी किये गये थे। परामर्श के साथ-साथ बीसीबीएस इस बात का व्यापक "नीचे से ऊपर" मात्रात्मक प्रभाव मूल्यांकन (क्यूआईएस) कर

रहा है कि सुधार प्रस्तावों के कारण न्यूनतम पूंजी की अपेक्षा कितनी बढ़ेगी, साथ ही विस्तृत "ऊपर से नीचे" मूल्यांकन कर रहा है जो पूंजी और चलनिधि के लिए नये विनियामक मानकों के समग्र अंशांकन का निर्धारण करेंगे। नीचे से ऊपर क्यूआईएस और ऊपर से नीचे अंशांकन मूल्यांकनों की रिपोर्टों का जुलाई 2010 के मध्य में बीसीबीएस द्वारा समीक्षा की जायेगी। इसके अलावा, आईएमएफ के गहन सहयोग से सुधार प्रस्तावों को लागू करने में समष्टि-आर्थिक प्रभावों का मूल्यांकन करने के लिए बीआईएस की अध्यक्षता में संयुक्त एफएसबी-बीसीबीएस समष्टि-आर्थिक मूल्यांकन समूह का गठन किया गया है। समष्टि-आर्थिक प्रभाव अध्ययन नये मानकों की चरणबद्ध अवधि में विकास की जानकारी प्रदान करेगा कि यह वास्तविक अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाने में बाधा नहीं डालता है।

4.124 वित्तीय स्थिरता बोर्ड ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर काफी सुदृढ़ पूंजी मानक जरूरी किये हैं और जी-20 ने बैंक पूंजी की मात्रा और गुणवत्ता, दोनों में सुधार के लिए नियम तैयार करने का वचन दिया है। लेखांकन मानकों में सुधार और सभी देशों में इसे सुसंगत बनाना एक प्राथमिकता का एक और कार्य उभरकर सामने आया है।

लेखांकन मानक

4.125 संकट के दौरान लेखांकन द्वारा निभाई गई भूमिका का व्यापक रूप से विश्लेषण किया गया है और लेखांकन मानकों और मानक-निर्धारण प्रक्रिया को सुदृढ़ करने की संस्तुतियां आगे भेज दी गई हैं। हालांकि लेखांकन परंपराएं वित्तीय संकट का कारण नहीं थीं, लेकिन गैर-अर्थसुलभ वित्तीय लिखतों के लिए उचित मूल्य लेखांकन का उपयोग और ऋणों और कर्ज प्रतिभूतियों के लिए क्षीणता मॉडल जैसे कुछ लेखांकन उपायों को कमजोर क्षेत्र माना गया है। मानक निर्धारकों ने दबावग्रस्त बाज़ार माहौल में उचित मूल्यों का निर्धारण करने और वित्तीय लिखतों की क्षीणता का निर्धारण करने के बारे में निर्देश प्रदान कर अनुक्रिया दी (बॉक्स IV.18)। वित्तीय लेखांकन के मुद्दे पर एक व्यापक

बॉक्स IV.18
एफएएसबी और आईएएसबी दृष्टिकोण

मानक निर्धारक अब वित्तीय लिखतों को मापने के लिए समुचित लेखांकन सिद्धांतों पर चर्चा करने में सक्रिय रूप से लगे हुए हैं। सामान्यतया मान्य लेखाकरण सिद्धांत (जीएएपी) में अमरीकी वित्तीय लेखांकन मानक बोर्ड (एफएएसबी) और अंतरराष्ट्रीय लेखांकन मानक बोर्ड (आईएएसबी) शामिल हैं जो अंतरराष्ट्रीय वित्तीय रिपोर्टिंग मानक (आईएफआरएस) जारी करते हैं। कई अन्य देशों ने स्थानीय मानक स्थापित किये हैं जिनके कारण स्थानीय देश के जीएएपी अस्तित्व में आये हैं। वर्तमान में एफएएसबी और आईएएसबी मापन दृष्टिकोणों पर कार्य कर रहे हैं जो महत्त्वपूर्ण तरीकों से भिन्न-भिन्न दिशाओं में जाते हैं।

उचित मूल्य मापन के संबंध में आईएएसबी और एफएएसबी ने अभिसरण पर पहुंचने के लिए कार्य आरंभ कर दिया है। नवम्बर 2009 में आईएएसबी ने 'आईएफआरएस 9 वित्तीय आस्तियों के वर्गीकरण एवं मापन के संबंध में वित्तीय लिखत' जारी किया जिसने परिशोधित लागत और उचित मूल्य लेखांकन मॉडल का मिश्रण सिद्ध किया। अंशधारकों से प्राप्त टिप्पणियों के जवाब में आईएएसबी ने अपने जुलाई 2009 के एक्सपोजर मसौदे (ईडी) में घोषित दृष्टिकोण में परिवर्तन किये। आईएएसबी ने मई 2010 में वित्तीय देयताओं के वर्गीकरण और मापन के बारे में भी एक्सपोजर मसौदा जारी किया है। यद्यपि दोनों मानक निर्धारणकर्ता अपने संशोधित वित्तीय मानकों के लिए अलग-अलग प्रस्ताव तैयार कर रहे हैं, लेकिन उन्होंने अपने कार्य में सहयोग का इरादा प्रकट किया है। एफएएसबी और आईएएसबी दोनों बोर्डों द्वारा जारी वित्तीय लिखतों के ईडी के बारे में प्राप्त टिप्पणियों पर मिलकर विचार करेंगे।

वित्तीय आस्तियों के प्रत्याशित हानि प्रावधान के संबंध में आईएएसबी ने भी लोगों की टिप्पणी के लिए ईडी जारी किया है। आईएएसबी 2010 की दूसरी तिमाही में अपने व्यापक ईडी में अपना ऋण हानि क्षीणता दृष्टिकोण स्पष्ट करेगा। हालांकि प्रत्याशित हानि प्रावधान के बारे में स्वरूप की दृष्टि से दोनों बोर्डों का दृष्टिकोण एक जैसा नहीं हैं। उपर्युक्त के मद्देनजर दोनों निकायों ने अपने संबंधित ऋण क्षीणता (प्रावधानीकरण) दृष्टिकोणों से जुड़े कई व्यावहारिक मुद्दों के समाधान के लिए बोर्डों को सहायता प्रदान करने हेतु क्षीणता से संबंधित विशेषज्ञ सलाहकार पैनल (ईएपी) गठित किये हैं।

बीसीबीएस आईएएसबी के प्रस्तावित प्रत्याशित हानि दृष्टिकोण को ऐसे ढंग से आगे बढ़ाने के तरीकों के बारे में आईएएसबी और ईएपी से चर्चा कर रहा है जो बैंक की जोखिम प्रबंध प्रणालियों के साथ प्रत्याशित हानि अनुमान प्रक्रियाओं को बेहतर ढंग से समन्वित कर सकें, बासेल II के उद्देश्यों के लिए प्रयुक्त जानकारी से निष्कर्ष निकाल सके, प्रत्याशित हानि अनुमानों की गुणवत्ता में सुधार कर सकें और बैंकों पर अनावश्यक भार को घटाकर चक्रीय-अनुकूलता के जोखिमों को कम कर सके।

इस प्रकार, वैश्विक लेखांकन मानकों के एकल सेट का उद्भव एक आसान कार्य नहीं है हालांकि आईएएसबी और एफएएसबी, दोनों द्वारा इस दिशा में पहलकार्य शुरू कर दिये गये हैं।

संदर्भ

1. डुक, एलिजाबेथ ए., 2009, "बदलते लेखांकन परिदृश्य के विनियामक संदर्भ", बैंक और बचत संस्थाओं पर एआईसीपीए का राष्ट्रीय सम्मेलन, वाशिंगटन डी.सी., 14 सितम्बर।
2. वित्तीय स्थिरता बोर्ड, 2010, "वित्तीय स्थिरता को सुदृढ़ करने के लिए जी-20 की अनुशंसाओं को लागू करने के लिए सेंट एंड्रयूज की बैठक के बाद से प्रगति", अप्रैल।

मतैक्य उभर रहा है कि इसे सरल बनाया जाये और विश्वभर में लागू कर दिया जाये।

4.126 2006 में आईएएसबी और अमरीकी वित्तीय लेखांकन मानक बोर्ड (एफएएसबी) एक ऐसे समझौता ज्ञापन के लिए सहमत हुए जिसमें लेखांकन मानकों में सुधारों को हासिल करने और आईएफआरएस एवं अमरीका में सामान्यतया मान्य लेखांकन सिद्धांतों (जीएएपी) के बीच पर्याप्त समानता के कार्यक्रम का वर्णन किया गया। समझौता ज्ञापन को 2008 में अद्यतन किया गया और नवम्बर 2009 में दोनों बोर्डों ने अपने इस कार्य को जून 2011 तक पूरा करने के लिए उपायों को रेखांकित करते हुए एक और वक्तव्य जारी किया।

क्षतिपूर्ति सुधार

4.127 क्षतिपूर्ति पद्धतियां, विशेषकर बड़ी वित्तीय संस्थाओं की पद्धतियां उन कारकों में एक थीं, जिन्होंने हाल के वैश्विक वित्तीय संकट में योगदान दिया। एफएसबी ने सुदृढ़ क्षतिपूर्ति पद्धतियों के लिए सिद्धांत (अप्रैल 2009) और उनके कार्यान्वयन मानक (सितम्बर 2009) जारी किये तथा सिद्धांतों और मानकों को लागू करने के लिए एफएसबी सदस्यों के अधिकारक्षेत्र में उठाये गये कदमों की समीक्षा दिसम्बर 2009 में शुरू की। समीक्षा में महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं द्वारा कार्यान्वयन में उस तारीख तक हुई प्रगति को भी शामिल किया गया। समीक्षा पूरी हुई और मार्च 2010 में प्रकाशित की गई। गति को बनाये रखने के लिए एफएसबी 2011 की दूसरी तिमाही में कार्यान्वयन की आगे और अधिक विस्तृत समीक्षा करेगा।

4.128 बीसीबीएस ने 22 जनवरी 2010 को क्षतिपूर्ति सिद्धांत और मानक निर्धारण कार्यपद्धति जारी की। यह कार्यपद्धति ऐसे पर्यवेक्षी दृष्टिकोण विकसित करना चाहती है जो बैंकों में सुदृढ़ क्षतिपूर्ति पद्धतियों को बढ़ावा देने में कारगर हों और समान कार्य अवसर प्रदान करने में सहायक हों।

प्रतिभूतिकरण ढाँचा

4.129 आधुनिक वित्तीय प्रणाली महत्त्वपूर्ण मध्यवर्ती साधन के रूप में प्रतिभूतिकरण पर निर्भर हो गई है। सब-प्राइम संकट के दौरान तुलनपत्र से इतर अधिकांश साधन (ओबीएसवी) मुख्यत: विनियामक अंतरपणन द्वारा प्रेरित हुए, जबकि अन्य कर परिवर्जन कारणों या बजट से इतर एवं तुलनपत्र से इतर वित्त के लिए सरकारों और अन्य लोक प्राधिकारियों की जरूरतों का समाधान करने, सामान्यतया लोक ऋण या ऋण सीमाएं प्राप्त करने के लिए सृजित किये गये (ब्युटर, 2008)। संकट ने निम्नलिखित सुनिश्चित करने के लिए प्रतिभूतिकरण ढाँचे के सुधार की अत्यावश्यकता पर प्रकाश डाला : (i) कम गुणवत्ता/सब-प्राइम प्रतिपक्षियों की ऋण जोखिमों की मात्रा का ठीक से निर्धारण करने के लिए ऋण मूल्यांकन स्तर पर सख्त समुचित सावधानी, (ii) चलनिधि आयोजना में बाज़ार विघटन परिदृश्यों और संस्था-विशिष्ट परिदृश्यों पर विचार करने की जरूरत, (iii) जोखिम एक्सपोजर के विश्वसनीय मूल्यांकनों और पारदर्शिता का महत्त्व, (iv) संरचनागत उत्पादों में अवशिष्ट जोखिमों की पर्याप्त पहचान, और (v) पर्याप्त पारदर्शिता और प्रकटन।

4.130 जुलाई 2009 में बीसीबीएस ने पुनर्प्रतिभूतिकरण के लिए पूंजी अपेक्षाएं बढ़ाने और संरचित उत्पादों एवं तुलनपत्र से इतर कार्यकलापों के लिए विस्तारित जोखिम प्रबंध अपेक्षाओं के बारे में अंतिम मानक जारी किये। बीसीबीएस यह सुनिश्चित करने का कार्य कर रहा है कि ओटीसी व्युत्पन्नियों के लिए पूंजी अपेक्षाएं केंद्रीय समाशोधन के लाभों और संपार्श्विकता एवं अन्य प्रतिपक्षी ऋण जोखिमें को ध्यान में रखते हुए व्युत्पन्नियों के जोखिमों का पर्याप्त रूप से प्रदर्शन करती हैं। नये मानकों के 2010 के अंत तक जारी होने की आशा है।

4.131 प्रतिभूति आयोगों का अंतरराष्ट्रीय संगठन (आईओएससीओ) ने प्रतिभूतिकृत उत्पादों और ऋण चूक अदला-बदली (सीडीएस) से संबद्ध विनियामक मुद्दों पर रिपोर्ट सितम्बर 2009 में प्रकाशित की। रिपोर्ट में प्रतिभूतिकरण बाज़ारों में लागू किये जाने वाले विनियामक दृष्टिकोणों की अनुशंसा की। आईओएससीओ ने संरचित वित्त लिखतों में निवेश हेतु निवेश प्रबंधकों के लिए समुचित सावधानी के संबंध में अच्छी पद्धतियों के बारे में अपनी रिपोर्ट को जून 2009 में अंतिम रूप दिया। जी-20 के हाल के करार में आस्ति प्रतिभूतिकरण के लिए जोखिम प्रतिधारण या "स्कीन-इन दि-गैम" दृष्टिकोण का प्रस्ताव किया। कुछ कार्यक्षेत्रों में प्रतिभूतिकरण के प्रवर्तकों/प्रायोजकों के लिए मात्रात्मक प्रतिधारण अपेक्षाएं लागू करने के लिए राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय पहलकार्य भी जारी हैं।

4.132 सीडीएस मानकीकरण के कुछ प्रमुख मुद्दों का उद्योग द्वारा पहले ही समाधान कर दिया गया है। अंतरराष्ट्रीय अदला-बदली और व्युत्पन्नी संघ ने अपनी 2003 की ऋण व्युत्पन्नी की परिभाषाओं ("बिग

बैंग" और "स्माल बैंग" प्रोटोकाल) के अप्रैल और जुलाई 2009 में दो पूरक प्रकाशित किये। सीडीएस सूचकांकों पर प्रारंभिक संकेंद्रण के साथ सीडीएस संविदाओं के लिए केंद्रीय समाशोधन प्रतिपक्षियों की स्थापना को बढ़ावा देने के पहलकार्य गति पकड़ रहे हैं। कई सीडीएस समाशोधन गृहों ने परिचालन पहले ही आरंभ कर दिये हैं।

4.133 ओटीसी व्युत्पन्नी विनियामक मंच सितम्बर 2009 में स्थापित किया गया था, इस प्रकार अधिक औपचारिक आधार-प्रदान करते हुए वैश्विक रूप से सुसंगत निरीक्षण को बढ़ावा देने सहित ओटीसी व्युत्पन्नी, केंद्रीय प्रतिपक्षियों और व्यापार भण्डार सहयोग और सूचना को आपस में बांटने के लिए व्यवस्थाएं पहले से ही चालू हैं। ओटीसी व्युत्पन्नी के केंद्रीय समाशोधन के साथ जुड़े जोखिमों के बेहतर समाधान ढूंढने की दृष्टि से बीआईएस की भुगतान और निपटान प्रणालियों से संबंधित समिति (सीपीएसएस) और आईओएससीओ ने एक संयुक्त कार्यदल गठित किया है जो मार्च 2004 में संयुक्त रूप से प्रकाशित केंद्रीय प्रतिपक्षियों के लिए अनुशंसाओं के अंतर्गत तय मानकों को संशोधित कर रहा है। उच्चतर पारदर्शिता के लिए ओटीसी व्युत्पन्नी से संबंधित जानकारी एकत्र करने के लिए डिपोजिटरी न्यास और समाशोधन निगम (डीटीसीसी) के व्यापार सूचना महाभंडार (टीआईडब्ल्यू) जैसे केंद्रीकृत रिपोर्टिंग प्लेटफॉर्म गठित किये गये हैं। न्यूयार्क फेड उद्योग के लिए वैश्विक केंद्रीय प्रतिपक्षी सृजित करने के लिए लंबे समय से अग्रणी प्रयास में लगा है। यूरोपीय संघ भी अपने क्षेत्र के लिए अलग ओटीसी व्युत्पन्नी प्रतिपक्षी के लिए लगा हुआ है।

4.134 प्रतिभूतिकरण ढाँचे के अलावा संकट के दौरान कई वित्तीय उत्पादों एवं पेपरों के जोखिमों को आंकने और निवेशकों को भ्रमित करने में क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों की भूमिका की अत्यधिक आलोचना की गई।

क्रेडिट रेटिंग एजेंसी व्यवस्था में सुधार करना

4.135 वित्तीय लिखतों की जटिलता और उनको जारी करने की गति- विशेषकर आस्ति-समर्थित प्रतिभूतियों और संरचित वित्त उत्पादों, ने गत दशक में रेटिंग कारोबार को अधिक लाभदायक, लेकिन कठिन भी बना दिया है। अंत में रेटिंग एजेंसियों ने भूलवश अवास्तविक रूप से उच्च रेटिंग जारी कर प्रणालीगत जोखिम को बढ़ाने में योगदान दिया (बीआईएस, वार्षिक रिपोर्ट, 2009)।

4.136 राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्तर पर क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों (सीआरए) की निगरानी को सुदृढ़ करने के पहलकार्य जारी हैं। यूरोपीय आयोग (ईसी) ने यूरोप में सीआरए के पर्यवेक्षण के लिए कदम उठाए हैं। यूरोपीय आयोग के प्रस्ताव आने वाले वर्षों में क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों के वैश्विक पर्यवेक्षण के लिए प्रथम और आवश्यक कदम है। मार्च 2009 में प्रकाशित सीआरए के लिए आईओएससीओ बुनियादी आचरण संहिता के अद्यतन प्रावधानों को कई सीआरए ने अपने आचार संहिता में अपना लिया है। विनियामक आईओएससीओ के जरिये यह मूल्यांकन करने का कार्य कर रहे हैं कि राष्ट्रीय और क्षेत्रीय विनियामक पहलकार्य आईओएससीओ सिद्धांतों और बुनियादी आचार संहिता से सुसंगत हैं। वे यह भी पहचान रहे हैं क्या पहलकार्यों के बीच असमानताएं 2010 तक समुचित और वैश्विक रूप से संगत समाधानों की ओर साथ मिलकर कार्य कर रही क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों के लिए परस्पर-विरोधी अनुपालन बाध्यताएं उत्पन्न कर सकती हैं।

4.137 विनियामक और पर्यवेक्षी ढाँचे में रेटिंग के उपयोग की समीक्षा करने के लिए एफएसबी और जी-20 अनुशंसाओं की प्रतिक्रिया में बीसीबीएस विनियामक पूंजी ढाँचे में बाहरी रेटिंग के उपयोग से उत्पन्न होने वाले कई अनुचित प्रोत्साहनों के समाधान का कार्य कर रहा है।

4.138 जी-30 ने राष्ट्रीय स्तर पर मान्यताप्राप्त प्रतिभूति रेटिंग संगठन (एनआरएसआरओ) और रेटिंग के उपयोग के संबंध में विनियामक नीतियों में निम्नलिखित हासिल करने की दृष्टि से संशोधन का प्रस्ताव किया है : (i) जोखिम रेटिंग के प्रयोक्ताओं, सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नियंत्रित प्रयोक्ताओं, को ऐसे ऋण उत्पादों, जिनमें वे निवेश कर रहे हैं, के जोखिम के स्वतंत्र मूल्यांकन की क्षमता बहाल करने या अर्जित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, (ii) एनआरएसआरओ द्वारा जारी जोखिम रेटिंगों को न केवल चूक की संभाव्यताओं और चूक की स्थिति में हानि होने, बल्कि संभाव्य जोखिम कारकों (चलनिधि और मूल्य स्थिरता सहित) की पूर्ण श्रृंखला (चलनिधि और मूल्य स्थिरता) के संभाव्य मूल्यांकन हानियों के जोखिम को प्रदर्शित करने के लिए अधिक प्रभावशाली बनाया जाना चाहिए, और (iii) विनियामकों को ऐसे भुगतान मॉडल तैयार करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए जो जोखिम रेटिंग प्रदान करने वालों, उनके ग्राहकों और प्रयोक्ताओं के बीच प्रोत्साहनों के सुयोजन में सुधार करते हैं तथा उनके कार्य उत्पाद की गुणवत्ता के लिए एनआरएसआरओ को जिम्मेदार ठहराने के लिए प्रयोक्ताओं को अनुमति प्रदान करनी चाहिए।

4.139 संरचित उत्पादों और क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों के अपर्याप्त विनियमन और पर्यवेक्षण के अलावा अत्यधिक प्रणालीगत जोखिम के उत्पन्न होने को संकट के प्रमुख कारण के रूप में पहचाना गया है। फोकस प्रणालीगत जोखिम की लागत पर संस्था-व्यापी जोखिम पर रहा है।

प्रणालीगत जोखिम का समाधान करना

4.140 वित्तीय स्थिरता की सुरक्षा करने वाले व्यापक ढाँचे के निर्माण के लिए शुरुआती बिन्दु वित्तीय प्रणाली के तीन तत्वों यथा- लिखतों, बाज़ारों और संस्थाओं, प्रत्येक में प्रणालीगत जोखिम के स्रोत की पहचान करना है। कमजोर विनियामक परिधि की समस्याओं के समाधान के क्रम में वित्तीय प्रणाली के किसी भी हिस्से को उचित विनियमन से बचने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। पर्यवेक्षी संदर्भ में अविनियमित खंड विशाल 'कमजोर क्षेत्र' थे और इसमें वह भी शामिल है जिसे 'आभासी बैंकिंग प्रणाली' कहा जाता है जिनमें प्रतिभूतिकरण का सर्वाधिक दुरुपयोग हुआ (डेवाट्रिपांट आदि, 2009)। उन विनियामक खामियों की पहचान, जिनकेध बीच अविनियमित संस्थाएं परिचालन करती हैं, इसलिए की जा रही है ताकि प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण विनियमित संस्थाओं को अविनियमित संस्थाओं के कार्यकलापों द्वारा अनावश्यक जोखिम में न डाला जाये (बॉक्स IV.19)।

4.141 इन प्रयासों से दो महत्त्वपूर्ण विषय उभरे हैं। पहला, विशेष रूप से बड़े और जटिल संगठनों में कारगर समेकित पर्यवेक्षण के महत्त्व की पुन:पुष्टि की गई है ताकि पर्यवेक्षक उन जोखिमों और एक्सपोज़र को ठीक से समझ सकें जो विधिक संस्थाओं और कारोबारी लाइनों से परे जा सकते हैं। दूसरा, प्रणाली-व्यापी या समष्टि-विवेकपूर्णता की सार्थकता, उन समस्याओं का बेहतर ढंग से पूर्वानुमान करना, जो फर्मों और बाज़ारों की परस्पर-क्रिया से उत्पन्न हो सकता है, के फर्म-विशिष्ट जोखिम विश्लेषण के परिप्रेक्ष्य में स्वीकार किया गया है। इन दृष्टिकोणों का समर्थन करने के लिए पर्यवेक्षी प्रक्रियाओं को उन विश्लेषणों को शामिल कर पुनर्संरचित किया जा रहा है जो बहुल विषयों, अद्यतन निगरानी उपायों और अधिक सामयिक जानकारी से उत्पन्न होते हैं ताकि पर्यवेक्षक उभरते जोखिमों को शीघ्र पहचान सकें और अधिक कारगर ढंग से निपट सकें।

प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थाएं (एसआईएफआई)

4.142 एफएसबी अपने सदस्यों के साथ मिलकर एसआईएफआई से उत्पन्न नैतिक खतरे के निवारण के लिए व्यापक और सुसंगत ढाँचा तैयार करने के कार्य पर लगा है। अक्तूबर 2009 में जारी आईएमएफ/

बॉक्स IV.19
वित्तीय विनियमन के दायरे को बढ़ाना

बीसीबीएस, आईएआईएस और आईओएससीओ का संयुक्त मंच विनियामक अंतरालों का विश्लेषण कर रहा है ताकि यह सुनिश्चित करने में सहायता कर सके कि वित्तीय विनियमन का दायरा और स्वरूप समुचित हैं। जनवरी 2010 में बीसीबीएस, आईएआईएस और आईओएससीओ के संयुक्त मंच ने 'वित्तीय विनियमन का विभेदक स्वरूप और दायरा' पर अपनी रिपोर्ट प्रकाशित की। रिपोर्ट में जहां मोटे विषय को शामिल किया गया है, वहीं सिफारिशें पाँच प्रमुख क्षेत्र पर केंद्रित हैं : (i) बैंकिंग, बीमा और प्रतिभूति क्षेत्रों में प्रमुख विनियामक अंतर, (ii) वित्तीय समूहों के पर्यवेक्षण और विनियमन को सुदृढ़ करना, (iii) बंधक प्रवर्तन के लिए सुसंगत और कारगर हामीदार मानकों को बढ़ावा देना, (iv) बचाव निधि कार्यकलापों के विनियमन के दायरे को व्यापक बनाना, और (v) ऋण अंतरण उत्पादों के विनियामक निरीक्षण को सुदृढ़ करना।

बीमा क्षेत्र के लिए बीमा पर्यवेक्षकों का अंतरराष्ट्रीय संघ (आईएआईएस) ने 12 अप्रैल 2010 को समूह-व्यापी पर्यवेक्षण क्षेत्र में गैर-विनियमित संस्थाओं के निरूपण पर एक मार्गदर्शन पत्र प्रकाशित किया। आईएआईएस भी बीमा समूह पर्यवेक्षण के लिए साझा मूल्यांकन ढाँचे के डिजाइन और व्यावहारिकता पर भी अनुसंधान कर रहा है। अंत में, आईएआईएस वर्तमान में बीमा पर्यवेक्षण के ढाँचे के भीतर मानक निर्धारण के लिए नया खाका तैयार कर रहा है जिसका उद्देश्य 1 जनवरी 2010 से शुरू होने वाली दो-वर्ष की अवधि में बीमा पर्यवेक्षण के ढाँचे के भीतर सभी आईएआईएस मानक-निर्धारण कार्यकलापों के लिए नीतिगत निदेश और प्राथमिकताएं निर्धारित करना है। आईएआईएस ने अपने सदस्यों के बीच परामर्श प्रक्रिया शुरू की है ताकि यह मुद्दा उठाया जा सके कि पर्यवेक्षी समीक्षा, इस खाके की समय-सीमा के भीतर रिपोर्टिंग और मूल्यांकन के संबंध में कौनसे मानक-निर्धारण से संबंधित पहलकार्य किये जायें।

एफएसबी की सदस्य निकाय आईओएससीओ ने जून 2009 में बचाव निधि विनियमन के लिए उच्च-स्तरीय सिद्धांतों का एक सेट प्रकाशित किया। छह सिद्धांतों में अनिवार्य पंजीकरण के लिए अपेक्षाएं, विनियमन और प्रणालीगत जोखिम मूल्यांकन उद्देश्यों के लिए सूचना का प्रावधान शामिल हैं। वे यह भी बताते हैं कि विनियामकों को सहयोग करना चाहिए और वैश्विक रूप से सक्रिय बचाव निधि प्रबंधकों/बचाव निधियों के कार्यक्षम और कारगर निरीक्षण में मदद के लिए जानकारी आपस में बांटनी चाहिए। आईओएससीओ इस क्षेत्र में अपना कार्य जारी रखेगा। प्रमुख क्षेत्राधिकारों में राष्ट्रीय और क्षेत्रीय पहलकार्य भी जारी हैं।

घरेलू विनियमन की पर्याप्तता की समीक्षा और व्यापक वित्तीय क्षेत्र के सुधार प्रस्तावों के हिस्से के रूप में शामिल अभिज्ञापित विनियामक अंतरालों को भरने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर कई पहलकार्य भी जारी हैं।

बीआईएस/एफएसबी के संयुक्त पेपर में फर्म के प्रणालीगत रूप से महत्त्व के मूल्यांकन के लिए ढाँचा निर्धारित किया गया है। एफएसबी इस परियोजना पर संभावित नीतिगत विकल्पों सहित जून 2010 में अंतरिम रिपोर्ट और नवम्बर 2010 में अंतिम सिफारिशें प्रस्तुत करेगा। इस संबंध में अभिज्ञापित तीन मुख्य कार्य-धाराएं निम्नलिखित से संबद्ध हैं : (i) असफलता की संभावना और प्रभाव को कम करना, (ii) संकटग्रस्त फर्मों के समाधान की क्षमता में सुधार करना, और (iii) प्रमुख वित्तीय बुनियादी संरचनाओं और बाज़ारों को सुदृढ़ कर अंतर-संबद्धता और संक्रामण जोखिमों को कम करना। निजी क्षेत्र का एक कार्यदल 2010 की पहली छमाही में त्रि-पक्षीय रेपो लेनदेनों से संबद्ध जोखिमों को कैसे कम किया जाये, के बारे में अनुशंसा के साथ रिपोर्ट जारी करेगा।

समष्टि-विवेकपूर्ण विनियमन

4.143 समष्टि-विवेकपूर्ण साधनों की व्यापक श्रृंखला की जरूरत, विशेषकर वे जो समय-श्रृंखला और प्रति-खंडीय शर्तों में प्रणालीगत जोखिम की गुजाइश की प्रत्याशित सीमा की ओर प्रवृत्त होंगे, हाल के वित्तीय संकट के बाद प्रमुखता से सामने आ गई है। 1970 के दशक के उत्तरार्द्ध में इसके उद्भव से लेकर 'समष्टि-विवेकपूर्ण' पद ने हमेशा वित्तीय प्रणाली की स्थिरता और समष्टि-अर्थव्यवस्था के साथ इसकी संबद्धता पर चिंताएं निर्दिष्ट की हैं। संकीर्ण अर्थ में समष्टि-विवेकपूर्ण विनियमन से आशय संपूर्ण वित्तीय प्रणाली में स्थिरता को बढ़ावा देने के सुस्पष्ट उद्देश्य वाले विवेकपूर्ण साधनों के उपयोग से है, यह आवश्यक नहीं है कि इसके भीतर अलग-अलग संस्थाएं हों। हालांकि जोखिमों पर नियंत्रण के लिए समष्टि-विवेकपूर्ण और सूक्ष्म-विवेकपूर्ण विनियमन के बीच पर्याप्त संतुलन सुनिश्चित करना तथा वित्तीय प्रणाली में समष्टि-विवेकपूर्ण जोखिमों के उत्पन्न होने पर निगरानी और मूल्यांकन के लिए आवश्यक साधन विकसित करना महत्त्वपूर्ण है। केंद्रीय बैंकों और पर्यवेक्षकों ने विशेषकर बासेल II ढाँचे में सूक्ष्म-विवेकपूर्ण विनियमन को सुदृढ़ कर संकट के प्रति अनुक्रिया दी और समष्टि-विवेकपूर्ण आवरण की शुरुआत करने का कार्य जारी है जिसमें प्रति-चक्रीय पूंजी बफर, साथ ही प्रणालीगत, अंतर-संबद्ध बैंकों से उत्पन्न होने वाले जोखिमों को दूर करने के व्यावहारिक कदम शामिल हैं। उदाहरण के लिए राष्ट्रीय स्तर पर संस्थागत व्यवस्थाओं में परिवर्तन और संबद्ध प्राधिकारियों के अधिकारों की समीक्षा के जरिये प्रणाली-व्यापी निरीक्षण और समष्टि-विवेकपूर्ण नीति की व्यवस्था शुरू करने के प्रयास जारी हैं। बीसीबीएस ने समष्टि-विवेकपूर्ण पर्यवेक्षण के लिए कार्यदल गठित किया है जो अन्य बातों के साथ-साथ प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण बैंकों के बाह्य कारकों को दूर करने के पर्यवेक्षी साधनों को शामिल करेगा।

4.144 एफएसबी और इसके सदस्य वित्तीय प्रणाली में समष्टि-विवेकपूर्ण जोखिमों के उत्पन्न होने पर निगरानी और मूल्यांकन के लिए मात्रात्मक साधन तैयार कर रहे हैं। इन साधनों का उद्देश्य वित्तीय क्षेत्र के प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण संघटकों की पहचान और निर्धारण में सुधार करना तथा यह मूल्यांकन करना कि समय के साथ जोखिम कैसे उत्पन्न होते हैं। समष्टि-विवेकपूर्ण साधनों के उपयोग के लिए यह अपेक्षा होगी कि प्राधिकारी वित्तीय प्रणाली के आंकड़ों के संग्रहण का दायरा बढ़ायें। आईएमएफ और एफएसबी ने आंकड़ा अंतराल को पहचानने और उनको दूर करने के लिए संयुक्त पहलकार्य शुरू कर दिये हैं तथा नवम्बर 2009 में जी-20 देशों के वित्त मंत्रियों और केंद्रीय बैंक के गवर्नरों को प्राथमिकताओं की रूपरेखा और कार्य योजनाएं प्रस्तुत की हैं।

एकल बनाम बहुल विनियामक

4.145 संकट के मद्देनजर यह तर्क दिया जाता है कि कई उन्नत देशों में केंद्रीय बैंकों को विनियमन और पर्यवेक्षण संबंधी अधिकारों से वंचित कर वित्तीय विनियमन के महत्त्व को कम कर दिया गया है तथा वे अधिकार अलग संस्था जैसे यूके में वित्तीय सेवा प्राधिकारी (एफएसए) को दे दिया गया है। एकल बनाम बहुल विनियामकों की जरूरतों पर विवाद का समाधान अभी नहीं हुआ है, अत: इस बात को पहचानने की जरूरत है कि बाज़ार सहभागी अलग-अलग विनियामकों को अलग-अलग जानकारी प्रदान कर सकते हैं, इस प्रकार विनियामकों के बीच सूचना असममिति समस्या से फायदा उठा सकते हैं। सब-प्राइम संकट के परिणामस्वरूप यह बात उभर कर सामने आई है कि यदि केंद्रीय बैंकों को उन दोषी संस्थाओं को संकट से उबारने में अंतिम उधारदाता की जिम्मेदारियां निभानी हैं जिन्होंने ऋण प्रदान करने में 'असंगत उत्साह' प्रदर्शित किया है, तो उनके पास इन संस्थाओं के तुलनपत्रों पर नियंत्रण के पर्यवेक्षी और विनियामक अधिकार होने ही चाहिए। केंद्रीय बैंक के पास विनियामक और पर्यवेक्षी जिम्मेदारियां नहीं भी हों तो भी इसको सभी विनियामकों की जानकारी के विभिन्न स्रोतों तक पहुंच होनी चाहिए

ताकि जानकारी की गुणवत्ता और शुद्धता पर नियमित रूप से निगरानी रखी जा सके, भले ही इसके लिए विभिन्न विनियामकों को रिपोर्टिंग के रूप में कुछ दोहराव की जरूरत हो। चूंकि मौद्रिक स्थिरता और वित्तीय स्थिरता एक दूसरे को आपस में सहायता करती है, अत: विभिन्न उद्देश्यों के लिए कार्य करने हेतु बहुल विनियामक की तुलना में एकल महा-विनियामक के अंतर्निहित लाभ होंगे।

4.146 उपर्युक्त के मद्देनजर जर्मनी ने 9 अक्तूबर 2009 को घोषणा की कि बैंकिंग पर्यवेक्षण के लिए मौजूदा विनियामक बाफिन को अपनी जिम्मेदारियों से वंचित करते हुए एकल बैंकिंग विनियामक के रूप में बुंदेसबैंक को नियुक्त करेगा। अप्रैल 2008 में जार्जिया वित्तीय पर्यवेक्षी एजेंसी की स्थापना के 20 महीने बाद दिसम्बर 2009 में राष्ट्रीय बैंक, जार्जिया को पर्यवेक्षण के अधिकार पुन: प्राप्त हुए। 16 जून 2010 को यूके में वित्तीय विनियामक तंत्र की अच्छी तरह से जांच करने की घोषणा की गई जो 2012 तक पूरी होगी। तद्नुसार, एफएसए की विवेकपूर्ण निरीक्षण विंग बैंक ऑफ इंग्लैण्ड के पास चली जायेगी तथा नया उपभोक्ता संरक्षण और बाज़ार प्राधिकारी सृजित किया जायेगा।

4.147 यूरोप के पर्यवेक्षी ढाँचे में सुधार, जिसकी रूपरेखा 27 मई 2009 के यूरोपीय आयोग की घोषणा में प्रस्तुत की गई है, के अंतर्गत दो नये प्राधिकारियों का सृजन किया जाएगा: यूरोपीय प्रणालीगत जोखिम परिषद् (ईएसआरसी) और वित्तीय पर्यवेक्षकों की यूरोपीय प्रणाली (ईएसएफएस)। ईएसआरसी, जिसमें यूरोपीय संघ के केंद्रीय बैंकों और वित्तीय विनियामकों - प्रत्येक के प्रमुख शामिल होंगे, संकट से उभरे अंतर-संबद्ध, जटिल, खंडीय और प्रति-खंडीय प्रणालीगत जोखिमों से वित्तीय प्रणाली के एक्सपोजर को दूर करते हुए संपूर्ण वित्तीय प्रणाली की स्थिरता के लिए जोखिमों पर निगरानी एवं मूल्यांकन करने के लिए समष्टि-विवेकपूर्ण पर्यवेक्षण करेगा। ईएसएफएस फर्म-स्तर या सूक्ष्म विवेकपूर्ण पर्यवेक्षण से प्रभारित होगा। योजना के अनुसार नये ढाँचे में नये यूरोपीय पर्यवेक्षी प्राधिकारियों के साथ कार्यरत राष्ट्रीय वित्तीय पर्यवेक्षकों का नेटवर्क शामिल होगा। सुधारों से यूरोपीय बैंकिंग पर्यवेक्षक समिति, यूरोपीय बीमा और व्यावसायिक पेंशन समिति और यूरोपीय प्रतिभूति विनियामक समिति समाप्त हो जायेंगी और उनके मौजूदा कार्य नई एजेंसियां करेंगी। परिचालनात्मक यूरोपीय नेटवर्क बनाने के लिए राष्ट्रीय पर्यवेक्षकों से जोड़ने के लिए ईएसएफएस जिम्मेदार होगी।

वैश्विक वित्तीय ढाँचे को सुदृढ़ करने के लिए समन्वय

4.148 वित्तीय बाज़ारों के हाल के हलचल ने केंद्रीय बैंकों और पर्यवेक्षकों के बीच उच्चतर स्तर के समन्वय की जरूरत को रेखांकित किया है। वर्तमान संकट की शुरुआत से यह स्पष्ट था कि चलनिधि और शोधक्षमता को हल करने के अल्पकालिक उपायों के पूरक के रूप में प्रणाली को सुदृढ़ करने के लिए दीर्घकालिक कार्य हों। अल्पकालिक और दीर्घकालिक अनुक्रिया, दोनों में महत्त्वपूर्ण बाह्य कारक हैं जिनके लिए अंतरराष्ट्रीय समन्वय की जरूरत है। समान कार्य-क्षेत्र बनाये रखना सुनिश्चित करने के लिए विनियामक नीतियों के सीमापारीय प्रभावों को दूर करने हेतु दीर्घकालिक कार्यों की जरूरत हुई है। वैश्विक प्रणालीगत लचीलापन को सुदृढ़ करने का कार्य अंतरराष्ट्रीय सहयोग और ऐसी गति से आगे बढ़ रहा है जो एक वर्ष पूर्व अकल्पनीय थी।

4.149 एफएसएफ और अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक (बीआईएस) ने भी संकट के प्रभाव को कम करने और वैश्विक वित्तीय प्रणाली में सुधार करने के लिए कई संस्तुतियां कीं। अप्रैल 2008 के शुरू में अगले 100 दिनों में कार्यान्वित किये जाने वाले एफएसएफ के व्यापक प्रस्ताव की जी-7 देशों ने अभिपुष्टि की। प्रस्ताव में तुलनपत्र से इतर संस्थाओं के लिए लेखांकन और प्रकटन मानकों को अपनाये जाने के कदम; कठोर दबाव परीक्षण सहित पर्यवेक्षकों के निरीक्षण द्वारा समर्थित जोखिम प्रबंध पद्धतियों को सुदृढ़ करना तथा यथा आवश्यकत पूंजी स्थितियों को मजबूत करना शामिल हैं। इसके अलावा, एफएसएफ ने 2008 के अंत तक कार्यान्वयन के लिए कुछ प्रस्ताव प्रस्तुत किये, जिनको अंतरराष्ट्रीय मौद्रिक और वित्तीय समिति (आईएमएफसी) का समर्थन प्राप्त हुआ। इसके अलावा, आर्थिक और वित्तीय कार्य परिषद् ने मोटे तौर पर एफएसएफ जैसे मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करते हुए वर्तमान बाज़ार हलचल पर कार्य से संबंधित कार्यक्रम का समर्थन किया। साथ ही, मई 2008 में यूरोपीय प्रतिभूति विनियामक (सीईएसआर) ने विनियामकों के साथ एजेंसियों के मानक निर्धारित करने के लिए आईओएससीओ पर अंतरराष्ट्रीय मानक निर्धारण और निगरानी निकाय (एसएसएमबी) स्थापित करने का प्रस्ताव किया। यद्यपि एजेंसियों को शामिल किये बिना एसएसएमबी द्वारा इन मानकों के अनुपालन पर निगरानी की जानी थी। यह दृष्टिकोण असल में स्व-विनियमन और सॉवरिन विनियमन के बीच

आधा समाधान का दावा करता है। हाल की घटनाओं से उत्पन्न कई मुद्दों पर काफी हद तक अंतरराष्ट्रीय सर्वसम्मति बन गई लगती है।

4.150 वित्तीय स्थिरता बोर्ड (एफएसबी)[2] ने 26-27 जून, 2009 को अपनी उद्घाटन बैठक आयोजित की और अपने अधिदेश को पूरा करने के लिए आवश्यक आंतरिक संरचना गठित की। इन नई संरचनाओं में अरक्षितताओं का मूल्यांकन, पर्यवेक्षी और विनियामक सहयोग और मानक कार्यान्वयन के लिए एक संचालन समिति और तीन स्थायी समितियां शामिल हैं। एफएसबी ने सीमापारीय संकट प्रबंध कार्यदल और असहयोगी अधिकार क्षेत्रों के लिए विशेष समूह भी गठित किया। इन समूहों ने समकक्षी पुनरीक्षण, अन्य संगठनों और निकाय के अनुभव से सीख लेने, साथ ही प्राथमिकता वाले विषयों और देशों की पहचान करने के लिए कार्यप्रणाली विकसित करने का अपना कार्य आरभ कर दिया है।

4.151 यह महसूस किया गया है कि सीमापारीय बैंकों के परिचालनों से संबद्ध प्रणालीगत जोखिम को अंतरराष्ट्रीय सहयोग के जरिये ही कम किया जा सकता है। इस प्रकार, संकट निवारण के लिए सीमापारीय सहयोग हेतु एफएसएफ सिद्धांतों को लागू करने का कार्य प्रगति पर है। फर्म-विशिष्ट सीमापारीय आकस्मिकता योजना पर चर्चा 2009 में हुई और वर्ष 2010 की पहली छमाही में होना तय है। एफएसबी सीमापारीय संकट निवारण कार्यदल आकस्मिकता आयोजना पर चर्चा में शामिल किये जाने वाले प्रमुख कारकों की सूची तैयार कर रहा है जिसमें फर्मों द्वारा तैयार की जाने वाली 'जोखिम कम करने' की योजनाओं का सांचा शामिल है। जोखिम कम करने की योजनाओं में उन विकल्पों को शामिल किया जायेगा, जिनकी जरूरत फर्म को जोखिम वाली स्थितियों से निकलने और अपने कार्यकलापों को सरकारी हस्तक्षेप के बिना व्यवस्थित क्रम में पुन: चलाने पर विचार करने के लिए होगी।

4.152 आईएमएफ, बीआईएस और एफएसबी संकट की अनुक्रिया के इस पहलू पर संयुक्त रूप से कार्य कर रहे हैं। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना रहा है कि सभी प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण संस्थाएं, बाज़ार और लिखत उचित स्तर के निरीक्षण और विनियमन के अधीन हैं। एफएसबी ने प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं से जुड़ी "असफल होने के लिए बहुत बड़ी" समस्याओं के निवारण के लिए संभावित दृष्टिकोण अक्तूबर 2010 के अंत तक प्रस्तावित करने की कार्य योजना तैयार की है। इसने जी-20 के जून 2010 सम्मेलन में संभावित नीतिगत विकल्पों सहित इस परियोजना पर अंतरिम रिपोर्ट प्रस्तुत की।

4.153 बैंक समाधान ढाँचों के दो बड़े अंतरराष्ट्रीय पहलकार्य भी चालू हैं। पहला, बीसीबीएस का सीमापारीय बैंक समाधान समूह (सीबीआरजी) और दूसरा, राष्ट्रीय बैंक शोधक्षमता व्यवस्थाओं के लिए विधिक, संस्थागत और विनियामक ढाँचे पर आईएमएफ और विश्व बैंक के पहलकार्य हैं। बीसीबीएस की सीबीआरजी ने मार्च 2010 में सीमापारीय बैंक समाधान पर अपनी संस्तुतियां जारी कीं। साथ में आईएमएफ वर्तमान में उन प्रमुख विधिक और नीतिगत मुद्दों की जांच कर रहा है जो सीमापारीय वित्तीय समूहों के दिवालियापन के समय उत्पन्न होते हैं तथा उनको दूर करने में अपनाये जाने वाले दृष्टिकोण, जुलाई 2010 के प्रारंभ में सीमापारीय वित्तीय समूह के दिवालियापन के निर्देशक अंतरराष्ट्रीय ढाँचे के डिजाइन के प्रस्ताव प्रदर्शित करने की योजनाएं हैं।

4.154 पर्यवेक्षक अंतरराष्ट्रीय रूप से सक्रिय बैंकों का पर्यवेक्षी कॉलेजों जैसी संस्थाओं के जरिये निरीक्षण में अधिक गहनता से सहयोग करने के लिए सहमत हो गये हैं। अब तक एफएसबी द्वारा जरूरी कॉलेज व्यवस्थाओं के रूप में अभिज्ञापित 30 से अधिक बड़ी जटिल वित्तीय संस्थाओं के लिए पर्यवेक्षी कॉलेज स्थापित किये जा चुके हैं। मार्च 2010 में कॉलेज के उद्देश्यों, अभिशासन, संप्रेषण और जानकारी आपस में बांटने के संबंध में प्रत्याशाओं को रेखांकित कर गृह और मेजबान, दोनों पर्यवेक्षकों की सहायता के लिए पर्यवेक्षी कॉलेजों में अच्छी पद्धतियों के बारे में परामर्शक दस्तावेज जारी किये। एफएसबी पर्यवेक्षी कॉलेजों के परिचालन के लिए मार्गदर्शन और सुधार के लिए प्रति-खंडीय सिद्धांत विकसित करने की विशेषताओं की समीक्षा कर रहा है।

4.155 इस प्रकार विभिन्न देशों में वित्तीय क्षेत्र में हो रहे सुधार एक बहुत ही बड़े कैन्वास पर किये जा रहे हैं जिसमें न केवल विवेकपूर्ण

[2] जी-20 के नेताओं ने अप्रैल 2009 में लंदन सम्मेलन में वित्तीय स्थिरता को बढ़ावा देने के लिए विस्तारित सदस्यता और व्यापक अधिदेश के साथ एफएसएफ को वित्तीय स्थिरता बोर्ड में रूपांतरित किया।

मानकों, लेखांकन पद्धतियों और पारदर्शक मानदंडों को नया रूप देना शामिल है, बल्कि वर्तमान दर्शन, साथ ही विनियामक और पर्यवेक्षी ढाँचे की मौजूदा संरचना के लिए भी चुनौती है।

यूनानी संकट के प्रति समन्वित अनुक्रिया

4.156 यूनान में हाल में आये वित्तीय दबाव के मद्देनजर यूरो क्षेत्र के भीतर आर्थिक और वित्तीय स्थिरता को बनाये रखने पर ध्यान केंद्रित करते हुए व्यापक सहायता उपायों की घोषणा की गई है। मई 2010 के प्रारंभ से घोषित उपायों में शामिल हैं : कठोर शर्तबंदी पर आधारित यूनान के लिए 110 बिलियन यूरो का संयुक्त यूरो क्षेत्र - आईएमएफ पैकेज, कई सदस्यों देशों द्वारा त्वरित राजकोषीय समेकन; और 500 बिलियन यूरो तक के कुल मूल्य के यूरोपीय स्थिरीकरण कार्यप्रणाली (ईएसएम) और यूरोपीय वित्तीय स्थिरता सुविधा (ईएफएसएफ)। ईएसएम में कठोर शर्तबंदी शामिल है और इसके दो घटक हैं। पहला, यूरोपीय आयोग को ऐसे यूरोपीय संघ के सदस्य देश को 60 बिलियन यूरो तक की आपातकालीन सहायता प्रदान करने की अनुमति प्रदान करता है जो उसके नियंत्रण के बाहर के कारकों के कारण उधार की स्थितियों में अत्यधिक विकृति का सामना कर रहा है। दूसरा, तीन वर्ष की अवधि में 440 बिलियन यूरो तक के अस्थायी विशेष प्रयोजन संस्था (एसपीवी) के जरिये यूरोपीय आयोग की कार्यप्रणाली के पूरक के रूप में सदस्य देशों का स्वैच्छिक अंतर-सरकारी करार है। यूरोपीय संघ ने यह स्पष्ट कर दिया है कि दोनों मामलों में वित्तीय सहायता आईएमएफ के साथ भागीदारी में प्रदान की जायेगी। इन व्यवस्थाओं के अधीन आईमएमएफ ने यह इंगित किया है कि यह देश-दर-देश आधार पर योगदान के लिए तैयार किया जाता है और मोटे तौर पर आईएमएफ के हाल की यूरोपीय व्यवस्थाओं के अनुपात में है।

4.157 ईएसएम की घोषणा के समांतर ईसीबी ने मौद्रिक नीति की संप्रेषण व्यवस्था हेतु कारगर कार्यप्रणाली सुनिश्चित करने की कार्रवाई की। इसमें मौद्रिक नीति की अवस्थिति में संशोधन किये बिना कुछ देशों के सॉवरिन ऋण की निष्फल खरीदों के जरिये यूरो क्षेत्र की ऋण प्रतिभूतियों के कुछ खंडों में दबाव को दूर करने के कार्य शामिल हैं। फेडरल रिज़र्व, ईसीबी, बैंक ऑफ इंग्लैण्ड, बैंक ऑफ कनाडा, स्विस नेशनल बैंक और बैंक ऑफ जापान ने भी द्विपक्षीय डॉलर अदला-बदली ऋण व्यवस्थाएं पुन: सक्रिय करने का निर्णय लिया।

VIII. निष्कर्षात्मक टिप्पणियां

4.158 वित्तीय संकट की गंभीरता ने ऐसी अनुक्रियाओं की अपेक्षा की, जिनमें विभिन्न प्रकार की जमा गारंटियां, ऋण गारंटियां, पूंजी निवेश, आस्ति खरीद और अर्थव्यवस्था को प्रेरित करने के लिए मौद्रिक एवं राजकोषीय उपाय शामिल हैं तथा इनका विश्वभर में अभूतपूर्व स्तर पर समन्वय किया गया। वास्तविक अर्थव्यवस्था से प्रतिसूचना के साथ अधिक पेचीदा और जटिल होते बाज़ारों के बीच अंतर-संबद्धता, जो दूर-व्यापी संकट को फैलाने में समर्थ था के बावजूद, सामयिक और समन्वित अनुक्रियाएं प्रारंभिक नुकसान को समाप्त करने और संकट को आगे फैलने से रोकने में काफी शक्तिशाली थीं। हालांकि, नीति-निर्माताओं ने उपायों को जारी रखने या उचित समय पर प्रोत्साहन वापस लेने, साथ ही वित्तीय प्रणाली की ऐसे ढंग से पुनर्संरचना के कार्य को आगे ले जाने की चुनौती का सामना किया, जो वित्तीय स्थिरता और विकास को संजोए रखता है। वैश्विक संकट ने कई क्षेत्रों में परंपरागत ज्ञान पर पुन: विचार करने का अवसर प्रदान किया है और वित्तीय क्षेत्र के सुधारों, साथ ही पर्यवेक्षण के प्रति भावी दृष्टिकोण, वास्तविक अर्थव्यवस्था की जरूरतों को पूरा करने के लिए वित्तीय क्षेत्र के प्राथमिक उद्देश्य द्वारा निर्देशित हो (चक्रवर्ती, 2009)।

4.159 अधिकांश औद्योगिक देशों के मौद्रिक प्राधिकारी नीतिगत ब्याज दरों को रिकॉर्ड स्तर तक कम करने के लिए बाध्य हो गये। ये उपाय विश्वास के संकट को रोकने में अपर्याप्त सिद्ध हुए। इस प्रकार, केंद्रीय बैंकों ने अपने तुलनपत्रों का उपयोग गैर-परंपरागत तरीकों से कर वित्तीय स्थितियों को और आसान किया। गैर-परंपरागत उपायों ने जहां वित्तीय प्रणाली में स्थिरता लाने में सहायता की, वहीं कई चुनौतियां और जोखिम प्रस्तुत किये। इन चुनौतियों और जोखिमों के न्यूनीकरण के लिए अन्य बातों के साथ-साथ प्राधिकारियों से पारदर्शिता और प्रभावी संप्रेषण की जरूरत होगी। उभरती अर्थव्यवस्थाओं में अत्यधिक कमजोर वित्तपोषण प्रवाहों और विदेशी मुद्राओं में घरेलू उधारों के कारण तुलनपत्र में बेमेल के मद्देनजर बाहरी स्थिरता बनाये रखने की जरूरत के कारण ये कार्य जटिल हैं।

4.160 वर्तमान वित्तीय संकट ने केंद्रीय बैंकों को अंतिम उधारदाता के रूप में कार्य करने के सामर्थ्य की जांच की है। जो प्रमुख मुद्दा उभरकर आया, वह था वित्तीय बाज़ारों में दबावों को कम करने के लिए विभिन्न प्रकार के नीतिगत साधनों की जरूरत। केंद्रीय बैंकों ने जो दूसरी चुनौती

का सामना किया, वह थी - मौद्रिक नीति विन्यास को क्षति पहुंचाये बिना बाज़ार में पर्याप्त चलनिधि उपलब्ध कराने की जरूरत।

4.161 सभी देशों की सरकारों ने वित्तीय प्रणाली को बड़े-स्तर की राजकोषीय सहायता के जरिये वर्तमान संकट के प्रति अनुक्रिया प्रदान की। इन कार्यों ने वित्तीय संस्थाओं के दिवालियापन की समस्या को रोकने और वित्तीय प्रणाली में स्थिरता लाने में काफी सहायता की। वित्तीय संकट के साथ जो अभूतपूर्व स्तर की आर्थिक गिरावट आयी उसने भी ऐसे स्तर के प्रति-चक्रीय राजकोषीय नीति को सक्रिय किया, जो अब तक अगोचर थी। प्रोत्साहन उपायों से विकास पर सकारात्मक प्रभाव होने की उम्मीद है क्योंकि ये उपाय सभी देशों में साथ-साथ शुरू किये गये थे और इसलिए फैलाव को कम कर पाये। इसके अलावा, मौद्रिक नीतियां उदार रही हैं। हालांकि, जहां उनके सही प्रभाव का आकलन करना संभव नहीं है वहीं सभी देशों, विशेषकर उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में, घाटे और ऋण में काफी वृद्धि हुई है। ये देश पहले से ही राजकोषीय दबाव का सामना कर रहे हैं जो निकट भविष्य में जनसंख्या की बढ़ती उम्र से उत्पन्न होगा। संकट के लंबे समय तक चलने पर ऋण हानियां तथा ऋण चूक और बढ़ सकती हैं। यह वित्तीय संस्थाओं के लिए सरकारी सहायता को और आवश्यक बना देगा, जिससे सरकारी घाटा अधिक होगा।

4.162 इस प्रकार उच्च घाटे और ऋण ने राजकोषीय वहनीयता, वित्तीय स्थिरता और अन्य दीर्घकालिक मुद्दों के बारे में चिंताएं बढ़ा दी हैं। अवहनीय राजकोषीय नीति के बारे में चिंता से दीर्घकालिक ब्याज दरें बढ़ सकती हैं और निजी निवेश में कमी आ सकती है, जिससे विकास की सतत बहाली नहीं हो पायेगी। उच्चतर मुद्रास्फीति के कारण उच्च राजकोषीय घाटा और ब्याज दरों के बाज़ार मूल्य को बहियों में दर्ज करने की अपेक्षाएं बैंकों को काफी हानि की ओर प्रवृत्त कर सकती हैं जो वित्तीय स्थिरता के लिए चुनौती है (सुब्बाराव, 2009)। बैंकों के लिए सरकारी सहायता से भी कई दीर्घकालिक चिंताएं पैदा होती हैं। पहली, अल्पकालिक कार्य समायोजन में देरी करते हैं और मध्यावधि में बैंकों के तुलनपत्रों की डिलीवरेजिंग के साथ सकल मांग में तदनुरूप संगति नहीं भी हो सकती है। दूसरी, 'असफल होने के लिए बहुत बड़ी' या अत्यधिक-संबद्ध बैंकों के लिए बचाव पैकेज नैतिक खतरे की समस्याएं पैदा करते हैं। तीसरी, बचाव पैकेज और असफल बैंकों की सरकारी सहायता से बिक्री अनजाने में बड़ी वित्तीय संस्थाएं खड़ी कर सकती हैं, जो प्रणालीगत जोखिम को बढ़ा सकती हैं। चौथी, असमन्वित अनुक्रिया प्रतिस्पर्धा जोखिमों को विकृत कर व्याप्ति और लागत में अंतर के रूप में वैश्विक बैंकों के लिए असमान कार्य-क्षेत्र उत्पन्न कर सकती है (बीआईएस, 2009)।

4.163 इस प्रकार निकट भविष्य में राजकोषीय शोधक्षमता सुनिश्चित करना सर्वोपरि होगा। इसके लिए आवश्यक होगा : (i) बढ़ती आयु से संबद्ध खर्च को नियंत्रित करने के लिए पक्की वचनबद्धता और स्पष्ट रणनीति, (ii) विकास को बढ़ाने के लिए संरचनात्मक सुधार, और (iii) निर्धारित नीतियों और समर्थनकारी संस्थागत व्यवस्थाओं के साथ मध्यकालिक राजकोषीय ढाँचा, जिसमें एक बार आर्थिक स्थितियों में सुधार होने के बाद राजकोषीय सुधार के प्रति वचनबद्धता परिकल्पित हो (आईएमएफ, 2009ए)।

4.164 मौद्रिक, राजकोषीय और वित्तीय सुधार कार्यक्रमों के लिए सुस्पष्ट निकास रणनीतियों का अभाव आवश्यक समष्टि-आर्थिक समायोजनों को सहायता प्रदान करने के बजाय उनको रोकेगा। व्यापक निकास रणनीति का होना महत्त्वपूर्ण है। रणनीति में गैर-परंपरागत उपायों द्वारा विस्थापित वित्तीय बाज़ारों का पुनरुज्जीवन, साथ ही पूर्णत: बाज़ार-आधारित मौद्रिक परिचालनों का पुनरारंभ शामिल होना चाहिए। इससे भी महत्त्वपूर्ण चलनिधि को धीरे-धीरे कम करना और ऋण आसान बनाने के उपयों के लिए योजना बनाना, जिसमें निधिक स्थितियों को कठोर बनाना, परंपरागत बचे-खुचे परिचालन तथा आरक्षित निधि अपेक्षा ढाँचे में समायोजन शामिल है, के होने की जरूरत है। इसके अलावा, केंद्रीय बैंक के काफी विस्तारित तुलनपत्र को आसानी से कम करने में सहायता के लिए साधन तैयार करना सहायक होगा। कुछ मामलों में आवश्यक लिखत प्रदान करने के लिए केंद्रीय बैंक के विधायी ढाँचे में संशोधन करने की जरूरत हो सकती है।

4.165 जैसे-जैसे आर्थिक बहाली का कार्य सतत रूप से प्रगति की ओर अग्रसर होगा, वैसे-वैसे पर्यवेक्षी दृष्टिकोण का पुरभिमुख करने और गत दो वर्षों की घटनाओं की पुनरावृत्ति रोकने में सहायता के लिए विनियामक और विधिक ढाँचे को सुदृढ़ करने की जरूरत की उपेक्षा नहीं की जा सकती। संकट के बाद विभिन्न अयथार्थताओं के स्वरूप को समझने और मूल्यांकन करने का स्वभाविक प्रयास हुआ, जो पहले नहीं किया गया था और इन्हें नीतिगत ढाँचे में शामिल किया गया। पर्यवेक्षक और मानक निर्धारक निकाय उन मानकों को सुदृढ़ करने में

सक्रिय रूप से लगी हुई हैं जो अन्य क्षेत्रों के साथ बैंक की पूंजी, चलनिधि, जोखिम प्रबंध, प्रोत्साहन क्षतिपूर्ति और उपभोक्ता संरक्षण को नियंत्रित करते हैं। पर्यवेक्षण में सुधार का कार्य और विस्तारित समेकित पर्यवेक्षण के जरिये इस पर अधिक समष्टि-विवेकपूर्ण ध्यान देने तथा व्यापक समांतर समीक्षाओं सहित नये पर्यवेक्षी साधन विकसित करना, ऑफ-साईट मात्रात्मक मूल्यांकन, और सूचना का अधिक विस्तृत संग्रहण, भी गति पकड़ रहा है। विनियामक और पर्यवेक्षक काफी कार्य कर सकते हैं लेकिन व्यापक वित्तीय सुधार उचित विधिक ढाँचे की शुरुआत के जरिये सरकार द्वारा कार्रवाई की अपेक्षा करता है।

4.166 गत दो वर्षों के दौरान उद्योगीकृत और उभरते देशों ने एक जैसे समन्वित प्रयास सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वित्तीय कर्ताओं को पर्यवेक्षण की एक छत के नीचे ले आया। रेटिंग एजेंसियों को अपने हित में टकराहट, उनकी रेटिंग प्रक्रिया को बढ़ाने और अनिवार्य पंजीकरण के जरिये पारदर्शिता तथा उनके निरीक्षण को बढ़ाने के कार्य करने के लिए सिद्धांत और नियम अधिनियमित किये गये हैं। बचाव निधियां लाइसेंस और निरीक्षण प्रक्रिया से गुजरेंगे तथा निवेशकों एवं विनियामकों, दोनों के प्रति पारदर्शिता संबंधी अपेक्षाओं को पूरा करना होगा। इसके अलावा, लेखांकन और विवेकपूर्ण ढाँचों में परिवर्तन कर तुलनपत्र से इतर कार्यकलापों को समेकित और अनुशासित किया जायेगा। गुडहार्ट और परसौद (2008) प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण लिखतों की सूची तैयार करने और उनको पंजीकृत करने की अपेक्षा पूरी करने तथा जहां उचित हो, शेयर बाज़ार में लेनेदन और केंद्रीय समाशोधन की सुविधा की अनुशंसा करते हैं।

4.167 वित्तीय लिखतों में नवोन्मेष और सुरक्षा के बीच संतुलन के लिए उत्पाद पंजीकरण के किसी ऐसे रूप की अपेक्षा होती है जो सुरक्षा के स्तर के अनुसार लिखतों तक निवेशकों की पहुंच को सीमित करता हो। प्रतिभूति जारीकर्ताओं को उनके द्वारा बेची गयी प्रतिभूतियों की गुणवत्ता के लिए उत्तरदायी ठहराने की कार्यप्रणाली होनी चाहिए। इसका आशय यह होगा कि जारीकर्ताओं को अपने उत्पादों के लिए जोखिम मूल्यांकन की वर्धित जिम्मेदारी उठानी होगी। चूंकि नीतिनिर्माता प्रतिभूतिकरण के लिए नये ढाँचे के सृजन का कार्य करते हैं, अत: प्रतिभूतिकरण कार्यकलापों पर नये लेखांकन नियमों और नई विनियामक पूंजी व्यवस्था के प्रभावों को ध्यान में रखने की जरूरत है क्योंकि बैंकिंग संस्थाएं नये मानक लागू करती हैं। इस साधन पर अधिक कठोर होने के बजाय समुचित प्रोत्साहन, निरीक्षण और जवाबदेही तय करने पर ध्यान केंद्रित करना महत्त्वपूर्ण है।

4.168 समेकित पर्यवेक्षण को मजबूत करने, वित्तीय स्थिरता के जोखिमों की पहचान करने और निगरानी करने की कार्यप्रणाली (जैसे प्रणालीगत निरीक्षण परिषद) स्थापित करने और ऐसा ढाँचा सृजित करना जो असफल हुए प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण फर्मों को सुरक्षित रूप से कम होने देती हैं, नई प्रणाली के आवश्यक संघटकों में से हैं जो भावी संकटों की संभाव्यता को कम कर देगी तथा उनमें से किसी के होने की गंभीरता को काफी कम कर देगी (बर्नान्के, 2009)।

4.169 यह महत्त्वपूर्ण है कि नीतिनिर्माताओं को ऐसी प्रणाली बनाने के लिए कार्य करना चाहिए जो उनके द्वारा विचार किये गये जोखिम के अधिकतम सहनीय स्तर के अनुरूप सबसे अधिक कार्यक्षम हो। मोटे तौर पर दो प्रकार की नीतिगत अनुक्रियाओं पर चर्चा चल रही है: (i) प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण संस्था की विफलता की संभाव्यता और प्रभाव को कम करना, और (ii) ऐसी विफलता को संभालने के लिए वित्तीय प्रणाली को बेहतर ढंग से समर्थ बनाना (गोपीनाथ, 2009)। प्राधिकारियों का दायित्व सतर्क रहना भी है ताकि क्षितिज का सतत रूप से निरीक्षण करके इस बात की पहचान की जा सके कि समस्या खड़ी हो रही है और समस्या के विघटनकारी होने से पहले ही बचाव का कार्य किया जा सके (थोरात, 2009)।

5 भारत पर संकट का प्रभाव और नीतिगत उपाय: वित्तीय क्षेत्र

5.1 पिछले तीन दशकों के दौरान विश्व अर्थव्यवस्था की गतिविधियों से यह संकेत मिलता है कि वित्तीय विकास और वैश्वीकरण की प्रक्रिया हमेशा से संकट के प्रति अति संवेदनशील रहती है। फिर भी, यह तर्क दिया जाता है कि वित्तीय संकट के पुन: उपस्थित होने पर उसने वित्तीय विकास और वृद्धि के बीच सकारात्मक संबंध को परिवर्तित नहीं किया है (लिप्सकी, 2009)। वर्ष 2008 का वित्तीय संकट, जिसका उद्भव अमेरिका के बंधक-क्षेत्र में हुआ था, सभी देशों में समस्त वित्तीय प्रणाली और वास्तविक अर्थव्यवस्था में पसर गया। अनेक अर्थव्यवस्थाओं में विनिमय दरों में ह्रास हुआ, अस्थिरता बढ़ गयी, इक्विटी कीमतें धराशायी हो गयीं और बाह्य उधारों की लागत बहुत बढ़ गयी। जबकि उन्नत देशों के मामले में बाह्य आघात अधिकतर प्रत्यक्ष माध्यमों से महसूस किये गये, जिसमें बैंकिंग प्रणाली का एक्सपोजर सब-प्राइम बंधक आस्तियों के प्रति हुआ, इसकी छूत विकासशील देशों तक व्यापार, वित्त और पण्य-कीमतों के माध्यम से तथा प्रत्याशाओं में द्रुत परिवर्तन द्वारा पहुँची (सुब्बाराव, 2009)। बढ़ती वित्तीय संबद्धता का परिणाम एक उच्च अंश वाला व्यवसाय-चक्र सह-संचलन और बाह्य आघातों का बृहत्तर धन-संपदा प्रभाव हुआ, जबकि व्यापार संबद्धता ने सभी देशों में मांग-पक्ष और आपूर्ति पक्ष का दूसरे क्षेत्रों पर प्रभाव उत्पन्न किया, जिसके परिणामस्वरूप उत्पादन में अन्योन्याश्रित उतार-चढ़ाव दिखाई पड़ा।

5.2 प्रारंभ में, ऐसा प्रतीत हुआ कि उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ पर्याप्त विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों को संचित रखने, उन्नत नीतिगत ढाँचा और सामान्यत: सुदृढ़ बैंकिंग क्षेत्र तथा कारपोरेट तुलनपत्र की पृष्ठभूमि में वैश्विक वित्तीय संकट द्वारा सृजित झंझावात का सामना करने की बेहतर स्थिति में हैं। तथापि सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स की विफलता और आगामी वैश्विक जोखिम-विमुखता में वृद्धि के बाद उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के इस संकट से निरापद रूप से बच निकलने की आशा धूमिल हो गयी; उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ वैश्विक वित्तीय संकट द्वारा सृजित समष्टिआर्थिक अस्तव्यस्तता से प्रतिकूलत: प्रभावित हुईं। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में अपेक्षाकृत कम उपभोक्ता एवं निवेशक व्यय के कारण उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में माँग में नरमी आई जिसके परिणामस्वरूप पूँजी के बहिर्वाह में तेजी आई (बीआइएस वार्षिक रिपोर्ट, 2008-09)। तथापि, इन सभी अर्थव्यवस्थाओं में उनके वैश्विक एकीकरण की मात्रा के आधार पर इसका प्रभाव भिन्न-भिन्न हुआ।

5.3 संकट के आरंभिक चरण के दौरान भारतीय वित्तीय बाजारों पर इसका प्रभाव बहुत कम रहा; तथापि, मध्य-सितंबर 2008 से इसका प्रभाव भारतीय वित्तीय बाजारों पर बढ़ने लगा। वस्तुत: वित्तीय प्रणाली में बैंकों की प्रधानता थी और तुलनपत्र से बाह्य कार्यकलापों में उनकी नगण्य लिप्तता और उनकी गैर-नकदी प्रतिभूतिकृत आस्तियाँ, जो उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के केंद्र में थीं, भारत को अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों की प्रारंभिक उथल-पुथल से बचाने में समर्थ हुईं। फिर भी, भारत प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका और वैश्विक गतिविधियों ने वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में इसके वित्तीय एवं वास्तविक कार्यकलापों को प्रभावित किया।

5.4 भारत के वित्तीय बाजार - इक्विटी बाजार, मुद्रा बाजार, विदेशी मुद्रा बाजार और ऋण बाजार - सभी पर अनेक दिशाओं से दबाव पड़ने लगा। पहला, देशी वित्तपोषण द्वारा समुद्रपार वित्तपोषण का स्थान लिये जाने से मुद्रा बाजार और ऋण बाजार, दोनों पर दबाव बढ़ा। दूसरा, विदेशी मुद्रा बाजार पर दबाव बढ़ने का कारण बना वैश्विक डिलिवरेजिंग प्रक्रिया के भाग के रूप में पूँजी प्रवाह का विपर्यय और साथ-साथ कारपोरेटों द्वारा स्थानीय रूप से जुटायी गयी निधियों को विदेशी मुद्रा में बदलना, ताकि वे अपनी बाह्य बाध्यताओं को पूरा कर सकें। तीसरा, रिज़र्व बैंक द्वारा रुपये की विनिमय दर में अस्थिरता को नियंत्रित करने के लिए विदेशी मुद्रा बाजार में हस्तक्षेप किये जाने से चलनिधि अधिक महँगी हो गयी। चौथा, भारतीय बैंक और कारपोरेट वैश्विक चलनिधि पर दबाव के परिणामस्वरूप बाह्य स्रोतों से निधियों को जुटा पाने में कठिनाई का अनुभव करते थे और फलत:, कारपोरेटों की ऋण संबंधी जरूरतों ने बैंकों पर दबाव बढ़ा दिया। इसके अलावा, एवजी वित्तपोषण की जोरदार तलाश में कारपोरेटों ने देशी मुद्रा बाजार म्यूचुअल फंडों से अपने निवेश वापस लेना आरंभ कर दिया, जिसके चलते म्यूचुअल फंडों पर शोधन-जन्य दबाव पड़ा और परिणामत:

गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियाँ भी प्रभावित हुईं, जहाँ म्यूचुअल फंडों ने अपनी निधियों का अधिकांश हिस्सा निवेश के रूप में रखा था। अंतत: भारत ने भी वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में बड़ी मात्रा में पूँजी बहिर्वाह, विनिमय दर ह्रास, वणिक माल निर्यात में सुदीर्घ संकुचन और इक्विटी कीमतों में भारी गिरावट दर्ज की। इन सभी कारकों के चलते वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि में तीव्र गिरावट आयी।

5.5 इस पृष्ठभूमि में, अध्याय 5 और अध्याय 6 में भारतीय अर्थव्यवस्था पर वैश्विक वित्तीय संकट के प्रभाव को और प्राधिकारियों द्वारा किए गए नीतिगत उपायों को शामिल किया गया है। यहाँ, अध्याय 5 में, भारत के वित्तीय क्षेत्र पर संकट के प्रभाव का विस्तारपूर्वक विश्लेषण किया गया है। अध्याय 6 में, बचत, निवेश और वृद्धि के संबंध में व्यापार और वित्तीय माध्यम के माध्यम से पड़ने वाले अंतिम प्रभाव की चर्चा की गयी है।

5.6 वित्तीय क्षेत्र पर वित्तीय संकट के प्रभाव की जाँच करने में इस अध्याय में पहले तो खंड I में वर्षों से व्यापार और वित्तीय माध्यम के माध्यम से भारतीय अर्थव्यवस्था के वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ बढ़ते एकीकरण के विश्लेषण द्वारा संदर्भ को निर्दिष्ट किया गया है। विभिन्न वित्तीय बाजारों पर संकट के प्रभाव और इस संबंध में किये गये नीतिगत उपायों को खंड II में चित्रित किया गया है। बैंकिंग क्षेत्र, म्यूचुअल फंडों और गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों पर इसके पड़ने वाले प्रभावों तथा उन प्रभावों का मुकाबला करने के लिए किये गये नीतिगत उपायों की जाँच खंड III में की गयी है। संकट के हल के लिए भारत सरकार और रिज़र्व बैंक द्वारा किए गए उपायों की चर्चा खंड IV में की गयी है। खंड V में निष्कर्ष दिए गए हैं।

I. वैश्विक एकीकरण के माध्यम

5.7 साहित्य में चार ऐसे प्रधान माध्यमों को स्वीकार किया गया है जिनके माध्यम से वैश्विक गतिविधियाँ देशी अर्थव्यवस्था में प्रसरित हो सकती हैं। इनका संबंध विदेश व्यापार, सीमापार वित्तीय प्रवाह, वैश्विक पण्य कीमतों और प्रत्याशाओं/विश्वास से है। हालाँकि भिन्न-भिन्न तरीकों से इन्हें स्पष्ट किया जाता है, फिर भी इनमें कुछ साझा लक्षण होते हैं। पहला, प्रत्येक माध्यम को कुछ प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभावों से सहबद्ध किया जा सकता है, दूसरा, ये सभी माध्यम आपस में अंतर्ग्रथित हो सकते हैं और साथ-साथ काम करते हुए ऐसा प्रभाव उत्पन्न कर सकते हैं, जो प्रत्येक माध्यम के स्वतंत्र रूप से काम करने से होने वाले प्रभाव से भिन्न प्रभाव का सृजन कर सकता है। व्यापार एवं व्यापार-ऋण तथा वाणिज्यिक उधार के बीच की पारस्परिक क्रिया, तथा विदेशी प्रत्यक्ष निवेश एवं निर्यात और आयात के बीच की पारस्परिक क्रिया के कारण व्यापार और वित्त के बीच पारस्परिक क्रिया हो सकती है। तीसरा, व्यापार और वित्तीय माध्यमों का बदलता प्रभाव उनके सूक्ष्म लक्षणों पर निर्भर करेगा (चार्ट V.1)।

5.8 विदेश व्यापार और राष्ट्रों की आर्थिक वृद्धि के बीच संबंध का विश्लेषण साहित्य में विस्तार से किया गया है। बुनियादी रूप से, विदेश व्यापार माध्यम से यह उम्मीद की जाती है कि यह वणिक माल एवं व्यापार-योग्य सेवाओं के निर्यात एवं आयात के माध्यम से काम करेगा। व्यापार सिद्धांत के भीतर अनेक कारण हैं, जो निर्यात-जन्य वृद्धि की परिकल्पना का समर्थन करते हैं (हैविरलसिन, 1990; क्रुगमैन, 1987)। यह उम्मीद की जाती है कि निर्यात, अन्य बातों के साथ-साथ, बढ़ी हुई माँग, बड़े पैमाने की किफायतों, बेहतर प्रौद्योगिकी तथा उत्पादकता, संसाधनों के इष्टतम आबंटन और अनुसंधान एवं विकास के माध्यम से वृद्धि में योगदान करेगा। व्यापार माध्यम का संचरण तीन तरीकों से हो सकता है: आय-जन्य प्रभाव, प्रतिस्पर्धा-जन्य प्रभाव,

चार्ट V.1: देशी अर्थव्यवस्था पर वैश्विक आघातों की प्रमुख संचरण सारणियाँ

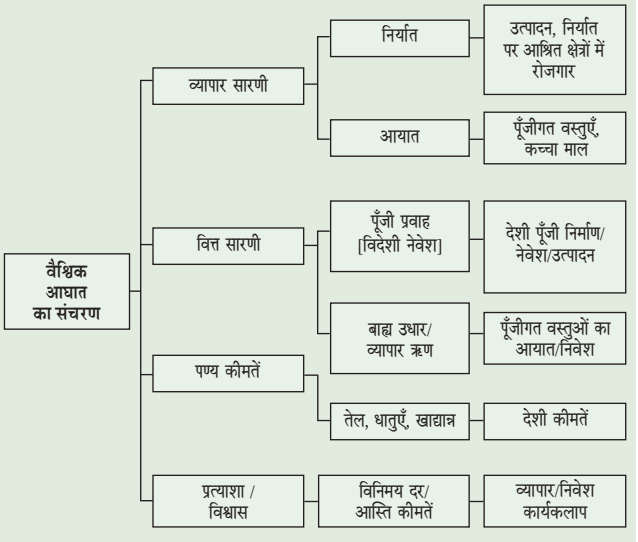

और सस्ता आयात-जन्य प्रभाव (फोर्ब्स, 2001)। अनुभवमूलक साहित्य निर्यात और आर्थिक वृद्धि के बीच कारणात्मक अंतर्संबंध के बारे में मिश्रित परिदृश्य प्रदान करता है। आइशनग्रीन एंड रोसे (1999) तथा ग्लिक एंड रोसे (1998) ने 20 औद्योगिक देशों के अपने अध्ययन में आघातों के अंतरराष्ट्रीय संसर्गज संचरण के लिए समष्टिआर्थिक समानताओं की बनिस्बत् व्यापार-संपर्क का समर्थन प्रबल माध्यम के रूप में किया। अनेक अनुभवमूलक अध्ययन भी यह तर्क देते हैं कि संकटों के प्रसारण में व्यापार महत्त्वपूर्ण नहीं होता है। मैसन (1998) ने व्यापार को स्पिलओवर प्रभाव के रूप में चित्रित किया और यह दर्शाया कि मेक्सिकन संकट या एशियाई संकट के दौरान यह महत्त्वपूर्ण नहीं रहा था। हैरिगन (2000) ने भी व्यापार माध्यम को खारिज किया; एशियाई संकट का अमरीकी उद्योगों पर प्रभाव लघु एवं स्थानीकृत था।

5.9 व्यापार माध्यम के समान ही वित्त और संवृद्धि के बीच संबंध और विकासशील अर्थव्यवस्था के आर्थिक विकास के लिए विदेशी पूँजी के महत्त्व पर वर्षों से विचार-विमर्श किया जाता रहा है। सिद्धांत रूप में, वित्तीय वैश्वीकरण से विकासशील देशों को अपने उत्पादन और उपभोग में अस्थिरता का प्रबंध करने में मदद मिल सकती है (प्रसाद और अन्य, 2003)। वास्तव में, अनेक सिद्धांत यह संकेत करते हैं कि उत्पादन के सापेक्ष उपभोग की अस्थिरता कम होती जायेगी, ज्यों-ज्यों वित्तीय एकीकरण की गति बढ़ेगी; वैश्विक वित्तीय विविधता का सार-तत्व यह है कि कोई देश अपनी कुछ आय-जोखिम को विश्व-बाजार में अंतरित करने में समर्थ हो सकता है। चूँकि अधिकांश विकासशील देश अपने उत्पादन और उपादान निधि संरचना में विशेषज्ञता-प्राप्त होते हैं, अत: वे सैद्धांतिक रूप से विकसित देशों की तुलना में अधिक लाभ अंतरराष्ट्रीय उपभोग जोखिम-बँटाई के माध्यम से प्राप्त कर सकते हैं, अर्थात्, वे वैश्विक उत्पादन में हिस्से के बदले में अपने देशी उत्पादन के एक हिस्से की कारगर बिक्री करके अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं (बॉक्स V.1)।

5.10 वित्तीय खुलेपन का समर्थन करने वाले विश्लेषणात्मक तर्क इन विचारों के इर्द-गिर्द घूमते हैं, यथा, उपभोग-सरलता के लिए अंतरराष्ट्रीय जोखिम-बँटाई के फायदे, देशी निवेश और संवृद्धि पर पूँजी-प्रवाह का सकारात्मक प्रभाव, समष्टिआर्थिक अनुशासन में वृद्धि और देशी वित्तीय प्रणाली की बढ़ी हुई कार्यकुशलता तथा अधिक स्थिरता, जो वित्तीय खुलापन से जुड़ी है (एजेनर, 2001)। हाल के वर्षों में वित्तीय वैश्वीकरण के बारे में फिर से चिंतन आरंभ किया गया है, जो 1990 के दशक के अंतिम वर्षों में आये विभिन्न संकटों और वर्तमान वैश्विक असंतुलन से प्राप्त अनुभवों पर आधारित है। कुछ अर्थशास्त्रियों ने संसर्गज प्रभाव के चलते यह विचार व्यक्त किया है कि बढ़ते पूँजीगत खाता उदारीकरण और निर्बाध पूँजी-प्रवाह ने वैश्विक वित्तीय स्थिरता के मार्ग में बड़ी अड़चन डाली है। (भगवती, 1998; रोड्रिक, 1998; स्टिग्लिट्ज, 2002)। अन्य लोगों का तर्क यह है कि पूँजीगत खाते का बढ़ा हुआ खुलापन उन देशों के लिए अनिवार्य बन गया है, जो अपनी निम्न-आय हैसियत को मध्यम-आय हैसियत की ओर ले जाना चाहते हैं। इस प्रकार, यह व्यापक रूप से स्वीकार किया जाता है कि अंतरराष्ट्रीय पूँजी अंतर्वाह के लाभकर प्रभाव का उपयोग ठोस समष्टिआर्थिक नीतियाँ सुनिश्चित करके और सुदृढ़ संस्थाओं एवं वित्तीय प्रणाली की स्थिरता के लिए युक्तियुक्त विनियामक ढाँचा अपना कर किया जा सकता है।

5.11 वित्तीय वैश्वीकरण के साथ संभाव्य लागत में शामिल हैं पूँजी प्रवाह का भारी मात्रा में संकेंद्रण, पूँजी प्रवाह का त्रुटिपूर्ण आबंटन, जो उनके संवृद्धि प्रभाव को बाधित कर सकता है और देशी विकृतियों को तीव्र कर सकता है, समष्टिआर्थिक स्थिरता में कमी, अल्पावधि पूँजी प्रवाह का प्रचक्रीय स्वरूप और अचानक विपर्यय का जोखिम, आंशिक रूप से अंधानुकरण और संसर्गज प्रभाव के चलते भारी मात्रा में पूँजी प्रवाह की अस्थिरता का होना और विदेशी बैंकों के प्रवेश से जुड़ा जोखिम (दादुश, दासगुप्त और रथ, 2000)। इस प्रकार, व्यापार एकीकरण के विपरीत, जहाँ सभी देशों को मिलने वाले लाभ प्रदर्शनयोग्य होते हैं, वित्तीय एकीकरण के मामले में अर्थव्यवस्था का इसके लिए तैयार रहना और उसकी समुत्थान-शक्ति प्रारंभ में महत्त्वपूर्ण होते हैं, ताकि कोई देश इनका पूरा फायदा उठा सके (कोसे और अन्य, 2006)।

5.12 एक मुद्दा, जो वर्तमान वित्तीय संकट के दौरान महत्त्वपूर्ण बन गया, वह है संचरण के विविध माध्यमों की आपेक्षिक शक्ति, विशेष रूप से पिछले कुछ वर्षों से विश्व बाजारों के साथ भारत के वित्तीय एकीकरण में तीव्र वृद्धि की पृष्ठभूमि में। जबकि संकट का संचरण भारत में व्यापार और वित्त, दोनों माध्यमों से हुआ, प्रभाव की तीव्रता के संदर्भ में वित्तीय माध्यम अधिक महत्त्वपूर्ण बन गया (सुब्बाराव, 2009)। इस प्रकार, वैश्विक आस्ति-कीमतों में उतार-चढ़ाव का प्रभाव

बॉक्स V.1
वित्तीय खुलापन एवं आर्थिक संवृद्धि

परंपरागत विकास-चिंतन का मार्गदर्शन इस धारणा से होता था कि बचत-अंतराल को उन देशों से पूँजी अंतर्वाह के माध्यम से पाटा जा सकता है, जिनके पास अधिक आय और बचत हो, ताकि द्रुत संवृद्धि का लक्ष्य हासिल हो सके। इस आधार-वाक्य के अनुसार, वैश्विक निर्धनता को कम करने और निर्धनतर देशों को अपनी स्थिति सुधारने की रणनीति का निर्माण दो खंडों में किया गया है। पहला, कम विकसित देशों की निधियों को बढ़ाया जा सकता है, जिसके लिए उन्हें उत्पादन के उन उपादानों तक पहुँच प्रदान की जानी होगी, जिनका उनके पास अभाव है - यह उन्हें प्राइवेट विदेशी पूँजी या सरकारी अनुदान दे कर किया जा सकता है। दूसरा, जैसे-जैसे विकसित देश अपने बाजारों को उन विकासशील देशों के उत्पादों के लिए खोलते जाते हैं, जिनके पास प्राकृतिक संसाधन या प्रचुर श्रमिक हों, लेकिन पूँजी कम हो, वैसे-वैसे विकासशील देश अपनी निर्यात-आय बढ़ाने तथा अधिक परिष्कृत उपकरणों का आयात कर सकने की अपनी क्षमता बढ़ाने में समर्थ होते जाते हैं। बचत-अंतराल सिद्धांत का संबंध मानक वृद्धि मॉडल से है (हेरोद-डोमर मॉडल), जिसमें वृद्धि के कतिपय आवश्यक घटकों की पहचान की गयी है, लेकिन इसमें कार्यमूलक संबंध को स्पष्ट नहीं किया गया है, जो इन घटकों के बीच पारस्परिक क्रिया का निर्धारण करता है। इस संवृद्धि सिद्धांत पर आधारित अधिकांश दृष्टिकोणों के अनुसार पूँजी संचय की दर का निर्धारण पूँजी-वृद्धि (पूँजी-श्रम अनुपात) और पूँजी-विस्तारण (प्रति व्यक्ति बचत की राशि, जिसकी आवश्यकता पूँजी-श्रम अनुपात को स्थिर रखने के लिए होती है, क्योंकि आबादी बढ़ती है और मौजूदा पूँजी-स्टॉक में कमी आती है) के बीच के अंतर द्वारा किया जाता है। जिन देशों की संवृद्धि-दर अपेक्षाकृत न्यून होती है, उन्हें प्रोत्साहित किया जाता है कि वे अपनी बचत में वृद्धि करें, ताकि वे पूँजी-विस्तारण की जरूरतों को पूरा कर सकें।

नवशास्त्राय संवृद्धि मॉडल के अनुसार, बचत से पूँजी-संचय का निर्धारण होता है (जैसाकि हेरोद-डोमर मॉडल में है), लेकिन बचत और निवेश का संबंध सदैव आर्थिक संवृद्धि से नहीं होता है (हेरोद-डोमर मॉडल के विपरीत)। बचत (और निवेश) संवृद्धि को तभी प्रेरित करते हैं, जब अर्थव्यवस्था संतुलन की स्थिति में नहीं होती है, लेकिन जब अर्थव्यवस्था संतुलन की स्थिति में होती है, तब वे उसे प्रभावित नहीं करते हैं। दीर्घावधि में संवृद्धि का निर्धारण प्रौद्योगिकी द्वारा होता है, और प्रौद्योगिकी अधिकतर वैरिएबल्स द्वारा बाहर-बाहर निर्धारित होती है। ऐसा समझा जाता है कि उपभोक्ता एक स्थिर उपभोग-पथ को तरजीह देते हैं और आय पर किसी अस्थायी आघात की क्षतिपूर्ति, सामान्य परिस्थितियों में, एक ही दिशा में बचत में परिवर्तन द्वारा की जाती है और इसका उलटा भी सच होता है। यदि जीडीपी वृद्धि में स्थायी रूप से बढ़ोतरी हो, तो व्यक्ति अविलंब उच्चतर उपभोग-पथ का अनुसरण करेंगे और वृद्धि में बढ़ोतरी के कारण बचत में कमी होगी। तुलनात्मक दृष्टि से, यदि किसी आघात का उद्गम बचत-दर में हो, उदाहरण के लिए, यदि अभिरुचि में परिवर्तन के कारण बचत में वृद्धि होती है, तो निवेश और संवृद्धि, दोनों में बढ़ोतरी होगी (जैसाकि हेरोद-डोमर मॉडल में है), कम से कम एक नयी 'स्थिर स्थिति' की ओर संक्रमण में। इस प्रकार, यह मॉडल बचत और वृद्धि के बीच भिन्न-भिन्न संबंधों का पूर्वानुमान करता है, जो आघात के स्वरूप और इस पर निर्भर होता है कि क्या आघात स्थायी या अस्थायी स्वरूप का है। ये पूर्वधारणाएँ बंद अर्थव्यवस्था मॉडल पर आधारित हैं जिसमें यथार्थ राष्ट्रीय बचत हमेशा यथार्थ निवेश के समतुल्य होती है।

मुक्त पूँजी प्रवाह वाली खुली अर्थव्यवस्था मॉडल में - बचत करने वाले अन्य देशों में निवेश कर सकते हैं - देशी बचत और निवेश निर्णयों के बीच कोई सहसंबंध नहीं होना चाहिए। इस पूर्वधारणा के अंतर्गत कि प्रति इकाई उत्पादन में लाभ सभी देशों में समान होते हैं, पूँजी का सीमांतिक उत्पाद उन देशों में उच्चतर होना चाहिए जिनके पास अपेक्षाकृत कम पूँजी स्टॉक हो और उन्हें निवल पूँजी अंतर्वाह प्राप्त करना चाहिए (लुकास, 1990)। तदनुसार, विकसित देशों से विकासशील देशों में प्रेषित अपेक्षाकृत लघु पूँजी प्रवाह - "लुकास पैराडॉक्स" - ने उस बहस को प्रेरित किया जिसमें उन कारकों को स्पष्ट करने की चेष्टा की गयी जो विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में निवेश करने की प्रेरणा को सीमित करते हैं। वर्तमान साहित्य में लुकास पैराडॉक्स की व्याख्या करने के लिए उपादान संचय से सकल उपादान उत्पादकता की ओर जाने पर जोर दिया गया जो समग्र उत्पादकता-वृद्धि का एक भाग है जिसे श्रम या पूँजी पर आरोपित नहीं किया जा सकता है। इसमें यह तर्क भी दिया जाता है कि जिन देशों की उत्पादकता में द्रुत गति से वृद्धि होती है उनकी बचत दर कम होगी क्योंकि इसके एजेंट भावी उपभोग की संभावना का अनुमान लगाते हैं जो बढ़ती उत्पादकता वृद्धि के साथ बढ़ती है। नवशास्त्राय खुली अर्थव्यवस्था मॉडल यह पूर्वानुमान करता है कि राष्ट्रीय बचत में बहिर्जात वृद्धि चालू खाते में सुधार से जुड़ी होगी, लेकन इसका कोई भी प्रभाव देशी निवेश और संवृद्धि पर नहीं होगा। बचत-अंतराल मॉडल के समान ही नवशास्त्राय मॉडल किसी बंद अर्थव्यवस्था के लिए बचत और वृद्धि में सकारात्मक सहसंबंध का पूर्वानुमान करता है।

संदर्भ :

ल्यूकस आर.ई.जूनियर, 1990। "व्हाई डज'न्ट कैपिटल फ्लो प्रॉम रिच टु पुअर कंट्रीज? " 'अमेरिकन इकोनॉमिक रिव्यू', 80(2) : 92-96।

अंकटाड, 2008। "फॉरेन कैपिटल एंड ग्रोथ"। *ट्रेड एंड डेवलपमेंट रिपोर्ट 2008*, युनाइटेड नेशन्स।

देशी आस्ति बाजार पर, और बदले में वास्तविक अर्थव्यवस्था पर कैसे पड़ता है, इस विषय ने हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान काफी महत्त्व अर्जित किया है। जबकि वित्तीय प्रवाह में उतार-चढ़ाव का अर्थव्यवस्था पर प्रभाव ऋण और निवेश की उपलब्धता में परिवर्तन के माध्यम से हो सकता है, इन वित्तीय प्रवाहों ने इसके साथ-साथ ऋण की कीमत और निवेश पर प्रतिलाभ को भी प्रभावित किया।

भारतीय संदर्भ

5.13 भारत में वैश्वीकरण की प्रक्रिया को 1990 और 2000 के दशकों में अनेक महत्त्वपूर्ण गतिविधियों के चलते सुदृढ़ और प्रबलित किया गया। पहला, व्यापार खुलापन (वस्तु और सेवा संबंधी व्यापार) में काफी वृद्धि हुई जिससे व्यापार-जीडीपी अनुपात वर्ष 1999-2000 से दुगुना हो गया। दूसरा, सेवाएँ, जिन्हें अधिकतर व्यापार योग्य नहीं समझा जाता था, सूचना प्रौद्योगिकी में द्रुत नवोन्मेष होने से अपतटीय हो जाने के कारण अधिकाधिक व्यापारयोग्य समझी जाने लगीं और उन्हें सूचना प्रौद्योगिकी समर्थित सेवाएँ और व्यापार प्रक्रिया आउटसोर्सिंग कहा जाने लगा। तीसरा, वैश्विक एकीकरण के व्यापार माध्यम को, अन्य माध्यमों के अलावा, स्थानांतरण माध्यम का भी सहयोग मिला जिसमें ज्ञान आधारित सेवाओं में मानव संसाधन की प्रतिस्पर्धात्मक अधिकता है। भारत के वैश्विक एकीकरण को सुदृढ़ करने में मानव सरणी, जो प्रत्यक्ष रूप से धन-प्रेषण के माध्यम से और अप्रत्यक्ष रूप से वस्तुओं और सेवाओं के व्यापार के माध्यम से परिचालित होती है, का महत्त्व वस्तुओं और सेवाओं के निर्यात और आयात के बीच बढ़ते अंतराल में तथा जीडीपी के प्रतिशत के रूप में चालू खाता प्राप्तियों और भुगतानों में परिलक्षित होता है, जो वर्ष 1990-91 में 2 प्रतिशत था और वर्ष 2008-09 में बढ़कर लगभग 7 प्रतिशत हो गया। चौथा, अर्थव्यवस्था बाह्य पूँजी प्रवाह के प्रति अधिक खुल गयी, क्योंकि सकल पूँजीखाता-जीडीपी अनुपात में इसी अवधि के दौरान तीन गुना से अधिक की बढ़ोतरी दिखाई पड़ी। पाँचवाँ, पूँजीखाते के बढ़ते खुलेपन ने भी देशी बाजारों के विश्व बाजारों के साथ एकीकरण को सुदृढ़ किया जो देशी-ब्याज दरों, इक्विटी और पण्य कीमतों में उनके वैश्विक प्रतिरूपों के साथ सुदृढ़ सहसंबंध में प्रतिबिंबित हुआ; इन गतिविधियों ने वैश्विक आघातों को देशी अर्थव्यवस्था में संचरित करने की प्रत्याशाओं को भी सुकर बनाया। छठा, वस्तु-उत्पादक क्षेत्रों में भी वैश्विक एकीकरण कीमतों के माध्यम से आया, न कि अनिवार्यत: वस्तुओं के वास्तविक व्यापार के माध्यम से, क्योंकि वैश्विक कीमतों में उतार-चढ़ाव का देशी कीमतों पर महत्त्वपूर्ण प्रत्याशा प्रभाव होता है। अंतत:, देशी व्यापार चक्र तथा वैश्विक व्यापार चक्र के साथ-साथ घटित होने का अर्थ यह हुआ कि बाह्य आघातों का देशी अर्थव्यवस्था पर अधिक और त्वरित प्रभाव होता है (सारणी 5.1 और चार्ट V.2)।

सारणी 5.1: भारतीय अर्थव्यवस्था के खुलेपन के संकेतक

(प्रतिशत)

वर्ष	वस्तुओं का निर्यात और आयात/जीडीपी	वस्तुओं और सेवाओं का निर्यात और आयात/ जीडीपी	चालू प्राप्तियाँ और चालू भुगतान/ जीडीपी	सकल पूँजी अंतर्वाह और सकल पूँजी बहिर्वाह/ जीडीपी	चालू प्राप्तियाँ एवं सकल पूँजी अंतर्वाह और चालू भुगतान एवं सकल पूँजी बहिर्वाह/जीडीपी	निवल पूँजी अंतर्वाह/ जीडीपी	जीडीपी (बिलियन अमरीकी डालर)
1	2	3	4	5	6	7	8
1950का दशक	12.5	14.1	15.0	2.3	17.3	0.4	26
1960का दशक	8.8	10.0	10.9	4.6	15.5	1.8	48
1970का दशक	10.0	11.3	12.7	4.2	16.9	0.6	99
1980का दशक	12.7	15.2	17.2	5.4	22.6	1.6	234
1990का दशक	18.8	22.9	26.7	15.1	41.8	2.2	345
2000का दशक	29.3	39.0	45.0	32.7	77.7	3.4	756
1990-91	14.6	17.2	19.4	12.1	31.5	2.2	318
1995-96	21.3	25.5	29.7	12.4	42.1	1.1	356
1996-97	21.4	25.1	29.8	15.5	45.3	3.1	388
1997-98	21.1	25.4	30.0	16.7	46.7	2.4	411
1998-99	19.7	25.5	29.8	14.4	44.2	2.0	416
1999-00	20.6	26.7	31.2	15.7	46.8	2.3	451
2000-01	22.5	29.2	34.4	21.6	56.0	1.9	460
2001-02	21.1	27.6	33.4	16.3	49.7	1.8	478
2002-03	23.3	30.8	36.5	16.1	52.6	2.1	507
2003-04	24.4	31.7	37.6	22.5	60.1	2.8	599
2004-05	29.1	39.3	44.5	24.1	68.6	4.0	701
2005-06	32.4	43.8	49.4	32.6	82.0	3.1	809
2006-07	34.9	47.8	54.2	46.0	100.2	4.9	916
2007-08	36.2	48.4	55.2	64.8	120.0	9.2	1,128
2008-09	40.5	53.7	60.9	51.4	112.3	0.8	1,139

चार्ट V.2: भारतीय अर्थव्यवस्था का बाह्य खुलापन

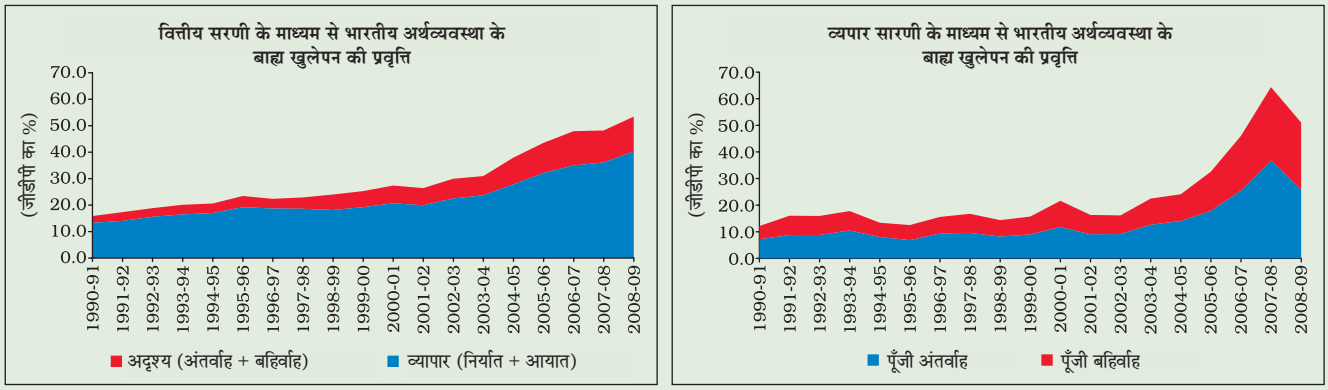

5.14 पूँजीगत खाते के बढ़ते उदारीकरण ने वित्तीय माध्यम को समर्थ बनाया ताकि वह भारतीय अर्थव्यवस्था के विश्व अर्थव्यवस्था के साथ एकीकरण का पोषण करे, जैसाकि जीडीपी में पूँजी प्रवाह के बढ़ते हिस्से से स्पष्ट होता है (चार्ट V.2)। वास्तव में, दुनिया के साथ भारत का वित्तीय एकीकरण भारत के व्यापार वैश्वीकरण के समान ही गहरा रहा है, यदि वह गहनतर नहीं भी रहा हो (सुब्बाराव, 2009) तो भी। वर्तमान वैश्विक मंदी के कारण भारतीय अर्थव्यवस्था की संवृद्धि में गिरावट भी हाल के वर्षों में भारत के विश्व के साथ बढ़ते एकीकरण का प्रमाण है।

5.15 ऐसा प्रतीत होता है कि हाल के वैश्विक संकट के दौरान भारत में सभी चारों माध्यमों ने (व्यापार, वित्तीय, पण्य-कीमतें और प्रत्याशा माध्यम) काम किया और वास्तविक कार्यकलापों पर प्रतिकूल प्रभाव डाला; तथापि, संचरण के विभिन्न माध्यमों की ताकत अलग-अलग थी। चक्रीय समकालिकता की प्रवृत्ति के विश्लेषण से पता चलता है कि हाल की अवधि में संचरण का वित्तीय माध्यम अधिक सुदृढ़ था, जो बढ़ते वित्तीय प्रवाह के माध्यम से भारतीय अर्थव्यवस्था के विश्व अर्थव्यवस्था के साथ एकीकरण को सुदृढ़ किये जाने को प्रतिबिंबित करता है (चार्ट V.3)। व्यापार और वित्तीय माध्यमों के सामर्थ्य का पता लगाने के लिए वेक्टर ऑटो रिग्रेसन मॉडल का अनुमान जीडीपी वृद्धि, कुल निर्यात (वस्तु और सेवाएँ), खाद्यान्नेतर ऋण, निवल पूँजी प्रवाह, माँग मुद्रा दर, और बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज (सेंसेक्स) के मामले में वर्ष 1996 से 2009 तक के लिए किया गया था। चोलेस्की वैरिएंस डिकंपोजिशन बताता है कि जीडीपी में लगभग 50 प्रतिशत तक की घट-बढ़ की जानकारी वित्तीय वैरिएबल्स, यथा, बैंक ऋण, पूँजी अंतर्वाह, माँग दर और सेंसेक्स से मिल सकती है, जबकि वस्तुओं और सेवाओं के निर्यात से लगभग 9 प्रतिशत घट-बढ़ की जानकारी मिलती है। इसका अर्थ यह है कि वित्तीय माध्यमों ने हाल की अवधि में भारतीय अर्थव्यवस्था में वैश्विक गतिविधियों के प्रभाव का संचरण करने में अधिक सशक्त भूमिका ग्रहण कर ली है।

5.16 संचरण के विभिन्न माध्यमों के तुलनात्मक सामर्थ्य के संबंध में अनेक मंचों पर विशेष प्रकाश डाला गया है जिनके माध्यम से संकट का प्रसरण भारत पर हुआ। यह महसूस किया गया कि बढ़ते वैश्वीकरण के चलते हाल की अवधि में वित्तीय माध्यम अधिक मुखर

चार्ट V.3: निर्यात, बैंक ऋण और पूँजी प्रवाह के साथ जीडीपी की चक्रीय समकालिकता
(सहसंबंध गुणांक)

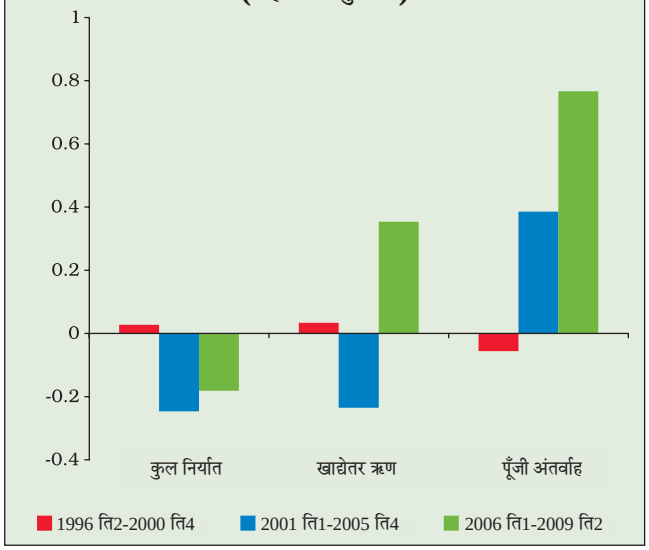

हुआ है। विश्व अर्थव्यवस्था के साथ भारतीय अर्थव्यवस्था के एकीकरण के मामले में व्यापार में वृद्धि और पूँजीगत खाते के उदारीकरण ने सर्वप्रमुख भूमिका निभाई तथा इन्होंने भारत को वैश्विक आघातों के प्रति असुरक्षित भी बनाया। अनुभव से भी यह बात सिद्ध हो चुकी है कि वित्तीय माध्यमों ने हाल में भारतीय अर्थव्यवस्था पर वैश्विक गतिविधियों के प्रभाव का संचरण करने में सशक्त भूमिका ग्रहण कर ली है। अगले खंड में भारत के वित्तीय बाजारों में वर्तमान वैश्विक संकट के संचरण का परीक्षण किया गया है।

II. वित्तीय बाजारों पर वैश्विक संकट का प्रभाव

5.17 भारत के वित्तीय बाजार - इक्विटी बाजार, मुद्रा बाजार, विदेशी मुद्रा बाजार और ऋण बाजार - ने वैश्विक वित्तीय संकट के अप्रत्यक्ष प्रभाव का अनुभव किया। इक्विटी बाजार और विदेशी मुद्रा बाजार पर दबाव पड़ने का कारण था वैश्विक डिलिवरेजिंग प्रक्रिया के अंग के रूप में पूँजी प्रवाह का विपर्यय होना। पूँजी प्रवाह के विपर्यय और निधियों के बाह्य स्रोतों के सूख जाने से कारपोरेट जगत देशी बैंक ऋण की ओर मुड़ गया। समुद्रपार वित्तपोषण के स्थान पर देशी वित्तपोषण की ओर मुड़ने से मुद्रा बाजार और ऋण बाजार - दोनों पर दबाव बढ़ गया। वैश्विक चलनिधि के आरोह-अवरोह ने वित्तीय बाजारों में अस्थिरता को बढ़ावा दिया, और अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों में इसके प्रभाव को न फैलने देने के लिए वित्तीय बाजारों में व्यवस्था बहाल करना महत्त्वपूर्ण हो गया (चक्रवर्ती, 2009)। संकट के प्रत्युत्तर में रिज़र्व बैंक और सरकार ने द्रुत गति से कदम उठाए और विभिन्न बाजार खंडों को स्थिर रखने के उद्देश्य से परंपरागत और गैर-परंपरागत, दोनों प्रकार के उपायों का सहारा लिया। मोटे तौर पर, इन उपायों में शामिल थे चलनिधि समायोजन सुविधा, ब्याज दरों में कमी करना, बैंकिंग प्रणाली में बड़ी मात्रा में विदेशी मुद्रा और देशी चलनिधि की उपलब्धता बहाल करना, बैंकेतर वित्तीय संस्थाओं को बैंकिंग प्रणाली के माध्यम से उधार देना, एनआरआइ जमाराशियों पर ब्याज दर की उच्चतम सीमा को बढ़ाकर विदेशी पूँजी अंतर्वाह को प्रोत्साहित करना, और बाह्य वाणिज्यिक उधार से संबंधित मानदंडों को आसान बनाना। इस खंड में भारत में विभिन्न बाजार खंडों पर संकट के प्रभाव और नुकसान को रोकने तथा सामान्य स्थिति बहाल करने के लिए किए गए नीतिगत उपायों का विश्लेषण किया गया है।

विदेशी मुद्रा बाजार

5.18 1990 के दशक के पूर्व, भारतीय विदेशी मुद्रा बाजार अत्यधिक नियंत्रित होता था, जिसमें लेनदेनों, प्रतिभागियों और लिखतों के प्रयोग पर प्रतिबंध लगाये जाते थे। 1990 के दशक का प्रारंभिक अवधि में अनेक विनियामक और संस्थागत सुधार किए गये जिसके परिणामस्वरूप रुपया विनिमय बाजार का काफी विकास हुआ, जैसाकि आजकल देखा जा रहा है। बाजार प्रतिभागी परिष्कृत हो चुके हैं और उन्होंने विविध प्रकार के लिखतों के प्रयोग में तथा जोखिमों का प्रबंध करने में विशेषज्ञता हासिल कर ली है। आजकल भारत में विदेशी मुद्रा बाजार अनेक प्रकार के डेरिवेटिव लिखतों से सज्जित हैं। इन डेरिवेटिव लिखतों की शुरुआत सावधानीपूर्वक, सुधार प्रक्रिया के अंग के रूप में, चरणबद्ध ढंग से उत्पाद विविधता और इससे भी महत्त्वपूर्ण जोखिम प्रबंधन के साधन के रूप में (दोनों रूप में) की गयी है। इसके परिणामस्वरूप, भारतीय विदेशी मुद्रा बाजार में व्यापार का परिमाण पिछले कुछ वर्षों से बहुत बढ़ा है। दैनिक औसत पण्यावर्त वर्ष 1997-98 से 2007-08 तक की 10 वर्षीय अवधि में लगभग 10 गुणा बढ़ गया है, जो पहले 5 बिलियन अमरीकी डालर का था और अब 48 बिलियन अमरीकी डालर का हो गया है। व्यापार परिमाण में तेजी वर्ष 2003-04 और उसके बाद आने लगी, जब पूँजी अंतर्वाह में बहुत बड़ा उछाल देखने में आया। इन प्रवृत्तियों को प्रतिबिंबित करते हुए, वैश्विक विदेशी मुद्रा बाजार पण्यावर्त में भारत का हिस्सा तिगुना हो गया, जो अप्रैल 2004 में 0.3 प्रतिशत था और अप्रैल 2007 में बढ़ कर 0.9 प्रतिशत हो गया।

5.19 बढ़ते वैश्विक एकीकरण के साथ विदेशी मुद्रा बाजार की कार्यकुशलता में सुधार हुआ है, जो न्यून बिड-आस्क स्प्रेड से स्पष्ट है। यह पाया गया कि स्प्रेड लगभग एकसमान और बहुत न्यून है। भारत में, सामान्य हाजिर बाजार भाव में स्प्रेड 0.25 पैसा से 1 पैसा तक होता है, जबकि स्वैप भाव 1 से 2 पैसे स्प्रेड पर उपलब्ध होते हैं। इस प्रकार, विदेशी मुद्रा बाजार 1990 के दशक के पूर्व के अत्यधिक नियंत्रित बाजार की तुलना में वर्षों से सुदृढ़, अर्थसुलभ और कार्यकुशल बाजार के रूप में विकसित हुआ है।

5.20 हाल के वर्षों में, भारत में बाह्य क्षेत्र की गतिविधियों में सुदृढ़ पूँजी प्रवाह की प्रमुखता रही है जिसने वर्ष 2007-08 तक भारतीय रुपये की विनिमय दर बढ़ाने में सर्वप्रमुख भूमिका निभाई। भारतीय दृष्टिकोण में लोच के साथ विनिमय दरों की सतर्क निगरानी एवं प्रबंधन प्रमुख रहे हैं जिसमें कोई नियत लक्ष्य या पूर्व-घोषित लक्ष्य या पट्टी नहीं रही है और इसके साथ ही कालक्रम में व्यवस्थित ढंग से विनिमय दर को निर्धारित करने के लिए अंतर्निहित माँग एवं आपूर्ति की स्थितियों को स्वीकृत करते हुए आवश्यकतानुसार हस्तक्षेप भी किया जाता रहा है। इस प्रमुख उद्देश्य के अधीन रहते हुए, हमारी विनिमय दर नीति में अत्यधिक अस्थिरता को कम करने, सटोरिया कार्यकलाप को रोकने, आरक्षित निधियों के पर्याप्त स्तर को बनाये रखने और एक सुव्यवस्थित विदेशी मुद्रा बाजार को विकसित करने की आवश्यकता का ध्यान रखा जाता रहा है। इस दृष्टिकोण ने बाजार को व्यवस्थित बनाये रखने में भलीभाँति काम किया है।

5.21 मध्य सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स की विफलता के बाद बाह्य वातावरण में अचानक परिवर्तन हुआ। वैश्विक वित्तीय संकट और डिलिवरेजिंग के कारण पूँजी प्रवाह में विपर्यय और/या नियमन हुआ, विशेष रूप से विदेशी संस्थागत निवेशक प्रवाह, ईसीबी और व्यापार ऋण में (गोपीनाथ, 2009)। विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा इक्विटी बाजार से भारी मात्रा में निधियों का आहरण किये जाने, के परिणामस्वरूप सितंबर-अक्तूबर 2008 में भारी मात्रा में पूँजी का बहिर्वाह हुआ और फलतः भारत सहित पूरी दुनिया में विदेशी मुद्रा बाजार सहवर्ती दबाव में आया (चार्ट V.4)। इसके चलते ऋण अधिसंकुचन और वैश्विक डिलिवरेजिंग को प्रतिबिंबित करने में मदद मिली।

5.22 वैश्विक वित्तीय संकट का घरेलू विदेशी मुद्रा बाजार पर क्रमिक प्रभाव निवल पूँजी प्रवाह के घटते स्तर और निर्यात संकुचन से पैदा हुए डालर चलनिधि आघातों के माध्यम से महसूस किया गया। इन कारकों के प्रभाव के परिणामस्वरूप अक्तूबर 2008 से विदेशी मुद्रा बाजार में महत्त्वपूर्ण गिरावट देखने को मिली। यह गिरावट विदेशी मुद्रा बाजार के व्यापारिक और अंतर-बैंक खंडों में प्रसरित हुई। विदेशी मुद्रा बाजार पर आया दबाव कुल पण्यावर्त में हाजिर बाजार के घटते हिस्से में भी देखा गया (सारणी 5.2)। इसके साथ-साथ, कुल पण्यावर्त में वायदा और स्वैप बाजारों का हिस्सा बढ़ा, जिसने संभवतः विदेशी

चार्ट V.4 : विनिमय दर की प्रवृत्ति (यूएसडी-आइएनआर)

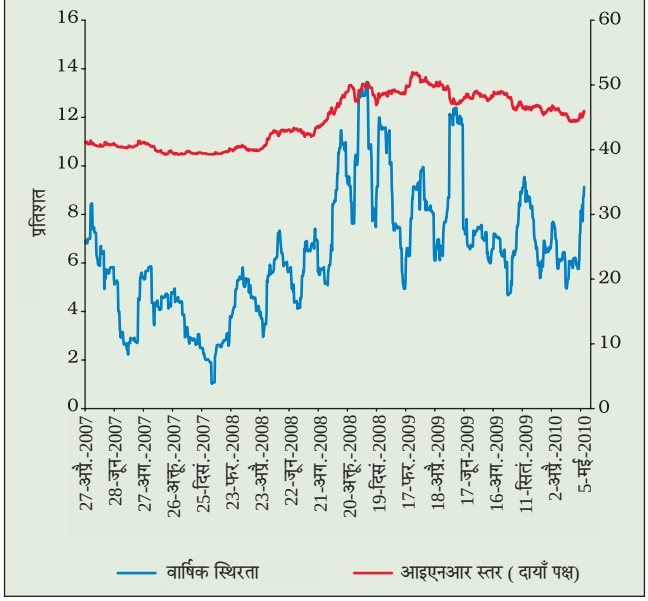

मुद्रा बाजार में अंतर्निहित एक्सपोज़र की हेजिंग की प्रवृत्ति को प्रतिबिंबित किया। इसका कारण अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में प्रचलित उच्च अस्थिरता और अनिश्चितता को माना जा सकता है।

5.23 लेहमैन के दिवालिया होने के बाद रुपये में तीव्र गति से अवमूल्यन हुआ जब 27 अक्तूबर 2008 को एक डालर का मूल्य 50 रुपये के स्तर तक पहुँच गया। रिज़र्व बैंक ने अक्तूबर 2008 में अपना हस्तक्षेप बढ़ाया। वर्ष की दूसरी छमाही में कच्चे तेल के मूल्य में पर्याप्त कमी आने और स्फीतिकारक दबाव कम होने के बावजूद निर्यात में कमी और वैश्विक डिलिवरेजिंग प्रक्रिया के कारण निरंतर पूँजी बहिर्वाह और अमरीकी डालर के अन्य प्रमुख मुद्राओं की तुलना में निरंतर मजबूत होते रहने से रुपये पर अधोगामी प्रभाव पड़ता रहा। हाजिर विनिमय दरों का व्यापक क्षेत्र पर प्रभाव पड़ने से इस अवधि के दौरान विनिमय दरों में अस्थिरता बढ़ी (सारणी 5.3)। तथापि, अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में कुछ स्थिरता आने और भारतीय अर्थव्यवस्था के वृद्धि संबंधी कार्यनिष्पादन में अपेक्षाकृत बेहतरी आने से विदेशी निवेश प्रवाहों में वर्ष 2009-10 के प्रारंभ से वृद्धि शुरूहुई, खास कर एफआइआइ निवेशों में। जबकि वर्ष 2008-09 के दौरान रुपये का 21.5 प्रतिशत अवमूल्यन हुआ, वर्ष 2009-10 में रुपये का लगभग 13 प्रतिशत अधिमूल्यन हुआ। चालू वर्ष के दौरान 11

सारणी 5.2: विदेशी मुद्रा बाजार में लेनदेन

अवधि	विदेशी मुद्रा बाजार में औसत दैनिक पण्यावर्त (बिलियन अमरीकी डालर)	कुल पण्यावर्त में हाजिर बाजार का औसत दैनिक हिस्सा (प्रतिशत)	कुल पण्यावर्त में वायदा एवं स्वैप बाजार का औसत दैनिक हिस्सा (प्रतिशत)	आरबीआई का निवल विदेशी मुद्रा विक्रय (-)/ क्रय(+) (मिलियन अमरीकी डालर)	औसत विनिमय दर में उतार-चढ़ाव (रु. प्रति अमरीकी डालर) मूल्यह्रास (-)/ मूल्यवृद्धि(+)	औसत विनिमय दर (रु. प्रति अमरीकी डालर) सीमा (न्यून-उच्च)	औसत 3-माह वायदा प्रीमिया (प्रतिशत)
1	2	3	4	5	6	7	8
2000-05	7.7	47	53	20,848@	-6.9	5.7	3.3
2005-06	17.5	51	49	8,143	1.5	3.0	1.6
2006-07	25.8	52	48	26,824	2.2	3.8	2.14
2007-08	47.9	50	50	78,203	12.5	3.9	2.16
2008-09	47.6	45	55	-34,922	-12.4	-12.2	3.47
2009-10	40.7	50	40		-3.2	5.6	2.91
अप्रैल-08	52.9	49	51	4,325	0.8	0.6	2.68
मई-08	45.3	48	52	148	-5.0	2.6	2.45
जून-08	51.1	46	54	5,229	-1.6	0.7	3.69
जुला-08	50.6	47	53	-6,320	0.0	1.4	6.04
अग-08	54.2	46	54	1,210	-0.2	2.2	4.71
सितं-08	62.5	46	54	-3,784	-5.8	2.7	2.35
अक्तू-08	51.0	46	54	-18,666	-6.4	3.2	1.13
नवं-08	42.3	43	57	-3,101	-0.7	3.3	4.20
दिसं-08	46.4	40	60	-318	0.8	3.5	4.59
जन-09	37.0	44	56	-29	-0.4	0.8	3.10
फर-09	33.8	44	56	230	-0.9	2.1	2.68
मार्च-09	43.1	42	58	3,388	-3.8	1.9	3.99
अप्रै-09	36.4	42	58	-2,487	2.3	1.0	3.34
मई-09	46.5	42	58	-1,437	3.2	2.7	3.42
जून-09	43.1	48	52	1,044	1.6	2.1	3.29
जुला-09	39.8	48	52	-55	-1.5	1.6	2.57
अग-09	37.1	50	50	181	0.3	1.4	2.80
सितं-09	37.9	53	47	80	-0.2	1.1	2.66
अक्तू-09	40.0	53	47	75	3.7	2.0	2.93
नवं-09	37.8	54	46	-36	0.3	1.1	2.46
दिसं-09	37.4	51	49		-0.1	0.6	2.51
जन-10	43.5	54	46		1.5	1.3	2.93
फर-10	45.8	53	47		-0.8	0.8	2.78
मार्च-10	43.4	51	49		1.8	1.1	3.28
अप्रै-10	48.4	53	47		2.2	0.4	3.43

@: आँकड़े वर्ष 2004-05 से संबंधित हैं।

जून 2010 तक रुपये में अमरीकी डालर की तुलना में अंत-मार्च 2010 में 3.6 प्रतिशत अवमूल्यन हुआ। हालाँकि विदेशी मुद्रा पण्यावर्त में वर्ष 2009-10 के दौरान कुछ सुधार हुआ है, फिर भी यह संकट-पूर्व की स्थिति तक ऊपर नहीं उठा है।

सारणी 5.3: भारतीय रुपये में उतार-चढ़ाव

	अमरीकी डालर					यूरो				
	औसत	उच्च	न्यून	घट-बढ़#(%)	अस्थिरता*(%)	औसत	उच्च	न्यून	घट-बढ़(%)	अस्थिरता*(%)
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
2007:ति2	41.23	40.46	43.15	6.65	0.50	55.60	54.34	57.78	6.34	0.49
2007:ति3	40.53	39.71	41.58	4.18	0.39	55.70	54.95	56.27	2.40	0.39
2007:ति4	39.46	39.26	39.84	1.48	0.26	57.21	55.51	59.19	6.63	0.54
2008:ति1	39.82	39.27	40.77	3.82	0.32	59.73	57.27	64.48	12.59	0.73
2008:ति2	41.66	39.89	43.16	8.20	0.44	65.06	62.24	68.09	9.39	0.71
2008:ति3	43.78	41.90	46.94	12.03	0.67	65.87	62.80	68.87	9.66	0.96
2008:ति4	48.76	46.91	50.53	7.72	1.07	64.30	60.57	69.15	14.16	1.34
2009:ति1	49.77	48.37	52.09	7.69	0.64	65.00	62.11	69.20	11.40	0.95
2009:ति2	48.79	46.84	50.54	7.90	0.73	66.35	64.46	68.51	6.29	0.83
2009:ति3	48.42	47.55	49.42	3.93	0.48	69.23	67.29	71.02	5.54	0.39
2009-10:ति4	46.64	45.90	47.87	4.29	0.50	69.20	66.76	70.03	4.90	0.41
2009-10:ति1	45.93	44.94	46.81	4.16	0.39	63.63	60.48	66.82	10.47	0.50

*: अधिकतम घट-बढ़ की गणना माह के दौरान विनिमय दर के न्यूनतम और उच्चतम स्तर के बीच प्रतिशत परिवर्तन के रूप में की गयी।
#: अस्थिरता की गणना में रुपया-डालर विनिमय दर परिवर्तन के मानक विचलन को लिया गया है।

5.24 विनिमय दर में अस्थिरता, जिसका मापन उच्च और न्यून दर के बीच के अंतर के रूप में किया गया, जुलाई 2008 से अधिक बनी रही, लेकिन वर्ष 2009-10 के प्रारंभ से इसमें थोड़ी कमी आयी। इसके अलावा रुपया-अमरीकी डालर प्रतिलाभ की अस्थिरता, जिसका अनुमान गार्च (1,1) प्रोसेस[1] द्वारा लगाया गया था, भारतीय बाजार में दो भिन्न-भिन्न चरणों में विदेशी मुद्रा की अस्थिरता को इंगित करती है। प्रथम चरण में (अगस्त 2007 से सितंबर 2008 तक) अस्थिरता कम थी, जबकि सितंबर 2008 से दिसंबर 2008 तक अधिक अस्थिरता देखी गयी (चार्ट V.5)।

5.25 विदेशी मुद्रा बाजार में व्यवस्था बनाये रखने की दृष्टि से रिज़र्व बैंक ने मध्य सितंबर 2008 में घोषणा की कि यह एजेंट बैंकों के माध्यम से विदेशी मुद्रा (अमरीकी डालर) की बिक्री जारी रखेगा ताकि घरेलू विदेशी मुद्रा बाजार में आपूर्ति बढ़ायी जा सके अथवा किसी प्रकार के माँग-पूर्ति अंतराल को पाटने के लिए यह सीधे हस्तक्षेप करेगा। रिज़र्व बैंक के हस्तक्षेप के बावजूद अक्तूबर 2008 में रुपये का अवमूल्यन हुआ (चार्ट V.6)।

5.26 विदेशी मुद्रा चलनिधि की सहज स्थिति बनाने के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा अनेक उपाय किये गये। 7 नवंबर 2008 से भारतीय बैंकों

चार्ट V.5 : भारत के विदेशी मुद्रा बाजार में अस्थिरता और दर

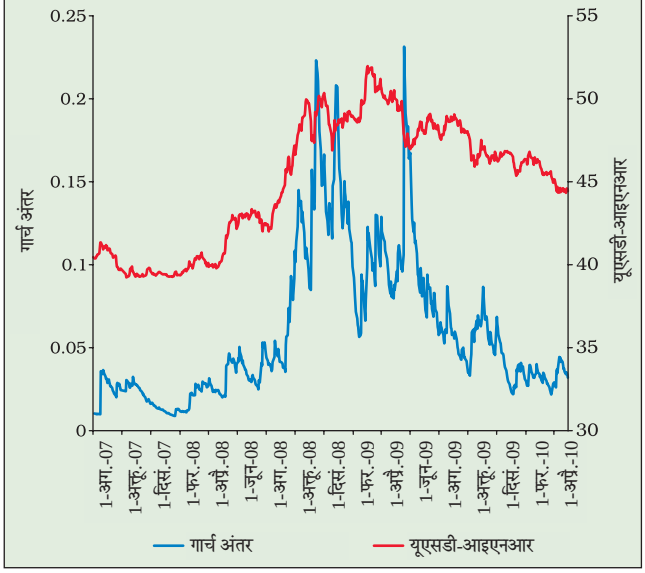

चार्ट V.6 : भारतीय रुपये में उतार-चढ़ाव

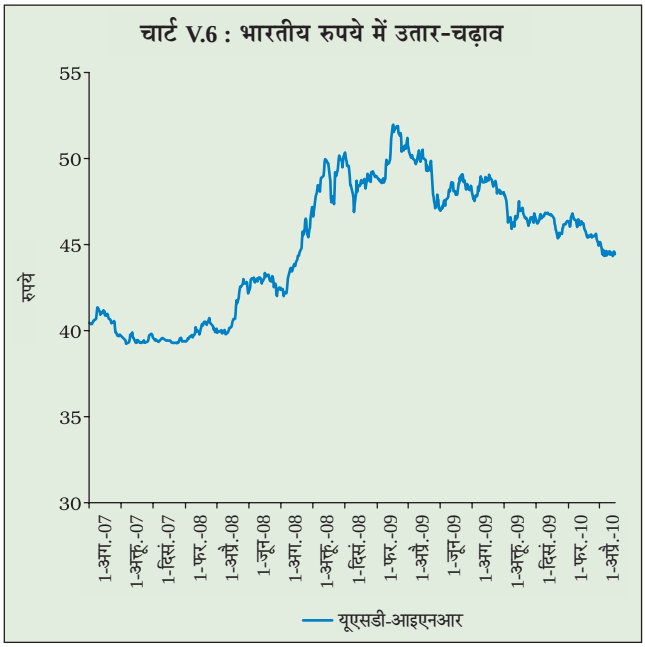

के लिए एक रुपया-डालर स्वैप सुविधा आरंभ की गयी, ताकि भारतीय बैंकों को अपनी अल्पावधि विदेशी निधीयन जरूरतों का प्रबंधन करने में आसानी हो। स्वैप्स का निधीयन करने के लिए बैंकों को अनुमति दी गयी कि वे चलनिधि समायोजन सुविधा के अंतर्गत तदनुकूल अवधि के लिए प्रचलित रिपो दर पर उधार ले सकते हैं। विदेशी मुद्रा स्वैप सुविधा, जो मूलत: 30 जून 2009 तक उपलब्ध थी, 31 मार्च 2010 तक बढ़ा दी गयी; तथापि, इसे अक्तूबर 2009 में बंद कर दिया गया। रिज़र्व बैंक ने विशेष बाजार परिचालनों को, जिसे सरकारी क्षेत्र की तेल विपणन कंपनियों की विदेशी मुद्रा संबंधी जरूरतों को पूरा करने के लिए जून 2008 में शुरू किया गया था, उस समय मुद्रा बाजारों ओर विदेशी मुद्रा बाजारों में प्रचलित असाधारण स्थिति को ध्यान में रखते हुए जारी रखा; ये परिचालन अधिकतर (रुपया) चलनिधि से असंबद्ध थे। अंत में, विदेशी मुद्रा चलनिधि की स्थिति को सहज बनाने के उपायों में वे उपाय भी शामिल थे, जिनका लक्ष्य था पूँजी अंतर्वाह को प्रोत्साहित करना, यथा, अनिवासी भारतीयों द्वारा विदेशी मुद्रा जमाराशियों पर ब्याज दर की अधिकतम सीमा का उर्ध्वमुखी समायोजन, कारपोरेटों के लिए ईसीबी प्रणाली में काफी छूट प्रदान करना, और गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों और आवास वित्त कंपनियों को विदेशी उधार लेने की अनुमति प्रदान करना (बॉक्स V.2)।

[1] गार्च (1,1) मॉडल का चयन मितव्ययिता के गुण पर और अधिकांश अन्य मॉडलों की तुलना में इसके बेहतर ढंग से कार्य करने की क्षमता पर आधारित है (ह्वाइट, 2000; हैंसन, 201) । डम्मी वैरिएबल्स के ब्यौरे और डम्मी वैरिएबल्स के विनिर्देश अनुबंध में सूचित किये गये हैं । डम्मी वैरिएबल्स का गुणांक, जिसे गार्च अस्थिरता समीकरण में प्रतीयमान भंग का सत्यापन करने के लिए आरंभ किया गया था, धनात्मक और 1 प्रतिशत स्तर पर स्थैतिक रूप से महत्वपूर्ण पाया गया, जो इस प्रकार के भंग की वैधता की पुष्टि करता है ।

बॉक्स V.2
विदेशी मुद्रा चलनिधि बढ़ाने के लिए नीतिगत उपाय

- एफसीएनआर (बी) और एनआर(ई)आरए जमाराशियों में से प्रत्येक पर ब्याज दर की अधिकतम सीमा 16 सितंबर 2008 से 175 आधार अंक बढ़ायी गयी, जिससे भारतीय बैंकों को उच्चतर विदेशी मुद्रा संसाधन जुटाने में अधिक सुविधा हुई।
- बाह्य वाणिज्यिक उधारों पर प्रतिबंधों में, विविध शर्तों को शिथिल करते हुए, ढील दी गयी, यथा, (i) तीन से पाँच वर्षों की औसत परिपक्वता अवधि और 5 वर्ष से अधिक परिपक्वता अवधि वाले ईसीबी के लिए समग्र लागत सीमा क्रमश:लिबॉर के ऊपर 300 आधार अंक और लिबॉर के ऊपर 500 आधार अंक तक बढ़ा दी गयी; बाद में अनुमोदन माध्यम के अंतर्गत समग्र लागत सीमा की अपेक्षा को दिसंबर 2009 तक के लिए समाप्त कर दिया गया; (ii) स्वचालित माध्यम के अंतर्गत अनुमेय अंतिम उपयोग के लिए रुपया/विदेशी मुद्रा व्यय हेतु प्रत्येक वित्तीय वर्ष में प्रति उधारकर्ता 500 मिलियन अमरीकी डालर तक ईसीबी की अनुमति देना; (iii) ईसीबी का उपभोग करने के लिए मूलभूत सुविधा क्षेत्र की परिभाषा को विस्तारित कर उसमें खनन, खोज और रिफाइनरी क्षेत्र को शामिल किया गया; (iv) दूर संचार कंपनियों द्वारा 3 जी स्पेक्ट्रम के लिए लाइसेंस/परमिट प्राप्त करने हेतु भुगतान को ईसीबी के प्रयोजनार्थ पात्र अंतिम उपयोग के रूप में वर्गीकृत किया गया; (v) इंफ्रास्ट्रक्चर क्षेत्र में रुपया पूँजीगत व्यय के लिए 100 मिलियन अमरीकी डालर से अधिक के ईसीबी हेतु 7 वर्षों की न्यूनतम औसत परिपक्वता अवधि की अपेक्षा के समाप्त करना; (vi) उधारकर्ताओं को अनुमति देना कि वे अपनी ईसीबी की प्राप्त राशि को अपतटीय रखें या इसे समुद्रपार शाखाओं/विदेश में भारतीय बैंकों के अनुषंगियों के पास रखें या इन निधियों को भारत में एडी-वर्ग I बैंकों में उनके रुपया खाते में जमा करने के लिए भेज दें, जब तक उनका अनुमेय अंतिम उपयोग के लिए उपभोग नहीं किया जाता; (vii) उन एनबीएफसी को, जो केवल इंफ्रास्ट्रक्चर क्षेत्र के वित्तपोषण में संलग्न हों, बहुपक्षीय/ क्षेत्रीय वित्तीय संस्थाओं तथा सरकार के स्वामित्व वाली विकास वित्त संस्थाओं से अनुमोदन माध्यम के अंतर्गत ईसीबी का उपभोग करने की अनुमति देना, ताकि वे मूलभूत सुविधा क्षेत्र में उधारकर्ताओं को आगे उधार दे सकें, बशर्ते कि कुछ शर्तों का अनुपालन किया जाये; और राष्ट्रीय आवास बैंक में पंजीकृत आवास वित्त कंपनियों को आरबीआई के अनुमोदन के अधीन तथा एनएचबी द्वारा निर्धारित विनियमों का अनुपालन करने पर ईसीबी तक पहुँच बनाने में समर्थ बनाना।
- अल्पावधि व्यापार ऋण तक पहुँच को सुकर बनाने के लिए समग्र लागत सीमा को बढ़ाकर 3 वर्षों से कम की अवधि के लिए 6-माह लिबॉर+200 आधार अंक किया गया। इसके अलावा, प्रणाली की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण एनबीएफसी को, जिन्हें अभी तक अल्पावधि विदेशी उधार जुटाने की अनुमति नहीं दी जाती थी, उन्हें इसकी अनुमति दे दी गयी।
- विदेशी मुद्रा में निर्यात ऋण पर ब्याज दर सीमा को बढ़ाकर लिबॉर+350 आधार अंक किया गया, बशर्ते कि बैंकों द्वारा कोई अन्य प्रभार न लगाया जाये।
- प्राधिकृत व्यापारी वर्ग - I बैंकों को अनुमति दी गयी कि वे अपने प्रधान कार्यालय, समुद्रपार शाखाओं और प्रतिनिधियों से और नोस्ट्रो खातों में ओवरड्राफ्ट से पिछली तिमाही की समाप्ति पर अपनी अक्षत टियर-1 पूंजी के पचास प्रतिशत की सीमा तक या 10 मिलियन अमरीकी डालर, जो भी अधिक है, निधियाँ उधार ले सकते हैं, जबकि पहले यह सीमा 25 प्रतिशत थी।
- भारतीय कंपनियों को प्रोत्साहित किया गया कि वे अनुमोदन या स्वचालित माध्यम के अंतर्गत अपने एफसीसीबी की समयपूर्व वापसी खरीद प्रचलित बट्टा दरों पर करें, बशर्ते वे कुछ निर्धारित शर्तों का अनुपालन करें। एफसीसीबी के विस्तार की अनुमति भी चालू समग्र लागत सीमा पर संबंधित परिपक्वता अवधि के लिए दी गयी।

5.27 भारतीय संदर्भ में, भले ही विदेशी मुद्रा स्वैप सुविधा का उपयोग सीमित था, बाजार प्रतिभागियों से प्राप्त प्रतिसूचना और जनश्रुतिमूलक साक्ष्य यह बताते हैं कि इस सुविधा ने बैंकों को सहूलियत देने और उनमें विश्वास उत्पन्न करने के वांछित लक्ष्य को उस समय प्राप्त किया, जब अंतरराष्ट्रीय मुद्रा बाजार निश्चल हो चुके थे। विदेशी मुद्रा स्वैप सुविधा की प्रभावोत्पादकता की जाँच करने के लिए एक प्रयोग किया गया। प्रयोग के परिणाम अंतरकृत यूएसडी-आइएनआर शृंखला और विदेशी मुद्रा स्वैप राशि (न्यून R^2 और उपेक्षणीय गुणांक)[2]

[2]

	अंतरकृत यूएसडी-आइएनआर[2]		यूएसडी-आइएनआर अस्थिरता	
वैरिएबल	गुणांक	प्रोब.	गुणांक	प्रोब.
सी	0.027	0.072	8.49e-05	0.000
डमी	-0.005	0.933	-0.00014	0.120
डिपेंडेंट वीएआर (टी-1)	0.145	0.001	0.97202	0.000
फॉरेक्स स्वैप (000 करोड़)	-0.033	0.578	0.00020	0.053
आर-स्क्वेयर्ड	0.03		0.95	
डर्बिन-वाटसन स्टैट	1.97		1.77	

डम्मी वैरिएबल का मूल्य 14 नवंबर 2008 से 1 होता है, अन्यथा शून्य होता है।

के बीच कोई महत्त्वपूर्ण संबंध इंगित नहीं करते हैं। तथापि, अस्थिरता के मामले में *डमी वैरिएबल* का ऋणात्मक गुणांक होता है और विदेशी मुद्रा स्वैप का धनात्मक चिह्न होता है, जो (क) विदेशी मुद्रा स्वैप के आरंभ किये जाने के बाद अस्थिरता में कमी और (ख) बैंकों द्वारा अत्यधिक अस्थिरता की अवधि के दौरान स्वैप-विंडो के उपयोग को इंगित करता है। बाद में विदेशी मुद्रा स्वैप सुविधा के अंतर्गत बकाये में, जो 19 फरवरी 2009 को 1,820 करोड़ रुपये के शीर्ष स्तर पर था, कमी आयी और वह अंत सितंबर 2009 में 240 करोड़ रुपये रह गया, जो भारतीय बैंकों के लिए सुधरी हुई विदेशी मुद्रा चलनिधि स्थिति को सूचित करता है (चार्ट V.7)। प्रचलित विदेशी मुद्रा चलनिधि की स्थिति को ध्यान में रखते हुए विदेशी मुद्रा स्वैप सुविधा रिज़र्व बैंक द्वारा 27 अक्तूबर 2009 से बंद कर दी गयी।

5.28 सारांशत:, विदेशी मुद्रा बाजार में रिज़र्व बैंक की मदद से दबाव दिसंबर 2008 से कम हुआ, क्योंकि विदेशी मुद्रा बाजार में चलनिधि की स्थिति सामान्य हो गयी। वर्ष 2009-10 के दौरान एफआइआइ अंतर्वाह में बदलाव, एफडीआइ और एनआरआइ जमाराशियों के अंतर्गत निरंतर अंतर्वाह, वर्ष 2009-10 में उम्मीद से बेहतर समष्टिआर्थिक कार्यनिष्पादन और अंतरराष्ट्रीय बाजारों में डालर के कमजोर पड़ने की पृष्ठभूमि में अमरीकी डालर के विरुद्ध रुपये का सामान्यत: अधिमूल्यन हुआ। विदेशी मुद्रा स्वैप सुविधा की शुरुआत के बाद विदेशी मुद्रा बाजार में अस्थिरता में कमी आयी। इसके अतिरिक्त,

चार्ट V.7 : विदेशी मुद्रा स्वैप सुविधा और यूएसडी-आइएनआर अस्थिरता

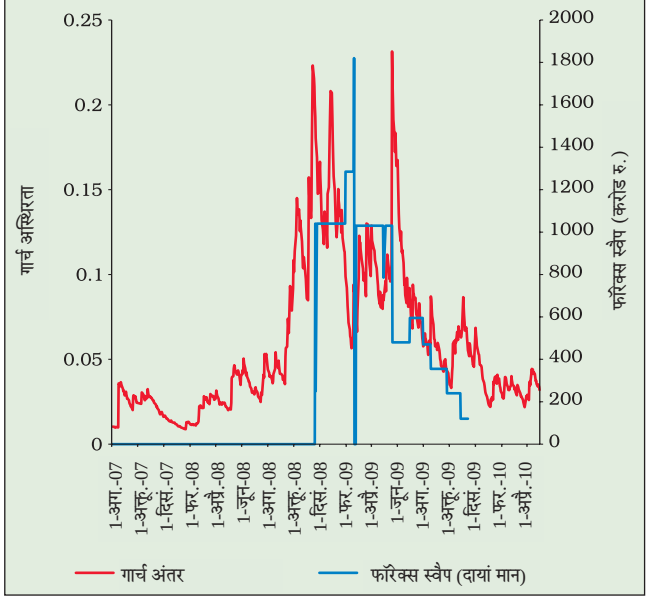

आम चुनाव के नतीजों से, जिससे राजनीतिक स्थिरता की उम्मीद हुई, बाजार के रुझान में तेजी आयी और इसने रुपये को मजबूती प्रदान करने में योगदान किया, विशेष रूप से मई 2009 के उत्तरार्ध में।

मुद्रा बाजार

5.29 1990 के दशक के प्रारंभ में, भारतीय मुद्रा बाजार का महत्त्वपूर्ण रूपांतरण साधनों, प्रतिभागियों और प्रौद्योगिकी की मूलभूत सुविधाओं के संदर्भ में हुआ। सुधार के विविध उपायों के परिणामस्वरूप बाजार अपेक्षाकृत सुदृढ़, अर्थसुलभ और स्पंदनशील हुआ। मौद्रिक नीति की परिचालन क्रियाविधियों में बदलाव के साथ रिज़र्व बैंक के चलनिधि प्रबंधन कार्यों में भी सही तालमेल आया जिससे मौद्रिक नीति के संकेतों की प्रभावोत्पादकता बढ़ी। मुद्रा बाजार के विविध खंडों का विकास नीति संबंधी जोर में बदलाव के अनुरूप हुआ। मांग मुद्रा बाजार का रूपांतरण एक परिशुद्ध अंतर-बैंक बाजार के रूप में हुआ, जबकि अन्य मुद्रा बाजार साधनों, यथा, बाजार रिपो और संपार्श्वीकृत उधार एवं ऋणदायी बाध्यता (सीबीएलओ) का विकास किया गया, ताकि बैंकों से इतर संस्थाओं को अपने अल्पावधि चलनिधि असंतुलनों का प्रबंध करने के अवसर प्राप्त हों। बाजार आधारित लिखतों को व्यापक बनाने और विभिन्न लिखतों की परिपक्वता अवधि को कम करने के संदर्भ में रिज़र्व बैंक द्वारा किये गये उपायों ने न केवल बाजार एकीकरण का संवर्धन करने में मदद की, बल्कि बेहतर चलनिधि प्रबंधन और रिज़र्व बैंक द्वारा नीतिगत संकेतों के संचरण को भी समर्थ बनाया है। मुद्रा बाजार के संबंध में गठित तकनीकी दल (2005) की सिफारिशों के अनुसरण में रिज़र्व बैंक का ध्यान मुद्रा बाजार के संबंध में संपार्श्वीकृत बाजार के विकास को प्रोत्साहन देने, रुपया आय-वक्र को विकसित करने और बाजार प्रतिभागियों द्वारा बेहतर जोखिम प्रबंधन के लिए अवसर प्रदान करने पर केंद्रित रहा है।

5.30 वर्ष 2008-09 की पहली छमाही में मुद्रा बाजार में व्यवस्था बनी हुई थी, जिसमें माँग दरें सामान्यत: रिवर्स रिपो और रिपो के अनौपचारिक कॉरिडोर के भीतर बनी हुई थीं (चार्ट V.8)। मांग मुद्रा दरें एलएएफ रिपो दरों में वृद्धि के आगे-पीछे के क्रम में अनेक प्रक्रमों में अगस्त 2008 तक बढ़ीं, जो मुद्रास्फीति संबंधी चिंताओं के परिप्रेक्ष्य में मौद्रिक नीति को कठोर बनाये जाने को प्रतिबिंबित करता है और यह दूसरी छमाही के दौरान (मध्य सितंबर 2008 तक) ऊपरी सीमा के आसपास बनी रहीं। मध्य सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स और

चार्ट V.8 : चलनिधि समायोजन सुविधा और मांग दर

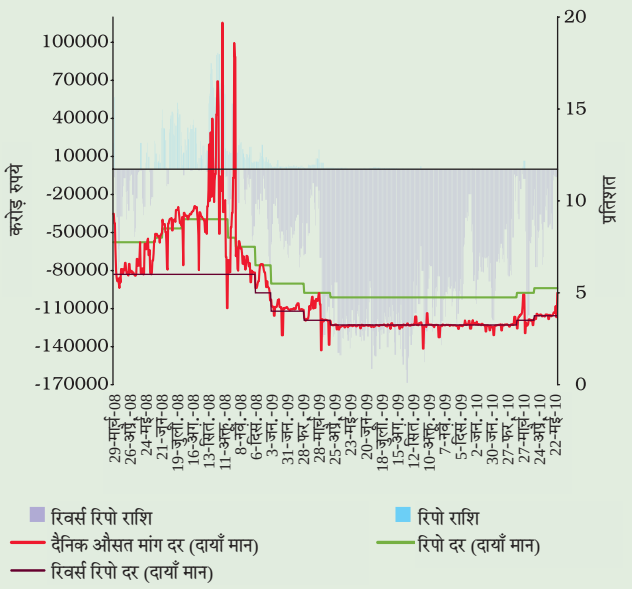

कुछ अन्य वैश्विक वित्तीय संस्थाओं की विफलता प्रमुख वित्तीय केंद्रों में मुद्रा बाजार कार्यकलापों पर रोक लगाने में अग्रणी रहीं; और भारतीय बाजारों पर भी इसका अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा। संकट के प्रत्युत्तर में रिज़र्व बैंक ने काफी मात्रा में डालर चलनिधि प्रदान की ताकि विदेशी मुद्रा बाजार में अत्यधिक अस्थिरता को रोका जा सके जिसका रुपया चलनिधि पर कठोर प्रभाव हुआ। विदेशी मुद्रा बाजार में रिज़र्व बैंक के इस प्रकार के परिचालनों के साथ अस्थायी स्थानीय कारकों, यथा, तिमाही अग्रिम कर अदायगियों के बाद सरकार के जमाशेषों में वृद्धि होने के परिणामस्वरूप घरेलू चलनिधि की स्थिति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और मांग मुद्रा दर अक्तूबर 2008 के अंत तक रिपोदर से अधिक हो गयी।

5.31 वैश्विक बाजारों में बढ़ती अनिश्चितता के साथ मांग बाजार में अस्थिरता में भी मध्य सितंबर 2008 में पर्याप्त वृद्धि हुई। गार्च (1,1) मॉडल द्वारा अनुमानित अस्थिरता से यह संकेत मिलता है कि वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही के दौरान अंतर-बैंक दरों में काफी अधिक अस्थिरता थी (चार्ट V.9)। अस्थिरता में स्पष्ट रुकावट की पुष्टि बढ़े हुए गार्च अस्थिरता समीकरण[3] के डमी वैरिएबल के संकेत और

[3] गार्च अस्थिरता समीकरण (समीकरण 2) को बढ़ा कर उसमें डमी वैरिएबल्स को शामिल किया गया। गार्च अस्थिरता का अनुमान लगाने के लिए प्रयुक्त सूचना का बढ़ा हुआ सेट निम्नानुसार है :-

$R_t = \alpha_o + \alpha_1 R_{t-1} + \epsilon_t$ .....(1); जहां $\epsilon_t / \Phi_{t-1} \sim N(0, h_t)$

$h_t = \beta_o + \beta_1 \epsilon^2_{t-1} + \beta_2 h_{t-1} + \lambda * D_f$ .....(2)

जहाँ R_1 डिपेंडेंट वैरिएबल होता है, जो वित्तीय वैरिएबल को सूचित करता है (उदाहरणार्थ, भारित औसत मांग दर), h_1 भारित औसत मांग दर/स्प्रेड की सशर्त अस्थिरता होती है, जिसे D_1 - एक डमी वैरिएबल, जो किसी विशेष रेजीम 0 पर 1 का मूल्य लेता है, द्वारा बढ़ाया जाता है, अन्यथा D_1 का सृजन रेजीमों में परिवर्तनों के प्रभावों को ग्रहण करने के लिए किया जाता है। इन डमियों काट पूर्वाभास (अगस्त 07-अगस्त 08), समस्या (सितंबर 08-दिसंबर 08) और रिकवरी (जनवरी 09 से अक्तूबर 09) के रूप में माना गया। रेजीम बदलाव का मूल्यांकन करने के लिए डमी वैरिएबल्स, प्रॉब्लम और रिकवरी को अंतर-समीकरण में शामिल किया जाता है। वर्धित गार्च मॉडल का प्रयोग करते हुए अनुमानित परिणाम निम्नानुसार होते हैं :

समीकरण	मांग दर		बेंचमार्क जी-सिक		अंतर यूएसडी-आइएनआर	
	गुणांक	पी-मान	गुणांक	पी-मान	गुणांक	पी-मान
स्थिर	-	-	0.06	0.05	0.01	0.34
डिपेंडेंट वैरिएबल (t-1)	0.98	0.00	0.99	0.00	0.16	0.00
अंतर समीकरण						
सी	0.59	0.00	0.00	0.00	0.01	0.00
आरईएसआइडी (-1)^2	0.61	0.00	0.09	0.00	0.21	0.00
गार्च (-1)	0.19	0.00	0.91	0.00	0.30	0.05
प्रॉब्लम	0.39	0.00	0.00063	0.03	0.06	0.01
रिकवरी	-0.58	0.00	0.00003	0.48	0.04	0.00
आर-स्क्वेयर	0.79		0.99		0.02	
डी-डब्लू स्टैट	2.62		1.70		1.99	

एक स्थिर पद की उपस्थिति में डमी वैरिएबल ट्रैप से बचने के लिए पूर्वाभास के लिए डमी वैरिबल्स को शामिल नहीं किया जाता है।
यूएसडीआइएनआर के लिए अंतरकृत श्रेणी पर विचार किया गया, क्योंकि श्रेणी को विचाराधीन समयावधि के लिए अंतर-अचल के रूप में माना गया।
i) मांग के लिए स्थिर पद को शामिल नहीं किया जाता है, क्योंकि स्थिर पद को अस्थिर पाया गया।
ii) 0.98 के गुणांक ने श्रेणी के अचल गुण के मूल्य को प्रोत्साहन दिया। विचाराधीन अवधि (अगस्त 2007-अक्तूबर 2009) के लिए एडीएफ परीक्षण सांख्यिकी के आधार पर मांग दर को अचल पाया गया।
जब प्रतिलाभ अस्थिरता का उपयोग डिपेंडेंट वैरिएबल के रूप में किया गया, तब उसके परिणामों ने उपर्युक्त निष्कर्षों का समर्थन किया।

चार्ट V.9: मांग दर अस्थिरता

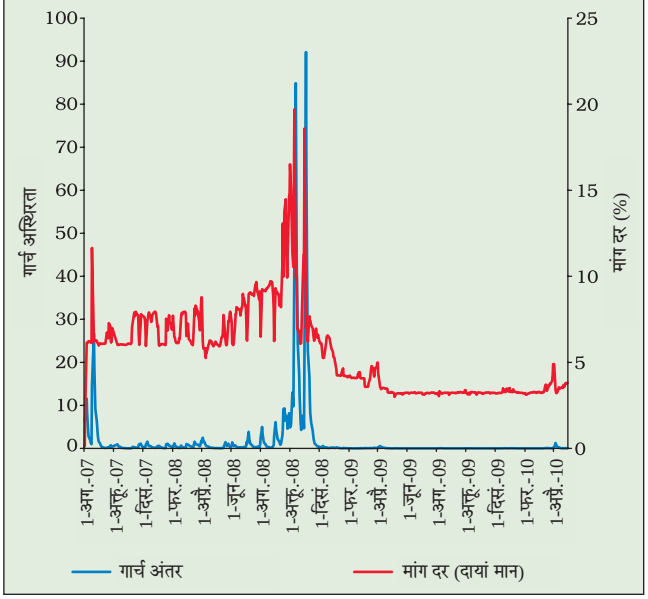

सांख्यिकीय महत्त्व से होती है। तथापि, यह उल्लेखनीय है कि अस्थिरता में वृद्धि देशी कारकों के चलते भी हो सकती है (उदाहरणार्थ, बैंकिंग प्रणाली से तिमाही अग्रिम कर का बहिर्वाह और अक्तूबर-नवंबर में त्यौहार के मौसम में मुद्रा की मांग) (चार्ट V.9)।

5.32 घटते स्फीतिकारक दबावों और बढ़ते वैश्विक संकट के साथ रिज़र्व बैंक ने घरेलू चलनिधि में वृद्धि करने के उद्देश्य से, द्रुत गति और व्यापक रूप से मध्य अक्तूबर 2008 से एक विस्तारक प्रणाली की ओर रुख किया और मध्य अक्तूबर 2008 से कई उपायों की घोषणा की जिसमें सीआरआर में 400 आधार अंकों की कटौती, सांविधिक चलनिधि अनुपात में 100 आधार अंकों की कटौती तथा रिपो (और रिवर्स रिपो) दरों में क्रमश: 425 आधार अंक (एवं 275 आधार अंक) की कटौती शामिल थी। पूँजी प्रवाह के विपर्यय और अर्थव्यवस्था की चलनिधि संबंधी आवश्यकताओं में वृद्धि होने के बाद रिज़र्व बैंक ने बकाया बाजार स्थिरीकरण योजनाओं (एमएसएस) के जमाशेषों को भी उन्मुक्त करना आरंभ कर दिया जिसके परिणामस्वरूप चलनिधि में स्थिर गति से वृद्धि हुई। सितंबर 2008 के बाद, एमएसएस के अंतर्गत खजाना बिल जारी करना स्थगित कर दिया गया। नवंबर 2008 से रिज़र्व बैंक ने पूर्व में एमएसएस के अंतर्गत जारी की गयी दिनांकित प्रतिभूतियों की वापसी खरीद भी आरंभ कर दी ताकि वह चलनिधि सृजन की गति बढ़ाने के अपने प्रयासों में तेजी ला सके। नीलामियों के माध्यम से वापसी खरीद संचालित की गयी और वह केंद्र सरकार के सामान्य बाजार उधार कार्यक्रमों के ज्यादातर अनुरूप थी।

5.33 रिज़र्व बैंक द्वारा आरंभ किये गये उपायों ने चलनिधि में वृद्धि की और भारित औसत मांग मुद्रा दर में गिरावट आयी तथा वह 3 नवंबर 2008 और उसके बाद अधिकतर एलएएफ कॉरिडोर के भीतर बनी रही। इसके अतिरिक्त, मुद्रा बाजार में व्यवसाय के परिमाण में भी जनवरी 2009 से वृद्धि हुई है (सारणी 5.4) जो यह बताता है कि इसमें काउंटरपार्टी जोखिम का कोई प्रतिकूल बोध नहीं दिखाई पड़ा है; फलत: भारत में अंतर-बैंक मुद्रा बाजार ने कुछ विकसित अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में सामान्य रूप से कामकाज किया। एलएएफ के अंतर्गत उपलब्ध कराई जाने वाली औसत दैनिक निवल बकाया चलनिधि, जो सितंबर और अक्तूबर 2008 के दौरान बढ़कर लगभग 43,000 - 46,000 करोड़ रुपये हो गई थी, उसके बाद तेजी से घटी और दिसंबर 2008 के प्रारंभ में उसका स्वरूप निवल अवशोषण में बदल गया जो इन उपायों के प्रभाव को प्रतिबिंबित करता है।

5.34 चलनिधि की स्थिति वर्ष 2009-10 के दौरान और भी सहज हो गयी जिसका मुख्य कारण था केंद्र सरकार के नकदी जमाशेष में कमी होना, एमएसएस को उन्मुक्त करना और खुला बाजार परिचालन के अंतर्गत नीलामी आधारित खरीद (इस पर इस अध्याय में बाद में चर्चा की गयी है)[4]। चलनिधि की स्थिति के सहज हो जाने और नीति-दरों में कटौती किये जाने के बाद मांग मुद्रा दरों में और भी कमी आयी और वह वर्ष 2009-10 के दौरान एलएएफ कॉरिडोर की निचली सीमा के इर्द-गिर्द बनी रही।

5.35 संपार्श्वीकृत खंड अब मुद्रा बाजार के कार्यकलाप पर हावी है क्योंकि मुद्रा बाजार परिचालनों में इसका 75 प्रतिशत से अधिक का हिस्सा है। सीबीएलओ और बाजार रिपो के परिमाण में भी वर्ष 2008-09 की अंतिम तिमाही में काफी बढ़ोतरी हुई जो अधिकतर चलनिधि की स्थिति के सहज होने और म्यूचुअल फंडों की उधार देने की बढ़ी हुई क्षमता को प्रतिबिंबित करता है। मुद्रा बाजार दरें, जो

[4] चलनिधि की स्थिति की समीक्षा करने पर 5 मई 2009 को यह निर्णय लिया गया कि 6 मई 2009 (बुधवार) से केवल एक चलनिधि समायोजन सुविधा का परिचालन किया जायेगा और दूसरा एलएएफ केवल रिपोर्टिंग शुक्रवार को संचालित किया जायेगा। एसएएलएफ को दैनिक आधार पर 28 मई 2008 से पुन: आरंभ किया गया जो 2 जुलाई 2010 तक चलता रहा।

सारणी 5.4 : मुद्रा बाजार खंडों में कार्यकलाप

माह	औसत परिमाण (एक चरण) (करोड़ रुपये)					मीयादी मुद्रा बाजार (करोड़ रुपये)	वाणिज्यिक पत्र		जमा प्रमाणपत्र	
	मांग	बाजार रिपो	सीबीएलओ	कुल	मुद्रा बाजार दर (प्रतिशत)*		बकाया (करोड़ रुपये)	डब्ल्यूएडीआर (%)	बकाया (करोड़ रुपये)	डब्ल्यूएडीआर (%)
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
2006-07	**10,863**	**8,419**	**16,195**	**35,477**	**6.57**	**506**	**21,329**	**8.08**	**64,821**	**8.24**
2007-08	**10,697**	**13,684**	**27,813**	**52,194**	**5.48**	**352**	**33,813**	**9.20**	**1,17,186**	**8.94**
2008-09	**11,218**	**14,330**	**30,776**	**56,323**	**6.43**	**397**	**47,183**	**10.54**	**1,62,574**	**9.31**
अप्रै-08	9,758	14,966	38,828	63,552	5.31	374	37,584	8.85	1,50,865	8.49
मई-08	9,740	14,729	36,326	60,795	6.29	420	42,032	9.02	1,56,780	8.95
जून-08	10,854	11,262	35,774	57,890	7.35	253	46,847	10.03	1,63,143	9.16
जुला-08	12,368	8,591	23,669	44,628	8.09	226	51,569	10.95	1,64,892	10.23
अग-08	11,704	10,454	22,110	44,268	8.65	501	55,036	11.48	1,71,966	10.98
सितं-08	11,690	10,654	20,547	42,891	9.26	335	52,038	12.28	1,75,522	11.56
अक्तू-08	14,497	9,591	16,818	40,906	8.66	345	48,442	14.17	1,58,562	10.0
नवं-08	10,906	15,191	24,379	50,476	6.58	319	44,487	12.42	1,51,493	10.36
दिसं-08	10,820	16,943	32,261	60,024	5.37	415	40,391	10.7	1,51,214	8.85
जन-09	9,248	18,053	31,794	59,095	3.99	454	51,668	9.48	1,64,979	7.33
फर-09	11,121	19,929	38,484	69,534	3.89	669	52,560	8.93	1,75,057	6.73
मार्च-09	11,909	21,593	48,319	81,821	3.76	451	44,171	9.79	1,92,867	7.53
अप्रै-09	10,910	20,545	43,958	75,413	2.41	332	52,881	6.29	2,10,954	6.48
मई-09	9,518	22,449	48,505	80,472	2.34	338	60,740	5.75	2,18,437	6.20
जून-09	8,960	21,694	53,553	84,207	2.69	335	68,721	5	2,21,491	4.90
जुला-09	7,197	20,254	46,501	73,952	2.83	389	79,582	4.71	2,40,395	4.96
अग-09	7,569	23,305	57,099	87,973	2.62	461	83,026	5.05	2,32,522	4.91
सितं-09	8,059	27,978	62,388	98,425	2.73	381	79,228	5.04	216,691	5.3
अक्तू-09	7,888	23,444	58,313	89,645	2.70	225	98,835	5.06	2,27,227	4.70
नवं-09	6,758	22,529	54,875	84,162	2.87	191	1,03,915	5.17	2,45,101	4.86
दिसं-09	6,651	20,500	55,338	82,489	2.91	289	90,305	5.4	2,48,440	4.92
जन-10	6,411	14,565	50,571	71,547	2.97	404	91,564	4.80	2,82,284	5.65
फर-10	6,809	19,821	63,645	90,275	2.95	151	97,000	4.99	3,09,390	6.15
मार्च-10	8,812	19,150	60,006	87,968	3.22	393	76,056	6.29	3,41,054	6.07
अप्रै-10	8,187	20,319	50,891	79,397	3.03	345	98,769	5.37	3,36,807	5.56
मई-10	8,393	17,610	42,274	68,277	3.72	338	1,00,364	5.51	3,40,343	5.17

*: मांग, बाजार रिपो और सीबीएलओ की भारित औसत दर।

जनवरी 2008 से बढ़ना शुरू हुई थीं और सितंबर 2008 में शिखर पर पहुँच गईं, अक्तूबर 2008 से कम होने लगीं जो रिज़र्व बैंक द्वारा किये गये विविध चलनिधि प्रोत्साहक उपायों को प्रतिबिंबित करता है (चार्ट V.10)। इसके अलावा, चलनिधि की स्थिति के पर्याप्त सहज हो जाने के साथ ही संपार्श्वीकृत खंडों में वर्ष 2009-10 के दौरान दरें सामान्यत: एलएएफ कॉरिडोर की निचली सीमा के नीचे बनी रहीं।

चार्ट V.10 : चलनिधि-स्थिति और मुद्रा बाजार दर

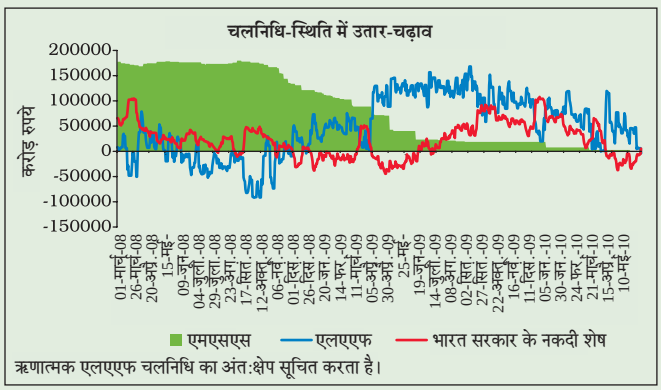

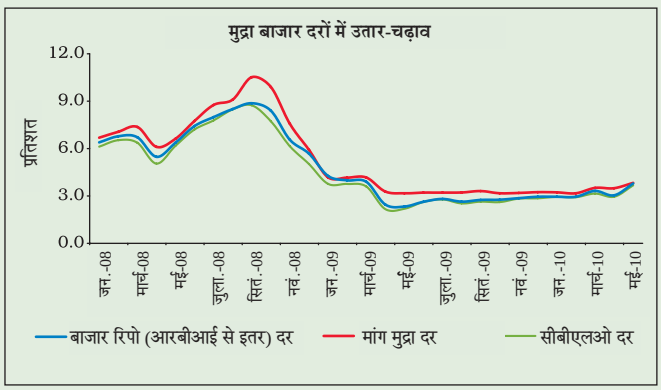

चार्ट V.11 : सीपी और सीडी निर्गम

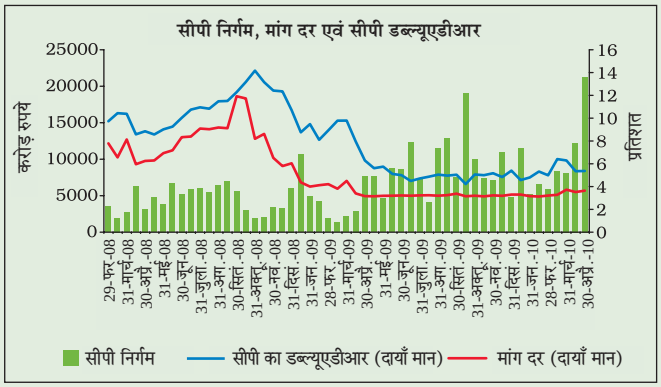

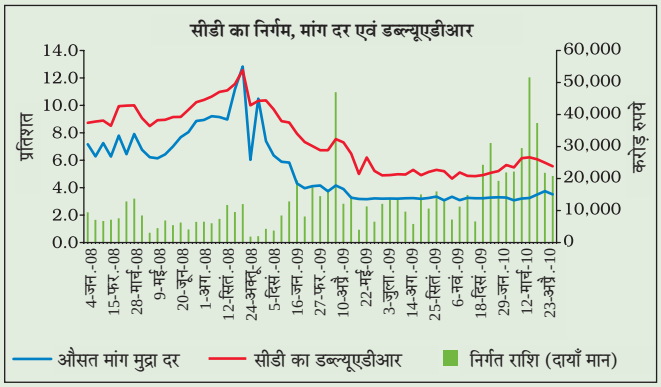

5.36 संकट का अप्रत्यक्ष प्रभाव जमा प्रमाणपत्र (सीडी) और वाणिज्यिक पत्र (सीपी) बाजारों में भी प्रतिबिंबित हुआ। इन दोनों बाजारों में बकाया राशियों में कमी आयी और भारित औसत बट्टा दर (डब्ल्यूएडीआर) सितंबर-अक्तूबर 2008 के दौरान बढ़ गयी। सीपी बाजार में जारीकर्ताओं द्वारा चूक किये जाने के कुछ मामले (शोधन पूरा करने में) भी जारीकर्ता और अदाकर्ता एजेंटों (आईपीए) द्वारा रिपोर्ट किये गये। बाद में, चलनिधि स्थिति सहज हो गयी और सीपी एवं सीडी की बकाया राशि बढ़ी (चार्ट V.11)। सीपी और सीडी बाजारों में डब्ल्यूएडीआर दिसंबर 2008 तक अन्य मुद्रा दरों के समान सामान्यत: कम हुई।

मीयादी रिपो सुविधा

5.37 विदेशी निधीयन में कमी होने और देशी पूँजी बाजार में मांग में भारी मंदी ने भारतीय वित्तीय प्रणाली के कुछ खंडों में दबाव बढ़ा दिया, यथा, म्यूचुअल फंडों और एनबीएफसी पर। अधिक शोधन दबाव का सामना करते हुए म्यूचुअल फंडों ने अपनी नकदी का परिरक्षण आरंभ कर दिया जिससे बाजार के अन्य खंडों पर प्रभाव पड़ा, विशेष रूप से एनबीएफसी पर, जो अपनी निधीयन संबंधी आवश्यकताओं के लिए म्यूचुअल फंडों पर आश्रित होते थे। रिज़र्व बैंक ने नकदी की कमी पर ध्यान देते हुए तेजी से कार्रवाई की और एक मीयादी रिपो सुविधा (20,000 करोड़ रुपये की अधिसूचित राशि के लिए एक 14-दिवसीय विशेष रिपो सुविधा) 15 अक्तूबर 2008 से आरंभ की। बैंकों को अनुमति दी गयी कि वे निवल मांग और मीयादी देयताओं के अतिरिक्त 0.5 प्रतिशत तक एसएलआर प्रतिभूतियों का अस्थायी उपयोग संपार्श्वीकृत प्रयोजनों के लिए कर सकते हैं। बाद में इस सुविधा को विस्तारित किया गया ताकि बैंकों द्वारा एनबीएफसी और आवास वित्त कंपनियों की निधीयन संबंधी आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। इसके साथ ही, अधिसूचित राशि को बढ़ा कर 60,000 करोड़ रुपये कर दिया गया और और एसएलआर बनाये रखने में छूट की सीमा नवंबर 2008 से उनके एनडीटीएल के 1.5 प्रतिशत तक बढ़ा दी गयी। इसकी प्रभावोत्पादकता के मद्देनजर मीयादी उधार सुविधा को पुन: 31 मार्च 2010 तक बढ़ा दिया गया। 1 नवंबर 2008 को एक विशेष पुनर्वित्त सुविधा भी आरंभ की गयी ताकि अनुसूचित वाणिज्य बैंकों को उनके एनडीटीएल के 1 प्रतिशत तक रिपो दर पर निधीयन प्रदान किया जाये जिससे बैंक नकदी संबंधी मांग को पूरा कर सकें (इस अध्याय का खंड III भी देखें)।

5.38 संकट की अवधि के दौरान भारतीय वित्तीय बाजार में चलनिधि संबंधी दबाव के निधीयन के संबंध में मीयादी रिपो के प्रभाव का अनुभवजन्य मूल्यांकन करने के लिए एक प्रयोग किया गया। फ्रैंक और हेस्से (2009) अध्ययन का अनुसरण करते हुए 3-माह मिबोर-ओआइएस स्प्रेड की गणना भारतीय बाजारों में चलनिधि दबाव के लिए प्रॉक्सी प्रदान करने हेतु की गयी। मिबोर-ओआइएस स्प्रेड अंत सितंबर 2008 से काफी बढ़ गया (चार्ट V,12), जो निधीयन की जमाखोरी को सूचित करता है, ताकि आस्ति कीमतों में कमी, प्रतिभूतियों का उत्तरवर्ती मार्किंग-टू-मार्केट और जबरी परिसमापन के बाद और अधिक आकस्मिक देयताओं को शामिल किया जा सके। तथापि, मीयादी रिपो सुविधा प्रारंभ किये जाने के बाद मिबोर-ओआइएस स्प्रेड में धीरे-धीरे कमी आयी जो वित्तीय बाजारों में वित्तीय दबाव कम होने का संकेत करता है। यह उल्लेखनीय है कि उच्च स्प्रेड की अवधि के दौरान मीयादी रिपो सुविधा के अंतर्गत राशि अधिक थी और वह स्प्रेड कम होने के साथ धीरे-धीरे कम होती गयी।

चार्ट V.12 : मुद्रा बाजार स्प्रेड

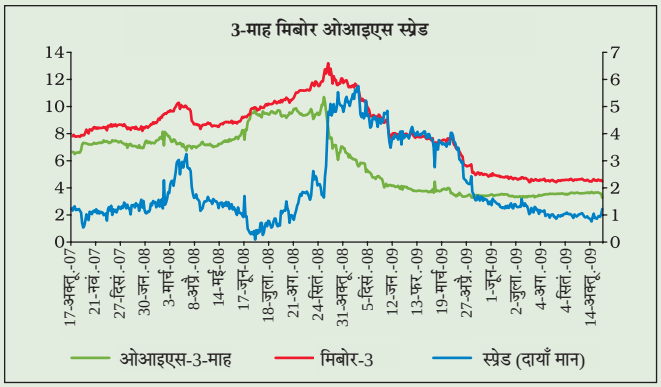

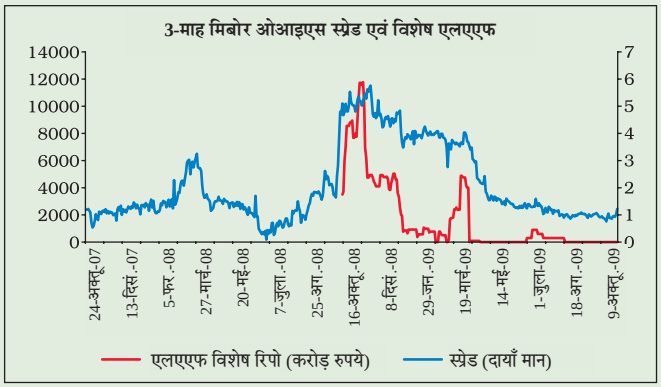

5.39 मीयादी रिपो सुविधा की मिबोर/ओआइएस अस्थिरता के संबंध में प्रभावोत्पादकता की अनुभवमूलक जाँच की गयी और इसके लिए मिबोर/ओआइएस अस्थिरता (एक 5 दिवसीय चल विंडों का मानक विचलन) का उपयोग आश्रित वैरिएबल और डमी वैरिएबल के रूप में मीयादी रिपो के लिए (जिसने 14 अक्तूबर 2008 के बाद अपना मूल्य 1 लिया, अन्यथा शून्य) और मीयादी रिपो राशि का आश्रित वैरिएबल के रूप में किया गया। आश्रित वैरिएबल (अर्थात् अस्थिरता) का विलंबकारी मूल्य भी स्वतंत्र वैरिएबल के रूप में शामिल किया गया। दोनों रिग्रेसनों में डमी वैरेबल्स के ऋणात्मक लक्षण थे और डमी वैरेबल्स के गुणांक परंपरागत स्तरों पर[5] महत्त्वपूर्ण थे। डमी वैरिएबल्स के ऋणात्मक संकेत (मीयादी रिपो सुविधा के लिए) यह सूचित करते थे कि मीयादी रिपो सुविधा संकट की अवधि के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था में चलनिधि दबाव को रोकने में कारगर थी। चलनिधि की विद्यमान स्थिति को और घटे हुए स्प्रेड को ध्यान में रखते हुए रिज़र्व बैंक ने मीयादी रिपो सुविधा 27 अक्तूबर 2009 से बंद कर दी।

चलनिधि उपलब्ध कराना और रिज़र्व बैंक का तुलनपत्र

5.40 वर्ष 2008 की तीसरी तिमाही के दौरान पूँजी के बड़े बहिर्वाह के साथ निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों पर दबाव पड़ने लगा। रिज़र्व बैंक ने इसकी प्रतिक्रियास्वरूप प्रणाली में परंपरागत ओएमओ के माध्यम से चलनिधि उपलब्ध कराई, एलएएफ के अंतर्गत रिपो और मीयादी रिपो के माध्यम से चलनिधि की व्यवस्था की, एमएसएस जमाशेषों को उन्मुक्त किया और सीआरआर में कटौती की। एमएसएस जमाशेषों को उन्मुक्त किये जाने से न केवल रिज़र्व बैंक ने अपने तुलन-पत्र में कोई महत्त्वपूर्ण विस्तार किये बिना पर्याप्त चलनिधि के सृजन की गुंजाइश बनाई, बल्कि जमाशेषों के उन्मुक्त किये जाने का समय-निर्धारण इस प्रकार किया कि सरकार के बड़े उधार कार्यक्रमों को भी बाजार पर किसी प्रकार का अनुचित दबाव डाले बिना सहज रूप में संचालित किया जा सका।

5.41 इस प्रकार, रिज़र्व बैंक ने बैंकेतर संस्थाओं/बैंकों द्वारा महसूस किये गये वित्तीय दबाव पर अप्रत्यक्ष रूप से बैंकिंग माध्यम से ध्यान दिया और अपने तुलन-पत्र पर पात्र काउंटरपार्टियों या आस्ति गुणवत्ता की दृष्टि से कोई प्रभाव नहीं पड़ने दिया और इसका यह दृष्टिकोण कुछ उन्नत देशों के केंद्रीय बैंकों द्वारा अपनाये गये दृष्टिकोण के उलट था। चलनिधि प्रबंधन परिचालनों के साथ-साथ विनिमय दर प्रबंधन और सहज आंतरिक ऋण प्रबंधन परिचालनों के संचालित किये जाने से रिज़र्व बैंक ने यह सुनिश्चित किया कि प्रणाली में कीमत और वित्तीय स्थिरता के उद्देश्य के समनुरूप चलनिधि बनी रहती है (मोहन्ती, 2009)।

[5] $MIBORV_t = 0.02 - 0.004\ DUMMY_t + 0.83\ MIBORV_{t-1} + 0.002\ TERMREPO_t$
(0.0) (0.05) (0.00) (0.08)
R^2=0.71 DW=1.39

$OISV_t = 0.02 - 0.01\ DUMMY_t + 0.89\ OISV_{t-1} + 0.001\ TERMREPO_t$
(0.0) (0.05) (0.00) (0.35)
R^2=0.82 DW = 1.49

MIBORV= मिबोर अस्थिरता
OISV= ओआइएस अस्थिरता
कोष्ठक में दिये गये आँकड़े पी-मान सूचित करते हैं, नमूना अवधि अक्तूबर 2007-अक्तूबर 2009 है।

चार्ट V.13: सरकारी प्रतिभूति बाजार की गतिविधियाँ

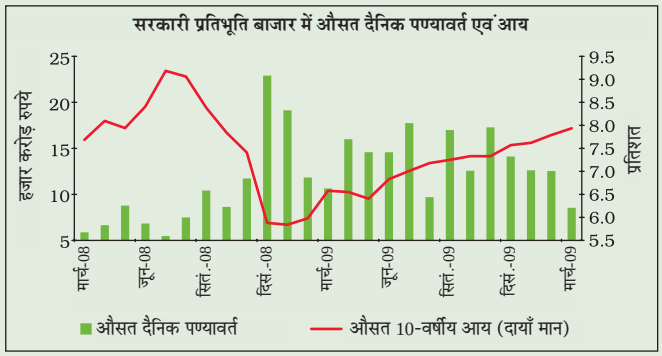

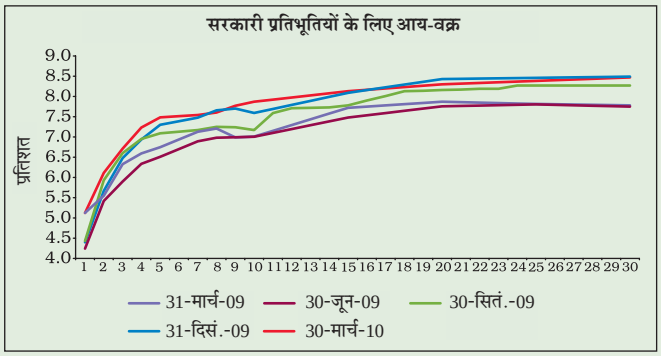

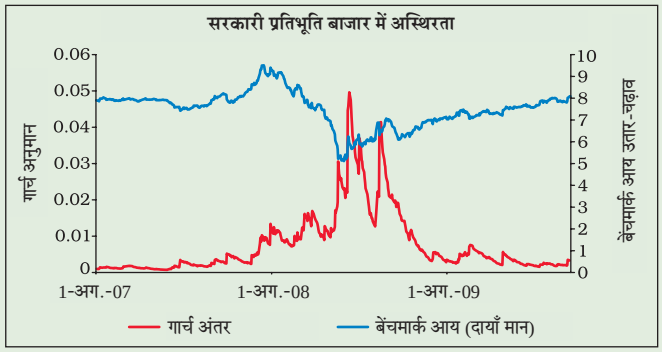

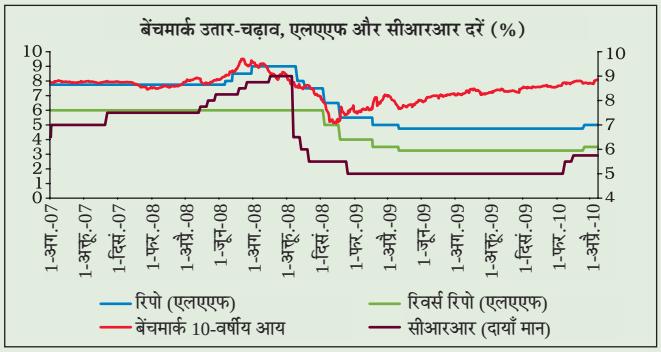

मध्य सितंबर 2008 से किये गये विविध चलनिधि उपायों का संचयी प्रभाव यह हुआ कि प्रणाली में वास्तविक/संभावित समग्र चलनिधि सितंबर 2009 तक बढ़कर 5,61,000 करोड़ रुपये हो गयी (इस अध्याय के अंत में नीतिगत उपाय से संबंधित खंड भी देखें)। मीयादी रिपो सुविधा संकट की अवधि के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था में चलनिधि संबंधी दबाव को रोकने में कारगर हुई।

सरकारी प्रतिभूति बाजार

5.42 भारत में सरकारी प्रतिभूति बाजार का विकास वर्षों से होता रहा है। एक सुविकसित सरकारी प्रतिभूति बाजार की आवश्यकता को स्वीकार करते हुए रिज़र्व बैंक ने सरकार के साथ समन्वय रखते हुए 1990 के दशक के आरंभ से बाजार को नियंत्रित मूल्य और गुणवत्ता नियंत्रणों से मुक्त करने के अनेक उपाय किये। इसके परिणामस्वरूप, सरकारी प्रतिभूति बाजार में विविध आयामों में महत्त्वपूर्ण रूपांतरण परिलक्षित हुए, यथा, बाजार-आधारित कीमत निर्धारण, निवेशक आधार को व्यापक बनाया जाना, नये लिखतों की शुरुआत, प्राथमिक व्यापारियों की स्थापना और एक इलेक्ट्रॉनिक ट्रेडिंग और निपटान इफ्रास्ट्रक्चर का कार्यान्वयन। 1990 के दशक के प्रारंभ में सरकारी प्रतिभूतियों के निर्गम की नीलामी आधारित प्रणाली की ओर स्विचओवर किया जाना एक बड़ा कदम था। इससे बाजार के आकार में वृद्धि हुई जो आगे-पीछे के क्रम में केंद्र और राज्य सरकारों के बाजार उधारों में वृद्धि के समनुरूप थी।

5.43 भारतीय समाशोधन निगम लिमिटेड का परिचालन आरंभ हो जाने से व्यापारियों को गारंटीकृत निपटान सुनिश्चित हुआ और इसीलिए इसने सरकारी प्रतिभूति बाजार को काफी स्थिरता प्रदान की है। प्राथमिक व्यापारी के रूप में बाजार मध्यवर्तियों की प्रणाली का परिचालन होने से रिज़र्व बैंक के लिए यह सुविधाजनक हुआ कि वह राजकोषीय जवाबदेही तथा बजट प्रबंध अधिनियम के प्रावधान के अनुसार 1 अप्रैल 2006 से प्राथमिक बाजार से सहज रूप से हट जाये। बाजार के विकास के लिए आरंभ किये गये विविध उपायों की प्रभावोत्पादकता को प्रतिबिंबित करते हुए द्वितीयक बाजार में पण्यावर्त में वर्षों से कई गुना वृद्धि हुई है।

5.44 वैश्विक वित्तीय संकट के प्रभाव के चलते भारत को अनेक असाधारण उपायों को कार्यान्वित करना पड़ा जो राजकोषीय और

मौद्रिक, दोनों मोर्चों पर किया गया, ताकि घरेलू माँग को प्रेरित किया जा सके। राजकोषीय सुदृढ़ीकरण मानदंडों को, जो पूर्व में राजकोषीय जवाबदेही तथा बजट प्रबंध अधिनियम के अंतर्गत निर्धारित किये गये थे, फिलहाल इस आश्वासन के साथ स्थगित रखा गया है कि सरकार यथाशीघ्र इसे पुन: लागू करेगी। इसके परिणामस्वरूप, केंद्र और राज्य सरकारों, दोनों के उधारों में वर्ष 2008-09 के उनके अपने-अपने बजट अनुमानों से अधिक तेजी से वृद्धि हुई।

5.45 सभी परिपक्वता अवधियों वाले खजाना बिलों की प्राथमिक बाजार आय में अगस्त 2008 तक वृद्धि हुई और उसके बाद उसमें नरमी आयी, जो अक्तूबर 2008 से चलनिधि की स्थिति में सुधार के साथ-साथ ब्याज दर चक्र को प्रतिबिंबित करता है। तथापि, मार्च 2009 के दौरान आय में जनवरी और फरवरी के स्तर से वृद्धि हुई, जिसका कारण था केंद्र और राज्य सरकारों, दोनों के द्वारा बाजार से लिये गये उधारों में बढ़ोतरी होना और तिमाही अग्रिम कर बहिर्वाह (चार्ट V.13)।

5.46 अप्रैल 2008 से 10-वर्षीय आय में उतार-चढ़ाव को तीन व्यापक चरणों में वर्गीकृत किया जा सकता है (चार्ट V.14)। प्रथम चरण के दौरान, अर्थात् अप्रैल से लेकर मध्य जुलाई 2008 तक 10-वर्षीय आय में उच्च स्फीतिकारक प्रत्याशाओं के कारण वृद्धि हुई और वह 15 जुलाई 2008 को बढ़कर 9.51 प्रतिशत तक पहुँच गयी। दूसरे चरण के दौरान (मध्य जुलाई से अंत-दिसंबर 2008) 10-वर्षीय आय में सामान्यत: नरमी आयी, जो कच्चे तेल के मूल्य में नरमी आने के अनुरूप स्फीतिकारक दबाव में कमी आने, घरेलू चलनिधि की स्थिति के आसान होने और वैश्विक वित्तीय उथल-पुथल (मध्य सितंबर 2008 से) के अप्रत्यक्ष प्रभाव के उपरांत देशी नीति दरों में कमी किये जाने तथा अमेरिका में मौद्रिक नीति के सहज होने के कारण हुआ (सारणी 5.5)। तीसरे चरण के दौरान (जनवरी 2009 से) 10-वर्षीय आय में सामान्यत: वृद्धि हुई (फरवरी और अप्रैल में कुछ संक्षिप्त अंतरालों को छोड़कर), भले ही चलनिधि की स्थिति सहज बनी रही और जनवरी 2009 और मार्च 2009 में देशी नीति

चार्ट V.14 : 2007-09 के दौरान बेंचमार्क आय में उतार-चढ़ाव (1 वर्ष, 5 वर्ष और 10 वर्ष)

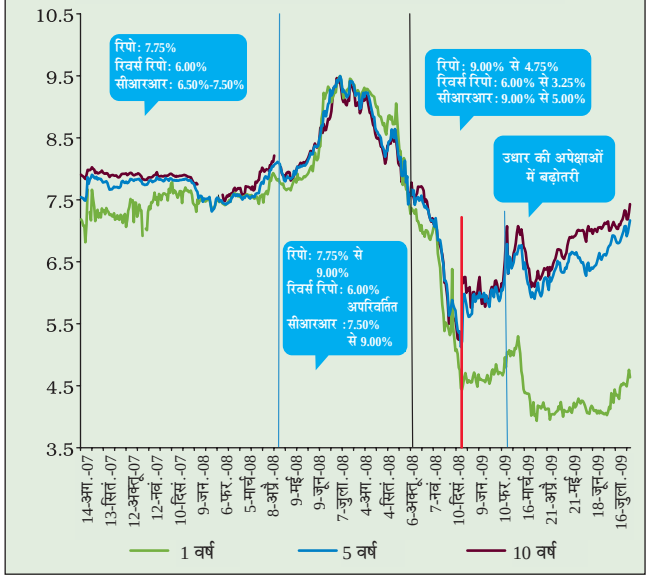

सारणी 5.5 : सरकारी प्रतिभूति बाजार में लेन देन

अवधि	सरकारी प्रतिभूतियो का औसत पण्यावर्त (करोड़ रुपये)	औसत 10-वर्षीय आय @ (प्रतिशत)	न्यूनतम निर्दिष्ट कीमत पर औसत अव्यक्त आय (364 दिवसीय) (प्रतिशत)	औसत बोली-रक्षा अनुपात (364 दिवसीय) (प्रतिशत)
1	2	3	4	5
2006-07	4,863	7.78	7.01	2.45
2007-08	8,104	7.91	7.42	3.21
2008-09	10,879	7.54	7.15	3.47
2009-10	13,939	7.24	4.38	3.64
अप्रैल-08	6,657	8.10	7.53	2.36
मई-08	8,780	8.04	7.61	3.05
जून-08	6,835	8.43	7.93	2.80
जुला-08	5,474	9.18	9.39	2.70
अग-08	7,498	9.06	9.24	4.35
सितं-08	10,418	8.45	8.83	3.57
अक्तू-08	8,641	7.85	7.92	4.00
नवं-08	11,732	7.41	7.23	4.33
दिसं-08	22,903	5.55	5.07	5.14
जन-09	19,136	5.84	4.64	4.80
फर-09	11,831	5.98	4.62	2.62
मार्च-09	10,644	6.59	5.25	1.44
अप्रै-09	15,997	6.55	4.07	5.07
मई-09	14,585	6.41	3.58	3.14
जून-09	14,575	6.83	3.99	2.86
जुला-09	17,739	7.01	3.76	3.90
अग-09	9,699	7.18	4.25	3.76
सितं-09	16,988	7.25	4.47	4.05
अक्तू-09	12,567	7.33	4.57	2.86
नवं-09	17,281	7.33	4.49	3.36
दिसं-09	14,110	7.57	4.63	4.10
जन-10	12,614	7.62	4.67	4.61
फर-10	12,535	7.79	4.95	2.49
मार्च-10	8,544	7.94	5.13	3.48

दरों में और कटौती की गयी। ऐसा अधिकतर वर्ष 2008-09 के लिए सरकार के बाजार उधार कार्यक्रम में तेजी आने और वर्ष 2009-10 के लिए सरकार की उधार संबंधी बड़ी आवश्यकताओं के कारण हुआ।

5.47 विदेशी मुद्रा और मुद्रा बाजारों की भाँति 10-वर्षीय बेंचमार्क सरकारी प्रतिभूति उतार-चढ़ाव की अस्थिरता में सितंबर 2008 से वृद्धि हुई (देखें चार्ट V.14)। अस्थिरता में परिवर्तन परंपरागत स्तरों पर सांख्यिकीय दृष्टि से महत्त्वपूर्ण पाया गया। भारत सरकार के बाजार उधार में वर्ष 2008-09 की अंतिम तिमाही के दौरान तेज गति से वृद्धि हुई क्योंकि इसे विविध प्रेरक पैकेजों का समर्थन करने के लिए दो अनुपूरक मांगों के जरिए अतिरिक्त व्यय का वित्तपोषण करना था। अधिक कारगर चलनिधि प्रबंधन के लिए और यह सुनिश्चित करने के लिए कि सरकार का बाजार उधार कार्यक्रम सहज ढंग से चलता रहे, खुला बाजार परिचालन का क्षेत्र-विस्तार 19 फरवरी 2009 से व्यापक बनाया गया जिसके लिए इसमें सरकारी प्रतिभूतियों को निगोशिएटेड डीलिंग सिस्टम आर्डर-मैचिंग (एनडीएस-ओएम) खंड के माध्यम से सरकारी प्रतिभूतियों का क्रय किये जाने के अतिरिक्त नीलामी आधारित तंत्र के माध्यम से क्रय किये जाने की पद्धति को शामिल किया गया। रिज़र्व बैंक ने वर्ष 2009-10 की पहली छमाही के लिए 80,000 करोड़ रुपये की राशि की सरकारी प्रतिभूतियों की ओएमओ कार्यक्रम के अंतर्गत खरीद करने के अपने अभिप्राय की तुलना में अंत-सितंबर 2009 तक 57,487 करोड़ रुपये की राशि की प्रतिभूतियाँ नीलामी के माध्यम से खरीदीं। इसके अतिरिक्त, एमएसएस के संबंध में सहमति ज्ञापन में 26 फरवरी 2009 को संशोधन किया गया ताकि एमएसएस नकदी लेखा से पृथक्कृत चलनिधि को सरकार के सामान्य नकदी लेखा में अंतरण की अनुमति दी जा सके।

5.48 सारांशत:, यह कहा जा सकता है कि रिज़र्व बैंक ने संकट वर्ष 2008-09 और 2009-10 के दौरान सरकार के बाजार उधार कार्यक्रम का सफलतापूर्वक प्रबंध किया और इससे सरकारी प्रतिभूति बाजार पर कोई उथल-पुथल पैदा करने वाला दबाव नहीं आया। रिज़र्व बैंक ने अनेक उपायों को कार्यान्वित किया जिसमें मौद्रिक सहजता और नवोन्मेषकारी ऋण-प्रबंधन साधन, यथा, बाजार स्थिरीकरण योजना वापसी खरीद नीलामी और खुला बाजार क्रय को सरकार के सामान्य बाजार उधार कार्यक्रमों के तुल्यकालिक बनाया जाना और एमएसएस जमाशेषों को उन्मुक्त किया जाना शामिल था। वित्तीय प्रणाली में चलनिधि जारी करने के लिए उपयुक्त समय निर्धारित करते हुए, जो सरकारी प्रतिभूतियों की नीलामी के साथ-साथ होता, रिज़र्व बैंक ने सरकार के बाजार उधार कार्यक्रम का सुचारु संचालन सुनिश्चित किया जिसके परिणामस्वरूप पिछले पाँच वर्षों में पहली बार वर्ष 2008-09 के दौरान उधारों की लागत में कमी आयी। वर्ष 2009-10 में राजकोषीय प्रोत्साहन की निरंतर आवश्यकता को प्रतिबिंबित करते हुए, जिसके कारण उधार संबंधी अधिक अपेक्षाओं का सृजन हुआ, रिज़र्व बैंक ने सक्रिय ऋण-प्रबंधन नीति को जारी रखा ताकि ब्याज दरों पर दबाव कम किया जा सके और निजी क्षेत्र की ऋण संबंधी मांग में संभावित ह्रास को रोका जा सके।

पूँजी बाजार और आस्ति कीमतें

5.49 1990 के दशक के प्रारंभ में सुधार की जो प्रक्रिया शुरू हुई उस समय से भारतीय इक्विटी बाजार में महत्त्वपूर्ण सुधार देखने को मिला है। अब भारत के इक्विटी बाजार अंतरराष्ट्रीय बाजारों के साथ तुलनीय हैं। विनियामक और नियंत्रण ढाँचे में परिवर्तन किये जाने से निवेशकों के विश्वास में वृद्धि हुई है। व्यापार एवं निपटान इफ्रास्ट्रक्चर, जोखिम प्रबंधन प्रणालियों और पारदर्शिता के स्तरों में स्पष्ट सुधार हुआ है। इन सुधारों से लेन-देन की लागत कम हुई है और गहनता तथा चलनिधि में सुधार आया है।

5.50 अगस्त 2007 में अमेरिका में सब-प्राइम संकट के प्रारंभ होने के पहले उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में पूँजी बाजारों में भारी उछाल आया। तथापि, सब-प्राइम संकट के कारण बड़ी वित्तीय संस्थाओं की बढ़ती हानियों ने इस प्रवृत्ति में बाधा डाली और अधिकांश उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में पूँजी बाजार का फिसलना आरंभ हो गया। सब-प्राइम बंधक हानियों के कारण अनेक बड़ी वित्तीय संस्थाओं में लोगों का विश्वास भंग हुआ और इन संस्थाओं की शेयर कीमतें, विशेष रूप से निवेश बैंकों की, वर्ष 2007 के उत्तरार्ध से तेजी से नीचे गिरने लगीं। बाद में, उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के पूँजी बाजारों में भी गिरावट आने लगी, जो मुख्यत: विदेशी संस्थागत निवेशकों के अपने हाथ खींचने से हुई।

5.51 यद्यपि भारतीय बैंकों/वित्तीय संस्थाओं का कोई महत्त्वपूर्ण एक्सपोजर सब-प्राइम बाजार में नहीं था, फिर भी भारतीय पूँजी बाजारों

में जनवरी 2008 में वैश्विक गिरावट का प्रभाव दिखाई पड़ा। एफआइआइ द्वारा बाजार छोड़ दिये जाने के अलावा अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में उथल-पुथल ने भी देशी रुझान को कमजोर बनाया और भारतीय पूँजी बाजार में गिरावट को बढ़ावा दिया। प्रमुख घटनाएँ, जिनमें बंधक कंपनियों और अंतरराष्ट्रीय वाणिज्यिक/निवेश बैंकों की हानियाँ शामिल थीं, वर्ष 2008-09 के दौरान उन्नत और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में पूँजी बाजारों में दबाव को बढ़ाती रहीं। भारतीय शेयर बाजारों ने भी इन प्रमुख वैश्विक घटनाओं पर प्रतिक्रिया की, जो भारतीय अर्थव्यवस्था के बढ़े हुए वित्तीय एकीकरण को प्रतिबिंबित करती है।

प्राथमिक बाजार

5.52 पूँजी बाजार का प्राथमिक बाजार खंड में, जो हाल के संकट के पहले के वर्षों में उछाल पर था, वर्ष 2008-09 के दौरान काफी मंदी देखने को मिली (सारणी 5.6)। प्राथमिक बाजार में वर्ष 2008-09 के उत्तरार्ध में मांग के अभाव में आने वाली मंदी वित्तीय बाजारों में अत्यधिक अस्थिरता और अनिश्चितता, वृद्धि में गिरावट एवं निवेश के लिए अनिवार्य मांग तथा मंदी झेल रहे द्वितीयक बाजारों के चलते मंदी की प्रवृत्ति से प्रेरित थी।

सारणी 5.6 : गैर-सरकारी पब्लिक लिमिटेड कंपनियों द्वारा नये पूँजी निर्गम

माह	इक्विटी शेयर		एडीआर/जीडीआर	
	निर्गमों की संख्या	राशि (करोड़ रुपये)	निर्गमों की संख्या	राशि (करोड़ रुपये)
1	2	3	4	5
अप्रैल-08	2	439	4	2,151
मई-08	4	307	3	1,901
जून-08	9	1,285	1	3
जुला-08	5	262	1	30
अग-08	5	368	1	567
सितं-08	7	9,700	0	0
अक्तू-08	3	129	2	35
नवं-08	2	148	0	0
दिसं-08	3	1,370	0	0
जन-09	0	0	0	0
फर-09	1	24	0	0
मार्च-09	4	640	1	102
अप्रै-09	0	0	1	167
मई-09	1	9	0	0
जून-09	4	227	1	48
जुला-09	3	3,179	1	48
अग-09	4	366	4	4,618
सितं-09	12	2,853	1	7,763
अक्तू-09	4	2,023	1	446
नवं-9	3	878	2	1,774
दिसं-09	5	3,586	2	299
जन-10	8	2,101	4	349
फर-10	8	5,274	0	0
मार्च-10	15	4,803	1	455

5.53 निजी क्षेत्र में प्रारंभिक सार्वजनिक निर्गमों में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में काफी कमी आयी। इसी प्रकार, एडीआर/जीडीआर के माध्यम से जुटाये गये संसाधनों में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में तेजी से गिरावट दर्ज की गयी। प्राइवेट प्लेसमेंट, जो हाल के वर्षों में भारतीय कारपोरेटों के लिए निधीयन का प्रमुख वैकल्पिक स्रोत था, भी वर्ष 2008-09 में संकुचित हुआ। तथापि, प्राथमिक बाजार के कार्यकलापों में जून 2009 से तेजी आई और यह जून 2009-10 की अंतिम तिमाही में और प्रखर हुई, जैसाकि आईपीओ से इंगित होता है।

द्वितीयक बाजार

5.54 वैश्विक संकट का घोषित प्रभाव सामान्यत: वित्तीय बाजारों पर और विशेष रूप से शेयर बाजारों पर हुआ, जो सूचीबद्ध कंपनियों की शेयर-कीमतों में द्रुत गिरावट और बाजार पूँजीकरण के माध्यम से हुआ जिसके चलते समष्टिआर्थिक समुच्चयों पर धन-संपदा के प्रभाव का प्रतिकूल परिणाम सामने आया। पिछले दो दशकों से शेयर बाजारों में वैश्वीकरण, सुधार और सूचना प्रौद्योगिकी की प्रगति के कारण द्रुत वृद्धि देखी गयी थी। इस विस्तार का अधिकांश हिस्सा एशिया-पैसिफिक क्षेत्र में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के माध्यम से आया था और इसके परिणामस्वरूप शेयर बाजारों का बाजार पूँजीकरण कम एवं मध्यम आय वाले देशों के जीडीपी के प्रतिशत के रूप में हाल के वर्षों में उच्च आय वाले देशों के लगभग आसपास हो गया था (सारणी 5.7)। बाजार पूँजीकरण में इस द्रुत विस्तार ने वित्तीय माध्यमों को पर्याप्त अनुकूल वातावरण प्रदान किया ताकि वह आघात का संचरण इक्विटी बाजारों में कर सके जिससे इक्विटी बाजार वित्तीय संकट के दौरान प्रमुख माध्यम के रूप में उभर कर सामने आये।

5.55 शेयर बाजारों के बाजार पूँजीकरण ने पूर्वी एशिया, जिसमें चीन शामिल है, और दक्षिण एशिया, जिसमें भारत शामिल है, जैसे क्षेत्रों में, जिन्होंने वर्ष 2003-07 की अवधि के दौरान उच्च आर्थिक वृद्धि दर्ज की थी, उच्च आय वाले ओइसीडी देशों को पीछे छोड़ दिया। वैश्विक संकट से पूर्वी एशिया और पैसिफिक क्षेत्रों में वर्ष 2008 में शेयर बाजारों का बाजार पूँजीकरण डेढ़ दशक पूर्व की स्थिति की

सारमी 5.7 : शेयर बाजारों का बाजार पूँजीकरण : क्षेत्रवार

(जीडीपी का प्रतिशत)

वर्ष	पूर्व एशिया और पैसिफिक	उच्च आय	उच्च आय ओईसीडी	यूरो क्षेत्र	लैटिन अमेरिका और कैरिबियन	न्यून एवं मध्यम आय	न्यूनतर मध्यम आय	मध्यम आय	दक्षिण एशिया	उच्चतर मध्यम आय	विश्व
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
1991	16.4	57.0	56.7	22.5	18.9	18.2	11.2	18.5	16.2	22.5	51.5
1993	55.0	62.6	60.5	26.1	31.1	34.0	28.2	34.4	30.3	38.2	58.3
1997	25.5	89.1	88.6	44.8	29.6	29.9	21.7	30.3	26.7	36.8	78.1
1998	30.9	106.1	106.9	63.0	19.5	23.8	23.0	24.0	20.9	24.8	91.3
1999	42.6	134.2	134.2	83.4	32.8	38.9	33.1	39.6	33.5	45.3	118.3
2000	47.1	116.8	117.1	87.0	31.8	35.5	35.3	36.1	26.1	36.7	102.3
2001	42.2	102.0	101.8	68.3	32.5	32.6	30.2	33.0	19.1	35.7	89.4
2002	35.9	81.6	81.0	50.9	25.4	30.1	27.4	30.4	22.2	33.6	72.5
2003	46.7	98.2	96.9	58.3	29.7	39.6	39.0	40.3	39.5	41.7	87.6
2004	40.2	104.6	102.4	61.0	35.6	42.1	37.7	42.9	48.1	48.1	92.6
2005	40.6	110.5	107.1	62.7	40.5	48.6	42.5	49.5	60.2	56.0	97.5
2006	84.9	122.8	120.9	80.7	49.1	71.7	75.7	72.9	76.9	70.3	111.1
2007	158.9	123.5	119.9	85.3	70.8	112.1	140.4	113.5	133.4	86.5	120.7
2008	58.0	62.9	61.8	38.0	31.9	48.9	53.5	49.5	47.0	45.5	59.2

स्रोत : विश्व विकास संकेतक, विश्व बैंक।

तुलना में 50 प्रतिशत से अधिक गिर गया (सारणी 5.8)। साथ ही, यह गिरावट ओइसीडी देशों से तुलनीय है जो सभी बाजारों में आघात का संचरण करने में वैश्विक एकीकरण की पहल को रेखांकित करता है।

5.56 पूँजी प्रवाह में विपर्यय की स्थिति पैदा होकर उसका उभरती एवं विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की ओर गमन ऐसा प्रमुख कारक था जिसने उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में शेयर बाजारों की गिरावट

सारणी 5.8 : उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में शेयर बाजारों का बाजार पूँजीकरण

(जीडीपी का प्रतिशत)

वर्ष	ब्राजील	चीन	भारत	इंडोनेशिया	मलेशिया	कोरिया	फिलीपीन्स	थाईलैंड	मेक्सिको	रूस
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
1991	10.5	0.5	17.8	5.3	119.3	31.3	25.1	36.4	31.2	0.0
1996	25.8	13.3	31.6	40.0	304.6	24.9	97.4	54.9	32.0	9.5
1997	29.3	21.7	31.3	13.5	93.5	8.9	38.1	15.6	39.0	31.7
1998	19.1	22.7	25.3	23.2	136.6	35.1	54.2	31.2	21.8	7.6
1999	38.8	30.5	41.0	45.8	183.8	88.8	55.3	47.7	32.0	36.9
2000	35.1	48.5	32.2	16.3	124.7	32.2	34.2	24.0	21.5	15.0
2001	33.6	39.5	23.1	14.3	129.3	43.6	58.3	31.5	20.3	24.9
2002	24.6	31.9	25.8	15.3	122.8	43.3	50.8	36.4	15.9	36.0
2003	42.5	41.5	46.6	23.3	152.8	51.2	29.6	85.0	17.5	53.5
2004	49.8	33.1	55.3	28.5	152.3	59.4	33.3	72.3	22.6	45.3
2005	53.8	34.9	68.3	28.5	131.4	85.0	40.6	74.4	28.2	71.8
2006	65.3	91.3	89.5	38.1	150.5	87.8	58.2	71.0	36.7	106.7
2007	102.8	184.1	154.6	49.0	174.4	107.1	71.7	82.9	38.9	116.5
2008	36.6	64.6	53.0	19.2	96.0	53.2	31.2	39.4	21.4	82.2
शेयर बाजार पूँजीकरण की वृद्धि दर										
2008	-56.8	-61.4	-64.4	-53.3	-41.8	-58.1	-49.4	-47.7	-45.7	–
2009	125.9	89.8	101.9	117.6	51.2	77.3	66.0	71.6	89.2	–

स्रोत : विश्व विकास संकेतक, विश्व बैंक, वर्ल्ड फेडरेशन ऑफ एक्सचेंजेज।

में योगदान किया। आइएमएफ के अनुसार उभरती एवं विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को पूँजी प्रवाह में, जो वर्ष 2007 में अपने शिखर पर थी, वर्ष 2008 में 81 प्रतिशत तक गिरावट आयी। हालाँकि प्रत्यक्ष निवेश प्रवाह में स्थिरता दिखाई पड़ी लेकिन अन्य निजी पूँजी प्रवाह में, जिसमें संविभाग प्रवाह, बाह्य कर्ज और सरकारी सहायता शामिल है, तेज गिरावट दर्ज की गयी।

5.57 बड़ी वित्तीय संस्थाओं की बढ़ती हानियों ने, जो बंधक ऋणों में उत्तरोत्तर चूक और बंधक समर्थित एवं अन्य प्रतिभूतियों में अगस्त 2007 से घटते मूल्यन के चलते हुई थीं, अमेरिका और अन्य उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में स्थापित इन संस्थाओं द्वारा डिलिवरेजिंग को उत्प्रेरित किया। बढ़ती डिलिवरेजिंग के साथ आर्थिक मंदी बढ़ने की पृष्ठभूमि में लाभार्जन की संभावनाओं के क्षीण होने से, उन्नत और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में जनवरी 2008 से शेयर बाजारों में गिरावट आने लगी। तथापि, सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स की विफलता के चलते काउंटरपार्टी जोखिमों में तेजी से बढ़ोतरी हुई जिसका प्रदर्शन ऋण चूक स्वैप्स पर स्प्रेड में वृद्धि से हुआ और अंतत: इसने सभी देशों में शेयर बाजारों में गिरावट की गति को तेज कर दिया। हाल के संकट के दौरान शेयर बाजार चारों तरफ धराशायी हुए, बावजूद इसके कि सभी देशों में समष्टिआर्थिक मूलभूत तत्वों में अंतर था।

विश्व में एक समय ही घटित होना

5.58 भारतीय शेयर बाजारों ने भी उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के शेयर बाजारों से, जो वर्तमान वैश्विक संकट के केंद्र थे, संकेत ग्रहण करते हुए प्रतिक्रिया की और 8 जनवरी 2008 के अपने सर्वोच्च स्तर से (बीएसई सेंसेक्स 20,873 पर था) गिरना आरंभ किया, बावजूद इसके कि उनके पास अपेक्षाकृत सुदृढ़ आधार मौजूद थे। वास्तव में, भारतीय शेयर बाजारों में हाल के उतार-चढ़ाव उन्नत और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के तुल्यकालिक बन गये हैं। भारतीय शेयर बाजारों की चुनिंदा घटनाओं की, उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के साथ अंतरकालिक चक्रीय तुल्यकालिकता का अनुमान लगाया गया है और यह हाल के वर्षों में इन सभी देशों में साथ-साथ चला है, सिवाय जापान के (सारणी 5.9)। भारतीय शेयर बाजारों की बढ़ती चक्रीय तुल्यकालिकता से पिछले कुछ वर्षों से भारतीय अर्थव्यवस्था के बढ़ते वित्तीय वैश्वीकरण का पता चलता है जो अधिकतर विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा भारत में पूँजी के निवेश से प्रेरित हुई हैं।

सारणी 5.9 : भारतीय शेयर बाजारों की चुनिंदा देशों के साथ चक्रीय तुल्यकालिकता

देश	2001:मा1 से 2005:मा12	2006:मा1से 2009:मा8
1	2	3
चीन	0.66	0.76
सिंगापुर	0.64	0.86
कोरिया	0.48	0.91
जापान	0.63	0.62
अमेरिका	0.65	0.87

स्रोत: देशवार शेयर कीमतों के संबंध में आँकड़े आईएफएस, आईएमएफ से लिये गये हैं ।

5.59 विदेशी निवेशक सभी देशों में अपने क्रय-विक्रय कार्यकलापों के माध्यम से संविभाग विविधीकरण के उद्देश्यों से निदेशित होकर क्षेत्रीय और वैश्विक शेयर बाजारों के बीच कीमतों के समान उतार-चढ़ाव में योगदान करते हैं (धल, 2009)। इस परिप्रेक्ष्य में, राष्ट्रीय शेयर बाजारों पर वैश्विक शेयर बाजारों के प्रभाव का विश्लेषण करना महत्त्वपूर्ण होगा। एक अनुभवमूलक विश्लेषण से इस बात की पुष्टि हुई है कि भारत, हांगकांग और सिंगापुर सहित एशिया के क्षेत्रीय शेयर बाजारों और वैश्विक वित्तीय बाजारों, यथा, अमेरिका, यूके और जापान, ने स्थानीय मुद्राओं की बनिस्वत् अमरीकी डालर में मापे गये शेयर मूल्य सूचकांकों के संदर्भ में एकल दीर्घकालिक सह-एकीकरण संबंध को समान रूप से अभिव्यक्त किया है (सारणी 5.10)। भारतीय बाजार ने इस एकीकरण प्रक्रिया की

सारणा 5.10 : भारत के शेयर बाजार का क्षेत्रीय और वैश्विक बाजारों के साथ एकीकरण

	शेयर मूल्य सूचकांकों के बीच दीर्घावधि सह-एकीकरण संबंध अमरीकी डालर में				
1	2	3	4	5	6
भारत	1.0000	1.0000	1.0000	1.0000	1.0000
हांगकांग	-1.2407	0	-0.7263	-1.6178	0
	(-5.83)		(-5.35)	(-6.34)	
सिंगापुर	0.4451	-0.0436	0	0.4454	0
	(2.99)	(-0.35)*		(2.50)	
जापान	-0.4353	-0.7451	-0.3645	0	0
	(-3.39)	(-4.40)	(-2.82)		
यूके	-3.7438	-3.9411	-3.4277	-3.9663	-5.9019
	(-11.47)	(-9.01)	(-10.81)	(-10.14)	(-11.41)
यूएस	4.5296	4.3599	3.9150	4.7709	6.2101
	(13.17)	(10.01)	(13.32)	(11.48)	(11.57)
ट्रेंड	-0.0033	-0.0040	-0.0033	-0.0030	-0.0046
	(-17.92)	(-17.05)	(-17.31)	(-13.69)	(-12.87)
इंटरसेप्ट	-2.2409	-2.5587	-1.7563	-2.5748	-5.6351
क्षेत्रीय बाजारों के गुणांकों पर प्रतिबंध: चाइ स्क्वेयर स्टैटिस्टिक (महत्व)		16.83 (0.00)	7.03 (0.01)	6.26 (0.01)	30.04 (0.00)

* 5 प्रतिशत स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं।

टिप्पणी : 1. स्वाभाविक लोगैरिद्म मान पर अमरीकी डालर में शेयर मूल्य सूचकांकों पर अनुमान आधारित है ।

2. कोष्ठक में दिये गये आँकड़े उपगामी 'टी' स्टैटिस्टिक का संकेत करते हैं ।

स्रोत : ढाल (2009)।

चाबी अपने पास रखी है। यह बात इस विश्लेषण से स्पष्ट हुई कि, भारत को छोड़ कर, अन्य पाँच शेयर बाजारों ने सह-एकीकरण संबंध को अभिव्यक्त नहीं किया। दीर्घकालिक सह-एकीकरण वेक्टर के गुणांक ने यह दर्शाया कि वैश्विक बाजारों का भारतीय शेयर बाजार पर प्रभाव क्षेत्रीय बाजारों के प्रभाव की तुलना में अधिक स्पष्ट था। फोरकास्ट एरर वैरिएंस डिकंपोज़िशन के अनुसार वैश्विक और क्षेत्रीय बाजार एक साथ मिलकर भारतीय शेयर बाजार में अधिकांश परिवर्तन के लिए जिम्मेवार थे।

वैश्विक गतिविधियाँ और इक्विटी कीमतें

5.60 विदेशी संस्थागत निवेशकों ने जनवरी 2008 से भारतीय शेयर बाजारों से हटना शुरू किया, जो उनके बड़े निवल ऋणात्मक निवेशों से स्पष्ट है और वैश्विक डिलिवरेजिंग को प्रतिबिंबित करता है। विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा भारतीय शेयर बाजारों पर दिया गया विक्रय दबाव अक्तूबर 2008 में तेज हो गया, जो लेहमैन ब्रदर्स की विफलता के बाद अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में बढ़ी हुई उथल-पुथल का परिणाम था और जब शेयर बाजारों में अचानक बहुत हद तक गिरावट दर्ज की गयी। भारतीय शेयर बाजारों ने वर्तमान संकट के दौरान सभी प्रमुख वैश्विक घटनाओं के प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की है (बॉक्स V.3)।

5.61 डिलिवरेजिंग प्रक्रिया के अंग के रूप में विदेशी संस्थागत निवेशकों के बाजार से हाथ खींचने और अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में प्रतिकूल घटनाओं के चलते बाजार के रुझान में कमी आने के साथ भारतीय अर्थव्यवस्था पर अन्य प्रभाव निर्यातों के धराशायी होने, वित्तीय स्थितियों के कठोर होने और अक्तूबर 2008 से वैश्विक संकट से पैदा हुई तीव्र आर्थिक मंदी की पृष्ठभूमि में आई अनिश्चितता के रूप में थे। वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही के आरंभ से संपदा-क्षेत्र पर प्रभाव पड़ने की पृष्ठभूमि में भारतीय कारपोरेटों की लाभार्जन संभावनाओं के मंद पड़ने से भारतीय शेयर बाजारों की हानि बढ़ गयी। इन सभी कारकों ने फुटकर और संस्थागत निवेशकों के भरोसे को प्रभावित

बॉक्स V.3
प्रमुख वैश्विक घटनाएँ और भारतीय शेयर बाजारों की प्रतिक्रिया

वर्तमान वैश्विक संकट, जो अमेरिका में अगस्त 2007 में सब प्राइम संकट के उपस्थित होने के साथ आरंभ हुआ, वित्तीय बाजारों से जुड़ी विभिन्न घटनाओं के घटित होने से गहराता गया। इनमें से कुछ घटनाओं और उनके प्रति भारतीय शेयर बाजारों की प्रतिक्रिया पर नीचे चर्चा की गयी है।

- जेपी मॉर्गन और सिटीबैंक ने मार्च 2008 के आरंभ में घोषणा की कि उन्हें आस्ति मूल्यों में और अन्य विदेशी लिखतों में तीव्र गिरावट के कारण भारी नुकसान हुआ है। इसके अतिरिक्त, बेयर स्टर्न्स के पास मध्य मार्च 2008 में चलनिधि की घोर कमी हो गयी जिसका कारण था बढ़ता हुआ संचयी मूल्यन नुकसान। अमेरिकी सरकार ने बेयर स्टर्न्स के जेपी मॉर्गन चेज़ अधिग्रहण को 16 मार्च 2008 को सुसाध्य बनाया। बीएसई सेंसेक्स 17 मार्च 2008 को लुढ़क कर 14,809 पर आ गया।

चार्ट : भारतीय शेयर बाजारों में उतार-चढ़ाव

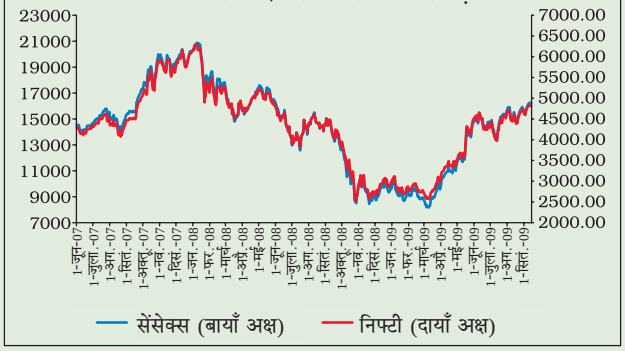

- अमेरिकी सरकार द्वारा प्रायोजित बंधक गारंटीकर्ता फैन्नी माए और फ्रेडी मैक, जिन्होंने अमेरिकी गृह बंधक ऋणों में 12 ट्रिलियन अमरीकी डालर से अधिक की राशि की गारंटी दे रखी थी, के आस्ति मूल्यन में जुलाई 2008 में घोर गिरावट आयी। बीएसई सेंसेक्स, इस घटना के स्पिलओवर की प्रतिक्रिया में 16 जुलाई 2008 को गिरकर 12,576 पर आ गया, जो अंत मार्च 2008 के स्तर से 19.6 प्रतिशत और 8 जनवरी 2008 के सर्वोच्च स्तर से 39.8 प्रतिशत कम था।
- लेहमैन ब्रदर्स, जो अमेरिका के सबसे बड़े निवेश बैंकों में से एक था, ने 15 सितंबर 2008 को दिवाला-रक्षा हेतु अर्जी दी। तथापि, दूसरे प्रमुख निवेश बैंक, मेरिल लिंच को बैंक ऑफ अमेरिका में विलय करके बचा लिया गया। भारतीय शेयर बाजार ने आगे और गिरना आरंभ किया और बीएसई सेंसेक्स 30 सितंबर 2008 को गिरकर 12,860 पर आ गया।
- अमेरिका के फेडरल रिज़र्व ने 300 बिलियन अमरीकी डालर मूल्य की दीर्घकालिक खजाना प्रतिभूतियें की छह महीने की अवधि में खरीदने की योजना की घोषणा 18 मार्च 2009 को की।
- जी-20 के देशों ने एक विज्ञप्ति जारी कर 6 अप्रैल 2009 को यह वचन दिया कि उनकी सरकारों द्वारा लोगों में भरोसा और वृद्धि को बहाल करने के लिए संयुक्त प्रयास किये जायेंगे जिसमें वित्तीय प्रणाली को मजबूत किये जाने के उपाय शामिल थे। बाजार वर्ष 2009-10 के आरंभ से इस संकट से उबर रहा है।

किया और शेयर बाजारों में मार्च 2009 तक निरंतर मंदी का रुख बना रहा (सारणी 5.11)।

5.62 बीएसई सेंसेक्स 8 जनवरी 2008 के अपने सर्वोच्च स्तर 20,873 से लगभग 38 प्रतिशत फिसलकर अंत सितंबर 2008 में 12,860 के स्तर पर आ गया, जो संकट के आरंभिक प्रभाव को प्रतिबिंबित करता है। बाद में यह अंत सितंबर 2008 के स्तर से 37 प्रतिशत गिरकर 3 मार्च 2009 को 8,160 के नये न्यून स्तर पर आ गया। बीएसई सेंसेक्स में सर्वोच्च स्तर से नये न्यून स्तर तक यह गिरावट 61 प्रतिशत तक हुई। भारतीय शेयर बाजार में अस्थिरता भी वर्ष 2008 के आरंभ से वैश्विक शेयर बाजार में अस्थिरता के साथ-साथ बढ़ती गयी। दैनिक शेयर बाजार सूचकांकों (बीएसई सेंसेक्स और निफ्टी) के मानक विचलन के संदर्भ में मापी गयी अस्थिरता जनवरी 2008, अक्तूबर 2008 और मई 2009 में तेजी से बढ़ी, जो वैश्विक घटनाओं और देशी गतिविधियों को प्रतिबिंबित करती है (सारणी 5.9)। इसकी पुष्टि उस समय भी हुई. जब अस्थिरता को गार्च (1,1) द्वारा मापा गया (चार्ट V.15)।

5.63 शेयर बाजार में तीव्र गिरावट प्रमुख संकेतकों में भी देखने को मिली। बीएसई सेंसेक्स और निफ्टी, दोनों के पी/ई अनुपात तथा कीमत-बही मूल्य अनुपात वर्ष 2008-09 के दौरान बहुत कम हो गये (सारणी 5.12)। दोनों बाजारों का बाजार पूँजीकरण, जिसमें विगत 2-3 वर्षों में तेज वृद्धि हुई थी, भी पूर्ववर्ती वर्ष की तुलना में वर्ष 2008-09 के दौरान बहुत मंद पड़ गया।

5.64 वर्ष 2009-10 के दौरान शेयर बाजारों की अस्थिरता में कमी आयी और सभी देशों में आस्ति-कीमतें अपने पूर्व के न्यून स्तर से उबर गयीं। भारतीय बाजारों में भी, विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा निवल खरीद की स्थिति बनी और फुटकर निवेशकों तथा म्यूचुअल फंडों ने भी, पहले की स्थिति के विपरीत, मार्च 2009 से लगातार खरीद आरंभ की। दोनों शेयर बाजारों के कीमत-लाभार्जन तथा कीमत-

सारणी 5.11 : बीएसई और निफ्टी सूचकांकों की प्रवृत्ति

माह	निफ्टी	बीएसई सेंसेक्स	एफआईआई निवेश (निवल) (करोड़ रुपये)	म्यूचुअल फंड निवेश (निवल) (करोड़ रुपये)	आईआईपी (प्रतिशत वृद्धि)
1	2	3	4	5	6
जन-08	5756	19326	-17,227	7,703	6.2
फर-08	5202	17728	4,883	514	9.5
मार्च-08	4770	15838	125	-1,971	5.5
अप्रै-08	4902	16291	979	-112	6.2
मई-08	5029	16946	-4,672	64	4.4
जून-08	4464	14997	-10,578	3,179	5.4
जुला-08	4125	13716	-1,012	1,412	6.4
अग-08	4417	14722	-7,937	-369	1.7
सितं-08	4207	13943	-2,066	2,292	6.0
अक्तू-08	3210	10550	-14,249	1,432	0.1
नवं-08	2835	9454	-3,362	-373	2.5
दिसं-08	2896	9514	1,319	341	-0.2
जन-09	2854	9350	-4,250	-864	1.0
फर-09	2819	9188	-2,690	-1,496	0.2
मार्च-09	2802	8995	269	1,477	0.3
अप्रै-09	3360	10911	7,384	39	1.1
मई-09	3958	13046	20,607	2,291	2.1
जून-09	4436	14782	3,225	839	8.3
जुला-09	4343	14635	11,625	1,826	7.2
अग-09	4571	15415	4,029	570	10.6
सितं-09	4859	16338	19,939	-2,335	9.3
अक्तू-09	4994	16826	8,304	-5,194	10.2
नवं-09	4954	16684	5461	-696	12.0
दिसं-09	5100	17090	10367	1762	17.7
जन-10	5156	17260	-1137	-1311	16.3
फर-10	4840	16184	2114	-697	15.1
मार्च-10	5178	17303	20318	-4082	13.9
अप्रै-10	5295	17679	8416	-1410	17.6
मई-10	5053	16845	-9175	99	-

चार्ट V.15 : शेयर बाजारों में अस्थिरता

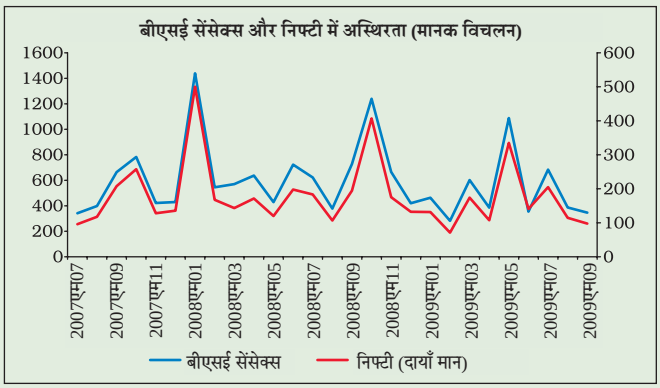

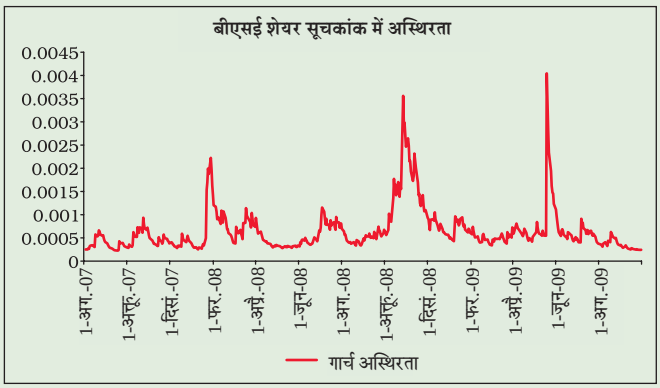

सारणी 5.12 : शेयर बाजार के संकेतक

संकेतक	बीएसई						एनएसई					
	2000-01	2006-07	2007-08	2008-09	2009-10	2010-11 (अप्रै-मई)	2000-01	2006-07	2007-08	2008-09	2009-10	2010-11 (अप्रै-मई)
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
1 बीएसई सेंसेक्स/ एस एंड पी सीएनएक्स निफ्टी												
(i) अंत अवधि	3,604	13,072	15,644	9,709	17,127	16,945	1,148	3,822	4,735	3,021	5,249	5,086
(ii) औसत	4,270	12,278	16,569	12,366	15,585	17,251	1,335	3,572	4,897	3,731	4,658	5,171
2 घट-बढ़ गुणांक	8.8	11.1	13.7	24.2	11.9	3.0	7.5	10.4	14.5	23.2	11.3	2.9
3 कीमत-उपार्जन अनुपात (अंत अवधि)*	23.9	20.7	20.1	13.7	21.32	20.40	20.4	19.5	20.6	14.3	22.3	21.3
4 कीमत-बही मूल्य अनुपात (अंत अवधि)*	3.6	5.1	5.2	2.7	3.9	3.5	4.2	4.9	5.1	2.5	3.7	3.6
5 आय * (प्रतिशत प्रति वर्ष) (अंत अवधि)	1.3	1.3	1.1	1.8	1.10	1.12	1.2	1.3	1.1	1.9	0.94	0.97
6 बाजार पूँजीकरण- जीडीपी अनुपात की तुलना में (प्रतिशत)@	25.8	85.5	113.1	59.0	106.5	87.8	28.9	81.6	107.0	55.4	103.8	85.5

*: बीएसई सेंसेक्स में शामिल 30 क्रिप और एस एंड पी सीएनएक्स निफ्टी में शामिल 50 क्रिप पर आधारित।
@: अंत अवधि की स्थिति के अनुसार।
स्रोत : बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज लि. (बीएसई) और नैशनल स्टॉक एक्सचेंज ऑफ इंडिया लि. (एनएसई)।

बही मूल्य अनुपात भी अंत मार्च 2009 के स्तर से अंत मार्च 2010 में काफी बढ़ गये तथा बाजारों में तेजी से उछाल भी आया। इसी प्रकार, शेयर बाजार के पूँजीकरण में वापस उछाल आया और, जीडीपी के प्रतिशत के रूप में, अंत मार्च 2010 में वह 100 प्रतिशत से अधिक हो गया, जो अंत मार्च 2008 में प्राप्त स्तर के लगभग बराबर है। भारतीय शेयर बाजारों के संकट से उबरने में अनेक कारकों ने योगदान किया, यथा, नीति दरों में कटौती किया जाना, कारपोरेटों और बैंकों के वर्ष 2009-10 के दौरान सकारात्मक कार्य-परिणाम, आम चुनाव के बाद राजनीतिक स्थिरता का होना, और वैश्विक अर्थव्यवस्था में स्थिरता का आना।

शेयर बाजार के चालक

5.65 दीर्घावधि में, सूचना संतुलित प्रतीत होती है और इसीलिए शेयर बाजार के उतार-चढ़ावों को आर्थिक मूलभूत तत्वों के अनुरूप बनाया जाता है। उपलब्ध सूचना की प्रकृति के अलावा, कभी-कभी निवेशकों में देशी या वैश्विक कारकों से प्रेरित अंधानुकरण की प्रवृत्ति इन मूलभूत तत्वों से ज्यादा काम करती है और अल्पावधि में शेयर बाजार के उतार-चढ़ाव को नियंत्रित करती है। इसी प्रकार, अन्य कारक, यथा, समर्थक चलनिधि, पूँजी प्रवाह, और नियंत्रण, बहुत हद तक शेयर बाजारों में उतार-चढ़ाव के क्रम को प्रभावित करते हैं। निदर्शनात्मक रूप में, हाल के संकट के पहले विश्व की सभी अर्थव्यवस्थाओं में समंजनकारी मौद्रिक नीति और बड़े पूँजी प्रवाह के चलते चलनिधि की सुगमता दिखाई पड़ी थी, और उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में शेयर बाजारों में द्रुत गति से प्रगति दिखाई पड़ी थी। जैसी कि ऊपर चर्चा की गयी है, पिछले कुछ वर्षों में सभी देशों के शेयर बाजार अधिक तुल्यकालिक हो गये हैं, जिनमें सीमापार पूँजी-प्रवाह में वृद्धि हुई है, विशेष रूप से के लिए। हाल के संकट के दौरान भी विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा डिलिवरेजिंग के साथ अन्य कारक, यथा, आर्थिक मंदी, गिरते निर्यात, संकटग्रस्त वित्तीय संस्थाओं के प्रति एक्सपोज़र और विदेशी आस्तियाँ, शेयर बाजारों में गिरावट लाने में प्रेरक बने हैं।

5.66 भारत में भी, यद्यपि विदेशी प्रत्यक्ष निवेश में स्थिरता दिखाई पड़ी, संविभाग-प्रवाह में कमी ने शेयरों की कीमतों में गिरावट में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। वीएआर मॉडल के ढाँचे के भीतर एक अनुभवमूलक विश्लेषण ने यह दर्शाया कि अमेरिकी औद्योगिक उत्पादन वृद्धि और देशी ब्याज दरों (मांग मुद्रा दर) तथा विदेशी ब्याज दरों (3-महीने की लिबॉर दर) के बीच के अंतर द्वारा की गई माप के अनुसार अन्य देशों की वास्तविक अर्थव्यवस्था की गतिविधियों द्वारा ग्रैंजर-प्रेरित थे (सारणी 5.13)। विभेदक ब्याज दरें अंतरपणन अवसर को प्रतिबिंबित करती हैं। पुन:, एक बाइवैरिएट वीएआर मॉडल से यह प्रकट हुआ कि विदेशी प्रत्यक्ष निवेश प्रवाहों से भारतीय शेयर बाजार की ओर निवेश बढ़ने के पीछे एक महत्त्वपूर्ण ग्रैंजर-प्रेरक संबंध था। बीएसई सूचकांक से लेकर विदेशी प्रत्यक्ष निवेश प्रवाह तक के फीडबैक संबंधी कार्यकारण संबंध भी महत्त्वपूर्ण था, भले ही महत्त्व में इसकी हिस्सेदारी 10 प्रतिशत थी। विदेशी प्रत्यक्ष निवेश प्रवाह में घट-बढ़ से भारतीय शेयर बाजार में लगभग 35 प्रतिशत घट-बढ़ का स्पष्टीकरण मिल पाया।

सारणी 5.13 : एफआईआई प्रवाह और भारत के शेयर बाजार : कारण संबंध

नल्ल हाइपोथेसिस	चाइ-स्क्वेयर स्टैटिस्टिक (महत्व का स्तर)	परिणाम : नल्ल को अस्वीकार/स्वीकार करें
1	2	3
अमेरिका की वास्तविक आर्थिक वृद्धि भारत को एफआईआई प्रवाह का कारण नहीं बनती	11.59 (0.02)	अस्वीकार
भारत को एफआईआई प्रवाह अमेरिका की वास्तविक आर्थिक वृद्धि का कारण नहीं बनती	6.79 (0.15)	स्वीकार
ब्याज दर विभेदक भारत को एफआईआई प्रवाह का कारण नहीं बनता	7.91 (0.09)	अस्वीकार
भारत को एफआईआई प्रवाह ब्याज दर विभेदक का कारण नहीं बनते	3.01 (0.56)	स्वीकार
एफआईआई प्रवाह में घट-बढ़ बीएसई संवेदनशील सूचकांक में घट-बढ़ के कारण नहीं बनते	16.79 (0.00)	अस्वीकार
बीएसई संवेदनशील सूचकांक में घट-बढ एफआईआई प्रवाह में घट-बढ़ के कारण नहीं बनते	9.51(0.09)	अस्वीकार

5.67 भारतीय शेयर बाजार के चालकों का पता करने के लिए एक अन्य प्रयोग किया गया। इस संबंध में एक सामान्य वेक्टर ऑटो रिग्रेसन (वीएआर) ढाँचा तैयार किया गया, जिसमें वर्ष 2001 से लेकर 2009 तक के मासिक आँकड़ों का अनुमान बीएसई सेंसेक्स, निवल विदेशी प्रत्यक्ष निवेश, म्यूचुअल फंडों द्वारा निवल निवेश, मुद्रा आपूर्ति (एम3), और औद्योगिक उत्पादन सूचकांक के साथ किया गया। चोलेस्की वैरिएंट डिकंपोजिशन बताता है कि, प्रथम अवधि में, विदेशी प्रत्यक्ष निवेशकों द्वारा निवल निवेश से बीएसईएस में 4 प्रतिशत के घट-बढ़ के संबंध में स्पष्टीकरण प्राप्त होता है, जो 12वीं अवधि के अंत तक लगभग 35 प्रतिशत बढ़ जाता है, लेकिन उसके बाद धीरे-धीरे घटने लगता है। दूसरी ओर, म्यूचुअल फंडों द्वारा किये गये निवल निवेश, आइआइपी और मुद्रा आपूर्ति के कारण भी बीएसईएस में घट-बढ़ 12वीं अवधि के अंत तक क्रमश: 4 प्रतिशत, 6 प्रतिशत और 5 प्रतिशत बढ़ जाता है।

5.68 वीएआर ढाँचे में बीएसईएस और एनएफआइआइ, एनएमएफ, आइआइपी तथा एम3 के बीच ग्रैंजर कारणत्व अनुमान भी यह बताता है कि एनएफआइआइ और एम3 से बीएसईएस तथा बीएसईएस से एनएमएफ एवं आइआइपी तक एकदिशीय कारणत्व विद्यमान है। यह दर्शाता है कि एफआइआइ निवेश और मुद्रा आपूर्ति भारत में शेयर बाजार में उतार-चढ़ाव को पर्याप्त प्रभावित करते हैं; जबकि यह संबंध म्यूचुअल फंडों द्वारा किये गये निवेशों के मामले में अलग होता है जिसमें शेयर बाजार उनमें घट-बढ़ के कारण बनते हैं। उपर्युक्त अनुभवों के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि एफआइआइ भारतीय शेयर बाजारों में उतार-चढ़ाव के एक बड़े हिस्से को प्रेरित करते हैं।

आस्ति कीमतें और वास्तविक कार्यकलाप

5.69 आस्ति कीमतें निजी उपभोग मांग को तीन प्रमुख माध्यमों से प्रभावित कर सकती हैं। पहला, जीवन चक्र परिकल्पना के अनुसार, चूँकि उपभोग कारणों के जीवन-पर्यंत के संसाधनों का काम है, अत: वित्तीय (उदाहरणार्थ, शेयर कीमतें) और वित्तेतर (उदाहरणार्थ, आवास कीमतें) आस्तियों की कीमतों में परिवर्तन उपभोग को पर्याप्त प्रभावित कर सकते हैं। दूसरा, वास्तविक आस्ति कीमतें भी प्रत्याशित भावी आय-वृद्धि का संकेत करती हैं। यह मानते हुए कि उपभोग किसी अवधि में एजेंट की भावी आय के बारे में प्रत्याशाओं से प्रभावित होगा, आस्ति कीमतों में परिवर्तन वर्तमान उपभोग पर प्रभाव डाल सकते हैं। तीसरा, परिवारों को बाह्य वित्त की उपलब्धता और लागत उनकी निवल मालियत के बारे में ऋणदाता के मूल्यांकन पर निर्भर कर सकती है। चूँकि आस्ति कीमतों में परिवर्तन के कारण परिवारों की निवल मालियत में परिवर्तन हो सकता है, अत: प्रत्याशित आय में उतार-चढ़ाव का उपभोग पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव हो सकता है।

5.70 निवेश पर आस्ति कीमतों का प्रभाव तीन माध्यमों से हो सकता है। पहला, आस्ति कीमतों में गिरावट से वर्तमान पूँजी की तुलना में नयी पूँजी की लागत बढ़ सकती है। दूसरा, चूँकि यह मान लिया जाता है कि आस्ति कीमतें भावी वृद्धि की संभावनाओं के बारे में सूचना को अंतर्विष्ट करती हैं, अत: आस्ति कीमतों में परिवर्तन वर्तमान निवेश संबंधी कार्यकलाप को प्रभावित करेगा (मुलिन्स और वाधवानी, 1989)। तीसरा, ऋण के माध्यम से किसी फर्म की निवल मालियत (शेयर कीमत आघात से उद्भूत) में उतार-चढ़ाव फर्म के लिए वित्तपोषण प्रीमियम को प्रभावित करते हैं। गिरती आस्ति कीमतों से फर्मों और बैंकों के तुलन-पत्र में ह्रास की स्थिति पैदा होगी, और इसीलिए, उधार की मात्रा में कमी आयेगी और पूँजी की लागत बढ़ेगी।

5.71 आस्ति कीमत माध्यम का एक प्रमुख तत्व है पूंजी प्रवाह, जिसने काफी महत्त्व अर्जित किया है और जो आस्तियों की मांग को प्रभावित करता है और उसके बाद आस्ति की कीमतों को भी प्रभावित करता है। बाजार के अन्य खंडों पर भी स्पिलओवर प्रभाव हो सकता है, यथा, आवास बाजार पर। बड़े पूँजी अंतर्वाह से अर्थव्यवस्था में

चलनिधि की भारी वृद्धि हो सकती है जिससे आस्तियों की कीमतों में वृद्धि हो सकती है। पूँजी अंतर्वाह को निवेश में और अर्थव्यवस्था में वास्तविक कार्यकलाप में लगाये जाने से आस्तियों की कीमतों में भी तीव्र वृद्धि हो सकती है जिससे जोखिम-बोध में कमी आ सकती है। प्रतिकूल समाचारों या वित्तीय प्रवाह में विपर्यय के रूप में प्रतिकूल बाह्य आघात अनेक प्रकार से देशी आस्तियों की कीमतों को प्रभावित करते हैं। वस्तु बाजार की तुलना में वित्तीय बाजारों के बृहत्तर एकीकरण को देखते हुए प्रमुख बाजारों में इक्विटी कीमतों पर प्रतिकूल आघात तेजी से फैल सकता है।

5.72 गिरते हुए शेयर बाजार का समष्टिआर्थिक प्रभाव अनेक प्रकार से प्रकट हुआ। भारत में परिवारों की कुल बचत की तुलना में इक्विटियों में पारिवारिक बचत के हिस्से में गिरावट आयी। इक्विटियों में गिरती पारिवारिक बचत के साथ संविभाग प्रवाह और शेयरों की कीमतों में गिरावट ने प्राइवेट कंपनियों द्वारा पूंजी जुटाने के नये निर्गमों को प्रभावित किया। तदनुसार, सकल देशी पूँजी निर्माण में नये पूँजी निर्गमों के हिस्से में वर्ष 2008-09 में गिरावट आयी।

5.73 देशी अर्थव्यवस्था पर वैश्विक वित्तीय आघात के प्रभाव को आँकने के लिए भारत में वास्तविक कार्यकलाप पर शेयर बाजार के प्रभाव को समझना महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इक्विटी कीमतें देशी अर्थव्यवस्था को धन-संपदा प्रभाव और कारपोरेट तुलन-पत्र, दोनों के माध्यम से प्रभावित करती हैं। अप्रैल 1994 से जुलाई 2009 तक के मासिक आँकड़ों का उपयोग करते हुए यह पाया गया कि शेयरों पर वास्तविक प्रतिलाभ और औद्योगिक उत्पादन की वृद्धि - दोनों का एक ही कारण था जिसके अंतर्गत शेयरों पर प्रतिलाभ ने औद्योगिक उत्पादन पर पर्याप्त ग्रैंजर-प्रभाव डाला (सारणी 5.14)। यह कार्य-कारण संबंध उद्योगों, यथा, मूलभूत वस्तुएँ, पूँजीगत वस्तुएँ और मध्यवर्ती वस्तुएँ, के संबंध में वास्तविक स्टॉक प्रतिलाभ के प्रभाव से व्युत्पन्न हुआ। ये परिणाम निवेश कार्यकलापों पर धन-संपदा प्रभाव के संदर्भ में शेयर बाजारों की भूमिका को और इस प्रकार, पूँजीगत वस्तुओं और मध्यवर्ती वस्तुओं जैसे पूँजी प्रधान उद्योगों की उत्पादन वृद्धि को प्रतिबिंबित करते हैं।

5.74 सारांशत:, यह कहा जा सकता है कि भारतीय पूँजी बाजार भी वर्तमान वैश्विक संकट से जनवरी 2008 से प्रभावित हुए जिसका बड़ा कारण था विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा विक्रय-दबाव के

सारणी 5.14 : वास्तविक शेयर प्रतिलाभ और औद्योगिक उत्पादन वृद्धि पेयरवाइज ग्रैंजर कॉजेलिटी टेस्ट

नल्ल पाइपोथेसिस	एफ-स्टैटिस्टिक	पी-मान
1	2	3
जीआइआइपी बीएसईआर-आइएनएफ का ग्रैंजर कारण नहीं बनता	1.48	0.136
बीएसईआर-आइएनएफ जीआइआइपी का ग्रैंजर कारण नहीं बनता	2.47	0.006
जीबीजी बीएसईआर-आइएनएफ का ग्रैंजर कारण नहीं बनता	1.85	0.045
बीएसईआर-आइएनएफ जीबीजी का ग्रैंचर कारण नहीं बनता	2.20	0.014
जीकेजी बीएसईआर-आइएनएफ का ग्रैंजर कारण नहीं बनता	1.29	0.230
बीएसईआर-आइएनएफ जीकेजी का ग्रैंजर कारण नहीं बनता	1.80	0.053
जीआइजी बीएसईआर-आइएनएफ का ग्रैंजर कारण नहीं बनता	0.79	0.660
बीएसईआर-आइएनएफ जीआइजी का ग्रैंजर कारण नहीं बनता	2.48	0.006
जीसीजी बीएसईआर-आइएनएफ का ग्रैंजर कारण नहीं बनता	1.18	0.301
बीएसईआर-आइएनएफ जीसीजी का ग्रैंजर कारण नहीं बनता	1.12	0.346
जीसीडीजी बीएसईआर-आइएनएफ का ग्रैंजर कारण नहीं बनता	1.39	0.176
बीएसईआर-आइएनएफ जीसीडीजी का ग्रैंजर करण नहीं बनता	0.76	0.690
जीसीएनडीजी बीएसईआर-आइएनएफ का ग्रैंजर कारण नहीं बनता	1.20	0.286
बीएसईआर-आइएनएफ जीसीएनडीजी का ग्रैंजर कारण नहीं बनता	1.28	0.238

जीआइआइपी = आइआइपी में वृद्धि, बीएसईआर-आइएनएफ = शेयर मूल्यों में वास्तविक वृद्धि, जीबीजी = मूलभूत वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि, जीकेजी = पूँजीगत वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि, जीआइजी = मध्यवर्ती वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि, जीसीडीजी = उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि, जीसीएनडीजी = उपभोक्ता गैर-टिकाऊ वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि

अतिरिक्त अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में उथल-पुथल के कारण देशी रुझान का कमजोर होना। भारतीय शेयर बाजारों ने संकट की अवधि के दौरान प्रमुख वैश्विक घटनाओं पर प्रतिक्रिया की जिससे भारतीय अर्थव्यवस्था का और अधिक एकीकरण प्रतिबिंबित होता है। जनवरी 2008 से लेकर सितंबर 2008 तक देखी गयी तीव्र गिरावट में उस अवधि में पुन: वृद्धि हुई जब लेहमैन ब्रदर्स विफल हुआ और शेयर बाजारों में मार्च 2009 में और गिरावट आयी। विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा डिलिवरेजिंग के साथ अन्य कारकों, यथा, आर्थिक मंदी, गिरते निर्यात और कमजोर रुझान, ने वर्तमान संकट के दौरान शेयर बाजारों में बड़ी गिरावट को प्रेरित किया। गिरती आस्ति कीमतों ने भी वास्तविक कार्यकलापों, यथा उपभोग और निवेश को प्रभावित किया। अनुभवमूलक परिणाम यह बताते हैं कि विदेशी संस्थागत निवेशक बहुत हद तक भारतीय शेयर बाजारों को प्रेरित करते रहे हैं।

III. बैंकिंग क्षेत्र, म्यूचुअल फंड और गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियाँ

5.75 अधिकांश उभरती अर्थव्यवस्थाओं की तरह भारत के बैंकिंग क्षेत्र ने वर्तमान वैश्विक वित्तीय अस्तव्यस्तता के दौरान लचीलेपन का प्रदर्शन किया। भारतीय बैंकों के तुलनपत्र में मजबूती और लचीलापन

उनके भलीभाँति पूँजीकृत होने और उन्नत देशों के विपरीत, जहाँ बैंकिंग क्षेत्र का व्यापक एक्सपोजर सब-प्राइम बंधक बाजारों में (खासकर अमेरिका में) और अन्य सुनियोजित विदेशी उत्पादों में था, उनका बड़ा एक्सपोजर देशी परंपरागत आस्तियों में था। इसके अतिरिक्त, भारत में बैंकिंग क्षेत्र पर, उन्नत देशों के विपरीत, वाणिज्यिक बैंक हावी हैं, न कि निवेश बैंकिंग।

5.76 वैश्विक वत्तीय संकट का भारतीय बैंकिंग और वित्तीय प्रणाली पर प्रत्यक्ष प्रभाव लगभग नगण्य था क्योंकि इसका जोखिम वाली आस्तियों और डेरिवेटिवों में सीमित एक्सपोज़र था और विदेशी बैंकों की उपस्थिति यहाँ अपेक्षाकृत कम थी (थोरात, 2009)। प्रथम दृष्ट्या, भारतीय बैंकों को दबाव इसलिए झेलना पड़ा क्योंकि विदेशी निवेशक अर्थव्यवस्था से बाहर हो गये और इसलिए चलनिधि का संकट उपस्थित हो गया। यहाँ उधार लेने या उधार देने के लिए अचानक धन कम उपलब्ध था। मध्य सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स की विफलता के ठीक बाद वाली अवधि में कठोर वैश्विक चलनिधि की स्थिति ने ऋण चक्र में बदलाव करने के अलावा वित्तीय प्रणाली की जोखिम विमुखता में वृद्धि की और बैंकों को उधार देने के बारे में सतर्क बना दिया (सुब्बाराव, 2009)। इसके साथ ही, कारपोरेटों और फुटकर निवेशकों ने म्यूचुअल फंडों पर शोधन-जन्य दबाव डाला और इसका कुछ अंश एनबीएफसी की ओर गया क्योंकि वे निधियों के लिए म्यूचुअल फंडों पर निर्भर करती थीं। इस प्रकार अपने तुलन-पत्रों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ने देने के बावजूद बैंक और अन्य वित्तीय संस्थाएँ वर्ष 2008-09 के दौरान संकट के अप्रत्यक्ष स्पिलओवर से प्रभावित हुईं।

5.77 भारतीय बैंकों की जोखिम भारित परिसंपत्ति की तुलना में पूँजी अनेक उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं से अधिक थी जिससे यह संकेत मिलता है कि भारतीय बैंक सभी देशों में अपने समान संस्थाओं की तुलना में पूँजीकरण की दृष्टि से अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति में थे। सभी बैंक अंत मार्च 2009 को 9 प्रतिशत का पूँजी पर्याप्तता मानदंड पूरा करते थे। इसी प्रकार, अनेक उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाआ और उन्नत देशों के बैंकों की तुलना में भारतीय बैंकों के अनर्जक ऋणों की मात्रा वर्ष 2008 में न्यून थी। तथापि, भारतीय बैंकों की आस्ति पर प्रतिलाभ की दर अधिकांश उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाआ के बैंकों की तुलना में कम थी, लेकिन वह उन्नत देशों की तुलना में ऊँची थी। कुल जमाराशियों की तुलना में मीयादी जमाराशियों का अनुपात सभी बैंक समूहों में वर्ष 2008-09 के दौरान सुधरा जिससे यह संकेत मिलता है कि अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में अधिक उथल-पुथल होने के बावजूद बैंकों में जनता के भरोसे में सुधार हुआ। तथापि, बैंकों द्वारा अपने संविभागों में धारित अर्थसुलभ आस्तियों का हिस्सा वर्ष 2008-09 के दौरान थोड़ा कम हुआ, सिवाय बड़े बैंकों के, जिनके लिए यह लगभग पिछले वर्ष के स्तर पर था (सारणी 5.15)।

सारणी 5.15: बैंक आकार और औसत परिचालन-कार्य

(प्रतिशत)

संकेतक	बहुत बड़े बैंक		बड़े बैंक		मझोले बैंक		छोटे बैंक	
	2008	2009	2008	2009	2008	2009	2008	2009
1	2	3	4	5	6	7	8	9
(i) बैंकों की संख्या	9	9	17	17	20	19	16	16
(ii) कुल जमाराशियों में मीयादी जमाराशियों का अनुपात	62.79	66.29	66.05	68.69	68.51	68.81	67.19	72.51
(iii) कुल अस्तियों में अर्थसुलभ आस्तियों का अनुपात	31.30	31.39	32.39	31.94	33.48	32.51	38.13	37.26
(iv) कुल ऋणों में मीयादी ऋणों का अनुपात	55.75	55.61	61.50	61.52	54.96	54.00	42.07	37.36
(v) अग्रिमों पर प्रतिलाभ	8.86	9.40	8.92	9.91	9.52	11.25	8.62	10.50
(vi) निवेशों पर प्रतिलाभ	6.66	6.55	6.80	6.56	6.58	6.28	6.50	6.26
(vii) जमाराशियों की लागत	5.33	5.65	5.42	5.74	5.63	5.93	4.15	5.47
(viii) कुल आस्तियों में आकस्मिक देयता का अनुपात	129.65	86.72	262.03	148.91	331.19	302.81	3325.33	1698.61
(ix) ब्याज-स्प्रेड	3.53	3.75	3.50	4.17	3.89	5.32	4.47	5.04
(x) कुल आय में ब्याज आय का अनुपात	85.14	85.60	85.19	85.35	83.57	83.98	75.25	73.16
(xi) कुल आय में अन्य आय का अनुपात	14.86	14.40	14.81	14.65	16.43	16.02	24.75	26.84
(xii) कुल ऋणों में प्रावधानन का अनुपात	1.67	1.73	1.71	2.36	1.66	2.51	4.42	7.92
(xiii) सीआरएआर	13.12	13.15	11.80	12.18	13.06	13.67	14.93	16.28
(xiv) एनएनपीए अनुपात	1.04	1.06	0.78	0.90	0.80	0.92	0.87	1.48

स्रोत : भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति और प्रगति की रिपोर्ट, 2008-09।

5.78 आकार के संदर्भ में बहुत बड़े बैंकों ने अन्य समूहों के अपने काउंटरपार्टों की तुलना में बहुत छोटा स्प्रेड बनाये रखा और इसीलिए, वर्ष 2008-09 में बहुत अधिक ब्याज-आय दर्ज करने के बावजूद उन्होंने अपने ब्याज संविभाग पर बहुत कम प्रतिलाभ प्राप्त किया। यह उल्लेखनीय है कि सभी आकार-समूह वाले बैंक वर्ष 2007-08 की तुलना में वर्ष 2008-09 में उच्चतर ब्याज दर स्प्रेड को महसूस करने में समर्थ हुए, संभवत: इसलिए कि जमा दरें ऋण एवं अग्रिमों की दरों की तुलना में अधिक तेज गति से सहज होने लगीं। संकट की अवधि के दौरान ब्याज स्प्रेड में उछाल ने वित्तीय बाजारों में, बढ़ी हुई अस्थिरता और अनिश्चितता की पृष्ठभूमि में, बैंको के प्रति जनता के भरोसे में इज़ाफा किया। श्रेष्ठ आस्तियों में कमी के विरुद्ध उठाये गये सुरक्षा उपायों के रूप में सभी बैंकों ने उच्चतर प्रावधान किया (कुल ऋणों के प्रतिशत के रूप में); तथापि, छोटे आकार वाले बैंकों द्वारा किये गये प्रावधान वर्ष 2008-09 के दौरान सबसे अधिक थे। अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों ने, एहतियाती उपाय के रूप में, वर्ष 2008-09 में पिछले वर्ष की तुलना में अपनी तुलन-पत्र बाह्य मदों में अपने परिचालनों में काफी कटौती की जो प्रचलित उर्ध्वमुखी प्रवृत्ति के अपवाद को चिह्नित करती है।

5.79 वर्ष 2008-09 के दौरान वाणिज्यिक बैंकों की जमा-वृद्धि में पिछले वर्ष की तुलना में थोड़ी कमी आयी; दूसरी ओर, वर्ष 2008-09 के दौरान जमाराशियों की तुलना में बैंक ऋण में वृद्धि में ज्यादा तेज गति से गिरावट आई (सारणी 5.16)। आकार के संदर्भ में, जमा-वृद्धि का कम होना मझोले और छोटे बैंकों के मामले में वर्ष 2008-09 में अधिक देखा गया। इसी प्रकार का पैटर्न ऋण-संकुचन में प्रतिबिंबित हुआ जो मझोले और छोटे बैंकों के मामले में अधिक स्पष्ट था। बैंकिंग आस्तियों/देयताओं की परिपक्वता संरचना का व्यापक पैटर्न यह बताता है कि अल्पावधि परिपक्वता (एक वर्ष तक) से मध्यावधि परिपक्वता (1-3 वर्ष और 3-5 वर्ष) की ओर बदलाव हुआ है।

5.80 वाणिज्यिक बैंकों द्वारा लिये जाने वाले उधार में वृद्धि में वर्ष 2008-09 के दौरान तेजी से कमी आयी जो वित्तीय बाजारों में चलनिधिजन्य दबाव और ऋण के न्यून उठाव का सूचक है। वृद्धिशील ऋण-जमा अनुपात में तीव्र गिरावट, जो आर्थिक मंदी की पृष्ठभूमि में न्यून ऋण उठाव से उत्पन्न हुई थी, ने वाणिज्यिक बैंकों को उधार के जरिए संसाधन जुटाने के दबाव से मुक्त कर दिया। निवेश-वृद्धि में भी वर्ष 2008-09 के दौरान ह्रास दिखाई पड़ा। तथापि, जारी अनिश्चितता ने जोखिमों से दूर रहने की प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया; वाणिज्यिक बैंकों ने निवल मांग और मीयादी देयताओं के संदर्भ में अपने उपलब्ध संसाधनों को सांविधिक चलनिधि अनुपात प्रतिभूतियों में लगा दिया।

5.81 वर्ष 2008-09 में आय-वृद्धि की दर वर्ष 2007-08 की तुलना में काफी कम थी। तथापि, वृद्धि-दर में ऐसी गिरावट का कुछ

सारणी 5.16: अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के तुलनपत्र की वृद्धि - बैंक समूहवार

(प्रतिशत)

मद	सरकारी क्षेत्र बैंक			निजी क्षेत्र के पुराने बैंक			निजी क्षेत्र के नये बैंक			विदेशी बैंक			सभी एससीबी		
	2007	2008	2009	2007	2008	2009	2007	2008	2009	2007	2008	2009	2007	2008	2009
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
1. पूँजी	0.7	5.2	3.6	4.4	1.8	8.2	5.6	14.6	-3.1	45.4	71.4	16.3	17.3	35.2	10.2
2. रिज़र्व और अधिशेष	20.0	31.3	20.4	11.6	47.1	14.6	17.4	97.9	9.1	30.6	34.7	25.8	20.0	45.3	17.7
3. जमाराशियाँ	22.9	23.1	26.9	6.0	19.8	20.3	38.8	23.1	5.4	31.5	26.8	12.0	24.6	23.1	22.4
4. उधार	5.7	28.4	1.2	22.3	8.0	22.6	42.8	26.3	7.1	33.0	14.1	20.3	19.6	24.5	6.8
5. अन्य देयताएं और प्रावधान	16.3	25.6	21.3	16.1	21.6	8.1	51.1	17.3	12.8	72.4	65.5	57.8	28.1	29.0	15.4
कुल देयताएँ/आस्तियाँ	21.1	23.8	24.6	7.1	21.2	19.3	38.7	27.5	6.7	37.6	32.7	22.8	24.2	25.0	21.2
1. नकदी और आरबीआई में जमाशेष	26.1	61.5	-2.4	25.9	74.4	-14.6	93.7	74.2	-20.7	49.8	81.2	-28.9	35.2	65.4	-8.0
2. बैंकों में जमाशेष और मांग एवं अल्प सूचना पर प्रतिदेय राशि	26.8	-32.6	106.5	5.8	-24.2	47.1	91.9	-33.7	27.8	41.9	- 25.1	66.8	35.9	- 33.1	82.0
3. निवेश	4.9	20.3	26.6	-3.6	23.9	33.7	26.4	31.3	4.3	36.4	38.4	31.8	9.7	23.8	23.1
4. ऋण एवं अग्रिम	30.2	24.8	25.7	12.0	20. 2	15.1	39.9	26.4	9.9	29.5	27.5	2.7	30.6	25.0	21.2
5. अचल आस्तियां	37.7	42.6	17.2	-5.6	26.1	8.0	4.2	15.9	1.2	24.4	32.3	19.4	25.0	35.2	14.1
6. अन्य आस्तियाँ	7.1	31.0	2.0	0.7	-1.7	28.2	33.9	28.3	19.8	72.9	67.0	68.1	22.5	38.2	25.0

स्रोत : संबंधित बैंकों के तुलनपत्र।

समंजन वर्ष 2008-09 में व्यय-वृद्धि में कमी लाकर किया गया। आय और व्यय, दोनों की वृद्धि में गिरावट वर्ष के उत्तरार्ध में अंशत: समग्र ब्याज दरों में गिरावट से सूचित होती है।

5.82 ऋण में कमी और अन्य बैंकिंग संकेतकों पर मंदी के प्रत्यक्ष प्रभाव का विश्लेषण करने के लिए बैंकों को चार भिन्न-भिन्न ऋण-वृद्धि श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया (सारणी 5.17)। जिन बैंकों ने वर्ष 2008-09 के दौरान ऋणात्मक जमा-वृद्धि और ऋण-संकुचन दर्ज किया, उनकी ऋण-वृद्धि में महत्त्वपूर्ण गिरावट देखी गयी। वास्तव में, इन बैंकों के पास उच्च अनर्जक ऋण भी थे। यह जानना रोचक होगा कि इन बैंकों के पास अपने जमा संविभाग में मीयादी जमाराशियों का अनुपात बहुत कम था। इस प्रकार, वित्तीय संकट ने उन बैंकों पर अधिक प्रतिकूल प्रभाव डाला जिनके पास अपेक्षाकृत कम प्रमुख जमाराशियाँ थीं। संकट के समय स्थिर सुरक्षित जमा ने चलनिधि संकुचन का सामना करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। वर्ष 2008-09 में जिन बैंकों की ऋण-वृद्धि में महत्त्वपूर्ण गिरावट आयी, उन्होंने अपने तुलनपत्र-बाह्य एक्सपोज़र में तेज गिरावट दर्ज की। इसके विपरीत, जिन बैंकों में उच्च ऋण-वृद्धि देखी गयी (20 प्रतिशत से ऊपर) उन्होंने अपने तुलन-पत्र बाह्य एक्सपोजर को आर्थिक मंदी के दौरान और भी विस्तारित किया। उच्चतर ऋण-वृद्धि का समर्थन उच्चतर इक्विटी-वृद्धि द्वारा भी किया गया और इसने ऋण-विस्तार से बढ़ी हुई चूक जोखिम के परिणामस्वरूप सुरक्षित पूँजी प्रदान की।

क्षेत्रीय ऋण-वृद्धि

5.83 चलनिधि की स्थिति के सहज होने और विवेकपूर्ण उपायों का प्रभाव जून 2009 में समाप्त वर्ष के लिए न्यून ऋण-वृद्धि में प्रतिबिंबित होता है। हालाँकि अक्तूबर 2008 से ऋण के उठाव में कमी आयी, अक्तूबर 2008 से जून 2009 की अवधि के दौरान ऋण-वृद्धि में 8.9 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर दर्ज की गयी। इस अवधि के दौरान ऋण-वृद्धि आधारभूत संरचना, स्थावर संपदा, एनबीएफसी, एसएमई, और कृषि जैसे क्षेत्रों तथा कुछ उद्योगों, यथा, लोहा और इस्पात के मामले में ऊँची थी। मझोली और बड़ी कंपनियों को दिए जाने वाले ऋण में लघु उद्योगों की तुलना में अधिक तेज गति से गिरावट आयी। तथापि, अन्य ऋणों की तुलना में वैयक्तिक ऋण पर अधिक प्रतिकूल प्रभाव पड़ा (चार्ट V.16 और सारणी 5.18)।

सारणी 5.17 : ऋण-वृद्धि और वित्तीय कार्यसंपादन : वर्ष 2008-09

ऋण-वृद्धि		0 प्रतिशत से कम	0-10 प्रतिशत	10-20 प्रतिशत	20 प्रतिशत से अधिक
1		2	3	4	5
(i)	बैंकों की संख्या	11	5	17	28
(ii)	कुल जमाराशियों में मीयादी जमाराशियों का अनुपात	63.6	72.6	70.4	70.5
(iii)	कुल आस्तियों में अर्थसुलभ आस्तियों का अनुपात	39.6	33.8	33.0	31.2
(iv)	कुल ऋणों में मीयादी ऋणों का अनुपात	44.2	53.5	51.2	55.2
(v)	अग्रिमों पर प्रतिलाभ	11.8	11.9	10.4	9.6
(vi)	निवेशों पर प्रतिलाभ	6.6	6.3	6.3	6.4
(vii)	जमाराशियों की लागत	5.0	6.5	5.9	5.8
(viii)	कुल आस्तियों में आकस्मिक देयता का अनुपात	2377.6	291.1	226.9	170.6
(ix)	ब्याज-स्प्रेड	6.8	5.4	4.5	3.9
(x)	कुल आय में ब्याज आय का अनुपात	65.2	81.5	85.9	85.8
(xi)	कुल आय में अन्य आय का अनुपात	34.8	18.5	14.1	14.2
(xii)	कुल ऋणों में प्रावधानन का अनुपात	11.8	3.2	2.2	1.7
(xiii)	सीआरएआर	15.9	15.9	13.3	13.1
(xiv)	एनएनपीए अनुपात	1.5	1.4	0.9	1.0
(xv)	जमाराशि-वृद्धि	-3.4	3.1	18.8	28.9
(xvi)	आकस्मिक-देयता वृद्धि	-29.4	-10.2	-11.2	20.0
(xvii)	निवेश-वृद्धि	30.4	24.6	27.7	31.2
(xviii)	अग्रिम-वृद्धि	-10.5	5.0	15.2	30.9
(xix)	इक्विटी-वृद्धि	23.5	22.3	30.6	33.5
(xx)	चलनिधि-वृद्धि	18.9	10.2	17.7	23.0

स्रोत : भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति और प्रगति की रिपोर्ट, 2008-09।

चार्ट V.16 : क्षेत्रीय बैंक ऋण में वृद्धि की प्रवृत्ति

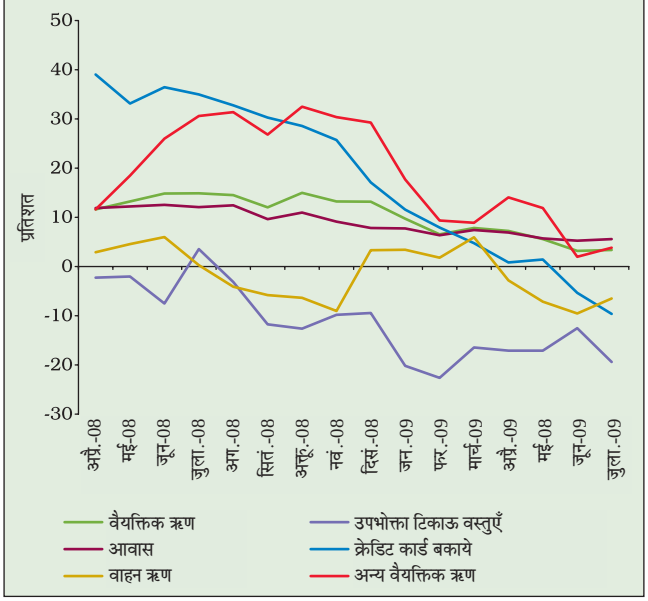

बैंकों का प्रचक्रीय व्यवहार

5.84 वर्तमान साहित्य में यह तर्क दिया जाता है कि बासेल II बैंकों के प्रचक्रीय व्यवहार में योगदान कर सकता है। प्रचक्रीयता की परिभाषा इस प्रकार दी जाती है कि अच्छे समय में ऋण सहज उपलब्ध होता है और बुरे समय में, जब उधारकर्ताओं को ऋण की अधिक जरूरत होती है, ऋण कठिनाई से उपलब्ध होता है। विशेष रूप से, ऐसा आंतरिक दर-निर्धारण आधारित दृष्टिकोण के साथ हो सकता है जहाँ ऋण-जोखिम ऋणी की आय का कार्य होता है जो अनुमानत: व्यापार चक्र के साथ चलता है। बासेल II के पूर्व बैंकों में प्रचक्रीय व्यवहार देखा जाता था लेकिन चिंता यह प्रकट की जाती है कि यह व्यवहार बासेल II के अंतर्गत अधिक नाटकीय होगा। विशेष रूप से, वित्तीय संकट ने प्रचक्रीयता के बारे में, जो वित्तीय प्रणाली में, और विशिष्ट रूप से, संस्थागत और विनियामक पहलुओं, यथा, लेखांकन नियमों, व्यापार एवं जोखिम प्रबंधन नियमों, तथा बैंक पूँजी की अपेक्षाओं में सन्निहित होती है, चिंता को साधारणीकृत कर दिया है। वित्तीय विनियमन दबाव के अविलंब सुधार के लिए चुनौतियों की सभी वर्तमान समीक्षाओं में इस पर जोर दिया गया है कि वित्तीय प्रणाली को कम प्रचक्रीय बनाया जाना आवश्यक है (ब्रुनरमियर और अन्य, 2009; रिपोलो और सुआरेज, 2009) (चार्ट V.17)।

सारणी 5.18: क्षेत्रीय बैंक ऋण में वृद्धि

(प्रतिशत)

	कृषि	लघु उद्योग	उद्योग (मझोले एवं बड़े)	थोक व्यापार (खाद्यान्न खरीद से भिन्न)	खाद्येतर सकल बैंक ऋण
1	2	3	4	5	6
2000-05	18.8	5.2	20.9	10.1	17.5
2005-06	37.6	22.9	28.6	22.0	40.5
2006-07	33.7	29.2	27.0	26.3	28.2
2007-08	19.5	12.6	23.1	11.2	22.3
2008-09	23.0	27.4	22.8	20.9	18.1
2008-09:छ.1	-0.1	8.8	14.2	12.1	8.4
2008-09:छ.2	23.1	17.0	7.6	7.9	8.8
2009-10:छ.1	-0.5	9.3	8.2	11.2	3.5

स्रोत : भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति और प्रगति की रिपोर्ट, विविध अंक।

5.85 भारत पर संकट का प्रभाव संपदा क्षेत्र से वित्तीय क्षेत्र में प्रसरित हुआ, जैसाकि अधिकांश उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के मामले में भी हुआ था। उद्योग और व्यवसाय, विशेष रूप से, लघु और मझोले उद्यम क्षेत्र को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा, यथा, वैश्विक मंदी से प्रभावित समुद्रपार क्रेताओं से तथा देशी क्रेताओं से भी बिलों के भुगतान में देरी; तैयार माल के स्टॉक में बढ़ोतरी; इन्वेंट्रियों के मूल्य में गिरावट, विशेष रूप से कच्चे माल के मूल्य में, जिसे अनेक मामलों में अधिक मूल्य पर खरीदा गया था, जैसेकि धातु और कच्चा तेल आधारित उत्पाद; निवेश मांग में गिरावट के चलते क्षमता विस्तार का धीमा पड़ना; और रोजगार प्रधान उद्योगों, यथा, रत्न एवं आभूषण, निर्माण एवं संबद्ध कार्यकलाप, टेक्सटाइल, ऑटो एवं ऑटो

चार्ट V.17 : ऋण-वृद्धि की प्रवृत्ति और आर्थिक कार्यकलाप

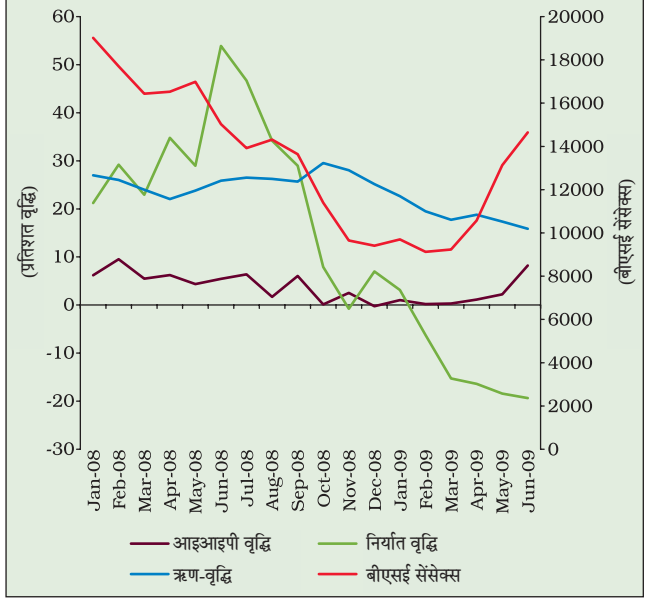

बॉक्स V.4
विनियामक उपाय

- सभी प्रकार की मानक आस्तियों (20 लाख रुपये से अधिक के रिहायशी आवास ऋण, वाणिज्यिक स्थावर संपदा क्षेत्र में मानक अग्रिम, बकाया क्रेडिट कार्ड प्राप्य राशियों सहित वैयक्तिक ऋण, ऐसे ऋण और अग्रिम जिन्हें पूँजी बाजार एक्सपोज़र के रूप में योग्य माना जाये, और जमाराशि स्वीकार नहीं करने वाली सर्वांगी महत्त्वपूर्ण एनबीएफसी) के लिए प्रावधानीकरण संबंधी अपेक्षाओं को घटाकर 0.40 प्रतिशत के एकसमान स्तर पर किया गया, सिवाय कृषि एवं एसएमई क्षेत्रों को प्रत्यक्ष ऋण के, जिनके लिए 0.25 प्रतिशत की प्रावधानीकरण अपेक्षा लागू रहेगी, जैसाकि अब तक लागू है।
- कतिपय क्षेत्रों में बैंकों के एक्सपोज़र पर जोखिम भार कम कर दिये गये जिन्हें इसके पूर्व प्रतिचक्रीय रूप से बढ़ाया गया था। तथापि, आस्ति-वित्तपोषण कंपनियों के मामले में जोखिम भार में परिवर्तन नहीं किया गया और वे आस्ति-वित्तपोषण कंपनियों के श्रेणी-निर्धारण द्वारा नियंत्रित की जा रही हैं, सिवाय उन दावों के, जिन पर नये पूंजी पर्याप्तता ढाँचे के अंतर्गत 150 प्रतिशत जोखिम भार लागू है जिसे घटाकर 100 प्रतिशत के स्तर पर किया गया।
- एकबारगी उपाय के रूप में और सीमित अवधि के लिए प्रतिबंधित खातों के लिए विवेकपूर्ण विनियम को उन आवेदनों के लिए संशोधित किया गया, जो 31 मार्च 2009 तक प्राप्त हुए थे और आवेदन करने के 120 दिनों के भीतर या 30 जून 2009 तक, जो भी पहले हुआ, उन पैकेजों को कार्यान्वित किया गया जिनकी पुनर्संरचना की गयी थी। पुनर्संरचना के लिए विनियमों में संशोधन इसलिए किये गये ताकि उन आस्तियों के आर्थिक और उत्पादक मूल्यों को परिरक्षित रखा जाये जो अन्यथा लाभप्रद थीं। संशोधन किये जाने से पुनर्गठित किये गये खातों को मानक आस्तियों के रूप में माने जाने की अनुमति मिली, बशर्ते कि वे संकट के ठीक पहले, अर्थात् 1 सितंबर 2008 को मानक के खाते के रूप में हों, भले ही पुनर्संरचना के समय वे अनर्जक बन चुके थे।

अवयव तथा अन्य निर्यातोन्मुख उद्योगों के लिए मांग-में कमी। आईटी के अतिरिक्त होटल और एयरलाइन्स में भी वैश्विक गिरावट के चलते मांग में कमी देखी गयी। प्रमुख आर्थिक कार्यकलाप, यथा, औद्योगिक उत्पादन सूचकांक में वृद्धि, ऋणात्मक हो गया और वह वर्ष 2008-09 की दो से अधिक तिमाहियों में शून्य से कम स्तर पर बना रहा, वर्ष की दूसरी छमाही में निर्यात संकुचित होता रहा, और पूँजी बाजार के कार्यकलाप बहुत कम होते गये। सभी आर्थिक कार्यकलापों के मंद पड़ने का प्रभाव वित्तीय बाजार में पसर गया और बैंक ऋण-वृद्धि में तेज गिरावट आयी। मंदी के दौरान, जब उत्पादक क्षेत्रों को ऋण प्रवाह बनाये रखना और भी आवश्यक था, ऋण मिलने में कठिनाई होने लगी। अत: बैंकों का प्रचक्रीय व्यवहार संकट के दौरान अधिक स्पष्ट हुआ।

5.86 इस बात को स्वीकार करते हुए कि अप्रत्याशित और तीव्र गति से बदलती घटनाएँ उत्तरोत्तर गिरावट का कारण बन सकती हैं, रिज़र्व बैंक ने चलनिधि और विशेष पुनर्वित्त प्रदान करने के अतिरिक्त अनेक प्रकार के विनियामक उपायों को कार्यान्वित किया (बॉक्स V.4 और नीतिगत उपाय के सबंध में अगला खंड देखें)। वर्ष 2005-06 से, कुछ क्षेत्रों को बैंक ऋण में उच्च वृद्धि के संदर्भ में, रिज़र्व बैंक ने इन क्षेत्रों के लिए मानक आस्तियों हेतु जोखिम भार और प्रावधानीकरण अपेक्षाओं को अनेक चरणों में बढ़ाया था। नवंबर 2008 में, एक प्रतिचक्रीय उपाय के रूप में, अतिरिक्त जोखिम भार और प्रावधानीकरण को वापस ले लिया गया और उन्हें उनके पिछले स्तर पर बहाल कर दिया गया।

5.87 खातों की पुनर्संरचना के लिए विवेकपूर्ण विनियमों को एकबारगी उपाय के रूप में और सीमित अवधि के लिए असाधारण बाह्य कारकों की दृष्टि से संशोधित किया गया, ताकि उन आस्तियों के, जो अन्यथा लाभप्रद थीं, आर्थिक और उत्पादक मूल्य को परिरक्षित रखा जा सके। संशोधित विनियम पुनर्संरचना के लिए किये गये उन आवेदनों के लिए लागू थे जो 31 मार्च 2009 तक प्राप्त हुए थे और पुनर्संरचना पैकेज आवेदन प्राप्त होने के 120 दिनों के भीतर या 30 जून 2009 तक, जो भी पहले हुआ, कार्यान्वित किये गये। अत:बैंकों को दुर्बलताओं का पता लगाने के लिए त्वरित कार्रवाई करनी थी और पुनर्संचना पैकेज को लागू करना था, ताकि वे संशोधित विवेकपूर्ण विनियमों के अंतर्गत आस्ति वर्गीकरण का लाभ उठा सकें (बॉक्स V.4)।

5.88 वित्तीय प्रणाली में बैंकों की ऋण बाजारों में विषम सूचना समस्याओं का समाधान करने में निभायी गयी भूमिका ने मौद्रिक नीति के ऋण माध्यम की नींव रखी। जैसे-जैसे मुद्रा आपूर्ति बढ़ती है, वैसे-वैसे बैंक जमाराशियाँ और आरक्षित निधियाँ बढ़ती हैं, जो बदले में बैंक ऋण की मात्रा को बढ़ाती हैं। दूसरी ओर, जमा संसाधनों में संकुचन होने से सकल मांग प्रभावित होती है जिसके लिए आपूर्ति अनुसूची को बैंक ऋण बाजार में बायीं ओर स्थानांतरित किया जाता है। इस संदर्भ में कश्यप एवं स्टेन (2000) ने यह दर्शाया कि नीतिगत आघातों के प्रति प्रतिक्रियास्वरूप बैंकों द्वारा उधार देने के लिए उठाए गए कदमों में विभिन्न प्रकार के अंतर के साथ उधार देने के व्यवहार में मौद्रिक नीति का प्रभाव उन बैंकों के लिए अधिक तगड़ा होता है जिनके तुलनपत्र में अर्थसुलभता कम होती है (बॉक्स V.5)।

बॉक्स V.5
मौद्रिक नीति का तुलनपत्र संबंधी प्रभाव

नीतिगत आघातों के प्रति प्रतिक्रियास्वरूप बैंकों द्वारा उधार देने के लिए उठाए गए कदमों में विभिन्न प्रकार के अंतरों की जाँच करने के लिए कश्यप एवं स्टेन मॉडल[6] का अनुसरण किया जाता है। इस मॉडल में ऋण-मांग की समरूप प्रतिक्रिया की कल्पना की जाती है, जो ऋण आपूर्ति पर मौद्रिक नीति संबंधी प्रभावों की पहचान करने के लिए महत्त्वपूर्ण होती है। हाल तक भारत में बैंक ऋण वित्तपोषण के मुख्य स्रोत होते थे और ये बड़ी फर्मों के लिए भी वित्तपोषण के मुख्य स्रोत होते थे, और इस प्रकार यह कल्पना उचित प्रतीत होती है। आर्थिक कार्यकलाप में और मुद्रास्फीति दर में परिवर्तनों के प्रति बैंक ऋणों की विषम प्रतिक्रिया होने देने के लिए अलग-अलग बैंक-लक्षणों के साथ पारस्परिक क्रिया की शर्त को भी इस मॉडल में सम्मिलित किया जाता है। इसके अतिरिक्त, प्रथम अंतरों का उपयोग अनुमानत: वैरिएबलों की निश्चलता को सुनिश्चित करता है।

मौद्रिक नीति के विषम प्रभावों का ग्रहण पारस्परिक क्रिया की शर्तों के लिए महत्त्वपूर्ण गुणांकों द्वारा किया जाता है। अपने अलग स्वरूप के कारण यह मॉडल आँकड़ों के दोनों पहलुओं का दोहन कर सकता है। समय के संबंध में पारस्परिक क्रिया-प्रभाव उस अंश का ग्रहण करता है जिसमें उधार देना महँगी मुद्रा या सुलभ मुद्रा की अवधियों के दौरान नकदी-बाधित होता है। दूसरी ओर, कोई मौद्रिक नीति के प्रति उधार-परिमाण की संवेदनशीलता को किसी खास बैंक के लिए इस अर्थ में देख सकता है कि यह संवेदनशीलता उन बैंकों के लिए अधिक होती है जिनका तुलनपत्र दुर्बल होता है, जिसका ग्रहण चलनिधि और आकार, दोनों के द्वारा किया जाता है। मॉडल की संरचना (1) में विलंबित आश्रित वैरिएबल के साथ स्पष्ट रूप से एक अनुमान-क्रियाविधि की अपेक्षा रखती है, जो गत्यात्मक पैनल डाटा के लिए उपयुक्त हो। इस संबंध में, पिछले दशक या इसके आसपास की अवधि के दौरान साहित्य में मानक क्रियाविधि जीएमएम तकनीक रही है जो अरेलेने और बांड (1991) के चलते थी, और उसीका प्रयोग यहाँ किया गया है। इसी प्रकार का दृष्टिकोण पंडित और अन्य (2006) द्वारा अपनाया गया था।

डाटासेट में कुल 1314 तुलनपत्रों (प्रेक्षणों) का एक संतुलित पैनल होता है, जो जनवरी 1998 से जून 2009 तक सभी अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों (आरआरबी) को छोड़ कर, के बारे में 18 नहीनों की अवधि के लिए होता है। इन आँकड़ों का संग्रह सांविधिक विवरणियों, जिन्हें धारा 42(2) विवरणी कहा जाता है, से किया जाता है, और इनकी डिजाइन आरक्षित निधि अपेक्षाओं का अनुमान लगाने के लिए की जाती है और इन्हें प्रत्येक बैंक द्वारा पाक्षिक आधार[7] पर रिज़र्व बैंक को प्रस्तुत किया जाता है। जमा-संसाधनों के अतिरिक्त, इन विवरणियों में अधिकांश तुलनपत्रों के संबंध में नकदी, अंतर-बैंक लेन देन, निवेश और देशी उधार, जिन्हें विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है, सहित प्रचुर सूचना उपलब्ध होती है।

परिणाम[8] यह दर्शाते हैं कि परिवर्तनों का रिपो दर पर प्रत्यक्ष प्रभाव ऋणात्मक होता है, और यह तब महत्त्वपूर्ण होता है जब आकार और चलनिधि को तुलन-

[6] रिग्रेसन मॉडल को निम्नलिखित रूप में विनिर्दिष्ट किया जाता है :रिग्रेसन मॉडल को निम्नलिखित रूप में विनिर्दिष्ट किया जाता है :

$$\Delta \log(L_{it}) = \sum_{j=1}^{m} \alpha_j \Delta \log(L_{it-j}) + \sum_{j=1}^{m} \mu_j \Delta M_{t-j} + \sum_{j=1}^{m} \pi_j \Delta GDP_{t-j} + \sum_{j=1}^{m} \beta_j \Delta INFL_{t-j}$$

$$+ B_{it-1}\left(\eta + \partial TIME_t + \sum_{j=1}^{m} \phi_j \Delta M_{t-j} + \sum_{j=1}^{m} \gamma_j \Delta GDP_{t-j} + \sum_{j=1}^{m} \delta_j \Delta INFL_{t-j} \right) + \varepsilon_{it} \quad \ldots\ldots (1)$$

जहाँ i = 1, . . .N, t=1. ., T और Δ अंतर के चालक हैं। N बैंकों की संख्या सूचित करता है। T कालमान श्रेणी को सूचित करता है और m अंतरालों की संख्या है। Lit ऋण की राशि है, जो बैंक I द्वारा t अवधि के लिए दी जाती है. Mt मौद्रिक नीति का साधन है (हमारे मामले में यह आरक्षित नकदी निधि अनुपात या रिपोदर है)। Δ GDPt आर्थिक कार्यकलाप संकेतक की वृद्धि दर है, जिसे औद्योगिक उत्पादन के मासिक सूचकांक लॉग द्वारा ग्रहण किया जाता है। Δ INFLt मासिक मुद्रास्फीति दर का पहला अंतर है। अलग-अलग बैंक लक्षण Bit द्वारा सूचित किये जाते हैं। दो बैंक लक्षणों (Bit) पर विचार किया जाता है, अर्थात्, आकार, जिसका मापन जमाराशि के संदर्भ में किया जाता है, और चलनिधि, जिसका मापन अर्थसुलभ आस्तियों, यथा, नकदी, मांग मुद्रा, अन्य बैंकों में निवल आस्तियाँ और ith बैंक की समय विन्दु पर t पर सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश के संदर्भ में किया जाता है। TIMEt एक समय डमी है।

[7] वर्ष 1985 तक ये आँकड़े साप्ताहिक आधार पर शुक्रवार को सूचित किये जाते थे और बाद में ये पाक्षिक आधार पर सूचित किये जा रहे हैं। तथापि, बैंक उसी फार्मैट में एक विशेष विवरणी प्रत्येक माह के अंतिम शुक्रवार को फाइल करते हैं, यदि वह रिपोर्टिंग शुक्रवार नहीं हो। इस प्रकार, आँकड़ों की तुलनीयता मासिक आधार पर भी बनाये रखी जाती है।

[8] **पैरामीटर अनुमान - अरेलेनो बॉण्ड डाइनैमिक पैनल रिग्रेसन**

तुलनपत्र वैरिएबल : चलनिधि

डी.ऋण	गुणांक		एसई (तगड़ा)	डी.ऋण	गुणांक		एसई (तगड़ा)
ऋण				मुद्रास्फीति			
LD.	0.484	*	0.128	D1.	0.093	*	0.022
L2D.	0.037		0.025	LD.	0.014		0.070
L3D.	0.056		0.047	चलनिधि*रिपो			
चलनिधि				D1.	-0.016	**	0.005
D1.	0.021		0.310	LD.	0.006		0.009
LD.	0.498	**	0.199	चलनिधि*आइआइपी			
L2D.	-0.009		0.035	D1.	-0.020		0.059
रिपो				LD.	-0.058		0.052
D1.	0.110		0.088	चलनिधि*मुद्रास्फीति			
LD.	-0.093	*	0.016	D1.	-0.001		0.001
आइआइपी				LD.	-0.001		0.004
D1.	0.508		1.091	स्थिर	0.009	*	0.002
LD.	1.326		0.651				

तुलनपत्र वैरिएबल : आकार (जमाराशियाँ)

डी.ऋण	गुणांक		एसई (तगड़ा)	डी.ऋण	गुणांक		एसई (तगड़ा)
ऋण				मुद्रास्फीति			
LD.	0.767	*	0.117	D1.	0.078	**	0.023
L2D.	0.042	***	0.024	LD.	0.006		0.066
L3D.	0.019		0.041	जमाराशियां*रिपो			
जमाराशियाँ				D1.	-0.019	**	0.005
D1.	0.370		0.283	LD.	-0.006		0.009
LD.	0.574	**	0.254	जमाराशियाँ*आइआइपी			
L2D.	0.009		0.040	D1.	-0.026		0.061
रिपो				LD.	-0.085		0.053
D1.	-0.165		0.096	जमाराशियाँ*मुद्रास्फाति			
LD.	-0.111	*	0.017	D1.	-0.001		0.001
आइआइपी				LD.	0.000		0.003
D1.	0.836		1.171	स्थिर	0.001		0.003
LD.	1.665	***	0.813				

(... समाप्त)

पत्र की ताकत माना जाता है। प्रथमदृष्ट्या ऐसा साक्ष्य मिलता है कि नीति दर परिवर्तन का प्रत्यक्ष प्रभाव बैंक ऋण पर कम-से-कम एक महीने के विलंब से होता है, और इसीलिए कम-से-कम औसत बैंक के लिए हम इस परिकल्पना को अस्वीकार नहीं कर सकते हैं कि मौद्रिक नीति संचरण की बैंक उधार माध्यम रिपो दर परिवर्तन के माध्यम से भलीभाँति कार्य करती है। आर्थिक कार्यकलाप का गुणांक उम्मीद के मुताबिक धनात्मक होता है, जबकि मुद्रास्फीति के लिए गुणांक ऋणात्मक होता है। दोनों गुणांक महत्त्वपूर्ण होते हैं। चलनिधि का प्रभाव सकारात्मक और महत्त्वपूर्ण होता है, जिसका तात्पर्य यह है कि जिन बैंकों के पास अधिक अर्थसुलभ आस्तियाँ होती हैं, वे उधार भी अधिक देते हैं। इसके अतिरिक्त, चलनिधि के साथ रिपो का पारस्परिक क्रिया गुणांक भी महत्त्वपूर्ण और नकारात्मक हुआ। अर्थात्, उधार देने के व्यवहार पर मौद्रिक नीति का प्रभाव उन बैंकों के लिए तगड़ा होता है, जिनका कम अर्थसुलभ तुलन-पत्र होता है। जमा संसाधनों के लिए किसी एवजी व्यवस्था के अभाव में अधिक अर्थसुलभ बैंक अपने ऋण संविभाग को अपेक्षाकृत सहज रूप से सुरक्षित रख सकते हैं जिसके लिए उन्हें केवल प्रतिभूतियों के सुरक्षित भंडार में आहरण द्वारा कमी करनी होती है। दूसरी ओर, कम अर्थसुलभ बैंक संकुचनशील मौद्रिक नीति की प्रतिक्रियास्वरूप ऋणों में काफी कटौती करते हैं। कश्यप और स्टेन (1995) का अनुसरण करते हुए, संबंधित परिकल्पना का भी परीक्षण किया गया। दूसरे शब्दों में, मौद्रिक नीति के संचरण पर बैंक के आकार के प्रभाव का परीक्षण यह पता करने के लिए किया गया कि क्या बड़े बैंकों की उधार देने की क्रिया छोटे बैंकों बैंकों की तुलना में मौद्रिक आधात के प्रति कम संवेदनशील होती है। कोई यह उम्मीद करता है कि बड़े बैंक वैकल्पिक वित्तपोषण सरलता से कर सकते हैं जिसके चलते उनका उधार देने का कार्य मौद्रिक नीति परिवर्तनों पर कम आश्रित होता है। तदनुसार, पारस्परिक क्रिया के प्रभाव को नकारात्मक और महत्त्वपूर्ण पाया जाता है जिससे पता चलता है कि छोटे बैंक वर्धित नीति दरों का दबाव महसूस करते हैं और प्रतिक्रियास्वरूप ऋण संवितरण में कटौती करते हैं।

बैंक उधार पर औद्योगिक कार्यकलाप का प्रभाव

5.89 बैंक ऋण पर आर्थिक मंदी तथा चलनिधि की पारस्परिक क्रिया के प्रभाव की जाँच करने के लिए एक पैनल वेक्टर ऑटो-रिग्रेसन (पीवीएआर) दृष्टिकोण लागू किया गया। बैंक स्तर पर, जिन वैरिएबलों पर विचार किया गया, वे थे ऋण, जमाराशियाँ और चलनिधि (जिन्हें पूर्व में परिभाषित किया गया है) और समष्टिआर्थिक एवं मौद्रिक गतिविधियों के लिए आइआइपी, मुद्रास्फीति और सीआरआर का उपयोग किया गया[9]। डेटासेट में कुल 1314 तुलनपत्रों (प्रेक्षणों) के संतुलित पैनल को शामिल किया गया है, जो सभी अनुसूचित बैंकों के लिए, जिनमें क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (आरआरबी) शामिल नहीं हैं, जनवरी 1998 से जून 2009 तक की 18 महीनों की अवधि में विस्तारित हैं। अनुमानित पैरामीटर[10], जो अल्पावधि समीकरण पर आधारित हैं, यह दर्शाते हैं कि आइआइपी में गिरावट ऋण की मांग में गिरावट से जुड़ी है। जब उच्च मुद्रास्फीति के कारण ऋण की मांग बढ़ती है, तब सीआरआर में वृद्धि ऋण-आपूर्ति से जुड़ी होती है।

ब्याज दर में उतार-चढ़ाव

5.90 रिज़र्व बैंक की नीति दरों में कटौती किये जाने और सहज चलनिधि स्थिति के होने से यह उम्मीद थी कि ब्याज दरों में नरमी आयेगी। स्वामित्व का विचार किये बिना भारतीय वाणिज्यिक बैंकों ने अपनी जमा और उधार दरें घटायी हैं। तथापि, उधार दरों में कमी एक अंतराल के साथ आयी जिसका कारण आस्तियों और देयताओं की पुरानी संविदागत संरचना है। सभी प्रकार की परिपक्वता अवधि वाली जमाराशियों पर सरकारी क्षेत्र के बैंकों द्वारा दी गयी ब्याज दरों

[9] सभी वैरिएबल लोगैरिद्म में हैं, सिवाय सीआरआर और मुद्रास्फीति के। वैरिएबल पहले अंतर में हैं।

[10] पैरामीटर अनुमान - पैनल वीएआर निम्नानुसार हैं :

डी.ऋण	गुणांक	मानक भूल	टी-स्टैटिक
एल डी जमाराशियाँ	0.0075	0.0784	0.0957
एल डी ऋण	0.0305	0.0323	0.9437
एल डी चलनिधि	0.0244	0.0209	1.1703
एल डी आइआइपी	-0.1751	0.0509	-3.4380
एल डी मुद्रास्फीति	-0.0100	0.0027	-3.7359
एल डी सीआरआर	-0.0072	0.0028	-2.6014
एल2डी जमाराशियाँ	-0.0064	0.0733	-0.0877
एल2डी ऋण	-0.0083	0.0260	-0.3201
एल2डी चलनिधि	0.0134	0.0208	0.6428
एल2डी आइआइपी	-0.1717	0.0407	-4.2193
एल2डी मुद्रास्फीति	0.0068	0.0020	3.3870
एल2डी.सीआरआर	-0.0162	0.0049	-3.3093

टिप्पणी : एल - अंतराल परिचालक और डी - अंतर परिचालक

में अक्तूबर 2008 के बाद थोड़ी नरमी दिखाई पड़ी। इसके अलावा दिसंबर 2008 के बाद निजी क्षेत्र के बैंकों और विदेशी बैंकों की सभी परिपक्वता वाली जमा दरों में गिरावट देखी जा सकती है। सरकारी और निजी क्षेत्र के बैंकों में भी बेंचमार्क मूल उधार दर (बीपीएलआर) में अक्तूबर 2008 से गिरावट दिखाई पड़ी। तथापि, विदेशी बैंकों के बीपीएलआर में काफी अनम्यता दिखाई पड़ी। इसके अलावा निर्यातेतर ऋण और 2 लाख रुपये से अधिक के मीयादी ऋणों पर उधार दरों में सरकारी क्षेत्र के बैंकों के लिए सहजता आयी, लेकिन निजी क्षेत्र के बैंकों और विदेशी बैंकों के मामले में ये दरें सितंबर 2008 और दिसंबर 2008 के बीच थोड़ी दृढ़ हुईं, भले ही नीति दरों और मुद्रास्फीति में गिरावट आयी थी, और इन दरों में दिसंबर 2008 और जून 2009 के बीच गिरावट देखने को मिली। चुने हुए बैंकों द्वारा प्रस्तुत आँकड़ों पर आधारित प्रारंभिक अनुमानों से यह संकेत मिलता है कि भारतीय बैंकों ने संकट-पूर्व और संकट-पश्चात् की अवधि के दौरान 4 प्रतिशत से अधिक का स्प्रेड बनाये रखा (चार्ट V.18)।

5.91 वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही के दौरान जमा दरों में गिरावट उधार दरों की तुलना में अधिक हुई। इस प्रकार, जमाराशियों की न्यून लागत का पूरा लाभ उधारकर्ताओं को नहीं मिला और बैंकों ने उच्चतर स्प्रेड का उपभोग करना जारी रखा जिससे यह स्पष्ट होता है कि एक मृदु ब्याज प्रणाली की अवधि के दौरान भी उच्चतर आबंटनीय अक्षमता उनमें थी।

चार्ट V.18 : ब्याज दर में उतार-चढ़ाव

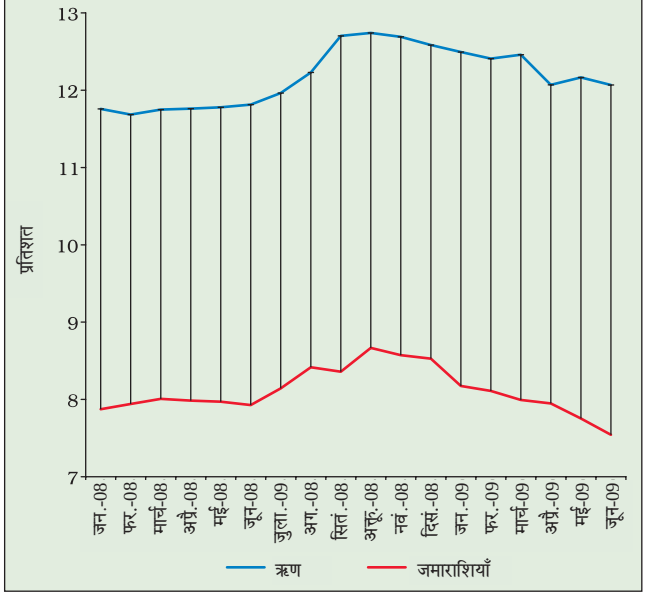

म्यूचुअल फंड

5.92 वित्तीय प्रणाली के कुछ खंडों, विशेष रूप से गैर-बैंकिंग संस्थाओं में, घटे हुए वित्तीय निधीयन और निस्तेज पूँजी बाजार के कारण घोर चलनिधि-जन्य दबाव का अनुभव किया गया। पूँजी प्रवाह के विपर्यय और बैंकों एवं कारपोरेटों के लिए विदेशी बाजारों से निधीयन के बंद हो जाने से भी वर्ष 2008-09 के दौरान म्यूचुअल फंडों पर चलनिधि-जन्य दबाव बना। म्यूचुअल फंडों के जमा-संग्रहण का काफी हिस्सा कारपोरेट क्षेत्र से मुद्रा बाजार स्कीमों के अंतर्गत थोक निधियों को प्रतिबिंबित करता था, जो अंशत: कर एवं अन्य विनियामक अंतरपणन को प्रतिबिंबित करता था। ऋण के महँगे होने के परिणामस्वरूप जो कारपोरेट काफी मात्रा में अपनी निधियाँ म्यूचुअल फंडों में जमा कर रहे थे, उन्होंने अपने निवेश संसाधनों की पूरक व्यवस्था करने के लिए म्यूचुअल फंडों से अपना निवेश हटा लिया। शेयर बाजार के विपर्यय ने म्यूचुअल फंडों पर फुटकर निवेशकों की ओर से भी शोधन का दबाव बनाया। सभी तरफ से शोधन-जन्य दबाव के बढ़ने और घोर अनिश्चितता की स्थिति ने म्यूचुअल फंडों के लिए वैकल्पिक स्रोतों से संसाधन जुटाने को कठिन बना दिया और म्यूचुअल फंड शेयर बाजारों में अपने शेयरों को बेचने के लिए बाध्य हो गये। जबकि म्यूचुअल फंडों ने तत्काल शोधन का वादा किया, फिर भी उनकी आस्तियाँ अपेक्षाकृत अनकदी थीं। म्यूचुअल फंडों की आस्तियों और देयताओं के बीच परिपक्वता संबंधी असंतुलनों ने समस्या को और भी बढ़ा दिया।

5.93 म्यूचुअल फंडों द्वारा सकल संग्रहण में वृद्धि में वर्ष 2008-09 के दौरान तीव्र गिरावट आयी। म्यूचुअल फंडों द्वारा भारत में संसाधनों के निवल संग्रहण में वर्ष 2008-09 में 118 प्रतिशत तक गिरावट आयी, जबकि इसके पिछले वर्ष इसमें 64 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गयी थी। यह उल्लेखनीय है कि शेयरों की कीमतों में तीव्र गिरावट और म्यूचुअल फंडों द्वारा जुटाये गये निवल संसाधन जनवरी 2008 से अंतर्ग्रथित हैं, जो म्यूचुअल फंडों पर शोधन के दबाव को प्रतिबिंबित करता है (चार्ट V.19 और सारणी 5.19)। म्यूचुअल फंडों द्वारा मार्च 2009 के अंत में धारित आस्तियों में मार्च 2008 के अंत में धारित आस्तियों की तुलना में 17 प्रतिशत तक गिरावट आयी जिसका कारण था बड़े परिमाण में शोधन और इक्विटी कीमतों में काफी संशोधन करने से उत्पन्न ऋणात्मक मूल्यन किया जाना।

चार्ट V.19 : बीएसई सेंसेक्स और म्यूचुअल फंडों द्वारा निवल निवेश

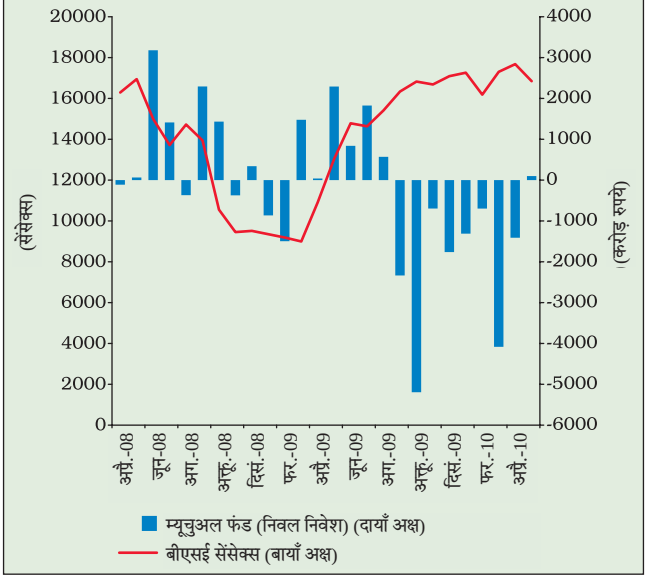

5.94 शेयर बाजार के विपर्यय से उत्पन्न चलनिधि-जन्य दबाव और बढ़ी हुई अनिश्चितता म्यूचुअल फंडों की सभी श्रेणियों में अलग-अलग दिखाई पड़े। निजी क्षेत्र के म्यूचुअल फंड, जिसके बाद यूटीआई का स्थान है, सबसे अधिक प्रभावित हुए। निजी क्षेत्र के म्यूचुअल फंडों द्वारा जुटाये गये निवल संसाधन वर्ष 2008-09 के दौरान बड़ी मात्रा में ऋणात्मक हो गये जिसका कारण था फुटकर और कारपोरेट, दोनों प्रकार के निवेशकों द्वारा शोधन में तीव्र वृद्धि का होना। दूसरी ओर, सरकारी क्षेत्र के म्यूचुअल फंड शोधन-जन्य दबाव को बरदाश्त करने में समर्थ थे, और उन्होंने वर्ष 2008-09 के दौरान नये संसाधन जुटाये, जो वर्ष 2009-10 में भी जुटाये जाते रहे (सारणी 5.20)।

सारणा 5.19 : म्यूचुअल फंडों द्वारा संसाधन संग्रहण

(हजार करोड़ रुपये)

	सकल संग्रहण	शोधन	निवल अंतर्वाह	अवधि के अंत में आस्तियाँ
1	2	3	4	5
2000-01	93.0	83.8	9.1	90.6
2001-02	164.5	157.3	7.2	100.6
2002-03	314.7	310.5	4.2	109.3
2003-04	590.2	543.4	46.8	139.6
2004-05	839.7	837.5	2.2	149.6
2005-06	1,098.1	1,045.4	52.8	231.9
2006-07	1,938.5	1,844.5	94.0	326.3
2007-08	4,464.4	4,310.6	153.8	505.2
2008-09	5,426.4	5,454.7	-28.3	417.3
2009-10	10,019	9,935.9	83.1	614.0
2010-11 (अप्रै-मई)	1,874.3	1,751.3	123.0	743.1

सारणी 5.20 : म्यूचुअल फंडों द्वारा क्षेत्रवार जुटाये गये निवल संसाधन

(करोड़ रुपये)

वर्ष	यूटीआइ	सरकारी क्षेत्र	निजी क्षेत्र
1	2	3	4
2000-01	9,850	-1,045	323
2001-02	13,050	1,409	-7,284
2002-03	12,069	1,561	-9,434
2003-04	42,545	2,597	1,667
2004-05	7,600	-2,677	-2,722
2005-06	42,977	6,379	3,424
2006-07	79,038	7,621	7,326
2007-08	1,33,304	10,677	9,820
2008-09	-3,659	9,380	-34,018
2009-10	15,753	12,499	54,928
2010-11 (अप्रै-मई)	7,162	11,397	1,04,437

5.95 रिज़र्व बैंक ने म्यूचुअल फंडों द्वारा अनुभव किये गये चलनिधि-जन्य दबाव पर ध्यान देने के लिए तेजी से कार्रवाई की। एलएएफ के अंतर्गत 60,000 करोड़ रुपये की राशि के लिए एक मीयादी रिपो सुविधा आरंभ की गयी, ताकि म्यूचुअल फंडों, एनबीएफसी और और आवास वित्त कंपनियों द्वारा अनुभव किये गये चलनिधि-जन्य दबाव को कम करने में बैंक समर्थ हों और इसके साथ एसएलआर में एनडीटीएल के 1.5 प्रतिशत की छूट भी दी गयी। साथ ही, रिज़र्व बैंक और सभी देशों के केंद्रीय बैंकों द्वारा आरंभ किये गये नीतिगत उपायों ने देशी और अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में स्थिरता की स्थिति बहाल करने और शेयर बाजारों के पुनरुत्थान को वर्ष 2009-10 के प्रारंभ से सुकर बनाया। शेयर बाजारों के पुनरुत्थान और प्रणाली में प्रचुर चलनिधि उपलब्ध होने से बाजार के रुझान में उछाल आया और उसने वर्ष 2009-10 के दौरान म्यूचुअल फंडों के कार्यकलापों को सहारा दिया।

गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों पर प्रभाव

5.96 म्यूचुअल फंडों, जिन्होंने एनबीएफसी सहित अन्य क्षेत्रों को बारहमासी आधार पर संसाधन प्रदान किये थे, के पास चलनिधि का अभाव हो जाने और इसके साथ-साथ विदेशी निधीयन एवं देशी चलनिधि की स्थिति के कठोर हो जाने से एनबीएफसी को निधियों की उपलब्धता के लिए और दबाव बढ़ गया। एनबीएफसी (आरएनबीसी को छोड़ कर) की कुल आस्तियों में वर्ष 2008-09 के दौरान मामूली वृद्धि हुई, जबकि वर्ष 2007-08 के दौरान इनमें काफी बढ़ोतरी हुई थी

(सारणी 5.21)। एनबीएफसी के उधार संविभाग में, जो उनके वित्तपोषण का प्रमुख स्रोत होता है, वृद्धि में तीव्र गिरावट देखने को मिली। एनबीएफसी द्वारा जनता-जमाराशियों के माध्यम से संसाधन संग्रहण में पिछले वर्ष की तुलना में वर्ष 2008-09 में उच्च गति से गिरावट दर्ज की गयी। इसके साथ-साथ, रिज़र्व बैंक ने एनबीएफसी के लिए विनियामक एवं सुदृढ़ता मानदंडों को कठोर बनाया ताकि वित्तीय स्थिरता और जमाकर्ताओं के हित सुरक्षित रहें।

5.97 देयता-पक्ष में भी, एनबीएफसी के व्यवसाय-कार्यकलापों में वर्ष 2008-09 के दौरान तेजी से गिरावट आयी। उनके द्वारा दिये गये ऋणों एवं अग्रिमों में वर्ष 2007-08 की तुलना में वर्ष 2008-09 में काफी कमी आयी, जो वैश्विक वित्तीय संकट के चलते विविध स्रोतों से संसाधनों के कम होते जाने को प्रतिबिंबित करता है। एनबीएफसी द्वारा किये गये निवेशों में वृद्धि में भी पिछले वर्ष की तुलना में वर्ष 2008-09 में काफी गिरावट दर्ज की गयी। नकदी संकट ने एनबीएफसी को अन्य आस्तियों, यथा, किराया खरीद आस्तियाँ, उपस्कर लीज़िंग, और बिल संबंधी कारोबार, में अपने एक्सपोजर में कटौती करने के लिए बाध्य किया। वास्तविक कार्यकलापों में कमी आने के चलते अदायगियों में चूक करने में वृद्धि हुई, विशेष रूप से किराया खरीद आस्तियों के मामले में, और इसीलिए एनबीएफसी के सकल अग्रिमों के प्रतिशत के रूप में सकल अनर्जक आस्तियाँ, जो वर्ष 2001 से अवरोही प्रक्षेप-पथ पर थीं, वर्ष 2009 में बढ़ गयीं (सारणी 5.22)।

5.98 एनबीएफसी, म्यूचुअल फंडों और वाणिज्यिक बैंकों के बीच निधीयन सहबद्धता को देखते हुए, जब वैश्विक वित्तीय संकट की संक्रामकता ने भारत के शेयर बाजारों पर विक्रय दबाव का सृजन किया, तब पूरी वित्तीय प्रणाली की चलनिधि संबंधी आवश्यकताओं

सारणी 5.21 : एनबीएफसी-डी का समेकित तुलनपत्र

(राशि करोड़ रुपये में)

मद	मार्च के अंत में		घट-बढ़			
			2007-08		2008-09	
	2007-08	2008-09 अ	समग्र	प्रतिशत	समग्र	प्रतिशत
1	2	3	4	5	6	7
देयताएँ						
1. चुकता पूँजी	3,266	3,508	998	44.0	242	7.4
	(4.4)	(4.6)				
2. रिज़र्व और अधिशेष	8,695	9,337	2,834	48.4	642	7.4
	(11.7)	(12.4)				
3. जनता जमाराशि	2,042	1,941	-35	-1.7	-101	-4.9
	(2.7)	(2.6)				
4. उधार	50,577	55,289	18,125	55.9	4,712	9.3
	(67.8)	(73.2)				
5. अन्य देयताएँ	9,982	5,441	4,087	69.3	-4,541	-45.5
	(13.4)	(7.2)				
देयताएँ/आस्तियाँ	**74,562**	**75,516**	**26,008**	**53.6**	**954**	**1.3**
आस्तियाँ						
1. निवेश	11,210	14,813	3,798	51.2	3,603	32.1
	(15.0)	(19.6)				
i) अनुमोदित प्रतिभूतियाँ@	7,146	9,230	2,859	66.7	2,084	29.2
ii) अन्य निवेश	4,064	5,583	939	30.0	1,519	37.4
	(5.5)	(7.4)				
2. ऋण एवं अग्रिम	18,823	21,073	7,764	70.2	2,250	12.0
	(25.2)	(27.9)				
3. किराया खरीद आस्तियाँ	33,525	35,647	7,303	27.9	2,122	6.3
	(45.0)	(47.2)				
4. उपकरण पट्टादायी आस्तियाँ	1,048	585	-317	-23.2	-463	-44.2
	(1.4)	(0.8)				
5. बिल कारोबार	12	23	5	71.4	11	91.7
	(0.0)	(0.0)				
6. अन्य आस्तियाँ	9,944	3,375	7,456	299.7	-6,569	-66.1
	(13.3)	(4.5)				

एनबीएफसी-डी का संबंध जमाराशि ग्रहण करने वाली एनबीएफसी से है । अ. अनंतिम।
@ : एसएलआर आस्तियों में 'अनुमोदित प्रतिभूतियाँ' और अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों में 'भार-रहित मीयादी जमाराशियाँ' समाविष्ट हैं।
टिप्पणी : कोष्ठक के आँकड़े संबंधित कुल राशियों में प्रतिशत हिस्सा हैं।
स्रोत : भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति और प्रगति की रिपोर्ट, 2008-09।

सारणी 5.22 : एनबीएफसी-डी का एनपीए अनुपात

(प्रतिशत)

अंत मार्च	सकल अग्रिमों की की तुलना में सकल एनपीए	निवल अग्रिमों की तुलना में निवल एनपीए
1	2	3
2001	11.5	5.6
2002	10.6	3.9
2003	8.8	2.7
2004	8.2	2.4
2005	5.7	2.5
2006	3.6	0.5
2007	2.2	0.2
2008	2.1	0*
2009 अ	2.7	0*

अ : अनंतिम।

* : प्रावधान एनपीए से अधिक है।

स्रोत : भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति और प्रगति की रिपोर्ट, 2008-09।

पर रिज़र्व बैंक को ध्यान देना पड़ा (चक्रवर्ती, 2009)। रिज़र्व बैंक ने वित्तीय दृष्टि से दबावग्रस्त एनबीएफसी को राहत देने के लिए वर्ष 2008-09 के दौरान अनेक उपायों की घोषणा की (बॉक्स V.6)। एनबीएफसी के मामले में, पूँजी जुटाने की उनकी आवश्यकता को देखते हुए उन्हें पूँजी के लिए अर्हक बेमीयादी ऋण लिखतें जारी करने की अनुमति दी गयी। उन्हें 15 प्रतिशत के बढ़े हुए जोखिम भारित परिसंपत्तियों की तुलना में पूंजी का अनुपात (सीआरएआर), जिसकी मौजूदा अपेक्षा 12 प्रतिशत थी, बनाये रखने की शर्त का अनुपालन करने के लिए भी और एक वर्ष की अतिरिक्त अवधि स्वीकृत की गयी। एनबीएफसी के प्रति बैंकों के एक्सपोज़र पर जोखिम भार, जो पहले बढ़ाया गया था, कमक़र दिया गया। चलनिधि दबाव को कम करने के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक को प्रदान की गयी पुनर्वित्त सुविधा का लाभ भी एनबीएफसी को मिला।

5.99 सारांशत: यह कहा जा सकता है कि वर्ष 2008-09 के दौरान एनबीएफसी के वित्तीय कार्यसंपादन में पिछले वर्ष की तुलना में ह्रास हुआ, जिसका कारण था तीव्र चलनिधि दबाव, जिसने अंतत:

बॉक्स V.6
एनबीएफसी द्वारा सामना किये गये वित्तीय दबाव पर ध्यान देने के लिए किये गये नीतिगत उपाय

- गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों - जमाराशि स्वीकार नहीं करने वाली और सर्वांगी दृष्टि से महत्त्वपूर्ण (एनबीएफसी-एनडी-एसआइ) - को अस्थायी उपाय के रूप में अनुमति दी गयी कि वे अनुमोदित माध्यम के अंतर्गत अल्पावधि विदेशी मुद्रा उधार जुटा सकती हैं, बशर्ते कि वे कुछ शर्तों को पूरा करें। जबकि जुटाये गये संसाधनों का उपयोग केवल अल्पावधि देयताओं का पुनर्वित्तपोषण करने के लिए किया जाना था, न कि नयी आस्तियों का सृजन करने के लिए, उन्हें यह भी कहा गया कि ऐसे उधारों की परिपक्वता अवधि तीन वर्ष से अधिक न हो और उनकी अधिकतम राशि उनकी निवल स्वाधिकृत निधि के 50 प्रतिशत या 10 मिलियन अमरीकी डालर (या उसके समतुल्य), जो भी अधिक हो, से अधिक न हो। ग्यारह कंपनियों को इस सुविधा के अंतर्गत अनुमति दी गयी कि वे 834.95 मिलियन अमरीकी डालर + 1,566.38 करोड़ रुपये के समतुल्य विदेशी मुद्रा (जिसका उपभोग नहीं किया गया हो) तक की राशि उधार ले सकती हैं, जिनमें से सात कंपनियों ने 645.58 मिलियन अमरीकी डालर तक की राशि उधार ली।
- बैंकों को, अस्थायी आधार पर, यह अनुमति दी गयी कि वे केवल एनबीएफसी और म्यूचुअल फंडों की निधीयन संबंधी जरूरतों को पूरा करने के लिए एलएएफ विंडो के अंतर्गत चलनिधि सहायता, उनके एनडीटीएल के 1.5 प्रतिशत तक एसएलआर में छूट के माध्यम से, का उपभोग करें।
- एनबीएफसी - एनडी - एसआई के प्रति बैंकों के एक्सपोज़र के जोखिम भार को 125 प्रतिशत से घटा कर 100 प्रतिशत कर दिया गया, भले ही उनका ऋण पात्रता निर्धारण कुछ भी हो, जबकि एएफसी का एक्सपोज़र, जिस पर 150 प्रतिशत का जोखिम भार लागू था, भी घटा कर 100 प्रतिशत कर दिया गया।
- एनबीएफसी - एनडी - एसआई को अनुमति दी गयी कि वे बेमीयादी ऋण लिखतें जारी कर अपनी पूँजीगत निधियों को बढ़ा सकती हैं। एनबीएफसी - एनडी - एसआई द्वारा जुटायी गयी पीडीआइ की राशि को रिज़र्व बैंक निदेशों के अर्थांतर्गत 'जनता जमाराशियों' के रूप में नहीं माना जायेगा।
- एनबीएफसी - एनडी - एसआई द्वारा बनाये रखे जाने वाले सीआरआर को बढ़ाकर 12 प्रतिशत और बाद में 15 प्रतिशत (अर्थात् 31 मार्च 2010 तक 12 प्रतिशत और 31 मार्च 2011 तक 15 प्रतिशत) करने का प्रस्ताव एक वर्ष तक आस्थगित रखा गया।
- अंतिम उधारदाता के रूप में प्रत्यक्ष उधार सुविधा प्रदान की, जहाँ आरबीआई एनबीएफसी - एनडी - एसआई को उनके श्रेणी-निर्धारित सीपी पर एसपीवी के माध्यम से उनके बांडों में अभिदान करते हुए उधार देता है। यह सुविधा जनवरी 2009 में एक एसपीवी के माध्यम से, जिसे 'आइडीबीआइ सेफ ट्रस्ट' नाम दिया गया था, कार्यान्वित की गयी ताकि एनबीएफसी के निवेश श्रेणी के पत्र पर चलनिधि सहायता प्रदान की जा सके, बशर्ते उनके द्वारा कुछ शर्तों को पूरा किया जाये। इसका डिजाइन अंतिम उधारदाता सुविधा के तौर पर तैयार किया गया था ताकि वित्तीय दृष्टि से सुदृढ़ उन एनबीएफसी के, जो अल्पावधि के लिए अस्थायी चलनिधि आवश्यकता का अनुभव कर रही थीं, तुलनपत्र को व्यवस्थित रूप से छोटा बनाया जा सके। अब तक इस सुविधा का उपभोग केवल एक एनबीएफसी द्वारा किया गया है जिसने इस स्कीम के अंतर्गत 1,040 करोड़ रुपये का आहरण किया है और आज की तिथि में कोई बकाया शेष नहीं है। भारत सरकार ने इस सुविधा का विस्तार किया है जिससे यह 30 सितंबर 2009 तक जारी किये गये किसी पत्र के लिए उपलब्ध होगी और एसपीवी 31 दिसंबर 2009 के बाद नयी खरीद बंद कर देगा और सभी बकायों की वसूली 31 मार्च 2010 तक कर लेगा।

निधि आधारित कार्यकलापों को मंद किया (सारणी 5.23)। वर्ष 2008-09 के दौरान एनबीएफसी की निधि आधारित आय में वृद्धि में तेजी से ह्रास हुआ, जबकि फीस आधारित आय में गिरावट थोड़ी कम हुई। इसके साथ ही, एनबीएफसी द्वारा किये गये व्यय की वृद्धि में वर्ष 2008-09 के दौरान गिरावट आयी, लेकिन गिरावट की दर उतनी तेज नहीं थी जितनी कि आय में। पिछले वर्ष की तुलना में वर्ष 2008-09 के दौरान एनबीएफसी का बढ़ा हुआ लागत-आय-अनुपात भी आय-वृद्धि में तीव्र गिरावट को प्रतिबिंबित करता था।

सारणी 5.23: एनबीएफसी-डी का वित्तीय कार्यसंपादन

(राशि करोड़ रुपये में)

संकेतक	मार्च अंत की स्थिति के अनुसार		प्रतिशत घट-बढ़	
	2008	2009अ	2007-08	2008-09
1	2	3	4	5
ए. आय (i+ii)	10,038	11,799	75.5	17.5
(i) निधि आधारित	9,832	11,498	75.9	16.9
	(98.0)	(97.0)		
(ii) फीस आधारित	206	301	57.4	46.0
	(2.0)	(3.0)		
बी. व्यय (i+ii+iii)	6,913	8,742	43.1	26.5
(i) वित्तीय	4,525	5,641	63.7	24.7
	(60.0)	(66.0)		
जिसमें से				
ब्याज भुगतान	226	211	-55.5	-6.6
	(6.0)	(2.3)		
(ii) परिचालन	2,178	2,369	72.7	8.8
	(30.5)	(27.6)		
(iii) अन्य	210	732	-73.9	248.6
	(3.4)	(4.1)		
सी. कर प्रावधान	**1,213**	**1,002**	**215.1**	**-17.4**
डी. परिचालन लाभ (पीबीटी)	**3,125**	**3,057**	**251.1**	**-2.2**
ई. निवल लाभ (पीएटी)	**1,912**	**2,055**	**279.4**	**7.5**
एफ. कुल आस्तियाँ	**74,562**	**75,516**	**53.6**	**1.3**
जी. वित्तीय अनुपात (कुल आस्तियों के प्रतिशत के रूप में)				
i) आय	13.5	15.6		
ii) निधि-आधारित आय	97.9	15.2		
iii) फीस आधारित आय	0.3	0.4		
iv) व्यय	9.3	11.6		
v) वित्तीय व्यय	6.1	7.5		
vi) परिचालन व्यय	2.9	3.1		
vii) कर प्रावधान	1.6	1.3		
viii) निवल लाभ	2.6	2.7		
एच. लागत-आय अनुपात	**68.9**	**74.1**		

अ : अनंतिम

टिप्पणी : कोष्ठक के आँकड़े संबंधित कुल योग के प्रतिशत हैं।

स्रोत : वार्षिक विवरणियाँ।

वित्तीय दबाव

5.100 इस खंड में पहले जैसी कि चर्चा की गयी है, उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं ने अपने वित्तीय बाजारों, विशेष रूप से इक्विटी, विदेशी मुद्रा और सरकारी ऋण बाजारों, में वर्ष 2008 की अंतिम तिमाही में दबाव महसूस किया। विनिमय दरों पर अधिक दबाव पड़ने लगा जिसके चलते विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों में मूल्यह्रास और गिरावट आने लगी, जबकि इक्विटी बाजारों में इक्विटी और ऋण निधियों का निक्रमण देखा गया जिससे सितंबर 2008 से शेयर की कीमतों में अधोगामी रुख देखने को मिला। उन्नत और उभरती अर्थव्यवस्थाओं के बीच वित्तीय दबाव में सुदृढ़ सहबद्धता थी जिसमें एक ही समय दोनों पक्षों में संकट आता दिखाई दिया (वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक, आईएमएफ, अप्रैल 2009)।

5.101 वास्तव में, दबाव का संचरण एक ऐसी अर्थव्यवस्था में सुदृढ़ और अधिक प्रत्यक्ष प्रतीत होता है, जो वित्तीय दृष्टि से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से भलीभाँति जुड़ी हुई होती है। कभी-कभी साझे वैश्विक कारक तेजी से उन सभी अर्थव्यवस्थाओं में पसर जाते हैं जो वित्तीय दृष्टि से एकीकृत होती हैं और वित्तीय दबाव उनके बीच आगे-पीछे के क्रम में गमन करता है। ये साझे कारक, अन्य बातों के साथ-साथ, वैश्विक आघात, यथा, उच्च जोखिम विमुखता, बाजार के रुझान में बदलाव और उन बड़ी वित्तीय संस्थाओं की विफलता हो सकते हैं जिनकी उपस्थिति सभी देशों में होती है। ऐसे साझे कारकों की भूमिका अधिकांश उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में पिछले कुछ वर्षों से अधिकाधिक इंद्रियगोचर हुई है जिसमें भारत शामिल है, क्योंकि ये अर्थव्यवस्थाएँ अधिकाधिक एकीकृत हुई हैं। तदनुसार, वित्तीय दबाव उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से भारत की ओर लगभग समसामयिक रूप से, खासकर वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही से आया।

5.102 उपर्युक्त पृष्ठभूमि में, भारत में विकसित होते वित्तीय दबाव का परिमाण-निर्धारण और विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। वित्तीय दबाव की परिभाषा वित्तीय बाजारों में अनिश्चितता और हानि की बदलती प्रत्याशाओं के रूप में दी जा सकती है। किसी अर्थव्यवस्था के लिए वित्तीय दबाव को विभिन्न क्षेत्रों में एक साथ महसूस किया जा सकता है। अर्थव्यवस्था के विकसित क्षेत्रों के लिए अनेक संकेतक होते हैं जो उस विशेष क्षेत्र की घटनाओं को प्रदर्शित करते हैं (सारणी 5.24)। वित्तीय दबाव संकेतक इन भिन्न-भिन्न संकेतकों को एकीकृत संकेतक

सारणी 5.24 मासिक वित्तीय दबाव संकेतक[11]

माह	बीटा	सीडी-वाई91	ईएमपी	यूएसडी_गार्च_एसडी	आईएनवी_आय	सीपी-वाई91	स्टॉक_वाईओवाई_सीएएलबी	गार्च_बीएसई_एसडी
1	2	3	4	5	6	7	8	9
जन-07	2.5	1.6	-0.7	0.5	0.7	1.8	56.3	2.1
फर-07	2.8	3.2	-3.1	0.6	0.9	2.8	70.5	3.5
मार्च-07	2.8	3.7	4.1	0.6	0.9	3.8	80.0	4.2
अप्रै-07	2.6	4.4	-6.1	0.6	2.1	5.3	75.8	2.7
मई-07	2.5	5.9	-3.2	1.2	4.0	6.4	57.4	2.2
जून-07	2.4	2.6	-3.3	0.6	2.0	3.3	54.2	4.0
जुला-07	2.3	1.3	-3.5	0.7	1.1	0.5	48.2	3.8
अग-07	2.0	1.8	4.1	0.6	1.4	2.6	61.5	1.9
सितं-07	2.1	1.1	-2.3	0.7	0.6	1.9	52.4	2.8
अक्तू-07	1.8	1.0	-3.2	0.7	0.5	2.3	34.7	4.4
नवं-07	1.9	1.6	0.0	0.7	1.0	3.1	46.6	3.8
दिसं-07	1.9	1.8	0.5	0.7	0.7	3.0	37.5	2.0
जन-08	2.0	1.6	-2.5	0.7	0.8	4.0	66.5	3.4
फर-08	2.0	2.7	0.4	0.8	1.4	2.6	52.8	5.2
मार्च-08	2.0	2.5	0.5	0.9	1.2	4.2	68.4	3.6
अप्रै-08	1.9	1.7	-1.2	0.9	1.0	1.7	65.9	1.7
मई-08	2.0	0.9	3.4	1.0	0.6	0.9	78.9	4.4
जून-08	2.3	0.6	2.2	1.6	0.5	1.6	98.7	4.9
जुला-08	2.4	0.7	1.8	0.9	0.1	1.9	96.6	3.7
अग-08	2.5	1.4	1.9	0.9	0.0	3.2	94.6	3.0
सितं-08	2.4	3.1	5.6	1.0	0.5	4.9	114.2	4.3
अक्तू-08	2.1	5.9	7.6	1.8	0.7	7.7	143.4	4.7
नवं-08	1.9	4.8	-0.6	1.4	0.7	7.1	144.5	5.5
दिसं-08	1.8	5.5	-1.9	0.9	1.2	7.8	144.1	4.6
जन-09	1.5	4.7	0.4	0.8	1.4	5.9	136.3	3.3
फर-09	1.3	4.0	0.7	0.8	1.6	4.2	139.4	4.5
मार्च-09	1.4	3.9	2.2	0.9	2.4	5.2	128.5	5.0
अप्रै-09	1.2	4.4	-1.2	1.4	2.7	4.2	125.0	3.5
मई-09	1.4	2.4	-2.7	1.4	3.6	3.4	100.9	3.3
जून-09	1.6	2.7	-0.7	0.9	3.9	4.2	86.1	5.6
जुला-09	1.8	2.8	0.4	0.7	4.0	3.0	85.3	4.9
अग-09	1.9	2.7	-0.4	1.0	4.2	3.1	85.4	1.5
सितं-09	2.0	1.9	0.3	0.8	4.5	3.1	62.6	3.7
अक्तू-09	2.0	2.0	-2.0	0.8	4.6	2.7	29.0	5.5
नवं-09	2.1	2.2	0.0	1.3	4.7	2.8	9.6	3.7
दिसं-09	2.1	1.9	0.8	0.9	4.5	3.3	16.5	0.3
जन-10	2.2	1.8	0.0	0.9	4.2	1.8	10.5	4.4
फर-10	2.3	1.8	1.1	1.0	4.3	2.2	14.2	5.0
मार्च-10	2.3	1.3	-0.1	1.0	3.5	2.4	18.5	2.0
अप्रै-10	2.4	2.2	-1.0	1.1	2.8	2.3	40.4	1.8

से संयुक्त करता है और वित्तीय प्रणाली में दबाव के वर्तमान अंश की माप करता है।

5.103 वित्तीय दबाव संकेतकों में वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही में पर्याप्त वृद्धि हुई, जैसाकि सितंबर और अक्तूबर 2008 के दौरान वित्तीय दबाव संकेतकों में हुई तीव्र वृद्धि से स्पष्ट है। वास्तव में, भारत के लिए वित्तीय दबाव संकेतकों में अगस्त 2007 से ऊर्ध्वमुखी गति देखी गयी जो सब-प्राइम संकट के सुलझने के बाद हुई थी, और यह अक्तूबर 2008 में शिखर तक पहुँच गयी, जो सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स की विफलता के बाद अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में गहराती उथल-पुथल को प्रतिबिंबित करती है। लेकिन तेजी से किये गये नपे-तुले उपायों, मौद्रिक और राजकोषीय दोनों, ने भारतीय वित्तीय बाजारों में नवंबर 2008 से वित्तीय दबावों को कम किया और तब से वित्तीय दबाव संकेतकों में कमी आती जा रही है (चार्ट V.20)।

5.104 यह देखा गया है कि सभी प्रमुख उन्नत अर्थव्यवस्थाओं ने एक साथ अगस्त 2008 के महीने में अचानक बढ़े हुए वित्तीय दबाव का अनुभव किया, जो नवंबर 2008 तक बना रहा और उसके बाद उसमें कमी आयी। भारत के वित्तीय दबाव संकेतकों में अमेरिका, पश्चिमी यूरोप, जापान और समूची उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के साथ-साथ उतार-चढ़ाव आते रहे (चित्र V.20 और V.21)। यह दर्शाता है कि भारत में वित्तीय संकट या तो एक साझे कारक द्वारा प्रेरित है या उन्नत बाजारों से भारतीय बाजारों में दबाव का संचरण समसामयिक रूप से हुआ है।

5.105 संक्षेप में कहा जाये तो इस खंड में भारतीय वित्तीय संस्थाओं, यथा, बैंकों, म्यूचुअल फंडों और गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों पर वैश्विक वित्तीय संकट के प्रभाव का विश्लेषण किया गया है। चूँकि संमिश्र वित्तीय उत्पादों में उनका अंतरराष्ट्रीय एक्सपोज़र बहुत सीमित

[11] **बीटा** = cov(r,m)/var(m), जिसकी गणना मासिक आधार पर आवर्ती 1-वर्षीय समय-सीमा पर की जाती है, जहाँ r=वर्ष-दर-वर्ष बैंक कुल मूल्य सूचकांक (उदाहरणार्थ, बैंकेक्स) में प्रतिशत परिवर्तन होता है और m=वर्ष-दर-वर्ष सामान्य शेयर सूचकांक (उदाहरणार्थ, सेंसेक्स) में प्रतिशत परिवर्तन होता है ।
सीडीवाई91= जमा प्रमाणपत्र (सीडी) होता है, जो खजाना बिल दर पर विस्तारित होता है ।
विनिमय बाजार दबाव सूचकांक (ईएमपी) : ईएमपी का निर्माण विनिमय दर, विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों और ब्याज दर में परिवर्तन के भारित औसत पर आधारित होता है (EMP=(ex-mean(ex)/sd(ex) - (res-mean(res)/sd(res)+((int-mean(int)/sd(int), जहाँ ex=विनिमय दर(आइएनआर-यूएसडी) में परिवर्तन, res=विदेशी मुद्रा आरक्षित निधि में परिवर्तन, int= अल्पावधि ब्याज दर (मुंबई अंतर-बैंक प्रस्तावित दर - मिबोर) में परिवर्तन है । sd = मानक विचलन है ।
यूएसडी_गार्च_एसडी : आईएनआर-यूएसडी विनिमय दर की गार्च (1,1) अस्थिरता है ।
आईएनवी_लाभ (इन्वर्टेड यील्ड कर्व) : 5 और 10-वर्षीय भारत सरकार बेंचमार्क बांड आय घटाव 91-दिवसीय खजाना बिल दर।
सीपीवाई91 : वाणिज्यिक पत्र स्प्रेड : 90-दिवसीय वाणिज्यिक पत्र दर घटाव 91-दिवसीय खजाना बिल दर।
स्टॉक_वाईओवाई_सीएएलबी : बीएसई सेंसेक्स शेयर मूल्य सूचकांक का मासिक वर्ष-दर-वर्ष प्रतिलाभ।
गार्च_बीएसई_एसडी : बीएसई सेंसेक्स की गार्च (1.1) अस्थिरता।

चार्ट V.20 : वित्तीय दबाव संकेतक

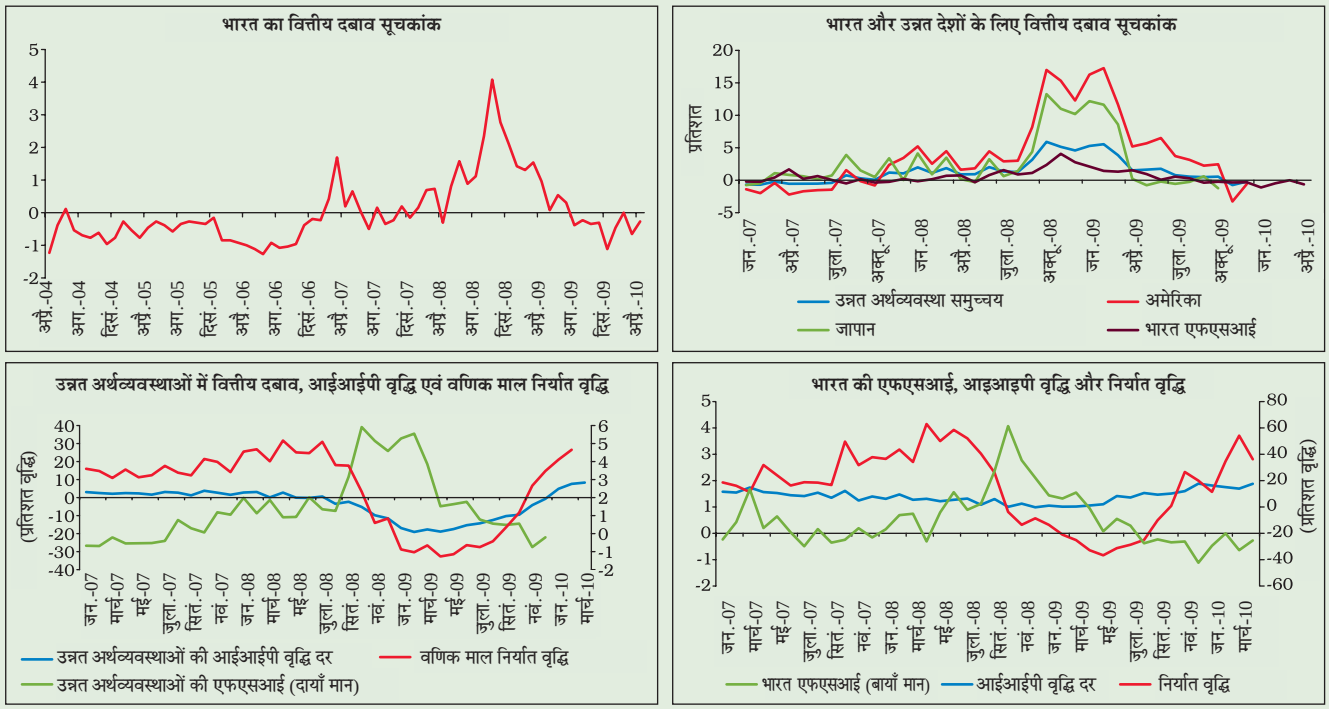

था, अत: भारतीय बैंकिंग क्षेत्र ने संकट के पहले दौर में उसके ताप को महसूस नहीं किया। तथापि, वित्तीय संकट के गहराते जाने और सभी देशों में फैलते जाने, विशेष रूप से सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स की विफलता के बाद, से भारतीय वित्तीय संस्थाओं ने अनेक अन्य उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के साथ हाल के वित्तीय संकट की चुनौतियों का सामना इस ढंग से किया, जो उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में उनके काउंटरपार्ट से थोड़ा भिन्न था। वैश्विक वित्तीय संकट के अप्रत्यक्ष प्रभाव पहले-पहल इक्विटी बाजारों के माध्यम से महसूस किये गये, जो अंतत: वित्तीय बाजार के अन्य खंडों, यथा, मुद्रा बाजार और विदेशी मुद्रा बाजार तक फैल गये। देशी बाजार में चलनिधि की स्थिति के कठोर बनने और अंतरराष्ट्रीय बाजारों से संसाधन उपलब्ध न होने के साथ पूँजी प्रवाह के विपर्यय ने वित्तीय संस्थाओं के सामने अर्थव्यवस्था की उत्पादक आवश्यकताओं का वित्तपोषण करने की चुनौती खड़ी कर दी। चूँकि व्यापार के माध्यम से संकट के प्रभाव ने भारतीय वृद्धि की कहानी को दाँव पर लगा दिया, अत: रिज़र्व बैंक ने चलनिधि की स्थिति को सहज बनाने के लिए अनेक उपाय किये ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि बैंकों और म्यूचुअल फंडों को प्रचुर संसाधन प्राप्त होते हैं और वे भारतीय कारपोरेटों से ऋण की मांग को पूरा करने में समर्थ होते हैं। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में बैंकिंग प्रणाली में जन-विश्वास में जो कमी हुई थी, उसके विपरीत भारतीय बैंकिंग प्रणाली में जनता का विश्वास बना रहा, जैसाकि इसमें निरंतर जमा-वृद्धि से स्पष्ट है।

5.106 अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के तुलन-पत्र के विश्लेषण से इस बात का खुलासा होता है कि किस प्रकार भारतीय बैंकों ने अपने व्यवसाय परिचालनों में उभरती चुनौतियों का सामना करने के लिए समायोजन किये। बड़े बैंकों के व्यवहार में मझोले और छोटे बैंकों की तुलना में स्पष्टत: भिन्न अंतर दिखाई पड़ा। भारतीय बैंकिंग क्षेत्र ने अपने तुलन-पत्र बाह्य कार्यकलापों को मंथर गति से चला कर अपनी परिपक्वता का भी प्रदर्शन किया। नीतिगत उपायों ने चलनिधि संबंधी समस्या को वित्तीय प्रणाली के अन्य क्षेत्रों में फैलने से रोकने और सामान्य स्थिति बहाल करने में द्रुत गति से काम किया। जब भारत के मामले में वित्तीय दबाव सूचकांक का विश्लेषण किया जाता है, तब पता चलता है कि इसमें सितंबर और अक्तूबर 2008 में तेज वृद्धि हुई और इसमें समकालिक उतार-चढ़ाव अमेरिका, पश्चिमी यूरोप, जापान और समस्त उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के साथ-साथ दिखाई पड़ा। यह वित्तीय प्रणाली की वैश्विक अंतर्संबद्धता को रेखांकित करता है और

लगभग तक्षण दबाव-स्थिति का प्रसार सभी राष्ट्रों में प्रदर्शित होता है। यह पृथक्करण सिद्धांत के लिए सबसे बड़ी चुनौती हो सकता है।

IV. नीतिगत उपाय

5.107 सितंबर 2008 से वैश्विक वित्तीय झंझावात के तेज होने के पूर्व भारत में मौद्रिक और राजकोषीय नीतिगत उपायों का मार्गदर्शन इस अभिभावी अभिप्राय से किया जाता था कि उन उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही स्फीतिकारक प्रत्याशाओं को रोका जाये जो अधिकतर अंतरराष्ट्रीय पण्य-कीमतों से प्रेरित होती थीं। मौद्रिक नीति का प्रयास मांग-पक्ष से संबंधित दबावों को मौद्रिक कठोरता के माध्यम से मंद करना था। इसके साथ ही, राजकोषीय नीति बहुत सारे उपायों के साथ आपूर्ति-पक्ष से संबंधित बाधाओं को दूर करने का प्रयास कर रही थी, जैसेकि उत्पाद शुल्क और सीमा-शुल्क में कटौती करना और अन्य बातों के साथ-साथ आवश्यक वस्तुओं के आयात को प्रोत्साहित करना।

5.108 संकट के प्रति भारत की नीतिगत प्रतिक्रिया यह थी कि बाहर से आये संकट के संक्रमण को रोका जाये - जिसके लिए देशी मुद्रा और ऋण बाजार सामान्य रूप से कार्य करते रहें और यह देखते रहा जाये कि चलनिधि-जन्य दबावों से उत्तरोत्तर शोधनक्षमता का प्रसार उत्प्रेरित नहीं हो। विशेष रूप से, वित्तीय क्षेत्र के संबंध में तीन उद्देश्यों का अनुसरण किया गया : पहला, पर्याप्त रुपया चलनिधि की स्थिति बनाये रखना; दूसरा, विदेशी मुद्रा चलनिधि बढ़ाना; और तीसरा, एक ऐसा नीतिगत ढाँचा बनाये रखना जिससे ऋण उपलब्ध कराने का कार्य पटरी पर आ जाये ताकि वृद्धि में आयी नरमी को रोका जा सके। वैश्विक वित्तीय झंझावात द्वारा लायी गयी चुनौतियों के अतिरिक्त, नीतिगत प्रतिक्रिया में उन चुनौतियों को भी शामिल किया गया जो अल्पावधि शमन एवं मध्यावधि धारणीयता (अल्पावधि की निरंकुशता) से संबंधित थीं। इस खंड में उन विविध नीतिगत प्रतिक्रियाओं की रूपरेखा प्रस्तुत की गयी है जिन्हें भारत ने वैश्विक वित्तीय संकट की पृष्ठभूमि में व्यक्त किया था। उपर्युक्त उद्देश्यों को पूरा करने के लिए भारत सरकार और भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा मध्य सितंबर 2008 से अनेक नीतिगत पैकेजों के रूप में उपाय आरंभ किये गये थे। कुछ अवसरों पर ये उपाय अप्रत्याशित वैश्विक गतिविधियों की प्रतिक्रिया में किये गये और अन्य समय में भारतीय बाजारों पर संभावित वैश्विक गतिविधियों के प्रभाव की प्रत्याशा में किये गये।

राजकोषीय नीतिगत प्रतिक्रिया

5.109 वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में अभूतपूर्व वैश्विक गतिविधियों ने सरकार को बाध्य कर दिया कि वह एक विस्तारक राजकोषीय दृष्टिकोण अपनाये ताकि अर्थव्यवस्था को वैश्विक संकट के प्रभाव से बचाया जा सके। राजकोषीय नीति के दृष्टिकोण में यह बदलाव वैश्विक संकट के प्रभाव को कम करने के लिए अंतरराष्ट्रीय प्रवृत्ति के अनुरूप था और मुख्यधारा के उस दृष्टिकोण के भी अनुरूप था कि गहन एवं दीर्घीकृत आर्थिक मंदी की स्थिति में, जैसाकि वर्तमान संदर्भ में था, स्थिरीकरण में राजकोषीय नीति प्रमुख भूमिका अदा कर सकती है। यद्यपि भारत में वित्तीय बाजार अंतरराष्ट्रीय गतिविधियों के अनुरूप उच्च अस्थिरता का अनुभव कर रहे थे, जिसके चलते संपार्श्विक नुकसान होता था, फिर भी बैंकिंग प्रणाली सुदृढ़ और अच्छी पूँजी वाली बनी रही। भारतीय बैंकों के संबंध में किये गये दबाव परीक्षणों से पता चलता है कि यह क्षेत्र ऋण की गुणवत्ता, ब्याज दर और चलनिधि की स्थिति में बड़े संभावित परिवर्तनों से उत्पन्न महत्त्वपूर्ण आघातों को बरदाश्त कर सकता है। अत: भारत में बैंकिंग क्षेत्र को पूँजीकरण/वित्तीय संकट से मुक्त करने के लिए राजकोषीय नीति को सहायता नहीं करनी पड़ी, जैसाकि अधिकांश उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में प्रचलित था। इस प्रकार, राजकोषीय प्रतिक्रिया का अधिक जोर विवेकाधीन राजकोषीय नीति के माध्यम से सकल मांग में वृद्धि करते हुए आर्थिक मंदी को रोकने के प्रयास पर था। तथापि, इस संकट की सघनता और असाधारण प्रभाव यह स्पष्ट रूप से सूचित करते थे कि प्रतिचक्रीय सरकारी खर्च करने की आवश्यकता थी और, तदनुसार, केंद्र सरकार ने राजकोषीय दायित्व और बजट प्रबंध अधिनियम के संकटकालीन प्रावधानों को लागू करते हुए राजकोषीय लक्ष्यों में छूट दी और दिसंबर 2008 तथा जनवरी 2009 में राजकोषीय प्रोत्साहन पैकेजों को आरंभ किया (सुब्बाराव, 2009)।

5.110 राजकोषीय नीतिगत उपायों में, जो वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही के दौरान तीन राजकोषीय प्रोत्साहन पैकेजों के रूप में लागू किये गये थे, कर-कटौती, आधारभूत संरचना क्षेत्र में निवेश को बढ़ावा देना और निवेश एवं उपभोग, दोनों पर खर्च बढ़ाना, जिसमें उपभोग पर खर्च का हिस्सा अधिक हो, शामिल था। विस्तारक राजकोषीय दृष्टिकोण वर्ष 2009-10 के केंद्रीय बजट में, जिसे अर्थव्यवस्था की वृद्धि में नरमी और वैश्विक अर्थव्यवस्था में स्थिरीकरण की पृष्ठभूमि में प्रस्तुत किया गया था, बना रहा। महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों, यथा, आधारभूत

संरचना, शिक्षा एवं स्वास्थ्य, ग्रामीण रोजगार और आबादी के असुविधाग्रस्त वर्गों, को सशक्त बनाने के लिए आबंटन में वर्ष 2009-10 के केंद्रीय बजट में काफी बढ़ोतरी की गयी। वस्तुत: वर्ष 2009-10 के केंद्रीय बजट में एक कदम आगे बढ़कर अल्पावधि और मध्यावधि की महत्त्वपूर्ण चुनौतियों पर ध्यान दिया गया, यथा, अर्थव्यवस्था का पुनरुत्थान करना, ताकि यह शीघ्रीतिशीघ्र 9.0 प्रतिशत प्रतिवर्ष की वृद्धि-दर प्राप्त कर सके; समावेशी विकास के लिए कार्यसूची को सघन और विस्तृत बनाना; सरकार को पुन: ऊर्जान्वित करना; और सुपुर्दगी तंत्र में सुधार लाना। उल्लेखनीय रूप से, वर्ष 2009-10 के लिए राजकोषीय नीति ने भी शीघ्रातिशीघ्र और जैसे ही भारतीय अर्थव्यवस्था पर वैश्विक संकट का नकारात्मक प्रभाव कम हो, वैसे ही राजकोषीय समेकन के पथ पर लौटने के महत्त्व को दुहराया। मध्यावधि धारणीयता प्राप्त करने के लिए राजकोषीय नीति में संस्थागत सुधारों के महत्त्व को भी मान्यता दी गयी जिसमें बजट के सभी पहलुओं, यथा, आर्थिक सहायता, करों, व्यय और विनिवेश, को शामिल किया गया।

5.111 जीडीपी के 3.0 प्रतिशत तक की राशि के अतिरिक्त व्यय का प्रावधान अक्तूबर-दिसंबर 2008 और फरवरी 2009 के दौरान तीन अनुपूरक अनुदान मांगों के माध्यम से किया गया। व्यय संबंधी उपायों में, राजस्व व्यय का हिस्सा लगभग 84 प्रतिशत था और शेष राशि पूँजी घटक के लिए जिम्मेवार थी (आरबीआई की वार्षिक रिपोर्ट 2008-09)। कुल मिलाकर, ऐसा लगता है कि राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों ने निवेश मांग की अपेक्षा उपभोग मांग को समर्थन दिये जाने पर अधिक जोर दिया। वर्ष 2008-09 में राजकोषीय घाटा बढ़कर जीडीपी का 6.0 प्रतिशत हो गया, जबकि वर्ष 2007-08 में यह जीडीपी का 2.7 प्रतिशत था (बॉक्स V.7)।

5.112 यह उल्लेखनीय है कि चक्रीय गिरावट, जो पहले से ही जारी थी, में हाल के वैश्विक संकट के आरंभ होने से इजाफा हुआ, विशेष रूप से वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में, जिसका प्रभाव यह हुआ कि वित्तीय मध्यस्थता में कमी आयी और उपभोक्ता एवं कारोबारी भरोसे में गिरावट आयी। अत: वर्तमान संदर्भ में राजकोषीय नीति की भूमिका पूर्व में आयी सामान्य कारोबारी मंदी से अलग हो सकती है। इस प्रकार, वर्ष 2008-09 और 2009-10 के दौरान अर्थव्यवस्था में मंदी को रोकने और उसका पुनरुत्थान करने में प्रतिचक्रीय राजकोषीय नीति की प्रभावोत्पादकता का मूल्यांकन भारत में अतीत में आयी सामान्य चक्रीय मंदी से अलग तरीके से करने की आवश्यकता है। भारत जैसे देश में सामान्य आर्थिक स्थितियों या आर्थिक चक्रों के दौरान वृद्धि को प्रोत्साहन देने के लिए की गयी राजकोषीय नीति संबंधी अनुक्रिया राजकोषीय घाटे की धारणीयता को खतरे में डाल सकती है और मध्यावधि से लेकर दीर्घावधि तक वृद्धि के प्रतिकूल हो सकती है। यह देखा गया है कि 1980 के दशक के दौरान बड़े राजकोषीय घाटे पर आधारित वृद्धि के कारण भारत में अधारणीय युग्म घाटा हुआ था।

5.113 यह देखते हुए कि हाल की मंदी की यह विशिष्टता थी कि निजी क्षेत्र की मांग में तीव्र गिरावट भरोसे में कमी के चलते तथा निर्यात में गिरावट के चलते आयी थी, यह उम्मीद की गयी थी कि सरकारी खर्च में वृद्धि से गिरती हुई समग्र मांग को अस्थायी रूप से अपेक्षित प्रोत्साहन मिलेगा। मौद्रिक नीति समंजनकारी थी; जब वित्तीय संस्थाओं द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों के प्रति चाह बढ़ी हुई थी, तब यह महसूस किया गया था कि ब्याज दरों में काफी बढ़ेतरी नहीं होगी। अत: विवेकाधीन राजकोषीय प्रोत्साहन के लिए यह अनुमान लगाया गया था कि इसका पहले की तुलना में अलग निहितार्थ होगा।

5.114 भारत में राजकोषीय नीति वर्ष 2008-09 के दौरान बहुत हद तक अर्थव्यवस्था में मंदी को थामने के अपने उद्देश्य को प्राप्त करती प्रतीत होती है। वृद्धिशील जीडीपी में बाजार दर पर सरकारी उपभोग का योगदान वर्ष 2008-09 की पहली छमाही के लगभग 8 प्रतिशत से बढ़कर दूसरी छमाही में 80 प्रतिशत हो गया (चार्ट V.21)। सरकारी उपभोग में इस प्रकार की बड़ी बढ़ोतरी, जिसके साथ सरकार द्वारा आधारभूत संरचना क्षेत्र में किया गया व्यय विशेष रूप से जुड़ा था, ने संभवत: अर्थव्यवस्था की हरीतिमा को पुनरुज्जीवित किया और इसमें वर्ष 2009-10 के आरंभ से उछाल आया (देखें अध्याय 6)। उपर्युक्त साक्ष्य से यह समझा जा सकता है कि राजकोषीय प्रोत्साहन के अभाव में, वृद्धि में आयी मंदी वर्ष 2008-09 के दौरान और गंभीर हो सकती थी।

निकास रणनीति

5.115 राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों ने अल्पावधि में आर्थिक मंदी को रोकने के उद्देश्य को अधिकांशत: प्राप्त कर लिया, जैसाकि वर्ष 2009-10 में वृद्धि के पुनरुत्थान से प्रतिबिंबित होता है। इस प्रकार राजकोषीय नीति ने मंदी को रोकने के अपने दृष्टिकोण में बदलाव

बॉक्स V.7
वैश्विक वित्तीय संकट की पृष्ठभूमि में राजकोषीय नीति प्रतिक्रिया

केंद्रीय बजट : 2008-09

कर कटौतियाँ

उत्पाद शुल्क

- केंद्रीय उत्पाद शुल्क की तीन यथामूल्य दरें, उदाहरणार्थ, 14 प्रतिशत, 12 प्रतिशत और 8 प्रतिशत, जो गैर-पेट्रोलियम उत्पादों पर लागू थीं, उनमें से प्रत्येक को 4 प्रतिशत अंक घटाकर क्रमश: 10 प्रतिशत, 8 प्रतिशत और 4 प्रतिशत किया गया। संमिश्र दरों (विनिर्दिष्ट एवं यथामूल्य दरें) में *यथामूल्य* अवयव छोटी कारों से भिन्न कारों पर 24 प्रतिशत से घटाकर 20 प्रतिशत किया गया।
- सीमेंट पर कर की दर में भी कटौती की गयी। सूती कपड़ों और टेक्सटाइल वस्तुओं पर शुल्क की दर को 4 प्रतिशत से घटाकर शून्य कर दिया गया।
- 7 दिसंबर 2008 से उत्पाद शुल्क की दरों में की गयी 4 प्रतिशत अंक की सामान्य कटौती को 31 मार्च 2009 के बाद तक विस्तारित किया गया। सामान्य केंद्रीय उत्पाद शुल्क दर को 10 प्रतिशत से घटाकर 8 प्रतिशत किया गया। थोक सीमेंट पर केंद्रीय उत्पाद शुल्क की दर, जो 10 प्रतिशत या 290 रुपये प्रति मीटिक टन थी, जो भी अधिक हो, उसे घटा कर 8 प्रतिशत या 230 रुपये प्रति मीटिक टन, जो भी अधिक हो, किया गया।

सेवा कर

- निर्यातकों द्वारा कर-योग्य 18 सेवाओं पर भुगतान किये गये सेवा कर, जो वस्तुओं के निर्यात पर आरोप्य थे, की धन-वापसी निकासी व अग्रेषण एजेंटों द्वारा निर्यातकों को प्रदान की गयी सेवाओं के लिए भी विस्तारित की गयी।
- निर्यातकों द्वारा विदेशी कमीशन एजेंट सेवाओं के लिए भुगतान किये गये सेवा कर की धन-वापसी की आरंभिक सीमा वस्तुओं के निर्यात के फ्री ऑन बोर्ड मूल्य के 2 प्रतिशत से बढ़ा कर 10 प्रतिशत कर दी गयी।
- कर-योग्य सेवाओं पर सेवा कर 12 प्रतिशत से घटाकर 10 प्रतिशत किया गया।

सीमा शुल्क

- विद्युत ऊर्जा उत्पन्न करने के लिए आयातित नाफ्था को मूलभूत सीमा शुल्क से पूर्णतया छूट प्रदान की गयी।
- बारीक लौह अयस्क पर 8 प्रतिशत का निर्यात शुल्क वापस लिया गया, जबकि लौह अयस्क पिंडों पर निर्यात शुल्क की दर 15 प्रतिशत से घटाकर 5 प्रतिशत *यथामूल्य* कर दी गयी।
- टर्मिनल उत्पाद शुल्क/सीएसटी की पूर्ण वापसी सुनिश्चित करने के लिए 1,100 करोड़ रुपये की अतिरिक्त निधि का प्रावधान किया जायेगा।
- चूँकि श्रम-प्रधान निर्यातों, अर्थात् टेक्सटाइल्स (जिसमें हैंडलूम, दरियाँ और हस्तशिल्प की वस्तुएँ शामिल हैं), चमड़ा, रत्न एवं आभूषण, समुद्री उत्पाद और एसएमई क्षेत्र, के लिए पोतलदानपूर्व और पोतलदानोत्तर निर्यात ऋण दिये गये, उनके लिए 7 प्रतिशत की न्यूनतम ब्याज दर के अधीन रहते हुए 31 मार्च 2009 तक 2 प्रतिशत का ब्याज अनुदान दिया गया।

व्यय

-
- वर्ष 2008-09 के बजट में घोषित स्कीमों/योजनाओं का मुख्य रूप से वित्तपोषण करने के लिए अक्तूबर 2008 में 2,37,286 करोड़ रुपये तक के सकल व्यय के लिए, जिसमें 1,05,613 करोड़ रुपये का निवल नकदी व्यय शामिल है, अनुपूरक अनुदान मांगों के लिए प्रावधान किया गया।
- 55,605 करोड़ रुपये की दूसरी अनुपूरक अनुदान मांग, जिसमें 42,480 करोड़ रुपये का निवल नकदी व्यय शामिल था, दिसंबर 2008 में मंजूर की गई।
- तीसरी और अंतिम अनुपूरक अनुदान मांग, जिसमें 10,765 करोड़ रुपये का निवल नकदी व्यय शामिल था, फरवरी 2009 में मंजूर की गई। अनुदान शृंखला में तकनीकी स्वरूप का 4,60,952 करोड़ रुपये का अतिरिक्त व्यय शामिल था, जिसमें मुख्य रूप से ऋण की अदायगी के चलते विनियोजन समाविष्ट था।
- वर्ष 2008-09 के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था पर वैश्विक वित्तीय संकट का प्रभाव पड़ने के बाद दो राजकोषीय पैकेजों की भी घोषणा की गयी जिनमें से प्रत्येक की राशि 20,000 करोड़ रुपये थी।

उद्योग

- टेक्सटाइल क्षेत्र में, प्रौद्योगिकी उन्नयन निधि स्कीम के पिछले समस्त शेष कार्य को निपटाने के लिए 1,400 करोड़ रुपये का अतिरिक्त आबंटन किया गया।
- हस्तशिल्प की सभी मदों को 'विशेष कृषि एवं ग्राम उद्योग योजना' में शामिल किया गया।

आधारभूत संरचना

- इंडिया इंफ्रास्ट्रक्चर फाइनैंस कंपनी लिमिटेड को 31 मार्च 2009 तक कर-मुक्त बांडों के जरिए 10,000 करोड़ रुपये जुटाने की अनुमति दी गयी ताकि वह पात्र आधारभूत संरचना परियोजनाओं को बैंक उधार दिये जाने के लिए पुनर्वित्त प्रदान कर सके, विशेष रूप से राजमार्गों एवं पत्तन क्षेत्रों को, जिससे 1,00,000 करोड़ रुपये के सरकारी-निजी भागीदारी कार्यक्रम का समर्थन किया जा सके।
- इंडिया इंफ्रास्ट्रक्चर फाइनैंस कंपनी लिमिटेड को 30,000 करोड़ रुपये की अतिरिक्त राशि कर-मुक्त बांडों के जरिए जुटाने के लिए अधिकृत किया गया ताकि वह अगले 18 महीनों में लगभग 75,000 करोड़ रुपये की अतिरिक्त परियोजनाओं का निधीयन कर सके।

राज्य सरकारें

- राजकोषीय घाटे की अधिकतम सीमा, जिसका वहन राज्यों द्वारा ऋण समेकन एवं राहत सुविधा के संदर्भ में वर्ष 2009-10 में किया जा

(जारी..)

(... समाप्त)

सकता है, को 0.5 प्रतिशत बढ़ाकर वर्ष 2008-09 के लिए सकल राज्य देशी उत्पाद का 3.5 प्रतिशत कर दिया गया।

- राज्यों को वर्ष 2008-09 के दौरान अपने पूँजीगत व्यय के लिए अपने सकल राज्य देशी उत्पाद के 0.5 प्रतिशत का अतिरिक्त बाजार उधार जुटाने की अनुमति दी गयी, जिसकी राशि लगभग 30,000 करोड़ रुपये थी।

अन्य उपाय

- भावी संविदाओं के लिए प्रणाली को अल्पावधि में पूर्वानुमेयता और स्थिरता प्रदान करने के लिए ड्यूटी इंटाइटिलमेंट पासबुक स्कीम को 31 दिसंबर 2009 तक बढ़ाया गया।
- बुने हुए फैब्रिक्स, बाइसिकल, कृषि के लिए हाथ के औजार और सूत की विनिर्दिष्ट कोटि जैसी मदों पर शुल्क-वापसी लाभ में 1 सितंबर 2008 से बढ़ोतरी की गयी।
- विद्युत ऊर्जा उत्पन्न करने के लिए नाफ्था के आयात पर मूलभूत सीमा-शुल्क से छूट को 31 मार्च 2009 के बाद तक बढ़ाया गया।
- आयकर अधिनियम की धारा 10एए में आवश्यक परिवर्तन किये गये ताकि उन कर-निर्धारितियों की, जिनकी इकाइयाँ केवल एसईजेड में अवस्थित हैं, तुलना में एसईजेड और देशी प्रशुल्क क्षेत्र (डीटीए), दोनों में इकाइयाँ रखने वाले कर-निर्धारितियों के बीच उत्पन्न हुई विसंगतियों को दूर किया जा सके।

केंद्रीय बजट 2009-10

कर कटौतियाँ

आय

- वैयक्तिक आयकर के लिए छूट की आरंभिक सीमा वरिष्ठ नागरिकों के लिए 15,000 रुपये बढ़ाकर 2,40,000 रुपये कर दी गयी, जबकि महिलाओं और व्यक्तिगत करदाताओं की अन्य सभी कोटियों में से प्रत्येक के लिए यह सीमा 10,000 रुपये बढ़ाकर क्रमश: 1,90,000 रुपये और 1,60,000 रुपये कर दी गयी।
- धारा 80 डी के अंतर्गत किसी व्यक्ति के लिए, जो गंभीर अशक्तता वाले अपने किसी आश्रित के निर्वाह के लिए, जिसमें चिकित्सीय उपचार शामिल है, भुगतान करता है, 75,000 रुपये की कटौती की वर्तमान सीमा से 25,000 रुपये की अतिरिक्त कटौती की अनुमति दी गयी।
- अनुषंगी हितलाभ कर को समाप्त कर दिया गया।

उत्पाद शुल्क

- उत्पाद शुल्क दरों से संबंधित प्रस्तावित उपायों में शामिल हैं : सूती कपड़ा क्षेत्र और मानव निर्मित रेशा-क्षेत्र के बीच विभेदक दरें; रेशे के चरण के बाद वाले सूती कपड़ों के लिए इसके पूर्व लागू 4 प्रतिशत की वैकल्पिक दर को बहाल करना; मानव-निर्मित रेशे और सूत पर 8 प्रतिशत का शुल्क अनिवार्य आधार पर और रेशा एवं सूत के बाद के चरण पर उस दर पर शुल्क वैकल्पिक आधार पर बहाल करना; बायो-डीजल से मिश्रित पेट्रो-डीजल को उत्पाद शुल्क से पूरी छूट; और बायो-डीजल पर 7.5 प्रतिशत का मूलभूत सीमा-शुल्क घटाकर 2.5 प्रतिशत करना - पेट्रो-डीजल के साथ सममूल्य पर - ताकि इस पर्यावरण अनुकूल ईंधन के उपयोग को प्रोत्साहन मिले और इसकी उपलब्धता बढ़े।
- निर्यात में मंदी से पार पाने के लिए सरकार ने सावधि विधि खंड को और एक वर्ष, अर्थात्, वर्ष 2010-11 के लिए बढ़ाया।
- व्यवसायों को प्रोत्साहन देने के लिए यह प्रस्ताव किया गया कि व्यवसायों के लिए निवेश से जुड़ा कर-प्रोत्साहन दिया जाये, ताकि कृषि उपज को रखने के लिए 'कोल्ड चेन' और भांडागार सुविधा स्थापित की जा सके और प्राकृतिक गैस, कच्चा तेल या पेट्रोलियम पाइपलाइन नेटवर्क साझा वाहक सिद्धांतों पर विभिन्न देशों में बिछाया जा सके और उसका परिचालन किया जा सके।
- राहत के उपाय के रूप में यह प्रस्ताव किया गया कि एमएटी के अंतर्गत कर-जमा को आगे बढ़ाये जाने की अनुमति की अवधि को सात वर्ष से बढ़ाकर दस वर्ष कर दिया जाये।
- पेट्रोल से चलने वाले ट्रकों के संबंध में उत्पाद शुल्क को 20 प्रतिशत से घटाकर 8 प्रतिशत कर दिया गया।

सीमा शुल्क

- देशी उत्पादन को समर्थन प्रदान करने के लिए लिक्विड क्रिस्टल डिस्प्ले पैनलों पर मूलभूत सीमा शुल्क को 10 प्रतिशत से घटाकर 5 प्रतिशत कर दिया गया।
- मोबाइल फोनों के विनिर्माण के लिए आयातित सहायक उपकरणों, पुर्जों और अवयवों को 4 प्रतिशत के प्रतिकारी शुल्क (सीवीडी) से एक और वर्ष के लिए छूट प्रदान की गयी।

व्यय

- सरकार ने चुनिंदा क्षेत्रों में सरकारी खर्च बढ़ाने का सजग निर्णय लिया था ताकि वृद्धि की गति को बरकरार रखा जा सके, जिसमें अपेक्षित निष्कर्षों पर ध्यान रखा गया था।
- आधारभूत संरचना, स्वास्थ्य एवं शिक्षा, ग्रामीण रोजगार और सरकार के अन्य प्रमुख कार्यक्रमों के संबंध में व्यय के लिए आबंटन बढ़ाया गया है।
- अर्थव्यवस्था की वृद्धि में आधारभूत संरचना क्षेत्र की महत्त्वपूर्ण भूमिका को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय राजमार्ग विकास कार्यक्रम और शहरी आधारभूत संरचना क्षेत्र के लिए आबंटन में वर्ष 2009-10 के दौरान काफी बढ़ोतरी की गयी।
- स्वास्थ्य और शिक्षा के लिए आबंटन वर्ष 2009-10 के बजट में काफी बढ़ाया गया। जनसांख्यिकीय फायदे को ध्यान में रखते हुए 'मिशन इन एडुकेशन थ्रू आइसीटी' योजना के लिए प्रावधान में पर्याप्त वृद्धि की गयी। सरकार ने प्रत्येक ऐसे राज्य में एक केंद्रीय विश्वविद्यालय स्थापित करने के लिए भी आबंटन किया जहाँ अभी तक कोई केंद्रीय विश्वविद्यालय नहीं था। लोक सेवाओं की सुपुर्दगी में सुधार करने के लिए सरकार ने 120 करोड़ रुपये की राशि युनीक आइडेंटिफिकेशन अथॉरिटी ऑफ इंडिया को आबंटित की।

चार्ट V.21 : जीडीपी वृद्धि में सरकारी उपभोग का आपेक्षिक योगदान

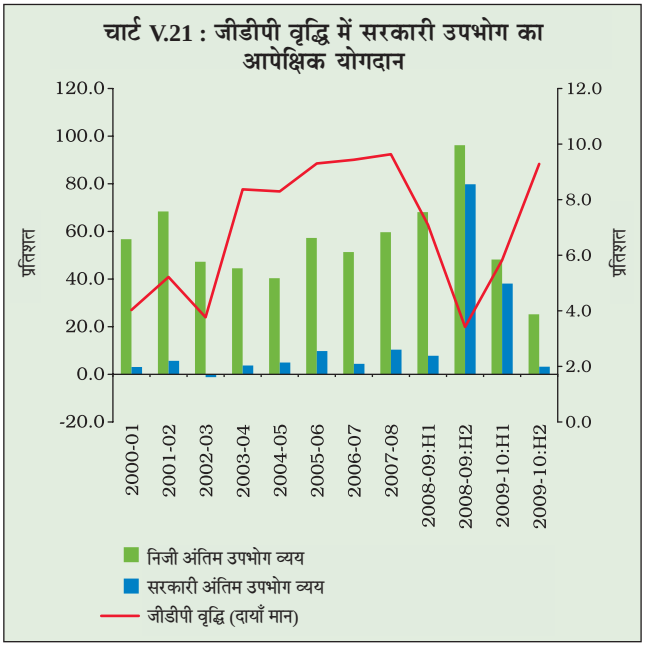

लाते हुए वृद्धि की पुन:प्राप्ति के लक्ष्य की ओर रुख किया ताकि उच्च वृद्धि के रास्ते पर वापस आया जाये। साथ ही वर्ष 2010-11 के केंद्रीय बजट में विस्तारक दृष्टिकोण से नपे-तुले निकास की घोषणा की गयी जिसमें कर-कटौती एवं बेहतर व्यय प्रबंधन की ओर वापस आना शामिल था। वर्ष 2010-11 के बजट में यह प्रस्ताव किया गया कि राजस्व घाटे और सकल राजकोषीय घाटे को वर्ष 2010-11 के दौरान कम करके जीडीपी के क्रमश: 4.0 प्रतिशत और 5.5 प्रतिशत पर लाया जाये। मध्यावधि राजकोषीय नीति वक्तव्य में, जिसमें आवर्ती लक्ष्यों के संदर्भ में राजकोषीय समेकन पथ निर्धारित किया गया है, यह बताया गया है कि वर्ष 2012-13 में राजस्व घाटे और सकल राजकोषीय घाटे को जीडीपी के क्रमश: 2.7 प्रतिशत और 4.1 प्रतिशत पर ले आया जायेगा। सरकार ने, तेरहवें वित्त आयोग द्वारा सिफारिश किये गये मध्यावधि राजकोषीय समेकन पथ को सिद्धांत रूप में स्वीकार करते हुए, मध्यावधि राजकोषीय नीति वक्तव्य में यह भी सूचित किया है कि ऋण-जीडीपी अनुपात को वर्ष 2012-13 तक घटाकर 48.2 प्रतिशत किया जायेगा।

मौद्रिक नीति प्रतिक्रिया

5.116 मौद्रिक नीति की प्रतिक्रिया परंपरागत उपायों, यथा, नीति दरों में कटौती, आरक्षित नकदी निधि अनुपात (सीआरआर), रिवर्स रिपो, और सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) और खुला बाजार परिचालन, तथा गैर-परंपरागत उपायों, यथा, सिडबी और एक्ज़िम बैंक के लिए पुनर्वित्त सुविधाएँ खोलना और प्रावधानीकरण एवं जोखिम भारों के संबंध में विवेकपूर्ण मानदंडों को धीरे-धीरे पुन: लागू करना, के माध्यम से प्रणाली में चलनिधि की स्थिति को सहज करने के रूप में हुई। उपलब्ध कराई गई वास्तविक/संभावित चलनिधि की कुल राशि 5,85,000 करोड़ रुपये थी (सारणी 5.25)।

5.117 तथापि, भारतीय रिज़र्व बैंक और अनेक उन्नत देशों के केंद्रीय बैंकों द्वारा की गयी कार्रवाई के बीच कुछ महत्त्वपूर्ण अंतर है। पहला, चलनिधि उपलब्ध कराने की प्रक्रिया में काउंटरपार्टियाँ बैंक थे; यहाँ तक कि म्यूचुअल फंडों, एनबीएफसी, और आवास वित्त कंपनियों के लिए चलनिधि संबंधी उपाय बैंकों के माध्यम से किये गये। दूसरा, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में बंधक प्रतिभूतियों और वाणिज्यिक पत्रों के विपरीत संपार्श्विक मानकों में कोई कमी नहीं की गयी, जो अधिकतर सरकारी प्रतिभूतियाँ थे। तीसरा, वैश्विक प्रवृत्ति के विपरीत बड़ी मात्रा में चलनिधि उपलब्ध कराये जाने के बावजूद रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र में पूर्व में अवरुद्ध की गयी चलनिधि को मुक्त किये जाने के चलते कोई असामान्य वृद्धि नहीं दिखाई पड़ी। चौथा, बहुविध लिखतों की उपलब्धता और अभिनियोजन ने मौद्रिक और चलनिधि संबधी उपायों के बेहतर अनुक्रम को सुसाध्य बनाया। अंत में, वैश्विक संकट के आगे प्रचक्रीय प्रावधानीकरण संबंधी मानदंडों और प्रतिचक्रीय विनियमों के प्रयोग ने वित्तीय स्थिरता बढ़ाने में मदद की (मोहन्ती, 2009)।

सारणी 5.25 : चलनिधि अंत:क्षेप/उपलब्धता सितंबर 2008 - सितंबर 2009 के दौरान

उपाय/सुविधा	राशि (करोड़ रुपये)	जीडीपी का % (2008-09)
1	2	3
1. सीआरआर कटौती	1,60,000	2.9
2. एमएसएस प्रतिभूतियों को उन्मुक्त/वापसी खरीद/निधि जब्तीकरण हटाया जाना	1,59,044	2.9
3. खुला बाजार परिचालन (क्रय) *	1,04,128	1.9
4. मीयादी रिपो सुविधा	60,000	1.1
5. निर्यात ऋण पुनर्वित्त में बढ़ोतरी	22,328	0.4
6. एससीबी (आरआरबी से इतर) के लिए विशेष पुनर्वित्त सुविधा	38,500	0.7
7. सिडबी/एनएचबी/एक्जिम बैंक के लिए पुनर्वित्त सुविधा	16,000	0.3
8. एसपीवी के माध्यम से एनबीएफसी के लिए** चलनिधि सुविधा	25,000	0.4
9. **कुल (1 से 8)**	**5,85,000**	**10.5**
ज्ञापन :		
सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) कटौती	40,000	0.7

* वर्ष 2009-10 की पहली छमाही के दौरान 80,000 करोड़ रुपये के प्रस्तावित ओएमओ क्रय के विरुद्ध 57,487 करोड़ रुपये की राशि का ओएमओ क्रय शामिल है ।
** 5,000 करोड़ रुपये का ऑप्शन शामिल है ।

5.118 वित्तीय समावेशन, ग्रामीण और असंगठित क्षत्रों में रोजगार सृजन, वित्तीय साक्षरता और ऋण-परामर्श के क्षेत्रों में भी व्यापक उपाय किये गये। इनमें ग्रामीण सहकारी संस्थाओं और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को सुदृढ़ किया जाना शामिल था, जो प्रमुख रूप से ग्रामीण क्षेत्रों की आवश्यकताएँ पूरी करते हैं; क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की शाखा लाइसेंसीकरण नीतियों को उदार बनाना; उधार देने की बहुविध सरणियों को प्रोत्साहित करना, यथा, स्वयं सहायता समूह, माइक्रोफाइनैंस संस्थाएँ और बैंकिंग फैसिलिटेटर/बैंकिंग कॉरेस्पांडेंट मॉडल को अपनाया जाना; कृषि तथा सूक्ष्म, लघु और मझोले उद्यम क्षेत्रों को उधार दिये जाने की क्रियाविधियों और प्रक्रियाओं को सरल बनाना; और आइसीटी समाधानों को अपनाया जाना, ताकि न केवल आउटरीच में वृद्धि हो, बल्कि लेन-देन की लागत भी कम हो (बॉक्स V.8)।

बॉक्स V.8
मौद्रिक नीति संबंधी उपाय

मौद्रिक उपाय

- चलनिधि समायोजन सुविधा के अंतर्गत रिपो दर में अक्तूबर 2008-अप्रैल 2009 के दौरान 425 आधार अंक कटौती करते हुए उसे 9.00 प्रतिशत से 4.75 प्रतिशत किया गया।
- चलनिधि समायोजन सुविधा के अंतर्गत रिवर्स रिपो दर को भी दिसंबर 2008-अप्रैल 2009 के दौरान 275 आधार अंक घटाकर 6.00 प्रतिशत से 3.25 प्रतिशत किया गया।
- इस प्रकार, प्रभावी नीति दर में 575 आधार अंकों की बड़ी कटौती की गयी जो मध्य सितंबर 2008 में 9.00 प्रतिशत थी और अप्रैल 2009 में घटकर 3.25 प्रतिशत हो गयी।

देशी चलनिधि उपाय

- आरक्षित नकदी निधि अनुपात को 9 प्रतिशत (सितंबर 2008 में) से घटाकर जनवरी 2009 के आरंभ में 5 प्रतिशत किया गया जिससे प्रणाली में लगभग 1,60,000 करोड़ रुपये की प्राथमिक चलनिधि डाली गई।
- सांविधिक चलनिधि अनुपात में एक प्रतिशत अंक की कटौती कर उसे एनडीटीएल के 25 प्रतिशत से 24 प्रतिशत किया गया, जो 8 नवंबर 2008 को आरंभ हुए पखवाड़े से प्रभावी हुआ।
- सभी अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के लिए (आरआरबी को छोड़कर) विशेष पुनर्वित्त सुविधा आरंभ की गयी जिससे वे रिज़र्व बैंक से प्रत्येक बैंक के 24 अक्तूबर 2008 की स्थिति के अनुसार एनडीटीएल के 1.0 प्रतिशत तक पुनर्वित्त सुविधा चलनिधि समायोजन सुविधा रिपो दर पर अधिकतम 90 दिनों की अवधि के लिए प्राप्त करने में समर्थ हुए। बैंकों को इस सुविधा का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया गया ताकि वे सूक्ष्म और लघु उद्यमों को वित्त प्रदान कर सकें। इसे अक्तूबर 2009 में बंद कर दिया गया।
- चलनिधि समायोजन सुविधा के अंतर्गत 60,000 करोड़ रुपये की मीयादी रिपो सुविधा आरंभ की गयी ताकि म्यूचुअल फंडों, एनबीएफसी और आवास वित्त कंपनियों द्वारा अनुभव किये गये चलनिधि-दबाव को सहज करने में बैंक समर्थ हो सकें और इसके साथ ही एसएलआर में एनडीटीएल के 1.5 प्रतिशत की छूट दी गयी। यह सुविधा 30 सितंबर 2009 तक उपलब्ध थी और इसे अक्तूबर 2009 में बंद कर दिया गया।
- एमएसएस के अंतर्गत नये निर्गमों को रोक दिया गया और मौजूदा एमएसएस प्रतिभूतियों की वापसी खरीद का उपयोग भी प्रणाली में चलनिधि का अंत:क्षेप करने के लिए किया गया। विभिन्न परिचालनों को प्रतिबिंबित करते हुए, एमएसएस जमाशेष, जो अंत मई 2008 में 1,75,362 करोड़ रुपये थे, कम होकर अंत मार्च 2009 तक लगभग 88,000 करोड़ रुपये हो गये और पुन: सितंबर 2009 तक 19,000 करोड़ रुपये हो गये।
- पोतलदानपूर्व और पोतलदानोत्तर रुपया निर्यात ऋण के पहले खंड के लिए पात्रता अवधि का विस्तार 90 दिनों तक दोनों के लिए क्रमश: 15 नवंबर 2008 और 1 दिसंबर 2008 से स्वीकृत किया गया।
- आवास, निर्यात और एसएमई क्षेत्रों को चलनिधि सहायता प्रदान करने के लिए रिज़र्व बैंक ने मार्च 2010 तक राष्ट्रीय आवास बैंक को 4,000 करोड़ रुपये, एक्ज़िम बैंक को 5,000 करोड़ रुपये और सिडबी को 7,000 करोड़ रुपये की पुनर्वित्त सुविधा प्रदान की।

निकास

- सांविधिक चलनिधि अनुपात, जो मांग और मीयादी देयताओं के 25 प्रतिशत से घटाकर 24 प्रतिशत कर दिया गया था, 7 नवंबर 2009 से पुन: 25 प्रतिशत कर दिया गया।
- निर्यात ऋण पुनर्वित्त सुविधा की सीमा, जिसे बढ़ाकर पात्र बकाया निर्यात ऋण का 50 प्रतिशत कर दिया गया था, संकट-पूर्व स्तर के 15 प्रतिशत पर ले आयी गयी।
- अनुसूचित बैंकों का आरक्षित नकदी निधि अनुपात 75 आधार अंक बढ़ाकर दो चरणों में उनकी निवल मांग और मीयादी देयताओं के 5.0 प्रतिशत से 5.75 प्रतिशत किया गया; 50 आधार अंकों की वृद्धि का पहला चरण 13 फरवरी 2010 को आरंभ होने वाले पखवाड़े से प्रभावी हुआ, जिसके बाद 25 आधार अंकों की वृद्धि का दूसरा चरण 27 फरवरी 2010 को आरंभ होने वाले पखवाड़े से प्रभावी हुआ।
- अनुसूचित बैंकों का आरक्षित नकदी निधि अनुपात 25 आधार अंक बढ़ाकर उनके एनडीटीएल के 5.75 प्रतिशत से 6.00 प्रतिशत किया गया और वह 24 अप्रैल 2010 को आरंभ होने वाले पखवाड़े से प्रभावी हुआ।
- चलनिधि समायोजन सुविधा के अंतर्गत रिपो दर 10 अप्रैल 2010 को तत्काल प्रभाव से 25 आधार अंक बढ़ाकर 5.0 प्रतिशत से 5.25 प्रतिशत किया गया। रिवर्स रिपो दर में भी 25 आधार अंकों की वृद्धि करते हुए उसे 3.5 प्रतिशत से 3.75 प्रतिशत किया गया।

5.119 कुल मिलाकर, रिज़र्व बैंक और भारत सरकार द्वारा मध्य सितंबर 2008 से किये गये उपायों ने यह सुनिश्चित किया है कि भारत का वित्तीय क्षेत्र व्यवस्थित ढंग से कार्य करता रहे। इन उपायों के माध्यम से वित्तीय प्रणाली को संभाव्य रूप से उपलब्ध प्राथमिक चलनिधि की संचयी राशि 122 बिलियन अमरीकी डालर[12] से अधिक या जीडीपी के लगभग 11 प्रतिशत[13] थी। इस बड़ी सुविधा ने मध्य नवंबर 2008 से आरंभ करते हुए चलनिधि की सहज स्थिति को सुनिश्चित किया है, जिसके साक्षी अनेक संकेतक हैं।

5.120 भारत में मौद्रिक नीति ने, अधिकांश अन्य देशों की तरह, हाल के वित्तीय संकट से उत्पन्न स्पिलओवर को रोकने के लिए परंपरागत और गैर परंपरागत, दोनों प्रकार के समंजनकारी उपाय किये थे। संकट से उबरने और खाद्यान्न की बढ़ती कीमतों के स्फीतिकारक प्रत्याशाओं पर प्रभाव डालने की पृष्ठभूमि में मौद्रिक नीति ने अपने समंजनकारी स्वरूप से निकास का प्रथम चरण आरंभ किया, जिसमें कुछ गैर-परंपरागत उपायों का अक्तूबर 2009 के दौरान विपर्यय करना शामिल था (बॉक्स V.8)।

V. निष्कर्षात्मक टिप्पणियां

5.121 हाल की अवधि में, वित्तीय सहबद्धता सुदृढ़ हुई है जिसके परिणामस्वरूप व्यवसाय-चक्र का उच्च अंश में सहगमन हुआ है, जिसका परिणाम यह भी हुआ है कि आघातों का द्रुत संचरण सभी देशों में हुआ है। भारत में भी व्यापार के खुलेपन में वृद्धि हुई है, जिसका प्रतिबिंब देशी व्यवसाय-चक्र की उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के साथ तुल्यकालिकता में दिखाई पड़ता है। बढ़ी हुई तुल्यकालिकता अंतत: वैश्विक गतिविधियों के भारतीय अर्थव्यवस्था में बड़े संचरण में प्रतिबिंबित हुई। इसके अलावा व्यापार और वित्त सरणियों के बीच, वित्त माध्यम को हाल की अवधि में भारतीय अर्थव्यवस्था पर वैश्विक गतिविधियों के प्रभाव का संचरण करने में अधिक अभिभावी पाया गया है।

5.122 भारत में सबसे पहले वित्तीय बाजार प्रभावित हुए जिसका मुख्य कारण था वैश्विक डिलिवरेजिंग प्रक्रिया के भाग के रूप में पूंजी प्रवाह का विपर्यय होना। रुपया-अमरीकी डालर में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में काफी मूल्यांस हुआ और विदेशी मुद्रा बाजार के पण्यावर्त में भी, वणिक माल निर्यात में तेज गिरावट तथा काफी नियंत्रित पूँजी प्रवाह की पृष्ठभूमि में, तेजी से गिरावट आयी। भुगतान संतुलन पर दबाव बढ़ा जिसके चलते आहरण द्वारा रिज़र्व में कमी की गयी। विदेशी मुद्रा आपूर्ति की स्थिति को सहज करने के लिए अनेक उपाय आरंभ किये गये जिसमें अंशत: रिज़र्व बैंक की विदेशी आरक्षित निधियों तक अधिक पहुँच और अंशत: विनिर्दिष्ट उपायों की प्रतिक्रिया में पूँजी अंतर्वाह में सुधार करना शामिल था। विदेशी मुद्रा बाजार में बड़े पैमाने पर वास्तविक मध्यवर्ती विक्रय के अतिरिक्त रिज़र्व बैंक ने बैंकों के लिए विदेशी मुद्रा स्वैप सुविधा भी खोली। अंतरराष्ट्रीय कीमतों के ऊँचा होने और बढ़ते जाने के चरण में तेल आयातकर्ता कंपनियों की ओर से मांग-जन्य दबाव को सहज करने के लिए रिज़र्व बैंक ने पहले ही द्वितीयक बाजार में वाणिज्यिक बैंकों के माध्यम से विशेष बाजार परिचालन आरंभ कर दिया था, जिसमें सरकारी क्षेत्र की तेल विपणन कंपनियों के बांडों पर विदेशी मुद्रा चलनिधि की सीधी आपूर्ति शामिल थी। विदेशी मुद्रा चलनिधि की आपूर्ति में सुधार को लक्ष्य में रखते हुए जो नीतिगत उपाय किये गये, उनमें बैंकों को अपनी समुद्रपार शाखाओं से विवेकपूर्ण सीमा के भीतर उधार लेने की अनुमति देना, बाह्य वाणिज्यिक उधार नीति को और शिथिल करना, जिसमें एनबीएफसी और आवास वित्त कंपनियों को विदेशी मुद्रा में उधार लेने की अनुमति देना शामिल था, और एनआरआई जमाराशियों पर ब्याज दरों को बढ़ाना शामिल था। विदेशी मुद्रा बाजार में मांग-जन्य दबाव के होते हुए भी, अतरराष्ट्रीय आस्ति कीमतों में गिरावट को देखते हुए, कारपोरेटों को प्रचलित बट्टा दरों पर अपने विदेशी मुद्रा परिवर्तनीय बांडों की समयपूर्व वापसी खरीद करने की अनुमति दी गयी।

5.123 मुद्रा बाजार, जो वर्ष 2008-09 की पहली छमाही के दौरान सामान्यत: व्यवस्थित रहा, पर लेहमैन ब्रदर्स और कुछ अन्य वैश्विक वित्तीय संस्थाओं की विफलता के बाद चलनिधि-जन्य दबाव आया, और मांग बाजार में अस्थिरता में पर्याप्त बढ़ोतरी हुई। वर्ष 2008 की

[12] प्रयुक्त विनिमय दर वर्ष 2008-09 के लिए प्रति अमरीकी डालर रुपये की औसत विनिमय दर है ।

[13] वर्ष 2008-09 के जीडीपी का प्रयोग किया गया है।

तीसरी तिमाही के दौरान वित्तीय बाजारों में बढ़ी हुई अस्थिरता के साथ, रिज़र्व बैंक को रुपया और विदेशी मुद्रा चलनिधि की पर्याप्त आपूर्ति सुनिश्चित करनी पड़ी, ताकि मांग मुद्रा दर को चलनिधि समायोजन सुविधा कॉरिडोर के भीतर पुन: बहाल किया जाये और विनिमय दर में अस्थिरता को भी रोका जाये। रिज़र्व बैंक को निवल देशी आस्तियों को विस्तारित करना पड़ा ताकि निवल विदेशी आस्तियों में कमी के चलते आरक्षित मुद्रा में कमी के लिए क्षतिपूर्ति की जा सके जिससे मुद्रा आपूर्ति में आवश्यक वृद्धि सुनिश्चित हो, जो आर्थिक वृद्धि की आवश्यकताओं के संगत हो और इसके अतिरिक्त प्रचुर चलनिधि की व्यवस्था हो, जिससे कि भारतीय बाजारों में चलनिधि की कमी होने का डर दूर किया जा सके। रिज़र्व बैंक ने प्रणाली में चलनिधि बढ़ाने के लिए सभी साधनों, यथा, एलएएफ, ओएमओ, सीआरआर तथा एमएसएस का उपयोग किया। आरक्षित मुद्रा पर संकुचित होते निवल विदेशी आस्तियों के प्रभाव का समंजन करने के लिए निवल देशी आस्तियों को विस्तारित किये जाने की चुनौती पर कार्रवाई करते हुए एमएसएस जमाशेषों को उन्मुक्त किये जाने से न केवल रिज़र्व बैंक द्वारा अपने तुलनपत्र को विस्तारित किये बिना पर्याप्त चलनिधि विस्तार की गुंजाइश बनी, बल्कि उन्मुक्त किये जाने का समय-निर्धारण भी इस प्रकार नियंत्रित किया जा सका कि सरकार के बड़े उधार कार्यक्रम का प्रबंध भी सरलता से, किसी प्रकार का बाजार दबाव उत्पन्न किये बिना, किया जा सका। रिज़र्व बैंक के मौद्रिक परिचालन उन्नत देशों के अनेक केंद्रीय बैंकों के अनुभवों से भिन्न थे, भले ही अंतिम उद्देश्य लगभग समान था, जिसे यह सुनिश्चित करना था कि बैंकिंग प्रणाली में पर्याप्त चलनिधि उपलब्ध रहे। इस प्रकार, रिज़र्व बैंक की नीतियों का मुद्रा, विदेशी मुद्रा और सरकारी प्रतिभूति बाजारों में संचरण प्रभावी रहा, जिससे अल्पावधि में बाजार में व्यवस्था को पुन: बहाल किया जाना सुनिश्चित हुआ।

5.124 भारत में ऋण बाजार सामान्य रूप से कार्य करता रहा, जबकि अनेक उन्नत देशों में इस बाजार को लगभग रोक-मुक्त किया गया था। वृद्धि की गति को बनाये रखने के लिए निजी क्षेत्र को ऋण प्रवाह में नरमी को रोकने के अभिभावी महत्त्व को देखते हुए, प्रतिचक्रीय विवेकपूर्ण विनियमों का प्रयोग किया गया ताकि उधार देने के लिए बैंकों को प्रोत्साहित किया जा सके। तथापि, वाणिज्यिक बैंकों की ऋण-वृद्धि में वर्ष 2008-09 के दौरान तेजी से गिरावट आयी, विशेष रूप से दूसरी छमाही में, जिसका कारण था मंद पड़े आर्थिक कार्यकलाप और बैंकों का अपनी लाभप्रदता के प्रति सतर्क रहना। बैंकों ने, जिन्होंने वर्ष 2008-09 के दौरान ऋणात्मक जमा-वृद्धि और संसाधनों पर दबाव दर्ज किया था, अपनी ऋण-वृद्धि में पर्याप्त गिरावट देखी। यह जानना रोचक होगा कि इन बैंकों के अपने जमा संविभाग में मीयादी जमाराशियों का हिस्सा बहुत कम था।

5.125 विदेशी मुद्रा और मुद्रा बाजारों की तरह 10-वर्षीय बेंचमार्क सरकारी प्रतिभूतियों की अस्थिरता में उतार-चढ़ाव सितंबर 2008 से बढ़ गया, जो वित्तीय बाजारों में सामान्य दबाव और वर्ष 2008-09 की अंतिम तिमाही के दौरान भारत सरकार के बाजार उधार में तेज वृद्धि को प्रतिबिंबित करता है। वैश्विक वित्तीय संकट ने भी भारत को आस्ति-कीमतों के माध्यम से प्रभावित किया। देशी आस्ति-कीमतों पर वैश्विक वित्तीय और वास्तविक आघात, खास कर शेयर कीमतों पर, ने परिवारों के धन और कारपोरेट तुलनपत्र का क्षरण उनके संपार्श्विकों के मूल्य के संदर्भ में किया। दोनों कारकों ने पारिवारिक उपभोग मांग और कारपोरेट निवेश को प्रभावित किया। आस्ति-कीमत आघातों ने भी विनिमय दर प्रत्याशाओं पर प्रतिकूल प्रभाव डाला जिसके चलते बाद में बाह्य व्यापार के बारे में और अनिश्चितता आयी। वित्तीय संकट के बाद शेयर बाजार पूँजीकरण में गिरावट सभी ओईसीडी देशों और ईएमई में लगभग तुलनात्मक परिमाण में रही, जो वैश्विक आघात की बढ़ी हुई गंभीरता को रेखांकित करता है।

5.126 भारत में शेयर बाजार, सभी प्रमुख अंतरराष्ट्रीय घटनाओं के प्रति प्रतिक्रिया करते हुए, जनवरी 2008 के अपने शिखर स्तर से फिसलते हुए मार्च 2009 में नये निचले स्तर पर जा पहुँचे। दीर्घावधि के सह एकीकरण वेक्टर ने दर्शाया कि क्षेत्रीय बाजारों की तुलना में वैश्विक बाजारों का भारतीय शेयरों पर प्रभाव अधिक स्पष्ट था। वैश्विक और क्षेत्रीय बाजार एक साथ मिलकर भारतीय शेयर बाजार में थोक घट-बढ़ के लिए जिम्मेवार थे। भारत के लिए एक बाई-वैरिएट वीएआर मॉडल यह सूचित करता है कि विदेशी संस्थागत निवेशक से शेयर बाजार की ओर पूँजी प्रवाह में एक महत्त्वपूर्ण कार्य-कारण संबंध काम करता है। बीएसई सूचकांक से विदेशी संस्थागत निवेशक प्रवाह तक कारण-कार्य सिद्धांत प्रतिसूचना भी महत्त्वपूर्ण थी, अलबत्ता कम महत्वपूर्ण।

5.127 यद्यपि भारत में बैंकिंग क्षेत्र सब-प्राइम बंधक के प्रति और विफल संस्थाओं के प्रति अपने स्वल्प एक्सपोज़र के कारण संकट से

सीधे प्रभावित नहीं हुआ, फिर भी मुद्रा और विदेशी मुद्रा बाजारों में चलनिधि दबाव ने अंतत: बैंकों पर ऋण-जन्य दबाव बढ़ाया। भारतीय बैंक उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं और उन्नत देशों के अपने समकक्षों की तुलना में अपनी बेहतर वित्तीय स्थिति के कारण वर्तमान वैश्विक संकट के स्पिलओवर से बच निकलने में समर्थ हुए। प्रणालीगत जोखिम-मूल्यांकन का समष्टि-विवेकपूर्ण आयाम वर्तमान वैश्विक वित्तीय संकट के संदर्भ में विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हो गया है। भारत में समष्टि विवेकपूर्ण विनियम वैश्विक संकट के शुरू होने के पहले से ही जोखिम-भार एवं प्रावधानीकरण मानदंडों के प्रतिचक्रीय उपयोग के रूप में दृश्यमान थे। समष्टि विवेकपूर्ण विश्लेषण से समय पर प्रणालीगत जोखिमों की पहचान के लिए शुरुआती संकेत मिल सकते हैं, जबकि समष्टि विवेकपूर्ण विनियम वित्तीय प्रणाली में प्रणालीगत जोखिम के उद्भव को रोक सकता है। रिज़र्व बैंक बैंकिंग पर्यवेक्षण संबंधी बासेल समिति द्वारा जारी किये गये नये मार्गदर्शी सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए दबाव परीक्षण और चलनिधि जोखिम प्रबंध के संबंध में दिशा-निर्देशों को संशोधित करने की प्रक्रिया लागू कर रहा है। यह बैंक-प्रायोजित निजी पूँजी-समूह (उदाहरणार्थ, निजी इक्विटी निधि/उद्यम के लिए पूँजी निधि) के लिए एक जोखिम प्रबंधन एवं पूँजी पर्याप्तता ढाँचा निर्धारित करने पर विचार कर रहा है, खासकर इस प्रकार के कार्यकलापों को हाथ में लेने से उत्पन्न प्रतिष्ठा जोखिम को ध्यान में रखते हुए।

5.128 मौद्रिक नीति आघातों के विषम प्रभावों के अनुमान से यह प्रकट हुआ कि नीति-दरों में और चलनिधि में परिवर्तन का महत्त्वपूर्ण सकारात्मक प्रभाव बैंक उधार पर पड़ता है और उधार देने की प्रवृत्ति पर मौद्रिक नीति का प्रभाव उन बैंकों के लिए सुदृढ़ होता है जिनके पास कम अर्थसुलभ तुलन-पत्र होता है। गिरते शेयर मूल्यों और कारपोरेटों के लिए संसाधनों के कम होते जाने से म्यूचुअल फंडों पर वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में शोधन दबाव उत्पन्न हुआ और इसके साथ ही म्यूचुअल फंड वैकल्पिक स्रोतों से निधियाँ जुटाने में असमर्थ हुए। एनबीएफसी और म्यूचुअल फंडों ने अपनी निधियों के स्रोतों को देखते हुए चलनिधि की बड़ी कमी महसूस की। रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकों को दी गयी मीयादी रिपो सुविधा, जिसकी सहायता से बैंक एनबीएफसी और म्यूचुअल फंडों को आगे उधार दे सकें, और वर्ष 2009-10 के आरंभ में शेयर बाजार की स्थिति सुधरने से इन संस्थाओं को राहत मिली। ऐसे स्पष्ट संकेत दिखाई दे रहे हैं कि म्यूचुअल फंडों पर दबाव कम हुआ है और गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियाँ भी अपनी आस्तियों और देयताओं में संतुलन स्थापित करने के लिए आवश्यक समायोजन कर रही हैं।

5.129 सारांश रूप में कहा जा सकता है कि भारत में वित्तीय क्षेत्र के सभी घटक वर्ष 2008-09 के दौरान हाल के वैश्विक संकट से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित हुए। यह उस वित्तीय दबाव में भी प्रतिबिंबित होता है जो वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही में पर्याप्त बढ़ा, जैसाकि वित्तीय दबाव संकेतकों में आई तीव्र वृद्धि से स्पष्ट होता है। वास्तव में, भारत में वित्तीय दबाव संकेतकों में वृद्धि होना अगस्त 2007 से आरंभ हुआ और वह अक्तूबर 2008 में शिखर पर पहुँच गया, जो लेहमैन ब्रदर्स की विफलता के बाद अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में गहराती उथल-पुथल में प्रतिबिंबित होता है। द्रुत गति से और नपे-तुले रूप में किये गये मौद्रिक और राजकोषीय नीतिगत उपायों ने भारतीय वित्तीय बाजारों पर वित्तीय दबाव को नवंबर 2008 से बहुत हद तक कम किया है और तब से वित्तीय दबाव संकेतकों का रुख अधोगामी है।

6 संकट का प्रभाव और भारत में नीतिगत अनुक्रिया : संपदा क्षेत्र

6.1 इस अध्याय में अर्थव्यवस्था के संपदा क्षेत्र पर व्यापार एवं पूँजी प्रवाह सरणियों के माध्यम से पड़ने वाले वैश्विक संकट के प्रभाव का विश्लेषण किया गया है। संकट का व्यापक स्वरूप विकसित, विकासशील और उभरती सभी बाजार अर्थव्यवस्थाओं में वास्तविक जीडीपी की वृद्धि दरों में आयी गिरावट से स्पष्ट होता है। लगभग 130 देशों में वर्ष 2007 की तुलना में वर्ष 2008 में जीडीपी वृद्धि में गिरावट देखी गयी और लगभग 166 देशों में वर्ष 2008 की तुलना में वर्ष 2009 में वृद्धि दर में गिरावट देखी गयी (वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक, आईएमएफ, अप्रैल 2010)। हाल के संकट के दौरान व्यापार सरणी का महत्त्व इस बात से स्पष्ट था कि विश्व-व्यापार-वृद्धि वर्ष 2007 के 7.3 प्रतिशत से गिर कर वर्ष 2008 में 2.8 प्रतिशत और अंतत: वर्ष 2009 में ऋणात्मक 10.7 प्रतिशत हो गयी।

6.2 अन्य उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) की तरह सब-प्राइम संकट का आरंभिक प्रभाव भारतीय अर्थव्यवस्था के संपदा क्षेत्र पर अपेक्षाकृत मंद रहा, क्योंकि आरंभ में संकट अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में उथल-पुथल तक सीमित था। सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स की विफलता के बाद बाह्य वातावरण में अचानक परिवर्तन हुआ, जिसने भारत को व्यापार, वित्त और विश्वास सरणियों के माध्यम से अन्य ईएमई की तरह प्रभावित किया। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में संकट के वैश्विक रूप से अधिक तुल्यकालिक होने के साथ यह प्रभाव वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में सिकुड़ते व्यापार और पूँजी प्रतिवर्तन के संदर्भ में और गंभीर हो गया। इस चरण के दौरान, वैश्विक वित्तीय आघातों में तीव्रता आयी और यह क्रमिक रूप से अभूतपूर्व विश्वव्यापी आर्थिक मंदी में परिणत हुआ और इसने व्यापार को और उसके बाद संपदा-क्षेत्र कार्यकलापों को प्रभावित किया। उपर्युक्त पृष्ठभूमि में, संपदा क्षेत्र पर व्यापार एवं पूंजी प्रवाह सरणियों के माध्यम से वैश्विक संकट के संचरण तथा अंतत: इसके बचत, निवेश और वृद्धि पर प्रभाव का मूल्यांकन इस अध्याय में किया गया है।

6.3 इस अध्याय को निम्नलिखित रूप में व्यवस्थित किया गया है। खंड I में संपदा क्षेत्र पर वैश्विक आघात की विविध सरणियों के माध्यम से संचरण का परिप्रेक्ष्य दिया गया है। खंड II में, व्यापार सरणी से उत्पन्न प्रभाव का विश्लेषण ब्यौरेवार किया गया है, जबकि वित्तीय सरणी के माध्यम से स्पिलओवर के विस्तार का विश्लेषण खंड III में किया गया है। व्यापार और पूँजी-प्रवाह प्रतिवर्तनों के बचत, निवेश और वृद्धि पर प्रभाव को खंड IV में शामिल किया गया है। खंड V में समापन टिप्पणी दी गयी है।

I. वैश्विक आघात का संपदा क्षेत्र में संचरण

भारत में समग्र मांग की संरचना में बदलाव

6.4 जब तक वैश्विक संकट उपस्थित नहीं हुआ था, तब तक भारतीय अर्थव्यवस्था 1990 के दशक से अर्थव्यवस्था के बढ़ते खुलेपन के बावजूद विविध प्रतिकूल बाह्य गतिविधियों के प्रति उल्लेखनीय समुत्थान-शक्ति का प्रदर्शन कर रही थी। इस समुत्थान-शक्ति के अनेक कारण थे। पहला, वृद्धि की प्रक्रिया में देशी मांग की अभिभावी भूमिका होती थी (सारणी 6.1)। दूसरा, स्वतंत्रता के प्रथम चार दशकों के दौरान देशी मांग की अगुआई निजी उपभोग द्वारा की जाती थी। तीसरा, निवेश मांग के एक बड़े भाग का समर्थन देशी बचत द्वारा किया जाता था। चौथा, सेवा क्षेत्र, जिसकी अगुआई देशी मांग द्वारा की जाती थी, समग्र आर्थिक वृद्धि की स्थिरता में योगदान करता था। पाँचवाँ, वित्तीय क्षेत्र में बैंकिंग क्षेत्र वित्तीय मध्यस्थता प्रक्रिया के एक बड़े हिस्से के

सारणी 6.1 : भारत में समग्र मांग की संरचना में बदलाव

(1999-2000 की कीमतों पर जीडीपी में प्रतिशत)

	निजी उपभोग	सरकारी उपभोग	निवेश	निर्यात	आयात
1	2	3	4	5	6
1950का दशक	89.0	5.6	12.5	6.1	7.5
1960का दशक	82.9	7.8	16.9	4.0	5.7
1970का दशक	77.6	9.8	19.4	5.7	5.0
1980का दशक	75.9	11.6	20.2	6.5	7.1
1990का दशक	67.6	11.7	23.3	9.3	10.3
2000का दशक	60.7	11.0	29.9	17.6	19.2
2007-08	58.5	10.3	38.2	21.6	26.2
2008-09	59.5	11.5	34.9	24.5	30.7
2009-10 (संअ)	58.0	11.6	34.7	19.3	23.8

स्रोत : केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन, भारत सरकार ।

लिए जिम्मेवार होता था, जिसका अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में कोई महत्त्वपूर्ण एक्सपोजर नहीं होता था।

6.5 1990 के दशक के अंत की घटना के विपरीत हाल के वैश्विक संकट ने भारतीय अर्थव्यवस्था से संबंधित परिप्रेक्ष्य में परिवर्तन ला दिया। व्यापार और वित्त के खुलेपन में महत्त्वपूर्ण बढ़ोतरी के चलते वैश्विक गतिविधियाँ अर्थव्यवस्था के लिए महत्त्वपूर्ण हो गयीं (सुब्बाराव, 2009; रेड्डी, 2007 और 2008)। 1980 और 1990 के दशकों की तुलना में चालू दशक के दौरान भारत में समग्र मांग में निर्यात और आयात के हिस्से में तेजी से वृद्धि हुई है; दूसरी ओर, इसी अवधि के दौरान निजी उपभोग का हिस्सा कम हुआ है (सारणी 6.1)। समग्र मांग में संरचनात्मक बदलाव के परिणामस्वरूप, भारतीय अर्थव्यवस्था पूर्व की अवधि की तुलना में अब बाह्य आघातों से अधिक असुरक्षित हो गयी है। जैसे ही हाल के वैश्विक संकट के सभी क्षेत्रों में व्यापक प्रभाव के साथ उसकी गति में तेजी आयी, उसकी झलक भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर में गिरावट में स्पष्ट दिखाई दी। भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर में तेजी से नरमी आकर वह वर्ष 2008-09 में 6.7 प्रतिशत हो गयी और इस प्रकार वह वर्ष 2006-07 के अपने शिखर-स्तर से 3.0 प्रतिशत अंक तक कम हो गयी। इसके साथ-साथ निजी उपभोग और निवेश कार्यकलापों की वृद्धि दरों में भी महत्त्वपूर्ण रूप से नरमी दिखाई पड़ी।

वियोजन परिकल्पना की युक्तियुक्तता

6.6 किसी अर्थव्यवस्था के वियोजन के लिए अन्य देशों के साथ इसकी व्यवसाय-चक्र समकालिकता में महत्त्वपूर्ण गिरावट का होना आवश्यक होता है, जिसका अर्थ यह है कि इसका व्यवसाय-चक्र दूसरी अर्थव्यवस्था/ग्रुप के व्यवसाय-चक्र से स्वतंत्र रूप से गमन करता है। हाल के वित्तीय संकट के दौरान पूरी दुनिया के नीति-निर्माता और अनुसंधानकर्ता प्रारंभिक चरण में इस बात पर वाद-विवाद कर रहे थे कि क्या भारत सहित उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से वियोजित हो चुकी हैं। तथापि, जैसे-जैसे वित्तीय संकट बढ़ता गया और क्रमबद्ध रूप से पूर्ण आर्थिक मंदी में ईएमई समेत लगभग सभी देशों को समेटता गया, वैसे-वैसे उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के वियोजन के विरुद्ध वाद-विवाद को विराम लगता गया।

6.7 यह तर्क दिया जाता रहा है कि वियोजन की परिकल्पना इस विचार के विरुद्ध चलती है कि वैश्वीकरण व्यापार-सहबद्धता और अंतरराष्ट्रीय वित्तीय एकीकरण को बढ़ाता है, जिससे देश-विशिष्ट आघातों के सभी देशों में तगड़े संचरण की गुंजाइश होती है और इसीलिए तगड़ा व्यवसाय-चक्र सहगमन होता है (वाल्टी, 2009)। कोसे, ऑट्रोक और प्रसाद (2008) भी यह उल्लेख करते हैं कि व्यापार और वित्तीय प्रवाह के प्रति अधिक खुलापन से सभी अर्थव्यवस्थाओं को बाह्य आघातों के प्रति अधिक संवेदनशील होना चाहिए और इन आघातों की सरणी को व्यापक बनाते हुए इन्हें सभी देशों में पसरने के लिए वैश्विक आघातों की अनुक्रिया के रूप में सह-गमन को बढ़ाना चाहिए[1]। इसके विपरीत वियोजन परिकल्पना के प्रस्तावकों की यह मान्यता है कि उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की गतिविधियों के प्रति कम असुरक्षित रह गयी हैं, जिसका कारण है देशी नीतिगत ढाँचे को सुदृढ़ किया जाना, जिसके चलते उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के साथ न्यून व्यवसाय-चक्र सहगमन होता है।

6.8 वाल्टी (2009) ने अनुभवमूलक रूप से उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं और कुल चार समूहों - सभी उन्नत अर्थव्यवस्थाओं, जी7 देशों, अमेरिका और यूरोपीय संघ - के बीच व्यवसाय-चक्र समकालिकता के अंश की जाँच की, जिसके लिए वर्ष 1980 से 2007 तक के आँकड़ों का चयन किया गया था। इसका निष्कर्ष यह निकाला गया कि वियोजन एक मिथक है, क्योंकि व्यवसाय-चक्र समकालिकता में सामान्यत: कोई गिरावट कालक्रम में और निश्चित रूप से हाल के वर्षों के दौरान नहीं आयी है और, इस प्रकार, उभरते बाजार उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से पृथक नहीं हुए हैं[2]। इसी प्रकार रोसे (2009) ने 64 देशों में व्यवसाय-चक्र की क्षेत्रपार समकालिकता के अंश की जाँच की, जिसमें वर्ष 1974 से 2007 तक के वार्षिक

[1] उन्होंने यह पाया कि वैश्वीकरण-पूर्व अवधि (1960-1984) की तुलना में वैश्वीकरण अवधि (1985-2005) के दौरान औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं और ईएमई, दोनों में समष्टिआर्थिक उतार-चढ़ाव के लिए वैश्विक कारक कम महत्त्वपूर्ण रह गया है और, इसके विपरीत, समूह-विशिष्ट कारकों का महत्त्व उल्लेखनीय रूप से बढ़ गया है।

[2] जांच के परिणामों का तात्पर्य नह नहीं है कि व्यवसाय-चक्र समकालिकता स्थायी रूप से वर्तमान स्तर पर बनी रहेगी, या समकालिकता में भविष्य में और वृद्धि होगी। जब तक वर्तमान वैश्विक मंदी का दौर चलता रहेगा, तब तक समकालिकता में गिरावट की उम्मीद वर्तमान साक्ष्य को देखते हुए नहीं है, जिसमें यह दर्शाया गया है कि व्यवसाय-चक्र इस प्रकार की कालावधि में अधिक समकालिक हो जाते हैं (वाल्टी, 2009)।

आँकड़े लिये गये थे और यह पाया कि पूरी दुनिया के देश कालक्रम में अधिकाधिक निकट आ गये प्रतीत होते हैं, कम नहीं। यह भी तर्क दिया गया कि आर्थिक कार्यसंपादन में अपसरण के निदर्शन के रूप में प्रस्तुत साक्ष्य, जिसे वियोजन के रूप में निर्दिष्ट किया गया था, निश्चयात्मक नहीं है (कॉहन, 2008)।

6.9 बढ़े हुए वैश्विक एकीकरण ने भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि में उतार-चढ़ाव को विश्व-अर्थव्यवस्था की वृद्धि में उतार-चढ़ाव के साथ संबद्द कर दिया है, खासकर 1980 और 1990 के दशकों की तुलना में वर्ष 2001-2008 की अवधि के दौरान (सारणी 6.2)। यह उल्लेखनीय है कि भारत और विश्व में वृद्धि के बीच बढ़े हुए साहचर्य का एक बड़ा हिस्सा उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं से उद्भूत हुआ, जैसाकि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में उनके सहसंबंध में काफी बढ़ोतरी में प्रतिबिंबित होता है।

6.10 भारतीय अर्थव्यवस्था की शेष विश्व के साथ बढ़ी हुई समकालिकता हाल की वैश्विक आर्थिक मंदी के दौरान भी इंद्रियगोचर हुई, जिसमें भारत की वृद्धि में गिरावट वैश्विक प्रवृत्ति के बाद दर्ज की गयी, बावजूद इसके कि कुछ उन्नत और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के विपरीत इसके पास अक्षत बैंकिंग और वित्तीय प्रणाली थी (चार्ट VI.1)। इससे यह सहज ही प्रकट होता है कि, वर्तमान संदर्भ में, वियोजन की परिकल्पना भारत और अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाओं के मामले में युक्तियुक्त नहीं भी हो सकती है।

सारणी 6.2 : भारत और विश्व अर्थव्यवस्था की वृद्धि के बीच सहसंबंध

अवधि	विश्व अर्थव्यवस्था	उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ
1	2	3	4
1980का दशक	0.43	0.52	-0.02
	(1.4)	(1.7)	(-0.1)
1990का दशक	0.59	0.60	0.51
	(2.1)	(2.1)	(1.7)
2001-2008	0.92	0.71	0.96
	(5.8)	(2.5)	(8.4)

टिप्पणी : कोष्ठक में दिये गये आँकड़े टी-स्टैटिस्टिक्स सूचित करते हैं।
स्रोत : वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक।

चार्ट VI.1 : जीडीपी वृद्धि की प्रवृत्ति

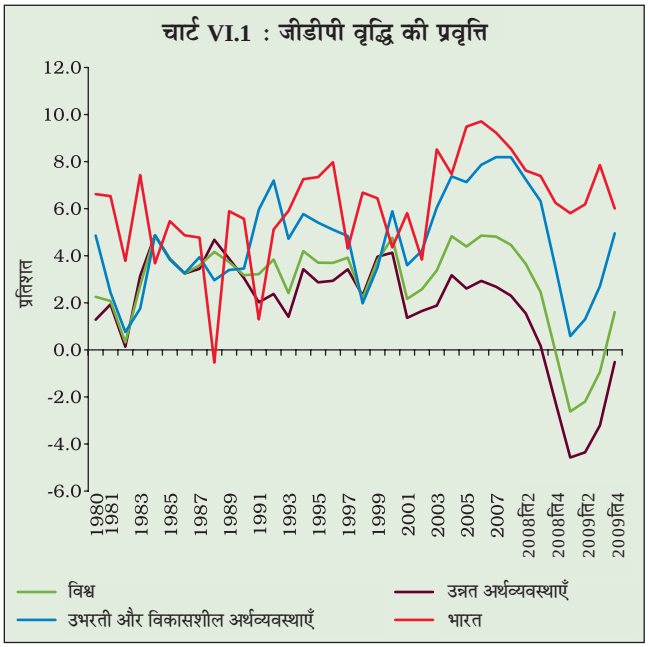

6.11 भारत के मामले में वियोजन परिकल्पना की जाँच इसकी जीडीपी में वृद्धि और व्यापार की अन्य देशों के साथ समकालिकता का अनुमान लगाते हुए की गयी है। यह पाया गया है कि अमेरिका और अन्य उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में उन्मुक्त हुए वित्तीय संकट और मंदी से भारत वियोजित नहीं हुआ, जैसाकि हाल की अवधि के दौरान विश्व-अर्थव्यवस्था, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं तथा उभरती एवं विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के साथ इसकी आय-वृद्धि में उच्च अंश की व्यवसाय-चक्र समकालिकता से स्पष्ट है, जो वर्ष 2005 की पहली तिमाही से लेकर वर्ष 2009 की दूसरी तिमाही तक देखने को मिलती है (चार्ट VI.2)। वाल्टी (2009) के निष्कर्षों से भी यह प्रकट होता है कि भारत उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के चार समग्र समूहों, यथा, सभी उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ, जी7 के देश, अमेरिका और यूरोपीय संघ[3], के संबंध में वियोजित नहीं हुआ।

6.12 पुन:, भारतीय अर्थव्यवस्था के उन्नत अर्थव्यवस्थाओं और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं से वियोजन की छानबीन करने के लिए विकसित होती द्विपक्षीय व्यवसाय-चक्र समकालिकता का अनुमान लगाने में तिमाही जीडीपी और उपभोग के आँकड़े वर्ष 1996 की दूसरी तिमाही से लेकर वर्ष 2009 की पहली तिमाही तक के लिए

[3] कुल मिलाकर, एशियाई क्षेत्र में किसी भी उभरते बाजार के बारे में यह नहीं कहा जा सकता है कि इसका वियोजन उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से हुआ है; प्रत्येक देश के लिए उन्नत अर्थव्यवस्थाओं का कम से कम एक ग्रुप हमेशा रहा है, जिसके संबंध में समकालिकता में कमी नहीं आयी है।

चार्ट VI.2 : भारत की व्यवसाय-चक्र समकालिकता (2005ति1 - 2009ति2)

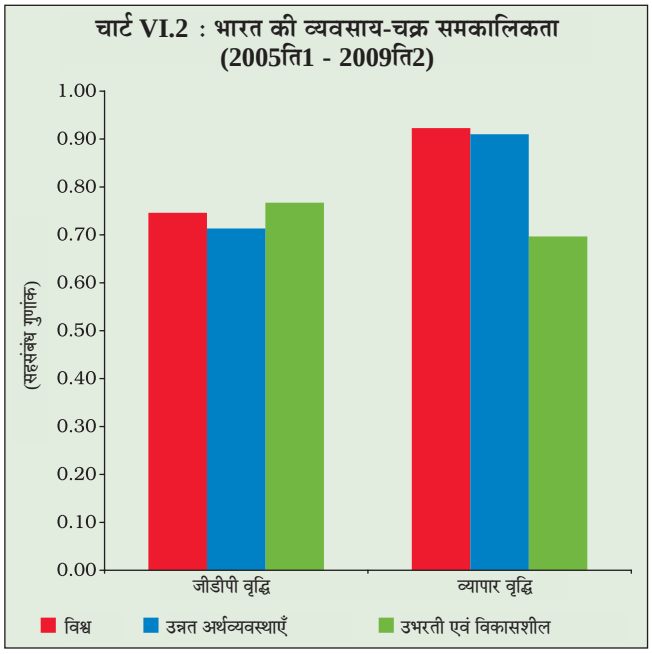

लिये गये हैं। यह पाया गया है कि भारतीय अर्थव्यवस्था की अधिकांश उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के साथ व्यवसाय-चक्र समकालिकता (जीडीपी के संदर्भ में) कालक्रम में बढ़ी है, विशेष रूप से हाल की अवधि में (2006ति1-2009ति2) (सारणी 6.3)।

सारणी 6.3 : उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) के साथ भारत की व्यवसाय-चक्र समकालिकता (जीडीपी वृद्धि)

देश	1996ति2-2009ति2	1996ति2-2000ति4	2001ति1-2005ति4	2006ति1-2009ति2
1	2	3	4	5
अर्जेंटीना	0.6	0.4	0.4	0.8
कनाडा	0.4	0.1	0.0	0.8
फ्रांस	0.4	0.0	0.2	0.9
जर्मनी	0.5	-0.1	0.2	0.7
इंडोनेशिया	-0.2	-0.6	0.2	0.1
इटली	0.3	-0.5	0.2	0.9
जापान	0.3	-0.5	0.0	0.8
कोरिया	0.0	-0.4	-0.4	0.6
मलेशिया	0.0	-0.4	-0.4	0.7
रूस	0.0	-0.4	0.2	0.8
युनाइटेड किंगडम	0.6	0.2	0.3	0.9
अमेरिका	0.4	0.4	0.2	0.3

सारणी 6.4 : उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) के साथ भारत की व्यवसाय-चक्र समकालिकता (पारिवारिक उपभोग)

देश	1996ति2-2009ति2	1996ति2-2000ति4	2001ति1-2005ति4	2006ति1-2009ति2
1	2	3	4	5
अर्जेंटीना	0.0	-1.0	0.4	-0.8
कनाडा	-0.2	0.0	0.0	0.1
फ्रांस	-0.6	0.7	-0.3	-0.8
जर्मनी	-0.2	0.4	-0.2	-0.4
इंडोनेशिया	-0.3	0.3	-0.4	-0.4
इटली	0.1	-0.2	0.3	0.4
जापान	0.0	-0.3	0.0	-0.7
कोरिया	-0.1	0.2	0.0	0.6
मलेशिया	-0.3	0.0	-0.1	-0.5
रूस	-0.4	0.5	0.3	-0.8
युनाइटेड किंगडम	-0.2	-0.1	-0.2	0.1
अमेरिका	-0.1	-0.3	0.2	0.5

6.13 इसके विपरीत, उपभोग के संदर्भ में उन्नत और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के साथ भारत की व्यवसाय-चक्र समकालिकता में उतार-चढ़ाव का क्रम मिश्रित रहा, क्योंकि कुछ देशों के साथ, खास कर उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के साथ इसमें कालक्रम में बढ़ोतरी हुई, जबकि अन्य के साथ इसमें गिरावट देखने को मिली (सारणी 6.4)।

6.14 किसी अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के व्यवसाय-चक्र का अन्य देशों के साथ सहगमन का अंश मुख्यतया उनके बाह्य खुलापन और विविध अप्रत्यक्ष सरणियों के माध्यम से एक्सपोजर पर निर्भर करते हुए परिवर्तनशील हो सकता है। भारत का औद्योगिक क्षेत्र बढ़ते वणिक माल व्यापार और अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों से प्राप्त बढ़ती पूँजी के साथ विश्व अर्थव्यवस्था से अधिकाधिक असुरक्षित रहता आया है। अत:, हाल के वैश्विक वित्तीय संकट और बाद में आर्थिक मंदी से उद्भूत संक्रामक के परिणामस्वरूप उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के साथ औद्योगिक चक्र के सहगमन का विश्लेषण करने का एक प्रयास किया गया। इसके परिणाम यह दर्शाते हैं कि उन्नत देशों के साथ भारत की औद्योगिक चक्रीय समकालिकता, जिसमें वर्ष 1995-2000 से लेकर 2001-2005 तक, सिवाय जर्मनी के, तेज गिरावट आयी थी, हाल की अवधि में (2006-2009)[4] में काफी सुधरी। हाल की अवधि

[4] भारत और अन्य उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के संदर्भ में औद्योगिक उत्पादन सूचकांक (आइआइपी) के मासिक आँकड़े वर्ष 1995 से 2009 (जून) तक आईएमएफ से लिये गये थे और उन्हें मौसमी रूप से समायोजित किया गया था, जिसके लिए यूएस सेंसस ब्यूरो के एक्स12 अरीमा का उपयोग किया गया था। तब आँकड़े को सामान्य हॉट्रिक प्रेसकॉट फिल्टर के साथ डिट्रेंड किया गया और भारत तथा उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के बीच डिट्रेंडेड आइआइपी के बीच सहसंबंध गुणांक का प्राक्कलन किया गया।

के दौरान भारत की औद्योगिक चक्र समकालिकता जर्मनी के साथ सबसे अधिक थी, जिसके बाद इटली और अमेरिका का स्थान है। दूसरा उल्लेखनीय लक्षण है हाल की अवधि (2006-2009) में प्रमुख उन्नत देशों के साथ औद्योगिक समकालिकता में महत्त्वपूर्ण वृद्धि होना (चार्ट VI.3)। इस प्रकार, उन्नत देशों के साथ समकालिकता के सुदृढ़ीकरण ने भारत के औद्योगिक क्षेत्र के लिए यह कठिन बना दिया कि वह वैश्विक वित्तीय संकट और आर्थिक मंदी के स्पिलओवर प्रभाव से अप्रभावित रह सके।

वित्तीय संकट और संभाव्य उत्पादन

6.15 संभाव्य उत्पादन को गिरती मांग और कम होते निधीयन के माध्यम से सीधे प्रभावित करने के अतिरिक्त किसी वित्तीय संकट का अप्रत्यक्ष प्रभाव भी हो सकता है, क्योंकि संकट से सामान्यत: नीतिगत अनुक्रियाएँ प्रेरित होती हैं, जो आर्थिक गिरावट से उद्भूत नुकसानदेह प्रभावों का प्रतिकार करती है (रेनहॉर्ट और रोगोफ, 2009)। इस प्रकार की नीतिगत अनुक्रियाओं में आधारभूत संरचना क्षेत्र में निवेश बढ़ाने का लक्ष्य रखा जाता है, ताकि संभाव्य उत्पादन को बढ़ावा दिया जा सके; इसके साथ-साथ, वे विकृतियों की शुरुआत कर सकती हैं या अत्यधिक जोखिम-ग्रहण को प्रोत्साहित कर सकती हैं। अस्थायी राजकोषीय उपाय सरकार के व्यय के आकार में तथा ऋण के स्तर में स्थायी बढ़ोतरी की अगुआई कर सकते हैं, जो बदले में वृद्धि पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं (अफौन्सों और फुरसेरी, 2008)। अंतत:, नीतिगत अनुक्रियाओं का स्वरूप और डिजाइन संकट की अवधि के दौरान और बाद में संभाव्य उत्पादन के नतीजों का निश्चय कर सकते हैं। होज और अन्य (2006) यह उल्लेख करते हैं कि वित्तीय संकट संरचनात्मक सुधारों के कार्यान्वयन को भी प्रोत्साहित कर सकते हैं, जो बदले में सुधारों के राजनीतिक विरोध को नरम करते हुए संभाव्य उत्पादन को बढ़ा सकते हैं।

6.16 हॉड्रिक-प्रेसकॉट पद्धति पर आधारित संभाव्य उत्पादन का उपयोग करते हुए यह देखा गया है कि वैश्विक आघातों ने भारत की अभिप्रेत उत्पादन वृद्धि को संकट-पूर्व प्रक्षेप-पथ से सीमांतिक रूप से प्रभावित किया है। तथापि, इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि भारत में संभाव्य उत्पादन वृद्धि में कुछ गिरावट चक्रीय गिरावट के कारण हुई, जो वैश्विक संकट के अर्थव्यवस्था को प्रभावित करने के पूर्व शुरू हो चुकी थी। जबकि अल्पावधि में उत्पादन-पथ पर उत्पादकता वृद्धि में गिरावट का प्रभाव पड़ सकता है, दीर्घावधि में पूंजी-श्रम अनुपात और रोजगार वृद्धि संभाव्य उत्पादन में हानि का निश्चय करेंगे। इस प्रकार, यदि कोई अर्थव्यवस्था अल्पावधि में पूर्ववर्ती प्रवृत्ति की तुलना में उत्पादन में गिरावट का अनुभव करती है, तो यह संभाव्य उत्पादन में गिरावट हो सकती है, लेकिन यह सकल मांग में निरंतर गिरावट का भी प्रतिनिधित्व कर सकती है।

6.17 यह तर्क दिया जाता है कि दीर्घावधि की रोजगार हानि का कारण वित्तीय संकट के प्रति श्रमिक, पूँजी और घटक उत्पादकता की अनुक्रिया को माना जा सकता है (आईएमएफ, 2009)। यदि आघात इतने महत्त्वपूर्ण हों कि वे संरचनात्मक बेरोजगारी का कारण बन सकते हों, तो श्रम बाजारों में संस्थागत अनम्यता को देखते हुए, रोजगार के संकट-पूर्व स्तर पर पहुँचने के लिए लंबा समय लग सकता है, जिससे अर्थव्यवस्था में मध्यावधि में उत्पादकता घट सकती है। दूसरा, संकट के चलते ऋण-विस्तार में और इसीलिए निवेश-दर में विविध सरणियों, यथा, कठोर ऋण मानक, उधार की उच्च लागत, और संपार्श्विकों में कटौती के माध्यम से कारपोरेटों के तुलनपत्रों पर आस्ति-कीमतों का प्रतिकूल प्रभाव, के माध्यम से कमी आ सकती है। तीसरा, उत्पादकता

चार्ट VI.3 : औद्योगिक क्षेत्र की समकालिकता

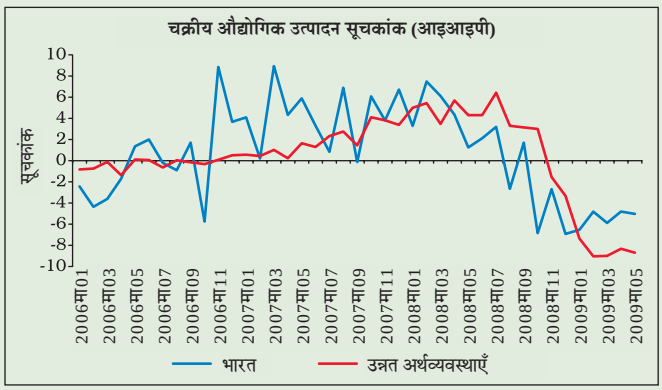

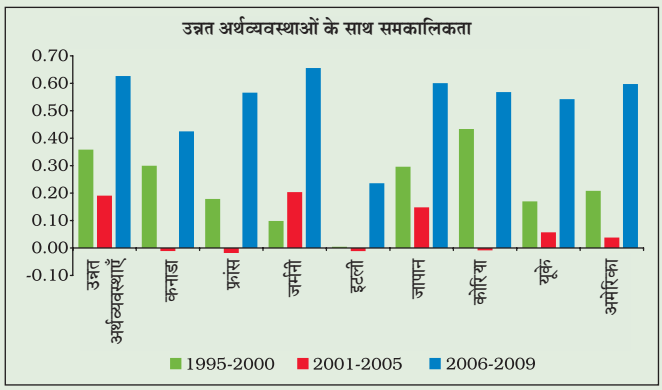

का स्तर नवोन्मेषों की गति में धीमापन तथा अनुसंधान एवं विकास में कटौती के कारण गिर सकता है, क्योंकि कंपनियाँ संकट के प्रभाव के चलते अपनी पुनर्संरचना का प्रयास करती हैं। यद्यपि उप्रयुक्त कारकों का परिमाण-निर्धारण करना कठिन है, भारत में निवेश-दर पर बाह्य आघात का प्रभाव उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की तरह उतना प्रतिकूल नहीं भी हो सकता है (बॉक्स VI.1)

बॉक्स VI.1

उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) की तुलना में भारत में संभाव्य वृद्धि की हानि

संभाव्य उत्पादन सामान्यत: उत्पादन का इष्टतम स्तर होता है, जिसे मुद्रास्फीति पर दबाव डाले बिना नैसर्गिक एवं संस्थागत बाध्यताओं के भीतर प्राप्त किया जा सकता है। संभाव्य उत्पादन को "नैसर्गिक सकल देशी उत्पाद" भी कहा जाता है और यदि अर्थव्यवस्था अपनी क्षमता-संपन्न अवस्था में हो, तो बेरोजगारी की दर एनएआइआरयू या बेरोजगारी की नैसर्गिक दर के बराबर होती है। वित्तीय संकट अक्सर किसी अर्थव्यवस्था के उत्पादन को वित्तीय मध्यस्थता, उपभोग और निवेशों में कमी लाकर तथा व्यावसायिक रुझान को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हुए प्रभावित करने का कारण बनता है; तथापि, नुकसान की सीमा संकट की गंभीरता और कालावधि पर निर्भर होती है। फुरसेरी और मोरोगेन (2009) द्वारा वर्ष 1960 से लेकर 2007 तक की अवधि के लिए ओईसीडी देशों के संबंध में किये गये हाल के अनुभवमूलक अध्ययन में यह निष्कर्ष निकला है कि वित्तीय संकट औसतन 1.5 से 2.4 प्रतिशत तक संभाव्य उत्पादन को कम कर देते हैं। इसी प्रकार सेरा और सक्सेना (2008) ने 190 देशों में उत्पादन-प्रवृत्ति का अध्ययन कि या और वित्तीय संकट से सहबद्ध बड़ी और निरंतर वास्तविक उत्पादन हानि को देखा, जिसमें बैंकिंग संकट के उपस्थित होने पर 10 वर्षों की अवधि में अपेक्षाकृत 7.5 प्रतिशत तक उत्पादन-हानि हुई। यदि उत्पादन-हानि अस्थायी हो, तो तत्परतापूर्वक और सुधारात्मक नीतिगत उपक्रमण किये जाने से नुकसान की भरपाई हो सकती है और अल्पावधि में ही उत्पादन को उसके पिछले प्रक्षेप-पथ पर लाया जा सकता है। दूसरी ओर, यदि उत्पादन-हानि स्थायी प्रकार की हो, अर्थात्, यदि संभाव्य उत्पादन में संरचनागत भंग हो और वह प्रक्षेप-पथ पर नीचे चला गया हो, ते नीति-निर्माताओं को कठिन प्रयास करने की जरूरत होती है और उत्पादन को पिछले प्रक्षेप-पथ पर लाने के लिए लंबा समय लग सकता है।

हाल के वैश्विक संकट के दौरान भारत में वित्तीय मध्यस्थता के स्तर में महत्त्वपूर्ण गिरावट आयी, जो बैंक-ऋण और इक्विटी बाजारों में आघात, दोनों ही रूप में थी। दूसरा, बेरोजगारी की दर भी बढ़ गयी, विशेष रूप से निर्यातोन्मुख क्षेत्रों में, यद्यपि इसके संबंध में सरकारी अनुमान उपलब्ध नहीं हैं। तीसरा, वणिक माल निर्यात में तेजी से संकुचन हुआ, जिसमें संभवत: उनके पूँजी-स्टॉक और श्रमिक बल का बड़ा हिस्सा निक्रिय पड़ा रहा, यदि निर्यात इकाइयों ने अपना ध्यान देशी बाजारों पर केंद्रित नहीं किया। अत:, उपर्युक्त के आलोक में, अन्य उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में भारत के मामले में उत्पादन-वृद्धि में हानि, चाहे वह अस्थायी हो या स्थायी (संभाव्य), का अनुमान लगाना सार्थक होगा।

यद्यपि संभाव्य उत्पादन का अनुमान लगाने के लिए विभिन्न प्रकार की कार्य-प्रणालियाँ होती हैं, इसका विश्वसनीय मापन करना कठिनाइयों से भरा होता है और, इसीलिए, युक्तियुक्तता का मामला अनसुलझा रह जाता है। फिर भी, हॉड्रिक-प्रेसकॉट (एचपी) फिल्टर का उपयोग दीर्घावधि 'ट्रेंड' वृद्धि का पता लगाने के लिए किया गया है, जिसमें वर्तमान संकट के दौरान उत्पादन-वृद्धि में हानि का मूल्यांकन करने के लिए वार्षिक और तिमाही आँकड़ों का उपयोग किया गया है। संभाव्य उत्पादन-वृद्धि में बदलाव, यदि हो, को प्रारंभिक समझा जाना चाहिए और उसके लिए चेतावनी के साथ कोई अनुमान लगाना आवश्यक होगा।

एचपी फिल्टर कार्यप्रणाली पर आधारित संभाव्य वृद्धि के तिमाही अनुमान दर्शाते हैं कि वृद्धि में हानि, जो वर्ष 2008 की दूसरी तिमाही से आरंभ हुई, अलबत्ता सीमांतिक रूप में, वह बाद की तिमाहियों में भी जारी रही, जिसमें हानि वर्ष 2008 की चौथी तिमाही और वर्ष 2009 की पहली तिमाही में लगभग 2.0 प्रतिशत अंक और वर्ष 2009 की दूसरी तिमाही में 1.4 प्रतिशत अंक की हुई। संभाव्य वृद्धि की प्रवृत्ति से यह सूचित होता है कि उद्योग में वास्तविक वृद्धि वर्ष 2009 की दूसरी तिमाही में संभाव्य स्तर तक जा पहुँची, जिससे यह इंगित होता है कि वृद्धि में हानि अस्थायी थी। इसके विपरीत, सेवा-क्षेत्र में वृद्धि में हानि अधिक होती गयी। फिर भी, जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है, ये परिणाम प्रारंभिक हैं और, इसलिए, इनका उपयोग बड़ी सतर्कता के साथ किया जाना चाहिए। चूँकि सेवा-क्षेत्र जीडीपी में 60 प्रतिशत का योगदान करता है, जीडीपी में संभाव्य वृद्धि सेवा-क्षेत्र की प्रवृत्ति का अनुसरण करती दिखाई पड़ती है (चार्ट 1)।

चार्ट 1 : भारत में वास्तविक और संभाव्य वृद्धि

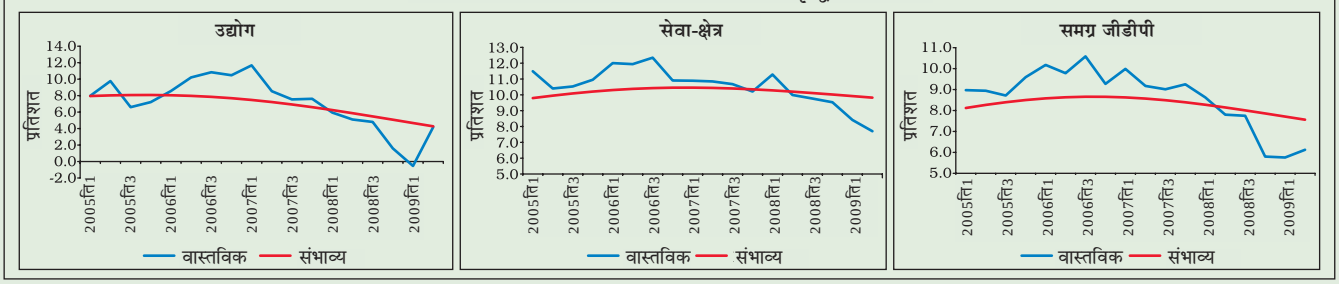

(जारी...)

मलेशिया

रूस

(... समाप्त)

भारत में और कुछ उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में संभाव्य वृद्धि का अनुमान लगाने के लिए भी एचपी फिल्टर का उपयोग किया गया, जिसके लिए वर्ष 1980 से 2008 तक के आँकड़े लिये गये थे। भारत सहित अधिकांश ईएमई ने वर्ष 2008 में वास्तविक वृद्धि में हानि का अनुभव किया, जब संभाव्य वृद्धि के साथ तुलना की गयी, जबकि इन देशों ने हाल के वर्षों में वास्तविक वृद्धि में लाभ दर्शाया है (सारणी 1)। वर्ष 2008 के दौरान रूस में वृद्धि में सबसे अधिक हानि हुई, जिसके बाद चीन, अर्जेंटीना, फिलीपीन्स और मलेशिया का स्थान है।

सारणी 1 : ईएमई की तुलना में भारत में वृद्धि अंतराल
(वास्तविक घटाव संभाव्य)

देश	2001-2005	2006	2007	2008
अर्जेंटीना	-1.2	2.0	1.1	-1.6
ब्राजील	-0.4	-0.2	1.1	0.1
चीन	-0.2	1.2	2.3	-1.9
भारत	-0.5	1.7	0.8	-1.5
इंडोनेशिया	0.7	0.2	0.5	-0.2
मलेशिया	-0.4	0.5	1.0	-0.8
फिलीपीन्स	-0.3	-0.1	1.5	-1.3
रूस	-0.1	-0.1	0.0	-2.8

संदर्भ :

1. सेरा, वी और एस.सी.सक्सेना, 2008 "ग्रोथ डाइनैमिक्स : दि मिथ ऑफ इकोनॉमिक रिकवरी"। अमेरिकन इकोनॉमिक रिव्यू, 98 : 439-457।

2. फुरसेरी, डी. और अन्नाबेले मोरोगेन, 2009। ' दि इफेक्ट ऑफ फाइनैंशियल क्राइसिस ऑन पोटेंशियल आउटपुट : न्यू इंपीरियल एविडेंस फ्रॉम ओईसीडी कंट्रीज'। ओईसीडी इकोनॉमिक डिपार्टमेंट वर्किंग पेपर 699।

6.18 चालू दशक के दौरान निर्यात के प्रति सकल मांग की संरचना में बदलाव ने भारतीय अर्थव्यवस्था को वैश्विक गतिविधियों के प्रति अधिक संवेदनशील बना दिया है। पुन:, भारत की द्विपक्षीय समकालिकता के साथ तीन ग्रुपों, यथा, विश्व अर्थव्यवस्था, उन्नत एवं उभरते तथा विकासशील देश, के साथ व्यवसाय-चक्र समकालिकता निर्णायक रूप से भारत के व्यवसाय-चक्र के शेष-विश्व के व्यवसाय-चक्र के साथ सहगमन के सुदृढ़ीकरण को प्रतिबिंबित करती है और, इसीलिए, हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान वियोजन परिकल्पना को युक्तियुक्त नहीं पाया जाता है। पुन:, इस संकट के दौरान भारत सहित अनेक अर्थव्यवस्थाओं ने संभाव्य वृद्धि में नुकसान उठाया। अगले खंड में भारत की अर्थव्यवस्था पर व्यापार सरणी के प्रभाव पर चर्चा की गयी है।

II. व्यापार सरणी के माध्यम से भारत पर प्रभाव

निर्यात के माध्यम से प्रभाव

विश्व आय और निर्यात

6.19 संकट के दौरान अंतरराष्ट्रीय व्यापार का दृष्टिकोण बहुत अधिक प्रभावित हुआ और विश्व-व्यापार का कार्यसंपादन वर्ष 2008 की अंतिम तिमाही से काफी दुर्बल हुआ। विश्व व्यापार में वृद्धि की प्रवृत्ति में संकट के दौरान प्रतिवर्तन हुआ और इसमें तेजी से गिरावट आयी तथा यह वर्ष 2008 की चौथी तिमाही से ऋणात्मक क्षेत्र में चला गया। आरंभिक अवधि में उन्नत अर्थव्यवस्थाओं ने इस तीव्र ह्रास की शुरुआत हुई; तथापि, उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में भी गिरावट की प्रवृत्ति दिखाई पड़ी (सारणी 6.5)।

6.20 उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से बाह्य मांग में संकुचन, जिसका कारण था गिरती आय और बढ़ती अनिश्चितता का उभरते बाजारों और विकासशील देशों में फैल जाना, सहवर्ती रूप से इन देशों के गिरते अंतरराष्ट्रीय व्यापार में स्पष्ट हुआ। मध्य सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स के धराशायी होने के पश्चात् अंतरराष्ट्रीय ऋण बाजार की स्थितियों को कठोर बनाये जाने के बाद भारत के वणिक माल व्यापार पर भी गिरते उपभोग, विशेष रूप से उन्नत देशों में, और व्यापार ऋण में मांग अभावी मंदी का प्रभाव पड़ा। भारत के निर्यात में वृद्धि और बाह्य मांग (विश्व और उन्नत देशों में जीडीपी) के बीच चक्रीय सह-गमन वर्तमान वैश्विक संकट के दौरान काफी अधिक समकालिक थे (चार्ट VI.4)। यह दर्शाता है कि सामान्य समय में विश्व आय के अतिरिक्त अन्य कारक भी निर्यात की वृद्धि को प्रेरित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जबकि विश्व जीडीपी से उद्भूत प्रभाव संकट के दौरान अभिभावी हो जाता है।

6.21 भारत के निर्यात को विश्व-आय के प्रति अधिक लोचदार होने को देखते हुए संकुचित होती विश्व-आय का प्रभाव वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही से वणिक माल निर्यात में समग्र गिरावट में प्रतिबिंबित हुआ। अग्रवाल (1970) द्वारा अनुमानित निर्यात मांग फलन के अनुसार आय एवं कीमत-लोच गुणांक क्रमश: 0.35 और -0.44 थे। आरबीआई द्वारा किये गये एक अन्य अध्ययन (2003)

सारणी 6.5 : विश्व व्यापार कार्यसंपादन

(वार्षिक वृद्धि प्रतिशत)

	ति1 2007	ति2 2007	ति3 2007	ति4 2007	ति1 2008	ति2 2008	Q3 2008	ति4 2008	ति1 2009	ति2 2009
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
निर्यात										
विश्व	13.9	11.6	14.2	18.8	24.8	27.2	23.1	-6.3	-29.3	-30.8
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	13.4	10.9	13.4	16.0	19.7	22.6	16.6	-11.8	-30.2	-31.5
उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ	15.1	12.9	15.6	24.0	34.7	35.9	34.8	3.5	-28.6	-30.0
यूरो क्षेत्र	16.5	12.3	13.6	16.4	18.3	24.1	15.3	-16.5	-31.1	-34.5
अमेरिका	10.8	10.7	12.2	14.2	17.1	19.0	17.1	-4.2	-22.4	-26.9
आयात										
विश्व	14.0	13.1	14.0	19.4	23.3	25.9	23.3	-7.3	-30.6	-33.1
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	11.6	10.1	10.6	16.4	19.5	22.2	19.1	-11.1	-30.7	-34.6
उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ	16.3	14.2	14.6	17.0	18.8	22.7	14.2	-16.0	-29.7	-34.2
यूरो क्षेत्र	20.3	20.3	21.7	26.5	32.3	34.2	32.1	1.0	-30.5	-29.8
अमेरिका	4.1	3.7	3.2	10.3	11.4	14.2	14.3	-9.2	-29.9	-34.7

स्रोत : आईएफएस, नवंबर 2007, आईएमएफ

में यह पाया गया कि विश्व जीडीपी-वृद्धि के संदर्भ में भारत के निर्यात के लिए अल्पावधि एवं दीर्घावधि मांग-लोच क्रमश: 0.8 और 1.5 थी। पुन:, नवीनतम आँकड़ों के साथ विश्व जीडीपी के संदर्भ में भारत की दीर्घावधि निर्यात-मांग लोच का अनुमान 3.7 पर लगाया गया (आरबीआई, 2009)। इससे इस बात की पुष्टि होती है कि उच्च वैश्विक वृद्धि के साथ भारत के निर्यात पर दबाव-कारक काफी बड़ा हो सकता है। विश्व-आय के संदर्भ में निर्यात की उच्च आय-लोच विविध पण्यों में प्रतिबिंबित होती है, जिसमें उनकी लोच में 1980 के दशक की तुलना में सुधार अवधि (1993-2008) के दौरान महत्त्वपूर्ण सुधार दिखाई पड़ता है (सारणी 6.6)।

निर्यात और आर्थिक वृद्धि

6.22 जैसी कि पिछले खंड में चर्चा की गयी, वृद्धि-पथ को आकार देने में देशी मांग की प्रभावी भूमिका होने के बावजूद वृद्धि-प्रक्रिया का अनुकूलन करने में व्यापार की भूमिका कालक्रम में अधिकाधिक महत्त्वपूर्ण होती गयी, जो हाल की अवधि में व्यापार-जीडीपी अनुपात में महत्त्वपूर्ण वृद्धि से भी स्पष्ट है। आर्थिक वृद्धि पर निर्यात के प्रत्यक्ष प्रभाव का निर्धारण व्यापार के खुलापन तथा निर्यात-वृद्धि में तेजी द्वारा किया जा सकता है, और निर्यात वृद्धि का निर्धारण विश्व-आय के संदर्भ में निर्यात-लोच द्वारा किया जा सकता है (बॉक्स VI.2)।

चार्ट VI.4 : निर्यात और बाह्य मांग

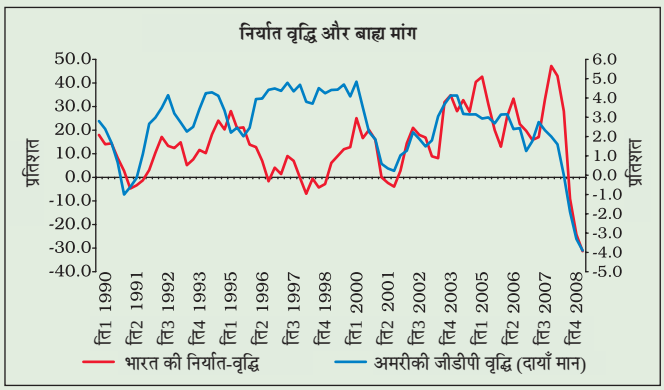

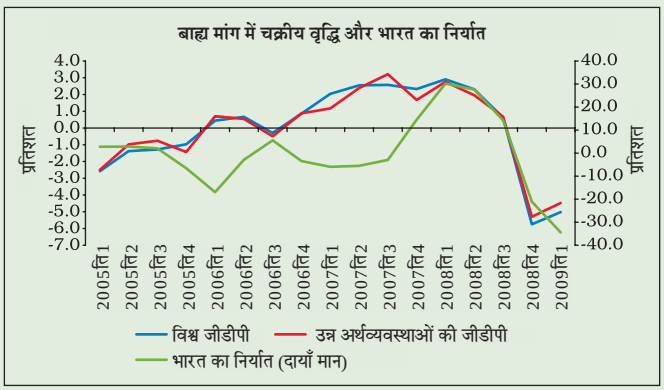

सारणी 6.6 : विश्व आय में भारत के पण्य निर्यात की लोच-अनुक्रिया

पण्य	1980-81 से 2007-08	1993-94 से 2007-08	1980-दशक	पण्य	1980-81-दशक 2007-08	1993-94-दशक 2007-08	1980-दशक
1	2	3	4	1	2	3	4
1. खाद्यान्न	2.7	2.0	0.8	19. टेक्सटाइल यार्न	0.8	1.7	7.2
2. अनाज	3.9	2.6	3.1	20. टेक्सटाइल (सूती से भिन्न)	3.7	1.7	1.4
3. चीनी	0.7	6.7	-10.2	21. टेक्सटाइल सामग्रियाँ	4.2	1.0	0.0
4. कॉफी	1.1	0.3	1.1	22. फर्श आच्छादन	1.8	0.7	2.7
5. मसाले	2.0	2.3	0.0	23. धातु से इतर खनिज	3.4	2.9	3.7
6. तेल-खल्ली	2.6	0.4	2.7	24. लोहा और इस्पात	7.5	3.8	1.2
7. पेय-पदार्थ	1.6	2.0	-2.9	25. अलौह धातुएँ	7.7	7.4	5.6
8. कच्ची सामग्री	4.4	5.5	1.2	26. धातुएँ	4.7	4.0	0.4
9. कपास	2.5	8.4	-3.0	27. मशीनें	5.3	5.2	2.4
10. टेक्सटाइल रेशे	4.2	4.8	5.4	28. गैर-विद्युत मशीनें	5.2	5.6	2.0
11. खनिज (गैर-पीओएल)	3.7	3.6	3.2	29. टेली-उपकरण	6.6	5.5	2.6
12. लौह अयस्क	1.4	2.8	1.6	30. विद्युत मशीनें	5.0	5.9	2.6
13. अयस्क	4.4	6.0	3.1	31. परिवहन उपकरण	5.5	5.8	1.6
14. ईंधन	2.2	7.5	1.5	32. विविध	2.1	2.8	3.0
15. पीओएल	6.1	29.3	9.9	33. परिधान-सहायक वस्तुएँ	2.8	1.3	4.0
16. रसायन	5.3	3.7	3.3	34. पदत्राण	0.9	2.7	7.6
17. विनिर्मित वस्तुएँ	3.3	3.1	1.4	35. विविध	5.3	4.2	2.8
18. चमड़ा	0.8	0.6	2.8	36. सामान्य सूचकांक	3.9	3.7	1.2

6.23 वृद्धि-लेखांकन के ढाँचे के भीतर आर्थिक वृद्धि में निर्यात का योगदान स्वतंत्रता पश्चात् के दो दशकों के दौरान नगण्य था। हालाँकि इसमें कुछ सुधार 1970 के दशक में दिखाई पड़ा था, यह 1980 के दशक के दौरान बना नहीं रह सका। सुधार की अवधि के दौरान

बॉक्स VI.2
निर्यात और देशी वृद्धि संबंध : वृद्धि लेखांकन दृष्टिकोण

आरंभिक साहित्य में मानक वृद्धि लेखांकन दृष्टिकोण पर भरोसा किया जाता था, जो आर्थिक वृद्धि में निर्यात के योगदान को मापने के लिए राष्ट्रीय लेखे पर आधारित होता था। इस दृष्टिकोण के अनुसार, मांग पक्ष की ओर से किसी अर्थव्यवस्था की सकल आय या सकल देशी उत्पाद (Y) में देशी मांग (D) और बाह्य मांग, यथा, निर्यात (E) शामिल होते हैं : $Y_t = D_t + E_t$

इस समीकरण को Y की वृद्धि दर में रूपांतरित किया जा सकता है ,

D, तथा E: $\frac{\Delta Y_t}{Y_{t-1}} = \frac{\Delta D_t}{D_{t-1}} \frac{D_{t-1}}{Y_{t-1}} + \frac{\Delta E_t}{E_{t-1}} \frac{E_{t-1}}{Y_{t-1}}$

अथवा

$$g_y = g_D\, w_D + g_E W_E \qquad (1)$$

इस प्रकार, Y की वृद्धि दर (g_y) का प्राक्कलन देशी और बाह्य मांग घटकों की वृद्धि दरों के भारित औसत, g_D और $g_{E,}$ के रूप में किया जा सकता है। भारांक W_D और W_E पिछले वर्ष में जीडीपी में देशी और बाह्य मांग के हिस्से होते हैं। देशी आर्थिक वृद्धि को वैश्विक आर्थिक गतिविधियों के साथ जोड़ने के लिए मानक निर्यात मांग फलन को लॉग-लाइनर रूप में उपयोग किया जा सकता है।

$$lnE_t = \alpha + \beta\, lnY_t^f + \theta\, lnP_t \qquad (2)$$

जहाँ Y_t^f और P_t विश्व आय और आपेक्षिक कीमतें हैं और पैरामीटर हल और θ क्रमशः विश्व आय और आपेक्षिक मूल्य (देशी मूल्य के सापेक्ष विदेशी मूल्य) के संदर्भ में निर्यात की आय और मूल्य लोच माप होते हैं। यह मानते हुए कि निर्यात का सापेक्ष मूल्य अपरिवर्तित रहता है; निर्यात की वृद्धि दर और विश्व आय के बीच संबंध निर्यात मांग फलन से निम्नलिखित रूप में व्युत्पन्न होता है

$$g_E = \beta\, g_W \qquad (3)$$

अब समीकरण 1 और 3 से हम यह पता लगा सकते हैं कि देशी आर्थिक वृद्धि पर वैश्विक अर्थव्यवस्था का प्रभाव तीन कारकों का गुणनफल हो सकता है : निर्यात लोच, विश्व अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर, और देशी अर्थव्यवस्था में निर्यात का हिस्सा। दूसरे शब्दों में, विश्व आय की प्रत्येक प्रतिशत वृद्धि दर के लिए देशी अर्थव्यवस्था में निर्यात का योगदान विश्व आय के संदर्भ में निर्यात लोच (विदेशियों की ओर से निर्यात मांग के प्रति झुकाव) और देशी अर्थव्यवस्था में निर्यात के हिस्से (व्यापार के खुलापन का संकेतक) का गुणनफल होगा।

सारणी 6.7 : आर्थिक वृद्धि में उपभोग, निवेश और निर्यात का योगदान

(प्रतिशत अंक)

अवधि	जीडीपी	निजी उपभोग	सरकारी उपभोग	निवेश	निर्यात
1	2	3	4	5	6
1950-दशक	3.9	3.2	0.2	0.8	0.0
1960-दशक	4.1	2.6	0.6	1.1	0.1
1970-दशक	2.9	2.1	0.5	0.9	0.5
1980-दशक	5.7	3.5	0.8	1.2	0.3
1990-दशक	5.6	3.2	0.7	1.7	1.0
2000-दशक	7.2	3.5	0.4	3.5	2.4
2003-08	9.0	4.0	0.5	5.1	2.7
2008-09	6.7	4.9	1.7	-1.5	4.2
2009-10	7.4	2.4	0.9	2.1	-3.9

टिप्पणी : स्थिर बाजार कीमत पर जीडीपी की वृद्धि दर और इसके घटकों की वृद्धि के जोड़, उपभोग, सरकारी व्यय, निवेश एवं निर्यात के बीच अंतर का हिसाब आयात विस्तार (संकुचन) द्वारा किया जाता है ।

स्रोत : केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन, भारत सरकार

आर्थिक वृद्धि में निर्यात का योगदान 1990 के दशक में बढ़ा और 2000 के दशक में यह दुगुने से भी अधिक हो गया (सारणी 6.7)।

6.24 निर्यात और वृद्धि के बीच संबंध का और अधिक अन्वेषण करने के लिए जीडीपी वृद्धि और निर्यात वृद्धि तथा व्यापार घाटा-जीडीपी अनुपात के बीच ग्रैंजर कार्य-कारण विश्लेषण किया गया, जो 1950-2008 की अवधि के वार्षिक आँकड़ों पर आधारित था। ग्रैंजर कारणत्व परिणामों[5] ने दो अंतर्दृष्ठियाँ दीं : पहला, निर्यात और जीडीपी वृद्धि दर के बीच कार्य-कारण संबंध की दिशा पहले से दूसरे की ओर थी, न कि दूसरे से पहले की ओर और, दूसरा, व्यापार घाटा अनुपात और आर्थिक वृद्धि के बीच कार्य-कारण संबंध की दिशा दूसरे से पहले वाले की ओर थी, जिसका कारण देशी आर्थिक कार्यकलाप द्वारा प्रेरित आयात-मांग की भूमिका को माना जा सकता है। पिछले कुछ वर्षों के दौरान प्रौद्योगिकी प्रधान पण्यों के प्रति निर्यात समूह में संरचनात्मक बदलाव, जो भारतीय अर्थव्यवस्था में निर्यात की प्रधानता से प्रेरित था, वृद्धि में उनके बढ़े हुए योगदान में प्रतिबिंबित होता है।

निर्यात और उपभोग

6.25 सकल मांग में निर्यात के प्रत्यक्ष योगदान ने महत्त्वपूर्ण रूप ग्रहण कर लिया और संचरण की व्यापार सरणी का महत्त्वपूर्ण वाहक बन गया है। अनेक देशी और बाह्य गतिविधियों ने, जो वैश्विक संकट के बाद हुईं, निजी उपभोग-वृद्धि में नरमी में योगदान किया (सारणी 6.8)। सकल मांग और वृद्धि पर निर्यात के प्रत्यक्ष प्रभाव के अतिरिक्त निर्यात अप्रत्यक्ष रूप से उपभोग एवं निवेश के माध्यम से वृद्धि को प्रभावित कर सकते हैं। भारत में, निर्यात और निजी उपभोग मांग हाल की अवधि के दौरान निकट संबंध का प्रदर्शन करते प्रतीत हुए हैं।

6.26 ऐसी अनेक अप्रत्यक्ष सरणियाँ हो सकती हैं, जिनके माध्यम से निर्यात मांग उपभोग को प्रभावित कर सकती है। पहला, विनिर्माण

सारणी 6.8 : भारत में निजी उपभोग के कुछ निर्धारक तत्व

(प्रतिशत)

संकेतक	2005-06	2006-07	2007-08	2008-09
1	2	3	4	5
(i) निजी उपभोग	9.0	8.2	9.8	6.8
(ii) कृषि जीडीपी	5.2	3.7	4.7	1.6
(iii) परिवारों को ऋण	52.1	-3.6	-2.1	-4.3
(iv) वैयक्तिक ऋण	40.5	26.8	12.1	10.8
आवास	38.3	24.7	11.6	7.4
क्रेडिट कार्ड	41.3	47.7	44.2	6.1
उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुएँ	-20.9	29.3	-4.2	-7.0
(v) सीपीआई मुद्रास्फीति (आइडब्लू)	4.4	6.7	6.2	9.1
(vi) सीपीआई मुद्रास्फीति (आइएल)	3.9	7.8	7.5	10.2
(vii) स्टॉक प्रतिलाभ	44.2	48.3	35.0	-25.4
(viii) धन-प्रेषण अंतर्वाह ($)	18.4	23.6	41.1	6.6
(ix) यात्रा उपार्जन ($)	17.8	16.2	24.4	-4.0
(x) विश्व पण्य-कीमतें				
सभी पण्य	24.3	15.8	21.6	3.8
खाद्यान्न	1.1	12.7	21.8	6.4
दुबई तेल कीमतें	46.6	14.0	27.0	6.2

[5] **निर्यात और वृद्धि : कार्य-कारण संबंध**

कार्य-कारण संबंध :नल्ल हाइपोथेसिस	**एफ-स्टैटिस्टिक्स**	**परिणाम**
निर्यात वृद्धि जीडीपी वृद्धि का कारण नहीं थी	4.90 (0.01)	अस्वीकार करें
जीडीपी वृद्धि निर्यात वृद्धि का कारण नहीं थी	1.21 (0.31)	स्वीकार करें
व्यापार घाटा जीडीपी वृद्धि का कारण नहीं था	0.02 (0.98)	स्वीकार करें
जीडीपी वृद्धि व्यापार घाटा का कारण नहीं थी	4.19 (0.02)	अस्वीकार करें

क्षेत्र कालक्रम में निर्यात-प्रधान हो गया है। विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात का भारत के विनिर्माण जीडीपी में हिस्सा, जो वर्ष 1990-91 में 27.1 प्रतिशत था, वह वर्ष 2000-01 में बढ़ कर 52.2 प्रतिशत और पुन: वर्ष 2008-09 में बढ़ कर 72.3 प्रतिशत हो गया है। विनिर्माण क्षेत्र की इस महत्त्वपूर्ण निर्यात-उन्मुखता ने इस क्षेत्र को बाह्य मांग आघातों के प्रति असुरक्षित भी बना दिया है। इसके अतिरिक्त, विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात के एक बड़े हिस्से (42 प्रतिशत) के लिए चमड़ा और चमड़े से निर्मित वस्तुएँ, कपड़ा और कपड़े से निर्मित वस्तुएँ, रत्न और आभूषण तथा हस्तशिल्प जिम्मेदार हैं, जो रोजगार-प्रधान होते हैं, और इन क्षेत्रों में निर्यात के एक बड़े हिस्से में लघु उद्योगों (एसएसआइ) का योगदान है। इस प्रकार, बाह्य मांग आघात का बहुत अधिक प्रभाव ऐसे उद्योगों में उत्पादन और रोजगार पर पड़ता है, जिसका सीधा संबंध देशी उपभोग मांग से होता है। इसके अतिरिक्त, ऐसे अनेक एसएसआइ हैं, जो विनिर्माण फर्मों की आपूर्ति शृंखला पर आश्रित हैं और ये भी बाह्य मांग आघात से अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होते हैं।

निर्यात पर प्रभाव : प्रवृत्ति, संरचना और दिशा

6.27 संक्रामक की व्यापार सरणी, जिसने संकट के सितंबर 2008 पश्चात् के चरण में तेजी दिखाई थी, ने भारत के वणिक माल व्यापार पर प्रतिकूल प्रभाव डाला, जिसमें 2000 के दशक के आरंभ की मंदी की तुलना में विकसित देशों की भीषण मंदी के आगे-पीछे के क्रम में निर्यात में अधिक तेजी से गिरावट आयी (सारणी 6.9)।

6.28 भारत के पण्य निर्यात की संरचना में बदलाव के विश्लेषण से कुछ दिलचस्प तथ्यों का पता चलता है। सुधारों के पूर्व भारत का निर्यात प्राथमिक कृषि वस्तुओं, यथा, कपड़े, रत्न और आभूषण, के निर्यात से प्रेरित होता था, जबकि वैश्विक स्तर पर पण्य संरचना प्रौद्योगिकी प्रधान विनिर्मित वस्तुओं, यथा, इंजीनियरी सामान और रसायनों की ओर उन्मुख हो रही थी। इस प्रकार, 1980 के दशक में वृद्धि में गति होने के बावजूद विश्व-निर्यात में भारत के हिस्से में लगभग 0.5 प्रतिशत गिरावट आयी।

6.29 सुधार और अनुकूल व्यापार नीति भारत के पण्य निर्यात की संरचना में बदलाव ले आयी। प्रौद्योगिकी-प्रधान निर्यात, जिनमें फार्मास्युटिकल्स सहित इंजीनियरी सामान, यथा, धातु, मशीनें एवं परिवहन उपकरण और रसायन समाविष्ट हैं, भारत के लिए अग्रणी निर्यात क्षेत्र के रूप में उभर कर आया, जो भारत की जीडीपी वृद्धि में निर्यात की बढ़ती प्रधानता की ओर इंगित करता है (सारणी 6.10)। प्रौद्योगिकी-प्रधान निर्यात की ओर उन्मुख होने के अतिरिक्त पेट्रोलियम

सारणी 6.9 : भारत का व्यापार कार्यसंपादन

अवधि	निर्यात वृद्धि (%)			आयात वृद्धि (%)		
	2007-08	2008-09	2009-10	2007-08	2008-09	2009-10
1	2	3	4	5	6	7
अप्रैल	31.3	63.0	-32.8	42.1	65.0	-37.2
मई	23.2	50.0	-36.2	40.0	39.2	-32.7
जून	16.1	58.5	-29.8	39.0	44.6	-21.8
जुलाई	18.0	52.1	-25.5	41.0	49.7	-33.2
अगस्त	17.4	40.5	-24.1	32.9	64.6	-35.9
सितंबर	16.4	26.1	-8.4	5.0	70.9	-34.0
अक्तूबर	47.8	-3.7	2.7	24.7	18.5	-2.7
नवंबर	29.4	-13.5	29.6	34.9	6.3	2.7
दिसंबर	35.0	-8.6	19.9	28.3	-3.3	32.2
जनवरी	35.8	-13.6	18.7	58.1	-20.2	34.8
फरवरी	43.1	-21.0	31.8	43.6	-27.6	67.3
मार्च	34.1	-25.1	54.1	37.6	-29.6	67.1
पहली छमाही	**20.4**	**48.4**	**-26.1**	**33.3**	**55.7**	**-32.5**
दूसरी छमाही	**37.5**	**-14.3**	**26.1**	**37.9**	**-9.3**	**33.6**
वार्षिक (अप्रै-मार्च)	**28.9**	**13.7**	**-4.7**	**35.4**	**20.8**	**-8.2**

स्रोत : वाणिज्यिक आसूचना और अंक संकलन महानिदेशालय (डीजीसीआइएंडएस)

सारणी 6.10 : भारत के पण्य निर्यात की संरचना

(प्रतिशत हिस्सा)

	1987-91	1992-96	1997-2003	2004-08	2007-08	2008-09
1	2	3	4	5	6	7
1. प्राथमिक उत्पाद	24.1	21.8	19.1	16.0	16.9	13.7
(i) कृषि एवं संबद्ध उत्पाद	18.5	17.6	16.1	10.6	11.3	9.5
(ii) अयस्क एवं खनिज	2.1	2.0	1.8	3.5	5.6	4.2
2. विनिर्मित वस्तुएँ	71.0	75.3	76.7	69.9	63.2	66.5
(i) चमड़ा और विनिर्मित वस्तुएँ	7.6	6.3	4.4	2.7	2.2	1.9
(ii) रसायन और संबंधित उत्पाद	8.3	10.7	12.9	14.1	13.0	12.3
(iii) इंजीनियरी वस्तुएँ	11.4	13.4	15.1	21.5	22.9	25.5
धातु की विनिर्मित वस्तुएँ	*2.3*	*2.8*	*3.3*	*4.1*	*4.3*	*4.1*
मशीनरी उपकरण	*3.6*	*2.9*	*3.5*	*4.9*	*5.6*	*5.9*
परिवहन उपकरण	*1.9*	*2.8*	*2.4*	*3.8*	*4.3*	*6.0*
लोहा एवं इस्पात	*0.5*	*1.9*	*2.4*	*3.9*	*3.3*	*3.2*
इलेक्ट्रॉनिक वस्तुएँ	*1.5*	*1.5*	*2.2*	*2.3*	*2.1*	*3.7*
(iv) टेक्सटाइल और टेक्सटाइल उत्पाद	23.3	26.0	25.1	15.6	11.9	11.8
(v) रत्न एवं आभूषण	18.4	16.7	16.9	14.6	12.1	15.1
(vi) हस्तशिल्प	1.4	1.4	1.6	0.5	0.3	0.2
3. पेट्रोलियम उत्पाद	3.0	1.9	2.4	11.5	17.4	14.5
4. अन्य	1.9	1.0	1.8	2.6	2.5	5.4
कुल निर्यात	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**

स्रोत : वाणिज्यिक आसूचना और अंक संकलन महानिदेशालय (डीजीसीआइएंडएस)

उत्पादों का निर्यात (जिसने शानदार वृद्धि दर्शायी) कुल निर्यात में प्रमुख योगदान करने वाले के रूप में उभरा, जो दुनिया में भारत के छठे सबसे बड़े रिफाइनरी बनने के प्रभाव को प्रतिबिंबित करता है।

6.30 तथापि, वर्ष 2008-09 के दौरान विनिर्मित वस्तुओं के मामले में गिरावट मामूली थी। इसके परिणामस्वरूप, कुल निर्यात में तेल से इतर निर्यात और विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात का हिस्सा पिछले वर्ष की तुलना में वर्ष 2008-09 में लगभग 8 प्रतिशत अंक बढ़ा। सारांशत:, इसका तात्पर्य बढ़ी हुई दक्षता और उत्पादकता के चलते विनिर्मित क्षेत्र में लागत प्रतिस्पर्धात्मकता का होना है। अधिक भिन्न-भिन्न स्तरों पर, प्रमुख पण्य, जिनमें वर्ष 2008-09 के दौरान निर्यात में गिरावट दिखाई पड़ी, थे हस्तशिल्प, पेट्रोलियम उत्पाद, अयस्क और खनिज, तथा कृषि और संबद्ध उत्पाद। तथापि, वैश्विक संकट का अधिक स्पष्ट प्रभाव वर्ष 2008-09 (अप्रैल-जून) के दौरान भारत के निर्यात पर पड़ा। सभी क्षेत्रो में, जिनमें इंजीनियरी, रसायन, रत्न और आभूषण तथा पेट्रोलियम निर्यात शामिल हैं, निर्यात वृद्धि में गिरावट देखी गयी (सारणी 6.11)।

6.31 भारत के निर्यात की क्षेत्रीय दिशा में भी वर्ष 2000 और 2008 के बीच महत्त्वपूर्ण परिवर्तन दिखाई पड़े हैं। पहला, परंपरागत बाजारों, यथा, ईयू और उत्तरी अमेरिका, में भारत के निर्यात का हिस्सा महत्त्वपूर्ण रूप से कम हुआ। दूसरा, लैटिन अमेरिका, आशियान, पश्चिम एशिया, उत्तरी अफ्रीका और दक्षिण एशिया के पक्ष में एक संरचनात्मक बदलाव दिखाई दिया। वृद्धि के संदर्भ में, विकासशील देशों को भारत का निर्यात, जो वर्ष 2007-08 में 33.6 प्रतिशत था, वह वर्ष 2008-09 के दौरान सबसे बड़ी गिरावट के साथ (-0.5)प्रतिशत हो जाने के लिए जिम्मेवार था, जिसका मुख्य प्रेरक बिन्दु था चीन को किये गये निर्यात में तेजी से कमी आना। भारत के निर्यात में वृद्धि में दूसरी सबसे बड़ी गिरावट वर्ष 2008-09 के दौरान ओईसीडी देशों को किये गये निर्यात में देखी गयी। वर्ष 2008-09 के दौरान ओईसीडी देशों को किये गये निर्यात में गिरावट की अगुआई अमेरिका द्वारा की गयी; फिर भी, अमेरिका भारत के निर्यात में अकेले ही सबसे बड़ा योगदान करने वाला बना रहा (सारणी 6.12)। उपर्युक्त

सारणी 6.11 : वैश्विक संकट और भारत का निर्यात

पण्य	राशि (बिलियन अमरीकी डालर)			वृद्धि (%)			
	2006-07	2007-08	2008-09	2007-08	2008-09	अप्रैल-अक्तूबर	
						2009-10	2008-09
1	2	3	4	5	6	7	
1. प्राथमिक उत्पाद	**19.7**	**27.6**	**25.3**	**40.0**	**-8.0**	**-22.7**	**28.5**
(i) कृषि एवं संबद्ध उत्पाद	12.7	18.4	17.5	45.3	-4.9	-25.5	36.8
(ii) अयस्क एवं खनिज	7.0	9.1	7.8	30.2	-14.5	-16.1	12.0
2. विनिर्मित वस्तुएँ	**84.9**	**103.0**	**122.8**	**21.3**	**19.6**	**-20.9**	**39.3**
(i) चमड़ा और विनिर्मित वस्तुएँ	3.0	3.5	3.6	16.1	1.5	-18.2	13.6
(ii) रसायन और संबंधित उत्पाद	17.3	21.2	22.6	22.3	7.1	-15.8	26.6
(iii) इंजीनियरी वस्तुएँ	29.6	37.4	47.3	26.4	26.5	-28.7	51.2
धातु की विनिर्मित वस्तुएँ	5.1	7.1	7.6	38.8	7.0	-33.7	25.3
मशीनरी उपकरण	6.7	9.1	11.0	35.8	19.9	-20.0	37.1
परिवहन उपकरण	4.9	7.0	11.1	41.9	58.8	-12.2	80.9
लोहा एवं इस्पात	5.2	5.4	5.8	4.0	6.9	-60.4	46.6
इलेक्ट्रॉनिक वस्तुएँ	2.9	3.4	6.8	17.8	102.5	-15.1	134.6
(iv) टेक्सटाइल	17.4	19.4	20.0	11.8	3.0	-10.5	10.3
(v) रत्न एवं आभूषण	16.0	19.7	27.7	23.2	42.1	-19.8	67.0
(vi) हस्तशिल्प	0.4	0.5	0.3	16.0	-40.8	-38.2	-48.3
3. पेट्रोलियम उत्पाद	**18.6**	**28.4**	**26.8**	**52.2**	**-5.4**	**-35.8**	**-48.3**
4. अन्य	**3.2**	**4.0**	**7.7**	**26.4**	**148.9**	**-13.2**	**98.3**
कुल निर्यात	**126.4**	**162.9**	**182.6**	**28.9**	**13.7**	**-23.3**	**39.4**

स्रोत: वाणिज्यिक आसूचना और अंक संकलन महानिदेशालय (डीजीसीआइएंडएस)

क्षेत्रों के साथ भारत के निर्यात का बढ़ता हिस्सा उन कारकों, यथा, दूरी और अर्थव्यवस्थाओं के आकार, के चलते हुआ, जिनका वर्णन अंतरराष्ट्रीय व्यापार के ग्रैविटी मॉडल में किया गया है। अंतरराष्ट्रीय व्यापार के ग्रैविटी मॉडल का अधिकाधिक उपयोग व्यापारिक भागीदारों के बीच व्यापार के प्रत्याशित परिमाण और उनके वास्तविक व्यापार में अपसरण को मापने के लिए किया जाता है (बॉक्स VI.3)।

सारणी 6.12 : भारत के निर्यात का भौगोलिक विविधीकरण

(प्रतिशत हिस्सा)

क्षेत्र/देश	1987-90	1990-95	1995-00	2000-05	2005-08	2007-08	2008-09
1	2	3	4	5	6	7	8
1. उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	**57.7**	**58.1**	**56.4**	**48.4**	**40.8**	**39.5**	**37.4**
(i) ईयू	24.8	27.1	26.4	22.1	21.4	21.2	21.0
यूके	6.0	6.4	5.9	4.8	4.3	4.1	3.6
जर्मनी	6.4	7.2	5.5	3.9	3.3	3.1	3.5
अन्य ईयू	12.4	13.5	14.9	13.3	13.8	13.9	14.2
(ii) यूएस	17.7	17.4	20.2	19.1	14.0	12.7	11.3
(iii) अन्य ओइसीडी	15.1	13.5	9.9	7.3	5.5	5.6	4.7
2. ओपेक	**6.2**	**8.8**	**10.1**	**13.3**	**17.3**	**16.6**	**21.2**
(i) सऊदी अरब	1.6	1.9	1.9	1.8	2.2	2.3	2.7
(ii) यूएई	2.2	4.2	5.0	6.9	10.1	9.6	13.1
(iii) अन्य ओपेक	2.4	2.7	3.2	4.6	5.0	4.7	5.4
3. पूर्वी यूरोप	**17.5**	**8.3**	**3.6**	**2.6**	**1.3**	**1.1**	**1.1**
4. विकासशील देश	**15.5**	**22.5**	**28.9**	**33.5**	**39.6**	**42.5**	**37.6**
(i) एशिया	13.0	18.7	22.6	26.3	29.9	31.6	28.1
चीन	0.3	0.7	1.5	3.8	6.2	6.6	5.1
हांगकांग	3.4	4.4	5.9	5.2	3.9	3.9	3.6
अन्य एशियाई देश	9.4	13.6	15.2	17.3	19.8	21.1	19.4
(ii) अफ्रीका	2.0	2.8	4.6	4.9	6.6	7.5	6.3
(iii) लैटिन अमेरिका	0.5	1.0	1.7	2.3	3.2	3.4	3.1
5. अन्य	**3.1**	**2.3**	**0.9**	**2.2**	**0.9**	**0.4**	**2.7**
कुल	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**

स्रोत : वाणिज्यिक आसूचना और अंक संकलन महानिदेशालय (डीजीसीआइएंडएस)

बॉक्स VI.3
विदेश व्यापार का ग्रैविटी मॉडल

इस मॉडल में, जिसे न्यूटन के भौतिकी के सिद्धांत से लिया गया है, एकल समीकरण शामिल होता है, जिसमें यह मान लिया जाता है कि दो देशों के बीच व्यापार का परिमाण सकारात्मक रूप से दो व्यापारिक अर्थव्यवस्थाओं के संयुक्त आकार पर निर्भर करता है, और इसका नकारात्मक संबंध दोनों के बीच की दूरी से होता है। कालक्रम में, व्यापार के ग्रैविटी मॉडल को विस्तारित करके उसमें अनेक अन्य कारकों को सम्मिलित किया गया है। इस दृष्टिकोण का फायदा यह होता है कि इसमें किसी देश की नीति और संस्थागत वातावरण, जिसमें अनेक कृत्रिम अड़चनें शामिल हैं, न कि केवल व्यापारिक नीति, के समग्र प्रभाव का प्रग्रहण किया जाता है। किसी देश को 'अंडर-ट्रेड' करता पाया जाता है, यदि व्यापारिक भागीदारों के बीच इसका वास्तविक व्यापार, औसतन, बिना किसी स्पष्ट वैरिएबल के ग्रैविटी मॉडल द्वारा पूर्वानुमेय स्तर से कम हो (आईएमएफ, 2002; रोसे 2002)। ग्रैविटी मॉडल के अनुसार विकासशील देशों के व्यापार पैटर्न का विश्लेषण करने से निम्नलिखित का पता चलता है : (i) भुगतान संतुलन और व्यापार प्रतिबंध विकासशील देशों के लिए महत्त्वपूर्ण कारण बने रहते हैं, जिनके चलते वे औद्योगिक देशों की तुलना में कम व्यापार करते हैं; और (ii) अंतरराष्ट्रीय उदग्र विशेषज्ञता, जिसने पूर्वी एशिया में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी थी, उन विकासशील देशों के लिए, जिनके पास खुली व्यापार प्रणाली, प्रचुर श्रमिक और नमनीय अर्थव्यवस्था होती है, अधिक महत्त्वपूर्ण हो सकती है। सभी देशों में व्यापार एवं भुगतान संतुलन नीतियों, दोनों में पूर्ण उदारीकरण होने से औद्योगिक देशों (उत्तर उत्तर व्यापार) के बीच व्यापार लगभग 40 प्रतिशत, उत्तर-दक्षिण व्यापार लगभग 63 प्रतिशत और विकासशील देशों (दक्षिण-दक्षिण व्यापार) के बीच व्यापार लगभग 94 प्रतिशत तक बढ़ जायेगा (आईएमएफ, 2002)।

6.32 यह मूल्यांकन करने के लिए कि किस प्रकार विकसित देशों की तुलना में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को भारत के निर्यात की दिशा का निर्धारण आपेक्षिक मूल्य प्रतिस्पर्धात्मकता प्रभाव और वास्तविक मांग स्थिति द्वारा किया गया, एक अनुभवमूलक विश्लेषण किया जाता है। आपेक्षिक मूल्य के संबंध में भारत के निर्यात की दिशा की दीर्घावधि लोच सांख्यिकीय रूप से महत्त्वपूर्ण और 1.88 पर धनात्मक थी, जो आपेक्षिक मांग-स्थिति के संबंध में लगभग एकात्मक लोच गुणांक से अधिक थी[6]। तथापि, मॉडल में वर्ष 1991-92 से महत्त्वपूर्ण संरचनात्मक बदलाव ने आपेक्षिक मूल्य प्रभाव को संयत करने और आपेक्षिक वास्तविक मांग प्रभाव को सुधारने की अगुआई की। मूल्य लोच गुणांक घट कर 0.49 हो गया, जबकि वास्तविक मांग प्रभाव में सुधार होकर वह 1.44 प्रतिशत हो गया (सारणी 6.13)। अक्तूबर 2008 से भारत के निर्यात में संकुचन मुख्यत: वास्तविक मांग प्रभाव से अनुकूलित था, जो वर्तमान वैश्विक संकट के दौरान उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में वास्तविक कार्यकलापों में तीव्र गिरावट से उद्भूत हुआ था।

पण्यवार और फर्मवार प्रमुख निर्यात

6.33 सुधार-पश्चात् अवधि के दौरान इंजीनियरी सामान के निर्यात ने भारत के वणिक माल निर्यात में महत्त्वपूर्ण अनुपात ग्रहण कर लिया है (बॉक्स VI.4)। वैश्विक संकट के दौरान इंजीनियरी और रासायनिक वस्तुओं के निर्यात की महत्त्वपूर्ण भूमिका स्पष्ट दिखाई दी। इंजीनियरी सामान के निर्यात ने वर्ष 2008-09 के दौरान अपनी वृद्धि की गति बनाये रखी, जिसके साथ परिवहन उपकरण के निर्यात में वृद्धि महत्त्वपूर्ण

सारणी 6.13 : भारत के निर्यात की व्यापक दिशा पर आपेक्षिक कीमत एवं वास्तविक मांग का प्रभाव
(दीर्घावधि सह-एकीकरण गुणांक)

आश्रित वैरिएबल्स : निर्यात की दिशा	व्याख्यात्मक वैरिएबल्स			
	इंटरसेप्ट	आपेक्षिक कीमत	वास्तविक मांग	संरचनात्मक बदलाव
1	2	3	4	5
1. x_{em}/x_{ac}	0.66	1.88 (7.25)	1.01 (6.45)	
2. x_{em}/x_{ac}	1.18	0.49 (1.02)	1.44 (6.95)	0.05 (2.07)
3. x_{em}/x_{w}	0.42	2.17 (12.28)	1.00 (7.82)	
4. x_{em}/x_{w}	0.81	1.66 (7.25)	1.26 (6.82)	0.03 (1.73)
5. x_{ac}/x_{w}	-0.38	10.83 (8.00)	0.47 (1.36)	
6. x_{ac}/x_{w}	0.016	3.26 (1.97)	1.87 (5.37)	0.03 (2.83)

X_{em} : उभरती एवं विकासशील अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) को भारत का निर्यात, अमरीकी डालर में।
X_{ac} : उन्नत अर्थव्यवस्थाओं को भारत का निर्यात, अमरीकी डालर में।
X_{w} : विश्व को भारत का कुल निर्यात, अमरीकी डालर में।
Pem : ईएमई का आयात मूल्य सूचकांक (इकाई मूल्य) ।
Pac : उन्नत अर्थव्यवस्थाओं आयात मूल्य सूचकांक (इकाई मूल्य)।
P_{w} : विश्व का आयात मूल्य सूचकांक (इकाई मूल्य)।
Q_{em} : ईएमई की वास्तविक मांग स्थिति, अर्थात्, ईएमई का कुल आयात, जिसे अमरीकी डालर में मापे गये उनके आयात मूल्य सूचकांक द्वारा कम किया गया।
Q_{ac} : उन्नत देशों की वास्तविक मांग-स्थिति, अर्थात्, उनका कुल आयात, जिसे अमरीकी डालर में मापे गये उनके आयात मूल्य सूचकांक द्वारा कम किया गया।
Q_{w} : विश्व की वास्तविक मांग-स्थिति, अर्थात्, उनका कुल आयात, जिसे अमरीकी डालर में मापे गये उनके आयात मूल्य सूचकांक द्वारा कम किया गया ।
आपेक्षिक मूल्य : P_{em}/P_{ac} समीकरण 1 और 2 में प्रयुक्त, P_{em}/P_{w} समीकरण 3 और 4 में प्रयुक्त, P_{ac}/P_{w} समीकरण 5 और 6 में प्रयुक्त।
आपेक्षिक मांग : Q_{em}/Q_{ac} समीकरण 1 और 2 में प्रयुक्त, Q_{em}/Q_{w} समीकरण 3 और 4 में प्रयुक्त, Q_{ac}/Q_{w} समीकरण 5 और 6 में प्रयुक्त।
कोष्ठक में दिये गये आँकड़े टी-स्टैटिस्टिक्स हैं।

[6] अनुमान सह-एकीकरण मॉडल पर आधारित है, जिसमें अप्रैल 1980 से जुलाई 2009 तक की अवधि के लिए इन वैरिएबलों का नैसर्गिक लोगैरिद्म शामिल है।

बॉक्स VI.4
भारत के इंजीनियरी सामान का निर्यात

सुधार की अवधि के दौरान भारत के वणिक माल निर्यात में पण्य संरचना के संदर्भ में उल्लेखनीय बदलाव दिखाई दिया, जिसकी अगुआई इंजीनियरी सामान ने की। ऐसे वातावरण में, जहाँ अर्थव्यवस्था में बढ़ता खुलापन है और 1990 के दशक के प्रारंभ से समर्थक नीतिगत ढाँचा बना हुआ है, इंजीनियरी सामान का निर्यात वर्ष 1987-88 में 1.2 बिलियन अमरीकी डालर (कुल वणिक माल निर्यात का 9.5 प्रतिशत) से बढ़ कर वर्ष 2008-09 में 47.3 बिलियन अमरीकी डालर (कुल वणिक माल निर्यात का 25.5 प्रतिशत) हो गया। वर्ष 2001-02 से 2008-09 तक की अवधि के दौरान 27.7 प्रतिशत की अभिप्रेत वृद्धि दर पर इंजीनियरी सामान के निर्यात में तेज वृद्धि का कारण बढ़ती प्रतिस्पर्धात्मकता और भारत के विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात में बढ़ते प्रौद्योगिकी परिष्करण को माना जा सकता है। वर्ष 2004-05 में इंजीनियरी सामान विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात की सबसे बड़ी मद के रूप में उभर कर सामने आया, जिसने कपड़ों तथा रत्न एवं आभूषणों को पीछे छोड़ दिया। इंजीनियरी सामान के भीतर परिवहन उपकरण निर्यात वृद्धि के प्रमुख चालक बन कर उभरे, जिसका कारण भारत के ऑटोमोटिव उद्योग के बढ़ते वैश्विक प्रतिस्पर्धी फायदे को माना जा सकता है। ऑटोमोबाइल कंपोनेंट्स मैन्युफैक्चरिडग एसोसिएशन ऑफ इंडिया (एसीएमए) के अनुसार भारतीय ऑटो कंपोनेंट उद्योग का विशेष लक्षण यह है कि यह दुनिया में तिपहिया वाहनों का सबसे बड़ा बाजार है, दुपहिया वाहनों का दूसरा सबसे बड़ा बाजार, चौथा सबसे बड़ा ट्रैक्टर बाजार और पाँचवाँ सबसे बड़ा वाणिज्यिक वाहन बाजार है तथा एशिया का चौथा सबसे बड़ा यात्री वाहन बाजार है। 1990 के दशक के मध्य से भारत के ऑटोमोटिव उद्योग ने न्यून परिमाण और विखंडित क्षेत्र से एक अत्यधिक प्रतिस्पर्धी क्षेत्र में द्रुत रूपांतरण देखा है, जिसकी विशेषता यह है कि इसमें विश्व-श्रेणी की प्रौद्योगिकी, बड़े और आश्वस्त कार्य-परिणाम तथा वैश्विक वाहन विनिर्माताओं से मांग की अनुक्रिया में सटीक समय-सारणी है। अनेक भारतीय कंपनियों ने ऑटोमोटिव कंपोनेंट्स के विश्व-नेताओं के साथ प्रौद्योगिकी सहयोग और इक्विटी भागीदारी के क्षेत्र में प्रवेश किया है। कुछ वैश्विक वाहन निर्माताओं ने भारत में न्यून श्रमिक लागत और उच्च कुशलताप्राप्त कार्यबल की उपलब्धता को ध्यान में रख कर कंपोनेंट्स विनिर्माण सुविधाओं के लिए अनुषंगी इकाइयाँ स्थापित की हैं। इसके अतिरिक्त, भारत का ऑटोमोटिव कंपोनेंट्स उद्योग अत्यधिक विविधीकृत है, जिसकी क्षमता भिन्न-भिन्न प्रकार के 150 उत्पादों को तैयार करने की है। हाल में इंजीनियरी सामान के निर्यात में उछाल होने पर भी पूर्वी एशिया और लैटिन अमेरिका की उभरती अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में भारत के निर्यात की प्रौद्योगिकी प्रबलता में पर्याप्त वृद्धि कर पाने की संभावना है। ऑटोमोटिव उद्योग की वैश्विक स्थिति के संदर्भ में वैश्विक ऑटोमोटिव बाजार में भारत के निर्यात का हिस्सा कम है (सारणी)। वर्ष 2001-07 के दौरान भारत से मशीनों और परिवहन उपकरणों के निर्यात में 33.0 प्रतिशत की अभिप्रेत वृद्धि दर दर्ज की गयी, जबकि तुलनात्मक रूप से इस क्षेत्र की वैश्विक अभिप्रेत वृद्धि दर इस अवधि में 12.1 प्रतिशत पर थी। इस प्रकार, विश्व-स्तर पर भारत का मशीनरी तथा परिवहन उपकरणों और ऑटोमोटिव कंपोनेंट्स का निर्यात, जो वर्ष 2000 में 0.10 प्रतिशत था, वह वर्ष 2007 तक बढ़ कर 0.33 प्रतिशत हो गया। एसीएमए के अनुसार, ऑटोमोटिव कंपोनेंट्स उद्योग को गुणवत्ता में सुधार के लिए तथा विश्व-बाजार में अपनी प्रतिस्पर्धी स्थिति बनाये रखने के लिए अधिक उपाय करने होंगे।

सारणी : उभरती अर्थव्यवस्थाओं का ऑटोमोटिव उत्पादों का निर्यात

(बिलियन अमरीकी डालर)

देश	मशीनरी	ऑटोमोबाइल
विश्व	5,348	1,234
ब्राजील	42	15
चीन	674	29
भारत*	25	5
कोरिया	234	49
मेक्सिको	154	46
रूस	17	4
दक्षिण अफ्रीका	16	8
थाईलैंड	74	16
तुर्की	39	18

स्रोत : विश्व व्यापार संगठन

रूप से तेज हुई। रसायनों के निर्यात में भी समुत्थान वर्ष 2008-09 के दौरान बना रहा, अलबत्ता, इसकी वृद्धि थोड़ी संयत रही। इन दो क्षेत्रों में वर्ष 2008-09 में निर्यात का विस्तार वर्ष 2008-09 में भारत के कुल निर्यात के समग्र विस्तार के लिए जिम्मेवार था। वर्ष 2009-10 (अप्रैल-अक्तूबर) में, इंजीनियरी वस्तुओं के निर्यात में गिरावट विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात में गिरावट का लगभग आधा और भारत के कुल निर्यात के एक तिहाई के लिए जिम्मेवार थी।

6.34 विनिर्माण क्षेत्र के भीतर इंजीनियरी सामान, रसायनों और कपड़ा उद्योगों का महत्त्व उनके प्रधान आर्थिक लक्षणों से स्पष्ट है। वार्षिक उद्योग सर्वेक्षण 2007-08 के अनुसार, इंजीनियरी सामान क्षेत्र विनिर्माण क्षेत्र के सकल निवेश, उत्पादन, मूल्य योजित और रोजगार के लगभग एक तिहाई हिस्से के लिए जिम्मेवार था। इंजीनियरी सामान, रसायन और कपड़ा उद्योग एक साथ मिल कर विनिर्माण क्षेत्र के निवेश, उत्पादन, मूल्य योजित और रोजगार के 50 प्रतिशत से अधिक के लिए जिम्मेवार थे (सारणी 6.14)। अत, इंजीनियरी सामान भारत में विनिर्माण क्षेत्र की वृद्धि का एक महत्त्वपूर्ण अनुपात ग्रहण करते हैं और इंजीनियरी सामान निर्यात के कार्यसंपादन द्वारा प्रदर्शित आपेक्षिक समुत्थान-शक्ति ने भारतीय उद्योग को कुछ हद तक संकट के दौरान घटी हुई बाह्य मांग से उद्भूत आघातों से अप्रभावित रखा।

सारणी 6.14 : प्रमुख निर्यात उद्योंगों के प्रधान लक्षण

(कुल में प्रतिशत)

संकेतक	इंजीनियरिंग	रसायन	टेक्सटाइल्स	कुल
1	2	3	4	5
(i) कारखानों की संख्या	25.2	7.6	11.3	44.1
(ii) स्थिर पूँजी	34.4	14.7	10.4	59.5
(iii) उत्पादक पूँजी	34.9	15.1	9.6	59.6
(iv) निवेश की गयी पूँजी	35.2	13.6	9.8	58.5
(v) कामगार	26.8	7.5	21.6	55.8
(vi) कुल व्यक्ति (vii) नियोजित	27.8	8.5	20.0	56.3
(viii) कामगारों को मजदूरी	38.2	9.2	17.4	64.9
(ix) कुल परिलब्धियाँ	40.3	12.2	13.4	65.9
(x) कुल निविष्टि	34.5	10.3	7.3	52.0
(xi) कुल उत्पादन	35.3	10.9	7.2	53.4
(xii) मूल्यह्रास	34.1	15.8	11.2	61.1
(xiii) निवल मूल्य योजित	39.5	12.8	6.3	58.6
(xiv) अदा किया गया किराया	35.0	10.7	10.6	56.3
(xv) अदा किया गया ब्याज	33.2	13.2	13.0	59.4

स्रोत : वार्षिक उद्योग सर्वेक्षण, 2007-08

6.35 भारत की वृद्धि में व्यापार सरणी की भूमिका को और अधिक अभिनिश्चित करने के लिए फर्म-स्तरीय निर्यातोन्मुख सूचना का परीक्षण किया गया। फर्म-स्तरीय निर्यात-उन्मुखता भी भारत के विनिर्माण-क्षेत्र की वृद्धि में व्यापार सरणी के बढ़ते महत्त्व का प्रदर्शन करती है। सीएमआईई डाटाबेस से ली गयी 1500 कंपनियों के विश्लेषण ने यह दर्शाया कि 20 प्रतिशत या उससे अधिक निर्यात-बिक्री अनुपात वाली कंपनियों की संख्या वर्ष 1993-94 और 2007-08 के बीच दुगुनी से अधिक हो गयी (सारणी 6.15)। इस अवधि में विनिर्मित उत्पादों के निर्यात में उनका हिस्सा भी काफी बढ़ा। फर्म-स्तरीय निर्यात-उन्मुखता की यह प्रवृत्ति भारतीय कंपनियों के बढ़ते अंतरराष्ट्रीयकरण का नतीजा थी। बढ़ी हुई निर्यात-उन्मुखता की पृष्ठभूमि में वैश्विक आघात विनिर्माण क्षेत्र की फर्मों में वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही से उनके उत्पादों के लिए घटी हुई बाह्य मांग के माध्यम से फैल गये।

आयातों के माध्यम से प्रभाव

6.36 वणिक माल आयात में भी वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में वैश्विक मंदी का असर दिखाई पड़ा, जिसने निर्यात में संकुचन के प्रतिकूल प्रभाव का कुछ हद तक समंजन किया। वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही के दौरान भारत की आयात-वृद्धि में भी अवपात हुआ और यह बाद में वर्ष 2008-09 की अंतिम तिमाही से लेकर वर्ष 2009-10 (अप्रैल-अक्तूबर) तक संकुचित हुआ। कच्चे तेल, पूँजीगत वस्तुओं और सोना एवं याँदी के मामले में आयात के दुर्बल पड़ने को देखा गया (सारणी 6.16)।

6.37 पिछले दशक के दौरान आयात में व्यापक समूहन के भीतर अनेक सूक्ष्म बदलाव हुए हैं, जिन्हें पहचाना जाना होगा। उदाहरण के लिए, पेट्रोलियम आयात के भीतर पेट्रोलियम उत्पादों से कच्चे तेल की ओर बदलाव हुआ है, जो देश के भीतर रिफाइनरी क्षमता में बड़े पैमाने पर वृद्धि होने के बाद हुआ है। पुन:, वर्ष 2001-02 से भारत ने स्वयं को पेट्रोलियम उत्पादों के निवल आयातकर्ता से उनके निवल निर्यातक के रूप में बदल दिया है। 1990 के दशक के दौरान एक अन्य महत्त्वपूर्ण गतिविधि में स्वर्ण-आयात को आधिकारिक सरणी के

सारणी 6.15 : फर्म-स्तरीय निर्यात उन्मुखता

वर्गीकरण	1993-94	1998-99	2002-03	2003-04	2004-05	2005-06	2006-07	2007-08
1	2	3	4	5	6	7	8	9
निर्यात-विक्रय अनुपात (प्रतिशत)				**कंपनियों की संख्या का वितरण**				
>=75	56	71	77	75	81	61	76	71
>=50	75	126	158	160	168	159	169	179
>=35	94	175	219	242	241	249	272	261
>=20	145	269	346	357	382	388	409	417
>=10	249	398	499	533	542	555	566	566
निर्यात-विक्रय अनुपात (प्रतिशत)				**कुल निर्यात में विनिर्माण क्षेत्र का प्रतिशत**				
>=75	12.5	15.0	13.0	12.6	11.5	10.2	10.4	13.1
>=50	15.6	24.4	28.1	26.9	24.7	24.6	22.5	51.6
>=35	23.2	34.0	36.5	40.8	38.2	42.0	68.8	61.1
>=20	34.3	50.6	68.0	68.2	74.4	73.3	76.0	77.8
>=10	62.1	70.6	84.4	82.8	85.5	84.2	83.1	83.7

स्रोत : 1,497 कंपनियों के लिए प्रॉवेस डाटा, सीएमआईई

सारणी 6.16 : वैश्विक संकट और भारत का आयात

पण्य/समूह	बिलियन अमरीकी डालर			वृद्धि (%)			
	2006-07	2007-08	2008-09	2007-08	2008-09	अप्रैल-अक्तूबर	
						2009-10	2008-09
1	2	3	4	5	6	7	8
1. थोक आयात	**84.2**	**112.7**	**135.7**	**33.8**	**20.3**	**-35.6**	**70.6**
(i) पेट्रोलियम एवं पेट्रोलियम उत्पाद	56.9	79.6	91.3	39.9	14.6	-35.0	71.6
(ii) थोक उपभोग वाली वस्तुएँ	4.3	4.6	4.9	7.1	6.2	68.0	3.8
खाद्य तेल	2.1	2.6	3.4	21.4	34.4	54.9	12.6
(iii) अन्य थोक मदें	23.0	28.5	39.5	23.9	38.6	-46.2	78.5
उर्वरक	3.1	5.4	13.6	71.9	151.2	-60.4	245.0
लोहा और इस्पात	6.4	8.7	9.4	35.2	7.8	-26.8	19.4
2. गैर-थोक आयात	**101.5**	**138.7**	**155.8**	**36.6**	**12.3**	**-22.7**	**33.7**
(i) पूँजीगत वस्तुएँ	47.1	70.1	70.5	49.0	0.6	-24.1	46.2
विद्युत एवं इलेक्ट्रॉनिक्स से इतर मशीने	13.9	19.9	20.9	43.4	5.3	-21.9	37.5
इलेक्ट्रॉनिक वस्तुएँ एवं कंप्यूटर सॉफ्टवेयर	16.9	21.1	24.4	24.6	15.7	-12.5	22.4
परिवहन उपकरण	9.4	20.1	13.0	113.1	-35.2	-56.7	133.4
(ii) मुख्यत: निर्यात-संबद्ध मदें	17.9	20.8	29.7	16.2	43.1	-31.1	75.6
मोती, मूल्यवान एवं कम मूल्यवान पत्थर	7.5	8.0	14.4	6.5	81.1	-39.1	112.1
रसायन, जैविक और अजैव	7.8	9.9	12.2	26.4	22.8	-25.0	56.1
(iii) अन्य	36.6	47.8	55.5	30.8	16.1	-16.4	8.8
सोना और चाँदी	14.6	17.9	18.7	22.0	4.6	-16.3	31.8
कुल आयात	**185.7**	**251.4**	**291.5**	**35.4**	**15.9**	**-29.0**	**49.5**
ज्ञापन मद							
गैर-तेल आयात	128.8	171.8	200.2	33.4	16.5	-25.9	40.3
सोना और चाँदी को छोड़ कर गैर तेल आयात	114.1	153.9	181.5	34.9	17.9	-27.2	41.6

स्रोत : वाणिज्यिक आसूचना और अंक संकलन महानिदेशालय (डीजीसीआइएंडएस)

माध्यम से अनुमति दी गयी है (सारणी 6.17)। वर्ष 1997 से जब बैंकों को सोने का आयात करने की अनुमति दी गयी, तब से यात्री बैगेज के माध्यम से सोने का आयात किये जाने में महत्त्वपूर्ण रूप से कमी आयी है। जिन उद्योगों ने 1990 के दशक से आयात करने की

सारणी 6.17 : भारत के आयात की पण्य संरचना

(प्रतिशत हिस्सा)

पण्य	1987-91	1992-96	1997-2003	2004-08	2006-07	2007-08	2008-09
1	2	3	4	5	6	7	8
I. थोक आयात	**38.3**	**40.9**	**37.4**	**40.3**	**45.5**	**44.8**	**47.8**
पेट्रोलियम, कच्चा तेल एवं उत्पाद	18.6	23.9	23.7	28.4	30.8	31.6	32.9
थोक उपभोग वाली वस्तुएँ	3.7	2.7	4.2	3.0	2.3	1.8	1.6
खाद्य तेल	1.7	1.0	3.0	2.2	1.1	1.0	1.2
अन्य थोक मदें	15.9	14.3	9.5	9.0	12.4	11.3	13.2
उर्वरक	3.6	3.7	2.2	1.3	1.7	2.1	4.9
II. गैर-थोक आयात	**53.1**	**59.1**	**62.6**	**59.7**	**54.5**	**55.1**	**52.2**
पूँजीगत वस्तुएँ	22.9	25.5	20.5	23.7	25.3	28.1	21.3
निर्यात संबद्ध मदें	16.0	16.6	16.8	14.1	9.6	8.3	9.9
मोती, बहुमूल्य और कम बहुमूल्य पत्थर	9.5	8.3	9.3	7.5	4.0	3.2	4.7
जैविक एवं अजैव रसायन	5.4	6.7	5.9	4.8	4.2	3.9	4.2
अन्य	14.2	17.0	25.4	21.9	19.6	18.7	21.0
सोना और चाँदी			9.4	8.2	7.9	7.1	6.6
III. कुल आयात/सभी पण्य	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**
गैर-तेल आयात	81.4	76.1	76.3	71.6	69.2	68.4	67.1
औद्योगिक निविष्टियाँ	73.5	67.3	59.2	58.0	56.3	56.4	53.1

स्रोत : वाणिज्यिक आसूचना और अंक संकलन महानिदेशालय (डीजीसीआइएंडएस)

सारणी 6.18 : भारत के आयात का भौगोलिक विविधीकरण

(कुल में प्रतिशत हिस्सा)

क्षेत्र/देश	1987-90	1990-95	1995-00	2000-05	2005-08	2007-08	2008-09
1	2	3	4	5	6	7	8
1. उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	**60.3**	**55.0**	**49.6**	**38.3**	**34.3**	**35.4**	**31.8**
(i) ईयू	**32.8**	**28.7**	**25.7**	**19.4**	**15.6**	**15.3**	**14.3**
यूके	8.4	6.3	5.6	4.6	2.2	2.0	2.0
जर्मनी	8.8	7.8	6.1	3.7	4.0	3.9	4.0
अन्य ईयू	15.7	14.6	13.9	11.1	9.4	9.4	8.3
(ii) ईयु	10.8	10.8	8.9	6.4	6.8	8.4	6.2
(iii) अन्य ओइसीडी	16.6	15.5	15.0	12.5	11.9	11.8	11.3
2. ओपेक	**13.6**	**20.3**	**22.7**	**6.6**	**25.3**	**30.7**	**32.6**
(i) सऊदी अरब	4.7	6.6	5.8	1.0	5.7	7.7	6.7
(ii) यूएई	3.5	5.1	4.4	2.3	5.0	5.4	7.1
(iii) अन्य ओपेक	5.4	8.5	12.5	3.3	14.6	17.7	18.8
3. पूर्वी युरोप	**8.3**	**4.3**	**2.8**	**1.9**	**2.1**	**1.5**	**2.3**
4. विकासशील देश	**17.8**	**20.5**	**24.8**	**24.9**	**30.4**	**31.5**	**32.9**
(i) एशिया	12.7	15.3	18.4	18.8	24.5	25.5	26.6
चीन	0.5	1.0	2.4	4.6	9.6	10.8	10.8
हांगकांग	0.6	0.8	1.1	1.6	1.5	1.1	2.2
अन्य एशियाई देश	11.6	13.6	14.9	12.6	13.4	13.7	13.7
(ii) अफ्रीका	3.0	3.3	4.8	4.4	3.7	3.7	4.3
(iii) लैटिन अमेरिका	2.1	1.9	1.6	1.7	2.2	2.3	2.0
5. अन्य	**0.0**	**0.0**	**0.0**	**28.2**	**7.9**	**0.8**	**0.5**
कुल	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**

स्रोत : वाणिज्यिक आसूचना और अंक संकलन महानिदेशालय (डीजीसीआइएंडएस)

ओर सबसे कम झुकाव दर्शाया और, जिसके चलते उन्हें धीरे-धीरे आयातित वस्तु समूह में से निकाल दिया गया, वे मुख्यत: ऐसे उद्योग हैं, जिनके पास मध्यम से न्यून दर्जे की प्रौद्योगिकी है और वे श्रम-प्रधान क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं। इसी प्रकार, पिछले दशक में जिन उद्योगों की आयात-वृद्धि दर सबसे अधिक थी, वे अधिकतर ऐसे उद्योग हैं, जिनके पास मध्यम से उच्च दर्जे की प्रौद्योगिकी है और जिन्होंने निर्यात के लिए आवश्यक मध्यवर्ती उत्पादों को तैयार किया है।

6.38 भारतीय अर्थव्यवस्था को खोले जाने के बाद से अनेक देशों से आयात किये जाने में बढ़ोतरी हुई है। परंपरागत प्रमुख व्यापारिक भागीदार, यथा, जर्मनी, जापान, यूके, और अमेरिका के बाजार हिस्से में कमी आयी है और पूर्वी एशिया (विशेष रूप से चीन) से नये आयात भागीदार उभर कर आये हैं (सारणी 6.18)। एक अन्य गतिविधि हुई है भारत के आयात के प्रमुख स्रोत के रूप में पूर्वी यूरोप के देशों का धीरे-धीरे छितरा जाना। हाल की अवधि में ओपेक देशों का उच्च हिस्सा भारतीय अर्थव्यवस्था में तेल की बढ़ती खपत के चलते कच्चे तेल के आयात के परिमाण में बढ़ोतरी और तेल की उच्च कीमत को प्रतिबिंबित करता है। अंत में, हाल के वर्षों में चीन से किये गये आयात में महत्त्वपूर्ण रूप से वृद्धि हुई है, जो 1990 के दशक के आरंभ में बहुत थोड़ा होता था।

6.39 आयात, विशेष रूप से पूँजीगत वस्तुओं के आयातों, को अक्सर औद्योगिक कार्यकलाप और निकट भविष्य में निवेश-प्रवृत्ति का संकेतक माना जाता है। (चार्ट VI.5)। आयात का काफी बड़ा हिस्सा औद्योगिक उत्पादन की निविष्टियों के रूप में होता है। तथापि, आयातों और औद्योगिक उत्पादन के बीच एक निश्चित संबंध बता पाना कठिन हो सकता है, क्योंकि आयातित वस्तुएँ या तो देशी उद्योग के लिए पूरक या प्रतिस्थानी हो सकती हैं। इसके परिणामस्वरूप इन संबंधों का अनुभवमूलक परीक्षण अधिकतर देश-विशिष्ट बना रहता है। तथापि, भारत के मामले में अब तक तेल से इतर आयात पूँजीगत वस्तुओं, कच्चे माल और मध्यवर्ती वस्तुओं के रूप में अधिकतर होते रहे हैं, जो औद्योगिक उत्पादन के पूरक होते हैं।

6.40 भारत में उत्पादन के आयात लोच के विश्लेषण से पता चलता है कि जीडीपी के संदर्भ में आयात 1980 के दशक की तुलना में 1990 के दशक में द्रुत गति से बढ़े हैं, जो बाह्य व्यापार के उदारीकरण

चार्ट VI.5 : आयात और औद्योगिक कार्यकलाप

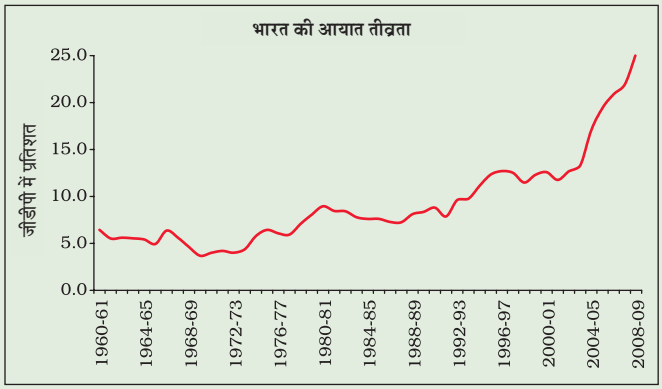

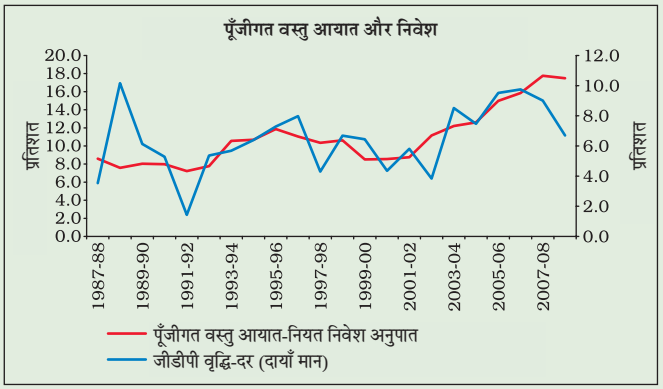

के साथ संगति रखता है। उत्पादक क्षेत्र के लिए आयात का बड़ा महत्त्व फर्म स्तरीय साक्ष्य से स्पष्ट था। सीएमआईई डाटाबेस के अनुसार शीर्ष 100 आयातकर्ता कंपनियाँ 1990 के दशक के अंत में विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात के लगभग आधे हिस्से के लिए जिम्मेवार थीं। 2008 तक ये कंपनिया विनिर्मित वस्तुओं के 80 प्रतिशत की जिम्मेवार थीं। इन फर्मों की आयात-तीव्रता, विक्रय के प्रतिशत के रूप में, वर्ष 1999 से लेकर 2008 की अवधि के दौरान लगभग दुगुनी हो गयी (सारणी 6.19)।

पण्य-कीमत सरणी के माध्यम से प्रभाव

6.41 व्यापार सरणी के माध्यम से प्रभाव के संचरण का अन्य घटक है वैश्विक पण्य-कीमतें, जो अन्य बातों के साथ-साथ, आयातों को और उत्पादन-लागत को प्रभावित करता है। हाल के संकट के आरंभ होने के पूर्व वस्तुओं, यथा, कच्चा तेल और प्राथमिक वस्तुएँ, का वैश्विक मूल्य बढ़ती मांग और आपूर्ति-पक्ष बाध्यताओं के चलते महत्त्वपूर्ण रूप से बढ़ गया था और इसने पूरी दुनिया में आयातकर्ता देशों के भुगतान संतुलन को विकृत कर दिया था। भारतीय समूह में कच्चे तेल का मूल्य जुलाई 2008 में प्रति बैरल 147 अमरीकी डालर हो गया था। वैश्विक पण्य-कीमतों में महत्त्वपूर्ण बढ़ोतरी, विशेष कर कच्चे तेल के मूल्य में, ने स्फीतिकारक दबाव उत्पन्न किया। तथापि, वैश्विक संकट ने पूरी दुनिया में इन वस्तुओं की मांग को तेजी से घटा दिया और उनके मूल्य तेजी से गिरे, जिसके चलते वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में स्फीतिकारक दबाव कम हुआ।

6.42 कीमतों में परिवर्तन का आयात-मूल्य पर प्रभाव आयात के मूल्य-लोच तथा व्यापार के खुलापन की हद पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए, यदि वणिक माल आयात अत्यधिक मूल्य-लोच वाले हैं और व्यापार में उचित खुलापन है, तब वैश्विक पण्य-कीमतों में गिरावट के चलते आयात में बढ़ोतरी हो सकती है। तथापि, वैश्विक पण्य-कीमतों का उत्पादन लागत पर प्रभाव असंदिग्ध रूप से होता है। भारत में तेल का आयात, जो कुल आयात का एक बड़ा हिस्सा होता

सारणी 6.19 : उत्पादन की आयात तीव्रता : फर्म-स्तरीय साक्ष्य

(प्रतिशत)

	1999	2003	2004	2005	2006	2007	2008
1	2	3	4	5	6	7	8
कंपनियाँ			उद्योग (विनिर्माण) में हिस्सा कुल निर्यात				
शीर्ष 50	32.4	54.1	56.0	60.6	65.3	70.0	70.8
शीर्ष 100	46.2	65.9	67.7	72.2	76.0	78.9	80.0
शीर्ष 200	62.0	76.7	78.3	82.0	85.6	87.5	88.8
शीर्ष 300	70.2	83.4	85.3	88.0	90.7	92.2	93.3
शीर्ष 500	81.8	91.1	91.7	93.5	95.1	96.5	97.4
कुल	100	100	100	100	100	100	100
			उद्योग (विनिर्माण) में हिस्सा कुल आयात				
शीर्ष 50	57.2	76.0	74.7	74.3	76.6	76.7	77.2
शीर्ष 100	63.2	80.4	79.2	79.0	81.0	81.0	81.4
शीर्ष 200	68.7	83.7	82.8	82.8	84.0	84.3	84.7
शीर्ष 300	71.7	85.7	84.9	85.0	86.0	86.4	86.9
शीर्ष 500	78.3	89.0	88.8	88.6	89.4	89.9	90.7
कुल	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0
			आयात तीव्रता (विक्रय के प्रतिशत के रूप में आयात)				
शीर्ष 50	19.0	27.6	27.3	31.0	37.8	36.3	39.2
शीर्ष 100	18.3	26.1	25.9	29.3	35.7	34.3	36.9
शीर्ष 200	17.5	24.4	24.2	27.4	33.2	32.1	34.5
शीर्ष 300	16.9	23.6	23.4	26.6	32.3	31.3	33.5
शीर्ष 500	16.3	22.4	22.4	25.5	31.1	30.1	32.1
कुल	**15.6**	**20.3**	**20.6**	**23.6**	**28.6**	**27.7**	**29.4**

स्रोत : प्रॉवेस डाटा, सीएमआईई

चार्ट VI.6 : भारत का पण्य आयात और वैश्विक कीमतें

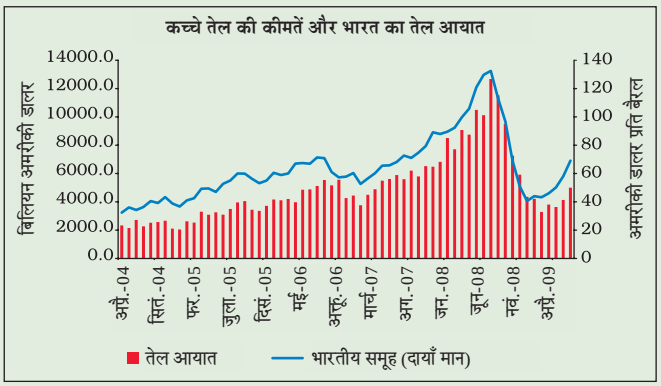

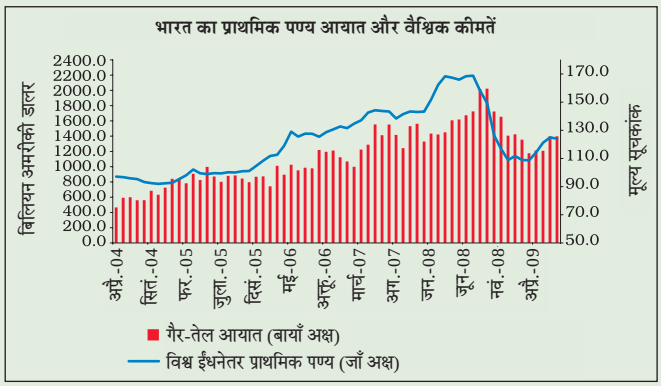

है, वास्तविक कार्यकलापों के लिए एक महत्त्वपूर्ण निविष्टि होता है। भारत में तेल आयात अपेक्षाकृत मूल्य लोचहीन स्थिति का होता है और, इसीलिए, वह उनके मूल्य से अत्यधिक सहसंबद्ध होता है। तदनुसार, भारत में तेल आयात वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में तेजी से कम हो गये, जो कच्चे तेल के मूल्य में गिरावट को प्रतिबिंबित करता है (चार्ट VI.6)।

6.43 पण्य-कीमत चक्र ने वैश्विक अर्थव्यवस्था में व्यवसाय-चक्र को अनुकूलित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। हाल का वैश्विक पण्य-मूल्य चक्र, जो वर्ष 2002 में बढ़ने लगा, वर्ष 2008 के मध्य में एक दूसरी ऊँचाई पर पहुँच गया, जिसका संबद्ध निहितार्थ सभी देशों में आस्ति-कीमतों, निवेश, व्यापार संतुलन और वृद्धि के साथ था (चार्ट VI.7)। आईएमएफ और विश्व बैंक के पण्य-मूल्य सूचकांक आँकड़ों के अनुसार सभी पण्य मूल्य सूचकांकों में वर्ष 2003-07 के दौरान औसतन 18.4 प्रतिशत की वृद्धि दिखाई दी, जिसके प्रेरक थे धातुएँ, ऊर्जा और खाद्यान्न वस्तुएँ, जबकि 1990 के दशक के दौरान उनमें गिरावट, अलबत्ता सीमांतिक रूप से, देखी गयी थी। विश्व बैंक के न्यून एवं मध्यम आय वाले देशों के लिए पण्य मूल्य सूचकांक में भी 1980 के दशक और 1990 के दशक में अपस्फीति की प्रवृत्ति की तुलना में वर्तमान दशक के दौरान तेज वृद्धि दर्शायी गयी है। 1970 के दशक के अंत की तुलना में खाद्यान्न मूल्य मुद्रास्फीति सबसे ऊँची थी, जबकि 1980 के दशक के अंत की तुलना में धातुओं और गैर-ईंधन वस्तुओं के मूल्य सबसे अधिक थे। इसके प्रेरक तत्व रहे हैं विश्व अर्थव्यवस्था के तगड़े और स्थिर कार्यसंपादन, अनेक बड़ी विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में द्रुत वृद्धि तथा संरचनात्मक परिवर्तन और नीति निर्माताओं एवं बाजार प्रतिभागियों द्वारा वातावरण परिवर्तन की चुनौतियों पर अधिक ध्यान दिया जाना और आरक्षित निधियों का सिकुड़ता जाना (अंकटाड, 2008)। इसके अतिरिक्त, पण्य-मूल्य चक्र पूर्ववर्ती चक्रों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक दीर्घीकृत था, जिसकी अगुआई व्यवसाय चक्र के निरंतर विस्तारक चरण द्वारा की गयी थी (बॉक्स VI.5)।

6.44 पण्य आयातकर्ताओं के लिए पण्य मूल्य आघात का निहितार्थ स्पष्ट रूप से भिन्न-भिन्न हो सकता है। पण्य मूल्य चक्र का विस्तारक चरण विविध सरणियों के माध्यम से काम कर सकता है। पहला, वस्तु मूल्य आघात देशी मूल्यों को अंतरण के अंश और विनिमय दर उतार-

चार्ट VI.7 : वैश्विक पण्य मूल्य-चक्र

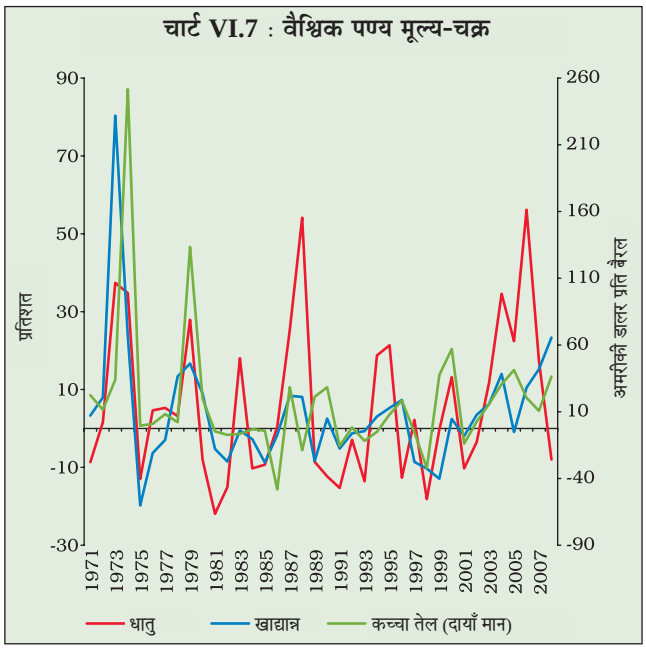

बॉक्स VI.5

वस्तु मूल्य का आस्ति कीमतों, निवेश, व्यापार और आर्थिक कार्यकलाप पर प्रभाव

अर्थव्यवस्थाओं पर वस्तु मूल्य में उतार-चढ़ाव का समग्र प्रभाव काफी अलग-अलग होता है, जो विदेश व्यापार की संरचना, उनकी सकल राष्ट्रीय आय में वस्तु-निर्यात और आयात के आपेक्षिक भारांक और मूल्य अनुक्रियाशीलता पर निर्भर करता है। वस्तुओं का निर्यात करने वाले देशों के लिए प्राथमिक वस्तुओं के उच्चतर मूल्य का अनुकूल प्रभाव उन्नत निर्यात-आय के माध्यम से होता है। यह, बदले में, आधारभूत संरचना और उत्पादन क्षमताओं के लिए नये निवेशों का वित्तपोषण किये जाने की संभावना को बढ़ाता है, जिससे देशी उत्पादन कार्यकलाप, उपभोग और रोजगार बढ़ते हैं। तथापि, वस्तु-मूल्य में तेजी का देशी कार्यकलाप पर प्रभाव भी निर्यात अधिशेष के देशी उपभोग बनाम निवेश के लिए आबंटन किये जाने पर निर्भर करेगा। वस्तु-मूल्य में तेजी से उत्पन्न निर्यात अधिशेष के विपथन से आय के अंतर-कालिक वितरण और निर्बाध उपभोग में मदद मिल सकती है। वस्तु-मूल्य चक्र में विस्तार के लाभकारी प्रभाव के होने पर भी मूल्य-चक्र में अचानक बढ़ोतरी होने से डच-डिजीज हो सकता है, जो वास्तविक विनिमय दर में तेज मूल्यवृद्धि के माध्यम से गैर-तिजारती प्रतिस्पर्धात्मकता को कम कर सकता है।

चढ़ाव को देखते हुए सीधे प्रभावित कर सकते हैं। पुन:, यह देखते हुए कि प्राथमिक वस्तुएँ, यथा, तेल और धातुएँ, विनिर्माण और परिवहन के लिए निविष्टि के रूप में आती हैं, आयात मूल्य में बढ़ोतरी का दूसरे दौर का प्रभाव विनिर्मित वस्तुओं के देशी मूल्य और उच्चतर परिवहन लागत पर पड़ता है। दूसरा, वैश्विक पण्य मूल्य में बढ़ोतरी आयातकर्ता देशों के व्यापार संतुलन को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर सकती है। विशेष रूप से तेल के मामले में, जहां मांग अपेक्षाकृत कम मूल्य लोच का हो, वहाँ मूल्य आघात के चलते व्यापक चालू खाता घाटा (सीएडी) हो सकता है। इसके साथ ही, विनिर्मित उत्पादों के निर्यात में प्रतिस्पर्धी दबाव को देखते हुए, प्राथमिक वस्तुओं के मूल्य में बढ़ोतरी निविष्टि की लागत पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती है और, इसीलिए, निर्यात में प्रतिस्पर्धात्मकता हो सकती है। तीसरा, वस्तु मूल्य का अप्रत्यक्ष प्रभाव उच्चतर स्फीतिकारक प्रत्याशाएँ हो सकती हैं, जो बदले में अर्थव्यवस्था में सांकेतिक ब्याज दर को बढ़ा सकती हैं। पुन:, वस्तु-मूल्य प्रेरित मुद्रास्फीति में कोई बढ़ोतरी होने से देशी मूल्यों में अधिक अस्थिरता उत्पन्न हो सकती है और, इसीलिए, निवेश वातावरण के बारे में अधिक अनिश्चितता आ सकती है, जो कारपोरेटों और फर्मों के निवेश संबंधी निर्णयों पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती है।

6.45 वर्ष 2000 और 2007 के बीच हाल के पण्य-चक्र के चरण के दौरान विकासशील और संक्रमणशील अर्थव्यवस्थाओं में, जो कच्चे तेल और खनिजों के निर्यातक हैं, व्यापार की शर्तों में सुधार दिखाई पड़ा। तथापि, विकासशील देश ने, जो श्रम-प्रधान विनिर्मित वस्तुओं के निर्यातकर्ता के रूप में उभरे हैं और तेल के निवल आयातकर्ता हैं, अपने व्यापार की शर्तों में महत्त्वपूर्ण ह्रास का अनुभव किया है। अंतरराष्ट्रीय तेल-कीमतों का औद्योगिक देशों और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के निर्यात मूल्यों में अंतरण, जैसाकि वेक्टर ऑटो रिग्रेसन मॉडल से उद्भूत ग्रैंजर कारणत्व संबंध से स्पष्ट है, सभी देशों में मुद्रास्फीति में अंतर्निहित वैश्विक व्यापार के बारे में महत्त्वपूर्ण अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। औद्योगिक देशों के लेए निर्यात मूल्य मुद्रास्फीति का कारण तेल-मूल्य मुद्रास्फीति रहा है, लेकिन उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए इसका कारण तेल मूल्य मुद्रास्फीति और उन्नत देशों की निर्यात मूल्य मुद्रास्फीति रहा है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि एक नियंत्रित मूल्य-तंत्र के अभाव में औद्योगिक देश इस स्थिति में थे कि वे तेल-मूल्य प्रभाव का कुछ बोझ उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को निर्यातित सामान के उच्चतर मूल्य के माध्यम से अंतरित कर सकें। तथापि, उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ इस स्थिति में नहीं थीं कि वे मुद्रास्फीति में औद्योगिक देशों में व्यापार करें। पुन:, व्यापारयोग्य और गैर-व्यापारयोग्य वस्तुओं के बीच पारस्परिक क्रिया निर्यात मूल्य, आयात मूल्य और देशी उपभोक्ता मूल्य मुद्रास्फीति के बीच औद्योगिक और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए कार्य-कारण संबंध से स्पष्ट थी। औद्योगिक देशों के लिए व्यापारयोग्य मदों के मूल्य का महत्त्वपूर्ण कारणत्व साहचर्य देशी उपभोक्ता मूल्य के साथ था; उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के मामले में आयात मूल्य की अपेक्षा निर्यात मूल्य का महत्त्वपूर्ण कारणत्व संबंध देशी मूल्यों के साथ था (सारणी 6.20)।

सारणी 6.20 : अंतरराष्ट्रीय तेल मूल्यों का विकसित एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के निर्यात-मूल्य में अंतरण : ग्रैंजर कारणत्व विश्लेषण

नल्ल हाइपोथेसिस:एक्स के कारण वाई नहीं होता	चाइ-स्क्वेयर स्टैटिक	स्वीकार/ अस्वीकार करें
1	2	3
(i) तेल की कीमतें औद्योगिक देशों के निर्यात मूल्य को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करतीं	30.66 (0.00)	अस्वीकार करें
(ii) उभरते देशों के निर्यात मूल्य औद्योगिक देशों के निर्यात मूल्य को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करते	15.26 (0.23)	स्वीकार करें
(iii) तेल की कीमतें उभरते बाजार वाले देशों के निर्यात मूल्य को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करतीं	43.23 (0.00)	अस्वीकार करें
(iv) औद्योगिक देशों के निर्यात मूल्य उभरते बाजार वाले देशों के निर्यात मूल्य को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करते	41.67 (0.00)	अस्वीकार करें
(v) औद्योगिक देशों के निर्यात मूल्य तेल की कीमतों को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करते	21.75 (0.04)	अस्वीकार करें
(vi) उभरते देशों के निर्यात मूल्य तेल की कीमतों को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करते	25.70 (0.01)	अस्वीकार करें

6.46 वैश्विक मूल्य का अंतरण भारत के देशी मूल्य में दो चरणों में देखा गया। पहला, वैश्विक और क्षेत्रीय स्तरों पर व्यापारिक भागीदारों के निर्यात मूल्य भारत के आयात मूल्य पर फैल जाते हैं। दूसरा, आयात मूल्य में परिवर्तन का प्रभाव उत्पादन की लागत और वस्तु एवं सेवाओं की देशी आपूर्ति पर होता है, इस प्रकार, उत्पादक के मूल्य द्वारा मापी गयी सकल देशी मुद्रास्फीति प्रभावित होती है, जो भारत में थोक मूल्य से संबंध रखती है। भारतीय संदर्भ में, अर्थव्यवस्था पर वैश्विक पण्य-चक्र का सबसे अधिक सीधा प्रभाव प्राथमिक वस्तुओं के मूल्य के माध्यम से होता है।

6.47 1960 के दशक से लेकर 1990 के दशक में देखी गयी प्रवृत्ति की तुलना में 2000 के दशक में देशी मुद्रा में सकल आयात मूल्य मुद्रास्फीति महत्त्वपूर्ण रूप से कम हुई। दूसरा, भारत के आयात के विदेशी मूल्य को आँकना (विदेशी मुद्रा, यथा, अमरीकी डालर, में आयात का मूल्य) रोचक होगा, क्योंकि देशी मुद्रा में आयात मूल्य पर विनिमय दर का प्रभाव होता है। देशी मुद्रा में आयात मूल्य से प्रकट होता है कि सिवाय 1970 के दशक के, जब तेल मूल्य आघात हुआ था, अमरीकी डालर में भारत की आयात मूल्य मुद्रास्फीति में 1950 के दशक से लेकर 1990 के दशक तक गिरावट बनी रही। तथापि, वर्तमान दशक में, अब तक आयात मूल्य मुद्रास्फीति का ऐसा माप औसतन 5.2 प्रतिशत रहा है, जबकि इसके विपरीत 1990 के दशक में इसमें गिरावट की प्रवृत्ति देखी गयी थी और 1980 के दशक में यह कम रही थी।

सारणी 6.21 : भारत के आयात मूल्य का वैश्विक एवं क्षेत्रीय निर्यात मूल्यों से सहसंबंध

	भारत	ईएमई	औद्योगिक देश	तेल उत्पादक देश	विश्व
1	2	3	4	5	6
भारत	1.00				
उभरते	0.68	1.00			
औद्योगिक	0.63	0.71	1.00		
तेल	0.72	0.84	0.57	1.00	
विश्व	0.70	0.86	0.97	0.72	1.00

6.48 अमरीकी डालर में भारत की आयात मूल्य मुद्रास्फीति का वैश्विक और क्षेत्रीय स्तरों पर औद्योगिक, विकासशील एवं तेल निर्यातक देशों के साथ सहसंबंध, जो वार्षिक आँकड़ों पर आधारित है, यह प्रकट करता है कि तेल-मूल्य अर्थव्यवस्थाओं की निर्यात मूल्य मुद्रास्फीति का बड़ा सहसंबंध भारत के आयात मूल्य के साथ है (सारणी 6.21)। इससे पता चलता है कि तेल मूल्य आघात भारत में मूल्य-स्थिरता के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण बाह्य आघात होते हैं।

6.49 देशी मुद्रा में भारत के आयात मूल्य का देशी मूल्यों के साथ सहसंबंध यह बताता है कि आयात मूल्य सूचकांक का लगभग पूर्ण सहसंबंध देशी मूल्य सूचकांक के साथ होता है (सारणी 6.22)। चूँकि ऐसे सहसंबंध के बारे में वैरिएबल्स में अभिप्रेत घटकों के चलते अतिशयोक्ति की जा सकती है, अत: यह युक्तियुक्त होगा कि मुद्रास्फीति दरों के सहसंबंध पर विचार किया जाये। आयात मूल्य मुद्रास्फीति का भी एक महत्त्वपूर्ण सहसंबंध देशी मुद्रास्फीति के साथ होता है।

6.50 भारत पर वैश्विक पण्य मूल्य आघात के संचरण की एक प्रमुख सरणी तेल आयात है। तेल आयात के बढ़ते हिस्से का कारण अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल के मूल्य में तेज वृद्धि को और तेल आयात के परिमाण में वृद्धि को माना जा सकता है। पेट्रोलियम आयोजना विश्लेषण

सारणी 6.22 : भारत के आयात मूल्य सूचकांक का देशी मूल्यों (डब्लूपीआइ) के साथ सहसंबंध

वैरिएबल्स	आयात मूल्य सूचकांक का देशी मूल्य सूचकांक के साथ सहसंबंध 1950-2008	आयात मूल्य मुद्रास्फीति का देशी मुद्रास्फीति दरों के साथ सहसंबंध 1950-2008
1	2	3
डब्लूपीआई	0.99	0.61
देशी ईंधन मूल्य	0.99	0.62
देशी विनिर्मित वस्तु मूल्य	0.99	0.56
विनिमय दर	0.96	0.19

सारणी 6.23 : तेल आयात परिमाण वृद्धि

(प्रतिशत)

वर्ष	देशी उपभोग वृद्धि	तेल आयात (सकल) परिमाण वृद्धि	तेल आयात (निवल) परिमाण वृद्धि
1	2	3	4
1997-98	6.5		
1998-99	7.4	10.6	14.1
1999-00	7.2	17.0	17.2
2000-01	3.1	12.0	1.8
2001-02	0.4	2.8	0.8
2002-03	3.7	4.1	4.4
2003-04	3.5	10.3	6.2
2004-05	3.6	6.4	3.2
2005-06	1.4	7.8	3.4
2006-07	6.7	14.5	6.9
2007-08	6.8	11.6	8.2
2008-09	3.6	1.6	6.0
2009-10	3.4	–	–
1997-98 से 2008-09	4.5	9.0	6.6
2000-01 से 2008-09	3.6	7.9	4.5

टिप्पणी : सकल के संदर्भ में परिमाण की दृष्टि से कुल तेल आयात में कच्चे तेल का आयात और तैयार पेट्रोलियम उत्पाद शामिल हैं । निवल के सदर्भ में तेल आयात परिमाण वृद्धि कुल तेल आयात के परिमाण में वृद्धि घटाव तेल निर्यात के परिमाण से संबंधित है ।

स्रोत : पेट्रोलियम आयोजना विश्लेषण कक्ष (पीपीएसी), पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय, भारत सरकार ।

कक्ष (पीपीएसी), पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय, भारत सरकार, के अनुसार तेल आयात के परिमाण में वर्ष 2000-01 से लेकर 2008-09 के दौरान प्रति वर्ष औसतन 7.9 प्रतिशत की वृद्धि हुई। उसी अवधि के दौरान भारत में पेट्रोलियम उत्पादों की घरेलू खपत में वृद्धि, मात्रा की दृष्टि से, 3.6 प्रतिशत पर कम रही (सारणी 6.23)। तेल की खपत की मांग और तेल खपत की आयात-तीव्रता के बारे में ये रीतिबद्ध तथ्य प्रचुरता से यह प्रकट करते हैं कि भारत में बड़े मूल्य आघात महत्त्वपूर्ण रूप से वैश्विक तेल मूल्य आघातों के चलते हुए हैं (चार्ट VI.8)। वर्ष 2008-09 में भी मूल्य आघात मुख्य रूप से अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल के मूल्यों के चलते हुए।

6.51 मूल्य आघातों की एक दूसरी सरणी, विशेष रूप से हाल के वर्षों के दौरान, खाद्यान्न के अंतरराष्ट्रीय मूल्य में अस्थिर उतार-चढ़ाव रहा है। अंतरराष्ट्रीय खाद्यान्न मूल्यों में वृद्धि का संचरण परिवर्ती अंशों में अंतरराष्ट्रीय बाजारों से स्थानीय बाजारों में हुआ है (आइएफपीआरआई, 2008)। अंतरराष्ट्रीय बाजारों से देशी बाजारों तक मूल्य-परिवर्तन के इस परिवर्ती संचरण का कारण आयात-निर्भरता, विनिमय दर की प्रवृत्ति, घरेलू नीतियों और विवेकाधीन बाजार खंडीकरण, परिवहन लागत तथा स्वाभाविक बाजार खंडीकरण एवं बाजार की संरचना से संबंधित अपूर्ण संचरण को और मोनोपोलिस्टिक/मोनोप्सोनिस्टिक ताकत के अस्तित्व को माना जा सकता है। मूल्य सूचकांक में खाद्यान्न मूल्यों के भारांक पर निर्भर करते हुए, इसका समग्र मुद्रास्फीति पर प्रभाव भी सभी देशों में भिन्न-भिन्न प्रकार से हुआ है।

6.52 दशकों से खाद्यान्न आयात पर भारत की निर्भरता में सामान्यत: गिरावट आयी है, जैसाकि वर्षों से कुल आयात में खाद्यान्न आयात के घटते हिस्से में प्रतिबिंबित होता है (सारणी 6.24)। 2000 के दशक के दौरान, यद्यपि कुल आयात समूह में भारत का खाद्यान्न आयात महत्त्वपूर्ण रूप से कम हुआ, फिर भी खाद्यान्न मूल्यों का पण्य बाजारों के द्रुत वित्तीयकरण के माध्यम से वैश्विक एकीकरण होने के चलते देशी और विश्व खाद्यान्न मूल्य मुद्रास्फीति में सहसंबंध बढ़ कर 0.57 हो गया। वास्तव में, 2000 के दशक का वैश्विक पण्य-चक्र यह बताता है कि भारत के खाद्यान्न मूल्यों में विस्तारक चरण ने निकट रूप से

चार्ट VI.8 : तेल और खाद्यान्न की कीमतें

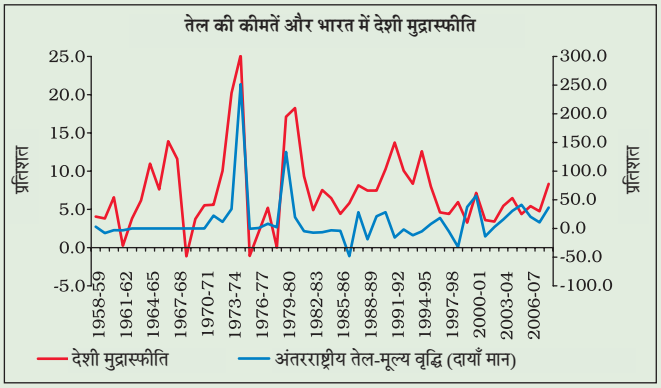

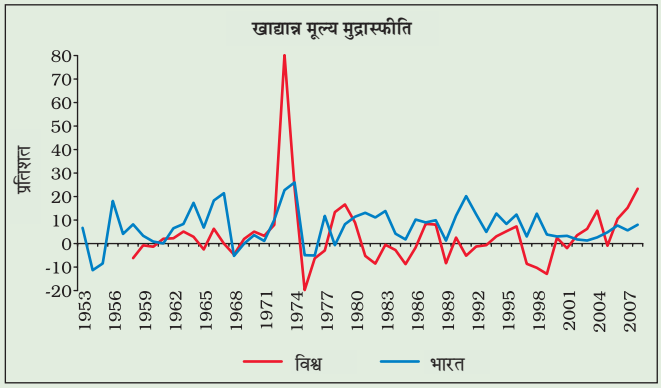

सारणी 6.24 : भारत का खाद्यान्न आयात और निर्यात

अवधि	खाद्यान्न आयात (कुल आयात में प्रतिशत)	खाद्यान्न निर्यात (कुल निर्यात में प्रतिशत)
1	2	3
1960 का दशक	34.3	23.2
1970 का दशक	31.7	18.3
1980 का दशक	23.5	8.3
1990 का दशक	16.8	5.0
2000 का दशक	10.8	4.8

स्रोत : विश्व बैंक, अंकटाड

वैश्विक पण्य मूल्य चक्र का अनुसरण किया। देशी और अंतरराष्ट्रीय मूल्यों के बीच सहसंबंध गुणांक के पण्यवार विश्लेषण से यह प्रकट होता है कि वर्ष 1995-2008 की अवधि के दौरान देशी खाद्य तेल मूल्यों का तगड़ा धनात्मक सहसंबंध अंतरराष्ट्रीय मूल्यों के साथ था, जो आयात पर निर्भरता को प्रतिबिंबित करता है, क्योंकि भारत की उपभोग संबंधी आवश्यकताओं के एक बड़े भाग की पूर्ति आयातों के माध्यम से (30 प्रतिशत से अधिक) होती है (राजमल और मिश्रा, 2009)। खाद्यान्नों और खाद्य तेलों, दोनों के घरेलू मूल्य अंतरराष्ट्रीय मूल्यों के आगे-पीछे चलने लगे हैं, खास कर उत्तरार्ध, अर्थात्, वर्ष 2002-2008 की अवधि में, क्योंकि कृषि-पण्य के व्यापार में वृद्धि हुई है।

6.53 देशी आपूर्ति और मांग में संतुलन भी घरेलू कीमतों पर अंतरराष्ट्रीय आघातों के संचरण का अनुकूलन करते हैं। खाद्य तेलों के मामले में मांग घरेलू आपूर्ति से आगे बढ़ गयी और इसमें हुए घाटे को आयात के माध्यम से पूरा किया गया (सारणी 6.25)। दलहन का उत्पादन भी मांग से पिछड़ गया, जिसका परिणाम यह हुआ कि इसके लिए 10 प्रतिशत से अधिक आयात पर निर्भर करना पड़ा। वैश्विक

सारणी 6.25 : उपभोग की अपेक्षाओं के लिए आयात पर भारत की निर्भरता

अवधि	कुल उपभोग में आयात का प्रतिशत हिस्सा			
	गेहूँ	दालें	चीनी	खाद्य तेल
1	2	3	4	5
2001-02	-3.7	13.3	-0.5	41.7
2002-03	-6.8	14.2	-0.6	47.9
2003-04	-6.4	9.5	-0.5	42.9
2004-05	-3	7.5	0.3	38.9
2005-06	-1.1	8.5	0.1	34.1
2006-07	7.4	12.5	-0.5	33.5
2007-08	2.2	14.8	-1.4	31.1

स्रोत : कृषि मंत्रालय, भारत सरकार।

खाद्यान्न मूल्य आघातों का घरेलू कीमतों पर अंतरण का अंतत: अनुकूलन आयात कोटा एवं लीइसेंसीकरण, सीमा-शुल्क तथा घरेलू राजकोषीय उपायों के रूप में व्यापार-नीति हस्तक्षेप द्वारा किया जायेगा। तथापि, अंतरराष्ट्रीय खाद्यान्न की कीमतों में निरंतर उतार-चढ़ाव का प्रभाव, अल्पावधि स्थिरता के बावजूद, घरेलू मूल्यों पर पड़ेगा।

6.54 अनुभवमूलक निष्कर्षों से पता चलता है कि वैश्विक कारक (आयात मूल्य, पूँजी प्रवाह, और विनिमय दर में उतार-चढ़ाव) भारत में घरेलू मुद्रास्फीति में लगभग 20 से 30 प्रतिशत तक घट-बढ़ को स्पष्ट करते हैं (राज, जैन और धल, 2009)। दीर्घावधि में, आयात मूल्य, पूँजी प्रवाह और विनिमय दरों का महत्त्वपूर्ण सकारात्मक संबंध घरेलू मुद्रास्फीति से हो सकता है। ब्याज दर वैरिएबल का घरेलू मूल्यों के साथ दीर्घावधि में नकारात्मक संबंध होता है, यद्यपि इसका सांख्यिकीय महत्त्व अन्य वैरिएबलों की तरह उतना अधिक नहीं होता है। पूंजी प्रवाह का घरेलू कीमतों पर प्रभाव आयात मूल्यों से और विनिमय दरों की तुलना में अधिक स्पष्ट हो सकता है, क्योंकि पूँजी प्रवाह बादवाले को प्रभावित करते हैं।

सेवाओं में व्यापार तथा प्रेषण के माध्यम से प्रभाव

6.55 व्यापार सरणी वैश्विक गतिविधियों के प्रभाव का संचरण सेवा-निर्यात मांग के माध्यम से भी करती है। भारत के सेवा-क्षेत्र की व्यापार योग्यता में महत्त्वपूर्ण बढ़ोतरी देखी गयी है, जिसमें जीडीपी में सेवा निर्यात का अनुपात, जो वर्ष 1990-91 में 3.2 प्रतिशत था, पांच गुना बढ़ कर वर्ष 2008-09 में 15.1 प्रतिशत हो गया। सेवा-निर्यात के क्षेत्र में भारत वर्ष 2008 के दौरान विश्व में पहले दस देशों में से एक था (सारणी 6.26)। ईएमई के बीच, भारत का स्थान ऊँचाई पर था, जो सेवा-निर्यात में चीन के बाद दूसरे स्थान पर था।

6.56 सेवा-निर्यात का एक बड़ा भाग (लगभग 46 प्रतिशत) व्यवसाय प्रक्रिया आउटसोर्सिंग (बीपीओ) और सूचना प्रौद्योगिकी समर्थित सेवाओं (आइटीईएस) के रूप में था, जिसके प्रेरक सूचना प्रौद्योगिकी के स्फोट हैं और वे रोजगार प्रधान हैं, जिसमें लगभग 2 मिलियन लोगों को सीधे रोजगार मिलने का अनुमान है। चूँकि सॉफ्टवेयर निर्यात की कुल मांग का लगभग 80 प्रतिशत अमेरिका और यूके से आता है, अत: इन अर्थव्यवस्थाओं में तीव्र संकुचन होने का प्रतिकूल प्रभाव सॉफ्टवेयर निर्यात के लिए मांग पर हुआ। सॉफ्टवेयर सेवाओं के लिए मांग में संकुचन का प्रतिकूल प्रभाव रोजगार वृद्धि पर पड़ा

सारणी 6.26: वर्ष 2008 में शीर्ष सेवा निर्यातकों के बीच भारत की तुलनात्मक स्थिति

देश	निर्यात (बिलियन अमरीकी डालर)	हिस्सा (%)
1	2	3
1. अमेरिका	545.6	15.3
2. यूके	286.9	8.1
3. जर्मनी	246.7	6.9
4. फ्रांस	161.8	4.5
5. जापान	148.8	4.2
6. चीन	147.1	4.1
7. स्पेन	143.6	4.0
8. इटली	123.5	3.5
9. नीदरलैंड्स	104.5	2.9
10. **भारत**	**103.0**	**2.9**
11. आयरलैंड	99.29	2.8
12. हांगकांग	92.3	2.6
13. बेल्जियम	88.99	2.5

टिप्पणी : हिस्से की गणना बीओपीएसवाइ, अक्तूबर, 2009 में सभी देशों के लिए उपलब्ध सेवा निर्यात के आँकड़ों को जोड़ कर की गयी है । तथापि, वास्तविक हिस्सा यहां परिकलित हिस्से से थोड़ा भिन्न हो सकता है ।

स्रोत : बीओपीएसवाइ, आईएमएफ, अक्तूबर, 2009

और, इस प्रकार, इस क्षेत्र पर आश्रित कार्यबल की उपभोग-मांग में कमी आयी।

6.57 वणिक माल व्यापार से जुड़े सेवाओं के निर्यात और आयात भी भारत में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही से वणिक माल व्यापार में संकुचन से प्रभावित हुए हैं। वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही से वणिक माल निर्यात में संपीडन ने संबंधित सेवाओं, यथा, परिवहन, बीमा और वित्तीय सेवाओं, से संबंधित निर्यात को प्रभावित किया है, जो इन सेवाओं के वणिक माल निर्यात में समकालिक उतार-चढ़ाव में इंद्रियगोचर होता है। इसी प्रकार, व्यापार से संबंधित सेवाओं के आयात पर भी वणिक माल आयात में गिरावट का प्रतिकूल प्रभाव पड़ा, जैसाकि वर्षों से, जिसमें वर्तमान संकट अवधि शामिल है, उनके सह-गमन से स्पष्ट है (चार्ट VI.9)।

6.58 यद्यपि भारत में सभी स्तरों पर सेवा-निर्यात पर हाल के वैश्विक संकट का प्रतिकूल प्रभाव पड़ा, फिर भी विविध सेवाओं के निर्यात ने, जिनकी अगुआई प्रमुख रूप से सॉफ्टवेयर निर्यात ने की, आपेक्षिक समुत्थान-शक्ति का प्रदर्शन किया, जैसाकि मंद सकारात्मक वृद्धि से स्पष्ट होता है। जबकि अन्य सभी उप-समूहों में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही से संकुचन हुआ, इस अवधि के दौरान बीमा सेवाओं के निर्यात में सबसे अधिक गिरावट देखी गयी, जिसके बाद यात्रा और परिवहन का स्थान आता है। सेवाओं के आयात के मामले में, बीमा सेवाओं ने आपेक्षिक समुत्थान-शक्ति का प्रदर्शन किया, जैसाकि उनकी धनात्मक वृद्धि में प्रतिबिंबित होता है, जबकि अन्य सेवाओं के आयात में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही के दौरान प्रपाती संकुचन दर्ज किया गया। विभिन्न सेवाओं के आयात के बीच विविध सेवाओं के आयात में, जो अधिकतर व्यवसाय-सेवाओं से प्रेरित था, सर्वाधिक गिरावट आयी, जिसके बाद यात्रा और परिवहन सेवा का स्थान है (सारणी 6.27)।

6.59 यात्री सेवाएँ, जिनमें खाद्य, हॉटेल एवं परिवहन जैसे क्षेत्रों में विदेशी पर्यटकों के माध्यम से आमदनी शामिल है, भारत में विदेशी पर्यटकों के आगमन से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हुई हैं और वे घरेलू उपभोग मांग को प्रभावित करती हैं। भारत में विदेशी पर्यटकों के आगमन में

चार्ट VI.9 : व्यापार संबद्ध सेवाएँ

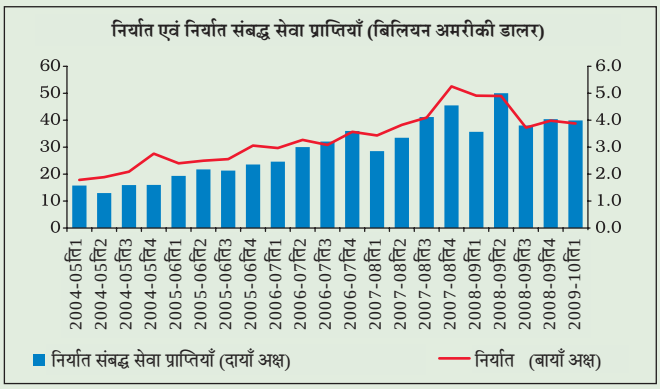

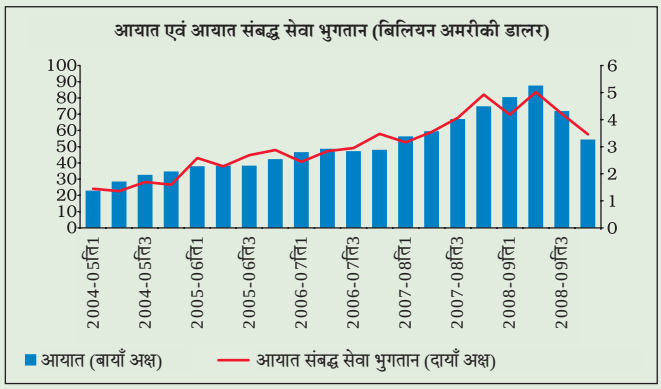

सारणी 6.27 : सेवा निर्यात और आयात में वृद्धि (अमरीकी डालर)

(प्रतिशत)

कोटि	2000-2001	2001-2002	2002-2005	2005-2008	2008-2009: छ1	2008-2009: छ2	2009-2010: छ1
1	2	3	4	5	6	7	8
			निर्यात				
सेवा	3.6	5.4	37.2	27.8	28.9	-0.5	-18.5
यात्रा	15.2	-10.3	30.0	19.5	22.0	-20.1	-8.8
परिवहन	19.9	5.6	29.9	28.9	37.9	-8.0	-10.6
बीमा	16.9	6.7	49.8	23.9	0.4	-25.2	6.1
विविध	-3.4	12.6	41.9	29.8	29.4	5.0	-21.5
			आयात				
सेवा	25.2	-5.2	29.3	23.6	17.3	-15.5	-4.9
यात्रा	31.1	7.5	21.5	21.9	23.1	-13.9	-9.8
परिवहन	47.6	-2.6	20.2	41.1	39.1	-11.3	-29.4
बीमा	82.8	25.6	42.5	24.9	13.9	3.8	22.9
विविध	14.4	-11.7	38.3	23.9	6.6	-20.6	8.7

छ1: अप्रैल-सितंबर; छ2: अक्तूबर-मार्च.
स्रोत : भारतीय रिज़र्व बैंक

वृद्धि, जो वर्ष 2007 में 14.3 प्रतिशत थी, वह वर्ष 2008 में घट कर (-) 4.0 प्रतिशत रह गयी (सारणी 6.28)। वास्तव में, वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही के दौरान, जब वैश्विक वित्तीय संकट अपने चरम पर था, व्यापार, हॉटेल, परिवहन और संचार क्षेत्र की वृद्धि में

सारणी 6.28 : पर्यटन क्षेत्र से भारत की विदेशी मुद्रा आय

अवधि	विदेशी पर्यटकों का आगमन (प्रतिशत वृद्धि)			विदेशी मुद्रा आय (बिलियन अमरीकी डालर)		
1	2	3	4	5	6	7
माह	**2007**	**2008**	**2009**	**2007**	**2008**	**2009**
जनवरी	16.6	4.5	-17.6	1.1	1.4	0.9
फरवरी	14.3	21.9	-10.6	1.0	1.3	0.9
मार्च	20.8	1.5	-12.9	0.9	1.2	0.9
अप्रैल	13.4	3.0	-3.5	0.8	0.9	0.8
मई	8.6	9.9	-1.9	0.6	0.7	0.7
जून	11.5	10.0	0.2	0.7	0.8	0.8
जुलाई	18.5	8.0	0.6	0.8	0.9	1.0
अगस्त	17.8	6.9	-8.6	0.8	0.8	0.9
सितंबर	1.3	13.2	-4.1	0.6	0.7	0.8
अक्तूबर	13.6	1.2	-0.9	1.0	0.9	1.0
नवंबर	20.3	-0.1	-0.6	1.1	1.0	1.2
दिसंबर	10.2	-10.5	21.0	1.3	1.0	1.5
पूरी अवधि	14.3	4.0	-3.3	9.4	10.7	11.4

*: वृद्धि दर जनवरी-अक्तूबर 2009 की अवधि के लिए है।
स्रोत : पर्यटन मंत्रालय

गिरावट आ कर वह 12.5 प्रतिशत से 6.1 प्रतिशत पर आ गयी, जो यात्रा एवं पर्यटन में बाह्य मांग के कम होने के चलते प्रतीत होती है।

धन-प्रेषण

6.60 भारत की वास्तविक अर्थव्यवस्था पर वैश्विक आघात के संचरण की एक और सरणी अंशत: धन-प्रेषण सरणी हो सकती है। हाल ही में भारत में आवक धन-प्रेषणों के भौगोलिक स्रोत में एक सूक्ष्म बदलाव देखा गया है, जिसमें खाड़ी क्षेत्र, यूरोप और अफ्रीका से धन-प्रेषण में वृद्धि देखी गयी है, जबकि उत्तरी अमेरिका और पूर्वी एशिया से धन-प्रेषण में गिरावट देखी गयी है। तथापि, धन-प्रेषण के दो महत्त्वपूर्ण मूल स्रोत अमेरिका और तेल उत्पादक खाड़ी के देश हैं। यह अनुमान है कि ये दो क्षेत्र भारत के कामगारों द्वारा भेजे गये धन के लगभग दो-तिहाई हिस्से में योगदान करते हैं। जबकि अमेरिका से आनेवाला धन वहाँ के आर्थिक कार्यकलाप से प्रभावित होता है, खाड़ी के देशों से आनेवाला धन तेल राजस्व में प्रतिबिंबित कार्यकलाप की गति से अनुकूलित होता है। हाल के संकट के दौरान, जबकि अमेरिका से आनेवाला धन वहाँ के वास्तविक कार्यकलाप में तीव्र संकुचन तथा प्रवासियों के बीच बेरोजगारी से प्रभावित हुआ हो सकता है, खाड़ी के देशों से आने वाले धन पर वैश्विक संकट का प्रतिकूल प्रभाव तेल मूल्यों में गिरावट के माध्यम से कार्य कर रहा प्रतीत होता है, जिसने बदले में खाड़ी क्षेत्र में निर्माण और सेवा-क्षेत्रों में प्रवासी रोजगार को प्रभावित किया हो सकता है। हाल की अवधि के दौरान, जिसमें संकट की अवधि शामिल है, तेल के मूल्य और धन-प्रेषण में समकालिक उतार-चढ़ाव दिखाई पड़ा, जो भारत में आवक धन-प्रेषण में तेल मूल्य प्रेरित कटौती के ऋणात्मक प्रभाव को परिपुष्ट करता है (चार्ट VI.10)। आवक धन-प्रेषण में कटौती, विशेष रूप से न्यून मूल्य वाले धन-प्रेषण में कटौती, आश्रित परिवारों की प्रयोज्य आय को सीधे प्रभावित करती है और, इसीलिए उनके खर्च करने की प्रवृत्ति को प्रभावित करती है। यह मानते हुए कि भारत में आवक धन-प्रेषण का एक बड़ा हिस्सा (भारत में कुल आवक धन-प्रेषण के 50 प्रतिशत से अधिक) परिवार के निर्वाह के लिए होता है, वैश्विक आघात के बाद आवक धन-प्रेषण में ऋणात्मक वृद्धि आश्रित परिवारों की उपभोग मांग पर प्रतिकूल प्रभाव डाल चुकी हो सकती है।

6.61 तदनुसार, उन्नत देशों और खाड़ी के देशों से भारत में आने वाले निजी धन-प्रेषण, जिनमें वर्ष 2008-09 की पहली छमाही तक

चार्ट VI.10 : धन-प्रेषण : प्रवृत्ति और अंतरराष्ट्रीय तेल मूल्यों के साथ संबंध

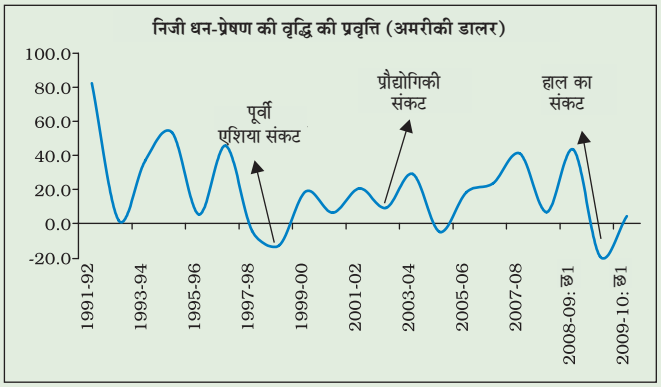

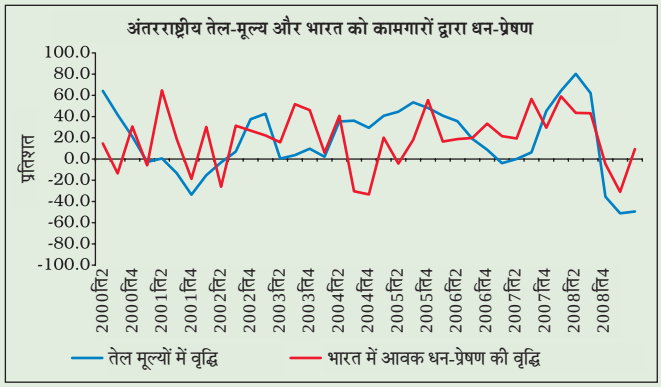

उछाल बना रहा, को धक्का लगा और उसमें वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में गिरावट आयी। वास्तव में, निजी धन-प्रेषण में वृद्धि, जो वर्ष 2008-09 की पहली छमाही में 46.3 प्रतिशत पर थी, वह गिर कर दूसरी छमाही में (-)19.4 प्रतिशत पर आ गयी, लेकिन वर्ष 2009-10 की पहली छमाही में सुधर कर 4.3 प्रतिशत हो गयी। पूर्व में आये अंतरराष्ट्रीय संकटों, यथा, पूर्वी एशिया संकट (1997 और 1998) तथा प्रौद्योगिकी संकट (2000 और 2001), के दौरान भी भारत में आने वाले निजी धन-प्रेषण की प्रवृत्ति वैश्विक आर्थिक गति सिद्धांत के अनुरूप रही और उसमें तीव्र गिरावट दिखाई पड़ी।

सॉफ्टवेयर निर्यात

6.62 भारत सॉफ्टवेयर सेवाओं के निर्यातकों में शीर्ष स्थान पर बना रहा, जिसके बाद आयरलैंड का स्थान है (सारणी 6.29)। चूँकि वैश्विक बैंक और वित्तीय संस्थाएँ, जो वर्तमान वैश्विक वित्तीय संकट से बुरी तरह प्रभावित हुई थीं, भारतीय सॉफ्टवेयर प्रदाताओं के बड़े ग्राहक थे, अत: वैश्विक संकट का प्रभाव ऐसी संस्थाओं को किये जाने वाले निर्यात में गिरावट के रूप में पड़ा प्रतीत होता है।

6.63 हालाँकि भारत का सॉफ्टवेयर निर्यात वर्षों से तगड़ा बना रहा था, संकट के चलते वैश्विक मांग में गिरावट आने का प्रभाव सॉफ्टवेयर कंपनियों के निर्यात कार्यसंपादन पर कुछ हद तक हुआ (सारणी 6.30)। वैश्विक वित्तीय आघात की पृष्ठभूमि में बढ़ते दबाव

सारणी 6.29 : सॉफ्टवेयर सेवा-निर्यात

(बिलियन अमरीकी डालर)

देश	2000	2004	2005	2006	2007	2008
1	2	3	4	5	6	7
1. भारत	**4.7**	**16.3**	**21.9**	**29.1**	**37.5**	**49.4**
2. आयरलैंड	7.5	18.8	19.6	21.0	26.1	34.5
3. जर्मनी	3.8	8.1	8.4	9.9	12.6	15.1
4. युनाइटेड किंगडम	4.3	11.3	10.8	12.6	14.2	12.9
5. युनाइटेड स्टेट्स	5.6	6.7	7.3	10.1	11.6	12.6
6. स्वीडन	1.2	2.5	2.7	3.6	6.5	7.6
7. इजरायल	4.2	4.4	4.5	5.3	5.8	6.9
8. नीदरलैंड्स	1.2	3.7	3.7	5.0	6.4	6.6
9. चीन	0.4	1.6	1.8	3.0	4.3	6.3
10. स्पेन	2.0	3.0	3.6	4.0	5.4	6.1
11. कनाडा	2.4	3.0	3.6	4.3	4.6	4.6
12. बेल्जियम	....	2.4	2.6	2.9	3.0	3.7

स्रोत : बीओपीएसवाई, आईएमएफ, अक्तूबर 2009

सारणी 6.30 : भारत का सॉफ्टवेयर सेवा निर्यात

(बिलियन अमरीकी डालर)

वर्ष	आईटी सेवा निर्यात	इंजीनियरिंग सेवाएँ	आईटीइएस-बीपीओ सेवाएँ	कुल सॉफ्टवेयर सेवा निर्यात
1	2	3	4	5
1995-96	0.8	–	–	0.8
2000-01	5.3	–	0.9	6.2
2001-02	6.2	–	1.5	7.6
2002-03	7.0	–	2.5	9.5
2003-04	7.3	2.5	3.1	12.9
2004-05	10.0	3.1	4.6	17.7
2005-06	13.3	4.0	6.3	23.6
2006-07	17.8	4.9	8.4	31.1
2007-08	23.1	6.4	10.9	40.4
2008-09	26.5	7.1	12.7	46.3

आईटीइएस : आईटी-समर्थित सेवाएँ, बीपीओ : व्यवसाय प्रक्रिया आउटसोर्सिंग

टिप्पणी : इंजीनियरिंग सेवा निर्यात का विश्लेषित विवरण 2003-04 और उसके बाद से उपलब्ध है; उस वर्ष के पहले उन्हें आईटी सेवाओं के साथ जोड़ा जाता था

स्रोत : सॉफ्टवेयर और सेवा कंपनियों का राष्ट्रीय एसोसिएशन (नैसकॉम)

के बावजूद वर्ष 2008-09 की पहली छमाही तक स्थिर बने रहने के बावजूद वे वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही से मांग में गिरावट के चलते झुक गये और उनकी वृद्धि में तीव्र गिरावट आयी (बॉक्स VI.6)।

6.64 संक्षेप में, विश्व आय के प्रति भारत के निर्यात के अत्युच्च लोच को ध्यान में रखते हुए, संकुचित होती विश्व-आय का प्रभाव वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही से वणिक माल व्यापार में समग्र गिरावट

बॉक्स VI.6
वैश्विक संकट और सॉफ्टवेयर निर्यात पर इसका प्रभाव

भारत का सूचना प्रौद्योटगिकी और व्यवसाय प्रक्रिया आउटसोर्सिंग (आईटी-बीपीओ) उद्योग कालक्रम में अर्थव्यवस्था में वृद्धि, निर्यात-आय, निवेश, रोजगार और समग्र आर्थिक एवं सामाजिक विकास के संदर्भ में एक प्रमुख क्षेत्र के रूप में उभरा है। इस क्षेत्र की बाह्य मांग पर निर्भरता को देखते हुए वर्तमान वैश्विक मंदी इस क्षेत्र के लिए प्रमुख चिंता का विषय बन कर उभरी है। वर्तमान संकट ने अनेक उन्नत देशों में वित्तीय संस्थाओं की बढ़ती हानियों की अगुआई की, मुख्यत: वर्ष 2008-09 में अमेरिका में, जो मुख्यत: भारतीय कंपनियों की सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) एवं आईटी संबद्ध सेवाओं पर बहुत हद तक निर्भर करती हैं और बड़ी संख्या में भारतीयों की नियुक्ति भी करती हैं। यह बात प्रचुरता से स्पष्ट होती है कि भारत के सॉफ्टवेयर उद्योग की वृद्धि का हाल की अवधि में अमेरिका की जीडीपी वृद्धि के साथ सहसंबंध रहा है।

पुन: अमेरिका की जीडीपी वृद्धि का भारतीय सॉफ्टवेयर उद्योग की वृद्धि के लिए क्या महत्त्व है, इसकी गवेषणा करने के लिए भारत के सॉफ्टवेयर निर्यात, बाह्य मांग स्थितियों और विनिमय दर उतार-चढ़ाव के बीच सह-एकीकरण संबंध का अनुमान लगाते हुए की गयी है। इस अनुमान से प्रकट होता है कि मध्यावधि से दीर्घावधि में अमेरिका के कार्यकलाप-स्तर (लॉग वाइयुएस) में एक प्रतिशत की वृद्धि होने से भारत के सॉफ्टवेयर निर्यात (लॉग एक्ससॉफ्ट) में 4 प्रतिशत की वृद्धि होती है। जहाँ तक विनिमय दर का संबंध है, विनिमय दर में एक प्रतिशत का ह्रास (लॉग इआरयूएसडी) होने से दीर्घावधि में सॉफ्टवेयर निर्यात में लगभग 2 प्रतिशत की वृद्धि होगी (सारणी 1)। यह उल्लेखनीय है कि भारत के सॉफ्टवेयर निर्यात का बीजक बनाने में अमरीकी डालर एक प्रमुख मुद्रा होती है, जो कुल सॉफ्टवेयर निर्यात के लगभग 75 प्रतिशत के लिए जिम्मेवार है। इस प्रकार सह-एकीकरण संबंध भारत के सॉफ्टवेयर निर्यात के लिए बाह्य मांग का निर्धारण करने में मेजबान देश में वास्तविक कार्यकलाप के प्रभुत्व को रेखांकित करता है।

सारणी 1: भारत को सॉफ्टवेयर निर्यात का दीर्घावधि सह-एकीकरण पथ

वैरिएबल्स	गुणांक
Log X^{soft}_{t-1} (सामान्यीकृत)	1.000
Log Y^{US}_{t-1}	4.20 (3.28)
Log E^{RUSD}_{t-1}	2.26 (9.57)
इंटरसेप्ट	40.44

वैरिएंस टिकंपोजिशन विश्लेषण से यह प्रकट होता है कि सॉफ्टवेयर निर्यात (Log Xsoft) के विलंबित मूल्य प्रमुख रूप से अल्पावधि में भारत के सॉफ्टवेयर उद्योग की प्रवृत्ति को स्पष्ट करते हैं (सारणी 2)। मेजबान देश (Log Y^{us}) के वास्तविक कार्यकलाप मध्यावधि से दीर्घावधि में भारत के सॉफ्टवेयर उद्योग की प्रवृत्ति को स्पष्ट करते हैं। भारत के सॉफ्टवेयर निर्यात मांग पर सांकेतिक विनिमय दर का प्रभाव भी अल्पावधि से दीर्घावधि में महत्त्वपूर्ण होता है, यद्यपि कालक्रम में इसमें कमी आती है। इससे यह प्रचुरता से प्रदर्शित होता है कि एक बड़े बाह्य मांग आघात ने भारत के सॉफ्टवेयर निर्यात को प्रभावित किया।

यद्यपि भारत के सॉफ्टवेयर निर्यात वर्षों से तगड़े बने रहे थे, फिर भी वैश्विक मांग में कमी आने का प्रभाव कुछ हद तक निर्यात कार्यसंपादन पर पड़ा, जो बाह्य मांग आघातों के महत्त्व को परिपुष्ट करता है, जैसाकि अनुमानित परिणामों से स्पष्ट है।

चार्ट : सॉफ्टवेयर निर्यात और बाह्य मांग

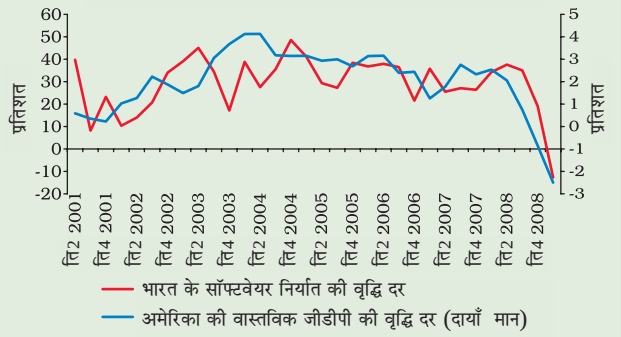

सारणी 2: सॉफ्टवेयर निर्यात का वैरिएंस डिकंपोजिशन

तिमाही	Log X^{soft}	Log Y^{US}	Log E^{RUSD}
1	63.2	0.3	36.5
4	40.6	14.0	45.4
8	15.5	41.9	42.6
12	7.0	62.3	30.7
16	3.9	71.1	25.1
20	2.4	75.7	21.9

में प्रतिबिंबित हुआ है। अनुभवमूलक दृष्टि से यह पाया गया कि गिरते वणिक माल व्यापार ने भारतीय अर्थव्यवस्था की समग्र वृद्धि पर खरोंच लगायी। यह देखा गया कि संकट के दौरान इंजीनियरी और रासायनिक वस्तुओं के निर्यात में समुत्थान बना रहा। फर्म-स्तरीय निर्यात उन्मुखता भी भारत के विनिर्माण क्षेत्र की वृद्धि में व्यापार सरणी के बढ़ते महत्त्व का प्रदर्शन करती है। एक ओर, संकुचित होते वणिक माल आयात ने सकल मांग के लिए गुंजाइश प्रदान की; दूसरी ओर, गैर-तेल आयात में गिरावट ने उद्योग की बढ़ती आयात-तीव्रता की पृष्ठभूमि में वृद्धि को निवेश के माध्यम से ऋणात्मक रूप से प्रभावित किया। इसके साथ ही, भारतीय अर्थव्यवस्था पर मूल्य आघात मुख्यत: तेल और खाद्यान्न मूल्य के माध्यम से संचरित हुआ।

6.65 समग्रत: देखा जाये, तो वैश्विक आर्थिक संकट के स्पिलओवर प्रभाव से चालू खाता संतुलन मुख्यत: वणिक माल व्यापार मार्ग से वर्ष 2008-09 के दौरान प्रभावित हुआ। जीडीपी के प्रतिशत के रूप में चालू खाता घाटा वर्ष 2008-09 में बढ़ कर 2.4 प्रतिशत हो गया, जिसका कारण था बिगड़ती वैश्विक स्थिति की पृष्ठभूमि में विस्तारित व्यापार घाटा। भारतीय अर्थव्यवस्था पर व्यापार सरणी के प्रभाव पर चर्चा करने के बाद वित्तीय सरणी के माध्यम से स्पिलओवर प्रभाव की छानबीन निम्नलिखित खंड में की गयी है।

III. वित्तीय सरणी के माध्यम से भारत पर प्रभाव

6.66 वित्तीय सरणी का घरेलू निवेश कार्यकलाप पर स्पष्ट प्रभाव पड़ता है। वास्तव में यह तर्क दिया जाता रहा है कि भारत के मामले में सुधार-पश्चात् अवधि के दौरान देशी निवेश में विदेशी बचत की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो गयी है (बॉक्स VI.7)। भारत की निवेश मांग पर वैश्विक आघातों का संचरण अनेक सरणियों के माध्यम से हो सकता है। इनमें पूँजी प्रवाह की प्रमुख सरणियाँ शामिल हैं, यथा, एफडीआई, संविभाग अंतर्वाह, बाह्य वाणिज्यिक उधार, व्यापार ऋण और बैंकों के समुद्रपार उधार। ब्याज दर सरणी के अतिरिक्त, चलनिधि और ऋण जोखिम भी घरेलू निवेश कार्यकलाप को प्रभावित कर सकते हैं। प्रत्याशा सरणी, जो ईएमई आस्तियों के जोखिम-बोध में अचानक हुए परिवर्तन, निवेश वातावरण के बारे में अनिश्चितता और विनिमय दर उतार-चढ़ाव में तेज बदलाव की द्योतक है, का भी महत्त्वपूर्ण संबंध घरेलू निवेश मांग के साथ होता है।

6.67 वित्तीय सरणी के माध्यम से प्रसारित वैश्विक आघातों का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष, दोनों प्रकार का प्रभाव उपभोग और निवेश पर हो सकता है। ऐसे आघातों ने भारत में घरेलू उपभोग को निम्नलिखित तरीके से प्रभावित किया हो सकता है। पहला, वैश्विक आघातों की अनुक्रिया में इक्विटी मूल्यों में तीव्र सहसंबंध ने पारिवारिक धन के बड़े हिस्से का क्षय किया, जिसने बदले में उपभोग मांग को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया हो सकता है, क्योंकि पारिवारिक धन के क्षय का संबंध वर्ष 2008-09 के दौरान निजी अंतिम उपभोग मांग में तीव्र गिरावट के साथ था। दूसरा, बैंकों और वित्तीय संस्थाओं की विदेशी बाजारों में कम पहुँच ने उनकी घरेलू बाजार में उधार देने की क्षमता को घटाया, जिसमें परिवारों को ऋण देना शामिल था, जिसने बदले में उपभोग मांग को प्रभावित किया हो सकता है। तीसरा, व्यापार वित्त में संकुचन ने आघातों को और, इस प्रकार घरेलू उपभोग को, प्रभावित किया हो सकता है। चौथा, समुद्रपार उधार पर उच्चतर ऋण स्प्रेड बैंक ऋण के लिए मांग को बढ़ा देता है, जो बदले में बैंकों द्वारा ऋण की राशनिंग का कारण बनता है। संकट के दौरान बैंकों का झुकाव उपभोग प्रयोजनों के लिए ऋण को घटाने की ओर था, क्योंकि उनके जोखिम-बोध में महत्त्वपूर्ण रूप से परिवर्तन हुआ।

6.68 भारत में वित्तीय खुलेपन के साथ पूँजी प्रवाह की संरचना में उल्लेखनीय बदलाव सुधार की अवधि के बाद देखा गया। पूँजीगत खाता का क्रमिक उदारीकरण, ऋण से ऋणेतर प्रवाह पर जोर में बदलाव, वित्तीय बाजार विकास और तगड़ी वृद्धि संभावना ने भारत क ाट विदेशी निवेश प्रवाह का अधिकाधिक महत्त्वपूर्ण गंतव्य स्थल बनाने में मदद की। तदनुसार, विदेशी निवेश-प्रवाह, जिसमें प्रत्यक्ष और संविभाग इक्विटी प्रवाह शामिल हैं, 1990 के दशक की सुधार अवधि में पूँजी प्रवाह के प्रधान स्रोत बन गये, जबकि 1970 और 1980 के दशकों की सुधार-पूर्व अवधि में पूँजी प्रवाह के स्रोत ऋण और बाह्य सहायता होते थे (चार्ट VI.11)। यद्यपि अधिक हाल की अवधि में ऋण प्रवाह का पुनरुत्थान देखा गया, 1970 और 1980 के दशक के विपरीत, जब ऋण प्रवाह अधिकतर आधिकारिक स्रोतों से होते थे, यह निजी ऋण प्रवाह से प्रेरित होता था, जो सामान्यत: पूँजीगत खाते के उदारीकरण के प्रभाव को और उधारदाता के भारतीय अर्थव्यवस्था में भरोसे के चलते कारपोरेटों द्वारा अनुभव की गयी ऋण की बेहतर शर्तों को प्रतिबिंबित करता है। भारत में पूँजी प्रवाह का एक अनोखा लक्षण यह था कि हाल के वैश्विक संकट के दौरान भी,

बॉक्स VI.7
भारत में विदेशी बचत और निवेश

पूँजी प्रवाह की संरचना में बदलाव ने विदेशी और देशी बचत के बीच बदलते कार्य-कारण संबंध के बीच विदेशी बचत की भूमिका को आलोकित किया। 1980 के दशक तक चालू खाता घाटा मुख्यत: सरकार के राजकोषीय घाटे को प्रतिबिंबित करता था, लेकिन सुधार-अवधि में लगभग पूरी तरह से देशी पारिवारिक बचत के माध्यम से रोजकोषीय घाटे और वित्तपोषण का संपीडन किये जाने के साथ ये दोनों घाटे विलुप्त हो गये (चार्ट)। क्रमिक रूप से खुले पूँजीगत खाते के साथ, चालू खाता अंतराल अब मुख्यत: निजी क्षेत्र अवशोषण को प्रतिबिंबित करता है। दूसरा, अब विदेशी बचत योजनाबद्ध तरीके से नहीं होती; वे अब बाजार के एजेंटों की पसंद को प्रतिबिंबित करती हैं, जो प्रवर्तक देशों के पुश फैक्टर और मेजबान देश के पुल फैक्टर द्वारा प्रेरित होती है। यह तर्क दिया जाता है कि निवेश को घरेलू बचत की उपलब्धता द्वारा नियंत्रित नहीं किया जाना चाहिए, और कि घरेलू बचत और निवेश के बीच न्यून सहसंबंध हो सकता है। यह सुनिश्चित स्थायी आय परिकल्पना पर आधारित है, जो उपभोग को सहज बनाने के लिए किसी खुली अर्थव्यवस्था में अंतरराष्ट्रीय बाजारों से लिये गये उधार में रूपांतरित होती है।

चार्ट : भारत में युगल घाटों में उतार-चढ़ाव

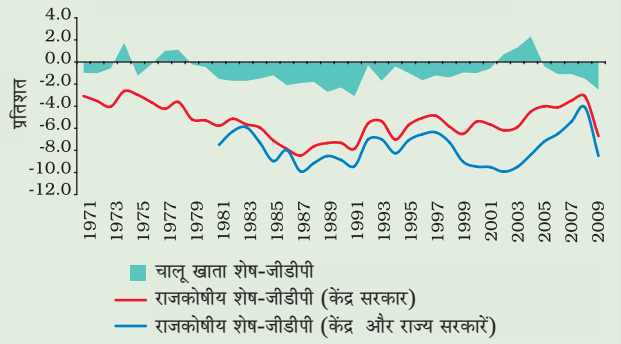

भारत के लिए बचत-निवेश संबंध के अनुभवमूलक विश्लेषण ने, जो घरेलू बचत दर (S), घरेलू पूँजी निर्माण दर (I) और चालू खाता शेष-जीडीपी अनुपात (सीएबी) के बीच ग्रैंजर कारणत्व विश्लेषण पर आधारित है, उपयोगी अंतर्दृष्टि प्रदान की। इन परिणामों से व्युत्पन्न एक महत्त्वपूर्ण प्रेक्षण यह है कि सुधार-पूर्व अवधि (1951-1991) में निवेश (ΔI) सीएबी का कारण बना, जिसका तात्पर्य यह है कि योजना में बचत-निवेश अंतराल का वित्तपोषण करने के लिए अपनायी गयी रणनीति के अंतर्गत विशेष रूप से लक्ष्यित निवेश दर ने विदेशी बचत दर को अधिदिष्ट किया (सिंह, 2009)। यह एकदिशीय संबंध सुधार-अवधि (1992-2007) में उलट गया, जिसमें सीएबी ने ΔI को ग्रैंजर प्रभावित किया, जिसका तात्पर्य यह हुआ कि खुले चालू खाते और पूँजी प्रवाह के उदारीकरण के साथ विदेशी बचत भी निवेश दर को प्रेरित कर रही थी, क्योंकि इनमें से पहले का निर्धारण बाजार एजेंटों के निर्णय द्वारा किया जाता था।

पेयरवाइज ग्रैंजर कॉजेलिटी टेस्ट

नल्ल हाइपोथेसिस	एफ स्टैटिस्टिक	संभावना मूल्य
1951-1991		
ΔI सीएबी को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करता	8.44	0.00
सीएबी ΔI को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करता	2.01	0.15
1992-2007		
ΔI सीएबी को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करता	1.03	0.39
सीएबी ΔI को ग्रैंजर प्रभावित नहीं करता	11.25	0.00

जब निधियों के अन्य स्रोत बंद हो गये थे, एफडीआई अंतर्वाह स्थिर गति से बने रहे, जिससे उनकी दीर्घावधि स्थिरता का महत्त्व समझ में आता है।

6.69 विदेशी निवेश अंतर्वाह की महत्त्वपूर्ण भूमिका घरेलू निवेश में इसके हिस्से से स्पष्ट थी। निवल देशी पूँजी निर्माण में एफडीआई प्रवाह का हिस्सा सुधार-पश्चात् अवधि के दौरान महत्त्वपूर्ण रूप से बढ़ा (चार्ट VI.11)।

चार्ट VI.11 : पूँजी प्रवाह और देशी पूँजी निर्माण

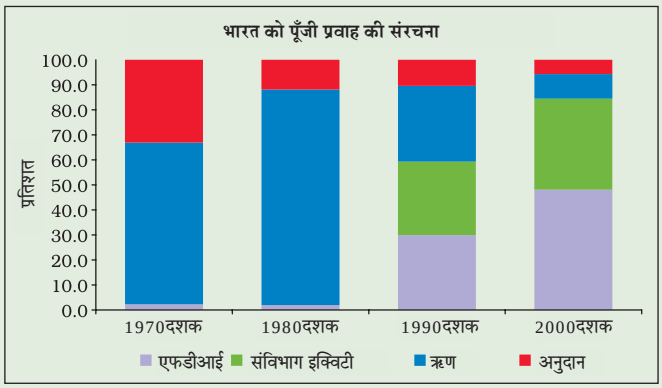

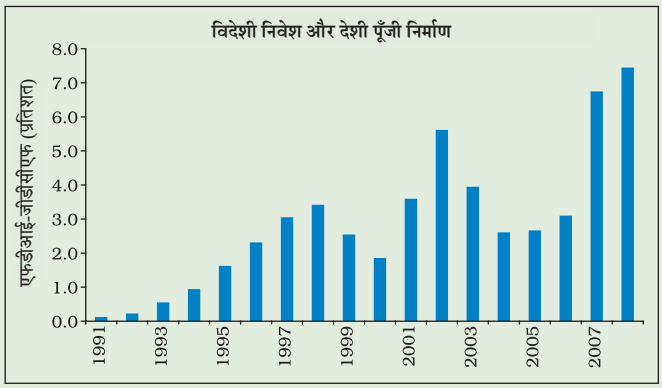

सारणी 6.31 : भारत : निवल पूँजी प्रवाह

(बिलियन अमरीकी डालर)

	2007-08				2008-09				2009-10		
	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
1. विदेशी प्रत्यक्ष निवेश	2.8	2.3	2.1	8.6	9.0	4.9	0.4	3.2	6.1	6.5	3.9
आवक एफडीआई	7.6	4.8	7.8	14.3	11.9	8.8	6.3	8.0	8.7	10.7	7.1
जावक एफडीआई	4.7	2.6	5.8	5.7	2.9	3.9	5.9	4.8	2.6	4.2	3.9
2. संविभाग निवेश	7.5	10.9	12.7	-3.7	-4.2	-1.3	-5.8	-2.7	8.3	9.7	5.7
3. बाह्य सहायता	0.2	0.5	0.6	0.8	0.4	0.5	1.0	0.8	0.01	0.5	0.6
4. ईसीबी	6.9	4.2	6.2	5.2	1.5	1.7	3.8	1.0	-0.5	1.2	1.5
5. बैंकिंग पूँजी	-0.9	6.6	0.2	5.8	2.7	2.3	-5.0	-3.3	-3.4	4.4	1.9
एनआरआई जमाराशियाँ	-0.4	0.4	-0.9	1.1	0.8	0.3	1.0	2.2	1.8	1.0	0.6
6. अल्पावधि व्यापार ऋण	2.0	4.9	3.3	5.8	4.5	1.3	-4.8	-2.6	-1.5	-0.6	3.3
7. अन्य	-2.9	3.8	4.5	5.5	-8.9	-1.4	3.7	5.1	-3.2	0.9	-2.2
कुल (1 से 7)	**15.7**	**33.2**	**29.6**	**28.0**	**4.9**	**7.1**	**-6.1**	**1.4**	**5.9**	**22.6**	**14.7**

6.70 भारतीय अर्थव्यवस्था, अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई)[7] की तरह, द्रुत गति से विश्व अर्थव्यवस्था, विशेष रूप से उन्नत देशों के साथ 1990 के दशक और 2000 के दशक में बढ़ते वित्तीय प्रवाह के माध्यम से एकीकृत हो गयी। वर्ष 2007 के बाद वाले हिस्से में उन्नत देशों के वित्तीय बाजारों में हुई उथल-पुथल का प्रभाव भारत पर भी वित्तीय सरणी के माध्यम से हुआ, जो पूंजी प्रवाह, विशेष रूप से संविभाग निवेश में, गिरावट या प्रतिवर्तन के माध्यम से हुआ, बावजूद इसके कि यहाँ ठोस समष्टिआर्थिक मौलिक तत्व एवं बैंकिंग प्रणाली थे (सारणी 6.31)।

विदेशी निवेश

6.71 संकट के दौरान वैश्विक वित्तीय संस्थाओं ने, महत्त्वपूर्ण वैश्विक डिलिवरेजिंग के भाग के रूप में, भारत से महत्त्वपूर्ण संविभाग निवेश वापस ले लिये, जैसाकि उन्होंने वर्ष 2008-09 के दौरान अन्य ईएमई में किया था, बावजूद इसके कि यहाँ तगड़े समष्टिआर्थिक मौलिक तत्व विद्यमान थे। अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों के स्थिर होते जाने और भारत में शीघ्र ही संकट से उबरने को प्रधान कारक मानते हुए संविभाग अंतर्वाह संकट के बाद फिर से होने लगा, जिसमें वर्ष 2009-10 के दौरान निवल अंतर्वाह हुआ (सारणी 6.32)।

6.72 दूसरी ओर, भारत में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश चालू वैश्विक संकट से लगभग निरापद बना रहा। वर्ष 2008-09 और 2009-10 के दौरान एफडीआई अंतर्वाह में अनवरत उछाल ने भारतीय अर्थव्यवस्था के अपेक्षाकृत तगड़े समष्टिआर्थिक मौलिक तत्वों को और भारत की

सारणी 6.32 : भारत में विदेशी निवेश

(बिलियन अमरीकी डालर)

अवधि	संविभाग निवेश			एफडीआई (निवल)	
	अंतर्वाह	बहिर्वाह	निवल	आवक	जावक
1	2	3	4	5	6
2006-07:ति1	30.8	31.3	-0.5	3.4	-1.7
2006-07:ति2	17.9	15.8	2.1	4.4	-2.3
2006-07:ति3	28.6	25.1	3.6	9.8	-7.0
2006-07:ति4	32.2	30.4	1.8	5.1	-4.1
2007-08:ति1	34.7	27.2	7.5	7.5	-4.7
2007-08:ति2	48.7	37.8	10.9	4.7	-2.6
2007-08:ति3	78.1	63.3	14.8	7.9	-5.8
2007-08:ति4	74.2	78.0	-3.8	14.2	-5.7
2008-09:ति1	40.7	44.9	-4.2	11.9	-2.9
2008-09:ति2	42.6	43.9	-1.3	8.8	-3.9
2008-09:ति3	26.6	32.4	-5.8	6.3	-5.9
2008-09:ति4	18.6	21.2	-2.6	8.0	-4.8
2009-10:ति1	38.6	30.2	8.3	8.7	-2.6
2009-10:ति2	44.4	34.7	9.7	10.7	-4.2
2009-10:ति3	35.8	30.1	5.7	7.1	-3.2

स्रोत : भारतीय रिज़र्व बैंक।

[7] उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के बैंकों द्वारा उभरती बाजार वित्तीय आस्तियों और सीमापार उधार, दोनों में विदेशी निजी संविभाग निवेश में हाल के संकट से पूर्व की अवधि में महत्त्वपूर्ण बढ़ोतरी हुई। इस प्रकार, ईएमई में सकल निजी पूँजी अंतर्वाह, वर्ष 2003 में उनके संयुक्त जीडीपी के 4 प्रतिशत से बढ़ कर वर्ष 2007 में 10.7 प्रतिशत हो गया, जबकि वर्ष 1992 और 1996 के बीच यह 4.7 प्रतिशत से बढ़ कर 5.7 प्रतिशत हो गया (बीआइएस, 2008/09)।

दीर्घावधि निवेश-गंतव्य-स्थल के रूप में मान्यता दिये जाने को प्रतिबिंबित किया। वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में कुछ गिरावट के बावजूद एफडीआई अंतर्वाह आरोही वक्र पर आ गये और वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही से निवेश में और अधिक तेजी आयी, जो समष्टिआर्थिक मौलिक तत्वों में भरोसे को दुहराता है।

6.73 यह जानना रोचक होगा कि निर्गामी एफडीआई भी हाल की अवधि के दौरान तगड़ा बना रहा, जिसका कारण था भारतीय फर्मों द्वारा अपने उत्पादन, विपणन एवं वितरण नेटवर्क समुद्रपार स्थापित करना, ताकि वे नयी प्रौद्योटगिकी और प्राकृतिक संसाधनों तक पहुँच प्राप्त करके वैश्विक पैमाने पर अपने लक्ष्य को हासिल कर सकें। भारतीय कारपोरेटों द्वारा किये गये समुद्रपार निवेश में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही के दौरान काफी उछाल आया, बावजूद इसके कि अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजार में उस समय टांसमान स्थिति थी। भारतीय कंपनियों, विशेष रूप से विनिर्माण क्षेत्र में, ने अपने समुद्रपार अभिग्रहणों का निधीयन वैश्विक ऋण बाजारों की बिगड़ती स्थिति की पृष्ठभूमि में घरेलू विदेशी मुद्रा बाजार से चलनिधि प्राप्त कर किया।

बाह्य वाणिज्यिक उधार (ईसीबी)

6.74 कारपोरेटों द्वारा ईसीबी का आश्रय मुख्यत: पूँजीगत वस्तुओं के आयात, परियोजना वित्तपोषण और संयंत्र के आधुनिकीकरण एवं क्षमता-विस्तार के लिए लिया जाता है, जो देश में बढ़ते निवेश कार्यकलाप का संकेत होता है। भारतीय कारपोरेटों द्वारा वाणिज्यिक उधार में भी वर्ष 2008-09 की पहली छमाही से तेज गिरावट आयी है और, वर्ष के दौरान, भारत में सकल वाणिज्यिक उधार का संवितरण वर्ष 2007-08 में किये गये संवितरण का लगभग आधा हुआ। वर्ष 2009-10 की पहली छमाही के दौरान वाणिज्यिक उधार के संवितरण में और कमी आयी, जबकि अदायगियाँ उतनी ही तगड़ी थीं, जितनी कि पूर्ववर्ती वर्ष में, जिसके परिणामस्वरूप निवल बहिर्वाह हुआ, अलबत्ता सीमांतिक रूप से। तथापि, भारतीय कारपोरेटों द्वारा जुटाये गये वाणिज्यिक उधारों में अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में स्थिरता लौटने तथा देशी अर्थव्यवस्था में वृद्धि की बहाली होने के साथ वर्ष 2009-10 की दूसरी छमाही से उछाल आया।

6.75 एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा यह है कि ईसीबी और औद्योगिक कार्यकलापों के बीच सीधा संबंध नहीं होता, लेकिन परोक्ष संबंध पूंजीगत वस्तुओं के आयात के माध्यम से होता है। चूँकि ईसीबी का अधिकतर उपयोग पूँजीगत वस्तुओं (मशीनरी, उपकरण, आदि) के आयात का वित्तपोषण करने के लिए होता है, ताकि देशी निवेश मांग

चार्ट VI.12 : ईसीबी संवितरण एवं पूँजीगत वस्तुओं का आयात

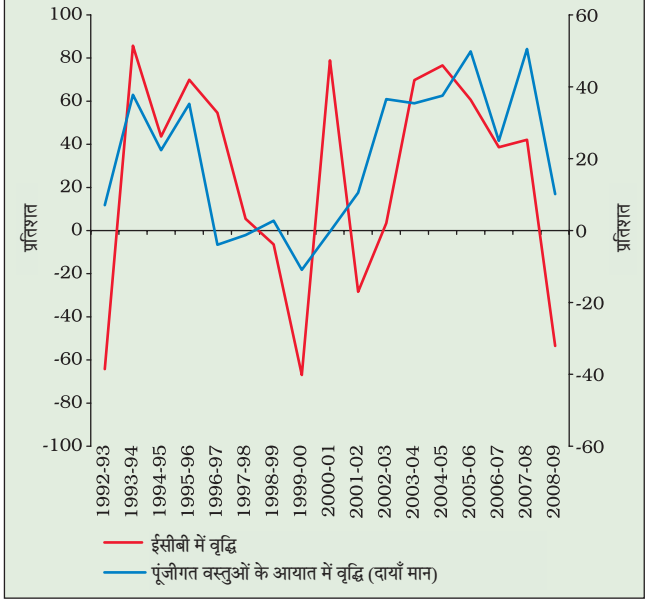

की पूर्ति की जा सके, पूँजीगत वस्तुओं का आयात वह वाहिका होती है, जिसके माध्यम से ऐसे आघातों का संचरण होता है। ईसीबी संवितरण और पूँजीगत वस्तुओं के आयात के बीच संबंध का विश्लेषण यह दर्शाता है कि इन दो वैरिएबलों के बीच निकट का सकारात्मक संबंध होता है (चार्ट VI.12)। इसकी पुष्टि वर्ष 1992-93 से ले कर 2008-09 की अवधि के दौरान वैरिएबलों के बीच उच्च अंश के सहसंबंध (0.55) द्वारा भी होती है। बदले में, पूंजीगत वस्तुओं का आयात औद्योगिक कार्यकलाप की गति पर निर्भर होता है। पूँजीगत वस्तुओं की आयात-वृद्धि औद्योगिक उत्पादन-वृद्धि में उतार-चढ़ाव पर निकट से नजर रखती है। आइआइपी वृद्धि और पूँजीगत वस्तुओं के आयात के बीच सहसंबंध गुणांक को अपेक्षाकृत ऊँचा (0.50) पाया गया है। इस प्रकार, वर्ष 2008-09 के दौरान भारतीय कारपोरेटों क समुद्रपार उधारों में संकुचन ने देशी निवेश कार्यकलाप को बाधित किया (चार्ट VI.12)।

व्यापार ऋण

6.76 अंतरराष्ट्रीय व्यापार ऋण की आपूर्ति भी एक प्रमुख सरणी है, जिसके माध्यम से वैश्विक आघात देशी निवेश और वास्तविक कार्यकलाप में संचरण करते हैं। मौद्रिक नियंत्रण बढ़ाने की अवधि के दौरान जो फर्में बैंक ऋण में कमी से बाध्य होती हैं, वे व्यापार ऋण का अधिकाधिक उपयोग करने का आश्रय लेती हैं। इसी प्रकार, जो फर्में

बैंक ऋण सहित वित्त के विविध स्रोतों तक सीमित पहुँच का अनुभव करती हैं, वे अपने आपूर्तिकर्ताओं को व्यापार ऋण उपलब्ध कराने के बारे में कह सकती हैं। व्यापार ऋण की व्यवस्था सामान्य रूप से अल्पावधि स्वरूप के होने और सम मूल्य पर द्रुत गति से मोचन किये जाने की सक्षमता के कारण किसी बैंक के लिए परिचालनीय रूप से सरलतम आस्ति-श्रेणी के रूप में मानी जाती है, जो बढ़ी हुई जोखिम विमुखता में कभी-कभी कटौती करती है, जो किसी बैंक के लिए संकट की अवधि के दौरान देशजन्य एक्सपोजर में समग्र कटौती की बैंक की नीति के हिस्से के रूप में परिपक्व होने वाले ऋणों का अक्सर पुनर्निर्धारण नहीं करती।

6.77 हाल के वैश्विक ऋण-संकुचन ने निर्यातकों और आयातकर्ताओं को व्यापार ऋण तक पहुँच प्राप्त करने और उसकी लागत की दृष्टि से प्रभावित किया। आईएमएफ (2009) के अनुसार, हाल के वैश्विक संकट के दौरान व्यापार वित्त पर स्प्रेड 100 से ले कर 150 आधार अंक बढ़ कर लिबोर के ऊपर लगभग 400 आधार अंक हो गया, जिसमें देश-जोखिम और काउंटरपार्टी जोखिमें तीव्र हो गयीं। यद्यपि व्यापार वित्त की लागत का बढ़ना वैश्विक था, व्यापार ऋण की उपलब्धता में कमी का अधिक अनुभव ईएमई, विशेष रूप से एशियाई ईएमई, द्वारा किया गया, जहाँ अंतर-क्षेत्रीय व्यापार का अधिक परिमाण न्यून-लाभ मार्जिन मद के रूप में होता है, जो उन्नत अर्थव्यवस्थाओं को किये जाने वाले निर्यात के लिए विनिर्माण आपूर्ति शृंखला का हिस्सा होता है। विनियामकों और बैंकों द्वारा अपने स्वयं के उधार पर लगायी गयी उच्चतर पूँजी की शर्तों ने भी बैंकों की निधि-लागत और उनके ग्राहकों को दिये गये व्यापार वित्त के मूल्य के बीच स्प्रेड को बढ़ाया। इसके अतिरिक्त, चूक के भय/काउंटरपार्टी जोखिम के चलते बैंकों को उधार संबंधी दिशा-निर्देश को कड़ा करना पड़ा।

6.78 व्यापार ऋण में कमी के एक प्रमुख हिस्से ने न्यून व्यापार परिमाण और पण्य-मूल्य को प्रतिबिंबित किया, लेकिन इस कमी का कारण व्यापार-वित्त का द्वितीयक बाजार में उपलब्ध नहीं होना और उन बैंकों से ऋण-व्यवस्था में कमी होना माना जा सकता है, जो इस प्रकार का वित्त प्रदान करने में विशेषज्ञताप्राप्त होते हैं (बीआइएस,2008-09)। इस पृष्ठभूमि में, भारत को प्राप्त होने वाले अल्पावधि व्यापार ऋण में वर्ष 2008-09 की पहली छमाही में गिरावट आयी, लेकिन दूसरी छमाही के दौरान यह गिरावट और तेज हो गयी। दूसरी ओर, भारतीय कारपोरेट विद्यमान व्यापार ऋण का पुनर्निर्धारण करने में कठिनाई का अनुभव कर रहे थे और, इसीलिए, अल्पावधि ऋणों की अदायगी तेजी से बढ़ी, जिसके परिणामस्वरूप वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में पूँजी का निवल बहिर्वाह हुआ (चार्ट VI.13)। इस प्रकार, भारत के अल्पावधि व्यापार ऋण के सकल संवितण में वर्ष 2008-09 में तेजी से गिरावट आयी; तथापि, अदायगियों में तेजी से

चार्ट VI.13 : वित्तीय सरणी के संकेतक

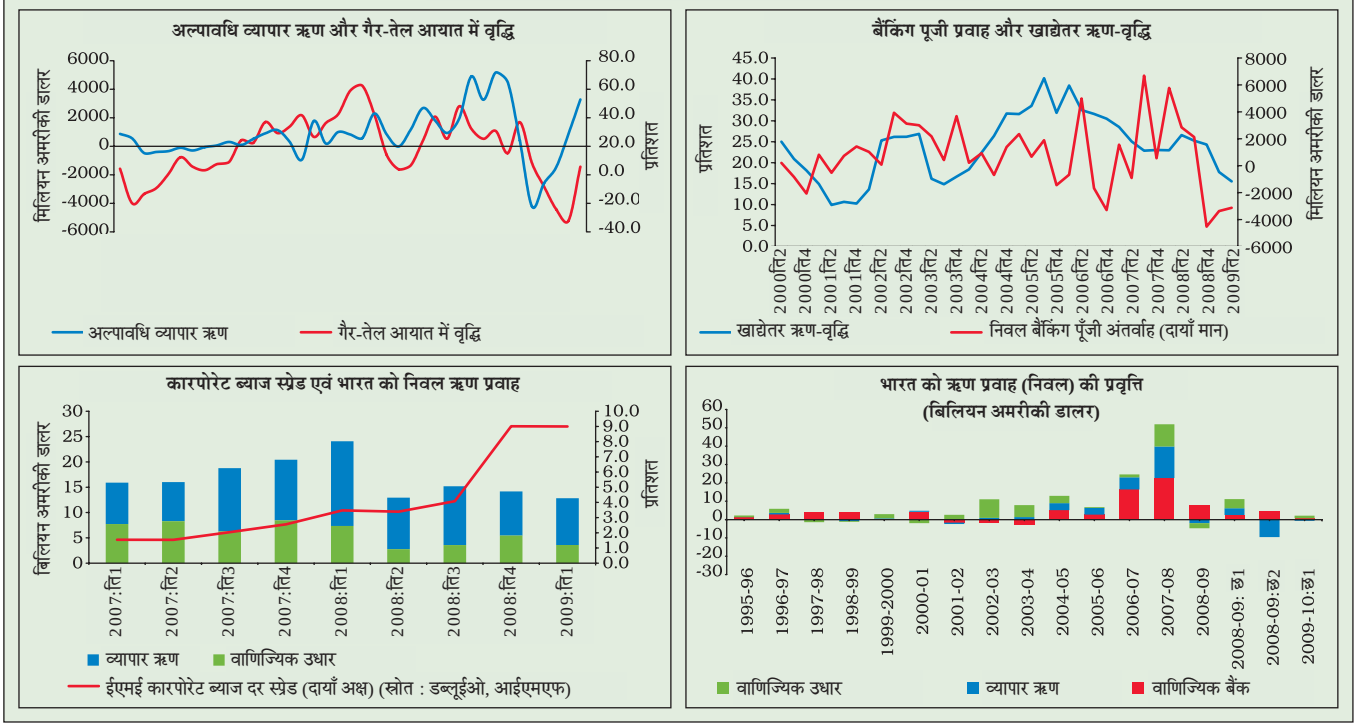

वृद्धि हुई, जिसका मुख्य कारण था पुनर्निर्धारण में समस्या उत्पन्न होना। स्थिर होते वैश्विक वित्तीय बाजारों और देश में वृद्धि में पुनरुत्थान होने के साथ व्यापार ऋण संवितरण में वर्ष 2009-10 के आरंभ से पुनरुत्थान हुआ और इसके परिणामस्वरूप 2009-10 की दूसरी तिमाही के दौरान और उसके बाद पूँजी का निवल अंतर्वाह हुआ।

6.79 वैश्विक रूप से, व्यापार वित्त की उपलब्धता में कमी को विश्व व्यापार में गिरावट के एक प्रमुख कारक के रूप में माना गया है। वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही के दौरान भारत में व्यापार ऋण के प्रवाह में कमी दिखने के बाद इस बात पर वाद-विवाद किया जाता था कि क्या अक्तूबर 2008 से भारत के आयात को विकृत करने में इसकी भूमिका थी। जनश्रुतिमूलक साक्ष्य यह बताता है कि व्यापार ऋण की लागत में द्रुत गति से बढ़ोतरी हुई है, जबकि इसके साथ-साथ उसकी उपलब्धता में काफी कमी आयी है, जैसाकि उच्चतर अदायगियों में प्रतिबिंबित होता है, लेकिन व्यापार ऋण में कुछ गिरावट का कारण मंदी के चलते आयात में कमी को माना जा सकता है, जबकि लागत में कुछ बढ़ोतरी दुनिया भर में निरंतर मांग अभावी मंदी की पृष्ठभूमि में बढ़ी हुई काउंटरपार्टी जोखिम के कारण हुई है।

6.80 व्यापार ऋण के संबंध में आयात के लोच का अनुमान लगाने के लिए एक अभ्यास करने का प्रयास अन्य नियंत्रक वैरिएबलों, यथा, औद्योगिक वृद्धि और विनिमय दर, के साथ करने का प्रयास किया गया, जिसमें वर्ष 1997-98 से लेकर 2008-09 तक की अवधि के तिमाही आँकड़े लिये गये थे और ऑर्डिनरी लीस्ट स्क्वेयर (ओएलएस) रिग्रेसन का उपयोग किया गया था। अनुमान के परिणामों से पता चलता है कि आयात की वृद्धि में व्यापार ऋण का योगदान सांख्यिकीय रूप से महत्त्वपूर्ण होता है [8]। तथापि, ये परिणाम यह दर्शाते हैं कि भारत में औद्योगिक वृद्धि आयात-वृद्धि में सबसे अधिक योगदान करने वाली रही है। इस प्रकार, अनुमान के परिणाम इस अटकल की पुष्टि करते हैं कि औद्योगिक मंदी के साथ व्यापार ऋण में संकुचन ने भारत में आयात-मांग को प्रभावित किया।

बैंकिंग पूँजी

6.81 भारतीय बैंकों की अंतरराष्ट्रीय पूँजी बाजारों तक पहुँच भी संकट के दौरान महत्त्वपूर्ण रूप से प्रभावित हुई, जिसका कारण था वित्तीय क्षेत्र के प्रति जोखिम विमुखता और ईएमई की आस्तियों के पुनर्मूल्यनिर्धारण की महत्त्वपूर्ण जोखिम। अंतरराष्ट्रीय ऋण बाजारों में बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के लिए जोखिम चूक प्रीमियम अक्तूबर-नवंबर 2008 में शिखर पर पहुँच गये और काफी समय तक लेहमैन-घटना के पूर्व की स्थिति से उच्चतर स्तर पर बने रहे। वैश्विक आघातों के प्रभाव के अंतर्गत आते हुए भारतीय बैंकों ने बैंकिंग पूँजी में महत्त्वपूर्ण बहिर्वाह देखा। 2000 के दशक के आरंभ में और हाल के वैश्विक संकट के दौरान, बैंकिंग पूँजी अंतर्वाह ने प्रचक्रीय प्रवृत्ति का प्रदर्शन किया है।

6.82 एनआरआइ जमाराशियों द्वारा प्रदान की गयी गुंजाइश के बावजूद, जो संकट के दौरान मुख्यत: आकर्षक ब्याज दर प्रोत्साहनों के चलते स्थिर बनी रहीं, वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही और वर्ष 2009-10 की पहली छमाही के दौरान बैंकिंग पूँजी के महत्त्वपूर्ण निवल बहिर्वाह के कारण मौजूदा देयताओं की चुकौतियाँ थीं और संभवत: उनके बिगड़ते तुलनपत्र के परिणामस्वरूप उनके समुद्रपार अनुषंगियों का पुन:पूँजीकरण किया जाना था। वाणिज्यिक बैंकों द्वारा देयताओं की चुकौती में अचानक हुई वृद्धि के लिए अंशत: उन कारकों को जिम्मेवार माना जा सकता है, जो पुनर्निर्धारण में योगदान करते थे। बैंकों के लिए अंतरराष्ट्रीय उधार तक पहुँच में आयी कमी ने अंशत: देशी बाजार में उधार देने की उनकी सामर्थ्य को बाधित किया।

समग्र संतुलन और विदेशी मुद्रा आरक्षित निधि

6.83 वर्ष 2008-09 की पहली छमाही में बिगड़ते व्यापार संतुलन के कारण विस्तारित चालू खाता शेष, जिसके साथ निवल पूजी बहिर्वाह जुड़ा है, संविभाग निवेश के प्रतिवर्तन और विशेष रूप से वाणिज्यिक उधार, व्यापार ऋण और वाणिज्यिक बैंकों (एनआरआइ जमाराशियों को छोड़ कर) के ऋण प्रवाह के महत्त्वपूर्ण रूप से कम होने के परिणामस्वरूप हुआ और उसने समग्र शेष को वर्ष 2008-09 में घाटे में बदलने की अगुआई की। तथापि, वर्ष 2008-09 के दौरान बड़े पूँजी बहिर्वाह के कारण, प्रमुख मुद्राओं के विरुद्ध अमरीकी डालर के कमजोर पड़ने के परिणामस्वरूप मूल्यन में परिवर्तन ने वर्ष के दौरान आरक्षित निधियों के महत्त्वपूर्ण भाग (लगभग 65 प्रतिशत) की गिरावट को स्पष्ट किया (सारणी 6.33)।

[8] GM = 113.82 + 2.76 GIND + 0.09 GTC – 2.56 EXR + 0.67 AR(1)
(1.62) (2.39) (2.18) (-1.69) (5.48)
R^2 = 0.70 DW = 1.93
जहाँ GM = आयात में वृद्धि (अमरीकी डालर), GIND =औद्योगिक क्षेत्र में वृद्धि, GTC = व्यापार ऋण में वृद्धि, (अमरीकी डालर), और EXR = सांकेतिक विनिमय दर।

सारणी 6.33 : आरक्षित निधियों में परिवर्तन

(बिलियन अमरीकी डालर)

त्रैमासिक	आरक्षित निधि की स्थिति	आरक्षित निधि में परिवर्तन	विनिमय दरों के चलते मूल्यन	मूल्यन को छोड़कर आरक्षित निधि में परिवर्तन
1	2	3	4	5
त्रैमासिक				
2007-08:ति1	213.4	14.2	3.0	11.2
2007-08:ति2	247.8	34.4	5.2	29.2
2007-08:ति3	275.3	27.6	0.8	26.7
2007-08:ति4	309.7	34.4	9.4	25.0
2008-09:ति1	312.1	2.4	0.1	2.2
2008-09:ति2	286.3	-25.8	-21.0	-4.7
2008-09:ति3	256.0	-30.4	-12.5	-17.9
2008-09:ति4	252.0	-4.0	-4.3	0.3
2009-10:ति1	265.1	13.2	13.1	0.1
2009-10:ति2	281.3	16.2	6.8	9.4
2009-10:ति3	283.5	2.2	0.4	1.8
छमाही				
2007-08:छ1	247.8	48.6	8.1	40.4
2007-08:छ2	309.7	62.0	10.2	51.7
2008-09:छ1	286.3	-23.4	-20.9	-2.5
2008-09:छ2	252.0	-34.4	-16.8	-17.6
2009-10:छ1	281.3	29.3	19.8	9.5
2009-10:छ2	279.1	-2		
पूरा वर्ष				
2007-08	309.7	110.5	18.4	92.2
2008-09	252.0	-57.7	-37.7	-20.1
2009-10	279.1	27.1	–	–

6.84 समाहार करते हुए कहा जा सकता है कि इस संकट के दौरान वित्तीय सरणी का प्रभाव अधिक स्पष्ट था, जिसमें बैंकों के संविभाग अंतर्वाह, बाह्य वाणिज्यिक उधार, व्यापार ऋण, और समुद्रपार उधार में तेज गिरावट देखने को मिली। तथापि, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश और अनिवासी जमाराशियों में समुत्थान दिखाई पड़ा। भारतीय कारपोरेटों के समुद्रपार उधारों में तीव्र संकुचन ने देशी निवेश कार्यकलाप को महत्त्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया। समुद्रपार चलनिधि के महँगे होने के कारण अनेक ईएमई के लिए व्यापार वित्त पर गंभीर प्रभाव पड़ा। अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में कुछ अंश तक स्थिरता लौटने और अनेक उन्नत देशों में औद्योगिक क्षेत्र के संकट से उबरने के साथ कुछ सुधार इंद्रियगोचर हुए। भारत के भुगतान संतुलन (बीओपी) में बदलाव आया, जिसने मुख्यत: बढ़े हुए निजी धन-प्रेषण से ताकत हासिल की, जिसके साथ संविभाग निवेश में पुन: उछाल आना और वर्ष 2009-10 के दौरान एनआरआइ जमाराशियों के अंतर्वाह का बढ़ना जुड़ा था।

6.85 व्यापार और वित्त सरणी के माध्यम से अंतिम प्रभाव संपदा क्षेत्र में व्याप्त हुआ, जो संकट के दौरान गंभीर रूप से प्रभावित हुआ था। संपदा क्षेत्र पर अधिक प्रभाव होने का एक कारण था वर्तमान दशक के दौरान बाह्य क्षेत्र के प्रति सकल मांग की संरचना में बदलाव का आना (इस अध्याय का खंड I देखें)। भारतीय अर्थव्यवस्था के बढ़ते खुलापन ने संचरण तंत्र को और भी प्रबल बना दिया, जिसके माध्यम से संकट का प्रभाव संपदा क्षेत्र पर पड़ा (अध्याय 5 का खंड I देखें)। बचत, निवेश और संपदा क्षेत्र पर अंतिम प्रभाव की चर्चा अगले खंड में की गयी है।

IV. बचत निवेश और वृद्धि पर प्रभाव

6.86 भारतीय अर्थव्यवस्था ने हाल के संकट के पूर्व बहुविध कारकों, यथा, सुधरी हुई वित्तीय मध्यस्थता, बढ़ी हुई बाह्य मांग, भौतिक आधारभूत संरचना की सबलता और सहायक सरकारी नीतियों के चलते वृद्धि-गति में सुस्पष्ट सबलता देखी थी। तथापि, हाल के वैश्विक वित्तीय संकट और उसके परिणामस्वरूप प्रमुख उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मंदी का प्रभाव भारतीय अर्थव्यवस्था पर मांग और आपूर्ति, दोनों पक्षों की दृष्टि से हुआ, जिसमें भिन्न-भिन्न क्षेत्रों पर अलग-अलग प्रभाव हुआ। जबकि निर्यात में गिरावट मांग-पक्ष के संबंध में प्रमुख कारक हो सकता है, निधीयन के बाह्य स्रोतों का बंद होना, पूँजी प्रवाह में गिरावट और व्यवसाय-भरोसे में कमी, आपूर्ति पक्ष की बाध्यता हो सकती है। किस हद तक ये दो कारक वृद्धि, बचत और निवेश को प्रभावित करेंगे, इसका मूल्यांकन करना आवश्यक होगा, ताकि अर्थव्यवस्था के लिए उनके निहितार्थ को समझा जा सके।

बचत और निवेश पर प्रभाव

6.87 संचरण की वित्तीय सरणी, जिसने पूँजी प्रवाह, शेयर बाजारों, वित्तीय मध्यस्थता, आदि को प्रभावित किया था, अंशत: बचत और निवेश तक सीमित रह गयी। यह उल्लेखनीय है कि संकट की अवधि के दौरान वित्तीय बाजारों में अस्थिरता और अस्तव्यस्तता ने पारिवारिक बचत की संरचना का बदलाव भौतिक आस्तियों की ओर कर दिया हो सकता है। पूर्व के संकटों के दौरान, यथा, भुगतान संतुलन (बीओपी) संकट (1990-91), पूर्वी एशिया का संकट (1997-98) और अमेरिका में डॉट कॉम संकट (2001-2002), भारत ने अपनी वृद्धि-गति में कुछ गिरावट और सकल देशी बचत में सहवर्ती गिरावट का अनुभव किया था। हाल के वित्तीय संकट के दौरान इसी प्रकार की

सारणी 6.34 : सकल घरेलू बचत में अंशदान

अवधि	जीडीपी के % के रूप में				कुल बचत में आपेक्षिक अंशदान (%)		
	कुल	परिवार	निजी कारपोरेट	जनता	परिवार	निजी कारपोरेट	जनता
1	2	3	4	5	6	7	8
1991-1995	23.8	17.3	3.1	2.0	68.4	20.1	11.5
1996-2000	24.9	18.1	4.4	1.1	106.1	21.4	-27.5
2001-2005	26.4	22.7	4.5	-0.2	112.9	6.1	-19.0
2005-06	34.1	22.8	8.2	3.1	56.8	35.6	7.6
2006-07	34.4	22.9	8.0	3.6	48.8	26.0	25.2
2007-08	36.4	22.6	8.7	5.0	42.9	27.4	29.8
2008-09	32.5	22.6	8.4	1.4	1394.9	382.2	-1677.1

घटना देखी गयी, क्योंकि सकल देशी बचत की वृद्धि में वर्ष 2008-09 के दौरान तेज गिरावट हुई, जो अर्थव्यवस्था में वृद्धि की गति मंद होने को प्रतिबिंबित करती है (सारणी 6.34)। अंतरराष्ट्रीय संकटों के परिणामस्वरूप पिछली प्रवृत्तियों से अनुमान लगाते हुए कहा जा सकता है कि आने वाले वर्षों में सकल देशी बचत में उछाल हो सकता है।

6.88 पुन:, भारत में पारिवारिक बचत में उतार-चढ़ाव के पीछे प्रमुख कारकों का पता लगाने का प्रयास किया गया है, ताकि हाल के वैश्विक संकट और आने वाले वर्षों के दौरान के घटनाक्रमों का मूल्यांकन किया जा सके। पारिवारिक बचत को विविध स्वतंत्र वैरिएबलों, यथा, वैयक्तिक प्रयोज्य आय, ब्याज दर (सरकारी प्रतिभूतियों पर आय), वित्तीय संकट गहराना (एम3/जीडीपी) और वर्ष 1970-71 से 2008-09 के दौरान राजकोषीय घाटा, पर रिग्रेस किया गया। रिग्रेसन के परिणाम दर्शाते हैं कि वैयक्तिक प्रयोज्य आय और वित्तीय संकट गहराने के गुणांक धनात्मक और महत्त्वपूर्ण हैं, जबकि ब्याज दर और राजकोषीय घाटे के गुणांक धनात्मक, लेकिन उपेक्षणीय हैं[9]। रिग्रेसन के परिणाम भारत के मामले में रिकार्डियन इक्विवैलेंस (आरई) हाइपोथेसिस[10] का विरोध करते हैं, क्योंकि राजकोषीय घाटे के बारे में यह नहीं पाया गया कि वह पारिवारिक बचत में किसी महत्त्वपूर्ण उतार-चढ़ाव का कारण नहीं बनता है। एक अध्ययन में घटक और सुब्रत (1996) ने भी भारत में आरई परिकल्पना को अमान्य पाया। फिर भी, बचत, विशेष रूप से परिवारों में और निजी क्षेत्रों में अन्य कारकों के कारण संकट-पश्चात् अवधि के दौरान बढ़ सकती है, यथा, संभवत: इसलिए कि भविष्य में इस प्रकार की घटना होने पर कुछ गुंजाइश बन सके और संकट के दौरान आयी देयताओं की चुकौती की जा सके।

6.89 वैश्विक वित्तीय संकट ने कंपनियों को आंतरिक और बाह्य, दोनों प्रकार के वित्तीय स्रोतों तक कम पहुँच होने के चलते उनकी निवेश की क्षमता को दुर्बल बनाया, जिसके साथ लड़खड़ायी वृद्धि संभावना और बढ़ी हुई अनिश्चितता जुड़ी थी, जिसके चलते निजी क्षेत्र की निवेश करने की प्रवृत्ति गंभीर रूप से प्रभावित हुई। इन सभी कारकों ने वर्ष 2008-09 के दौरान अर्थव्यवस्था में निजी निवेश में बोधगम्य संकुचन की अगुआई की। यह नोट किया जा सकता है कि निजी निवेश की प्रवृत्ति विगत दो अंतरराष्ट्रीय संकटों, अर्थात्, पूर्वी

[9] LHHSt = -1.5528 + 0.5426 *LPDIt + 0.0124*LFISDt-1 + 0.0012*RINTt + 0.0052*LFINDt + 0.4884*LHHSt-1
(-2.6497) (3.2955) (0.2702) (0.5001) (1.5880) (3.4054)

R2 = 0.9981, DW= 2.0771
LHHS= परिवार की बचत का लॉग
LPDI= वैयक्तिक प्रयोज्य आय का लॉग
LFISD= राजकोषीय घाटे का लॉग
RINT= वास्तविक विनिमय दर (सरल औसत जमाराशि ब्याज दर)
LFID= वित्तीय गहनता (एम3/जीडीपी)

[10] रिकार्डियन इक्विवैलेंस हाइपोथेसिस में माना गया है कि सरकारी व्यय, जिसका निधीयन उधार के माध्यम से किया गया हो, का आंतरीकरण समझदार उपभोक्ताओं द्वारा उनके उपभोग की प्रवृत्ति से किया जायेगा, जिसके कारण बचत अधिक होगी, ताकि भविष्य में सरकार को इन उधारों की चुकौती किये जाने के लिए अधिक करों का भुगतान किया जा सके।

एशिया संकट और डॉट कॉम संकट, के दौरान एकसमान थी, जब पहले वाले संकट में निजी निवेश में महत्त्वपूर्ण रूप से गिरावट आयी और दूसरे वाले संकट में समग्र निवेश में संकुचन हुआ। इन संकटों के दौरान परिवार और सरकारी क्षेत्र में निवेश-वृद्धि में भी काफी गिरावट दर्ज की गयी। अतएव, अन्य क्षेत्रों द्वारा समर्थित निजी निवेश ने विगत संकटों के दौरान सकल देशी पूँजी निर्माण की वृद्धि में तेज गिरावट की अगुआई की। चूँकि सरकार ने हाल के संकट के दौरान प्रति-चक्रीय उपाय के रूप में आधारभूत संरचना क्षेत्र में व्यय में बढ़ोतरी की है, अत: वृद्धिशील सरकारी निवेश की गति में तेज गिरावट नहीं देखी गयी है। इसके साथ ही, परिवारों के निवेश में वर्ष 2008-09 के दौरान तेजी से वृद्धि हुई। चूँकि पिछले कुछ वर्षों के दौरान सकल देशी पूँजी निर्माण को निजी निवेश से ऊर्जान्वित किया जाता था, अत: निजी निवेश में घोर संकुचन के कारण हाल के संकट के दौरान इसकी वृद्धि में तेज गिरावट आयी (सारणी 6.35)।

6.90 सकल देशी पूँजी निर्माण को प्रेरित करने के लिए निजी निवेश के महत्त्व को ध्यान में रखते हुए उन कारकों का विश्लेषण किया गया, जो निजी निवेश की गति को प्रेरित करते हैं। निजी निवेश को प्रेरित करने वाले संभावित कारक आपूर्ति पक्ष से बैंक ऋण, निवल पूँजी प्रवाह तथा ब्याज दर हो सकते हैं और मांग पक्ष से वैयक्तिक प्रयोज्य आय हो सकती है। इन सभी वैरिएबलों का परीक्षण उनकी अचलता के लिए किया गया और उन्हें आइ(1) के क्रम में पाया गया। चूँकि इन सभी वैरिएबलों की, सरल वीएआर के बदले, एक इकाई मूल समस्या थी, अत: चुनिंदा व्याख्यात्मक वैरिएबलों[11] की एक इकाई मूल समस्या थी, अत: निजी निवेश के अंतर-विघटन का अनुमान लगाने के लिए सरल वीएआर के बदले जोहान्सेन को-इंटेग्रेशन (1988, 1991) कार्यप्रणाली का उपयोग किया गया। चोलेस्की वैरिएंस डिकंपोजिशन बताता है कि बैंक ऋण निजी निवेश में लगभग 28 प्रतिशत घट-बढ़ को स्पष्ट करता है, जबकि प्रयोज्य आय और ब्याज दर क्रमश: लगभग 8 प्रतिशत और 5 प्रतिशत घट-बढ़ को स्पष्ट करते हैं। तथापि, निवल पूँजी प्रवाह निजी निवेश में नगण्य घट-बड़ को स्पष्ट करता है। तथापि, बैंक ऋण द्वारा स्पष्ट किये गये निजी निवेश में घट-बढ़ की सीमा कालक्रम में बढ़ती है, जबकि वैयक्तिक प्रयोज्य आय के मामले में इसमें गिरावट आयी। पुन:, वीएआर ग्रैंजर

सारणी 6.35 : वर्तमान कीमतों पर सकल देशी पूँजी निर्माण

वर्ष/अवधि	वृद्धि (प्रतिशत)				जीडीपी में हिस्सा (प्रतिशत)			
	परिवार	प्राइवेट	जनता	कुल	परिवार	प्राइवेट	जनता	कुल
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1990-1991	23.2	20.6	14.4	18.9	9.7	4.5	10.0	24.2
1991-1992	**-24.9**	**58.1**	**9.1**	**4.6**	**6.3**	**6.2**	**9.5**	**22.0**
1992-1996	24.7	34.3	12.3	22.4	7.2	7.7	8.9	23.8
1996-1999	**19.9**	**0.3**	**8.0**	**8.2**	**7.4**	**8.3**	**7.2**	**22.9**
1999-2000	37.8	15.6	17.7	28.5	10.5	7.4	7.4	26.1
2000-2002	**11.7**	**-5.3**	**4.1**	**1.4**	**11.3**	**5.3**	**6.9**	**24.2**
2002-2003	20.8	17.7	-4.6	12.3	12.6	5.9	6.1	25.2
2003-2004	13.2	29.4	16.9	19.3	12.7	6.8	6.3	26.8
2004-2005	13.8	79.9	24.3	34.9	13.5	10.3	7.4	32.5
2005-2006	0.0	50.1	21.8	20.9	11.8	13.5	7.9	34.3
2006-2007	16.8	24.5	22.7	21.3	11.9	14.5	8.4	36.0
2007-2008	11.0	28.1	22.9	20.6	11.5	16.1	8.9	37.6
2008-2009	19.8	-11.0	18.6	6.7	12.2	12.7	9.4	35.6

स्रोत : हैंडबुक ऑफ स्टैटिस्टिक्स ऑन इंडियन इकोनॉमी।

टिप्पणी : सकल देशी पूँजी निर्माण में वृद्धि वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही के दौरान 4.7 प्रतिशत थी।

[11] सहसंबंध गुणांक का क्रम 1 पाया गया है, जिसका तात्पर्य यह है कि उनमें केवल एक सह-एकीकरण संबंध है। विविध अंतराल चयन मानदंडों ने केवल एक अंतराल सूचित किया।

कारणत्व परीक्षण के परिणाम[12] यह दर्शाते हैं कि एकदेशीय कारणत्व बैंक ऋण से निजी निवेश की ओर 10 प्रतिशत महत्त्व स्तर पर चलता है और वह वैयक्तिक प्रयोज्य आय से निजी निवेश की ओर महत्त्व के 1 प्रतिशत स्तर पर द्विदिशात्मक होता है। ब्याज दरों और निवल पूँजी प्रवाह से निजी निवेश और निजी निवेश से ब्याज दरों और निवल पूँजी प्रवाह तक कारणत्व को महत्त्वपूर्ण नहीं पाया गया है। उपर्युक्त अनुभवमूलक परिणाम एक जैसे निजी प्रयोज्य आय और बैंक ऋण के निजी निवेश को प्रभावित करने के महत्त्व का प्रदर्शन करते हैं। वर्तमान संदर्भ में भी अधिक मंदी की पृष्ठभूमि में ये दोनों कारक निजी निवेश में महत्त्वपूर्ण गिरावट को प्रेरित करते प्रतीत होते हैं, जिससे अंतत: वर्ष 2008-09 में सकल देशी पूँजी निर्माण की वृद्धि में तेज गिरावट आयी।

समग्र वृद्धि पर प्रभाव

6.91 यद्यपि भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि में वर्ष 2007-08 की अंतिम तिमाही से गिरावट आनी शुरू हो गयी और वैश्विक वृद्धि से संकेत ग्रहण करते हुए बाद की तिमाहियों में गिरावट बनी रही, फिर भी वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही से इसमें कुछ सुधार होने के पूर्व वर्ष 2008-09 की तीसरी और चौथी तिमाही में गिरावट बढ़ गयी (सारणी (6.36)। वास्तव में, भारतीय अर्थव्यवस्था पहले ही वर्ष 2006 की चौथी तिमाही से व्यवसाय चक्र के नरम वृद्धि के प्रक्षेप-पथ पर थी, लेकिन वर्तमान वैश्विक संकट ने इस गिरावट को वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही से अधिक घोषित कर दिया (आरबीआई की वार्षिक रिपोर्ट, 2008-09)[13]। अत: भारतीय अर्थव्यवस्था में वैश्विक वित्तीय संकट के नहीं होने पर भी वर्ष 2008-09 के दौरान गिरावट देखी गयी होती, *अलबत्ता* धीमी गति से।

6.92 जैसाकि पहले उल्लेख किया गया है, भारतीय अर्थव्यवस्था में गिरावट के आरंभिक संकेत वर्ष 2007-08 की अंतिम तिमाही में दिखे, लेकिन वास्तविक प्रभाव वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में महसूस किया गया। मांग पक्ष में, वैश्विक वित्तीय संकट के प्रति पहले प्रतिक्रिया करने वाले थे निवेश (पूँजी निर्माण) और निजी उपभोग, क्योंकि इन दोनों की वृद्धि में सहवर्ती रूप से गिरावट वर्ष 2007-08 की अंतिम तिमाही से आने लगी। वस्तु और सेवाओं के निर्यात पर प्रभाव वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही में हुआ और उनकी वृद्धि में अचानक तेजी से गिरावट उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के खर्च में बड़ी गिरावट के कारण हुई (चार्ट VI.14)।

सारणी 6.36 : उपादान लागत पर जीडीपी में त्रैमासिक वृद्धि

(प्रतिशत)

क्षेत्र	2007-08	2008-09	2009-10	2007-08				2008-09				2009-10			
				ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
कृषि एवं संबद्ध	4.7	1.6	0.2	3.1	3.9	8.7	2.1	3.2	2.4	-1.4	3.3	1.9	0.9	-1.8	0.7
उद्योग	9.3	3.1	10.4	10.5	9.5	9.5	7.8	5.2	4.9	1.7	0.8	4.6	9.0	12.3	15.1
सेवा	10.4	9.3	8.3	10.7	10.5	10.2	10.4	9.8	9.3	10.0	8.0	7.5	10.0	7.3	8.5
कुल	**9.2**	**6.7**	**7.4**	**9.3**	**9.4**	**9.7**	**8.5**	**7.8**	**7.5**	**6.1**	**5.8**	**6.0**	**8.6**	**6.5**	**8.6**

स्रोत : केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन, भारत सरकार।

[12] **वीएआर ग्रैंजर कारणत्व/ब्लॉक एक्सोजेनिटी वॉल्ड परीक्षण**

नल्ल हाइपोथेसिस	चाइ स्क्वेयर स्टैटिस्टिक्स	स्वीकार/अस्वीकार करें (एक्स के कारण वाइ नहीं होता)
बैंक ऋण निजी निवेश का कारण नहीं बनता	3.06 (0.10)	अस्वीकार करें
निवल पूँजी प्रवाह निजी निवेश का कारण नहीं बनता	1.33 (0.25)	स्वीकार करें
वैयक्तिक प्रयोज्य आय निजी निवेश का कारण नहीं बनती	18.26 (0.00)	अस्वीकार करें
ब्याज दर निजी निवेश का कारण नहीं बनती	0.45 (0.50)	स्वीकार करें

[13] वर्तमान व्यवसाय-चक्र के दौरान, विस्तारक चरण लगभग 8 से 9 तिमाहियों तक बना रहा, जिसकी शुरुआत वर्ष 2004(ति4) से हुई और यह 10 प्रतिशत के निकट अपने शीर्ष पर वर्ष 2006 की दूसरी और तीसरी तिमाही में पहुँचा। उसके बाद अंतर्निहित वृद्धि की गति में कुछ नरमी वर्ष 2008-09(ति4) तक दिखाई पड़ी।

चार्ट VI.14 : मांग-पक्ष घटकों में त्रैमासिक वृद्धि की प्रवृत्ति

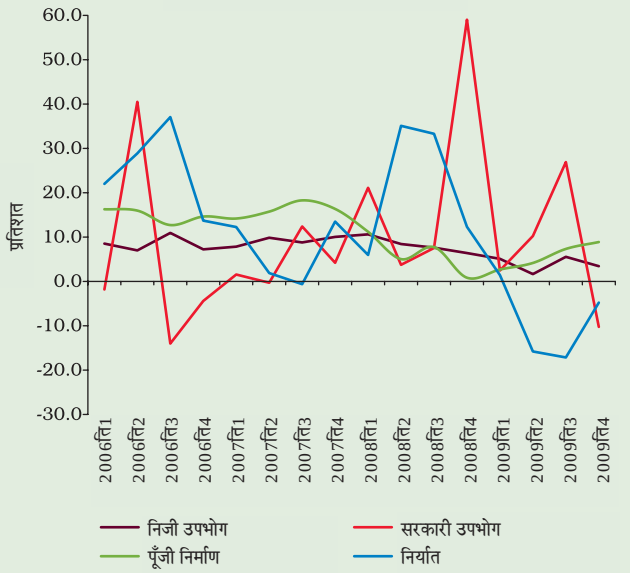

6.93 जीडीपी और निजी उपभोग तथा सकल देशी पूँजी निर्माण (निवेश) के बीच धनात्मक सह-गमन हाल की अवधि (2006-2009) में और अधिक सुदृढ़ हुआ (सारणी 6.37)। जीडीपी और सरकारी उपभोग के बीच चक्रीय सहगमन विगत अतीत में ऋणात्मक हो गया, जो प्रमुख रूप से वैश्विक संकट के परिणामस्वरूप दुर्बल होती वृद्धि को सहारा देने के लिए प्रेरक उपायों के रूप में निष्पादित प्रति-चक्रीय राजकोषीय नीति-दृष्टिकोण का परिणाम था। जीडीपी वृद्धि और सकल मांग के विविध घटकों के बीच वर्ष 1996 की दूसरी तिमाही से ले कर वर्ष 2009 की दूसरी तिमाही तक के लिए वैरिएबलों के बीच संबंध का अनुमान ऑर्डिनरी लीस्ट स्क्वेयर (ओएलएस) रिग्रेसन के साथ किया गया। रिग्रेसन के परिणाम दर्शाते हैं कि चक्रीय सकल घरेलू पूँजी निर्माण और निजी उपभोग से चक्रीय जीडीपी तक जाने वाला कारणत्व महत्त्वपूर्ण है, जबकि यह सरकारी उपभोग और वस्तु

सारणी 6.37 : समग्र मांग के घटकों के साथ जीडीपी का चक्रीय सहगमन
(सहसंबंध गुणांक)

घटक	1996-2000	2001-2005	2006-2009:Q2
1	2	3	4
सकल देशी पूँजी निर्माण	0.67	0.44	0.64
निजी उपभोग	0.00	0.50	0.60
सरकारी उपभोग	0.42	0.16	-0.72
वस्तुओं और सेवाओं का निर्यात	-0.01	0.14	0.32

स्रोत : राष्ट्रीय लेखा सांख्यिकी, सीएसओ, भारत सरकार।

एवं सेवाओं के निर्यात के मामले में उपेक्षणीय है[14]। यह हाल की अवधि में भारतीय अर्थव्यवस्था को प्रेरित करने में निजी वित्तीय उपभोग और निवेश की प्रमुखता बताता है। अत: यह अनुमान लगाया जा सकता है कि हाल के वैश्विक संकट ने भारतीय अर्थव्यवस्था में चक्रीय गिरावट को बढ़ाया, जिसके चलते निजी उपभोग और निवेश पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।

6.94 जीडीपी में बाजार मूल्य पर वास्तविक वृद्धि में, जो वर्ष 2005-2008 के दौरान उच्चतर प्रक्षेप-पथ पर आरूढ़ थी, वैश्विक संकट की पृष्ठभूमि में वर्ष 2008-09 की पहली छमाही से गिरावट आरंभ हो गयी, जिसने इस अवधि के दौरान निवेश और निजी उपभोग पर प्रतिकूल प्रभाव डाला (सारणी 6.38)। वस्तु और सेवाओं के निर्यात में वृद्धि, जिसमें वर्ष 2008-09 की पहली छमाही में महत्त्वपूर्ण रूप से उछाल आया था, में दूसरी छमाही में तेज गिरावट आयी। इसी प्रकार, निजी उपभोग में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में गिरावट जारी रही, जिसका कारण था शेयर बाजार में निरंतर गिरावट और बढ़ी हुई अनिश्चितता। इसके साथ-साथ सरकारी उपभोग में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में भारी वृद्धि हुई, क्योंकि सरकार ने प्रतिचक्रीय उपाय किये। घटकवार (मांग पक्ष) विश्लेषण यह दर्शाता

[14] CGGDP = 4.97 + 0.12 CGPFCF - 0.02 CGGFCE + 0.28 CGGDCF + 0.0001 CGNX
(2.38) (1.77) (-1.08) (4.92) (0.25)
R^2 = 0.41 DW = 1.65
CGGDP = सकल देशी उत्पाद में चक्रीय वृद्धि
CGGDCF = सकल देशी पूँजी निर्माण में चक्रीय वृद्धि
CGGFCE = सरकारी अंतिम उपभोग व्यय में चक्रीय वृद्धि
CGPFCE = निजी अंतिम उपभोग व्यय में चक्रीय वृद्धि
CGNX = वस्तुओं और सेवाओं के निवल निर्यात में चक्रीय वृद्धि

सारणी 6.38 : जीडीपी के मांग-घटकों में वृद्धि (वर्ष 2004-05 की कीमतों पर)

(प्रतिशत)

अवधि	निजी उपभोग	सरकारी उपभोग	पूँजी निर्माण	निर्यात	आयात	समग्र जीडीपी (बाजार कीमतें)
1	2	3	4	5	6	7
प्रवृत्ति						
1990-95	3.7	2.8	7.8	10.8	13.3	4.7
1995-00	5.9	9.8	8.0	13.4	13.3	6.6
2000-05	4.6	1.8	10.0	16.1	11.1	5.9
2005-08	9.0	7.2	15.3	17.6	21.5	9.5
वार्षिक						
2007-08	9.8	9.7	16.9	5.2	10.0	9.6
2008-09	6.8	16.7	-1.7	19.3	23.0	5.1
2009-10	4.3	10.5	7.1	-6.7	-7.3	7.7
छमाही						
2007-08:छ1	9.3	5.2	16.2	0.6	1.2	9.6
2007-08:छ2	10.3	13.5	13.5	9.4	18.7	9.6
2008-09:छ1	8.0	5.5	0.9	34.2	40.0	7.1
2008-09:छ2	5.8	25.7	-3.9	6.6	8.6	3.4
2009-10:छ1	4.6	22.5	0.9	-15.9	-9.5	5.8
2009-10:छ2	4.0	2.3	13.0	3.3	-4.8	9.3
त्रैमासिक						
2008-09:ति1	8.4	3.7	0.1	35.1	34.4	7.3
2008-09:ति2	7.6	7.5	1.6	33.3	45.2	6.9
2008-09:ति3	6.4	59.0	-4.9	12.3	23.2	3.0
2008-09:ति4	5.1	2.5	-2.9	1.4	-4.4	3.8
2009-10:ति1	2.9	15.3	-0.3	-16.0	-8.5	5.2
2009-10:ति2	6.4	30.5	2.1	-15.8	-10.5	6.4
2009-10:ति3	5.3	2.5	8.4	-7.5	-5.8	7.3
2009-10:ति4	2.6	2.1	17.3	14.2	-3.7	11.2

स्रोत : केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन, भारत सरकार।

है कि वर्ष 2009-10 की पहली छमाही के दौरान वृद्धि में सुधार सकल देशी पूँजी निर्माण में सुधार के कारण हुआ, जिसका समर्थन सरकारी उपभोग में तगड़ी वृद्धि द्वारा किया गया था। अन्य सभी मांग-घटक, यथा, निजी उपभोग, निर्यात और आयात, जो वृद्धि में सीधे योगदान करते हैं, में इस अवधि के दौरान वृद्धि में गिरावट/संकुचन होना दिखाई पड़ता रहा।

गिरावट का क्षेत्रीय प्रभाव

6.95 औद्योगिक वृद्धि में, जो पिछले तीन वर्षों से उच्च स्तर पर बनी रही थी, वर्ष 2008-09 की पहली छमाही में महत्त्वपूर्ण रूप से गिरावट आयी, जिसका कारण था व्यापार एवं वित्तीय सरणियों के माध्यम से वैश्विक संकट का स्पिलओवर प्रभाव होना। औद्योगिक वृद्धि में गिरावट समग्र वृद्धि में गिरावट से ऊँची थी और, तदनुसार, जीडीपी में औद्योगिक क्षेत्र के योगदान में भी वर्ष 2008-09 के दौरान काफी कमी आयी। दूसरी ओर, उद्योग की तुलना में सेवा-क्षेत्र में वर्ष 2008-09 के दौरान संयत गिरावट दिखाई पड़ी और जीडीपी में इसके आपेक्षिक योगदान में सुधार हुआ (सारणी 6.39)। इस अवधि के दौरान सेवा-क्षेत्र की वृद्धि में नरमी वित्तीय सरणी से उद्भूत और बाह्य मांग के बंद हो जाने से हुई थी।

6.96 वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में औद्योगिक और सेवा-क्षेत्र पर संकट का प्रभाव बढ़ गया, जिसमें वणिक माल निर्यात में समग्र संकुचन हुआ और सेवा-क्षेत्र की निर्यात-वृद्धि में गिरावट के साथ भरोसे में कमी आई जिसने वित्तीय सरणी से न:सृत प्रतिकूल प्रभावों को प्रबल किया। पुन:, इस अवधि के दौरान सेवा-क्षेत्र की तुलना में औद्योगिक क्षेत्र की वृद्धि में गिरावट अधिक गंभीर थी, क्योंकि विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात, जो अपना बड़ा हिस्सा औद्योगिक क्षेत्र

सारणी 6.39 : जीडीपी में क्षेत्रीय वृद्धि (वर्ष 2004-05 की कीमतों पर)

(प्रतिशत)

अवधि	वृद्धिशील जीडीपी में अंशदान			वृद्धि			
अवधि	कृषि	उद्योग	सेवाएँ	कृषि	उद्योग	सेवाएँ	समग्र
1	2	3	4	5	6	7	8
प्रवृत्ति							
1990-95	11.8	17.2	71.0	3.4	5.3	5.6	4.8
1995-00	10.0	17.9	72.1	3.1	6.0	8.6	6.6
2000-05	2.9	21.5	75.6	1.8	6.0	7.8	6.0
2006-08	8.7	22.0	69.3	4.6	10.3	10.6	9.5
वार्षिक							
2007-08	8.8	20.8	70.4	4.7	9.3	10.4	9.2
2008-09	3.9	9.5	86.6	1.6	3.1	9.3	6.7
2009-10	0.5	27.9	71.7	0.2	10.4	8.3	7.4
छमाही							
2007-08:छ1	5.8	22.5	71.7	3.5	10.0	10.6	9.4
2007-08:छ2	11.5	19.3	69.2	5.7	8.7	10.3	9.1
2008-09:छ1	5.5	14.2	80.3	2.9	5.1	9.6	7.6
2008-09:छ2	2.0	4.2	93.7	0.7	1.2	9.0	5.9
2009-10:छ1	2.7	19.4	77.9	1.4	6.8	8.7	7.3
2009-10:छ2	-1.5	35.1	66.4	-0.7	13.8	7.9	7.6
त्रैमासिक							
2008-09:ति1	6.7	14.2	79.1	3.2	5.2	9.8	7.8
2008-09:ति2	4.3	14.2	81.5	2.4	4.9	9.3	7.5
2008-09:ति3	-4.6	5.7	98.9	-1.4	1.7	10.0	6.1
2008-09:ति4	8.9	2.8	88.3	3.3	0.8	8.0	5.8
2009-10:ति1	4.8	15.6	79.6	1.9	4.6	7.5	6.0
2009-10:ति2	1.3	22.0	76.7	0.9	9.0	10.0	8.6
2009-10:ति3	-5.1	35.9	69.2	-1.8	12.3	7.3	6.5
2009-10:ति4	1.2	34.6	64.2	0.7	15.1	8.5	8.6

की मांग में योगदान करते हैं, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं द्वारा उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं पर किये जाने वाले व्यय में तीव्र गिरावट की पृष्ठभूमि में तेजी से संकुचित हुए। तथापि, यह उल्लेखनीय है कि सेवा-क्षेत्र की वृद्धि में वर्ष 2009-10 के दौरान गिरावट जारी रही, जबकि औद्योगिक क्षेत्र की वृद्धि में महत्त्वपूर्ण रूप से पुनरुत्थान हुआ।

6.97 कृषि और संबद्ध कार्यकलाप, जिनका अधिकतर संबंध वैश्विक गतिविधियों से नहीं होता, तगड़े मानसून के चलते यथेष्ट दर पर बढ़े और वर्ष 2008-09 की पहली छमाही के दौरान ग्रामीण मांग के रूप में उद्योग और सेवाओं को समर्थन देते रहे। तथापि, कृषि और संबद्ध कार्यकलापों में महत्त्वपूर्ण रूप से गिरावट आयी और, तदनुसार, ग्रामीण मांग घटक वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में दुर्बल हुआ। वर्ष 2009 में दक्षिण-पश्चिम मानसून की विफलता और उसके परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन में कमी होने से वर्ष 2009-10 के दौरान ग्रामीण मांग दुर्बल हुई प्रतीत होती है।

उद्योग : भिन्न-भिन्न किस्म के विश्लेषण

6.98 विभिन्न देशों में किये गये विश्लेषण से प्रकट होता है कि औद्योगिक क्षेत्र पर संकट का प्रभाव काफी गंभीर और व्यापक रहा है, जैसाकि वर्ष 2008 और 2009 के दौरान भारत सहित अनेक उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि में तीव्र गिरावट या संकुचन से स्पष्ट होता है (सारणी 6.40)। यद्यपि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं का औद्योगिक क्षेत्र पहले संकट से प्रभावित हुआ, फिर भी कुछ अंतराल के साथ इसका थोड़ा-थोड़ा प्रभाव उभरते बाजारों और अन्य विकासशील देशों पर व्यापार एवं वित्तीय सरणियों के माध्यम से पड़ा।

सारणी 6.40 : उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में औद्योगिक वृद्धि

(प्रतिशत)

देश	2007				2008				2009				2010
	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
						उभरती							
ब्राजील	3.8	5.6	6.3	7.9	6.9	5.9	6.3	-7.2	-13.8	-11.6	-8.7	6.3	17.2
चीन	15.1	18.3	18.1	17.5	10.9	15.9	13.0	6.4	9.7	9.0	12.3	17.9	-
भारत	10.3	8.7	8.3	7.0	5.3	4.7	0.8	0.5	3.8	9.0	13.4	15.1	12.9
कोरिया	4.1	6.3	6.1	10.9	11.2	9.2	5.9	-10.9	-15.7	-6.1	4.3	16.1	25.6
मलेशिया	0.6	1.8	2.1	4.5	6.6	2.4	0.1	-9.1	-14.4	-10.9	-6.6	2.6	-
मेक्सिको	2.5	1.5	2.1	1.8	0.4	1.3	-1.4	-2.6	-9.6	-11.1	-6.3	-2.0	5.2
						उन्नत							
कनाडा	-1.6	0.1	0.2	0.0	-5.0	-4.6	-4.3	-7.2	-10.6	-14.5	-13.0	-7.1	-
फ्रांस	0.5	-0.1	1.5	2.7	1.0	1.3	-1.2	-8.9	-15.7	-16.4	-10.6	-4.6	-
जर्मनी	8.9	6.7	6.3	5.9	5.3	3.3	0.4	-7.6	-21.8	-21.3	-17.4	-10.1	-
इटली	3.9	2.0	3.0	-1.5	1.0	0.2	-5.2	-10.4	-22.3	-23.2	-17.2	-9.3	-
जापान	2.9	2.4	2.6	3.3	2.5	0.8	-1.3	-14.1	-33.5	-26.6	-18.9	-4.2	26.0
यूके	-1.3	0.7	0.4	1.6	-0.6	-0.9	-2.1	-8.0	-12.6	-12.8	-11.0	-6.3	-
अमेरिका	1.3	1.5	1.4	1.8	1.2	-0.3	-3.2	-6.7	-11.5	-13.5	-9.2	-4.6	2.5

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय वित्तीय सांख्यिकी, आईएमएफ; सीएसओ, भारत सरकार।

6.99 पिछले कुछ वर्षों के दौरान उत्साहजनक वृद्धि दखने के बाद औद्योगिक क्षेत्र व्यवसाय-चक्र के गिरते वक्र पर नवंबर 2007 से था (औद्योगिक उत्पादन सूचकांक (आइआइपी) पर आधारित)। यह क्षेत्र हाल के वित्तीय संकट के स्पिलओवर प्रभाव से गंभीर रूप से प्रभावित हुआ, जिसके परिणामस्वरूप अक्तूबर 2008 से इसमें अधिक घोषित गिरावट आयी। वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में औद्योगिक उत्पादन की वृद्धि में तीव्र गिरावट दर्ज की गयी। तथापि, औद्योगिक क्षेत्र में बदलाव आया और इसने वर्ष 2009-10 के दौरान तेज वृद्धि दर्ज की।

6.100 आइआइपी के चक्रीय घटक और वणिक माल निर्यात के बीच सहसंबंध काफी दुर्बल हुआ और वह संकुचित होते वणिक माल निर्यात की अवधि, अर्थात्, अक्तूबर 2008 से जून 2009 के दौरान उपेक्षणीय बन गया। इसके साथ-साथ, चक्रीय आइआइपी और खाद्येतर ऋण एवं एफडीआई के बीच सहसंबंध इस अवधि के दौरान और मजबूत हुआ, जिसका तात्पर्य यह है कि इस अवधि के दौरान औद्योगिक क्षेत्र में स्पष्ट गिरावट से वित्तीय सरणी का संबंध बढ़ रहा था (चार्ट VI.15)। हाल की अवधि के दौरान आइआइपी के चक्रीय घटकों और खाद्येतर ऋण के बीच सहसंबंध में तेज बढ़ोतरी आर्थिक मंदी और बढ़ी हुई अनिश्चितता की पृष्ठभूमि में संकट की अवधि के दौरान ऋण की घटती मांग के कारण हुई। सहसंबंध का यह तात्पर्य नहीं है कि वैरिएबलों के बीच कोई कारण-कार्य संबंध है और, इसीलिए, इस संबंध का अभिनिश्चय करने के लिए तकनीकी अभ्यास के साथ आगे अन्वेषण किया गया।

6.101 विभिन्न कारकों की भूमिका का और अन्वेषण करने के लिए औद्योगिक वृद्धि (आइआइपी पर आधारित), बैंक ऋण में वृद्धि (खाद्येतर ऋण) और निर्यात के बीच ग्रैंजर कारणत्व का अनुमान

चार्ट VI.15 : चक्रीय आइआइपी, निर्यात और एफडीआई की प्रवृत्ति

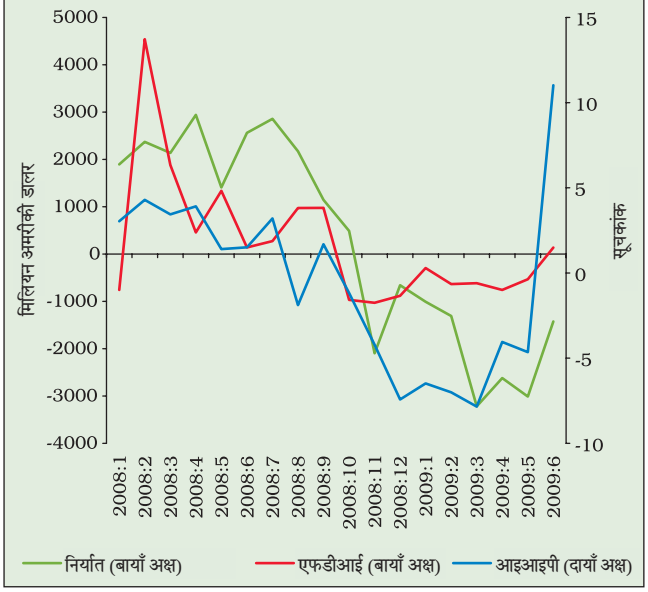

वेक्टर ऑटो रिग्रेसन मॉडल (वीएआर) से लगाया गया, जिसमें कारण-कार्य संबंध देखने के लिए वर्ष 1995-96 से 2009-10 तक के मासिक आँकड़ों का उपयोग किया गया। परिणाम[15] बैंक ऋण और औद्योगिक वृद्धि एवं निर्यात के बीच द्विदिशात्मक कारणत्व को चलता हुआ दिखाते हैं। औद्योगिक वृद्धि से बैंक ऋण तक चलता कारणत्व बैंक ऋण से औद्योगिक वृद्धि तक चलते कारणत्व की तुलना में अधिक महत्त्वपूर्ण है। ग्रैंजर कारणत्व परिणामों के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि हाल के संकट की शुरुआत में न्यूनतर बैंक ऋण का कारण था उद्योग में मंदी आना, जिसने बदले में औद्योगिक मंदी और बैंक ऋण, दोनों को चक्र के भाग के रूप में और अधिक मंद किया। पुनः, वीएआर ग्रैंजर कारणत्व बताता है कि संकुचित होते निर्यात ने संकट-अवधि के दौरान औद्योगिक वृद्धि को बाधित किया। औद्योगिक वृद्धि से निर्यात वृद्धि तक कारणत्व संभवतः प्रौद्योगिकी सुधार और निर्यात के प्रतिस्पर्धात्मक प्रभाव को प्रतिबिंबित करता है। सारांश रूप में, ग्रैंजर कारणत्व परिणाम बताते हैं कि वैश्विक संकट ने औद्योगिक क्षेत्र को संकुचित होते निर्यात और, बदले में, बैंक ऋण को प्रभावित किया।

भिन्न-भिन्न किस्म के विश्लेषण

6.102 भिन्न-भिन्न स्तरों पर, विनिर्माण क्षेत्र, जिसका आइआइपी में सबसे अधिक 74.4 प्रतिशत भारांक है, सबसे अधिक प्रभावित हुआ (सारणी 6.41)। विनिर्माण क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण मंदी ने अविलंब समग्र औद्योगिक क्षेत्र की वृद्धि में तेज गिरावट को प्रतिबिंबित किया। अन्य क्षेत्र, यथा, खनन और उत्खनन एवं विद्युत, गैस एवं जलापूर्ति, ने भी वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में मंदी देखी।

6.103 विनिर्माण क्षेत्र में चक्रीय मंदी अधिक व्यापक हो गयी, जिसमें 17 में से 15 विनिर्माण उद्योगों ने वर्ष 2008-09 के दौरान ऋणात्मक/कम वृद्धि का अनुभव किया। मंदी के पिछले दो चरणों के समान कपास, कपड़ा, काष्ठ और काष्ठ उत्पाद तथा फर्नीचर और फिक्सचर ने वर्तमान चरण में ऋणात्मक वृद्धि का प्रदर्शन किया (सारणी 6.42)। तथापि, विनिर्माण क्षेत्र में दुबारा उछाल वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही से महत्त्वपूर्ण धनात्मक वृद्धि के साथ आया, जिसने देशी कारकों और स्थिर होते अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों से ताकत पायी।

सारणी 6.41 : उद्योग के व्यापक क्षेत्रों का कार्यसंपादन

	2005ति2-2008ति1	2008: ति2	2008: ति3	2008: ति4	2009: ति1	2009: ति2	2009: ति3	2009: ति4	2010: ति1
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
मूल्य योजन में वृद्धि (%)									
खनन एवं उत्खनन	4.6	2.6	1.6	2.7	-0.3	8.2	10.1	9.6	14.0
विनिर्माण	11.6	5.9	5.5	1.3	0.6	3.8	9.1	13.8	16.3
विद्युत, गैस एवं जलापूर्ति	8.4	3.3	4.3	4.0	4.1	6.6	7.7	4.7	7.1
उद्योग	10.3	5.2	4.9	1.7	0.8	4.6	9.0	12.3	15.1
मूल्य योजन में आपेक्षिक अंशदान (%)									
खनन एवं उत्खनन	5.2	5.8	3.8	19.3	-5.0	20.6	12.3	9.6	11.6
विनिर्माण	86.6	87.8	87.5	58.5	56.0	65.0	79.2	86.7	83.9
विद्युत, गैस एवं जलापूर्ति	8.3	6.4	8.8	22.3	48.9	14.5	8.5	3.7	4.5

[15] **वीएआर ग्रैंजर कारणत्व/ब्लॉक एक्सोजेनिटी वॉल्ड परीक्षण**

नल्ल हाइपोथेसिस	चाइ स्क्वेयर स्टैटिस्टिक्स	स्वीकार/अस्वीकार करें (एक्स के कारण वाइ नहीं होता)
खाद्येतर ऋण में वृद्धि औद्योगिक वृद्धि का कारण नहीं बनती	12.55 (0.05)	अस्वीकार करें
निर्यात वृद्धि औद्योगिक वृद्धि का कारण नहीं बनती	25.04 (0.00)	अस्वीकार करें
औद्योगिक वृद्धि खाद्येतर ऋण में वृद्धि का कारण नहीं बनती	48.09 (0.00)	अस्वीकार करें
औद्योगिक वृद्धि निर्यात वृद्धि का कारण नहीं बनती	(75.60) (0.09)	अस्वीकार करें

सारणी 6.42 : 17 द्विअंकीय विनिर्माण उद्योगों का वृद्धि-कार्यसंपादन

(प्रतिशत)

उद्योग	2007-08				2008-09				2009-10			
	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3	ति4
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
1. खाद्यान्न उत्पाद	26.8	-1.6	-4.9	9.9	-7.1	7.6	0.6	-25.2	-17.2	-5.2	0.7	10.2
2. पेय, तंबाकू और संबद्ध उत्पाद	9.7	8.8	17.7	11.9	30.7	9.8	12.2	12.5	-6.2	2.1	1.7	3.1
3. सूती कपड़े	7.3	5.0	2.0	2.9	3.5	-3.2	-3.5	-4.3	-1.7	4.3	9.9	9.7
4. ऊन, रेशम और मानव-निर्मित रेशेदार कपड़े	3.3	6.1	0.4	9.4	7.3	-8.8	1.3	0.5	4.8	21.2	10.7	-1.9
5. जूट एवं अन्य वानस्पतिक रेशेदार कपड़े (सूती को छोड़ कर)	30.1	9.9	-0.7	205.7	-8.1	-2.9	-23.2	-6.3	-16.2	-18.3	-6.3	-52.8
6. टेक्सटाइल उत्पाद (परिधान सहित)	5.9	0.7	6.1	2.3	6.3	4.0	3.8	8.7	8.2	11.0	12.8	2.5
7. काष्ठ एवं काष्ठ उत्पाद, फर्नीचर और फिक्सचर	93.0	66.9	45.8	-3.7	-11.9	-0.5	-10.0	-16.3	14.7	1.3	11.2	13.1
8. कागज और कागज के उत्पाद तथा मुद्रण, प्रकाशन और संबद्ध उद्योग	1.6	0.2	4.0	5.0	1.3	7.7	1.3	-2.8	3.6	-0.5	3.5	9.4
9. चमड़ा एवं चमड़ा और फर उत्पाद	8.5	10.8	11.4	16.2	5.8	-8.7	-10.5	-13.0	-3.5	4.8	1.3	7.1
10. रसायन और रासायनिक उत्पाद (पेट्रोलियम और कोयला के उत्पादों को छोड़ कर)	6.9	10.5	14.9	10.4	11.2	1.2	-4.6	8.8	2.0	13.8	21.9	5.5
11. रबर, प्लास्टिक, पेट्रोलियम और कोयला के उत्पाद	12.5	11.3	6.5	5.6	-3.5	-4.5	-0.9	2.7	10.6	14.3	18.4	17.8
12. गैर-धात्विक खनिज उत्पाद	6.6	10.6	3.8	2.3	1.0	0.1	1.9	1.7	8.3	4.9	6.5	11.1
13. मूल धातु और मिश्र उद्योग	20.1	16.9	6.8	6.8	4.9	8.4	5.0	-2.0	7.7	2.6	3.8	12.0
14. धातु-उत्पाद और पुर्जे (मशीन और उपकरण को छोड़ कर)	-0.1	-1.9	-16.9	-2.2	2.0	1.8	-0.4	-16.8	-4.8	4.9	16.4	45.9
15. परिवहन उपकरण से भिन्न मशीन और उपकरण	14.3	8.4	13.5	6.6	7.9	12.3	4.7	10.3	7.2	15.0	24.4	35.0
16. परिवहन उपकरण और पुर्जे	1.5	2.1	5.3	2.6	10.3	13.9	-10.9	-1.5	6.9	12.0	44.0	37.2
17. अन्य विनिर्माण उद्योग	7.4	18.2	35.8	17.1	-9.4	6.5	5.6	-2.7	14.9	12.3	1.3	16.6

6.104 विनिर्माण क्षेत्र में, निर्यातोन्मुख उद्योगों का समूह (यथा, मूल रसायन और रासायनिक उत्पाद, टेक्सटाइल उत्पाद, ऊन, रेशम और मानव-निर्मित फाइबर टेक्सटाइल, कॉटन टेक्सटाइल तथा चमड़ा एवं चमड़ा तथा फर उत्पाद), जिसने वर्ष 2003-08 में काफी वृद्धि का अनुभव किया था, देशोन्मुख इकाइयों के साथ पीड़ित हुआ। यह जानना रोचक होगा कि निर्यातोन्मुख और देशोन्मुख, दोनों प्रकार के उद्योगों में वर्ष 2009-10 (अप्रैल-सितंबर) के दौरान वृद्धि में महत्त्वपूर्ण तेजी के साथ उछाल आया, जो वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही की तुलना में काफी ऊँचा था (सारणी 6.43)।

6.105 बुनियादी वस्तुओं और उपभोक्ता वस्तुओं के उद्योगों का वर्ष 2008-09 की पहली छमाही का कार्यसंपादन भी मंद रहा और वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में स्थिति में और गिरावट आई (सारणी 6.44)। सभी उप-समूहों में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में गिरावट/ऋणात्मक वृद्धि दर्ज की गयी, लेकिन कुछ उप-समूहों, यथा, मध्यवर्ती वस्तुओं और बुनियादी वस्तुओं, में वर्ष 2009-10 के प्रारंभ से सुधरे हुए कार्यसंपादन के साथ बदलाव आया, जो मांग अभावी मंदी से उबरने का चित्रण करता है। निजी क्षेत्र के कारपोरेटों के कार्यसंपादन के वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में धीमा रहने के बाद उनके मार्जिन में बदलाव भी दिखाई पड़ा, बावजूद इसके कि उनकी बिक्री में वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही में गिरावट दिखाई पड़ी थी (बॉक्स VI.8)।

6.106 पिछले अंतरराष्ट्रीय संकटों के दौरान और उसके बाद उपयोग-आधारित उप-समूहों की प्रवृत्ति के विश्लेषण से वर्ष 2009-10 में देखी गयी औद्योगिक बहाली की धारणीयता के बारे में महत्त्वपूर्ण

सारणी 6.43 : निर्यातोन्मुख विनिर्माण उद्योगों में औसत वृद्धि (आइआइपी पर आधारित)

(प्रतिशत)

समूह	2000-03	2003-08	2008-09: छ1	2008-09: छ2	2009-10: छ1	2009-10: छ2
1	2	3	4	5	6	7
निर्यात-उन्मुख* (भारांक = 25.46)	4.3	8.8	4.4	2.1	7.4	11.0
देश-उन्मुख (भारांक = 53.90)	4.9	9.7	5.8	0.7	5.8	17.1
कुल विनिर्माण उद्योग (भारांक = 79.36)	4.7	9.4	5.3	0.4	6.3	15.4

टिप्पणी : इन उद्योगों की वृद्धि की गणना आइआइपी में उनके भारांकों के अनुसार सूचकांकों को जोड़ कर की गयी है।

* ऐसे पांच उद्योगों को लिया गया है, जिनका अधिकतर विक्रय निर्यात के माध्यम से होता है।

सारणी 6.44 : उपयोग आधारित उद्योगों की मासिक वृद्धि

(प्रतिशत)

	मूल वस्तुएँ			पूँजीगत वस्तुएँ			मध्यवर्ती वस्तुएँ			उपभोक्ता वस्तुएँ		
	2007-08	2008-09	2009-10	2007-08	2008-09	2009-10	2007-08	2008-09	2009-10	2007-08	2008-09	2009-10
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
अप्रैल	8.6	4.0	4.4	10.9	12.4	-5.9	10.6	3.1	7.9	14.7	8.5	-4.6
मई	10.3	3.0	3.8	22.4	4.3	-3.6	8.8	1.9	6.6	8.7	7.4	-1.1
जून	9.2	2.2	10.7	23.1	7.8	13.4	8.6	2.8	7.9	3.6	9.9	4.4
जुलाई	8.7	5.3	4.7	12.3	17.9	1.7	7.7	3.0	9.8	7.1	5.9	9.7
अगस्त	12.7	3.9	7.7	30.8	0.9	9.2	13.8	-5.5	14.4	0.0	6.4	10.9
सितंबर	6.5	5.0	5.3	20.9	20.8	13.5	10.1	-2.5	11.0	-0.2	7.4	9.7
अक्तूबर	6.5	3.2	4.0	20.9	4.2	10.2	13.9	-4.4	15.5	13.7	-0.9	12.1
नवंबर	5.2	2.2	6.0	24.2	0.5	11.1	5.5	-3.9	19.6	-2.9	9.4	12.2
दिसंबर	3.4	2.0	8.4	17.6	6.6	38.7	7.6	-8.9	22.8	8.7	1.7	13.1
जनवरी	3.6	-0.7	11.5	2.6	15.9	53.7	8.0	-7.2	21.9	8.4	3.6	3.0
फरवरी	7.3	-0.1	8.4	10.7	11.8	44.7	8.5	-3.0	15.0	11.7	-1.3	9.1
मार्च	3.3	1.9	10.4	20.3	-6.3	28.4	4.9	1.9	13.1	0.9	1.3	10.7
अप्रै.-मार्च	7.0	2.6	7.1	18.0	7.3	19.2	8.9	-1.9	13.6	6.1	4.7	7.3

स्रोत : सीएसओ, भारत सरकार

मार्गदर्शन प्राप्त हो सकता है। पूर्वी एशियाई संकट के दौरान औद्योगिक क्षेत्र की बहाली में पूँजीगत वस्तुओं ने अगुआई की, जबकि डॉट कॉम संकट के चरण में सभी क्षेत्रों ने मिल कर उद्योग को मंदी से बचाया, लेकिन पुन: यह पूँजीगत वस्तु-क्षेत्र ही था, जिसने इसमें सबसे बड़ा

बॉक्स VI.8

वैश्विक संकट और भारत में कारपोरेटों का कार्यसंपादन

वैश्विक संकट ने भारत में कारपोरेटों के कार्यसंपादन को संचरण की सभी तीन सरणियों, यथा, व्यापार, वित्तीय एवं विश्वास सरणी, के माध्यम से प्रभावित किया। निजी क्षेत्र के कारपोरेटों पर संकट का प्रभाव वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही से अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में बढ़ती विकृतियों की पृष्ठभूमि में, जो अंतत: वैश्विक मंदी/आर्थिक मंदी में परिवर्तित हुई, पड़ने लगा। महँगी होती देशी और विदेशी चलनिधि के परिणामस्वरूप निधियों की लागत में बढ़ोतरी हुई और उन तक पहुँच में कमी हुई। दूसरी ओर, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मंदी से भारतीय कारपोरेटों के लिए मांग कम होने लगी, जैसाकि अक्तूबर 2008 से निर्यात के संकुचित होने से स्पष्ट होता है। विश्व-अर्थव्यवस्था में छायी अनिश्चितता ने भी निवेशक के विश्वास को कम किया और, इसीलिए, निजी कारपोरेट नया निवेश करने से हिचकते रहे। इन सभी कारकों ने देशी और बाह्य, दोनों प्रकार की मांगों को, निधियों की उपलब्धता को, और निवेश की संभावना को कम किया और ये वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही के दौरान निजी क्षेत्र के कारपोरेटों के गिरते कार्यसंपादन में प्रतिबिंबित हुए। तथापि, कारपोरेट क्षेत्र के कार्यसंपादन में वर्ष 2009-10 की दूसरी छमाही के दौरान सुधार हुआ, जिसका कारण था वैश्विक वित्तीय बाजारों में स्थिरता के साथ देशी और बाह्य मांग, दोनों में पुनरुत्थान होना (सारणी 1)।

निजी कारपोरेटों की राजस्व-वृद्धि, जो वर्ष 2008-09 की पहली छमाही के दौरान काफी प्रभावोत्पादक रही थी, में वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में तेजी से गिरावट आयी। विक्रय-वृद्धि, 20 तिमाहियों तक (वर्ष 2004 की तीसरी तिमाही से ले कर वर्ष 2009 की दूसरी तिमाही तक) लगभग औसतन 22 प्रतिशत रहने के बाद वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही में कम हो कर 9.5 प्रतिशत और और पुन: चौथी तिमाही में 1.9 प्रतिशत हो गयी। निजी कारपोरेटों के निवल लाभ में, वर्ष 2001-02 की तीसरी तिमाही से ले कर वर्ष 2006-07 की तीसरी तिमाही तक की 21 तिमाहियों के लिए औसतन 42 प्रतिशत तेजी रहने के बाद, वर्ष 2006-07 की चौथी तिमाही से गिरावट आरंभ हुई और वह वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही के दौरान और

सारणी 1. निजी कारपोरेट क्षेत्र का कार्यसंपादन

	2007-08	2008-09	2009-10	2008-09: ति1	2008-09: ति2	2008-09: ति3	2008-09: ति4	2009-10: ति1	2009-10: ति2	2009-10: ति3	2009-10: ति4
						वृद्धि (%)					
विक्रय	18.6	17.2	11.7	29.3	31.8	9.5	1.9	-0.9	0.1	22.5	29.1
व्यय	19.4	19.5	9.6	33.5	37.5	12.6	-0.5	-4.4	-2.5	20.6	30.7
सकल लाभ	24.9	-4.2	24.9	11.9	8.7	-26.7	-8.8	5.8	10.9	60.0	336.7
निवल लाभ	26.0	-18.4	28.8	6.9	-2.6	-53.4	-19.9	5.5	12.0	99.3	44.0
						अनुपात (विक्रय का %)					
ब्याज	2.5	3.1	2.7	2.4	2.9	3.8	3.2	2.8	3.1	2.7	2.4
सकल लाभ	14.9	13.3	14.8	14.5	13.5	11.0	13.7	15.7	14.9	14.3	14.6
निवल लाभ	9.8	8.1	9.4	9.7	8.6	5.3	8.1	10.2	9.4	8.8	9.0

(जारी..)

(... समाप्त)

गंभीर हो कर (-)53 प्रतिशत पर आ गयी, लेकिन वर्ष 2008-09 की चौथी तिमाही में उसमें 19 प्रतिशत की बढ़ोतरी के साथ बदलाव आया (चार्ट 1)। गौण 'अन्य आय', जिसमें अधिकांशत: विदेशी मुद्रा लाभ और खजाना आय समाविष्ट होते हैं, जिन्होंने पिछले दो वर्षों में निवल लाभ में महत्त्वपूर्ण रूप से योगदान किया था, में भी गिरावट दर्ज की गयी, जिसका कारण था वर्ष 2008-09 के दौरान शेयर बाजार में धीमा कार्यकलाप और रुपये के कमजोर पड़ने का प्रभाव होना।

चुनिंदा कंपनियों की बिक्री (जिसे 100 करोड़ रुपये से कम की वार्षिक बिक्री के रूप में परिभाषित किया जाता है), जो पहली दो तिमाहियों में वर्ष-दर-वर्ष 10 प्रतिशत से अधिक तक बढ़ी थी, वह सितंबर 2008 के बाद अचानक घट गयी। इसी प्रकार, बड़ी कंपनियों की बिक्री (जिसे 100 करोड़ रुपये से अधिक की वार्षिक बिक्री के रूप में परिभाषित किया जाता है) में वर्ष-दर-वर्ष लगभग 30 प्रतिशत वृद्धि वर्ष 2008-09 की पहली दो तिमाहियों में होने के बाद वह अंतिम दो तिमाहियों में घट गयी। परिचालन-मार्जिन वर्ष 2007-08 की तीसरी तिमाही में दर्ज मार्जिन की तुलना में लगभग 400 आधार अंकों तक कम हो गया। तथापि, मार्जिन पर दबाव वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही से कम होता प्रतीत होता है, जिसका कारण मुख्य रूप से गिरती निविष्टि लागत और ब्याज बहिर्वाह में न्यून वृद्धि को माना जा सकता है, जिसके परिणामस्वरूप मार्जिन में सुधार उस स्तर तक हुआ, जो सितंबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स के धराशायी होने के पूर्व दर्ज किया गया था।

क्षेत्रीय स्थिति के बिगड़ने के संदर्भ में विनिर्माण क्षेत्र में कंपनियों के लिए बिक्री और लाभ संबंधी कार्यसंपादन में ढिलाई आईटी और अन्य सेवा-क्षेत्रों की तुलना में अधिक स्पष्ट थी। निवल लाभ मार्जिन, जिसे बिक्री की तुलना में निवल आय अनुपात के

चार्ट 1 : भारत में निजी कारपोरेट क्षेत्र का वृद्धि-कार्यसंपादन (वर्ष-दर-वर्ष प्रतिशत)

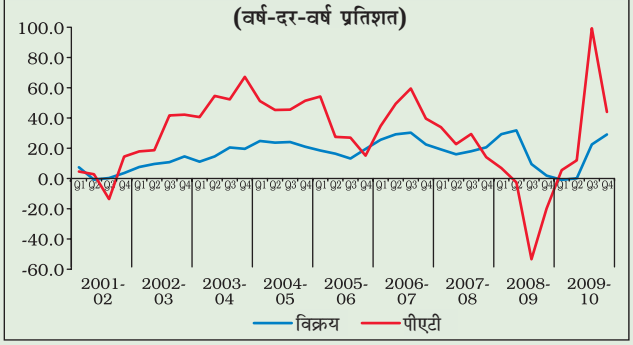

रूप में पाया गया, विनिर्माण क्षेत्र के लिए अधिकतर न्यूनतम रहा है और वर्ष 2007-08 की तीसरी तिमाही में दहाई अंकों के स्तर पर रहने के बाद वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही के दौरान घट कर 5.0 प्रतिशत हो गया। तथापि, निवल मार्जिन वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही में धीरे-धीरे वापस 10 प्रतिशत के निकट आ गया है। तुलनात्मक दृष्टि से, सेवा-क्षेत्र की कंपनियाँ वर्ष 2008-09 की तिमाहियों के दौरान घटती बिक्री के बावजूद लाभ-मार्जिन बनाये रखने में समर्थ हुई हैं; वर्ष 2008-09 की पहली छमाही के दौरान पण्य मूल्यों में बढ़ोतरी का कम प्रभाव सेवा-क्षेत्र के उद्योगों पर पड़ा, क्योंकि उनके कुल व्यय में कच्चे माल की खपत का हिस्सा अपेक्षाकृत कम रहा था।

योगदान किया। पिछले दो अंतरराष्ट्रीय संकटों के दौरान प्राप्त अनुभवों के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि पूँजीगत वस्तु-क्षेत्र की बहाली औद्योगिक क्षेत्र के वर्तमान मंदी से उबरने में महत्त्वपूर्ण रही है, जो निवेश में तेजी लाने की आवश्यकता को रेखांकित करती है। इस प्रकार, वर्ष 2009-10 क दौरान पूँजीगत वस्तुओं की वृद्धि में उछाल से पता चलता है कि औद्योगिक बहाली दृढ़ और धारणीय हो गयी है।

6.107 मुख्य आधारभूत संरचना उद्योग, जो औद्योगिक क्षेत्र का एक बड़ा भाग होता है (आइआइपी में 27 प्रतिशत भारांक), पर भी वर्तमान वैश्विक संकट का स्पिलओवर प्रभाव हुआ। आधारभूत संरचना क्षेत्र को, जिसके विगत अतीत में उच्च वृद्धि के प्रक्षेप-पथ पर चलते रहने के बावजूद घाटा होता रहा और बड़ी बाधाएँ आती रहीं, सितंबर 2008 में विस्तारित वैश्विक संकट के आरंभ से अपेक्षित निधियों के उपलब्ध नहीं होने से, विशेषकर निजी क्षेत्र की परियोजनाओं में, नुकसान उठाना पड़ा। वर्ष 2008-09 और 2009-10 के दौरान विभिन्न आधारभूत संरचना उद्योगों में लक्ष्य और उपलब्धियों के बीच अंतराल और बढ़ गया, जो वैश्विक संकट को प्रतिबिंबित करता है (सारणी 6.45)। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में यह परिकल्पित था कि आधारभूत संरचना में सकल देशी पूँजी निर्माण को, जो वर्ष 2006-07 में जीडीपी का 5 प्रतिशत था, वर्ष, 2011-12 में बढ़ा कर 9 प्रतिशत किया जायेगा, ताकि उपलब्धता में सुधार हो और मांग एवं आपूर्ति के बीच अंतराल को पाटा जा सके।

सेवा-क्षेत्र : भिन्न-भिन्न प्रकार के विश्लेषण

6.108 सेवा-क्षेत्र की उच्च वृद्धि भारत की वृद्धि में उछाल का समर्थन करती रही है। इस क्षेत्र ने वर्ष 2008-09 के पहले के पाँच वर्षों के

सारणी 6.45 : आधारभूत संरचना उद्योगों के लक्ष्य और उपलब्धि के बीच अंतराल

(प्रतिशत)

क्षेत्र	2007-08	2008-09	2009-10
1	2	3	4
विद्युत	-0.8	-6.5	-2.3
कोयला	-1.0	-0.9	0.1
तैयार इस्पात	-3.1	-7.3	-
रेलवे	0.5	-2.0	-0.2
नौवहन (प्रमुख पत्तनों पर संचालित कार्गो)	0.7	-7.9	-3.5
उर्वरक	-12.6	-12.2	-0.1
कच्चा पेट्रोलियम	-2.5	-6.8	-11.4
पेट्रोलियम उत्पाद	6.7	-2.4	4.5
प्राकृतिक गैस उत्पादन	-2.9	-11.1	-8.8

स्रोत : सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय, भारत सरकार

दौरान औसतन 10 प्रतिशत संभावित वृद्धि का प्रदर्शन किया और जीडीपी में इसके आपेक्षिक योगदान का हिस्सा इस अवधि के दौरान क्रमश: 60 प्रतिशत और 70 प्रतिशत से अधिक था। समग्र मूल्ययोजित में सेवा-निर्यात का योगदान, जो वर्ष 2000-01 में 6.9 प्रतिशत था, वह वर्ष 2008-09 के दौरान तेजी से बढ़ कर 15.1 प्रतिशत हो गया। वैश्विक आर्थिक संकट के संचयी प्रभाव की पृष्ठभूमि में वर्ष 2008-09 और 2009-10 के दौरान वृद्धि में गिरावट के बावजूद भारतीय अर्थव्यवस्था की समग्र वृद्धि की तुलना में सेवा-क्षेत्र में उच्च गति से वृद्धि होती रही। हाल के संकट के दौरान सेवा-क्षेत्र द्वारा प्रदर्शित समुत्थान शक्ति ने भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए गुंजाइश बनायी कि उसे अधिकांश उन्नत एवं उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं द्वारा देखी गयी वृद्धि में विकृति का अनुभव नहीं करना पड़े, खास कर डगमगाते औद्योगिक क्षेत्र की पृष्ठभूमि में। यह जानना रोचक होगा कि सेवा-क्षेत्र ने भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए इसी प्रकार की गुंजाइश पिछले अंतरराष्ट्रीय संकटों, यथा, खाड़ी संकट (1990-1991), पूर्वी एशिया संकट (1997-1998) और प्रौद्योगिकी संकट (2000-2001), के दौरान बनायी थी (चार्ट VI.10)।

6.109 सेवा-क्षेत्र का भिन्न-भिन्न प्रकार का विश्लेषण दर्शाता है कि अंतरराष्ट्रीय गतिविधियों के प्रकट होने से विभिन्न समयों में भिन्न-भिन्न उप-समूहों पर प्रभाव पड़ा था। यह जानना रोचक होगा कि जब एक उप-समूह पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था, तब दूसरे उप-समूह के बेहतर कार्यसंपादन ने सेवा-क्षेत्र की समग्र वृद्धि पर प्रभाव का शमन किया था। उदाहरण के लिए, वर्ष 2008-09 की पहली छमाही में वित्तीय, बीमा, स्थावर संपदा और व्यवसाय सेवा उप-समूह पर गंभीर प्रभाव पड़ा था, लेकिन दूसरा उप-समूह - व्यापार, हॉटेल, परिवहन और संचार - में ऊँची गति से वृद्धि होती रही और उसने सेवा-क्षेत्र में तीव्र ह्रास से बचाने के लिए गुंजाइश बनायी। इसी प्रकार, वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही के दौरान व्यापार, हॉटेल, परिवहन और संचार की वृद्धि में कमी आयी, लेकिन वित्तीय, बीमा, स्थावर संपदा और व्यवसाय सेवा के उप-समूह में सुधार हुआ और इसके साथ सामुदायिक और सामाजिक एवं वैयक्तिक सेवाओं की वृद्धि में तेजी आयी, जिसने सेवा-क्षेत्र की वृद्धि के लिए गुंजाइश बनायी (सारणी 6.46)।

6.110 सारांशत: यह कहा जा सकता है कि भारतीय अर्थव्यवस्था ने वर्ष 2007-08 की अंतिम तिमाही में मंदी के आरंभिक संकेत देखे थे, लेकिन संकट का वास्तविक प्रभाव वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में महसूस किया गया। हाल के वैश्विक संकट ने भारतीय अर्थव्यवस्था में चक्रीय गिरावट को बढ़ा दिया, जिसके चलते निजी उपभोग और निवेश पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। औद्योगिक वृद्धि में महत्त्वपूर्ण रूप से गिरावट आयी, जबकि सेवा-क्षेत्र ने वर्ष 2008-09 की पहली छमाही के दौरान उद्योग की तुलना में वृद्धि में संयत गिरावट दर्ज की। औद्योगिक उत्पादन सूचकांक के चक्रीय घटक और खाद्येतर ऋण के बीच सहसंबंध में तीव्र गिरावट का कारण आर्थिक मंदी और बढ़ी हुई अनिश्चितता की पृष्ठभूमि में संकट की अवधि के दौरान ऋण की मांग में कमी होना हो सकता है। भारत में कारपोरेटों के कार्यसंपादन संचरण की सभी सरणियों के माध्यम से प्रभावित हुए, यथा, व्यापार, वित्तीय, पण्य-मूल्य और विश्वास सरणियाँ। सेवा-क्षेत्र की वृद्धि में नरमी अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों के अनुरूप देशी वित्तीय बाजारों में बढ़ी हुई अस्थिरता और अनिश्चितता के कारण आयी। तथापि, भारतीय

चार्ट VI.16 : सेवाओं का आपेक्षिक अंशदान

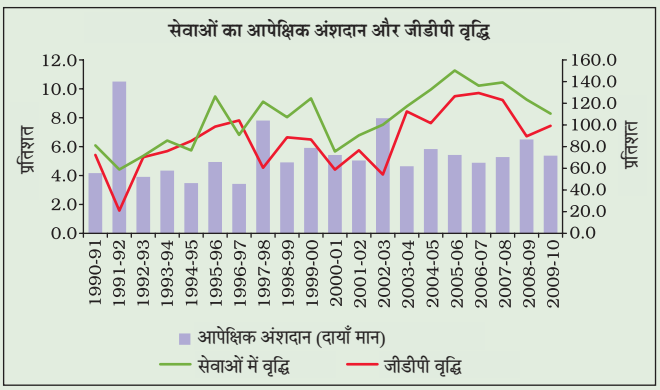

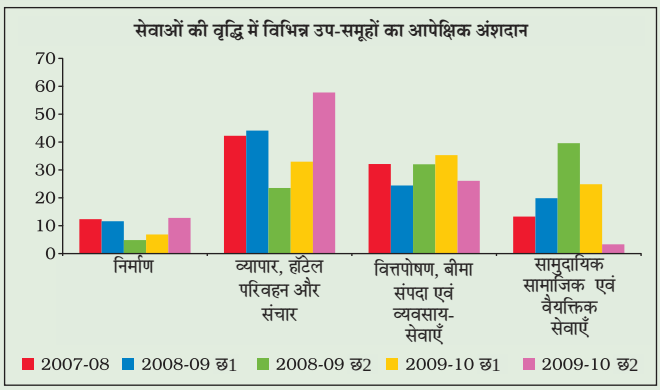

सारणी 6.46 : भिन्न-भिन्न स्तरों पर सेवा-क्षेत्र की वृद्धि
(वर्ष 2004-05 की कीमतों पर)

(प्रतिशत)

वर्ष	निर्माण	व्यापार, होटेल, परिवहन, संचार	वित्तपोषण, बीमा, स्थावर संपदा एवं व्यवसाय-सेवाएँ	सामुदायिक, सामाजिक एवं वैयक्तिक सेवाएँ	सेवाएँ
1	2	3	4	5	6
प्रवृत्ति					
2000-2002	5.1	8.2	5.7	4.4	6.3
2002-2005	12.0	10.7	7.4	5.4	8.7
2006-2008	11.0	11.5	13.5	5.7	10.6
वार्षिक					
2007-08	10.0	10.7	13.2	6.7	10.4
2008-09	5.9	7.6	10.1	13.9	9.3
2009-10	6.5	9.3	9.7	5.6	8.3
छमाही					
2007-08:छ1	11.9	10.7	13.9	5.6	10.6
2007-08:छ2	8.3	10.8	12.6	7.7	10.3
2008-09:छ1	8.5	10.4	8.8	9.6	9.6
2008-09:छ2	3.4	5.1	11.3	17.8	9.0
2009-10:छ1	4.6	7.0	11.7	11.0	8.7
2009-10:छ2	8.4	11.3	7.9	1.2	7.9
त्रैमासिक					
2008-09:ति1	9.8	10.8	9.1	8.7	9.8
2008-09:ति2	7.2	10.0	8.5	10.4	9.3
2008-09:ति3	1.1	4.4	10.2	28.7	10.0
2008-09:ति4	5.7	5.7	12.3	8.8	8.0
2009-10:ति1	4.6	5.5	11.8	7.6	7.5
2009-10:ति2	4.7	8.5	11.5	14.0	10.0
2009-10:ति3	8.1	10.2	7.9	0.8	7.3
2009-10:ति4	8.7	12.4	7.9	1.6	8.5

अर्थव्यवस्था मंदी से उबर गयी है, जिसमें विशेष रूप से वर्ष 2009-10 की दूसरी छमाही से औद्योगिक क्षेत्र और बाह्य व्यापार के क्षेत्र में ठोस बहाली हुई है।

V. निष्कर्षात्मक टिप्पणियां

6.111 हाल का वैश्विक संकट अपनी तीव्रता और सभी देशों में समकालिकता के संदर्भ में अनोखा था। भारत में संपदा क्षेत्र में वैश्विक आघातों का संचरण विविध सरणियों के माध्यम से कार्यान्वित हुआ, यथा, व्यापार, वित्त, प्रत्याशा और पण्य-मूल्य सरणियाँ। भारतीय संदर्भ में, जबकि परंपरागत रूप से व्यापार सरणी संपदा क्षेत्र में आघातों के संचरण की प्रमुख वाहक थी, वित्तीय सरणी कालक्रम में तगड़े रूप में उभर कर आयी। यहाँ तक कि व्यापार सरणी भी कालक्रम में अपेक्षाकृत प्रमुख बन गयी, जिसमें वस्तुओं और सेवाओं के लिए जीडीपी की तुलना में व्यापार का अनुपात बढ़ता गया।

6.112 पिछले कुछ वर्षों के दौरान भारत की व्यवसाय-चक्र समकालिकता वित्तीय खुलापन से ताकतवर बनती गयी है। सब-प्राइम संकट के प्रारंभ होने के बाद यह वाद-विवाद का विषय बन गया था कि क्या भारत, अन्य ईएमई के साथ, निरापद बना रहा और उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से, जो गंभीर मंदी का अनुभव कर रही थीं, अलग हो गया। तथापि, भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि में भी वर्ष 2008-09 की तीसरी तिमाही से गिरावट आने लगी, जो उन्नत देशों और ईएमई के साथ भारत की व्यवसाय-चक्र समकालिकता को प्रतिबिंबित करती है और जिसने वियोजन परिकल्पना को अमान्य बना दिया।

6.113 हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव का अनुभव सीधे व्यापार सरणी के माध्यम से किया गया, जिसमें निर्यात-मांग प्रमुख रूप से बाह्य-मांग स्थितियों से निर्धारित की जाती थी। ग्रैंजर कारणत्व विश्लेषण से निर्यात से जीडीपी तक कारणत्व संबंध की दिशा का पता चला, लेकिन इसके विपरीत स्थिति का पता नहीं चला। पण्यवार पैटर्नों ने दर्शाया कि इंजीनियरी वस्तुएँ वैश्विक अर्थव्यवस्था के प्रति अधिक अनुक्रियाशील थीं। दूसरी ओर, व्यापार घाटा अनुपात और आर्थिक वृद्धि के बीच कारणत्व संबंध की दिशा बाद वाले से पहले वाले की ओर थी, जिसका कारण देशी आर्थिक कार्यकलाप द्वारा प्रेरित आयात-मांग की भूमिका को माना जा सकता है। इस प्रकार, चूँकि आयात-मांग भी देशी कार्यकलाप के आगे-पीछे के क्रम में संकुचित हुई, अत: भुगतान संतुलन की स्थिति पर बाह्य मांग में गिरावट के प्रतिकूल प्रभाव को रोका गया। यह महसूस किया गया कि अधिक धारणीय आधार पर निर्यात की संभावना में सुधार करने के लिए विविधीकरण पर, जो बाजारों और निर्यात मद, दोनों के संदर्भ में हो, और प्रतिस्पर्धात्मकता पर जोर दिया जाना चाहिए और इसके लिए इस क्षेत्र को कर-विराम, निर्यात के लिए प्रयुक्त निविष्टियों पर कम उत्पाद एवं सीमा-शुल्क, तथा निर्यातकों के वित्तपोषण के लिए रियायती ब्याज दर, जैसे प्रोत्साहनों पर निर्भर नहीं रहने दिया जाना चाहिए, भले ही ऐसे प्रोत्साहन निर्यात क्षेत्र की अस्थायी सहायता के रूप में वैश्विक मांग में गिरावट के चरण में आवश्यक हो जायें।

6.114 भारत में वैश्विक आघातों का संचरण सेवा-क्षेत्र के माध्यम से भी हुआ, जैसेकि यात्रा, सॉफ्टवेयर एवं अन्य आइटीईएस-बीपीओ

सेवाएँ। वैश्विक आघातों ने पर्यटकों के आगमन को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया और, इसीलिए, यात्रा से संबंधित सेवाओं की मांग में, यथा, हॉटेल और परिवहन, में गिरावट दिखाई दी। आइटीईएस-बीपीओ सेवाएँ, जो निर्यात पर अत्यधिक निर्भर होती हैं, पर निर्यात में हानि के रूप में वैश्विक आघात का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव हुआ, जिसने अप्रत्यक्ष, लेकिन महत्त्वपूर्ण रूप से इस क्षेत्र से उद्भूत रोजगार एवं देशी मांग को प्रभावित किया।

6.115 पण्य-मूल्य सरणी ने मुख्य रूप से प्राथमिक वस्तुओं, यथा, खाद्यान्न, धातुएँ, तेल और खनिज के अंतरराष्ट्रीय मूल्य पर आघात के माध्यम से कार्य किया। किसी अर्थव्यवस्था में मूल्यों और वास्तविक कार्यकलापों पर ऐसे आघातों का प्रभाव उपभोग-समूह में उनके भारांक पर निर्भर करता है। भारत में तेल-मूल्य पर, जो प्रमुख रूप से आयात पर निर्भर होता है, आघात ने महत्त्वपूर्ण रूप से अतीत में देशी मूल्यों और वास्तविक कार्यकलाप को प्रभावित किया था। हाल के वैश्विक संकट के दौरान, तेल-मूल्य आघातों के कारण देशी मुद्रास्फीति में बड़ा उतार-चढ़ाव आया। हाल की अवधि में, हालाँकि कुल आयात-समूह में भारत के खाद्यान्न-आयात में काफी गिरावट आयी, फिर भी पण्य बाजारों के द्रुत वित्तीयकरण के माध्यम से खाद्यान्न मूल्यों के वैश्विक एकीकरण के परिणामस्वरूप देशी और विश्व खाद्यान्न मूल्य मुद्रास्फीति में सहसंबंध बढ़ा। वास्तव में हाल की अवधि में वैश्विक पण्य-चक्र यह प्रकट करता है कि भारत में खाद्यान्न मूल्यों का विस्तारक चरण वैश्विक पण्य-मूल्य चक्र का अनुगामी हुआ।

6.116 भारत में उपभोग मांग, हालाँकि यह प्रमुख रूप से घरेलू उपभोग से प्रेरित होता है, पर बाह्य आघातों का अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा। पहला, धन-प्रेषण के अंतर्वाह में गिरावट, जो अमरीकी अर्थव्यवस्था में मंदी होने और मध्य-पूर्व के देशों में तेल की कीमतों के अचानक कम हो जाने, दोनों प्रकार से प्रभावित हुआ था, ने भारत में उपभोग-मांग पर प्रभाव डाला प्रतीत होता है, क्योंकि भारत में प्रत्यावर्तित धन का एक बड़ा हिस्सा परिवार के निर्वाह के लिए होता है। अनुभवमूलक साहित्य भी यह बताता है कि निजी उपभोग मांग और भारत को भेजे गये धन-प्रेषण के बीच कुछ संबंध है। दूसरा, निर्यात पर निर्भर और रोजगार-प्रधान क्षेत्रों, यथा, रत्न एवं आभूषण, सूती कपड़ा, चमड़े की वस्तुएँ, और आइटीईएस-बीपीओ सेवाएँ, के रोजगारजन्य संघात का सीधा परिणाम इन क्षेत्रों में रोजगार की महत्त्वपूर्ण हानि हुआ और, इसीलिए, इसने उपभोग मांग पर प्रतिकूल प्रभाव डाला। तीसरा, बाह्य मांग में हानि द्वारा सृजित अनिश्चितता और अस्थिर वैश्विक वित्तीय बाजारों ने देशी फर्मों के निर्णयों को प्रभावित किया, जिसके चलते देशी निवेश मांग में समग्र संपीडन हुआ।

6.117 वित्तीय सरणी का प्रभाव मुख्य रूप से संविभाग प्रवाह, बाह्य वाणिज्यिक उधार, बैंकिंग पूँजी और व्यापार ऋण के माध्यम से निष्पादित हुआ। 1980 के दशक ने भारत में पूँजी-प्रवाह में प्रणाली-बदलाव की घोषणा की, जिसमें निजी पूँजी-प्रवाह बाह्य वाणिज्यिक उधारों (ईसीबी), अनिवासी भारतीय (एनआरआई) जमाराशियों और अल्पावधि व्यापार ऋण के माध्यम से हुआ। 1990 के दशक में विदेशी निवेश प्रणाली के उदारीकरण से भारत में पूँजी प्रवाह में और भी बदलाव आया, खास कर इक्विटी प्रवाह में। पूँजी प्रवाह जटिल रूप से ब्याज दरों, शेयर मूल्यों, विनिमय दरों और पण्य मूल्यों से जुड़े रहे हैं।

6.118 वैश्विक वित्तीय संस्थाओं और हेज फंडों द्वारा डिलिवरेजिंग का परिणाम वर्ष 2008-09 में भारत में पूँजी अंतर्वाह का प्रतिवर्तन के रूप में हुआ, जिसने अर्थव्यवस्था को इक्विटी मूल्यों में तीव्र गिरावट, विनिमय दर और ब्याज दर उतार-चढ़ाव के माध्यम से प्रभावित किया। एफआइआइ अंतर्वाह में प्रतिवर्तन का सीधा योगदान इक्विटी मूल्यों में गिरावट में हुआ, जिसने बदले में कारपोरेटों की पूँजी बाजारों में पहुँच को कम किया, क्योंकि उनके तुलनपत्र दुर्बल हुए और प्राथमिक बाजार अनकदी हो गया। अंतरराष्ट्रीय बाजारों में ऋण की शर्तों को कठोर किये जाने से भारतीय फर्मों की समुद्रपार बांड बाजारों तक पहुँच कम हो गयी। इसके साथ-साथ, व्यापार ऋण तक पहुँच में महत्त्वपूर्ण रूप से गिरावट आयी, जिसमें पुनर्निर्धारण की समस्या ने आयात मांग के संपीडन की अगुआई की। बैंकिंग पूँजी में भी महत्त्वपूर्ण बहिर्वाह देखा गया, जिसने बदले में देशी ऋण-स्थिति में ह्रास की अगुआई की। पूँजी अंतर्वाह का प्रभाव अर्थव्यवस्था में निवेश मांग की वृद्धि में गिरावट में प्रतिबिंबित हुआ।

6.119 निवल पूँजी अंतर्वाह में काफी गिरावट आने के बावजूद, जो वर्ष 2007-08 में 107 बिलियन अमरीकी डालर था और वर्ष 2008-09 में घट कर 7.2 बिलियन अमरीकी डालर हो गया, अर्थव्यवस्था के बाह्य क्षेत्र में समुत्थान-शक्ति दिखाई पड़ी, क्योंकि वर्ष 2008-09 के दौरान आरक्षित निधि में हानि (मूल्यन को छोड़ कर)

केवल 20 बिलियन अमरीकी डालर की हुई थी। पूरे वर्ष के लिए चालू खाता घाटा, जो वर्ष 2007-08 में जीडीपी का 1.5 प्रतिशत था, वह वर्ष 2008-09 में बढ़ कर 2.4 प्रतिशत हो गया। पर्याप्त विदेशी मुद्रा आरक्षित निधि बनाये रखने का महत्त्व, भले ही वह अधिकतर नमनीय विनिमय दर प्रणाली के साथ हो, वर्ष के दौरान स्पष्ट हो गया, जब एक सबसे बड़े गंभीर बाह्य आघात पर नियंत्रण चालू और पूँजीगत खातों में विनिर्दिष्ट लेन देनों का नियंत्रण करने के लिए किसी आपवादिक उपाय के बिना किया जा सका।

6.120 व्यापार, वित्तीय और पण्य-मूल्य सरणियों के माध्यम से वृद्धि पर अंतिम प्रभाव प्रतिबिंबित हुआ। वृद्धि, जिसमें वर्ष 2008-09 की पहली छमाही में चक्रीय गिरावट के साथ कमी आयी थी, उसमें वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में और भी कमी आयी, जिसका कारण वैश्विक संकट की छूत को माना जा सकता है। निजी उपभोग और सकल देशी पूँजी निर्माण में महत्त्वपूर्ण गिरावट के साथ सिकुड़ते बाह्य मांग ने सरकारी क्षेत्र की उपभोग और निवेश, दोनों की मांग में विस्तार को आवश्यक बना दिया। वास्तव में, यह पाया गया है कि जीडीपी वृद्धि में चक्रीय उतार-चढ़ाव मुख्यत: चक्रीय निजी उपभोग और सकल देशी पूँजी निर्माण से प्रेरित रहे हैं।

6.121 औद्योगिक क्षेत्र में अनेक उन्नत देशों और ईएमई में वर्तमान संकट के दौरान मंदी देखी गयी और भारत में औद्योगिक क्षेत्र की गतिविधि का हाल की अवधि में उन्नत देशों और ईएमई के साथ अधिक सहसंबंध देखा गया है। सेवा-क्षेत्र में भी वैश्विक संकट से उत्पन्न गिरावट का असर हुआ, लेकिन इसने तगड़ी समुत्थान-शक्ति का प्रदर्शन किया और भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि-दर के लिए गुंजाइश बनायी। यद्यपि भारत के सेवा-क्षेत्र की अनेक ज्ञान आधारित सेवाओं में प्रतिस्पर्धात्मक तीक्ष्णता है, फिर भी भारत को अपनी भौतिक आधारभूत संरचना में श्रेष्ठ मानव संसाधन के साथ शेष सेवाओं में प्रतिस्पर्धात्मक तीक्ष्णता में सुधार लाने की जरूरत है। सेवा-क्षेत्र विविध प्रकार की चुनौतियों का सामना कर रहा है, भले ही इसमें हाल की अवधि में उच्च वृद्धि और समुत्थान-शक्ति दिखाई पड़ी है। इस संबंध में शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में नीतिगत ढाँचे में सुधार के लिए ध्यान दिया जाना होगा, जबकि व्यावसायिक, विधिक, डाक, लेखाशास्त्र और बीमा जैसी संभावित सेवाओं के लिए और अधिक उदारीकरण के साथ संभावनाएँ तलाशनी होंगी।

6.122 पर्याप्त आधारभूत संरचना की उपलब्धता विकास प्रक्रिया की सफलता की कुंजी होती है। तथापि, आधारभूत संरचना के लिए अधिक वित्तपोषण जरूरी होता है और इसके लिए सरकारी और निजी क्षेत्र, दोनों में सहयोग की आवश्यकता होती है। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में इस दिशा में 500 बिलियन अमरीकी डालर के निवेश का अनुमान किया गया है। हाल के वैश्विक संकट ने निवेश वातावरण को मंद बनाते हुए इस निवेश को महसूस करना वास्तव में चुनौतीपूर्ण बना दिया। यहाँ चुनौती यह है कि निवेश को पूँजी पर प्रत्याशित प्रतिलाभ के संदर्भ में आकर्षक बनाया जाये, जबकि यह उपभोक्ताओं के लिए और आधारभूत संरचना का वास्तविक उपयोग करने वालों के लिए भी उचित हो, ताकि इसमें निजी क्षेत्र की भागीदारी हो सके। हाल के वर्षों में आधारभूत संरचना क्षेत्रों, यथा, दूर संचार, विद्युत-उत्पादन, विमान पत्तन, बंदरगाह, सड़क और रेलवे, में सरकारी-निजी भागीदारी (पीपीपी) के माध्यम से निजी निवेश को आकृष्ट किया जाना इंद्रियगोचर हुआ है।

6.123 भारत सरकार और रिज़र्व बैंक ने युक्तियुक्त नीतिगत उपायों के साथ कार्रवाई की और वे प्रगामी ढंग से लागू किये गये। जबकि भारतीय रिज़र्व बैंक ने प्रणाली में देशी और विदेशी मुद्रा चलनिधि, दोनों में सुधार करने के लिए द्रुत गति से और नपे-तुले उपाय किये, सरकार ने शिथिल सकल मांग को बढ़ाने के लिए प्रतिचक्रीय प्रोत्साहन उपायों को क्रियान्वित किया। मौद्रिक और राजकोषीय नीतिगत उपाय, दोनों ही वांछित परिणाम लाने में सफल प्रतीत होते हैं, जैसाकि वर्ष 2009-10 में जीडीपी वृद्धि की बहाली होने से स्पष्ट होता है। औद्योगिक क्षेत्र वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में देखी गयी मांग अभावी मंदी से उबरा है और इसमें वर्ष 2009-10 की पहली तिमाही से वृद्धि में उछाल दिखाई पड़ता है। तथापि, सेवा-क्षेत्र में वर्ष 2009-10 में वृद्धि में गिरावट का अनुमान किया जाता रहा, हालाँकि दूसरी तिमाही में वृद्धि की गति छठे वेतन आयोग के बकाये के भुगतान के कारण तेज हुई। सेवा-क्षेत्र को कुछ अंतराल के साथ औद्योगिक क्षेत्र के साथ प्रतिक्रिया करते देखा गया है और वर्तमान औद्योगिक बहाली से उद्योग-संबद्ध सेवाओं, यथा, यात्रा, परिवहन, वित्तपोषण, और व्यवसाय-सेवाओं, में वृद्धि की गति तेज होगी, जिससे सेवा-क्षेत्र की गति ऊर्ध्वमुखी हो सकेगी।

6.124 पूरी दुनिया में विस्तारक मौद्रिक दृष्टिकोण के समय और अनुक्रमण के बारे में काफी वाद-विवाद हो रहा है। तथापि, वर्तमान मौद्रिक नीतिगत सहायता से निकास का कार्य विभिन्न देशों में भिन्न-भिन्न प्रकार से हो सकता है, जो वृद्धि और मूल्य स्थिरता की जोखिम के संतुलन पर, तुलनपत्र समायोजनों के प्रकार पर, जो संकट के दौरान किये गये हों, और व्यवसाय -चक्र में अर्थव्यवस्था की स्थिति पर, निर्भर करेगा। उन्नत देशों के मामले में, जहाँ केंद्रीय बैंक के तुलनपत्र, जो बंधक समर्थित प्रतिभूतियों, वाणिज्यिक पत्रों और कारपोरेट बांडों को समाविष्ट करने वाले संविभाग के साथ काफी विस्तारित हुए हैं, निकास नीति विनिर्दिष्ट बाजार खंडों में पुनरुत्थान में तेजी और गतिविधियों द्वारा बाधित हो सकती है। इसके विपरीत, भारत में केंद्रीय बैंक निभाव मुख्यत: एमएसएस को उन्मुक्त किये जाने, ओएमओ के संचालन, जिसमें एलएएफ शामिल है, और बैंकिंग प्रणाली में विशेष पुनर्वित्त सुविधाओं के माध्यम से किये गये। इस प्रकार, भारत में मौद्रिक सहायता का प्रत्याहार विनिर्दिष्ट बाजार खंड पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना करना संभव होगा (मोहान्ती, 2009)।

6.125 वर्ष 2009-10 की मौद्रिक नीति की अक्तूबर 2009 में की गयी समीक्षा में भारतीय अर्थव्यवस्था में बहाली का प्रबंध करते समय अनुभव की गयी चुनौतियाँ सामने आयीं। रिज़र्व बैंक के सामने स्पष्ट चुनौती मूल्य स्थिरता से समझौता किये बिना बहाली प्रक्रिया का समर्थन करना है। इसके लिए समझौताकारी समन्वयन का सतर्कतापूर्वक प्रबंध करना आवश्यक है। वृद्धि के प्रेरक तत्व विलंबित निकास की अपेक्षा करते हैं, जबकि मुद्रास्फीति संबंधी चिंता के चलते शीघ्र निकास अपेक्षित है। समय पूर्व निकासी से कमजोर वृद्धि पटरी से उतर जायेगी, लेकिन विलंबित निकास से सभवत: मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं का उद्भव होगा। वर्तमान संधि-काल में संतुलित निर्णय यह होगा कि 'निकास' का अनुक्रम नपे-तुले ढंग से रखा जाये, ताकि बहाली की प्रक्रिया बाधित न हो और मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं को थामा जा सके। इस प्रकार 'निकास' की प्रक्रिया कुछ विशेष चलनिधि-सहायता उपायों को समाप्त किये जाने के साथ आरंभ हुई। रिज़र्व बैंक ने 'निकास' का पहला चरण अक्तूबर 2009 में आरंभ किया, जिसमें संकट के दौरान किये गये अधिकांश गैर-परंपरागत उपायों को वापस लिया गया, जिसके बाद सीआरआर और नीति-दरों में बढ़ोतरी की गयी। सरकार ने भी तेरहवें वित्त आयोग की सिफारिशों पर कार्रवाई करते हुए विस्तारक राजकोषीय दृष्टिकोण से निकास की शुरुआत की, जिसमें अंशत: अप्रत्यक्ष कर की दरों को वापस लिया गया और वर्ष 2010-11 के बजट में गैर-योजना व्यय को कम किया गया।

7 संकट से प्राप्त सबक और भावी चुनौतियां

7.1 अन्य वित्तीय संकटों के विपरीत हाल के संकट के बीज उन्नत अर्थव्यवस्थाओं, विशेषकर अमेरिका में बोये गये थे। यह संकट 2007 की गर्मी में वहां फूट पड़ा और इसके बाद दुनिया के अन्य भागों में फैल गया। अब यह स्पष्ट हो गया है कि संकट के लिए कई कारक जिम्मेदार थे। संकट का निकटस्थ कारण अमेरिका में आवास चक्र की विफलता और सब-प्राइम बंधकों की चूकों में वृद्धि हो सकता है, जिससे कई वित्तीय संस्थाओं को काफी हानि हुई और जिसने ऋण बाज़ारों में निवेशकों के विश्वास को झकझोर दिया, लेकिन वैश्विक स्तर पर कुछेक समष्टि-आर्थिक कारक भी परिचालित थे जिन्होंने ऐसी तेजी के बनने में मदद की।

7.2 संकटों की अन्तर-कालिक तुलना यह प्रदर्शित करती है कि हालांकि हाल की वित्तीय खलबली के प्रकट होने में कुछ नये तत्व सन्निहित थे लेकिन अधिक बुनियादी संघटक वैसे ही हैं (अध्याय 2 देखें)। संकटों की पुनरावृत्ति प्रणाली में सन्निहित मूल अनुचक्रीयता को प्रदर्शित करती है जिसकी विशेषता यह है कि अच्छे समय में जोखिम उठाया जाता है और लीवरेज के बढ़ने दिया जाता है जबकि खराब समय में जोखिम से एकाएक निकासी के साथ-साथ लीवरेज को कम किया जाता है। आनुभाविक रूप से यह पाया गया है कि संकट की हाल की घटना में आस्तियों के मूल्यों का पैटर्न अन्य बड़े वित्तीय संकटों की घटनाओं की याद दिलाता है। अमेरिकी आवासीय तेजी का समग्र आकार और इसकी गतिकी, जिसमें संकट से पूर्व के पांच वर्षों में आवास के मूल्यों में 30% से अधिक की वृद्धि और संकट के आरंभ होने से पूर्व के छह तिमाहियों में शीर्ष पर होना शामिल है, उदाहरणार्थ, फिनलैण्ड (1991), जापान (1992), नार्वे (1987), स्वीडन (1991) और स्पेन (1977) जैसी उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में कुछ पूर्व बैंकिंग संकटों के दौरान की घटनाओं में आवास मूल्यों में उल्लेखनीय समरूपता देखी गई है (रीनहार्ट और रोगोफ, 2008)। साथ ही संकट से पूर्व की अवधि में लंबे समय तक अमरीका में ऋण का विस्तार होना पूर्ववर्ती घटनाओं की तरह ही है, सिवाय इसके कि इस बार यह एक खंड अर्थात् सब-प्राइम बंधक बाज़ार तक केंद्रित था। फिर भी, इसके संप्रेषण और विस्तार के संबंध में कुछ नये आयाम थे जिन्होंने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन नये आयामों में शामिल थे (i) जटिल और अपारदर्शी वित्तीय लिखतों का व्यापक उपयोग; (ii) वित्तीय बाज़ारों के बीच राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर वर्धित अंतरसंबद्धता, जिसमें अमेरिका सबसे आगे था; (iii) अत्यधिक लीवरेज वाली वित्तीय संस्थाएं; और (iv) घरेलू क्षेत्र की केंद्रीय भूमिका।

7.3 वैश्विक वित्तीय संकट के तात्कालिक कारण के रूप में अमेरिकी सब-प्राइम बंधक की विफलता ने यह प्रकट किया कि कुछ वित्तीय योजनाएं और लिखत इतने जटिल हो गये हैं कि जिन्होंने वैश्विक वित्तीय प्रणाली के लिए काफी जोखिम प्रस्तुत की, जिसके परिणामस्वरूप विश्वभर की अर्थव्यवस्था समकालिक तरीके के संकट की ओर अग्रसर हुई। हालांकि संकट के कारणों को समझने में उन कारकों के बीच के अंतर को पहचाना महत्त्वपूर्ण है जिन्होंने अमेरिकी सब-प्राइम आवास ऋण बाज़ार में चूकों की वृद्धि में योगदान दिया और उन कारकों को, जिन्होंने इन हानियों को और व्यापक बनाया तथा जिनके कारण वित्तीय बाज़ारों में बड़ी अव्यवस्था हुई। सब-प्राइम आवास में बढ़ती हानियों के लिए जो कारक सीधे तौर पर जिम्मेदार थे, उन्हें इस प्रकार से पहचाना जा सकता है (i) कम ब्याज दर/अनुकूल समष्टि-आर्थिक माहौल, जिसने अधिक जटिल वित्तीय उत्पादों में निवेश कर उच्चतर प्रतिफल की खोज में ऋण देने और जोखिम उठाने के लिए प्रोत्साहित किया; (ii) विनियामक संरचनाएं, जिन्होंने प्रतिभूतिकरण के वर्धित उपयोग और 'आरंभ और वितरण' बंधक मॉडल के विस्तार को प्रोत्साहित किया; (iii) ऋण गुणवत्ता की ओर कम ध्यान; (iv) निवेशकों के बीच समुचित सावधानी की कमी; और (v) जोखिम प्रबंध प्रणालियों और विनियामक निरीक्षण में कमजोरियां। संकट में योगदान देने और उसको तीव्र करने वाले अन्य कारकों में शामिल थे (i) ओवर-दी-काउंटर (ओटीसी बाज़ार) में जटिल संरचित वित्तीय उत्पादों में अंतर्निहित पारदर्शिता की कमी; (ii) दबाव की अवधियों के दौरान उचित मूल्य लेखांकन के उपयोग में कठिनाइयां और अनुभवहीनता; (iii) वित्तीय बाज़ार के सभी सहभागियों की

जोखिम प्रबंध प्रणालियों में कमजोरियां, विशेषकर चलनिधि जोखिम के संबंध में; (iv) एक्सपोज़र और जोखिमों के बारे में अपर्याप्त प्रकटन; (v) लीवरेज का उच्च स्तर; और (vi) क्रेडिट रेटिंग पर अधिक-निर्भरता और संरचित उत्पादों की क्रेडिट रेटिंग में कमियां। उच्च लीवरेज अधिक व्यापक रूप में हानियों को बढ़ाने का उल्लेखनीय कारक रहा है, जिसके चलते कुछ वित्तीय संस्थाओं ने गिरते बाज़ारों में प्रतिभूतियां बेचीं, क्योंकि मूल्यों की पूर्व गिरावट के लिए उन्हें मार्जिन राशि देनी पड़ी। इसने मूल्यों में गिरावट की कुण्डली में योगदान दिया (जी-20 अध्ययन दल, 2008)। संक्षेप में, वित्तीय संकट में समष्टि और व्यष्टि, दोनों कारकों ने योगदान दिया।

7.4 वित्तीय संकट, जिसकी विशेषताएं उच्च प्रणालीगत जोखिम, आस्ति के गिरते मूल्य और कम होते ऋण हैं, के कारण सभी देशों में कारोबारी और उपभोक्ता विश्वास को धक्का लगा तथा वैश्विक आर्थिक कार्यकलाप में तेजी से कमी शुरू हुई। इसका प्रभाव उत्पादन, रोजगार, व्यापार और वित्तीय प्रवाहों पर प्रभाव अत्यधिक पड़ा (देखें अध्याय 3)। असल में, उन्नत और उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) के बीच बढ़ते व्यापार और वित्तीय एकीकरण से संकट के प्रभाव अधिक संक्रामक सिद्ध हुए। जीडीपी की वृद्धि दर पर प्रभाव के अलावा, वित्तीय संकट ने सुरक्षा की ओर पलायन और गृह देश के बढ़ते पूर्वाग्रह के जरिये उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में पूंजी के प्रवाह को प्रभावित किया।

7.5 संकट के संभावित संक्रमण के कारण इसके समकालिक स्वरूप ने वैश्विक वित्तीय प्रणाली में विध्वंस को न्यूनतम करने के तरीके तलाशने के लिए समन्वित प्रयासों हेतु पूरी दुनिया की सरकारों और केंद्रीय बैंकों को एक साथ ला दिया। अत: अनुक्रियाएं बहुविध थीं। कुछेक अल्पकालिक कार्यों का उद्देश्य बाज़ार चलनिधि और पूंजीकरण को बनाये रखना था क्योंकि खराब आस्तियों से हानियों के बारे में चिंताओं ने धीरे-धीरे प्रमुख वित्तीय संस्थाओं की शोधनक्षमता और निधीयन के विषय में प्रश्न खड़े किये। आईएमएफ के अनुसार (2009डी), वैश्विक घटनाओं के प्रति नीतिगत अनुक्रियाएं तेज, व्यापक और बहुधा अपरंपरागत रही हैं लेकिन ये प्राय: थोड़ा-थोड़ा करके हुईं तथा अधोगति कुण्डली को रोकने में असमर्थ रहीं। लेहमैन ब्रदर्स के असफल होने के प्रभाव के परिणामस्वरूप प्रमुख परिपक्व बाज़ारों के प्राधिकारियों ने यह विश्वास जगाने का प्रयास किया कि किसी भी संभाव्य रूप से प्रणालीगत वित्तीय संस्था को असफल नहीं होने दिया जायेगा। जैसाकि अध्याय 4 में चर्चा की गई है, अनर्जक आस्तियां होने वाले अमेरिका और यूरोप के कई ऐसे बैंकों को उल्लेखनीय प्रत्यक्ष पूंजी सहायता और गारंटियां प्रदान की गईं। अधिक व्यापक रूप में, प्राधिकारियों ने बहुपक्षीय रणनीतियां अपनाईं जिनमें निधीयन दबावों को कम करने के लिए बैंक देयताओं हेतु चलनिधि और विस्तारित गारंटियों का सतत प्रावधान, बैंक पुनर्पूंजीकरण के लिए सार्वजनिक निधियां उपलब्ध कराना और विपदग्रस्त आस्तियों के संबंध में नीतिगत उपायों की घोषणा करना शामिल हैं। हालांकि, इन नीतियों और निकास रणनीतियों के बारे में विस्तृत विवरण की कमी के कारण यह वित्तीय बाज़ारों के लिए अधिक विश्वसनीय सिद्ध नहीं हुईं। मुद्रास्फीति की चिंताएं जैसे ही कम होने लगीं और समष्टि-आर्थिक परिदृश्य और बिगड़ने लगा, दुनियाभर के केंद्रीय बैंकों ने अर्थव्यवस्था को सहायता देने और ऋण बाज़ारों की स्थितियों को सुगम बनाने के लिए कई परंपरागत और गैर-परंपरागत नीतिगत साधनों का सहारा लिया। इसी प्रकार, निर्यातों और पूंजी प्रवाहों में कमी के कारण गिरती ब्याज दरों और बढ़ते बाह्य दबावों की अनुक्रिया में उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं की नीतिगत अनुक्रियाएं काफी परिवर्तित की गई हैं। कई देश, विशेषकर एशिया और लातिनी अमेरिका, दबावों को कम करने, विनिमय दरों को नीचे की ओर समायोजित होने के लिए नीतिगत बफरों का उपयोग कर पाये हैं, लेकिन उन्होंने विशेषकर व्यापार वित्त को बनाये रखने सहित अस्तव्यस्त बाज़ार स्थितियों का मुकाबला करने और निजी ऋण को बढ़ाने के लिए आरक्षित निधियों का भी उपयोग किया।

7.6 इसके साथ त्वरित नीतिगत अनुक्रियाओं के अलावा संकट के उद्गम में योगदान देने वाले कारकों के मद्देनजर घरेलू और वैश्विक स्तर पर विनियामक और पर्यवेक्षी निरीक्षण के आत्मविश्लेषण के प्रयास भी शुरू किये गये। संकट से प्राप्त सबकों से वैश्विक वित्तीय प्रणाली में अपेक्षित परिवर्तनों का मूल्यांकन करने और राष्ट्रीय एवं वैश्विक स्तर पर विनियामक और पर्यवेक्षी ढाँचों की पुनर्संरचना के लिए अनुशंसाएं करने के लिए बहुदेशीय स्तरों पर कई उच्च स्तरीय समितियां और कार्यदल गठित किये गये। वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण के संबंध में अब तक किये गये पहलकार्यों की चर्चा पहले ही की जा चुकी है (देखें अध्याय 4)। तथापि, इस क्षेत्र में भावी सुधारों के लिए उभरे विचारों की चर्चा और विश्लेषण इस अध्याय में किया

गया है क्योंकि वित्तीय पर्यवेक्षण और विनियमन में सुधार प्रत्येक जटिल पहलू पर पर्याप्त विचार-विमर्श के बाद उत्पन्न होने की आशा है। बढ़ते वैश्वीकरण के कारण संकट का संक्रमण भारत सहित उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में व्याप्त हो गया। भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों पर प्रभाव और प्राधिकारियों द्वारा नीतिगत अनुक्रियाओं का ब्योरा अध्याय 5 और 6 में दिया गया है। हाल के संकट की कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषताएं पूर्व के संकटों जैसी हैं, फिर भी यह संकट 'तुलना के परे' लगता है। इसके कारण और इसकी गतिकी, दोनों से जुड़ी कुछ अनूठी विशेषताएं हैं (पापाडेमोस, 2009)। संकट के निवारण और प्रबंधन से संबंधित कई महत्त्वपूर्ण मुद्दे उभरे हैं जो हमें बाज़ार सहभागियों और नीति-निर्माताओं, दोनों के लिए प्रासंगिक सबक सिखाते हैं। अंतर्निहित कारकों, चाहे समष्टि-आर्थिक हों या व्यष्टि-आर्थिक, जो संकट के उद्गम और तीव्र करने के लिए जिम्मेदार हैं, का विश्लेषण वित्तीय स्थिरता की सुरक्षा में लोक प्राधिकारियों जैसे केंद्रीय बैंकों, पर्यवेक्षकों/विनियामकों और सरकारों की भूमिका के बारे में मुद्दे उठाता है।

7.7 संकट ने निश्चित तौर पर मौजूदा संस्थागत ढाँचे की क्षमता और वैश्विक वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तरों पर उपलब्ध नीतिगत लिखतों पर सवाल खड़े किये हैं। इसने वित्तीय बाज़ारों और संस्थाओं की कार्यप्रणाली, विशेषकर जोखिम की कीमत, आबंटन और कुशलतापूर्वक प्रबंध करने की क्षमता के बारे में भी शंका पैदा की है। गत दो वर्षों की घटनाओं ने निजी क्षेत्र के जोखिम प्रबंधन और वित्तीय प्रणाली का सार्वजनिक क्षेत्र के निरीक्षण की अपर्याप्तताओं, दोनों की कमजोरियां प्रकट की हैं। इस प्रकार सबक न केवल बहुविध हैं बल्कि वित्तीय स्थिरता को बनाये रखने का कार्य सौंपे गये प्राधिकारियों के भिन्न-भिन्न समूह से संबंधित भी हैं। यद्यपि इनमें से अधिकांश सबक हमेशा स्पष्ट नहीं होते हैं, ये न केवल प्रमुख उन्नत अर्थव्यवस्थाओं पर तत्काल लागू होते हैं बल्कि उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं से मोटे तौर पर संबंधित भी हैं। हाल का वैश्विक संकट कुछ मायनों में संकट की पिछली घटनाओं के समरूप है। उदाहरणार्थ, यह वस्तुत: गत असंतुलनों का अकस्मात किया गया समायोजन है जिसने ठोस ऋण वृद्धि, इक्विटी और आवास मूल्यों में उच्चतर वृद्धि को आगे बढ़ाया। इसके अलावा, असममित सूचना जैसे परंपरागत कारक वित्तीय प्रणाली के अन्य भागों और अन्य देशों में संकट के तेजी से फैलने का एक बार फिर कारण बने। फिर भी, हाल का संकट, विशेष रूप से 2007 के मध्य से पूर्व जोखिम का अत्यधिक न्यून मूल्यनिर्धारण और गैर-ऋण पात्र परिवारों (सब-प्राइम बंधक देनदार) को अत्यधिक ऋण देने के संबंध में संकट की अन्य घटनाओं से भिन्न है। इसके अलावा, सभी गत संकट, चाहे वैश्विक हो या क्षेत्रीय, वस्तुत: परंपरागत खुदरा बैंकिंग और मुद्रा संकट के कारण आये।

7.8 1997-98 के पूर्वी एशियाई संकट में और हाल के वित्तीय संकट में कुछ समानताएं हैं तो कुछ असमानताएं भी हैं। उदाहरणार्थ, दोनों ही संकट इसलिए आये क्योंकि हाल के दशकों में अंतरराष्ट्रीय वित्तीय प्रवाह की मात्रा अत्यधिक बढ़ गई थी। इस क्रम-विकास को कई कारकों ने बल दिया, जिनमें बाज़ारों के अविनियमन, जिन्होंने वस्तुत: या विधित: कई देशों में पूंजी नियंत्रणों को हटा दिया; पूर्वी एशियाई वित्तीय बाज़ारों में पोर्टफोलियो निवेश पर उपलब्ध उच्च प्रतिलाभ; और सामान्य आर्थिक परिदृश्य में सुधार शामिल हैं। हाल की वैश्विक स्थिति की अन्य समरूपता का तथ्य यह है कि पूर्वी एशियाई संकट ने भी वित्तीय संस्थाओं के प्रबंध, पर्यवेक्षण और विनियमन में अपर्याप्तताएं प्रकट की थीं। जहां सीमापारीय पूंजी प्रवाह में अस्थिरता और विनिमय दर में उतार-चढ़ावों ने पूर्वी एशियाई संकट के कारण के रूप में उल्लेखनीय भूमिका निभाई, वहीं हाल के संकट के दौरान इन्होंने केवल आनुषंगिक भूमिका निभाई। वर्ष 2008 के अंत में उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में पूंजी प्रवाह संकट की अनुक्रिया के कारण ही अस्थिर हो गया और बुनियादी तौर पर कोई प्रेरणार्थक भूमिका नहीं निभाई। जहां तक पूर्वी एशियाई संकट और हाल के संकट के बीच अन्य अंतरों का संबंध का है, इस तथ्य के अलावा कि हाल के संकट का उद्गम अमेरिका और यूरोपीय वित्तीय प्रणाली में हुआ, न कि उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में, हाल के संकट के संबंध में नीतिगत अनुक्रियाएं अधिक ठोस, व्यापक और प्रति-चक्रीय दिखाई देती हैं। इस बार नीति से जुड़े प्राधिकारियों ने सकल मांग को बढ़ाने और परिवारों एवं कारोबारियों को ऋण की उपलब्धता बनाये रखाने के प्रयास किये। यह 1998 में एशिया में हुई घटना से बिलकुल विपरीत था, जब राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं में संसाधनों को रोके रखने के लिए प्रोत्साहित करने हेतु उच्च घरेलू ब्याज दर नीतियां अपनाई गई थीं, जिन्होंने प्रारंभ में देशी निवासियों से और पूंजी प्रवाह एवं बाहरी उधारों को आकर्षित किया। इसने वित्तीय संस्थाओं और निजी क्षेत्र को विदेशी मुद्रा जोखिम के बढ़ते स्तर की ओर अग्रसर किया, जिसने अंतत: पूर्वी एशियाई अर्थव्यवस्थाओं को बाहरी आघातों के प्रति अधिक

अरक्षित कर दिया। फिर भी, नीतिनिर्माताओं के लिए वर्तमान चुनौती सभी गत संकटों से सीख प्राप्त करने की है।

7.9 इस पृष्ठभूमि में, इस अध्याय में संकट से सबक सीखने और कुछ भावी चुनौतियों को पहचानने का प्रयास किया गया है। अध्याय के भाग I में केंद्रीय बैंकों के लिए प्रासंगिक सबकों को शामिल किया गया है जबकि भाग II में वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण से जुड़े सबकों पर प्रकाश डाला गया है। भाग III में अंतरराष्ट्रीय नीतिगत समन्वय पर कतिपय सबकों को स्पष्ट किया गया है, उसके बाद भाग IV में अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं की भूमिका की जानकारी दी गई है। वैश्विक असंतुलनों और समष्टि-आर्थिक प्रबंध से उभरे मुद्दों की चर्चा भाग V में की गई है, अध्याय VI में राजकोषीय नीति के लिए सबक और भाग VII में क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों की भूमिका का उल्लेख किया गया है। संपदा और वित्तीय क्षेत्रों के बीच उचित संतुलन पर बल भाग VIII पर दिया गया है। उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं और भारत के लिए सबक का ब्योरा अध्याय IX में दिया गया है। नीतिनिर्माताओं के समक्ष प्रमुख चुनौतियां की चर्चा अध्याय X में की गई है। अंत में, भाग XI में निष्कर्षात्मक टिप्पणियां प्रस्तुत की गई हैं।

I. केंद्रीय बैंकों के लिए सबक

7.10 किसी आर्थिक और वित्तीय संकट के आने पर केंद्रीय बैंकों की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो जाती है। हाल के वित्तीय संकट के दौरान केंद्रीय बैंक विलंब से संप्रेषण और अंतिम ऋणदाता के अपने मानक भूमिका के ठीक विपरीत रक्षा के लिए पहली पंक्ति में आ गये। ऐसा करने के लिए केंद्रीय बैंकों ने गैर-परंपरागत और अभूतपूर्व भूमिका के लिए अपने को पुन: तैयार किया। महामंदी के अनुभव के साथ अमेरिकी फेड रिज़र्व, जिसकी उस समय प्राय: अपस्फीतिकारी नीतियां जारी रखने और स्थिति को गंभीर बनाने के लिए आलोचना की गई थी, सहित पूरी दुनिया के केंद्रीय बैंक अर्थव्यवस्था के विनियमन में मौद्रिक नीति के महत्त्व के बारे में अधिक जागरूक हो गये हैं। इस संदर्भ में फ्रीडमैन और श्वार्टज (1963) को अमेरिकी मौद्रिक इतिहास पर अपनी पुस्तक में महामंदी के दौरान मौद्रिक कारकों की भूमिका पर विशेष बल देने के लिए श्रेय जाता है। पूर्वी एशियाई संकट भी आंशिक रूप से अपस्फीति का मुकाबला करने के लिए जापानी शून्य ब्याज दर नीति के कारण आया था जिसने कैरी ट्रेड की स्थिति तैयार में सहायता की थी। उसने एशिया में अस्थायी उछाल की स्थिति पैदा की, जिसके प्रभावों ने एशियाई अर्थव्यवस्थाओं को डूबोया। असल में, महामंदी और बाद की अन्य घटनाओं के कारणों के संबंध में की गई खोज यह संकेत करती है कि वित्तीय स्थिरता को बनाये रखने में केंद्रीय बैंकों और अन्य सरकारी एजेंसियों की महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी है। केंद्रीय बैंकों की भूमिका न केवल अंतिम ऋणदाता के रूप में महत्त्वपूर्ण होती है बल्कि इस कारण से भी कि वे वित्तीय प्रणाली और आर्थिक चक्रों, दोनों को देखने के लिए बेहतर सुसज्जित माने जाते हैं। केंद्रीय बैंकों की बैंकिंग प्रणाली से समीपता उन्हें वित्तीय गतिकी की गहरी जानकारी प्रदान करती है और उनसे अर्थव्यवस्था की उत्पन्न होती गतिकी का निष्पक्ष मूल्यांकन प्रदान करने की अपेक्षा होती है। हाल के संकट में, केंद्रीय बैंकों ने तेज और नवोन्मेषी नीतिगत निर्णय, कभी-कभी अन्य केंद्रीय बैंकों का सहयोग लेकर, संकट के प्रभाव को कम करने में निर्णायक और सक्रिय भूमिका निभाई। संकट के अनुभव से पता चलता है कि वित्तीय स्थिरता को केंद्रीय बैंकों की प्राथमिकताओं में उच्चतर स्थान देने के पीछे सुदृढ़ तर्काधार है। इस प्रकार, व्यापक रूप से यह महसूस किया जाता है कि केंद्रीय बैंकों की भूमिका पर पुन: विचार करने और उसे पुनर्निर्धारित करने की जरूरत है। इस संदर्भ में नीति संबंधी चर्चाओं में निम्नलिखित मुद्दों पर ध्यान आकर्षित किया गया है।

आस्ति मूल्य और मौद्रिक नीति की भूमिका

7.11 हाल के वित्तीय संकट ने वित्तीय स्थिरता ढाँचों और उनके भीतर वित्तीय स्थिरता में केंद्रीय बैंकों की भूमिका की समीक्षा करने के लिए प्रेरित किया। संकट ने इस तथ्य को उजागर किया है कि वित्तीय असंतुलन और अतिरेक समष्टि-आर्थिक स्थिरता और मूल्य स्थिरता के माहौल में बन रहे थे। मौद्रिक नीति के ढाँचे में बेहतर पद्धति की विशेषता के रूप में उभरी संकट-पूर्व की सहमति, 'एकल लक्ष्य' (अर्थात् मूल्य स्थिरता) और 'एकल लिखत' (अर्थात् अल्पकालिक नीतिगत ब्याज दर) नीतिनिर्माताओं और अनुसंधानकर्ताओं के बीच पुन: चर्चा का विषय बन गया है। मूल्य स्थिरता मुद्रा नीति का महत्त्वपूर्ण, न कि एकमात्र लक्ष्य होना चाहिए। संकट का महत्त्वपूर्ण सबक यह है कि मूल्य स्थिरता पर एकनिष्ठ संकेंद्रण माल एवं सेवाओं के मूल्यों के रूप में कम और स्थिर मुद्रास्फीति के माहौल का निर्माण कर सकता था, लेकिन पण्यों के उत्पादन/सेवा प्रदान करने वाले क्षेत्रों में प्रतिलाभ को कम करना वित्तीय क्षेत्र को प्रतिफल की खोज में दूसरी दिशा में

मोड़ सकता था। संकट से मूल सबक यह है कि मूल्य स्थिरता और समष्टि-आर्थिक स्थिरता के बावजूद वित्तीय स्थिरता को जोखिम हो सकता है (सुब्बाराव, 2009डी)। मूल्य और वित्तीय स्थिरता के बीच अनुपूरकता का मिथक गलत साबित हुआ। असल में, अन्तर्विरोध अब अधिक स्पष्ट हो गये हैं। इस प्रकार, इस बात की जांच करने की जरूरत है कि क्या वित्तीय स्थिरता को आर्थिक नीति के अंतर्निहित चर से सुस्पष्ट चर में के रूप में आगे आना चाहिए।

7.12 हाल के संकट ने इस विवाद को जन्म दिया है कि क्या आर्थिक नीति का उपयोग तेजी पर लगाम लगाने के लिए किया जाये? यदि हाँ, तो क्या यह मौद्रिक नीति की जिम्मेदारी के अंतर्गत आता है? संकट के प्रारंभ होने तक मोटे तौर पर यह तर्क दिया जाता था कि मूल्य स्थिरता जरूरी थी और आर्थिक विकास एवं वित्तीय स्थिरता के लिए (लगभग) पर्याप्त थी। हालांकि, माल के मूल्यों में स्थिरता लाने में सफलता के साथ प्राय: आस्ति मूल्यों में मुद्रास्फीति का प्रभाव होता था जिसके कारण अधारणीय सट्टेबाजी होती थी और इसके परिणामस्वरूप आस्तियों के मूल्यों में तेजी आती थी। संकट-पूर्व की अवधि के दौरान मुद्रास्फीति वित्तीय आस्ति मूल्यों से पेट्रोलियम तक और उसके बाद अन्य पण्यों एवं खाद्य पदार्थों में फैल गई, क्योंकि धीरे-धीरे इन्हें वित्तीय निवेश और सट्टेबाजी के अधीन की वित्तीय आस्ति श्रेणियां माना जाने लगा था। ऐसा भी नहीं है कि मौद्रिक और ऋण का मुद्दा आस्ति मूल्य में वृद्धि के लिए महत्त्वपूर्ण है, पूर्णत: नया है। महामंदी के बाद, फिशर (1932) ने विभिन्न तेजियों और मंदियों के कारणों की खोज की। अन्य बातों के साथ उन्होंने इस तथ्य की ओर इशारा करते हुए मौद्रिक कारकों की भूमिका पर बल दिया कि सभी मामलों में वास्तविक ब्याज दरें काफी कम रही थीं और इस प्रकार मौद्रिक कारक अत्यधिक तेजी को बढ़ा रहे थे। आस्ति के मूल्य में तेजी और गिरावट पर केंद्रित अन्य अध्ययनों में मौद्रिक नीति में काफी, यद्यपि गैर-इरादतन, गलतियां स्पष्ट रूप से पाई गईं (बोरडो और जीन्न, 2002; बोरियो आदि 1994; गेरडेसमीयर आदि 2009; इस्सिंग, 2002)। अत: संकट से पुन: उभरा सबक यह है कि मौद्रिक नीति के निर्णय मुद्रास्फीति के स्रोत के प्रति संवेदनशील होने चाहिए। अब धीरे-धीरे यह महसूस किया जा रहा है कि केंद्रीय बैंकों को अपनी नीति के प्रभाव का मूल्यांकन केवल मूल्य स्थिरता की बजाय समष्टि-आर्थिक स्थिरता के व्यापक कैनवास पर करने की जरूरत है। असल में, अंतर्निहित समष्टि-आर्थिक और वित्तीय स्थितियों के अनुसार प्रत्येक को लचीलेपन से दिये गये भारांकों के अनुक्रम के साथ सभी प्रकार की स्थिरता अर्थात् मूल्य स्थिरता, उत्पादन स्थिरता और वित्तीय स्थिरता केंद्रीय बैंक के लक्ष्यों के मूल में है। अत: राष्ट्रीय और वैश्विक समष्टि-आर्थिक स्थिरता की संकल्पना को भी व्यापक करने की जरूरत है।

7.13 यद्यपि आस्ति के मूल्यों में अत्यधिक तेजी को प्रेरित करने में मौद्रिक नीति की भूमिका के संबंध में विरोधाभाषी तर्क दिये जाते हैं, लेकिन इस बात पर धीरे-धीरे बल दिया जा रहा है कि मौद्रिक नीति और आस्ति मूल्यों के बीच के संबंध पर पुन: विचार करने की जरूरत है। पहली विचारधारा का मत है कि आस्ति मूल्य प्राय: तेजी से बढ़ते और तेजी से गिरते रहते हैं। इन पर सुदृढ़ अनुचक्रीय प्रभाव हो सकता है जो वित्तीय बाज़ारों की स्थिरता को भी प्रभावित कर सकता है। चूंकि केंद्रीय बैंकों को प्राय: वित्तीय स्थिरता के लिए जिम्मेदार माना जाता है, अत: उन्हें आस्ति मूल्यों पर निगरानी रखनी चाहिए और मूल्यों में भारी तेजी (जिसमें अनिवार्यत: कमी आएगी) को रोकने का प्रयास करना चाहिए। इस दृष्टिकोण में अत्यधिक तेजी को रोकने में ब्याज दर के प्रयोग को कारगर साधन के रूप में देखा जाता है। उदाहरणार्थ, पापाडेमोस (2009), मेल्टजर (2009) और ऑरफानिडेस (2010) ने इस बात पर बल दिया कि हाल के संकट के सबकों में से एक यह है कि आस्ति बाज़ार के अतिरेकों को रोकने और उनमें शामिल प्रणालीगत और अपस्फीतिकारी जोखिमों से बचने के लिए मौद्रिक नीति के साधनों को भी अपनाया जाना चाहिए।

7.14 दूसरी विचारधारा के संबंध में आस्ति मूल्य वृद्धि के बारे में प्रसिद्ध ग्रीनस्पेन प्रामाणिकता का प्रभुत्व रहा है। बर्नान्के और गिर्टलर (2011) ने तर्क दिया कि केंद्रीय बैंकों को अपने नीति निर्माण में आस्ति मूल्यों की उपेक्षा करनी चाहिए। उन्होंने केंद्रीय बैंक की नीति में आस्ति मूल्यों के स्तर पर स्वतंत्र अनुक्रिया प्रदान करने का अतिरिक्त लाभ, यदि कोई हो, नगण्य पाया। इस प्रस्ताव के समर्थन में पहला तर्क यह है कि प्रत्याशित बुलबुले को पहचानना मुश्किल है। यह तर्क दिया जाता है कि आस्तियों के मूल्यों को प्रभावित करने के लिए बाज़ारों की तुलना में केंद्रीय बैंकों को पास बेहतर जानकारी नहीं भी हो सकती है। दूसरा तर्क यह है कि यदि प्रत्याशित बुलबुलों की पहचान कर भी ली जाये तो भी ऐसी स्थिति को ठीक करने में ब्याज दर का उपयोग अप्रभावी है। केंद्रीय बैंक बुलबुले के फटने पर केवल नुकसान को सीमित कर सकता है (ग्राउवे आदि 2008)। बर्नान्के

(2010) ने विनियामक प्रणाली को सुदृढ़ करने के प्रयासों को अधिक प्राथमिकता प्रदान की। मिश्किन (2008) और टेलर (2010) ने भी आस्ति मूल्य के बुलबुले के फटने में मौद्रिक नीति की कोई भूमिका नहीं देखी। मौद्रिक नीति की भूमिका के विरुद्ध तर्क देते हुए मिश्किन (2008) ने राय व्यक्त की कि अधिकांश मामलों में मौद्रिक नीति को आस्ति मूल्यों के प्रति स्वभावत: अनुक्रिया नहीं देनी चाहिए बल्कि आस्ति मूल्य के घट-बढ़ के परिणामस्वरूप मुद्रास्फीति के परिदृश्य और सकल मांग में परिवर्तन करना चाहिए। चूंकि निश्चय के साथ आस्ति मूल्य के बुलबुले को पहचानना मुश्किल है अत: गलत पहचाने गये बुलबुले के प्रति कोई भी मौद्रिक नीतिगत अनुक्रिया विकास प्रक्रिया में बाधा डाल सकती है। इसी प्रकार, आस्ति मूल्यों में तेजी को रोकने के लिए मौद्रिक नीतिगत प्रक्रिया संसाधनों के आबंटन के संबंध में तब आस्ति मूल्यों की भूमिका के साथ हस्तक्षेप कर सकती है जब विशेषकर बुलबुले की उपस्थिति, स्वरूप और मात्रा के संबंध में अनिश्चितता हो। संक्षेप में, यह विचारधारा मानती है कि मौद्रिक नीति मुद्दे के समाधान की बजाय अधिक नुकसान पहुंचा सकती है। इस तर्क के संबंध में कि अधिकांश केंद्रीय बैंक एक साधन (केंद्रीय बैंक द्वारा नियंत्रित अल्पकालिक ब्याज दर) के प्रयोग से दो लक्ष्यों (कम मुद्रास्फीति और पूर्ण रोजगार) को प्राप्त करने के लिए पहले से ही व्यस्त हैं, कालोमिरिस (2009) ने तर्क दिया कि आस्ति बुलबुलों की पहचान करके उन्हें समाप्त करने को मौद्रिक नीति के तीसरे लक्ष्य के रूप में जोड़ना अवांछनीय होगा क्योंकि यह मौद्रिक नीति के प्रमुख लक्ष्यों को पूरा करने के लिए ब्याज दरों के प्रयोग की केंद्रीय बैंकों की क्षमता को कम आंकेगा। इसकी बजाय उन्होंने अनुशंसा की कि आस्ति बाज़ार बुलबुले के समाधान के लिए विवेकपूर्ण विनियमन आदर्शत: उपयुक्त है, क्योंकि ऐतिहासिक रूप से आसान ऋण आपूर्ति का आस्ति बुलबुले के साथ बहुत ही नजदीकी संबंध है। मोहन (2009ए) ने सुझाव दिया कि निक्रिय मौद्रिक नीति अनुक्रिया की बजाय पूर्वोपायी और अंशांकित मौद्रिक एवं विनियामक उपाय बेहतर होंगे।

7.15 मौद्रिक नीति की भूमिका के संबंध में अपने गुणों एवं अवगुणों के साथ इन विरोधी तर्कों के बावजूद यह महसूस किया जाता है कि आस्ति मूल्य के बढ़ने को उपेक्षा करने की नीति असफल हो गई है और मूल्य स्थिरता अनिवार्यत: वित्तीय स्थिरता प्रदान नहीं करती। हाल का संकट मौद्रिक नीति के विश्लेषण के लिए संकट-पूर्व के मतैक्य को स्पष्ट रूप से झुठलाता है जो ऐसे प्रतिमानों पर बना है जिसमें वित्तीय स्थितियां, जैसे कि आस्ति मूल्यों में वृद्धि, मुद्रा और ऋण की मात्रा, समष्टि-आर्थिक परिणाम तथा मौद्रिक नीतिगत संप्रेषण बहुत ही सीमित भूमिका निभाते हैं। उस ढाँचे के अंतर्गत वे अंतर्निहित आर्थिक स्थितियों को प्रतिबिम्बित कर या अनुमान लगा सकते हैं लेकिन वे इन स्थितियों के बारे में कोई प्रतिसूचना नहीं देते। संकट-पूर्व मतैक्य का दृष्टिकोण इस धारणा पर भी आधारित था कि ठोस आस्ति मूल्य गतिकी और गैर-सुयोजन का सुदृढ़ मुद्रास्फीतिकारी दबावों के साथ संबंध होता है। इस प्रकार, कोई भी केंद्रीय बैंक मुद्रास्फीति में बढ़ोतरी को रोकने के लिए कार्रवाई करता है तो ऐसे वित्तीय असंतुलन स्वत: ही दूर होंगे। हालांकि 2000 में डॉटकॉम तेजी एवं तेज गिरावट और हाल का वैश्विक संकट दुनिया के अधिकांश भागों में अपेक्षाकृत कम और स्थिर मुद्रास्फीति से मेल खाते हैं जो मौद्रिक नीति-निर्माण में वित्तीय स्थितियों के लिए अधिक स्पष्ट भूमिका की ओर इशारा करती हैं। अत: धीरे-धीरे यह महसूस किया जा रहा है कि मौद्रिक नीति के अधिदेश में न केवल मूल्य स्थिरता, बल्कि समष्टि-वित्तीय स्थिरता को भी शामिल किया जाना चाहिए। केंद्रीय बैंकों को आस्ति मूल्य घट-बढ़, ऋणों में तेजी, लीवरेज और प्रणालीगत जोखिम बनने के बारे में अपने निर्णयों को ध्यान में रखते हुए व्यापक समष्टि-विवेकपूर्ण दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। असल में, मौद्रिक नीति के रुझान को, जिसका निर्धारण आम तौर पर दूरदर्शी ढंग निर्धारित किया जाता है, समष्टि-विवेकपूर्ण नीतियों के रुझान के प्रमुख संकेतक के रूप में कार्य करना चाहिए। मौद्रिक नीति के प्रति इस व्यापक दृष्टिकोण की यह अपेक्षा होगी कि समष्टि-वित्तीय स्थिरता की चिंता को केंद्रीय बैंकों के अधिदेश में स्पष्ट रूप से शामिल किया जाये। तथापि, प्रत्याशाएं यथार्थ के नजदीक होनी चाहिए, हालांकि बेहतरीन अग्रणी संकेतक भी अपूर्ण पाये जाते हैं।

7.16 संकट के प्रति केंद्रीय बैंकरों की समुचित अनुक्रिया के संबंध में आईएमएफ ने यह रेखांकित किया है कि केंद्रीय बैंकों को निम्नलिखित का मूल्यांकन करना है (i) उभरती वित्तीय अरक्षितता के संकेतों की प्रतिक्रिया से संभाव्य लाभ, (ii) क्या अन्य नीतियों का उपयोग किया जा सकता है, और (iii) उत्पादन को स्थिर रखने के लिए उस पर और मुद्रास्फीति पर संकेंद्रण के बीच समायोजन तथा आस्ति मूल्य में अत्यधिक तेजी और गिरावट के जोखिम को कम करने का प्रयास करना। अन्य शब्दों में, बढ़ते समष्टि-वित्तीय जोखिमों के संकेतों का मूल्यांकन करने और उचित नीतिगत अनुक्रिया का सुझाव देने के लिए मौद्रिक प्राधिकारियों की निश्चित रूप से बड़ी भूमिका है। केंद्रीय बैंकों को आस्ति मूल्यों में अत्यधिक वृद्धि की

वहनीयता के बारे में अपनी चिंता संप्रेषित करनी चाहिए और प्रणालीगत जोखिमों के अधिक उद्देश्यपरक मूल्यांकन में योगदान देना चाहिए। इस संदर्भ में, अन्य बातों के साथ-साथ वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए केंद्रीय बैंकों की अधिक भूमिका से संबंधित जी-30 की रिपोर्ट 'वित्तीय सुधार : वित्तीय स्थिरता के लिए ढाँचा' की अनुशंसाएं भी विचारणीय हैं। वित्तीय विनियमन के संबंध में स्क्वाम लेक कार्यदल की हाल (जून 2010) की रिपोर्ट भी इस बात पर बल देती है कि केंद्रीय बैंकों को समग्र वित्तीय स्थिरता के पर्यवेक्षक होने चाहिए।

7.17 संक्षेप में हाल घटनाएं प्रदर्शित करती हैं कि संकट वित्तीय प्रणाली के किसी भी खंड में उत्पन्न सकता है। इसके मद्देनजर मौद्रिक और विनियामक प्राधिकारियों के लिए आत्मसंतोष की कोई गुंजाइश नहीं है। सबक यह है कि मौद्रिक नीति की भूमिका केवल मुद्रास्फीति से लड़ने से कहीं अधिक है। मुद्रास्फीति पर अत्यधिक ध्यान दिये जाने के चलते कुछ केंद्रीय बैंकों ने इस बात की उपेक्षा की कि उनके वित्तीय बाज़ारों में क्या हो रहा है। अत: केंद्रीय बैंकों को आस्ति मूल्यों में तेजी के स्वरूप पर सतत् निगरानी रखने की जरूरत है और वे निर्णय लें कि क्या सट्टेबाजी के स्वरूप की तेजी से जुड़े जोखिम को न्यूनतम करने में मौद्रिक नीति कोई भूमिका अदा कर सकती है। यदि मुद्रास्फीति अनियंत्रित रहती हैं तो उन्हें कम से कम मुद्रास्फीति और आस्ति मूल्यों से संबद्ध सकल लागत का मूल्यांकन करने की जरूरत है। इसके लिए केंद्रीय बैंकों को प्रणालीगत जोखिमों के नये उपाय विकसित करने होंगे ताकि असली और सट्टेबाजी वाली तेजी के बीच अंतर को स्पष्ट किया जा सके। हालांकि मौद्रिक नीति के अधिदेश में आस्ति मूल्यों में स्पष्ट समावेश का मुद्दा अभी भी विवादास्पद है, केंद्रीय बैंकों को किसी भी मामले में अपनी मौद्रिक नीति के अंतर्निहित विश्लेषणात्मक ढाँचे को सुधारने की जरूरत है। यह आवश्यक है कि मौद्रिक नीति की रणनीति ऐसे विश्लेषण के लिए ढाँचा प्रदान करे ताकि आस्ति मूल्य में घट-बढ़, मौद्रिक एवं ऋण संबंधी घटनाएं, वित्तीय असंतुलन होने और संभावित प्रणालीगत जोखिम के आविर्भाव पर गहनता से नजर रखी जाती है।

अंतिम ऋणदाता के रूप में चलनिधि का पर्याप्त प्रावधान

7.18 मौद्रिक नीति के संचालन के अलावा अधिकांश देशों के केंद्रीय बैंकों की अनिवार्य जिम्मेदारी अंतिम ऋणदाता (एलओएलआर) की भूमिका निभानी है। अपने प्रमुख कार्य के रूप में एलओएलआर का कार्य या तो बाज़ारों या अलग-अलग वित्तीय संस्थाओं को चलनिधि सहायता के प्रावधान के जरिये वित्तीय अस्थिरता को रोकना और कम करना है। हालांकि हाल के संकट ने अंतिम ऋणदाता के रूप में केंद्रीय बैंकों की क्षमता के मुद्दे को सामने ला दिया है और यह प्रश्न खड़ा कर दिया है कि क्या उनके पास उपलब्ध साधन संकट द्वारा प्रस्तुत चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए पर्याप्त हैं (बर्नान्के, 2009सी; सेछेट्टी और दिसयातात, 2009)। लेहमैन ब्रदर्स की असफलता ने वास्तव में यह प्रदर्शित किया कि संकट को रोकने के लिए फेडरल रिज़र्व के चलनिधि प्रावधान पर्याप्त नहीं होंगे और पर्याप्त राजकोषीय सहायता आवश्यक थी। असल में हाल के वर्षों में वित्तीय नवोन्मेष ने चलनिधि प्रबंध के लिए बाज़ारों पर निर्भरता को काफी बढ़ा दिया। वित्तीय नवोन्मेष ने चलनिधि की परिभाषा को भी व्यापक कर दिया है और चलनिधि संकट एवं शोधनक्षमता संकट के बीच अंतर को अधिक मुश्किल कर दिया है। इस प्रकार, अनुभव से पता चलता है कि चलनिधि संकल्पना को किसी संस्था की अपनी आस्तियों की संपार्श्विकता पर निधियां जुटाने ('निधीयन चलनिधिट) की क्षमता तक ही सीमित नहीं किया जा सकता, बल्कि अब पूर्वानुमेय मूल्यों पर गहरे बाज़ारों में आस्तियों का तेजी निपटान करने ('बाज़ार चलनिधि') की अपनी क्षमता भी शामिल होती है। हाल के संकट ने स्पष्ट रूप से प्रदर्शित किया कि अंतर-बैंक बाज़ार के जरिये आपातकालीन चलनिधि सहायता को निर्दिष्ट करना तब तक कार्य नहीं करेगा जब तक अंतर-बैंक बाज़ार ठीक से कार्य न करें। जैसे ही संकट फैला, केंद्रीय बैंकों द्वारा अंतिम ऋणदाता की आमूलचूक परिवर्तित संकल्पना प्रयुक्त की जानी थी। केंद्रीय बैंकों ने बैंकों और वित्तीय संस्थाओं द्वारा सामना की जा रही सभी प्रकार की चलनिधि कमियों के लिए असाधारण मौद्रिक सहायता प्रदान की। केंद्रीय बैंकों ने परिपक्वता बढ़ा कर, संपार्श्विकता की श्रृंखला व्यापक कर, प्रतिपक्षियों की संख्या बढ़ाकर और अदला-बदली ऋण व्यवस्थाएं शुरू कर अपने परिचालनों के दायरे को व्यापक बनाया। इसके अलावा, कई प्रकार की निजी क्षेत्र की प्रतिभूतियों की गारंटी और सीधी खरीद का प्रयोग किया गया।

7.19 हाल के संकट ने इस बात को पर्याप्त रूप से स्पष्ट कर दिया है कि चलनिधि की उपलब्धता बाज़ार चलनिधि से बढ़ाने की पारस्परिक-क्रिया केंद्रीय बैंकों के लिए कठिन चुनौती खड़ी कर सकती है। इस प्रकार, केंद्रीय बैंकों को ऐसी कमी बाज़ारों में, न कि केवल बैंकों में परिकल्पित करनी चाहिए, जो बाज़ार दरों का बहियों में लेखांकन करती हैं और बाज़ार मूल्यों में परिवर्तनों के द्वारा बैंकों की चलनिधि और शोधनक्षमता के लिए चुनौती खड़ी करती हैं। इस संबंध में वर्ष

2007 और 2008 की घटनाओं के आधार पर आईएमएफ (2009ए) ने प्रकट किया कि लेहमैन के बाद वाली अवधि में बैंकों की चूक जोखिमों को कम करने में परंपरागत साधनों की तुलना में पूंजी निवेश और आस्ति खरीद जैसे गैर-परंपरागत साधन अधिक कारगर रहे। इस संबंध में इस बात को रेखांकित करना उचित है कि भारतीय रिज़र्व बैंक ने गैर-परंपरागत नीतिगत विकल्पों की जरूरत को बहुत पहले ही अर्थात् अक्तूबर 2007 में महसूस कर लिया था। रिज़र्व बैंक ने वर्ष 2007-08 की वार्षिक नीति की मध्यावधि समीक्षा में बताया था कि वह वित्तीय बाज़ारों की घटनाओं की अनुक्रियाओं में गैर-परंपरागत नीति का सहारा लेने के लिए तैयार है।

7.20 सेछेट्टी और दिसयातात (2009) ने तर्क दिया कि केंद्रीय बैंकों को निम्नलिखित बातों को शामिल करने के लिए स्वयं के परिचालनात्मक ढांचे की जरूरत है (i) लचीलापन, (ii) दूर-व्यापी प्रतिपक्षी, (iii) पात्र संपार्श्विकता की व्यापक श्रंखला, (iv) अभीष्ट कार्यों का स्पष्ट संप्रेषण, (v) राजकोषीय प्राधिकारियों के साथ गहन समन्वय, और (vi) अन्य केंद्रीय बैंकों के साथ गहन समन्वय। संकट ने भविष्य में अधिक कारगर संकट निवारण में मदद के लिए केंद्रीय बेंक के चलनिधि ढाँचों को पुनर्निर्धारित करने के लिए उपयोगी दिशानिर्देश प्रदान किये हैं। केंद्रीय बैंकों के लिए अपने चलनिधि प्रबंध ढाँचे में अधिक परिष्करण एवं संवर्धन न केवल संकट प्रबंधन के लिए बल्कि दैनंदिन परिचालन के उद्देश्यों एवं मौद्रिक संप्रेषण के लिए करना महत्त्वपूर्ण होगा। इस संदर्भ में, अधिदेशित आरक्षित निधि अपेक्षाएं चलनिधि बफर सुनिश्चित कर सकती हैं जिनका संकट में प्रयोग तथा साथ ही भुगतान प्रणाली चलनिधि से सामंजस्य बैठाने के लिए उपयोग किया जा सकता है। चलनिधि प्रबंध तथा भुगतान प्रणाली की कार्यप्रणाली के लिए विचारणीय महत्त्वपूर्ण विषय सर्वोच्च गुणवत्ता वाले संपार्श्विक के रूप में चलनिधि अनुपातों का निर्धारण करना है जैसाकि भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा सांविधिक चलनिधि अनुपात के लिए किया जाता है। धीरे-धीरे यह तर्क दिया जाने लगा है कि अंतिम ऋणदाता के बागेहोट दृष्टिकोण में संशोधन की जरूरत है। जैसे-जैसे वित्तीय प्रणाली अधिक जटिल हो गई है वैसे-वैसे केंद्रीय बैंकों की भूमिका के सभी पहलू भी जटिल हो गये हैं। अंतिम ऋणदाता के सिद्धांत को चलनिधि की कमियों के ऐसे स्वरूप की पहचान कर पुनर्निर्धारित करने की जरूरत है जो आधुनिक वित्तीय प्रणाली में हो सकता है। इसमें (i) केंद्रीय बैंक की चलनिधि में कमी, (ii) विशिष्ट संस्था की निधीयन चलनिधि में अत्यधिक कमी, या (iii) निधीयन और बाज़ार चलनिधि में प्रणालीगत कमी, शामिल हो सकते हैं। केंद्रीय बैंक के अंतिम ऋणदाता सहायता के समुचित सिद्धांतों को चलनिधि की कमी के ऐसे विशिष्ट प्रकार से अनुकूलित किया जाना चाहिए, जो हो सकता है। गैर-अर्थसुलभ लेकिन शोधनक्षम बैंकों को दंडस्वरूप ब्याज पर चलनिधि प्रदान करने का बागेहोट का कथन केवल चलनिधि की कमी की सुसाध्य स्थिति में लागू होता है। अन्यथा प्रणालीगत घटना निश्चित रूप से, संदिग्ध गुणवत्ता की संपार्श्विक प्रतिभूति लेने पर बाज़ार दर की तुलना में प्रभावी रूप से अनुदानित दर पर ऋण देने की अपेक्षा करेगी। इस प्रकार, केंद्रीय बैंकों को अधिक लचीला दृष्टिकोण अपनाने की जरूरत है और चलनिधि प्रदान करने एवं प्रणालीगत आघातों के प्रति अनुक्रिया देने की अपनी क्षमता को सुदृढ़ करना है। यह केंद्रीय बैंकों को प्रणालीगत स्वरूप की चलनिधि की अत्यधिक कमी के चरण में अल्पकालिक मुद्रा बाज़ारों में विश्वास बहाल करने में सहायता करेगा।

बाज़ार से संप्रेषण

7.21 हाल की वैश्विक घटनाओं ने बाज़ार के साथ केंद्रीय बैंक के संप्रेषण से संबंधित एक और मुद्दे पर प्रकाश डाला गया है, यद्यपि उस पर कम बल दिया गया है। हालांकि केंद्रीय बैंकों ने वित्तीय संकट के आर्थिक प्रभाव को न्यूनतम करने का प्रयास किया है लेकिन इस संबंध में उनके द्वारा बहुत अधिक अथवा बहुत कम उपाय करने के लिए उनकी आलोचना की गयी है। जैसाकि ऊपर वर्णन किया गया है, विभिन्न नीतिगत अनुक्रियाओं, विशेषकर उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में, की व्यापकता की कमी के कारण ऋण और वित्तीय बाज़ार नीतिगत उपायों के बारे में अनिश्चय की स्थिति में रहे और उन्होंने कुछ समय तक सकारात्मक रुख नहीं अपनाया। यह बात केंद्रीय बैंकों सहित नीति निर्धारक प्राधिकारियों द्वारा बाज़ारों के साथ संप्रेषण के महत्त्व को रेखांकित करती है।

7.22 हाल के संकट के दौरान उन्नत, साथ ही उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंकों ने विश्वास जगाने और बाज़ारों को स्थिर करने के लिए कई गैर-परंपरागत नीतिगत उपायों का सहारा लिया। परंतु गैर-परंपरागत मौद्रिक नीति और असाधारण उपायों के बारे में अनिश्चितता मौद्रिक नीति की सीमाओं को बढ़ा सकती है। इस प्रकार, इन पहलुओं से जुड़ी समास्याओं का समाधान केंद्रीय बैंक द्वारा बाज़ारों के साथ बेहतर संप्रेषण करके किया जा सकता है (मोहंती, 2009)। केंद्रीय बैंक समुचित संप्रेषण नीति तैयार करने में कई प्रकार

के असमंजस का सामना करते हैं। मुद्दों का एक समूह है जिसका संबंध इस बात से है कि क्या संप्रेषित किया जाना चाहिए और प्रसार का स्तर क्या हो। मुद्दों का दूसरा समूह आंतरिक सोच एवं बहस के क्रम-विकास के चरण से संबंधित है कि जानकारी कब प्रसारित की जानी चाहिए। तीसरा समूह बाज़ार पर प्रभाव के संदर्भ में संप्रेषण के समय से संबंधित है। चौथा सूचना की गुणवत्ता और संभावित तरीकों से संबंधित है जिनमें यह अनुभव किया गया है। इस प्रकार, नीतियों को स्पष्ट करने में केंद्रीय बैंकरों की ओर से कई बार तथाकथित असंबद्धता या अस्पष्टता का तत्व मुद्दों की जटिलता का उतना ही प्रतिबिम्ब है जितना कई प्रकार के श्रोताओं के भिन्न-भिन्न अनुभव का हैं जिनको संप्रेषण संबोधित किया जाता है (रेड्डी, 2006)।

7.23 इस संदर्भ में शिरकावा (2009) विस्तार से बताते हैं कि "उठाये गये कदमों के सकरात्मक और प्रतिकूल प्रभावों, दोनों का सतत मूल्यांकन करते हुए इनका सुविचारित स्पष्टीकरण करना महत्त्वपूर्ण हो जाता है। संकट के दौरान यदि केंद्रीय बैंक समय-असंगत नीतिगत उपाय करते हैं तो इसका केंद्रीय बैंकों पर विश्वास के प्रति नकारात्मक प्रभाव होगा और इसके परिणामस्वरूप मौद्रिक नीति की प्रभावशीलता में कमी आएगी। आखिरकार केंद्रीय बैंक को अर्थव्यवस्था के समाने उपस्थित समस्या की विशेषताओं की अनुक्रिया में अपने उद्देश्यों और रणनीतियों को संप्रेषित करने की जरूरत होती है तथा ऐसे नीतिगत उपाय करने की भी जरूरत होती है जो संप्रेषण के अनुरूप हो।" केंद्रीय बैंकों की संप्रेषण नीति को महत्त्वपूर्ण साधन उद्धत करते हुए बर्नान्के (2009ए) तर्क देते हैं कि "भले ही एक दिवसीय दर शून्य के करीब हो, समिति को मौद्रिक नीति की भावी दिशा के बारे में लोगों की प्रत्याशाएं सूचित कर दीर्घकालिक ब्याज दरों को प्रभावित करने में समर्थ होना चाहिए. . . . . बाज़ार अनिश्चितता को न्यूनतम करने और अपनी नीतियों का अधिकतम प्रभाव हासिल करने के लिए फेडरल रिज़र्व अपने तुलनपत्र के उपयोग, अपने तुलनपत्र के भावी उपयोग की योजनाओं और उन मानदंडों जिनके आधार निर्णय लिये गये के बारे में यथासंभव जानकारी लोगों को देने के लिए प्रतिबद्ध है।" नॉर्दर्न रॉक की विफलता के दौरान संप्रेषण की कमी की ओर इशारा करते हुए वुड (2009) तर्क देते हैं कि "वित्तीय स्थिरता बनाये रखने के लिए जिम्मेदार प्राधिकारियों के पास स्थिरता के लिए चुनौती की स्थिति से निपटने की स्पष्ट कार्य-योजना होनी चाहिए। उन्हें पहले ही स्पष्ट कर देना चाहिए कि उनकी योजना क्या है, उसे कब लागू करने की जरूरत है, यह घोषणा की जानी चाहिए कि योजना प्रयुक्त की जा रही है और संकट के समाधान के प्रत्येक चरण को समय बीतने के साथ-साथ वर्णित किया जाये. . . . संकट के दौरान अप्रत्याशित चीजें लगभग निश्चित रूप से होंगी। जब ऐसी घटना होती है तब अनुक्रिया के लिए समग्र जिम्मेदारी के लिए कोई होना चाहिए जो यह समन्वय कर सके कि अनियोजित घटनाओं के लिए क्या किया जाये। इस व्यक्ति के पास इस अनुक्रिया को स्पष्ट करने के लिए स्पष्ट संप्रेषण रणनीति होनी चाहिए। आदर्शत: इस व्यक्ति को स्थिति की व्याख्या करनी चाहिए।" प्राय: यह तर्क दिया जाता है कि बैंक ऑफ इंग्लैण्ड की तुलना में यूरोपीय केंद्रीय बैंक और फेडरल रिज़र्व के मौद्रिक नीतिगत उपायों का अधिक पूर्वानुमान किया जा सकता है(हरमान और फ्रैन्शर, 2007)।

7.24 न केवल केंद्रीय बैंक के नीतिगत उपायों को स्पष्ट रूप से संप्रेषित करनी की जरूरत है बल्कि केंद्रीय बैंकों द्वारा आर्थिक परिदृश्य के बारे में जानकारी का प्रसार भी महत्त्वपूर्ण है। प्राय: यह तर्क दिया जाता है कि केंद्रीय बैंकों के पास आर्थिक परिदृश्य के बारे में बेहतर जानकारी होती है और ये बाज़ार के खिलाड़ियों पर अधिक विश्वास करते हैं जैसाकि फेडरल रिज़र्व की संप्रेषण नीति के मामले से स्पष्ट है। हालांकि, यह भी तर्क दिया जाता है कि अमेरिकी मौद्रिक प्राधिकारियों द्वारा पहले से दिये गये निर्देशन ने जोखिम को काफी कम करके आंकने में योगदान दिया जो वैश्विक वित्तीय संकट के फैलने में एक महत्त्वपूर्ण घटक था। इस प्रकार, केंद्रीय बैंक किस हद तक अग्रिम निर्देशन दें, यह एक सक्रिय विवाद का विषय है। फिर भी संकट के दौरान केंद्रीय बैंकों के लिए यह सुनिश्चित करना आवश्यक हो जाता है कि बाज़ार के साथ उनका संप्रेषण निश्चितता और अभिधेयता के लिए बिलकुल पर्याप्त है। इस बात पर भी बल दिया जाता है कि गैर-परंपरागत नीतियों को समाप्त करने जैसे निकास संबंधी कुछेक रणनीतियों के लिए स्पष्ट संप्रेषण बाज़ारों के लिए महत्त्वपूर्ण होता है। इसके अलावा, गैर-परंपरागत नीतियों को समाप्त करने की सु-परिभाषित रणनीति, वित्तीय प्रणाली में विश्वास को प्रणालीगत जोखिमों को दूर के करने के लिए आवश्यक भावी विनियामक सुधारों में स्पष्टता के द्वारा सहारा मिलेगा। संक्षेप में, केंद्रीय बैंकों को वित्तीय बाज़ारों और वित्तीय प्रणाली में स्थिरता के लिए अपनी वचनबद्धता को स्पष्ट रूप से दोहराना है। यह उनकी मौद्रिक नीति के कार्यान्वयन और संप्रेषण प्रक्रिया को भविष्य में अधिक कारगर बना देगा।

II. वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण के लिए सबक

7.25 संकट से उभरे सर्वाधिक प्रमुख सबकों में से एक यह है कि यह जरूरी नहीं है कि मुक्त बाज़ार अनिवार्य रूप से अनियंत्रित बाज़ार हो। असल में, बाज़ार अनुशासन और पर्यवेक्षण को एक-दूसरे का पूरक होना चाहिए। जब कमजोर ऋण इतिहास वाले उधारकर्ताओं को दिये गये सब-प्राइम बंधकों से सृजित जटिल वित्तीय प्रतिभूतियों को हाल के संकट के उत्प्रेरक के रूप में माना जाता है, तब वित्तीय विनियमन की समस्या की जड़ें काफी गहरी जाती हैं। प्रमुख अंतरराष्ट्रीय मंचों (अर्थात् जी-20 कार्यदल I की रिपोर्ट (2009), डी लारोसीयर रिपोर्ट (2009), टर्नर समीक्षा (2009), जिनेवा रिपोर्ट (2009) और तीस के समूह की रिपोर्ट (2009)) की सभी प्रभावशाली रिपोर्टों में इस बात पर विशेष बल दिया गया है कि संकट के लिए जिम्मेदार एक कारक वित्तीय प्रणाली के विनियामक और पर्यवेक्षी पहलुओं में स्थित खामियां था। इन रिपोर्टों में कई मुद्दों को उठाया गया और ऐसी संभावित दिशाओं की पहचान की गयी जिस ओर वित्तीय बाज़ारों का विनियमन आगे बढ़ सकता है। 'सुदृढ़ विनियमन को बढ़ाना और पारदर्शिता को मजबूत करना' विषय पर जी-20 कार्यदल I ने विनियामक पहलुओं की समीक्षा की और तदनुसार अंतरराष्ट्रीय विनियामक मानकों को सुदृढ़ करने, वैश्विक वित्तीय बाज़ारों में पारदर्शिता को बढ़ाने और यह सुनिश्चित करने के बारे में अनुशंसा की कि सभी वित्तीय बाज़ार, उत्पाद और सहभागी उचित प्रकार से नियंत्रित हैं।

7.26 हालांकि कतिपय क्षेत्रों में अलग-अलग मत अभी भी मौजूद हैं लेकिन कुछ प्रमुख क्षेत्रों में मतैक्य बढ़ रहा है यथा वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण के दायरे और सीमाओं को पुनर्निर्धारित करना, प्रणाली में अनुचक्रीयता का प्रबंध करना, पूंजी और प्रावधानीकरण अपेक्षाओं को सुदृढ़ करना, मूल्यांकन और लेखांकन नियमों का परिष्करण करना। यह देखा जाता रहा है कि नियंत्रित हिस्से का सख्त विनियमन भी कार्यकलापों को अनियंत्रित हिस्से (अर्थात् एसआईवी और माध्यम) में अंतरित कर सकता है। ब्युटर (2009) के अनुसार "यह स्पष्ट है कि भावी प्रणालीगत असफलताओं की संभावनाओं को कम करने और निजी एवं सार्वजनिक हितों के बेहतर सुयोजन के लिए काफी अधिक विनियमन, और जो हमने विगत में देखा है उससे अलग विनियमन की जरूरत होगी"। कुछ मुद्दों की चर्चा नीचे की गई है जिनकी विनियामकों और पर्यवेक्षकों द्वारा गहन समीक्षा की जरूरत है।

प्रणाली-व्यापी दृष्टिकोण का महत्त्व

7.27 बैंकिंग प्रणाली, वित्तीय बाज़ारों और भुगतान एवं निपटान प्रणालियों के बीच अंतर-संयोजन कितना महत्त्वपूर्ण है, इसको हाल के वित्तीय संकट ने प्रदर्शित कर दिया है। ऐसा अंतर-संयोजन संपूर्ण वित्तीय प्रणाली को जोखिम के संक्रमण के लिए अधिक प्रवण बनाता है। इस प्रकार संकट के प्रारंभ होने पर प्रणालीगत जोखिम पर ध्यान देने की जरूरत धीरे-धीरे महसूस की जा रही है। यह स्पष्ट हो गया है कि विनियामकों को प्रणाली-व्यापी जोखिम को देखने की जरूरत है न कि केवल अलग-अलग संस्था-विशिष्ट जोखिम को। पर्यवेक्षकों और विनियामकों को उस अनुभव को ध्यान में रखते हुए कि एक क्षेत्र की घटनाओं का प्राय: कहीं ओर नुकसानदायक प्रभाव होता है, समूची वित्तीय प्रणाली का मूल्यांकन करने की जरूरत है। पर्यवेक्षण के बारे के में अनुलम्ब परिप्रेक्ष्य रखने के अलावा बैंकों, वित्तीय संस्थाओं, बाज़ारों और भौगोलिक क्षेत्रों के बीच समस्तर अंतर-संबद्धता को भी नीति निर्माण में मान्यता प्रदान करने की जरूरत है।

7.28 यह स्पष्ट है कि विनियमन और पर्यवेक्षण प्रणालीगत जोखिम को देखने के लिए बहुत ही फर्म-विशिष्ट थे। विशेषकर नीतिनिर्माता विनियामक दायरे के बाहर के इतनी बड़ी कि असफल होने होने नहीं दिया जा सकता वाली फर्मों में अंतर्निहित नैतिक खतरों (जिसने अत्यधिक जोखिम उठाने के लिए प्रोत्साहित किया) तथा नकारात्मक बाह्यताओं को समझने से तब चूक गये जब इतना अंतरसंबद्ध कि असफल होने नहीं दिया जा सकता की श्रेणी वाली फर्में भी असफल हो गयीं। अनुभव से पता चलता है कि संस्था के स्तर पर विनियमन और पर्यवेक्षण जरूरी है लेकिन ऐसे मामलों में पर्याप्त न भी हो। अत: यह आवश्यक है कि व्यष्टि-विवेकपूर्ण दृष्टिकोण का पूरक समष्टि-विवेकपूर्ण दृष्टिकोण हो। हालांकि हाल के वर्षों में कई नीतिगत संस्थाओं, विशेषकर केंद्रीय बैंकों, ने प्रणालीगत जोखिमों के उनके विश्लेषण को बढ़ा दिया तथा कई प्रणालीगत अरक्षितताओं की असल में पहचान कर ली गई है जिनके कारण वर्तमान हलचल हुई या बढ़ी। इन विश्लेषणों को कारगर रूप से नीतियों में रूपांतरित करने की नीतिगत कार्यप्रणाली की कमी रही है। इस प्रकार, वित्तीय क्षेत्र के प्राधिकारियों के पास प्रणालीगत अरक्षितताओं को दूर करने के लिए उचित समष्टि-विवेकपूर्ण साधन होने चाहिए।

7.29 यह परंपरागत समझदारी कि बाज़ार अनुशासन और स्व-विनियमन हल्के ढंग से नियंत्रित और अनियंत्रित संस्थाओं को अत्यधिक

जोखिम उठाने से रोकेगा, विवादास्पद हो गई है। इस प्रकार महत्तपूर्ण सबक में इस बात की समझदारी शामिल है कि बाज़ार प्राय: उस तरीके से कार्य क्यों नहीं करते, जिसके लिए वे बने हैं। बाज़ारों के असफल होने के कई कारण हैं। इस मामले में असफल होने के लिए बहुत बड़ी वित्तीय संस्थाओं को विकृत प्रोत्साहन था। यह स्पष्ट है कि बाज़ार अनुशासन निष्प्रभावी था, यहां तक कि बैंकिंग क्षेत्र के बाहर जोखिम-उठाना नियंत्रित था। कुछ अनियंत्रित संस्थाएं उच्च स्तर के लीवरेज के साथ ऋण और चलनिधि जोखिम बड़े स्तर पर उठाने में समर्थ थीं। यह महसूस किया गया है कि गैर-बैंकिंग संस्थाएं प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि वे प्रमुख वित्तीय बाज़ारों की कार्यप्रणाली और उनके विश्वास को प्रभावित करने की शक्ति रखती हैं। बाज़ार और विनियामक त्रुटिपूर्ण प्रोत्साहनों की समस्याओं, सूचना अंतरालों, अनुचक्रीयता उधार और वित्तीय नवोन्मेष की तेजी से उत्पन्न हुए जोखिम संकेंद्रण को स्पष्ट रूप से पहचानने में असफल रहे। यह विनियामक और पर्यवेक्षी कार्यप्रणाली में प्रणाली-व्यापी, विशेषकर सभी उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में कमी को प्रदर्शित करती है। विनियामक और पर्यवेक्षक नियंत्रित और गैर-नियंत्रित संस्थाओं, कार्यकलापों और बाज़ारों की पारस्परिक-क्रिया से संबद्ध उभरती प्रणालीगत जोखिमों से परिचित नहीं थे (आईएमएफ 2009ए)। विनियमन के इस सीमित क्षेत्र ने जोखिम प्रबंध पद्धतियों को साथ में शामिल किये बिना वित्तीय नवोन्मेष को बढ़ाने में मदद की। विनियामकों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि वित्तीय संस्थाएं कम लीवरेज वाली हों लेकिन अधिक अर्थसुलभ वाली हों।

7.30 उन्नत देशों में कई बैंकिंग संस्थाओं के आकार और जटिलता में सतत विकास ने कई प्रकार के संभाव्य जोखिमों के खतरे में डाल दिया, साथ ही एकल पर्यवेक्षक को फर्म-व्यापी जोखिमों और नियंत्रणों के पूर्ण अवलोकन हेतु अधिक चुनौतीपूर्ण बना दिया। ऐसी अपर्याप्तताएं खंडित विनियामक संरचनाओं और सूचना के आदान-प्रदान पर विधिक अवरोधों के कारण हो सकती हैं। बैंकों और गैर-बैंकों के बीच जटिल अंतर-सहलग्नता तथा संगुटों की ओर अग्रसर होने को देखते हुए यह महत्त्वपूर्ण है कि विनियामक अंतरपणन से बचने के लिए विनियामक खामियों को दूर किया जाए। इसके अलावा, यह आवश्यक है कि प्रणाली-व्यापी या समष्टि-विवेकपूर्ण निरीक्षण किया जाये जो विनियामकों और पर्यवेक्षकों के अधिदेश को व्यापक करता है ताकि उसमें संभावित प्रणालीगत जोखिमों और साथ ही कमजोरियों से संबंधित विषय शामिल किया जा सके। अमेरिका के संदर्भ में बर्नान्के (2009बी) और तारुल्लो (2009) ने सुझाव दिया कि प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण सभी फर्में, न कि केवल बैंक से संबद्ध, जैसाकि बैंक धारिता कंपनी अधिनियम, 1956 के अंतर्गत प्रावधान किया गया है, समेकित पर्यवेक्षण के लिए सुदृढ़ ढाँचे के अधीन होनी चाहिए। इसी प्रकार राम मोहन (2009) ने इस बात की जांच करने पर बल दिया कि क्या सभी प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं को केंद्रीय बैंक के विनियमन के अधीन होना चाहिए।

7.31 यह बात महत्त्वपूर्ण है कि वित्तीय प्रणाली के केवल एक हिस्से पर ध्यान केंद्रित करने से अरक्षितताएं छिप जाती हैं जो अंतत: बहुत महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकती हैं। अत: पर्यवेक्षी पद्धतियों को अधिक समन्वित और बहु-विषयक बनाकर उन्हें नया स्वरूप देने की जरूरत है। हाल के संकट से यह मान्यता भी संदेह के घेरे में आ गयी है कि बड़े गैर-बैंक की तुलना में बड़े बैंक के असफल होने की लागत अधिक होगी। गैर-बैंकों के प्रणालीगत महत्त्व को अच्छी तरह से नहीं समझा गया। इस प्रकार व्यापक रूप से यह अनुभव किया गया कि वित्तीय क्षेत्र की निगरानी के दायरे को संस्थाओं और बाज़ारों की व्यापक श्रेणी को शामिल कर विस्तारित करने की जरूरत है। पर्यवेक्षण के समष्टि-विवेकपूर्ण दृष्टिकोण शुरू करने पर बल देते हुए आईएमएफ (2009ए) और बर्नान्के (2009बी) ने प्रणालीगत जोखिम का ध्यान रखने के लिए अलग विनियामक स्थापित करने का सुझाव दिया, हालांकि टेलर (2010) ने ऐसे प्रस्तावों के प्रभावी होने पर संदेह व्यक्त किया। तारुल्लो (2009) भी प्रणालीगत जोखिम की समस्या के निवारण के लिए विनियामक और पर्यवेक्षी प्रणाली के बड़े पुनरुद्धार का सुझाव देते हैं। तथापि, यह महत्त्वपूर्ण है कि विनियमन का दायरा वित्तीय स्थिरता मंच और बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति जैसी अंतरराष्ट्रीय निकायों के गहन समन्वय और उनके द्वारा प्रदत्त निर्देशन के अधीन राष्ट्रीय प्राधिकारियों द्वारा विस्तारित किया जाये। यह सभी अधिकारक्षेत्रों में व्यापक सुसंगतता सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है। जी-20 कार्यदल I ने अनुशंसा की कि वित्तीय नवोन्मेष और वित्तीय प्रणाली में व्यापक प्रवृत्तियों के मद्देनजर राष्ट्रीय क्षेत्राधिकारों के भीतर विनियामक ढाँचे की सीमाओं की आवधिक रूप से समीक्षा की जानी चाहिए। अंतरराष्ट्रीय निकाय इस क्षेत्र में अच्छी पद्धतियों और संगत दृष्टिकोणों को बढ़ावा देंगे। इसी प्रकार टर्नर समीक्षा (2009) ने पहचाना कि प्रणालीगत जोखिम और पूरे कोरोबारी मॉडल की वहनीयता के विश्लेषण

पर फोकस अपर्याप्त था तथा उभरते प्रणालीगत जोखिमों के समाधान के लिए विनियामक साधन तैयार करने में असफलता थी। विश्व अर्थव्यवस्था पर जिनेवा रिपोर्ट (ब्रुनेरमीयर आदि 2009) ने भी वित्तीय विनियमन के आधार के बुनियादी पुनर्मूल्यांकन का सुझाव दिया और यह प्रस्ताव किया कि समष्टि-विवेकपूर्ण लक्ष्यों को शामिल करने के लिए मौजूदा बासेल II विनियमनों को संशोधित किया जाना चाहिए।

7.32 संक्षेप में, संकट का प्रमुख सबक यह है कि अलग-अलग संस्थाओं पर संकीर्ण रूप से ध्यान केंद्रित करने वाला पर्यवेक्षण दृष्टिकोण उन बड़ी समस्याओं को छुपा सकता है जो प्रणाली में बन रही होती हैं। वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए समष्टि-आर्थिक, साथ ही विनियामक और पर्यवेक्षी नीतियों को प्रणालीगत जोखिमों को न्यून करने पर ध्यान संकेंद्रित करते हुए पुन: तैयार करने की जरूरत है। विनियमनों को सभी संस्थाओं के लिए प्रोत्साहन-अनुकूल होने की जरूरत है और समय के साथ नवोन्मेष और कार्यकुशलता पर प्रतिकूल प्रभावों के लिए संभव संतुलन होना चाहिए। ऐसी संस्था के मामले में जिसकी समस्या का संबंध प्रणालीगत बाह्यताओं से हो, प्रोत्साहन उपाय विनियामक संरचना में शामिल होने चाहिए ताकि वे ऐसी लागतों को अपनी कारोबारी आयोजना और जोखिम प्रबंध में शामिल कर सके। सभी प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थाएं, बाज़ार और लिखत अपने स्थानीय और वैश्विक प्रणालीगत महत्त्व के आधार पर समुचित स्तर के विनियमन और निरीक्षण के अधीन होने चाहिए। असल में, प्रणालीगत महत्त्व का मूल्यांकन करते समय आकार और संबद्धता की एक साथ जांच की जानी चाहिए। विनियामकों और पर्यवेक्षकों द्वारा वित्तीय स्थिरता के लिए समष्टि-विवेकपूर्ण दृष्टिकोण का स्वीकरण वित्तीय प्रणाली में लचीलेपन को सुदृढ़ करने में सहायता प्रदान करेगा। हालांकि इसका अर्थ यह नहीं है कि समष्टि-विवेकपूर्ण कारक कम महत्त्वपूर्ण हैं। असल में, समष्टि-विवेकपूर्ण दृष्टिकोण अपने व्यष्टि-विवेकपूर्ण दृष्टिकोण के लिए तर्काधार को शामिल करता है। आवश्यकता इस बात की है कि व्यष्टि-विवेकपूर्ण विनियमन को समझकर उसमें सुधार किया जाए और समष्टि-विवेकपूर्ण विनियमन का विकास किया जाए।

विनियमन और लेखांकन में अनुचक्रीयता को न्यूनतम करने की नीतियां

7.33 हाल के संकट ने जोखिम उठाने और लीवरेज, जो हाल के वर्षों में हुआ, में व्यापक वृद्धि को प्रतिबिम्बित किया। अच्छे समय में जोखिम उठाने की प्रवृत्ति और लीवरेज में वृद्धि हुई तथा खराब समय में जोखिम से अचानक निकलने एवं लीवरेज को कम करने की प्रवृत्ति रही। हाल की घटनाओं से यह स्पष्ट है कि निजी क्षेत्र का व्यवहार और पद्धतियां, विवेकपूर्ण विनियमन और समष्टि-आर्थिक नीतियां चक्रों को बढ़ाने में मदद कर सकती हैं और इसका प्रतिकूल असर पड़ सकता है। कुछ हद तक उचित मूल्य लेखांकन प्रणाली ने भी वित्तीय दबाव को बढ़ाने करने में सहायता की। सुब्रमणियन और विलियमसन (2009ए) ने तर्क दिया "वर्तमान विनियामक प्रणाली न केवल यह पहचानने में असफल रही कि चक्रीयता के कारण प्रणाली में काफी हद तक खतरा है बल्कि यह स्वयं अनुचक्रीय प्रवृत्तियों को पुन: प्रबलित करने की ओर प्रवृत्त हुई"। इस प्रकार मौजूदा विनियामक और संस्थागत पद्धतियों की पुन: जांच यह सुनिश्चित करने के लिए जरूरत है कि वे अनुचक्रीयता के वेग को बढ़ाने का प्रयास नहीं करतीं।

7.34 आईएमएफ के अनुसार (2009ए) बाज़ार सहभागियों और विनियामकों के बीच इस बात का मतैक्य बढ़ रहा है कि वर्तमान ऋण हानि प्रावधानीकरण संबंधी नियम एवं पद्धतियां बहुत ही अल्पावधि सीमा की ओर प्रवृत्त हैं और पश्चगामी दृष्टिकोण वाली हैं, इस प्रकार जोखिम की पहचान बहुत देर से करती हैं और आर्थिक तेजी के दौरान अत्यधिक जोखिम उठाने के लिए प्रेरित करती हैं। भविष्य में संकट के अधिमापी प्रभावों से बचने के लिए नई नीतिगत अनुक्रियाओं को पहचानने की जरूरत है जो अनुचक्रीयता को कम करने में सहायता कर सकें। इस संदर्भ में 'सुदृढ़ विनियमन बढ़ाने और पारदर्शिता को मजबूत करने' से संबंधित जी-20 कार्यदल ने आर्थिक विस्तार के दौरान पूंजी बफर बनाने को बढ़ावा देकर तथा दबाव के समय उचित मूल्यांकन, लीवरेज और परिपक्वता बेमेल के बीच प्रतिकूल पारस्परिक-क्रिया को मंद कर अनुचक्रीयता को कम करने की जरूरत को रेखांकित किया। एंडरिट्जकी आदि (2009) ने सुझाव दिया कि दो मुद्दों पर तत्काल ध्यान देने की जरूरत है, यथा (i) विवेकपूर्ण विनियमनों को स्वीकार करना ताकि प्रति-चक्रीय प्रवृत्तियों का स्पष्ट रूप से मुकाबला किया जा सके, (ii) तेजी-मंदी के समय वित्तीय फर्मों द्वारा चलनिधि जोखिम के न्यून-मूल्यनिर्धारण को समायोजित करने के लिए औपचारिक चलनिधि आस्ति को न्यूनतम कर चलनिधि के बड़े बफरों को प्रोत्साहित करना।

7.35 जिनेवा रिपोर्ट (2009) ने व्यष्टि विनियमन की मौजूदा प्रणाली में समष्टि-विवेकपूर्ण विनियमन की प्रणाली जोड़कर अनुचक्रीयता के मुद्दे का सामना करने का प्रस्ताव किया। यह तेजी के दौरान बैंकों के पूंजी पर्याप्तता अनुपातों को बढ़ाने और संकट के दौरान उनको कम करने में सहायता करेगा। यह तेजी की अवधि के दौरान ऋण की मात्रा में अत्यधिक वृद्धि करने प्रवृत्ति को नियंत्रित करेगा और गिरावट की अवधि के दौरान ऋण देने के लिए प्रोत्साहन प्रदान करेगा। इसी प्रकार, अधिक आक्रामक प्रावधानीकरण अपेक्षाएं तेजी के दौरान उच्च ऋण वृद्धि की अवधियों के दौरान अनुचक्रीयता को कम करने में सहायता कर सकती हैं। हालांकि ये उपाय तभी वांछनीय होते हैं जब वित्तीय बाज़ारों में स्थितियां स्थिर हो जाती हैं। अनुचित अनुक्रमण और समय-निर्धारण के साथ अनुचक्रीयता को कम करने के उपायों का तेजी से कार्यान्वयन वित्तीय बाज़ारों को और अस्थिर कर सकता सकता है और कमजोर संस्थाओं को नुकसान पहुंचा सकता है। इस बात पर भी चिंताएं जताई गई हैं कि बासेल II पूंजी अपेक्षाओं में विस्तारित जोखिम-संवेदनशीलता संभाव्य अनुचक्रीयता के व्यवहार को बढ़ा सकता है। संकट के प्रति विनियामक अनुक्रिया का सुझाव देते हुए टर्नर समीक्षा (2009) ने अनुशंसा की कि विनियामकों को यह सुनिश्चित करने के लिए तत्काल कार्रवाई करनी चाहिए कि वर्तमान बासेल II पूंजी व्यवस्था का कार्यान्वयन अनावश्यक अनुचक्रीयता का सृजन न करे। इसे चूक की संभाव्यताओं के उपायों 'समय बिन्दु' की बजाय 'चक्र के माध्यम' का उपयोग कर हासिल किया जा सकता है। इसने इस बात पर भी बल दिया कि सामान्य रूप से विनियामक ढाँचा और विशेष रूप से इसका पूंजी घटक कारोबार चक्र को नहीं बढ़ाते हैं। अनुकूल चक्रीयता के मुद्दे के निवारण के लिए विनियामकों को निम्नलिखित पर ध्यान केंद्रित करना होगा (i) बाज़ार जोखिम प्रबंधन प्रतिमानों में सुधार और विशाखन करना, (ii) उन कारकों की पहचान करना जो चक्रों को बढ़ाते हैं, (iii) अधिक कठोर दबाव परीक्षण करना, और (iv) उनकी अंतर्निहित अनुचक्रीयता को मंद करने के लिए पूंजी गणना हेतु अग्रदर्शी प्रक्रियाओं को स्वीकार करना। इसी संदर्भ में यूरोपीय संघ में वित्तीय पर्यवेक्षण पर उच्चस्तरीय दल (अध्यक्ष : जैक्स डी लारोसीयर) ने फरवरी 2009 की अपनी रिपोर्ट में यह पाया कि संकट का बड़ा कारण बासले II नियमों को स्वत: दोषी ठहराना उचित नहीं है। हालांकि रिपोर्ट बासेल II की बुनियादी समीक्षा पर बल देती है।

पारदर्शिता और प्रकटन को बढ़ाना

7.36 हाल की घटनाएं इस तथ्य का प्रमाण हैं कि जब सूचना अपूर्ण होती है तब बाज़ार प्राय: ठीक से कार्य नहीं करते। वित्त में सूचना की अपूर्णता प्रमुख होती हैं और संबद्ध बाह्यताएं व्यापक होती हैं। संकट ने जिन प्रमुख कमजोरियों पर प्रकाश डाला है, उनमें जटिल संरचित वित्त उत्पादों और ओटीसी बाज़ार में अंतर्निहित पारदर्शिता की कमी है, जिन्होंने बाज़ार चलनिधि को कम करने में योगदान दिया। संरचित उत्पादों के मामले में जोखिम प्रकटन पारदर्शिता का प्रमुख घटक है। जी-20 कार्यदल I ने अपनी रिपोर्ट (मार्च 2009) में यह नोट किया कि कई मामलों में निवेशकों और अन्य बाज़ार प्रेक्षक उन विभिन्न उत्पादों के मूल्य निर्धारण, व्यापार की मात्रा और सकल अस्थिर ब्याज राशि के बारे में केवल न्यूनतम जानकारी ही प्राप्त कर पाये जिनका ओटीसी बाज़ारों में लेनदेन होता है।

7.37 असल में कई ऐसे क्षेत्र हैं जिनकी पारदर्शिता में कमी ने विश्वास खोने में योगदान दिया और संकट गहराया। एक विशेष क्षेत्र ओवर-दि-काउंटर प्रतिभूतियों का क्षेत्र है जैसे, आस्ति समर्थिक प्रतिभूतियां (एबीएस), वाणिज्यिक बंधक-समर्थित प्रतिभूतियां (सीएमबीएस), आवासीय बंधक-समर्थिक प्रतिभूतियां (आरएमबीएस) तथा संपार्श्विकृत ऋण बाध्यताएं (सीडीओ) और उनसे संबद्ध व्युत्पन्नियों का मामला । प्रतिपक्षी जोखिम में अपारदर्शिता के प्रणालीगत परिणामों को देखने के लिए विनियामकों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि व्युत्पन्न संविदाएं समाशोधन गृह के माध्यम से समाशोधित की जाती हैं, जिससे प्रतिपक्षी जोखिम को मापने की समस्या का विलोपन किया जा सके।

7.38 संरचित वित्तीय लिखितों की रेटिंगों से जुड़ी पारदर्शिता का भी मुद्दा था। चूंकि संरचित वित्तीय उत्पाद निवेशकों की अधिसंख्य श्रेणीयों द्वारा समझने के लिए बहुत ही जटिल थे, अत: निवेशकों ने समुचित सावधानी बरतने की बजाय ऋण रेटिंगों पर अत्यधिक विश्वास किया। इस जटिलता का अर्थ यह भी हुआ कि सब-प्राइम ऋण के एक्सपोजर का निर्धारण करना कठिन हो गया था जिसने प्रतिपक्षी जोखिमों के निर्धारण की कठिनाइयों को बढ़ाया। इसके अलावा, जैसे ही बाज़ार गिरा, आस्तियों के उचित मूल्य के अनुमान के संबंध में चिंताएं बढ़ गईं। टर्नर (2009) ने पाया कि कुछ बैंक सही अर्थ में 'प्रवर्तन और वितरण' का कार्य रहे थे, लेकिन अन्य बैंकों (और

कभी-कभी उसी बैंक) के व्यापारिक परिचालन 'अधिगृहीत और अंतरपणन' के कार्य कर रहे थे। हालांकि यह स्पष्ट है कि लीवरेज ने हानियों के बढ़ाने में भूमिका निभाई, पर इसे बेहतर ढंग से समझने की जरूरत है कि जोखिमों को फैलाने और विशाखन के लिए तैयार किये गये लिखत जोखिमों के संकेंद्रण के रूप में कैसे परिणत हो गये। नये मॉडल ने अधिकांश जोखिमों को बैंकों और बैंक-जैसी संस्थाओं के तुलनपत्रों में, अधिक जटिल और कम पारदर्शक ढंग से छोड़ दिया।

7.39 पारदर्शिता की कमी ने न केवल विनियामकों की जोखिम निर्धारण कार्यप्रणाली को अपर्याप्त बना दिया, बल्कि निवेशकों को भी निवेश करने का निर्णय लेने से पूर्व समुचित सावधानी बरतने से रोक दिया। इस प्रकार, संकट ने तकनीकों, आंकड़ों की विशिष्टता, और जटिल वित्तीय लिखतों के मूल्यांकन के से जुड़ी चेतावनियों; ओटीसी बाज़ारों और समाशोधन व्यवस्थाओं से संबंधित उन्नत सूचना; एक्सपोजर (तुलनपत्र और इससे इतर) को एक प्ररूप में रिपोर्ट करना, जो विनियामकों को पूरी प्रणाली में जोखिम के संचय और उसका मूल्यांकन करने की अनुमति प्रदान करता है, के बारे में अधिक बाज़ार पारदर्शिता की जरूरत पर बल दिया। इसके अलावा, संकट ने वित्तीय संस्थाओं द्वारा सार्वजनिक प्रकटन की कमियों को उजागर किया। बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के तुलनपत्र और इससे इतर एक्सपोजर से संबद्ध जोखिम के प्रकार और परिमाण के संबंध में पर्याप्त प्रकटन में कमी ने हलचल के दौरान बाज़ार विश्वास को नुकसान पहुंचाया।

7.40 पारदर्शिता में कमी के मुद्दे के निवारण के लिए प्रयास पहले ही शुरू कर दिये गये हैं। इस दिशा में, कई लेखांकन मानक निर्धारक निकायों ने जटिल वित्तीय उत्पादों सहित वित्तीय लिखतों के मूल्यांकन के लिए प्रत्याशाएं स्पष्ट करने के लिए दिशानिर्देश प्रदान किये हैं। इसके अलावा, जी-20 कार्यदल I (मार्च 2009) ने पाया कि कई अधिकार क्षेत्रों में विवेकपूर्ण पर्यवेक्षकों ने अपने अंतरराष्ट्रीय रूप से सक्रिय वित्तीय संस्थाओं को वित्तीय स्थिरता मंच (एफएसएफ) के वरिष्ठ पर्यवेक्षकों के दल द्वारा दी गई रिपोर्ट में संबोधित अग्रणी जोखिम प्रकटन पद्धतियों को स्वीकार कर प्रकटन बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित करने के प्रयास किये हैं। आईएमएफ के अनुसार (2009बी) पारदर्शिता उपाय जहां अंतिम निवेशकों को समुचित सावधानी बरतने जैसे कार्य, जो वर्तमान में रेटिंग एजेंसियों से करवाया जाता रहा है, खुद करने में मदद करेंगे वहीं यह रेटिंग एजेंसियों को अप्रत्याशित जोखिमों की माप बेहतर ढंग से करने में सहायता करेंगे।

7.41 संक्षेप में, वित्तीय विनियमन की समीक्षा करने की जरूरत पर व्यापक मतैक्य है। वैश्विक जोखिम के नये माहौल और घटनाओं की गति में अत्यधिक वृद्धि हुई है, जिसने नीतिनिर्माताओं के लिए उचित नीतिगत अनुक्रिया के लिए कम समय छोड़ा है। पर्यवेक्षकों के लिए प्रमुख सबक है - नये जोखिमों, विशेषकर त्वरित वित्तीय नवोन्मेष के रूप में, के आविर्भाव के प्रति सतर्क बने रहने की जरूरत। उन्हें वित्तीय प्रणाली के नियंत्रित और अनियंत्रित खण्डों की बढ़ती अंतर-संबद्धता का उचित संज्ञान लेने की भी जरूरत है। वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण के समयानुसार होने और इनसे जुड़े कौशल एवं लिखतों में सतत उन्नयन किये जाने की जरूरत है। इसके अलावा, यह सुनिश्चित करने की जरूरत है कि विवेकपूर्ण व्यवस्था ऐसे प्रोत्साहनों को आगे बढ़ाती हो जो प्रणालीगत स्थिरता को मदद पहुंचाती हो और विनियामक अंतरपणन को निरुत्साहित करती हो एवं विनियमन के कारगर प्रवर्तन का आश्वासन देती हो। पर्यवेक्षी संस्थाओं के लिए इस बात की उच्च प्राथमिकता होनी चाहिए कि किस प्रकार पर्यवेक्षण की प्रभावशीलता को बढ़ाया जाए। साथ ही यह सुनिश्चित करने की जरूरत है कि अति-विनियमन से अर्थव्यवस्था की गतिशीलता या आगे नवोन्मेष करने के प्रोत्साहनों को बाधा न पहुचती हो।

सीमापारीय संस्थाओं का कारगर विनियमन

7.42 गत दशक में अधिक वैश्विक वित्तीय एकीकरण और सीमापारीय उधार एवं निवेश में उल्लेखनीय वृद्धि होने से एक देश या क्षेत्र के वित्तीय संकट का अन्य अर्थव्यवस्थाओं पर बड़े स्तर का नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। संकट-पूर्व की अवधि के दौरान राष्ट्रीय पर्यवेक्षी प्राधिकारी वैश्विक रूप से सक्रिय और प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं में बनती अरक्षितताओं के बारे में जानकारी के आदान-प्रदान तथा उनकी पहचान करने में स्पष्ट रूप से सक्रिय नहीं थे। इस प्रकार, संकट ने वैश्विक स्तर पर परिचालित प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं, बाज़ारों और लिखतों के कार्यकलापों के संबंध में स्थानीय नीतिगत अनुक्रियाओं की सीमाओं को स्पष्ट रूप से प्रकट किया।

7.43 इसके मद्देनजर ऐसी सीमापारीय संस्थाओं के विनियमन के लिए सुदृढ़ ढाँचा बनाना आवश्यक हो गया है जो गृह और मेज़बान देशों के प्राधिकारियों की भूमिकाओं और जिम्मेदारियों के बारे में निर्देशन प्रदान करती हो। आईएमएफ (2009बी) ने भी सीमापारीय संस्थाओं के विनियमन और समाधान के राजनीतिक और विधिक अड़चनों को दूर करने की जरूरत पर बल दिया है। अंतरराष्ट्रीय रूप से बेहतर समन्वित पर्यवेक्षण और सुदृढ़ वैश्विक समाधान ढाँचे की जरूरत पर बल देते हुए मोहन (2009बी) तर्क देते हैं कि विनियामक अंतरपणन से बचने के लिए देश के भीतर और बाहर, दोनों जगह एक जैसे लिखतों और एक जैसा कार्यकलाप करने वाली संस्थाओं के विनियमन में अधिक सुसंगतता की जरूरत है।

7.44 इस संदर्भ में टर्नर समीक्षा (2009) द्वारा की गई कुछेक अनुशंसाएं उल्लेखनीय हैं। इनमें शामिल हैं (i) सर्वाधिक जटिल और सीमापारीय वित्तीय संस्थाओं के लिए पर्यवेक्षकों हेतु कॉलेजों की स्थापना और कारगर परिचालन, (ii) विनियामक मानकों पर वैश्विक करारों में शामिल किये जाने वाले अपतटीय वित्तीय केंद्र, और (iii) संकट समन्वय कार्यप्रणालियां और आकस्मिकता योजनाएं पहले से ही तैयार करने के लिए पर्यवेक्षकों, केंद्रीय बैंकों और वित्त मंत्रियों के बीच अंतरराष्ट्रीय सहयोग बढ़ाना। इसके अलावा इसने नई यूरोपीय संस्था गठित करने का सुझाव दिया जिसके पास विनियामक शक्तियां, मानक निर्धारक और पर्यवेक्षण के क्षेत्र में निरीक्षक वाले स्वतंत्र प्राधिकार होंगे तथा समष्टि-विवेकपूर्ण विश्लेषण में उल्लेखनीय रूप से सन्निहित होगी, जबकि अलग-अलग संस्थाओं का पर्यवेक्षण राष्ट्रीय स्तर पर करना जारी रहेगा। संकट ने अंतरराष्ट्रीय विधिक ढाँचे की कमजोरियों का स्पष्ट रूप से संकेत किया है जो वैश्विक फर्म/बैंक के असफल होने पर उचित समाधान की गारंटी प्रदान कर सकती है। अत: उन देशों के नीतिनिर्माताओं को ऐसे विधिक अवरोधों के समाधान के लिए सहयोग और समन्वय करना चाहिए जहां बड़ी सीमापारीय वित्तीय संस्थाएं सक्रिय रूप से कार्यरत हैं।

गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं के लिए समाधान व्यवस्था

7.45 संकट से उभरा एक सबक है अमेरिका जैसी अर्थव्यवस्थाओं में गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं के लिए समाधान व्यवस्था का महत्त्व, क्योंकि उनके पास बैंकों की तुलना में वित्तीय मध्यस्थीकरण का बड़ा हिस्सा है। अत: अमेरिका में विनियामकों को निर्देशित करने वाला सिद्धांत इस आधार-वाक्य पर आधारित था कि किसी गैर-बैंक की असफलता की तुलना में किसी बैंक की असफलता संपूर्ण अर्थव्यवस्था के लिए अधिक नुकसानदायक होगी। संकट के फैलने पर यह आधार-वाक्य गलत सिद्ध हुआ। गैर-बैंक व्युत्पन्नी बाज़ारों के बहुत बड़े खिलाड़ी हैं। गैर-बैंक वित्तीय संस्थाओं के लिए पर्याप्त समाधान व्यवस्था के अभाव में अमेरिकी प्राधिकारी प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण निवेश बैंक या बचाव निधि को दिवालियापन के अध्याय 11 के अंतर्गत लाने के लिए तैयार नहीं थे। ऐसे मामलों में प्राधिकारियों के पास सीमित विकल्प थे। गोल्डस्टीन (2008) ने सुझाव दिया कि बड़े निवेश बैंकों को "विवेकपूर्ण विनियामक" के पर्यवेक्षण के अधीन रखने की जरूरत है। फेडरल जमा बीमा अधिनियम के अंतर्गत बैंकों के लिए वर्तमान व्यवस्था के पूरक के रूप में प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण गैर-बैंक संस्थाओं के लिए समाधान व्यवस्था होनी चाहिए। तारुल्लो (2009) ने पाया कि हालांकि अधिकांश मामलों में फेडरल दिवालिया कानून गैर-बैंक वित्तीय संस्थाओं के समाधान के लिए उचित ढाँचा प्रदान करते हैं लेकिन यह ढाँचा गैर-जमाकर्ता वित्तीय संस्थाओं का सुव्यवस्थित समाधान सुनिश्चित करने में जनता के हित को पर्याप्त संरक्षण उस समय प्रदान नहीं करता, जब असफलता पर्याप्त प्रणालीगत जोखिम प्रस्तुत करेगी। इस प्रकार अमेरिका जैसे देशों में 'असफल होने के लिए बहुत बड़े' समस्या के समाधान के लिए गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं हेतु उचित समाधान व्यवस्था की जरूरत है।

वाणिज्यिक और निवेश बैंकिंग का मिश्रण करना

7.46 महामंदी ने यह प्रदर्शित किया था कि बैंक आर्थिक रूप से इतने महत्त्वपूर्ण हैं कि उन्हें असफल होने नहीं नहीं दिया जा सकता। हाल के संकट की घटना के घटित होने पर कई लोगों द्वारा यह तर्क दिया जाता है कि वित्तीय अविनियमन ने महामंदी के बाद पहली बार उन्हें असफल होने से रोकने के लिए तैयार किये गये विधान को हटा दिया गया। यह व्यापक रूप से अनुभव किया जाता है कि वित्तीय संकट के कारणों में से एक अविनियमन और विशेष रूप से ग्राम-लीच बलिले अधिनियम (1999) रहा है जिसके मर्म में निवेश और वाणिज्यिक बैंकिंग के मिश्रण को निषिद्ध करने वाले ग्लास-स्टीगल अधिनियम (1933) का निरसन किया जाना था। ग्राम-लीच बलिले अधिनियम ने निवेश और वाणिज्यिक बैंकों के विलयन के रास्ते को सुगम बनाया, इस प्रकार निवेश बैंकों को अधिक जोखिम उठाने के लिए प्रोत्साहन प्रदान किया, वहीं डॉलर आस्तियों के बदले में उनके द्वारा इक्विटी धारण की अपेक्षित राशि को कम कर दिया (हादर 2009)।

इसके अलावा, वित्तीय इंजीनियरिंग पूरे वित्तीय सेवा क्षेत्र की विशेषता को तेजी से बदल रही थी। प्रतिभूतिकरण और संबद्ध व्युत्पन्न लिखत पूंजी बाज़ारों और परंपरागत उधार देने के कार्यकलापों का विलय कर रहे थे जिसने आभासी बैंकिंग प्रणाली की बढ़ावा दिया। इसके परिणामस्वरूप कई बैंकों का आस्ति मिश्रण और निधीयन के स्रोत, कभी-कभी नाटकीय ढंग से, बदल रहे थे (तारुल्लो 2009)। अधिकांश बड़े वाणिज्यिक बैंक प्रतिस्पर्धी प्रतिभूति बाज़ारों में स्वयं अपनी पूंजी जुटाने की जरूरत का सामना कर रहे थे, धीरे-धीरे व्यापारिक लाभों पर आश्रित हुए, अंततः स्वयं को बचाव निधियों में बदल लिया। दूसरी ओर, पर्याप्त व्यापारिक परिचालनों में लगे अधिकांश बड़े निवेश बैंकों ने धीरे-धीरे स्वयं को निधि प्रदान करने के लिए पुनर्खरीद करारों का उपयोग किया जिससे अल्पकालिक जमाराशियां प्राप्त हुईं। वाणिज्यिक और निवेश बैंकिंग कार्यकलापों के बीच ऐसे धुंधले अंतर ने वित्तीय प्रणाली को अधिक अरक्षित बना दिया।

7.47 अमेरिका में ग्राम-लीच बलिले बैंक सुधार अधिनियम के अनुमोदन ने वित्तीय कार्यकलापों की अधिक व्यापक श्रृंखला में लगने और विनियामक अवरोध के बिना योजनाओं एवं सेवाओं की पूरी श्रृंखला प्रदान करने के लिए बैंकों को प्रोत्साहित किया। ऐसे अविनियमन ने धीरे-धीरे जोखिमपूर्ण नवोन्मेष की अनुमति प्रदान की जिसने प्रणाली को अधिक अरक्षित बना दिया। कई बड़े बैंक धीरे-धीरे सीधे या अपनी संबद्ध संस्थाओं के जरिये परोक्ष रूप से विशेष प्रयोजन संस्था के प्रायोजन और प्रबंधन के द्वारा प्रतिभूतिकरण प्रक्रिया में लग गये। साथ ही, यह तर्क दिया गया कि संकट के फैलने पर असफल होते बैंकों के विलयन और अधिग्रहण की अनुमति प्रदान कर ग्राम-लीच बलिले अधिनियम ने संकट के प्रभाव को कम किया। कुट्टनर (2007) ने भी बंधक संकट के अंशदायी कारकों के रूप में ग्लास स्टीगल अधिनियम के निरसन को माना। वॉलकर (2009) ने वाणिज्यिक और निवेश बैंकिंग को अलग-अलग करने की जरूरत पर बल दिया। हालांकि हाल के वर्षों में वित्तीय नवोन्मेष की बाढ़ ने ग्लास स्टीगल अधिनियम के अनुरूप वाणिज्यिक और निवेश बैंकिंग को पुनः अलग करना असंभव बना दिया है, अमेरिका में वित्तीय विनियमन के ढाँचे में ऐसे जोखिमों के निवारण के लिए आमूलचूक सुधार करने की जरूरत है जो वैश्विकृत संसार में उत्पन्न हो सकते हैं। अमेरिका के संदर्भ में अमेरिका में सुधार कार्यसूची के हिस्से के रूप में वॉलकर नियम प्रस्तावित किया जा रहा है जिनके अंतर्गत बैंकों को अपने स्वयं के लाभ के लिए अपने ग्राहकों की सेवा से असंबद्ध बचाव निधियों, निजी इक्विटी निधियों या स्वामित्व ट्रेडिंग परिचालनों का स्वामित्व, उनमें निवेश या उनका प्रायोजन करने की अनुमति नहीं होगी। प्रस्ताव जमाराशियों के बाज़ार हिस्से पर मौजूदा अधिकतम सीमा के पूरक के रूप में बड़ी वित्तीय संस्थाओं की देयताओं के बाज़ार हिस्से में अत्यधिक वृद्धि पर स्पष्ट सीमाएं रखेगा।

7.48 संक्षेप में, विनियामकों को यह सुनिश्चित करने की जरूरत है कि (i) ऋण और इक्विटी संस्कृतियों को मिलाया नहीं जाये, (ii) पूंजी संबंधी नियमों को कुशलतापूर्वक लक्षित किया जाये, और (iii) यह सुनिश्चित किया जाए कि लीवरेज की लागत पर्याप्त अधिक हो ताकि उनका आकार और जोखिम उठाने के कार्यकलापों पर उचित प्रकार से नियंत्रण लगाया जा सके। हाल के संकट का महत्त्वपूर्ण सबक यह है कि नीतिनिर्माताओं को वित्तीय विनियमनों को बाज़ार पर आर्थिक भार के रूप में नहीं मानना चाहिए, बल्कि वित्तीय प्रणाली को अचानक विघटन के प्रति सशक्त बनाने की दिशा में किये गये उपायों के रूप में और मंदी से उबरने के लिए सरकार के भावी बेलआउट संबंधी बाध्यताओं को कम करने के रूप में मानना चाहिए।

क्षतिपूर्ति संरचना

7.49 संकट के विश्लेषण से पता चलता है कि अत्यधिक जोखिम उठाने के लिए आंशिक रूप से क्षतिपूर्ति योजनाएं भी जिम्मेदार थीं। क्षतिपूर्ति योजनाओं ने प्रबंधकों को अल्पकालिक प्रतिलाभों के लिए दीर्घकालिक संभावनाओं का त्याग करने के लिए प्रोत्साहित किया। बाज़ार सहभागियों अर्थात् व्यापारियों, ऋण प्रबंधकों, जोखिम समितियों और निदेशक मंडलों को अल्पकालिक लाभों पर ध्यान केंद्रित करने के लिए ठोस आर्थिक प्रोत्साहन दिये गये। बीआईएस (2009) के अनुसार कुछ मामलों में पुरस्कारों का निर्धारण करने के लिए जटिल गणितीय मॉडलों का प्रयोग तब भी किया जाता था जब गणना में अंतर्निहित आस्तियों के बाज़ार मौजूद नहीं होने से वे बेची नहीं जा सकती थीं। इसके परिणामस्वरूप, इक्विटी-धारियों और आस्ति प्रबंधकों को जोखिम उठाने के लिए अनावश्यक रूप से क्रमशः उनकी सीमित देयता और क्षतिपूर्ति प्रणाली के लिए पुरस्कृत किया गया। हालांकि, गिरावट का प्रतिकूल प्रभाव मुख्यतः लेनदारों या सरकार को वहन करना पड़ा। यह प्रकट करता है कि वित्तीय संविदाएं तैयार करने में अल्पकालिक कारकों को ठीक करने की जरूरत है। वित्तीय संकट

से संबंधित विभिन्न प्रमुख रिपोर्टों की अनुशंसाओं के अनुरूप कार्यपालकों की क्षतिपूर्ति योजनाओं और पद्धतियों में सुधार वित्तीय स्थिरता हासिल करने के लिए नीति का अनिवार्य हिस्सा होना चाहिए। इस संदर्भ में, स्क्वाम लेक रिपोर्ट (जून 2010) ने क्षतिपूर्ति के बड़े हिस्से के स्थगन का सुझाव दिया जो फर्मों की सतत सुदृढ़ता पर निर्भर करता था।

वित्तीय नवोन्मेष की प्रभावोत्पादकता

7.50 जोखिम प्रबंध पद्धतियों के बिना वित्तीय नवोन्मेष में त्वरित वृद्धि ने संकट को और बढ़ाया। ऋण चूक अदला-बदली और संपार्श्विकृत ऋण बाध्यताएं जैसे वित्तीय नवोन्मेष से जोखिम के कुशल आबंटन को बढ़ावा देने की अपेक्षा थी, अत: उन बाज़ार सहभागियों को आस्ति के जोखिम को वहन करने दिया जाए जो उसे बेहतरीन ढंग से वहन कर सकते हैं। पोसेन (2009) ने विस्तार से बताया कि ऐसे जोखिम के भार से मुक्त गैर-वित्तीय कंपनियों से अधिक उत्पादक पूंजी निर्माण में लगने की अपेक्षा थी जो संपूर्ण अर्थव्यवस्था के लिए विकास उत्पन्न करतीं। हालांकि नई वित्तीय उत्पादों की वृद्धि ने वैश्विक स्तर पर और अमेरिका में नियत पूंजी निर्माण को बड़े स्तर पर पीछे छोड़ दिया। ऐसा लगता है कि नवोन्मेषी जटिल वित्तीय योजनाओं में वृद्धि और वास्तविक कॉरपोरेट निवेश के बीच केवल एक कमजोर कड़ी है। इस संदर्भ में संयुक्त राष्ट्र (सितम्बर 2009) की रिपोर्ट में यह तर्क दिया गया कि अनियंत्रित बाज़ार शक्तियों ने ऐसी वित्तीय योजनाओं का प्रचुर मात्रा में सृजन करने के लिए प्रोत्साहन प्रदान किया, जिनकी सामाजिक लक्ष्यों को पूरा करने और सामाजिक लक्ष्यों के लिए सहायता प्रदान करने वाली वित्तीय योजनाओं के न्यून-उत्पादन में थोड़ी सार्थकता थी। इस प्रकार, वित्तीय नीतिनिर्माताओं की भूमिकाओं में से एक वित्तीय उत्पाद विकास में इन बाज़ारों की असफलता को दूर करना था।

7.51 यद्यपि वित्तीय नवोन्मेष उपभोक्ताओं, वित्तीय प्रणाली और व्यापक अर्थव्यवस्था के लिए लाभप्रद हो सकता है, लेकिन उनके जोखिमों को बाज़ार संस्थाओं द्वारा ठीक प्रकार से नहीं समझा जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि नवोन्मेष भी विनियमन को कम आंकने के लिए जटिलताएं पैदा करने के उद्देश्य से किये गये थे। इस संदर्भ में वित्तीय मामलों के प्रति जागरूकता बढ़ाने और सुधारने तथा आर्थिक एवं वित्तीय शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए भी सार्वजनिक नीति की जरूरत है। ब्युटर (2009) प्रकट करते हैं कि नवोन्मेषों को असली माना जाता है और संभाव्य रूप से सामजिक तौर पर उपयोगी (ब्याज दर अदला-बदली, प्रतिभूतिकरण, सीडीएस) का प्राय: दुरुपयोग किया जाता है और ये सामाजिक रूप से नुकसानदायक हो गये। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि इन योजनाओं के लिए विनियामकों द्वारा अनुमति प्रदान करने से पहले इनका ठीक प्रकार से पुनरीक्षण किया जाना चाहिए। इसके अलावा, बैंकों को नये वित्तीय लिखतों के संभावित गैर-इरादतन परिणामों की अधिक व्यापक ढंग से मूल्यांकन करने की जरूरत है और यह देखने कि दबावग्रस्त बाज़ार स्थितियों में ये लिखत किस प्रकार कार्य करेंगे। इस प्रकार, यह आवश्यक है कि प्रतिभूतिकरण जैसे नवोन्मेषों का सुदृढ़ विनियामक ढाँचे के भीतर विकास किया जाना चाहिए, जिसमें प्रणालीगत कार्यकुशलता और प्रभावशीलता को बढ़ाने की क्षमता है।

7.52 इस बात की संभावना बहुत कम है कि संकट के कारण वित्तीय नवोन्मेष की प्रक्रिया रूक जायेगी। हालांकि नीतिनिर्माताओं को यह निर्णय लेना है कि ऐसी योजनाओं से संबंधित वित्तीय संस्थाओं के विनियमन और पर्यवेक्षी निरीक्षण को कितना बढ़ना है। साथ ही, वास्तविक नवोन्मेष के लिए समर्थनकारी माहौल सुनिश्चित कर सुधारों के प्रति उनके दृष्टिकोण में सतर्क भी रहना है। अति-विनियमन द्वारा वित्तीय नवोन्मेष की प्रक्रिया में बाधा नहीं डालनी चाहिए। इसके बजाय विनियामकों को जिम्मेदार नवोन्मेष को प्रोत्साहित करना चाहिए जिसे ठीक प्रकार से लागू किया जा सके और जो उपभोक्ता कल्याण में वृद्धि कर सके। पोसेन (2009) ने सुझाव दिया कि भले ही कई वित्तीय नवोन्मेष लाभकारी हों, उन सब पर विनियामकों द्वारा दीर्घकाल तक निगरानी रखने, साथ ही उनकी सुरक्षा और प्रभावशीलता की जांच के लिए जारी करने से पूर्व संवीक्षा की जरूरत है। इसके अलावा, वित्तीय संस्थाओं को अपने तुलनपत्रों में अधिक पूंजी और चलनिधि की गुंजाइश की जरूरत है। यह अधिक विवेकसम्मत व्यवहार को बढ़ावा देने में सहायक होगी क्योंकि एक वित्तीय मध्यवर्ती उत्पाद नवोन्मेष के माध्यम से अपने तुलनपत्र को बढ़ाना चाहती है। वित्तीय नवोन्मेष को वित्तीय स्थिरता के व्यापक संदर्भ में देखे जाने की जरूरत है और अनिवार्य रूप से वित्तीय प्रणाली की परिपक्वता के स्तर तथा वास्तविक अर्थव्यवस्था की जरूरतों के अनुरूप होना चाहिए। संक्षेप में, विनियामकों को "जिम्मेदार नवोन्मेष" की अनुमति देनी चाहिए जो उपभोक्ता कल्याण को बढ़ाता है। अत्यधिक विनियमन वित्तीय नवोन्मेष के लाभों से वंचित नहीं करता, यह सुनिश्चित करने के लिए विनियामकों को बेहतर निर्णय और अंतर्दृष्टि की जरूरत होगी।

मौद्रिक और विनियामक/पर्यवेक्षी प्राधिकारियों के बीच नीतिगत समन्वय

7.53 हाल का संकट इस बात पर प्रकाश डालता है कि बाज़ार के स्व-विनियमन की सीमाएं हैं। बाज़ार के असफल होने की संभावना से बचने के लिए मौद्रिक और विनियामक अधिकारियों को विशेषकर आस्ति मूल्य के बुलबुले के बनने के दौरान (विगत की तुलना में) बेहतर समन्वय करने की जरूरत है। प्राधिकारियों द्वारा जिम्मेदारियों के विभाजन को स्पष्ट करने की जरूरत है ताकि बैंकों द्वारा वित्तीय दबाव की स्थिति का सामना करने में विवादों का समाधान करने के लिए सूचना के आदान-प्रदान, उनकी अपनी-अपनी भूमिकाओं का समन्वय और रणनीतियां तैयार करने के लिए उचित प्रक्रिया मौजूद हो। हाल के संकट (अर्थात् नॉदर्न रॉक को संकट से उबारने के अवसर पर) के दौरान सुस्पष्ट "संप्रेषण" की असफलता दो अलग एजेंसियों के कार्यों के समन्वय में निहित मुद्दों की ओर इशारा करती है। बेहतर समन्वय एजेंसियों के दोनों समूहों की नीतियों के बीच सुसंगतता और संबद्धता लायेगा।

7.54 हाल के संकट के दौरान यह महसूस किया गया कि अस्पष्ट विधानों के कारण एक ही क्षेत्राधिकार के भीतर भी विनियामकों के बीच सूचना के उचित प्रवाह की कमी थी (आईएमएफ, 2009बी)। अंतर-एजेंसी समन्वय पर बल देते हुए सुब्बाराव (2008) ने तर्क दिया कि वित्तीय स्थिरता के संबंध में केंद्रीय बैंकों, विनियामकों, पर्यवेक्षकों और राजकोषीय प्राधिकारियों को अपनी-अपनी भूमिकाओं को पुन: देखने की जरूरत है। केंद्रीय बैंकों को वित्तीय स्थिरता बनाये रखने में केंद्रीय भूमिका निभानी चाहिए और ऐसा कारगर ढंग से करने के लिए आवश्यक सूचना आधार होना चाहिए। इसका अर्थ है वित्तीय स्थिरता बनाये रखने के कार्य सौंपी गई सभी एजेंसियों के बीच गहन सहयोग है। केंद्रीय बैंकों और अन्य पर्यवेक्षी एवं विनियामक एजेंसियों के बीच बेहतर समन्वय न केवल वित्तीय प्रणाली की अधिक कार्यक्षम कार्यप्रणाली हासिल करने के लिए संस्थागत व्यवस्थाएं उपलब्ध कराने और वित्तीय स्थिरता उपायों में अधिक कारगर समन्वय के द्वारा हासिल किया जा सकता है बल्कि मौद्रिक और वित्तीय स्थिरता को बढ़ावा देने में उनके संबंधित अधिदेशों को अधिक स्पष्टता से निर्दिष्ट करके प्राप्त किया जा सकता है। सूचना का प्रभावी आदान-प्रदान और गहन समन्वय न केवल संकट के कुशल प्रबंधन के लिए, बल्कि नकारात्मक फैलाव, प्रतिस्पर्धा में विघटन और विनियामक अंतरपणन से बचने के लिए भी आवश्यक है। एकीकृत बाज़ार और पर्यवेक्षण संगठन की वास्तविकता के बीच अधिक सुसंगति शुरू करने के लिए समन्वय कार्यप्रणाली की जरूरत है।

7.55 जेनकिन्सन (2007) की यह राय थी कि जैसे-जैसे बाज़ार अधिक अंतर-संबद्ध होते जाते हैं, राष्ट्रीय, साथ ही अंतरराष्ट्रीय विनियामकों को अधिक घनिष्टता, उनके निरीक्षण एवं परिचालन संबंधी कार्यकलापों में सहयोग और उनके जोखिम मूल्यांकनों में समन्वय से कार्य करना होता है। हालांकि, दो अलग-अलग मत हैं। उदाहरणार्थ, नीयर (2009) ने केंद्रीय बैंकों के पास पहले से उपलब्ध साधनों और वित्तीय विनियमन में विस्तारित भूमिका के बीच कई प्रकार का सामंजस्य माना तथा यह सुझाव देते हैं कि वित्तीय विनियमन में केंद्रीय बैंकों की विस्तारित भूमिका वित्तीय विनियमन की प्रभावशीलता को बढ़ा सकती है। गोल्डस्टीन (2008) ने तर्क दिया कि "यदि किसी एक (अर्थात् मौद्रिक प्राधिकारी) को अधिक करने से रोका जाता है, तो अन्य (अर्थात् विनियामक प्राधिकारी) को अधिक प्रभावशाली ढंग से कार्य करना होगा"। अत: देश के भीतर और बाहर, दोनों जगह समन्वय के लिए कार्यप्रणाली स्थापित कर प्रणालीगत संकटों के प्रति अनुक्रिया देने के लिए राष्ट्रीय प्राधिकारियों की क्षमता में सुधार की जरूरत है।

7.56 संकट का सामना करने के लिए केंद्रीय बैंकों और विनियामकों के बीच समन्वय ही जरूरी नहीं है बल्कि कई देशों के प्राधिकारियों द्वारा दिये गये बाज़ार समर्थन को वापस लेने के लिए ठोस निकास रणनीतियां तैयार करना और नये एवं अधिक स्थिर बाज़ार संरचना के लिए संधिकाल की रूपरेखा बनाना भी महत्त्वपूर्ण है। हालांकि इसके लिए सतर्क आयोजना और अंतरराष्ट्रीय सहयोग की जरूरत होती है ताकि बाज़ार विघटन से बचा जा सके तथा प्रणालीगत जोखिम के उचित स्तर पर बाज़ारों के पुनरुज्जीवन को बढ़ावा दिया जा सके। इसके अलावा, मौद्रिक और राजकोषीय विस्तारों से निकास रणनीतियां तैयार करने के लिए वित्त मंत्रियों, केंद्रीय बैंकों और विनियामकों के बीच अधिक समन्वय की अपेक्षा होगी जो गिरावट की गति को कम करने के लिए अपनाई गई थीं।

7.57 अंत में, हाल के संकट के दौरान बाज़ार के स्व-विनियमन की संकल्पना की असफलता ने विनियामकों और पर्यवेक्षकों के लिए सबकों के बारे में अत्यधिक विवाद उत्पन्न कर दिया है। हालांकि व्यक्त किये गये विचारों में अंतर हैं लेकिन वे मोटे तौर पर जोखिम प्रबंधन, हामीदारी, मूलभूत वित्तीय प्रबंधन, संकेंद्रण जोखिमों (अर्थात्

आस्ति, निधीयन और प्रतिपक्षी) की बेहतर पहचान और उचित अभिशासन संरचनाओं में बुनियादी कमियों की ओर इशारा करते हैं। यह तथ्य कि लाभोन्मुखी निजी वित्तीय फर्मों द्वारा स्व-विनियमन आज के जटिल वित्तीय बाज़ारों द्वारा प्रस्तुत चुनौतियों का सामना करने के लिए अपर्याप्त सिद्ध हुआ है, अत: प्रजातांत्रिक अभिशासन का मूल सिद्धांत अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि प्रबंधकीय प्रोत्साहन फर्म के अंतिम स्वामियों की तुलना में प्राय: अनूठे पाये जाते हैं। इसके अलावा, हाल के दशकों में हुए वित्तीय बाज़ारों में बड़े परिवर्तनों जैसे प्रतिभूतिकरण में वृद्धि, लीवरेज के प्रयोग में वृद्धि और संपर्क बैंकिंग की भूमिका में गिरावट के प्रभावों का निवारण किया जाना अविभावी हो गया है। संकट के ये पहलू यह प्रदर्शित करते हैं कि विनियमन जरूरी है और इसको सिद्ध करने की जिम्मेदारी सार्वजनिक नीति की है।

III. अन्तरराष्ट्रीय नीति समन्वयन

7.58 हाल के संकट से यह प्रमाणित हुआ है कि आघातों का सीमा पार प्रसारण गैर-परम्परागत मार्गों से भी हो सकता है। इसी प्रकार यह भी स्पष्ट हो गया है कि वित्तीय बाजारों की असफलता का सम्पदा क्षेत्र पर प्रतिकूल असर पड़ता है। परंतु राष्ट्रीय नीति निर्णयों में इन बाह्यताओं पर स्पष्ट रूप से विचार नहीं किया जाता। बृहत्तर वित्तीय भूभंडलीकरण को देखते हुए वित्तीय स्थिरता का कार्य एक अधिक परस्पर निर्भरता वाला कार्य बन जाता है, जिसमें वित्तीय प्रणालीगत भेद्यताओं को ठीक करने के उद्देश्य से प्रभावी समन्वित अन्तरराष्ट्रीय कार्रवाई आवश्यक हो जाती है। यह देखा गया है कि हालांकि राष्ट्रीय सरकारों और केंद्रीय बैंकों ने हर संभव नीतिगत विकल्प के द्वारा कार्रवाई की फिर भी वे सकारात्मक भावना को पुनर्निमित करने में असमर्थ रहे क्योंकि वित्तीय प्रणाली अन्तरसम्बद्ध थी और घरेलू नीतिगत कार्रवाईयों पर सीमा पार की सकारात्मक और नकारात्मक बाह्यताओं का प्रभाव पड़ा। सबसे महत्त्वूर्ण बात यह कि उन्होंने पाया कि भावनाएं और विश्वास विश्वभर में देशों के बीच बहुत महत्त्वपूर्ण ढंग से परस्पर सम्बद्ध हैं। अप्रैल 2009 में लंदन जी-20 जैसी घटनाओं ने यह प्रमाणित किया कि भूमंडलीकरण के युग में किसी वित्तीय संकट का वैश्विक सहयोग और वैश्विक कार्रवाई के बिना प्रबंध नहीं किया जा सकता। इस प्रकार संकट पर कार्रवाई का अन्तरराष्ट्रीय पहलू पहले के किसी भी समय की तुलना में अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है और यह महत्त्वपूर्ण है कि संकट के दौरान देशों में नीतियों का बेहतर समन्वयन हो। ऐसे समयों में नीतिगत समन्वयन, विशेषकर समष्टि-आर्थिक नीतियों पर देशों के आर-पार परामर्श और कुछ वित्तीय तथा मौद्रिक सहायता में सुसंगतता से बेहतर परिणाम प्राप्त हो सकते हैं।

7.59 वित्तीय संस्थाओं और बाजारों के अधिक वैश्विक बनते जाने के साथ नीति निर्माताओं और पर्यवेक्षकों दोनों ही रूपों में अन्तरराष्ट्रीय प्राधिकरणों के लिए वित्तीय दबावों की घटनाओं के साथ प्रभावी ढंग से निपटने के लिए अधिकाधिक सहकारी और समन्वित दृष्टिकोण आवश्यक हो गया है। हाल के संकट के दौरान हालांकि सीमा पार सहयोग का कुछ अंश देखा गया है, फिर भी यह परिपूर्ण या बहुत प्रभावी नहीं था। जमाराशि और बैंक देयताओं की अन्य प्रकार की गारंटियों के क्षेत्र में अन्तरराष्ट्रीय सहयोग विशेष रूप से कम था। अत: संकट से एक सबक यह मिला है कि नियंत्रक अंतरपणन से बचने की आवश्यकता है। यह तभी संभव है जब अंतरराष्ट्रीय नीति समन्वयन अधिक सुसंगत और प्रभावी हो। स्ट्रास-कान (2009 ए) ने कहा है कि जैसे ही संकट आरंभ हुआ देशों ने अंतिम ऋणदाता सुविधा के आधार को विस्तृत करने, ऋणदाताओं और जमाकर्ताओं के संरक्षण को बढ़ाने और सार्वजनिक निधियों से बैंकों के पुर्नपूंजीकरण के लिए असमन्वित रूप से कार्रवाई की। इस प्रकार इस समन्वयन के न होने से कुछ अस्थिरता पैदा करने वाले प्रभाव पड़े, कम के कम अल्पकालीन अवधि में ये प्रभाव पड़े थे। इस उद्देश्य के लिए सुझाव दिया गया है कि विवेकपूर्ण विनियमों के प्रमुख पहलुओं को सभी देशों में और सभी वित्तीय गतिविधियों में सुसंगत रूप से लागू किया जाना चाहिए। विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण यह है कि न केवल सीमा पार की संस्थाओं, बल्कि सीमा-पार के बाजारों के भी वित्तीय विनियमों और पर्यवेक्षण को सुदृढ़ बनाते हुए एक कम दुर्बल वैश्विक वित्तीय प्रणाली के लक्ष्य को प्राप्त किया जाये। जिन क्षेत्रों में वैश्विक स्तर पर एक बेहतर समन्वय-तंत्र की आवश्यकता है, उनमें (i) वित्तीय इकाइयों के लिए समाधान-उपकरणों में समन्वयन (ii) जमाकर्ता और निवेश संरक्षण में सुसंगतता और समन्वयन तथा (ii) स्पष्ट विधिक दायित्व और घरेलू व मेजबान देशों के बीच सूचनाओं में सहभागिता के अधिकार शामिल हैं।

7.60 अन्तरराष्ट्रीय मौद्रिक और वित्तीय प्रणाली में सुधार पर गठित राष्ट्र संघ सामान्य सभा के अध्यक्ष के विशेषज्ञ आयोग की रिपोर्ट (सितम्बर 2009) में इस बात को चिह्नित किया गया है कि अन्तरराष्ट्रीय आर्थिक नीति में समन्वयन के प्रयासों का जोर उन राष्ट्रों पर दबाव बनाने का रहा है, जिनका व्यवहार प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण नहीं है, जबकि उन देशों के बारे में कुछ नहीं किया गया है जिनकी नीतियों के प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण परिणाम हो सकते हैं। इसके अलावा यह

भी समझने की आवश्यकता है कि अन्तरराष्ट्रीय चलनिधि को उन थोड़े से देशों की मौद्रिक नीतियों पर क्रमश: कम निर्भर होते जाना है, जो आरक्षित मुद्राएं जारी करते हैं। विशेष रूप से विकसित देशों को अपनी नकारात्मक बाह्यताओं के परिणामों के बारे में सचेत होने की आवश्यकता है और विकासशील देशों को प्रमुख औद्योगिक देशों में हुई विनियंत्रक समष्टि-आर्थिक विफलताओं से सुरक्षित रखने के लिए एक ढाँचे की आवश्यकता है। इस संदर्भ में जी-20 कार्यदल II ने अन्तरराष्ट्रीय नीति समन्वयन के विभिन्न क्षेत्रों को रेखांकित किया है जिन पर अल्प से मध्यम अवधि के परिप्रेक्ष्य में ध्यान देने की आवश्यकता है।

7.61 बेहतर अन्तरराष्ट्रीय नीति समन्वयन के लिए अन्तरराष्ट्रीय वित्तीय संरचना में भूमंडलीकरण के प्रभाव से निपटने के लिए एक बेहतर व्यवस्था की आवश्यकता है। यह महत्त्वपूर्ण है कि राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय नियामक संस्थाओं की गतिविधियों और मानकों में एक अनुकूलता हो। राष्ट्रीय नीतियाँ अधिक प्रभावी हो सकती हैं यदि वे अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर समन्वित हों। अन्यथा समन्वय में विफलता से और अधिक वैश्विक असंतुलन पैदा हो सकता है तथा विनिमय दर में वृद्धि हो सकती है व आस्ति मूल्य अस्थिरता बढ़ सकती है, जिसके कारण वृद्धि के पुन: सामान्य होने की प्रक्रिया और अधिक मुश्किल बन सकती है। इसी प्रकार, अन्तरराष्ट्रीय नीति समन्वयन को कुछ देशों द्वारा संकट के प्रत्युत्तर में आरंभ किये गये संरक्षणतावादी उपायों को रोकने की आवश्यकता है क्योंकि इससे वैश्विक स्तर पर अर्थव्यवस्था के पुन:स्वस्थ होने की गति में अवरोध पैदा हो सकता है। वास्तव में संकट के बाद की अवधि में कुछ हस्तक्षेपों के संबंध में सीमा पार की विकृतियों को कम करने के लिए बहुपक्षीय समन्वयन और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो गया है।

IV. अन्तरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं की भूमिका

7.62 संकट ने वित्त, स्पर्धा और कंपनी अभिशासन को प्रभावित करने वाली न केवल राष्ट्रीय विनियमन प्रणालियों में, बल्कि वित्तीय और आर्थिक स्थिरता को सुनिश्चित करने के लिए निर्मित अन्तरराष्ट्रीय संस्थाओं और व्यवस्थाओं में मौजूद बुनियादी समस्याओं को भी उजागर कर दिया है। प्रथम, वैश्विक आर्थिक गतिविधियों और नीतियों की निगरानी, जिसे अन्तरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं द्वारा किया जाना था, अन्तरराष्ट्रीय वित्तीय व्यवस्था में निर्मित हो रहे जोखिमों के बारे में पर्याप्त रूप से निर्देशित चेतावनियाँ नहीं दे पायी। इस संकट ने वैश्विक वित्त स्थिरता के ढाँचे की विश्वसनीयता पर गंभीर सवाल खड़े कर दिये हैं (पटनायक 2009)। आईएमएफ (2009 जी) के अनुसार अलग-अलग जोखिमों के समग्र प्रभाव इसके दायरे के बाहर थे तथा समष्टि वित्तीय मुद्दों को अलग-अलग करके देखा गया था, तथा पिछले जमा स्टाकों और साथ ही प्रतिसूचनाओं की भी पर्याप्त खोज नहीं की गयी थी। दूसरे, जैसे-जैसे संकट गहराता गया और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में फैलता गया, अन्तरराष्ट्रीय चलनिधि और समायोजन में सहयोग के लिए ऋणों की व्यवस्था भी उन अंतरालों को पर्याप्त रूप से नहीं भर पायी, जो बहुपक्षीय संस्थाओं के ऋण लिखतों की रूपरेखाओं और आकार में मौजूद कमियों को दर्शाता है। संकट की रोकथाम के लिए उचित और सामयिक कदमों को उठाने की उनकी अपर्याप्तता यह दर्शाती है कि इन संस्थाओं और उनके अभिशासन के अधिदेशों का मूल्यांकन करते हुए शीघ्र सुधार किये जाने की आवश्यकता है। तीसरे, इस बात को भी जाँचने की जरूरत है कि बहुत सी उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं वाले देशों में जो विशाल आरक्षित राशियाँ संचित हुईं क्या वे अंशत: इस कारण थीं कि अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) जैसी संस्थाओं में इनका भरोसा नहीं था। आईएमएफ के कार्यों में यह भी शामिल है कि वह वैश्विक आरक्षित राशियों के संचयन का संगठन बने। आईएमएफ को इस बात का आत्म-निरीक्षण करने की आवश्यकता है कि आरक्षित राशियों की निधियों का यह जमाव क्या इन देशों के, जो कि अतीत में दो दशकों तक संकट से प्रभावित रहे हैं, आईएमएफ के साथ व्यवहार करते हुए प्राप्त अनुभवों के कारण है।

7.63 इस तथ्य के बावजूद कि संकट के प्रारंभ होने के समय से आईएमएफ जैसी अन्तरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं की भूमिका पर सवाल उठे हैं, इस कोष के सदस्यों के लिए एक स्पष्ट सबक यह है कि संकट पूर्व, आरंभिक संकट और वास्तविक संकट की स्थितियों के दौरान सदस्य सरकारों को संभावित वित्तपोषण कराने में विश्व बैंक जैसी अन्य संस्थाओं के साथ सहयोग करने की आईएमएफ की एक महत्त्वपूर्ण, सतत भूमिका है (इचेग्रीन 2009 बी, ट्रूमैन 2009)। उदाहरण के लिए 2008 के अंत में जीआए के अन्तर्गत आईएमएफ का बकाया ऋण 17.5 बिलियन एसडीआर था, जो 2009 के अंत में 37.2 बिलियन एसडीआर तक पहुँच गया (2010 में अब तक 46.8 बिलियन एसडीआर) और अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह कि सकल वायदा वचनबद्ध क्षमता 161.7 बिलियन अमरीकी डालर की थी। चूंकि आज की वैश्विक अर्थव्यवस्था और वित्तीय प्रणाली में वित्तीय संकट अपरिहार्य है, यह आवश्यक है कि ऐसी संस्थाओं को पर्याप्त संसाधनों का सहयोग मिले ताकि जब आवश्यकता पड़े वे अपने सदस्यों की सहायता कर सकें। प्रतिकूल बाजार स्थितियों में उपयोग हेतु वित्तीय संसाधनों की

उपलब्धता को बढ़ाकर और बहुपक्षीय संस्थाओं द्वारा ऋण के रूप में अधिक लचीलापन लाकर निश्चय ही उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) की उस प्रवृति को सीमित करने में सहायता मिलेगी, जहाँ वे आत्म-सुरक्षा के रूप में अधिकारिक अन्तरराष्ट्रीय आरक्षित निधियों का विशाल जमाव करने लगती हैं। यह मानते हुए कि यह संकट याद दिलाया है कि किन्हीं खास परिस्थितियों में अंतिम उधारदाता के रूप में एक वैश्विक ऋणदाता की हमेशा आवश्यकता है, आईएमएफ के लिए सहयोग निर्मित करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया है ताकि वह अपनी इस भूमिका को प्रभावी ढंग से अदा कर सके।

7.64 अनेक क्षेत्रों में यह अनुभव किया गया कि अन्तरराष्ट्रीय संस्थाएं संकट को रोकने में विफल रही हैं और उसका पर्याप्त प्रत्युत्तर अभिकल्पित करने और उसे कार्यान्वित करने में उनकी धीमी गति की आलोचना की गयी। सितम्बर 2009 में पीट्सबर्ग के जी-20 शिखर सम्मेलन में उभरती वैश्विक आर्थिक व्यवथा में आईएमएफ की भूमिका पर व्यापक रूप से चर्चा की गयी। जी-20 के मंच से आईएमएफ की अधिशासन प्रक्रिया के आधुनिकीकरण की आवश्यकता पर बल दिया गया, क्योंकि उसकी विश्वसनीयता, वैधानिकता और प्रभावोत्पादकता को सुधारने के लिए यह एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण तत्व है। यह अनुभव किया गया कि आईएमएफ को एक कोटा-आधारित संगठन बने रहना चाहिए और कोटे के वितरण में उसके सदस्यों का विश्व व्यवस्था में संबंधित भार दिखाई पड़ना चाहिए जिसमें कि गतिशील उभरते हुए बाजारों और विकासशील देशों के विकास में सुदृढ़ वृद्धि को देखते हुए महत्त्वपूर्ण रूप से परिवर्तन हुआ है। इसलिए वित्तीय संकट वैश्विक अधिशासन के ढाँचों में बदलाव की आवश्यकता को रेखांकित करता है, जिसमें बहुपक्षीय वित्तीय और साथ ही अन्तरराष्ट्रीय मानक निर्माता निकायों में विकासशील देशों को अधिकाधिक शामिल करना भी शामिल है। इस संबंध में अधिशासन में सुधार का सबसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्र यह है कि एक अर्थपूर्ण कोटा हो और प्रतिनिधित्व में संशोधन हो, जो कि आईएमएफ में प्रक्रियाधीन है और विश्व बैंक में पूरा हो चुका है।

7.65 अन्तरराष्ट्रीय मौद्रिक और वित्तीय प्रणाली के सुधारों पर संयुक्त राष्ट्र सामान्य सभा के अध्यक्ष के विशेषज्ञ आयोग की रिपोर्ट (अध्यक्ष : जोसेफ ई स्टिग्लिट्ज) में, जो कि सितम्बर 2009 में जारी हुई है, अन्तरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं की बृहत्तर भूमिका पर जोर देते हुए यह सिफारिश की गयी है कि अन्तरराष्ट्रीय समुदाय को संकट से सबक लेते हुए यदि विश्व अर्थव्यवस्था के लिए सुदृढ़ सार्वजनिक नीतियाँ निर्मित करनी हैं तो उन्हें 'इतनी बड़ी कि फेल होने नहीं दिया जा सकता" वाली संस्थाओं के दीर्घकालीन परिणामों पर अधिक ध्यान देना चाहिए।

7.66 यह प्रमाणित हो जाने पर कि ब्रिटेन वुड्स संस्थाएं संकट का सामना करने के लिए पूरी तरह से तैयार नही थीं, सबसे पहली प्राथमिकता यह सुनिश्चित करने में होनी चाहिए कि हाल के संकट को हल करने में सहायता देने में कोष के पास पर्याप्त संसाधन होने चाहिए ताकि वह अपनी भूमिका अदा कर सके। जनवरी 2009 में यह प्रस्ताव किया गया कि अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के संसाधनों को दुगना कर दिया जाये। जी-20 शिखर सम्मेलन और अन्तरराष्ट्रीय मौद्रिक और वित्तीय समिति ने अप्रैल 2009 में इस प्रस्ताव को समर्थन दिया और 250 बिलियन अमरीकी डालर की तुरन्त वृद्धि करने और तदनन्तर उधार लेने के लिए विस्तारित नयी व्यवस्थाओं (एनएबी) के माध्यम से आईएमएफ के संसाधनों को तिगुना कर देने के लिए सहमति प्रदान की । दूसरा मुद्दा प्रारक्षित संचित राशि के लिए वैकल्पिक सुविधा प्रदान करने की गुंजाइश से संबंधित है जो कि आईएमएफ संसाधनों को बढ़ाते हुए और लचीली उधार व्यवस्था के मार्फत एक बीमा प्रणाली के रूप में हो। यह उल्लेखनीय है कि आईएमएफ ने कोष के सदस्य देशों के विदेशी मुद्रा भंडारों में अनुपूरक राशि देते हुए वैश्विक मुद्रा प्रणाली में चलनिधि प्रदान करने के लिए अगस्त 2009 में एक सामान्य विशेष आहरण अधिकार (एसडीआर) का आबंटन किया जो कि लगभग 161 बिलियन एसडीआर (250 बिलियन अमरीकी डालर) के समतुल्य था। इसके अतिरिक्त आईएमएफ ने 9 सितम्बर 2009 को 21.5 बिलियन एसडीआर (लगभग 34 बिलियन अमरीकी डालर) का विशेष एसडीआर आबंटन किया।

7.67 वित्तीय संकट पर हाल की अधिकांश रिपोर्टों में संसाधनों के निर्गमों में पर्याप्तता के अलावा यह भी कहा गया है कि आईएमएफ जैसी बहुपक्षीय संस्थाओं को अपने अधिशासन और साथ ही निगरानी प्रणाली में सुधार लाने की आवश्यकता है। प्रथम दृष्ट्या यह एक प्रबल मामला दिखाई देता है कि समष्टि वित्तीय सहबद्धताओं का मौद्रिक नीति में बेहतर एकीकरण होना चाहिए और आईएमएफ जैसी संस्थाओं को इसे अपनी नियमित निगरानी प्रक्रिया में समाविष्ट करने की आवश्यकता है। कोष अपनी निगरानी प्रणालियों, अतिरिक्त देखरेख और तकनीकी सहायता के द्वारा शिथिल प्रक्रिया पर ध्यान देते हुए अनश्चितताओं और संभावित असंगतियों को घटने में एक महत्त्वपूर्ण भुमिका अदा कर सकता है। साथ ही, उनकी वैधानिकता और उत्तरदायित्व को बढ़ाने के लिए सुधार भी आवश्यक है। जी-20 रिपोर्ट में इस बात पर जोर दिया गया है कि सरकारों को उनकी आर्थिक नीतियों पर सलाह देने में आईएमएफ की प्रभावोत्पादकता को बढ़ाने,

उसकी अधिकार क्षमता को सुदृढ़ करने और यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि संकट को टालने और प्रणालीगत कमजोरियों को न्यूनतम करने के लिए आवश्यक कदम उठाने की क्षमता उसके पास हो। इस संदर्भ में जी-20 कार्यदल III को यह जिम्मेदारी दी गयी कि वह आईएमएफ के सुधारों से संबंधित नेताओं के नवम्बर 2008 के घोषणापत्र में शामिल निर्णयों पर कार्रवाई को आगे बढ़ाये। उसने आईएमएफ में परिवर्तनों के तेज करने की त्वरित आवश्यकता पर बल दिया ताकि वह अपने अधिदेश को अधिक प्रभावशाली ढंग से पूरा कर सके। ऐसे परिवर्तन कोष की वैधता, स्वामित्व और कार्यकुशलता को ध्यान में रखते हुए संसाधनों, अधिशासन ढाँचे और ऋण लिखतों में यदि कुछ अन्तर्निहित खामियाँ हैं तो उन्हें दूर करने और कोष की भूमिकाओं और उत्तरदायित्वों को स्पष्ट करने वाले होने चाहिए। उसने कोष में सुधार के लिए त्वरित और प्रस्तावित मध्यम अवधि के कदमों से जुड़ी कार्य योजना की भी सिफारिश की। इसके अतिरिक्त, आईएमएफ और वित्तीय स्थिरता बोर्ड (एफएसबी) जैसी अन्तरराष्ट्रीय संस्थाओं के बीच इस प्रकार का सहयोग होना चाहिए कि उनकी अपनी-अपनी भूमिकाआंट और समन्वय प्रणालियों को लेकर किसी प्रकार की अस्पष्टता न रहे।

7.68 संकट से आईएमएफ के लिए मुख्य संदेश यह उभरा है कि नीतियों और बाजारों पर उसकी निगरानी को और अधिक सुदृढ़ होना चाहिए। उसकी निगरानी प्रणाली को जब कभी भी राष्ट्रीय और वैश्विक वित्तीय स्थिरता के संभावित खतरा नजर आये, स्पष्ट संकेत देने के प्रयास करने चाहिए। आइएमएफ (2009 जी) ने शुरुआती चेतावनी देने की प्रणाली के लिए एक संयुक्त कोष - वित्तीय स्थिरता मंच (एफएसएफ) की स्थापना का सुझाव दिया है (देखें अध्याय IV)। संक्षेप में, कोष को न केवल अपने संसाधनों की पर्याप्तता को बढ़ाना चाहिए, बल्कि संभावित संकट को अभिनिर्धारित करने और उसे रोकने की क्षमता भी विकसित करनी चाहिए और वास्तविक समय के आधार पर इस स्थिति से निपटने के लिए जो कुछ आवश्यक हो करना चाहिए। प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण देशों की अर्थव्यवस्थाओं या उनके वित्तीय क्षेत्रों में जब भी चिंताजनक स्थिति के लक्षण नज़र आये, कोष को उन्हें गोपनीय चेतावनियाँ जारी करने और जोखिमों से संबंधित एक अधिक खुली सम्प्रेषण व्यवस्था के लिए स्वयं को तैयार करना चाहिए।

V. वैश्विक असंतुलन और समष्टि-आर्थिक प्रबंधन

7.69 आवश्यक नहीं है कि वैश्विक समष्टि-आर्थिक असंतुलन प्रत्यक्ष रूप से इस संकट के कारक तत्व रहे हों, लेकिन वे निश्चय ही इस समस्या का एक अंग थे। विशाल असमानताएं, विशेषकर प्रमुख हितधारक अर्थव्यवस्थाओं में असामनताओं से वैश्विक स्तर घरेलू और विदेशी असंतुलन उत्पन्न हुए थे और हाल के संकट को पिछले असंतुलनों की निर्मिति के कारण एक अव्यवस्थित शिथिलता के रूप में देखा जा सकता है। वैश्विक असंतुलनों के बने रहने के कारण 2000 के दशक में अपेक्षाकृत विश्वव्यापी निम्न ब्याज दरें बनी रहीं जिसके निवेशकों ने उच्चतर प्रतिफल प्राप्त करने चाहे। दूसरी ओर, वित्तीय बाजारों में अपेक्षाकृत स्थिरता निधियों की निम्न लागत और सुदृढ़ आर्थिक वृद्धि को दर्शाती थी, जिससे जोखिम मूल्य महत्त्वपूर्णर्प रूप से कम था। नीति निर्माता उन बढ़ते हुए समष्टि-आर्थिक असंतुलनों पर विचार करने में विफल रहे, जिनसे वित्तीय व्यवस्था और आवासीय बाजारों में प्रणालीगत जोखिम निर्मित हुए थे। इस संदर्भ में रेड्डी (2000 ए) ने उल्लेख किया था कि "हम देख रहे हैं कि वैश्विक घटनाक्रमों से, विशेषकर वैश्विक वित्तीय बाजारों के घटनाक्रमों का उभरते हुए बाजारों की वित्तीय स्थितियों पर सर्वाधिक प्रत्यक्ष और गंभीर प्रभाव पड़ रहा है। वैश्विक असंतुलनों में किसी भी आकस्मिक और अव्यवस्थित समायोजन के गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकते हैं।" इन घटनाक्रमों को समझते हुए और वैश्विक असंतुलनों के परिणामों को रेखांकित करते हुए भारत के प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह का कथन था कि "एक ओर जहाँ चालू खाते की स्थितियों में असामंजस्य किसी हद तक अपेक्षित है - बल्कि वांछनीय है, वैश्विक अर्थव्यवस्था में विशाल असमानतओं से अस्थिरता और ऋण की दुलर्भता को लेकर चिंताएं उत्पन्न हुई हैं। असंतुलनों को दूर करने की प्रक्रिया यदि आकस्मिक और अनपेक्षित ढंग से होती है तो वह विघटनकारी हो सकती है। वैश्विक असंतुलनों का वर्तमान स्तर हमेशा के लिए बनाये नहीं रखा जा सकता। इसके लिए उन देशों को भी कार्रवाई करने की आवश्यकता है, जहाँ चालू खाते में अधिशेष है और उन देशों को भी जहाँ चालू खाते में घाटे की स्थिति है। एक आकस्मिक अधोगति को रोकने के लिए असंतुलनों को दूर करने की दिशा में समन्वित प्रयास आवश्यक हैं। अन्तरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं को इस संबंध में अतिरिक्त रूप से सक्रिय भूमिका अदा करने की आवश्यकता है।"

7.70 जी-20 शिखर सम्मेलन के एक वक्तव्य (नवम्बर 2008) में संकट में वैश्विक असंतुलनों की भूमिका को रेखांकित किया गया, "वर्तमान स्थिति के लिए जिम्मेदार महत्त्वपूर्ण कारक तत्वों में अन्य चीजों के साथ-साथ समष्टि-आर्थिक नीतियों का असंगत और अपर्याप्त समन्वय अपर्याप्त ढाँचागत सुधार भी हैं जिनके कारण ऐसे वैश्विक समष्टि-आर्थिक परिणाम प्राप्त हुए जो लंबे समय तक टिकाऊ नहीं थे।

इन सभी घटना-क्रमों ने अधिशेषों को जन्म दिया और अन्ततः उनकी परिणति कड़े बाजार व्यतिक्रमों में हुई।" स्माघी (2008) और डयुनवे (2009) का तर्क था कि बढ़ते हुए वैश्विक असंतुलनों के संबंध में यदि शुरूआत में नीतिगत उपाय किये गये होते तो संकट कम हानिकारक होता। संक्षेप में यह कि यदि बाह्य असंतुलनों की निर्मिति के लक्षणों को समुचित नीतिगत उपायों के साथ गंभीरता से लिया जाता तो हाल के संकट की प्रतिकूलता को कम करना संभव हो सकता था। इस प्रकार, वैश्विक असंतुलनों के साथ शुरूआती अवस्था में ही सक्रिय रूप से निपटना संकट पूर्व की अवधि में सर्वोत्तम नीतिगत प्रत्युत्तर होता।

7.71 संकट के साथ वैश्विक असंतुलनों से संबंधित चिंताएं समाप्त नहीं हुई हैं। जैसी कि आईएमएफ के वैश्विक आर्थिक दृष्टिकोण (अप्रैल 2009) में विशद चर्चा की गयी है, चालू खाते के घाटे का वित्तपोषण, विशेषकर अमेरिका में चालू खाते के घाटे का वित्तपोषण आने वाले वर्षों में समस्यापूर्ण हो सकता है। क्योंकि (i) बढ़ती हुई ऋण चिंताओं के कारण अमरीकी आस्तियों के आकर्षण में गिरावट, (ii) घरेलू तरफदारी में लंबे समय तक वृद्धि के बने रहने की संभावना और (iii) सीमा-पार के सकल पूंजी प्रवाहों में गिरावट इसके मूल में हो सकते हैं। इससे वैश्विक असंतुलनों के अन्ततः अव्यवस्थित रूप से शिथिल होने के लिए अधिक जोखिम आवश्यक होगा। ऐसे दृश्य से निपटने के लिए प्रमुख हितधारक देशों के नीति निर्माताओं को समष्टि-आर्थिक और संरचनागत नीतियों का उपयोग करने की आवश्यकता पड़ सकती है ताकि वे अपने-अपने अधिकार क्षेत्रों में बचत राशियों और निवेशों में पुनर्संतुलन ला सकें। उन्हें पूंजी प्रवाहों से उत्पन्न प्रणालीगत जोखिमों को घटाने के लिए विनियमों का भी उपयोग करना चाहिए। प्रमुख हितधारक देशों के बीच बहुपक्षीय परामर्श, जिन्हें हाल के वर्षों में आईएमएफ ने आरंभ किया है, जारी रहने चाहिए ताकि वैश्विक असंतुलनों में किसी अव्यवस्थित समायोजन को टाला जा सके। जब तक एक ऐसा समन्वित नीतिगत प्रत्युत्तर विकसित नहीं होता, जो वैश्विक मांग को समर्थन देता हो, वैश्विक असंतुलनों के और भी कठोर होते जाने की संभावना को रोका नहीं जा सकता। इस संदर्भ में राष्ट्र संघ की रिपोर्ट (2009) में तर्क दिया गया है कि जो देश निर्यात अर्जनों और वैश्विक वित्तीय प्रवाहों में भारी अस्थिरता के खतरे का सामना कर रहे हैं, उनके लिए यह उचित होगा कि वे अपनी एहतियाती बचत राशियों में वृद्धि करें ताकि वे संभावित भावी संकटों के विरुद्ध अपना बचाव सुनिश्चित कर सकें। एक ओर जहाँ यह अलग-अलग देशों के तर्कपूर्ण है कि वे विदेशी अधिशेषों और विदेशी आरक्षित राशियों को निर्मित करते हुए किसी दूसरे संकट के सम्मुख अपनी सुरक्षा के तंत्र को विकसित करें, यह सकल मांग को कमजोर ही करता है। अतः सुरक्षा प्रदान करने के लिए वैकल्पिक उपायों को विकसित करने की आवश्यकता है ताकि न केवल अधिशेष वाले देशों में सकल मांग सुदृढ़ हो सके, बल्कि क्रमिक रूप से वैश्विक अंसतुलनों को कम करते हुए दीर्घावधि में वैश्विक वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित किया जा सके।

VI. राजकोषीय नीति के लिए सबक

7.72 एक ओर जबकि कीन्स की नीतियों का युद्धोत्तर आर्थिक नीतियों पर जबर्दस्त प्रभाव था, 70 के दशक के तेल संकट के दौरान नीति निर्माताओं ने भारी मुद्रास्फीति और बेरोजगारी से निपटने में आपूर्ति आघात की तुलना में मुद्रास्फीति के लक्ष्य संधान को एक अधिक कारगर उपाय समझा। यह भी स्वीकार किया गया कि कीन्स की नीतियाँ अधिक से अधिक एक अल्पावधि उपाय हैं क्योंकि बहुत लंबे समय तक सरकारों का घाटे में रहने का परिणाम यह हो सकता है कि सकल मांग पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े। बावजूद इसके कि कीन्स की नीतियों की अल्पावधि या दीर्घावधि प्रभावोत्पादकता पर विशाल मंदी के दौर में खूब अकादमिक बहसें होती रहीं हैं, इन नीतियों ने हाल के संकट में नीतिनिर्माताओं की प्रतिक्रियाओं को महत्त्वपूर्ण रूप में प्रभावित किया है। भारी गिरावट की अवस्था में विभिन्न सरकारों को निजी क्षेत्र की देयताओं की भारी राशियों को अपने हाथ में लेना पड़ा और प्रति-चक्रीय राजकोषीय नीति को कार्यान्वित करना पड़ा (देखें अध्याय IV)।

7.73 इस संदर्भ में यह प्रासंगिक है कि 1990 के दशक के जापानी अनुभव से मिले इस महत्त्वपूर्ण सबक पर चर्चा की जाए कि कीन्स की नीति हमेशा कारगर नहीं होती। जापान ने हालांकि 1990 के दशक में विशाल राजकोषीय उत्प्रेरक पैकजों को आरंभ किया पर बैंकिंग क्षेत्र अपने अनर्जक ऋणों को निपटाने में असमर्थ था। भुगतान अनिश्चितता के परिणामस्वरूप आर्थिक संकुचन अनेक वर्षों तक बना रहा (कोबायाशी, 2008)। अतः यह महत्त्वपूर्ण है कि राजकोषीय नीति के साथ-साथ ऐसे नीतिगत उपाय भी किये जाएं जो बैंकिंग और वित्तीय प्रणाली को अधिक लचीला बनाते हों। विशाल मंदी और 1990 के दशक के जापान से आधारभूत सबक लेते हुए कोस्टेलो और अन्य (2009) ने भी इस पर जोर दिया है कि नीति निर्माताओं को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि वित्तीय क्षेत्र में सुधार हो और उसका पुनः पूंजीकरण किया जाये ताकि वह अपने अत्यावश्यक कार्य को निष्पादित करना पुनः आरंभ करे। तथापि, ऐसा प्रतीत होता है कि अल्पावधि वाले परिप्रेक्ष्य में कीन्स की नीतियाँ कारगर रहती हैं। ऐसा देखा गया है कि आस्ट्रेलिया जैसे देशों के, जिन्होंने अच्छी तरह से अभिकल्पित राजकोषीय उत्प्रेरक कार्यक्रम जल्दी आरंभ कर दिये थे, संकट से

तेजी से बाहर निकलने की संभावना है। यहाँ तक कि पूर्वी एशियाई संकट के बाद के समय में देखा गया कि कोरिया सरकार के राजकोषीय प्रत्युत्तर से, जिसमें वित्तीय और कारपोरेट क्षेत्र के तुलनपत्रों को सुधारने पर ध्यान दिया गया था, वहाँ अर्थव्यवस्था अन्य की तुलना में तेजी से सामान्य हुई। यह दिलचस्प है कि उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएं जब भी संकट का सामना करती हैं तो उनके लिए इस तरह की रूढ़िवादी रणनीतियाँ बतायी जाती हैं कि वे पुन: विश्वास कायम करने के लिए करों में वृद्धि कर या सार्वजनिक व्यय को कम कर घाटे को कम करें। जबकि इसके विपरीत हाल के संकट में यह देखा गया है कि विश्वास की बहाली के लिए राजकोषीय संकुचन के उपाय करने के बजाय उन्नत और उभरती बाजार अर्थव्यवस्था, दोनों जगहों पर सरकारों को ऐसे विवेकाधीन राजकोषीय उपाय करने पड़े, जो सकल मांग को उत्पन्न करते हुए मंदी का सामना बेहतर तरीके से कर सके।

7.74 हाल के संकट के दौरान सक्रिय विवेकपूर्ण राजकोषीय नीति के अनुसरण ने देशों को अच्छे आर्थिक समय में अपनी स्थिति सुदृढ़ बनाकर एक 'राजकोषीय भंडार' निर्मित करने का महत्त्व दर्शाया है। इस भंडार का वे 'सूखे' की अवधि में उपयोग कर सकते हैं। अनुभव यह दर्शाता है कि बहुत से देश, जिसमें अमेरिका और यूरो क्षेत्र के कई देश शामिल हैं, यह करने में विफल रहे थे। इसलिए वित्तीय संकट ने अचानक उन पर और भी अधिक राजकोषीय घाटों और ऋण अनुपातों का भार डाल दिया। विशेषकर यूरो क्षेत्र के देशों के पास राजकोषीय युक्तियों को करने की बहुत सीमित गुंजाइश बची थी और इसी तरह जब प्रति-चक्रीय कदमों को उठाने की बहुत अधिक आवश्यकता थी, तब उनके लिए गुंजाइश बहुत कम बची थी। यूनानी ऋण संकट की हाल की घटना ने अधिक विवेकपूर्ण राजकोषीय नीति की आवश्यकता को स्पष्ट रूप से दर्शाया है। यह महत्त्वपूर्ण है कि देश अपने राजकोषीय घाटे को एक ऐसे स्तर तक सीमित रखें जो उनके ऋण चुकौती दायित्वों को पूरा करने की क्षमता के अनुरूप हो।

7.75 आईएमएफ (2009 सी) के अनुसार संकट से राजकोषीय नीति के लिए दो महत्त्वपूर्ण सबक सामने आये हैं। पहला, जो देश तेजी की अवधि के दौरान अपने राजकोषीय घाटों को सीमित नहीं रखा सके, उन्हें सीमित राजकोषीय गुंजाइश के चलते प्रति-चक्रीय राजकोषीय कदमों को उठाने में कठिनाई हुई। दूसरा मामला करारोपण की संरचना से संबंधित है। ज्यादातर देशों में कर प्रणाली का झुकाव ब्याज भुगतानों की कटौती क्षमता के मार्फत कर्ज वित्तपोषण की ओर रहा है। भारी वृद्धियों की ओर इस झुकाव से आघातों के प्रति निजी क्षेत्र की भेद्यता बढ़ जाती है। अत: अच्छे समय में राजकोषीय प्रतिरोधक स्थापित किये जाने चाहिए और एक नियम-आधारित ढाँचे से इस सिद्धान्त को लागू किया जा सकता है, विशेषकर इसलिए कि आस्ति मूल्य वृद्धियाँ अस्थायी रूप से कर राजस्वों को बढ़ावा देकर मूल में एक अल्प सुगठित राजकोषीय स्थिति को ढक सकती है। इसी प्रकार कर नीति ने भी हाल के वर्षों में ऋण वित्तपोषण को प्रोत्साहित किया है। यह पाया गया है कि कर में विकृति से अधिक लीवरेज की स्थिति उत्पन्न होती है। ऐसे कर नियमों को उपयोगी ढंग से बदला जा सकता है। संक्षेप में यह कि संकट ने इस बात की आवश्यकता को रेखांकित किया है कि तेजी के समय में राजकोषीय नीति को एक सुदृढ़ आधार दिया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त स्टार्क (2009) के अनुसार सितम्बर 2008 से सरकारी बांडों के अर्जन में कीमत-लागत अंतर में आये बदलावों ने दर्शाया है कि अनिश्चित समय में वित्तीय बाजार देशों के बीच उनकी ऋण पात्रता के आधार पर, जिसमें उनकी राजकोषीय मूल स्थितियाँ शामिल हैं, अधिकाधिक विभेद करते हैं। इसलिए जब तक देश अपने आर्थिक चक्र के उठान के समय राजकोषीय सुदृढ़ीकरण प्रक्रिया आरंभ नहीं करते, गिरावट के समय उनके द्वारा लिया गया कोई भी अतिरिक्त राजकोषीय कदम न केवल राजकोषीय पोषणीयता के मामले को ओर अधिक गंभीर बनायेगा, बल्कि सीमा-पार के वित्तीय बाजारों में बाजार प्रतिस्पर्धियों के व्यवहारों को भी प्रभावित करेगा। जैसा कि ऊपर कहा गया है यूनान में सरकारी शोधक्षमता और नकदी की स्थिति को लेकर चिंताएं और वित्तीय बाजार की स्थितियों पर उनके प्रभाव इस बारे में पर्याप्त प्रमाण प्रदान करते हैं।

VII. साख-श्रेणी-निर्धारण एजेंसियों की भूमिका

7.76 संकट का एक विश्लेषण इस बात को प्रमाणित करता है कि साख-श्रेणी निर्धारण एजेंसियाँ बिगड़ती हुई वित्तीय बाजार स्थितियों का पता लगाने और समय पर श्रेणी निर्धारण के अपने कार्य में असफल रहीं। वे साख बाजार के नये जोखिमों, अर्थात सुनियोजित साख उत्पादों (व्युत्पन्नियों) और बचाव निधियों के अनुरूप भी स्वयं को नहीं ढाल पायीं। इसलिए संकट के उभरने के साथ साख-श्रेणी निर्धारण करने वाली एजेंसियों की भूमिका पर, जो कि जटिल व्युत्पन्न उत्पादों को अभिकल्पित करने और साथ ही ऐसे उत्पादों को साख-श्रेणी प्रदान करने के कार्य में लगी रही थीं, सवाल उठे हैं। इस प्रकार हितों के टकराव का मामला स्पष्ट रूप से विचारणीय है, जिसके लिए उचित विनियमन व पर्यवेक्षण और साख-श्रेणी निर्धारण करने वाली एजेंसियों की भूमिका का पुनरीक्षण आवश्यक है। आरंभ में, प्रतिभूति आयोगों के अन्तरराष्ट्रीय संगठन (आईओएससीओ) ने मई 2009 में साख-श्रेणी निर्धारण करने वाली एजेंसियों के लिए एक संशोधित आचरण - संहिता जारी की है। यूनान के संकट की सबसे ताजी घटना में साख-

श्रेणी निर्धारण करने वाली एजेंसियों का मूल्यांकन पर एक बार फिर बहस के योग्य हो गया है। ऐसा समझा जा रहा है कि साख-श्रेणी निर्धारण एजेंसियों ने यूनान की सही राजकोषीय स्थिति को निर्धारित करने में लंबा समय लिया।

7.77 नियंत्रक नीतिगत कार्रवाइयों को साख-श्रेणी निर्धारक एजेंसियों के हितों के टकराव को कम करने और निवेशकों, विशेषकर बड़ी संस्थाओं के निवेशकों की समुचित सावधानी के लिए स्वयं को सन्नद्ध करना होगा। इसे जिन उत्पादों के संबंध में वे निर्धारण करती हैं उनके बारे में उनके विनियोजित परामर्श पर प्रतिबंध लगाकर और श्रेणी निर्धारण की प्रणालियों के और अधिक पारदर्शी प्रकटीकरण के द्वारा किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, यह पाया गया है कि उन्हीं श्रेणी निर्धारक संस्थाओं से दीर्घ सूत्री संबंधों के चलते जो विश्लेषक साख श्रेणी अनुमोदन के प्रभारी होते हैं, उनकी स्वतंत्रता प्रभावित होती है। अत: यूरोपीय संघ में साख श्रेणी निर्धारक एजेंसियों के लिए नये कानून में अभिकल्पित है कि विश्लेषक और साख श्रेणी निर्धारण को अनुमोदित करने वाले व्यक्ति एक आवर्ती व्यवस्था के अन्तर्गत कार्य करेंगे। इसके अलावा, उत्तरोत्तर यह अनुभव किया गया है कि साख-श्रेणी निर्धारण एजेंसियों पर नियंत्रण होना चाहिए और वे मात्र लाभ अर्जित करने वाली संस्थाओं के रूप में ही न हों। साख-श्रेणी निर्धारक संस्थाओं के कामकाज में सामाजिक उत्तरदायित्व के किसी अंश को भी जोड़ने की आवश्यकता है।

VIII. वित्तीय और संपदा क्षेत्रों के आकार में संतुलन

7.78 इस बात को दोहराने की आवश्यकता नहीं है कि उद्यमियों और निवेशकों के बीच मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए एक अच्छी तरह से विकसित वित्तीय क्षेत्र आवश्यक है। एक कुशल वित्तीय क्षेत्र वस्तुओं और सेवाओं की लागत तथा उत्पादन और व्यापार के जोखिम को घटाता है और इस प्रकार जीवन निर्वाह के स्तर को उठाने में महत्त्वपूर्ण योगदान देता है। तथापि, हाल के संकट ने यह दर्शाया है कि वित्तीय क्षेत्र ने व्यावहारिक अर्थजगत की वित्तीय आवश्यकताओं से बिना निकट संबंध बनाये प्रकट तौर पर एक अर्ध - स्वायत्त अस्तित्व ग्रहण कर लिया था। पूर्व के वर्षों में वित्तीय उद्योग अनुपात से अधिक बड़ा हो गया था जो विशेष रूप से उन्नत वित्तीय प्रणालियों में तीव्र गति से हुए साख निर्माण, आस्ति मूल्य बुलबले और ऋणग्रस्तता के उच्च स्तरों में दिखाई पड़ता है। वैश्विक वित्तीय क्षेत्र में असंगत वृद्धि मुख्यतया प्रतिलाभों के लिए एक आक्रामक तलाश के कारण थी, जो कि वैश्विक प्रणाली में आसान नकदी के कारण उत्पन्न हुई थी और इसने भारी संख्या में वित्तीय नवाचारों को जन्म दिया था। सुनियोजन और बचाव व्यवस्था के द्वारा जटिल वित्तीय उत्पाद निर्मित हुए, जो इस विश्वास के तहत निर्मित और वितरित हुए थे कि महज वित्तीय आभियंत्रिकी के द्वारा वास्तविक मूल्य पैदा किया जा सकता है। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, बढ़ते हुए और अधिकाधिक जटिल होते जाते वित्तीय क्षेत्र के कारण पूंजी निर्माण में वृद्धि का शायद ही कोई लक्षण नजर आ रहा था। इस संदर्भ में टर्नर (2010) का तर्क है कि "मात्र 12 वर्षों के भीतर दो भीषण आकस्मिक गिरावटों के बाद अब हमें इस महत्त्वपूर्ण मुद्दे पर विचार करना है कि वित्तीय गतिविधियों की यह बढ़ती हुई मात्रा क्या सचमुच लाभदायक रही है, कौन से तत्व लाभकारी रहे हैं और कौन से हानिकारक, तथा बढ़े हुए वित्तीय उदारीकरण और परिष्कार से मिले किन्हीं लाभों और उन अनिश्चितताओं के बीच जो कि कई बार उन्हीं के साथ सम्बद्ध प्रतीत होती हैं, सार्वजनिक नीति में कौन से समझौताकारी समन्वयों की आवश्यकता है। और इस बात का कोई बाध्यकारी प्रमाण भी दिखाई नहीं देता कि विकसित देशों में पिछले 30 वर्षों में बढ़े हुए वित्तीय नवाचार का उत्पादन की वृद्धि पर कोई लाभकारी प्रभाव पड़ा है।"

7.79 संक्षेप में, वैश्विक अर्थव्यवस्था में, विशेषकर अमेरिका में बल्कि अन्य देशों की अर्थव्यवस्था में अतिशय चलनिधि के व्याप्त हो जाने से अतिशय 'वित्तीयकरण' हुआ है। अन्य वस्तुओं और सेवाओं के क्षेत्र की तुलना में वित्तीय क्षेत्र में अधिक तेजी से वृद्धि हुई है। इससे एक प्रकार से वित्त की वृद्धि अपने आप में एक लक्ष्य बन गयी और वह खाद्यान्न, ईंधन, स्वास्थ्य और शिक्षा जैसी मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करने का एक साधन नहीं रही है। यह जानते हुए कि संगठित वित्तीय क्षेत्र में अतिशय वृद्धि का वास्तविक क्षेत्र पर एक विनाशकारी प्रभाव पड़ा है, यह महत्त्वपूर्ण हो गया है कि (i) वृद्धि और विकास की आवश्यकताओं के अनुरूप वित्तीय क्षेत्र के अधिकतम आकार की जाँच की जाए और (ii) वास्तविक क्षेत्र की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए वित्तीय क्षेत्र के नवाचारों को अधिक अर्थपूर्ण बनाया जाये।

IX. भारत सहित उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए सबक

7.80 उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के लिए सबक मोटे तौर पर स्पष्ट हैं। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, उन्हें निगरानी और नियंत्रण व्यवस्था को सुदृढ़ बनाना है और अपने वित्तीय बाजारों में एजेंसी से

जुड़ी समस्याओं को दूर करना है। जब वृद्धि की गति बढ़ती है, उन्हें बजट घाटे और कर्ज के बढ़े हुए स्तरों को दूर करना होता है। इस तथ्य के बावजूद कि उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं का प्रभाव अपेक्षाकृत क्षीण रहा है, उनके लिए जो नीतिगत सबक हैं, उन्हें लेकर कुछ अस्पष्टता है। उदाहरण के लिए क्या उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को वैश्विक व्यापार और वित्त के साथ जुड़ाव की अपनी शर्तों में संशोधन करना चाहिए? इसी प्रकार क्या उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में अपनायी गयी व्यवहार पद्धतियों को, जिन्हें कि एक समय अन्तरराष्ट्रीय स्तरों को स्थापित करने में आदर्श नमूना माना जाता था, उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं द्वारा व्यापक दिशा निर्देशों के रूप में अपनाने की प्रक्रिया को हमेशा जारी रखना चाहिए? संक्षेप में, मुद्दा यह है कि वह हर चीज जो उन्नत बाजारों के उपयुक्त मानी जाती है, क्या वह उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए भी हमेशा उसी तरह उपयुक्त है। इसके अलावा, हाल के घटना-क्रमों ने उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को एक अवसर दिया है कि वे अन्तरराष्ट्रीय वित्तीय रचना के सुधारों को प्रभावित करें। इस प्रकार, उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए यह महत्त्वपूर्ण है कि वे जिन विशिष्ट परिवर्तनों को लाना चाहती है, उनकी जाँच कर लें।

7.81 पिछले खंडों में जिन मुद्दों को रेखांकित किया गया है, वे उन्नत अर्थव्यवस्थाओं पर तुरंत लागू होते हैं, इसके बावजूद उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए भी उनकी मोटे तौर पर प्रासंगिता है। इसमें संदेह नहीं कि हाल के संकट के दौरान नियंत्रण और निगरानी से संबंधित जो मुद्दे उभरकर आये हैं, वे उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के लिए, जो कि अभी भी अधिक परिष्कृत और उन्नत वित्तीय व्यवस्था को प्राप्त करने की प्रक्रिया में हैं, एक ठोस पृष्ठभूमि प्रदान करते हैं। इसलिए यह महत्त्वपूर्ण है कि हाल के संकट के दौरान वित्तीय क्षेत्र के विनियमन और निगरानी के बारे में जो भी सबक मिला है उससे प्रणालियों का ढाँचा तैयार करने में मागदर्शन मिलना चाहिए। इसके अतिरिक्त उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के संदर्भ में बहुत सारे मुद्दों की समीक्षा करने की आवश्यकता है, हालांकि इन अर्थव्यवस्थाओं के कारण यह संकट पैदा नहीं हुआ था। इस पृष्ठभूमि में आगे के खंडों में उन महत्त्वपूर्ण सबकों को रेखांकित किया गया है जो कि भारत सहित सभी उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए मोटे तौर पर इस संकट से प्राप्त किये जा सकते हैं।

असंबद्धता संबंधी अवधारणा का निरस्तीकरण

7.82 उन्नत औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में 2002 के बाद के समय में अधिकांश प्रमुख बाजार अर्थव्यवस्थाओं ने निरन्तर उल्लेखनीय वृद्धि निष्पादन दर्शाया है। इससे एक नयी समझ बनी है कि उभरते बाजार स्वयं अपनी नियति के मालिक हैं और औद्योगिक देशों के कारोबार-चक्रों से 'असम्बद्ध' हैं। वास्तव में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएं वैश्विक वित्तीय बाजारों के अधिकेद्र की हलचल के प्रथम दौर के प्रभावों से अधिकांशत: अछूते रहीं। तथापि, जैसे-जैसे उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में संकट गहराता गया वित्तीय और वास्तविक अर्थव्यवस्थाओं के बीच जटिल और बहुस्तरीय अन्तर्क्रिया का प्रभाव उभरती अर्थव्यवस्थाओं पर पड़ने लगा। संकट जब दूसरे चरण में पहुँचा तो सम्पदा पर भी प्रभाव दिखाई देने लगा। अत: असम्बद्धता का अनुमान एक भ्रम साबित हुआ क्योंकि जिन देशों का वित्तीय क्षेत्र "विषाक्त आस्तियों" से सम्बद्ध नहीं था या मामूली सा जुड़ा हुआ था, इन पर भी प्रभाव पड़ा था (अध्याय 6 भी देखें)।

7.83 वर्तमान वैश्विक वित्तीय हलचल की तीव्रता और विस्तार और परिणामस्वरूप समग्र रूप से आर्थिक संकट बहुत व्यापक था और इसका चाहे वे उन्नत अर्थव्यवस्था हों या उभरती अर्थव्यवस्था, सभी पर प्रभाव पड़ा। यह संकट जो अमरीका जैसे देश में- जहाँ की वित्तीय प्रणाली सर्वाधिक परिष्कृत है, आवास बंधक बाजार में बकाया ऋणों के साथ शुरू हुआ था और इसने वित्त, विदेश व्यापार और विश्वास के मार्गों से एक आश्चर्यजनक तेजी के साथ सारे विश्व को अपनी चपेट में ले लिया। विश्व का लगभग हर देश विभिन्न कारणों से इस संकट से प्रभावित हुआ, फिर उसकी सघनता चाहे कम या ज्यादा रही हो। एशियाई संकट के बाद के समय में अपने विदेशी क्षेत्र का प्रबंध करने में सतर्कतापूर्ण रवैये के बावजूद निर्यात-उन्मुख एशिया को निर्यातों की मांग में तेजी से कमी आने के कारण आर्थिक वृद्धि में अचानक गिरावट का सामना करना पड़ा। इसी प्रकार व्यापक स्तर पर पूंजी आयात करने वाला पूर्वी यूरोप भी बैंकिंग सरणियों के मार्फत नकदी प्रवाह के उलट जाने से प्रभावित हुआ जबकि अफ्रीकी और दक्षिण अमरीकी अर्थव्यवस्थाएं वस्तुओं के मूल्य में आयी गिरावट और उनकी व्यापार शर्तों के बिगड़ने से प्रभावित हुए (सुब्बाराव 2009)। इसलिए समष्टि-आर्थिक आधारभूत तत्वों और वित्तीय क्षेत्र के स्वास्थ्य के स्तर पर कोई विभेद नहीं था। जिन उभरती अर्थव्यवस्थाओं ने 1990 के दशक के वित्तीय संकट के अनुभव के आधार पर घरेलू वित्तीय संस्थाओं को मजबूत बनाया था और भारी मात्रा में फोरेक्स संचयन किया था वे भी नहीं बच सकीं। भारत जैसा देश अपनी मजबूत बैंकिंग व्यवस्था और सुचारू रूप से कार्य कर रही वित्तीय प्रणाली के बावजूद मुख्यतया विश्वास मार्ग के मार्फत वैश्विक वितरण प्रक्रिया और चलनिधि में गत्यावरोध के चलते नकदी प्रवाह के आकस्मिक

उलट जाने से उत्पन्न वित्तीय संकट के छितराये हुए प्रभावों की चपेट में आया। धीरे-धीरे संपदा क्षेत्र निर्यातों में आयी कमी से प्रभावित हो गया, सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र और बीपीओ कंपनियों में नौकरियाँ समाप्त हो गयीं और साथ ही स्थावर संपदा, मोटर वाहन और उपभोक्ता सामग्री क्षेत्र मांग कमी से प्रभावित हुए क्योंकि अनेक बैंकों द्वारा सर्तकतामूलक दृष्टिकोण के कारण इन क्षेत्रों में ऋण संकुचन हो गया था।

7.84 जब वित्तीय संकट आरंभ हुआ था तो यह समझा गया था कि विकासशील देश आम तौर पर प्रभावित नहीं होंगे क्योंकि (i) उन्होंने हाल के वर्षों में घरेलू बैंकिंग और वित्तीय प्रणाली को सुदृढ़ करने के लिए विभिन्न सुधारात्मक कदम उठाये थे और (ii) उनका वित्तीय क्षेत्र वैश्विक वित्तीय प्रणाली से पूरी तरह एकीकृत नहीं हुआ था। तथापि, भारी पूंजी आहरणों के कारण, विशेषकर लेहमान की घटना के बाद की अवधि में घरेलू इक्विटी बाजारों पर समय समय पर आघातपूर्ण झटके दिखाई देने लगे थे। इसके आशय संबंधित विदेशी मुद्रा बाजारों में विघटनों और बढ़ते हुए जोखिमों बोध से जुड़े हैं, जिनसे ऋण संकुचन हुए। तथापि, दूसरी लहर सम्पदा क्षेत्र से, विशेषकर घटती हुई निर्यात मांगों और संबंधित नौकरियों के समाप्त होने के रूप में आयी और क्रमश: यह एक चुनौती बन गयी। हालांकि निकट अतीत में फोरेक्स आरक्षित निधियों के निर्मिति और घरेलू वित्तीय संस्थाआंट की मजबूती के साथ साथ वित्तीय प्रोत्साहनों की विशाल मात्रा और समंजनकारी मौद्रिक नीति ने उभरती अर्थव्यवस्थाओं को वैश्विक वित्तीय संकट से उत्पन्न चुनौतियों का सामना करने की एक बेहतर स्थिति प्रदान की थी फिर भी संकट के संक्रामक प्रभावों से बचना कठिन था।

7.85 संक्षेप में भारत सहित उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए इस संकट से मिला सबक मोटे तौर पर यह है कि बढ़ते हुए वैश्विक व्यापार वित्त और श्रम के कारण वे अब उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के साथ पहले के किसी भी समय की तुलना में कहीं अधिक मजबूती के साथ एकीकृत हैं। परिणामस्वरूप वैश्विक अर्थव्यवस्था या वित्तीय प्रणाली में किसी प्रमुख देश या देशों के समूह को प्रभावित करने वाला कोई भी संकट उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं पर भी देर सबेर अपना असर डालेगा जो संकट की प्रकृति और विस्तार पर निर्भर करेगा। अत:, नीति निर्माताओं को अपनी नीतियाँ बनाते समय ऐसे संभावित वैश्विक आघातों से निपटने की पूर्व-तैयारी करने की आवश्यकता है।

वृद्धि के अधिक स्थायी स्रोत के रूप में घरेलू मांग

7.86 उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की विदेशी मांग पर संकट का प्रभाव स्पष्ट रूप से 2008 की अंतिम तिमाही से दिखाई देता रहा है। इसका पहला उदाहरण अमेरिका और यूरोप से और बाद में जापान से मांग में गिरावट के रूप में दिखाई दिया जो कि इन उभरते बाजार अर्थव्यवस्था वाले देशों के निर्यातों की नितान्त विपरीत स्थिति थी। बाद में, उन अन्य उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के निर्यात में गिरावट आयी जिनका निर्यात कच्चे माल और मध्यवर्ती सामान का था और जो उन बड़े उभरती बाजार देशों को, विशेषकर चीन को निर्यात किया जाता था जो निरन्तर जटिल होती आपूर्ति श्रृंखलाओं में तैयार माल के प्रमुख आपूर्तिकर्ता बन गये हैं। उभरती अर्थव्यवस्थाओं का वृद्धि संबंधी कार्य - निष्पादन इस बात को प्रमाणित करता है कि जो अर्थव्यवस्थाएं अपने आर्थिक विकास के लिए अधिकांशत: विदेशी मांग, अर्थात, निर्यातों पर निर्भर हैं वे बुरी तरह से प्रभावित हुई थीं। 2009 की पहली तिमाही में निर्यातों में आयीं गिरावट बड़ी उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के मामले में आयी लगभग 25 प्रतिशत की गिरावट (वर्ष-दर-वर्ष) के समकालिक थी। कुछ पण्य निर्यातक देशों, विशेषकर चीन और रूस में 2009 की पहल तिमाही में निर्यात में 40 प्रतिशत से अधिक की गिरावट आयी। विश्व वृद्धि दर के मंद हो जाने से चूंकि कीमतों में गिरावट आयी, उसके उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की आय में भी गिरावट आयी और इसके कारण मांग और वृद्धि घट गयी। इसके विपरीत जिन अर्थव्यवस्थाओं में जहाँ घरेलू मांग का सकल घरेलू उत्पाद के एक बड़ा स्रोत के रूप में वर्चस्व था, वहाँ यह प्रभाव हल्का था। इस प्रकार, यह निष्कर्ष निकालना तर्कधसंगत है कि निर्यात उन्मुख वृद्धि की रणनीति के बारे में पहले जो समझा गया था, वे उससे कहीं अधिक जोखिम भरी होती हैं। ऐसा सिर्फ इसलिए नहीं है कि वैश्विक मांग अस्थिर है, बल्कि इसलिए भी कि चक्र के संबंध में व्यापार अधिक लचीला प्रतीत होता है और गिरावट के समय यह अधिक संवेदनशील रहता है। यह स्पष्ट है कि घरेलू मांग वृद्धि का एक अधिक टिकाऊ स्रोत है। इस बात को समझते हुए कि संकट का असर घरेलू मांग पर पड़ता है, उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को विदेशी मांग पर अपनी अनुचित निर्भरता की स्थिति की समीक्षा करनी चाहिए और अपनी अर्थव्यवस्थाओं के भीतर ही घरेलू मांग को उत्पन्न करने के प्रयास करने चाहिए। सारांश यह कि कुछ प्रमुख उभरते हुए और विकासशील देशों की उनके द्वारा अपनायी गयी वृद्धि रणनीतियों की पुन: जाँच करनी चाहिए। इस बात को अब अधिकाधिक अनुभव किया जा रहा है कि उन्हें अब अपनी वृद्धि संबंधी रणनीतियों का

व्यापारिक कारोबार अधिशेष से हटाकर उसका घरेलू मांग के लिए उत्पादन की ओर पुनर्विन्यास करना चाहिए और औद्योगिक देशों के बजाय अन्य उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं के बीच संतुलित व्यापार के अपेक्षाकृत अधिक विस्तार की ओर जाना चाहिए।

7.87 भारतीय संदर्भ में यह प्रतीत होता है कि एक तर्कसंगत संतुलित समष्टि-आर्थिक प्रबंधन की वजह से देश में बाहरी आघातों का सामना करने में अधिक लचीलापन है। भारत के अतिशय चालू खाता अधिशेष या घाटे नहीं हैं; न ही निर्यातों या विदेशी मांग पर अत्याधिक निर्भरता है; न निवेश या उपभोक्ता व्यय पर अतिशय निर्भरता है; और न ही अधिकांश घरेलू या कारपोरेट या वित्तीय मध्यवर्तियों में अतिशय लीवरेज है। इस प्रकार इस बात को रेखांकित करना उचित है कि संकट के व्यापक प्रभाव के बावजूद भारत 2008-09 के दौरान 6.7 प्रतिशत और 2009-10 के दौरान 7.4 प्रतिशत की वृद्धि करने में समर्थ था।

वित्तीय क्षेत्र के सुधार

7.88 किसी देश की वृद्धि और विकास में वित्तीय प्रणाली के विभिन्न घटकों के विकास की भूमिका निर्विवाद है। उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में बचत राशियों को प्रभावी ढंग से जुटाना और उनका अभिनियोजन वित्तीय विकास के लिए विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है। उभरती बाजार व्यवस्थाएं, जो कि अभी भी वित्तीय प्रणालियों के विकास की प्रक्रिया से गुजर रही हैं, इस संकट को सही सबक सीखने का एक अवसर मानकर सुदृढ़ प्रणाली निरीक्षण ढाँचे के साथ एक मजबूत वित्तीय क्षेत्र के विकास के लिए प्रयत्न कर सकती हैं।

7.89 हाल के संकट का अनुभव यह दर्शाता है कि अधिकांश उभरते हुए एशियाई देशों की वित्तीय प्रणाली में वैश्विक आघातों को झेलने का लचीलापन था क्योंकि पूर्वी एशियाई संकट के बाद जो सुधार आरंभ किये गये थे, उन्होंने पारदर्शिता और अभिशासन को बढ़ावा दिया था और विनियमों और निरीक्षण को सुदृढ़ बनाया था। इससे शोधक्षमता, चलनिधि और लाभप्रदता की दृष्टि से इस पूरे क्षेत्र में अधिक स्वस्थ वित्तीय संस्थाएं विकसित हुईं। वास्तव में कुछ का तर्क है कि भारत सहित अधिकांश उभरती एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय क्षेत्र के सुधारों के प्रति एक सतर्क और नया-तुला दृष्टिकोण हाल के वैश्विक संकट में एक वरदान साबित हुआ है। इसके बावजूद उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को यह सुनिश्चित करने के लिए कि उनके अपने देशों को भीतर प्रणालीगत जोखिमों की निगरानी हो रही है, अपनी समुचित सावधानी बरतने की आवश्यकता है। तथापि, संकट से यह मुद्दा भी उभरा है कि बहुराष्ट्रीय निगरानी की कठिनाइयों को देखते हुए क्या घरेलू देश अब उसी तरह बैंकों के विदेशी परिचालनों की अनुमति देते रहेंगे। दूसरे शब्दों में, यह देखा जाना है कि क्या देश अपने वित्तीय क्षेत्र को खोलने में अब अधिक संरक्षणवादी होंगे।

7.90 उदारीकरण और नियंत्रण के बीच अधिकतम संतुलन को सुनिश्चित करने की आवश्यकता पर बल देते हुए सुब्बाराव (2009 सी) का तर्क है कि "एक ओर जहाँ उदारीकरण वृद्धि प्रक्रिया के लिए महत्त्वपूर्ण है, वहीं इसका प्रबंध इस प्रकार से होना चाहिए कि अस्थिरता की शक्तियों को टाला जा सके। संकट का एक कारण यह था कि प्रणाली के भीतर अतिशय चलनिधि थी और उसके परिणामस्वरूप लाभ अर्जन के लिए खोज थी जो इस अवधारणा पर आधारित थी कि वित्तीय अभियांत्रिकी के द्वारा वास्तवित मूल्य को बढ़ाया जा सकता है। इसकी वजह से प्रणाली के भीतर असंतुलन और अतिरेक उत्पन्न हुए जिस पर विनियमन ने ध्यान नहीं दिया। तथापि, संकट का सबक यह नहीं कहता कि अत्याधिक विनियमन किया जाये क्योंकि उससे वृद्धि की अन्त:प्रेरणा का दमन होगा और रूढ़िवादी नीतियाँ मंहगी साबित हो सकती हैं। इसलिए यह वांछनीय होगा कि विनियमन की लागतों और लाभों के बीच एक संतुलन बनाये रखा जाये।" भारत में वित्तीय उदारीकरण के प्रयासों की रचना करते समय एक विवेकपूर्ण रवैया बहुत प्रभावी साबित हुआ है जो कि पुनर्पूंजीकरण के द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों का सुदृढ़ीकरण करने; ऐसे वित्तीय `नवाचारों' को रोकने, जो कि जोखिमों को वास्तव में घटाने के बजाय उनका रूप बदलते थे, घरेलू बैंकों को उस ऋण जोखिम के प्रति नियंत्रण में रखने जो कि अब विश्व स्तर पर विषाक्त आस्ति के रूप में देखा जा रहा है; स्थावर सम्पदा में वित्तीय निवेशकों की अतिशय तेजी को नियंत्रित करने; प्रणालीगत महत्त्वपूर्ण गैर-बैंक वित्तीय संस्थाओं की गतिविधियों पर नियंत्रण रखने; भुगतान शेष के पूंजी खाते के उदारीकरण के लिए जल्दबाजी और संभावित रूप से जोखिम भरे प्रयासों के विरुद्ध चेतावनी देने में दिखाई पड़ता है। इन सब प्रयासों के कारण भारत की स्थिति अच्छी रही। वह वैश्विक तेजी के दौरान न केवल अति उत्साही प्रतिक्रियाओं को रोक सका, बल्कि वैश्विक मंदी के नकारात्मक प्रभाव को भी कम कर सका। इस प्रकार देशों को भावी संकट से अपनी सुरक्षा स्वयं करनी होगी और इसके लिए उन्हें सर्वोत्तम तरीके से एक ऐसे सुदृढ़ आर्थिक और वित्तीय नीतिगत ढाँचे को लागू करना होगा, जो उनकी दुर्बलताओं को न्यूनतम करने में सहायक हो। तथापि, इसका अर्थ यह भी नहीं कि अतिशय विनियमन हो क्योंकि इसकी कीमत

बहुत अधिक चुकानी पड़ सकती है। सारांश में यह कि उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को वित्तीय क्षेत्र के विनियमन और उदारीकरण के बीच एक सही संतुलन सुनिश्चित करना होगा ताकि उनकी दीर्घकालीन वृद्धि संभावनाएं प्रभावित न हों।

7.91 भारतीय वित्तीय व्यवस्था के संदर्भ में यह देखना महत्त्वपूर्ण है कि वैश्विक वित्तीय संकट के संसर्ग के कारण इस पर कोई महत्त्वपूर्ण दबाव दिखाई नहीं दिया, हालांकि, वास्तविक अर्थव्यवस्था में अन्यत्र देखी गयी प्रवृत्तियों से जुड़ी गतिविधियों में एक मंदी दिखाई पड़ी थी। बैंकों की सकल ऋण वृद्धि, क्षेत्रवार ऋण वृद्धि तथा वृद्धिशील ऋण-जमाराशि अनुपात ऐतिहासिक रूप से समष्टि नीतिगत ढाँचे के अनिवार्य घटक रहे हैं। संकट के बहुत पहले ही ये परिवर्तनशील घटक बैंकों के विवेकपूर्ण नियंत्रक ढाँचे में समन्वित कर दिये गये थे। रिज़र्व बैंक द्वारा अपनाये गये समष्टि विवेकपूर्ण और व्यष्टि विवेकपूर्ण नीतियों ने बैंकिंग प्रणाली की वित्तीय स्थिरता और लचीलेपन को सुनिश्चित किया है। उच्च वृद्धि की अवधि में आरंभ किये गये सामयिक विवेकपूर्ण कदमों ने, विशेषकर प्रतिभूतिकरण, अतिरिक्त जोखिम भारिताओं और विशिष्ट क्षेत्रों के लिए प्रावधानों से उधार ली जाने वाली निधियों पर निर्भरता और प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (एनबीएफसी) की लीवरेजिंग को सीमित रखने की युक्तियों से हमारी स्थिति अच्छी रही है। आरक्षित नकदी निधि अनुपात (सीआरआर) और सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) के मार्फत आरक्षित निधि आवश्यकताओं ने स्वाभाविक बफरों के रूप में काम किया है और अत्याधिक लीवरेज को रोका है। महत्त्वपूर्ण अन्तर यह था कि भारतीय दृष्टिकोण में क्षेत्र - विशिष्ट नुस्खों को प्रयोग में लाया गया था जबकि दूसरों ने ऐसा नहीं किया था। विदेशी बैंकों की अपेक्षाकृत कम संख्या में उपस्थिति ने भी घरेलू अर्थव्यवस्था पर प्रभाव को सीमित रखा। इस प्रकार समुचित विनियमाक ढाँचे के इस्तेमाल और साथ ही समय समय पर किये गये विशिष्ट विवेकपूर्ण उपायों ने भी भारतीय बैंकिंग व्यवस्था में वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान अस्थिरता को रोकने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की।

पूंजी प्रवाहों का प्रबंधन

7.92 उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में अतीत में अनेक संकटों की एक मुख्य वजह भारी मात्रा में पूंजी के आगमन को माना गया है। यह स्पष्ट है कि संकट उभरती अर्थव्यवस्थाओं से आरंभ हुआ हो या उन्नत अर्थव्यवस्थाओं से, उभरती अर्थव्यवस्थाओं से पूंजी का प्रवाह सामान्यतया पलट जाता है। हाल के संकट के संदर्भ में यह उललेखनीय है कि भारी पूंजी आगमनों और चलनिधि की प्रचुरता के प्रत्युत्तर में बैंकों में अपने हामीदारी स्तरों में शिथिलता लाने की प्रवृति आयी जिसकी वजह से आस्ति मूल्य में अवास्तविक उछाल आया। हालांकि उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में पूंजी के प्रवाह में 1980 के दशक के आरंभ से ही भारी अस्थिरता भी देखी गयी है, जो उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मौद्रिक नीति के रूख पर अधिकाधिक निर्भर होने लगी है और यह एक ऐसा कारक है जिस पर घरेलू प्राधिकारियों का कोई नियंत्रण नहीं है। वित्तीय आवश्यकता से कहीं अधिक के भारी पूंजी आगमनों के दौर के बाद सहसा वह दौर आता है जब पूंजी आगमन बंद हो जाता है। वास्तव में इस तरह का एक सुदृढ़ दृष्टिकोण है कि हाल के संकट के दौरान पूंजी आगमन का सहसा बंद होना अधिकतर अन्तरराष्ट्रीय पूंजी बाजारों की असफलताओं और कमियों के कारण था, न कि उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के सुदृढ़ नीतिगत ढाँचे में कमी की वजह से। बहुत अल्प अवधि के भीतर पूंजी के आगमन में इस तरह के बड़े उतार-चढ़ावों की वजह से उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को लागतों और बड़े उत्पादन के बीच समायोजन की भारी लागत और रोजगार समाप्ति को झेलना पड़ता है। हाल के संकट ने उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में पूंजी के भारी आगमनों के संभावित खतरों को एक बार फिर से रेखांकित किया है। साथ ही, यह भी दिखाई देता है कि पूंजी खाते का प्रबंध और वित्तीय क्षेत्र का विवेकपूर्ण विनियमन साथ-साथ चलते हैं। यह स्पष्ट है कि भारत जैसी उभरती बाजार अर्थव्यवस्था, जिसने कि एक नपातुला और अच्छी तरह से चरणबद्ध दृष्टिकोण अपनाया था, इन बहिर्जन्य आघातों के प्रतिकूल प्रभाव को न्यूनतम रख सकी। यह दृष्टिकोण पूर्वी यूरोपीय अर्थव्यवस्थाओं जैसे उन देशों से भिन्न था जहाँ घरेलू बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के मार्फत विदेशी पूंजी आगमनों की मध्यस्थता को सीमित करने के लिए विवेकपूर्ण नियंत्रक उपाय नहीं किये गये थे। इसे देखते हुए अन्तरराष्ट्रीय मंचों पर विभिन्न स्तरों पर पूंजी नियंत्रण को लागू करने के मुद्दे पर चर्चाएं हो रही हैं।

7.93 पूंजी आगमन के प्रबंधन के मुद्दे पर ब्रेटन वुड्स इंस्टीट्यूशन्स भी प्रतीत होता है कि अपने पूर्ववर्ती दृष्टिकोण से कुछ हटी है। अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के प्रबंध निदेशक डोमनिक स्ट्रास कान (2009 बी) की टिप्पणी है कि "निकास संबंधी वर्तमान रणनीतियों से सम्बद्ध चुनौती उभरते बाजारों में होने वाले पूंजी आगमनों का प्रबंधन है ..... देशों के पास जो साधन है, उनमें इसके लिए अनेक नीतिगत विकल्प हैं। कई देशों में मूल्य वृद्धि को एक प्रमुख नीतिगत प्रत्युत्तर के रूप में रखा जाना चाहिए। अन्य उपकरणों में निम्न ब्याज दरें, प्ररक्षित राशियों का संचयन, कड़ी राजकोषीय नीति और वित्तीय क्षेत्र में विवेकपूर्ण

कदम शामिल हैं। पूंजी पर नियंत्रण विभिन्न उपायों का एक हिस्सा हो सकता है। हमारा दृष्टिकोण पूरी तरह खुला हुआ है। लेकिन हमें यह जानना चाहिए कि सभी उपकरणों की अपनी अपनी सीमाएं हैं। हमें व्यावहारिक होना चाहिए।" वास्तव में ऑस्ट्री और अन्य (2010) का तर्क है कि जहाँ पर सरकारें निवेश में ऐसे प्रवाह का सामना कर रही हैं, जिससे उनकी अर्थव्यवस्थाओं के अस्थिर हो जाने का खतरा पैदा हो गया हो, ऐसे मामलों में पूंजी नियंत्रण `जायज' उपकरण हैं।

7.94 बचत और निवेश को आगे बढ़ाने के लिए समष्टि और संरचनागत दोनों नीतियों के उपयोग की सिफारिश करते हुए अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (2009 बी) ने विशाल असंतुलनों और भारी पूंजी प्रवाहों के प्रत्युत्तर में पहले से लिए जाने वाले नीतिगत उपायों की सामयिकता और प्रकृति को पुन: जाँचने की अपील की है। विश्व बैंक (2009) के अनुसार, "संकट के प्रभावों को रोकने या उन्हें कम करने के लिए संभव है कि अंतिम उपाय के रूप में पूंजीगत प्रतिबंध को टाला नहीं जा सकता हो ..... किसी वित्तीय संकट को कम करने और समष्टि-आर्थिक परिवर्तनों में स्थिरता लाने के लिए पूंजीगत नियंत्रणों को एक अंतिम उपाय के रूप में लागू करने की आवश्यकता पड़ सकती है।" निज़थावोर्न (2009) ने सिफारिश की कि पूंजी के भारी प्रवाहों से जुड़े आस्ति मूल्य में अवास्तविक तीव्रता के जोखिम को देखते हुए बैंकों के जोखिम प्रबंधन को सुदृढ़ बनाना जारी रखना चाहिए और नियंत्रण प्राधिकारियों को ऐसे जोखिम घटाने के लिए आवश्यक समष्टि विवेकपूर्ण उपायों को सक्रियता के साथ लागू करने के लिए तैयार रहना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि चलनिधि की प्रचुरता जैसी भी हो, साख स्तरों और बैंक पूंजी नियमों को सतर्क रहना चाहिए। कर्ज प्रवाहों के उदारीकरण में अधिक सर्तकता पर जोर देते हुए मोहन और कपूर (2010) का तर्क है कि अन्य क्षेत्रों में पूरक सुधार के साथ-साथ पूंजी खाता खोलने ओर उसके सक्रिय प्रबंध में एक नपा-तुला और बेहतर चरणबद्ध दृष्टिकोण होना चाहिए। सुब्रमणियन और विलियमसन (2009 बी) का कथन है कि अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष जैसी संस्थाओं को यह जानना चाहिए कि पूंजी आगमनों से समष्टि-आर्थिक स्तर पर गंभीर चुनौतियाँ पैदा हो सकती हैं जिनके लिए एक अलग चक्रिय प्रत्युत्तर की आवश्यकता पड़ सकती है। उभरते हुए बाजारों के लिए भावी संकटों के सम्मुख नीतिगत शॉगार में ऐसे उपाय होने चाहिए जो साख वृद्धि और लीवरेज, विशेषकर पूंजी प्रवाहों को प्रतिचक्रीय उपयों से सामना कर सकें।

7.95 पूंजी प्रवाहों से संबंधित उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं का हाल का अनुभव विवेकपूर्ण उपायों की संभावित भूमिका की ओर संकेत करता है ताकि पूंजी के भारी आगमनों से जुड़े प्रणालीगत जोखिम को कम किया जा सके, उदाहरण के लिए घरेलू संस्थाओं और उनके उधारकर्ताओं के विदेशी मुद्रा लेनदेन को नियंत्रित करने जैसे कदम। हाल के समय में पूंजी प्रवाहों में अस्थिरता को देखते हुए अब यह व्यापक तौर पर समझा जा रहा है कि अन्तरराष्ट्रीय वित्तीय लेन देनों पर एक कर आरंभ करने की संभावनाओं का पता लगाया जा सकता है। वास्तव में भूतपूर्व अमरीकी फेडरल प्रमुख पॉल वॉल्कर और लॉर्ड टर्नर (यूके फाइनेंशियल सर्विसेस ऑथरिटी के प्रमुख) जैसे वित्तीय के क्षेत्र के प्रतिष्ठित व्यक्तियों का सुझाव है कि ऐसा कर घरेलू वित्तीय लेन-देनों पर भी होना चाहिए। भारतीय संदर्भ में रेड्डी (2009) का सुझाव है कि सुझाव पर फॉरेक्स बाजार के संदर्भ में विचार किया जा सकता है और प्रतिभूति लेन देन कर प्रणाली को उपयुक्त रूप से संशोधित किया जा सकता है तथा इसे सहभागिता लिखतों तक बढ़ाया जा सकता है, हालांकि उनका व्यापार विदेश में होता है। इसी प्रकार कर अंतरपणन और आवास की भी विश्व स्तर पर पुनरीक्षा हो रही है। वास्तव में 20 अक्तूबर 2009 को ब्राजील ने घोषणा की कि वह देश में इक्विटी और नियत आय लिखतों में निवेश के लिए देश में आने वाली पूंजी पर 2 प्रतिशत का कर लागू करेगा, जबकि उत्पादक अर्थव्यवस्था में प्रत्यक्ष निवेश इस निर्णय से अप्रभावित रहेगा। संक्षेप में, पूंजीगत नियंत्रण की पुनरीक्षा और चर्चा हो रही है क्योंकि उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए यह मुद्दा संकट से एक महत्त्वपूर्ण सबक के रूप में उभरा है।

7.96 अत: निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि संकट के पूर्व अनुभव के कारण उभरते एशियाई और लातीनी अमरीकी देशों ने प्रतीत होता है कि अपने चालू खातों और विदेशी वित्त आवश्यकताओं का प्रबंध अधिक सावधानी के साथ किया है। इसके विपरीत, मध्य और पूर्वी यूरोप विदेशी मुद्रा पर अत्यधिक निर्भरता के कारण बुरी तरह से प्रभावित हुए क्योंकि विदेशी निवेशक लौट गये और पूंजी प्रवाह सूख गया। इस प्रकार, हाल का अनुभव पूंजी खाता उदारीकरण की गति और व्याप्ति के बारे में एक सतर्कतापूर्ण रवैये का सुझाव देता है, क्योंकि पूंजी खाते के उदारीकरण, घरेलू वित्त क्षेत्र के सुधार और मौद्रिक व विनिमय दर नीति के ढाँचे के बीच मजबूत सूत्रबद्धता है।

उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में बैंकिंग क्षेत्र का निधीयन

7.97 संकट से यह स्पष्ट है कि बैंकों ने - चाहे वे विदेशी हों या घरेलू - संकट को उत्पन्न करने या उसके प्रसार में एक महत्त्वपूर्ण

भूमिका निभायी थी। अन्तरराष्ट्रीय निपटान बैंक (बीआईएस) (2009 बी) के अनुसार प्रमुख विदेशी बैंकों की दुर्बलता और व्यय में कटौती करने की उनकी आवश्यकता एक कारक तत्व था। इसके विपरीत घरेलू जमाराशियों की निधि पर आधारित स्थानीय बैंकों की उपस्थिति ने जोखिम का विशाखन करने और विदेशी आघात को झेलने की दिशा में बैंकिंग व्यवसथाओं में अधिक लचीलापन लाने में सहायता दी। "यह पाया गया कि जो बैंक थोक निधि पर अत्यधिक निर्भर थे उनमें बाजार चलनिधि के किसी आघात के प्रति भेद्यता अधिक थी। संस्थाओं की थोक निधि बाजारों पर अतिशय निर्भरता प्रणालीगत चिन्ता का एक मुद्दा है और इस बारे में सतर्क दृष्टिकोण की आवश्यकता है। जब ऋण जमाराशियों की तुलना में ज्यादा बड़े होते हैं तो बैंक इस अंतराल के वित्तपोषण के लिए विदेशी स्रोतों या घरेलू और अन्तरराष्ट्रीय थोक बाजारों का सहारा लेते हैं। अत: यह आश्चर्य का विषय नहीं कि हंगरी, रोमानिया और उक्रेन जैसी पूर्वी यूरोपीय उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में, जहाँ दबाव अधिक था, जमाराशियों की तुलना में ऋण का अनुपात भी अपेक्षाकृत अधिक था। इसी प्रकार, यह देखा गया है कि विदेशी बैंकों की उपस्थिति मुद्रा में असंतुलनों से जुड़ी हुई थी। उदाहरण के लिए मध्य ओर पूर्वी यूरोप में विदेशी बैंकों ने स्थानीय मुद्रा में आय वाले प्रतिष्ठानों और परिवारों को यूरो और स्विस फ्रांक की प्रधानता वाले कारपोरेट, आवास और कार ऋण प्रदान किये जिसके परिणामास्वरूप जब घरेलू मुद्राओं में मूल्यह्रास हुआ तो उनसे कारपोरेट और पारिवारिक वित्तीय संकट और बढ़ गया। इससे संकेत मिलता है कि उभरते बाजार जब विदेशी बैंकों को बढ़ावा दें तो उसी समय उनके स्थानीय उधार देने की गतिविधियों का कड़ाई से नियंत्रण करें।"

उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में स्थानीय बांड बाजार के विकास की आवश्यकता

7.98 हाल के संकट में बैंकिंग क्षेत्र मध्यस्थता से जुड़े मुद्दों से उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में स्थानीय बांड बाजारों को और अधिक विकसित करने की आवश्यकता भी उज़ागर हुई है। चूंकि वित्तीय संकट के कारण उभरते बाजारों में उधारकर्ताओं की विदेश से निधि प्राप्त करने की क्षमता घट जाती है, इसलिए निधियाँ जुटाने के लिए उन्हें घरेलू बाजारों की ओर लौटना होता है। 1990 के दशक के संकट के बाद से स्थानीय मुद्रा वाले बांड बाजारों में अतिशय वृद्धि हुई है। इस बात पर जोर दिया गया है कि विस्तृत होते स्थानीय मुद्रा बांड बाजार अब उभरती अर्थव्यवस्थाओं के लिए सर्वोच्च प्राथमिकता होने चाहिए। बांड बाजार बैंक मध्यस्थता का विकल्प प्रदान करते हैं। इचेनग्रीन (2009 सी) के अनुसार यह प्रमाणित हो चुका है कि जिन देशों में अधिक विकसित बांड बाजार थे, उन्होंने संकट के समय कम नकारात्मक प्रभावों को अनुभव किया क्योंकि विशेषत: बड़े प्रतिष्ठान वित्त के गैर-बैंक स्रोतों तक अपनी पहुँच बनाये रख सके। ऐसे प्रतिष्ठान अधिक लंबी अवधि वाले अपने परिचालनों का वित्त पोषण कर सके थे और इस प्रकार वे स्थितियों के बिगड़ने पर बाजार की ओर लौटने की आवश्यकता को टाल सके। यह स्पष्ट है कि अनेक उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं में स्थानीय मुद्रा बांड बाजार निधियों का एक वैकल्पिक स्रोत बन रहे हैं। इन बाजारों की तेजी से वृद्धि हुई है। वे 2003 में 2.2 लाख करोड़ अमरीकी डालर से दुगना होकर 2008 के अंत में 5.5 लाख करोड़ अमरीकी डालर के हो चुके हैं। वास्तव में 1990 के दशक के संकट से सबक लेते हुए उभरते बाजारों की सरकारों ने स्थानीय मुद्रा बांड बाजारों को विकसित करने के प्रयत्न किये हैं ताकि उन वित्तीय संकटों, विशेषकर 1997 के एशियाई वित्त संकट की पुनरावृत्ति से बचा सके। पूर्वी एशियाई देश बांड बाजार के विकास में अग्रणी रहे हैं (डेला एंड हेस, 2009)। ये बाजार उभरते बाजारों वाली सरकारों और निगमों को जो कि वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान अन्तरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों से बाहर कर दिये गये थे, वित्त प्रदान करने और बैंकिंग क्षेत्र पर उनकी निर्भरता को कम करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं।

7.99 घटे हुए मुद्रा असामंजस्यों के कारण अधिकांश लातीनी अमरीकी और एशियाई अर्थव्यवस्थाएं वास्तव में संकट के दौरान वस्तुत: सुदृढ़ होकर उभरीं। ब्राश (2009) के अनुसार स्थानीय मुद्रा बांड बाजार कुछ उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं और विकासशील देशों में एक 'अतिरिक्त पहिये' की तरह कार्य करते रहते हैं। अनेक उभरते बाजारों में मुद्रा और परिपक्वता के असमांजस्यों को सुधारने में सहायता देकर स्थानीय मुद्रा बांड बाजारों ने वित्तीय स्थिरता लाने में अपना योगदान दिया है। हालांकि उभरती बजार अर्थव्यवस्थाओं में कारपोरेट बांड बाजारों को विकसित करने में प्रगति हुई है फिर भी आकार, बाजार अधिक प्रतिफल वक्र रेखा के अभाव, लेखा संबंधी जानकारी के समुचित प्रकटीकरण में कठिनाइयों और कंपनी अधिशासन में कमजोरियाँ जैसे तमाम मुद्दे हैं। अत: जो देश अभी घरेलू बांड बाजार के विकास की शुरूआती अवस्था में हैं, उन्हें प्राथमिक बाजार की बाजार संरचना को निर्मित करने पर और जो देश कारपोरेट बांड बाजार विकास के अग्रिम चरण में हैं उन्हें कुशलता आधारित सुधारों की आवश्यकता पर ध्यान देना है। स्थानीय बाजारों के विकास के साथ देश की सीमा के भीतर ही उधार लेने और देने का कार्य बढ़

सकता है और इससे संभवत: बाहर जाने की आवश्यकता भी कम होगी। इसलिए यह तर्क दिया जा रहा है कि स्थानीय मुद्रा बांड बाजारों को अधिक विस्तृत करने से उस संभाव्यता को कम किया जा सकता है जब मुद्रा मूल्यांस एक पूर्ण रूपेण वित्तीय संकट में रूपान्तरित हो जाता है।

प्रति-चक्रीय राजकोषीय नीति ढाँचे की आवश्यकता

7.100 वित्तीय संकट का एक परिणाम यह रहा है कि वित्तीय जोखिम राजकोषीय प्राधिकारियों को हस्तांतरित हुए हैं, जिसके चलते राजकोषीय प्रोत्साहनों का वित्तपोषण करने का दायित्व उन पर आ गया है। तथापि, यह देखा जाना अभी शेष है कि विभिन्न उन्नत और उभरती अर्थव्यवस्थाओं ने जिन राजकोषीय प्रोत्साहन पैकेजों को आरंभ किया है, वे मांग को एक अल्पावधि समर्थन देने से परे किस हद तक अपना प्रभाव छोड़ते हैं और दीर्घकालीन संभावित वृद्धि के लिए एक सकारात्मक असर पैदा करते हैं। इसके अतिरिक्त, विस्तारवादी राजकोषीय ने अनेक देशो में इस बात के लिए चिंताएं पैदा की हैं कि वे निजी क्षेत्र में निवेश को घटाती हैं और सार्वजनिक क्षेत्र के वित्त को बनाये रखने के लिए चुनौती पैदा करती हैं। इसके कारण स्थिति जो अभी-अभी सामान्य होनी आरंभ हुई है, उस पर असर पड़ सकता है। इसके अलावा, इस संभावना से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि इससे वृद्धि को रोके रखने वाले कर्ज के स्तरों के बढ़ने और ब्याज दरों में वृद्धि का एक दुष्चक्र मध्यवधि के भीतर पैदा होगा। इस प्रकार, कुछ देशों के सामने अपने वित्तीय क्षेत्र की स्थिरता और आकस्मिक देयताओं पर ध्यान देने वाले मध्यावधि के राजकोषीय सुदृढ़ीकरण कार्यक्रमों को अभिकल्पित और घोषित करने की चुनौती आ सकती है।

7.101 यह देखा गया है कि अधिकांश अर्थव्यवस्थाओं में राजकोषीय घाटे के स्तरों में वृद्धि हुई है क्योंकि नीतिनिर्माताओं ने सकल मांग में आयी कमी की जवाबी कार्रवाई की है और अपनी वित्तीय व्यवस्थाओं को पुन:सुचारु बनाना चाहा है। उदाहरण के लिए, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में राजकोषीय प्राधिकारियें ने संकट का प्रत्युत्तर केंद्रीय बैंक के कार्यक्रमों को समर्थन देने के लिए पूंजी देते हुए, अनकदी परिसम्पत्तियों को खरीदा (उदाहरण के लिए अमेरिका में) और प्रतिभूतियों की उत्पत्ति को प्रोत्साहित करने के लिए गारंटियों के प्रावधान किये गये (जैसा कि इग्लैंड में हुआ)। संकट के दौरान आक्रामक मौद्रिक नीति को आसान बनाने के साथ साथ ऐसे उपायों से निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों के लिए उधारों की लागत वृद्धि को काबू में रखने में सहायता मिली। वास्तव में अधिकांश परिपक्व बाजार अर्थव्यवस्थाएं उभरते बाजारों के केंद्रीय बैंकों, तेल निर्यातकों और सरकारी सम्पदा कोषों से विदेशी बचत राशियाँ प्राप्त कर घरेलू बाजार दरों को सीमित रख सकी हैं। परिणामस्वरूप आम तौर पर इसकी अपेक्षा की जा रही है कि प्रमुख उन्नत और साथ ही उभरती अर्थव्यवस्थाएं भारी सार्वजनिक घाटों और तेजी से बढ़ते कर्ज के इस संकट से उबर आयेंगी। अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (2009 ई) के एक अनुमान के अनुसार उन्नत जी-20 देशों का औसत राजकोषीय घाटे के 2009 में सकल राष्ट्रीय उत्पाद का लगभग 10 प्रतिशत और 2010 में लगभग 8.5 प्रतिशत रहने की संभावना है। यदि विदेशी निवेश इन देशों में दीर्घकालिक राजकोषीय स्थिति के बने रहने के बारे में सोचते हैं तो सरकारी प्रतिभूतियों पर ब्याज दरों को में वृद्धि के समायोजन और विनिमय दर को घटाने की जरूरत होगी। हाल में यूनान की घटना के बाद इस मान्यता पर प्रश्न उठे हैं कि कोई बिना किसी सीमा के कैसे उधार ले सकता है। यह इस बात की ओर ध्यान दिलाता है कि राजकोषीय गुंजाइश का जरूरत से ज्यादा विस्तार नहीं किया जा सकता।

7.102 वित्तीय संकट के प्रभाव के अनुकूलन के लिए उभरती अर्थव्यवस्थाओं को विशाल राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों का भी समर्थन मिला है। जो उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएं इस संकट के दायरे में अधिक नीतिगत गुंजाइश और अल्प बाध्यकारी वित्तीय दबावों के साथ आयीं वे राजकोषीय ओर मौद्रिक नीति के साथ अधिक आक्रामक ढंग से अपना प्रत्युत्तर देने में समर्थ थीं। जिन उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं ने ज्यादा बड़े राजकोषीय प्रोत्साहन दिये और जिनका संकट से पूर्व एक सुदृढ़ आधार था और तेजी से विकसित होते व्यापार साझेदार थे, उनमें बहाली की प्रक्रिया भी तेज थी (आईएमएफ 2010 बी) वास्तव में औसत जी-20 देश की तुलना में एशिया का राजकोषीय प्रत्युत्तर (सकल राष्ट्रीय उत्पाद की दृष्टि से) अधिक बड़ा रहा है (काटो, 2009)। संकट पर हुए शोधकार्य से एक महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष यह भी निकला है कि जो देश प्रति-चक्रीय नीतियों को चलाने में समर्थ थे, वे इस संकट का सामना बेहतर तरीके से कर सके। तथापि, अनेक उभरते और विकासशील देशों के पास वैश्विक आर्थिक संकट से निपटने की 'नीतिगत' और 'राजकोषीय' गुंजाइश नहीं थी। परिणामस्वरूप, वैश्विक आर्थिक नीतियों में विशाल असंतुलन था। केवालो (2009) के अनुसार "प्रति-चक्रीय नीतियों का संचालन करने का अवसर उन भाग्यशाली अर्थव्यवस्थाओं ने अर्जित किया, जो पूर्व में जब स्थितियाँ अनुकूल थीं तो उन्हीं से संतुष्ट होकर नहीं रह गयी थीं और जिन्होंने विषम समय के लिए अपने को तैयार कर रखा था।" यह देखा गया है कि जिन देशों ने अच्छे समय के दौरान प्रति-चक्रीय नीतियों के लिए राजकोषीय गुंजाइश निर्मित नहीं की थी उनके पास

संकट के समय आत्मनिर्भर नीतिगत कार्रवाइयों के लिए कोई स्थान नहीं बचा था। इस प्रकार इस संकट यह मुद्दा उभरा है कि वे तेजी के दौर में अपनी राजकोषीय सुधारात्मक उपायों को और भी मजबूत बनायें और सुदृढ़ीकरण प्रक्रिया को तेज करें ताकि वे गिरावट या मंदी के दौर में प्रभावी प्रति-चक्रीय राजकोषीय उपायों को करने के लिए राजकोषीय गुंजाइश निर्मित कर सकें। उभरते और विकासशील देशों के लिए एक टिकाऊ आधार पर राजकोषीय और नीतिगत गुंजाइश का फिर से निर्धारण सुधारात्मक कार्यक्रम की एक केंद्रीय विशेषता बनना चाहिए। यूरोप के कुछ हिस्सों में हाल की घटनाओं से यह अब और अधिक स्पष्ट है।

उभरती बाजार अर्थव्यव्स्थाओं में सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था की आवश्यकता

7.103 यद्यपि, चीन और भारत जैसी प्रमुख उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएं हाल के संकट से हल्के प्रभावित हुई हैं, यह समझा जा रहा है कि कई दूसरे विकासशील देशों में गरीबी कम करने के कार्यक्रमों की गति प्रभावित होगी। निस्संदेह, ये देश पहले खाद्य पदार्थों और तेल उत्पादों की बढ़ती कीमतों से प्रभावित हुए थे और उसके बाद के हाल के संकट से, और ये वैश्विक मांग को बढ़ाने और वैश्विक स्थिति के प्रकृतिस्थ होने की प्रक्रिया को सहयोग देने में अपनी भूमिका अदा कर सकते थे, लेकिन उन्हें अभी अनेक वर्षों तक वित्त की आवश्यकता होगी। इन देशों में संभावित मांग को देखते हुए इन देशों के नीति निर्माताओं को सामाजिक सुरक्षा के ढाँचे को स्थापित करने और उसे मजबूत बनाने के लिए उपाय करने की आवश्यकता है। यह उल्लेखनीय है कि विश्व में कुछ सबसे अच्छे सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम समष्टि-आर्थिक दबावों के दौरान ही उभरे हैं। उदाहरण के लिए इंग्लैंड, कनाडा और न्यूजीलैंड जैसे देशों ने ऐसा संकट अनुभव करने के बाद ही पहली बार विशाल आधार पर बेरोजगारी हितकर कार्यक्रम विकसित किये थे और वर्तमान अमरीकी सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था भी विशाल मंदी के दौर की उपज है। यदि ऐसे उन्नत देशें में ऐसी सामाजिक सुरक्षा व्यवस्थाएं न रही होतीं तो हाल के संकट का प्रभाव निश्चित ही और भी गहरा होता। इसे रेखांकित करना महत्त्वपूर्ण है कि पिछले वित्तीय संकट के दौरान गरीबी से जुड़े मामलों पर समुचित ध्यान नहीं दिया गया था। विश्व बैंक समूह भी यही सुझाव देता है कि संकट के बाद नहीं, बल्कि उसकी शुरूआत से ही सामाजिक सुरक्षा के पहलुओं पर विचार करना अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

7.104 जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, चीन और भारत जैसी उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएं कई कारणों से हाल के संकट से अधिक प्रभावित नहीं हुई हैं, लेकिन आने वाले समय में उन्नत बाजारों के साथ उनका व्यापार और वित्तीय एकीकरण और बढ़ने की उम्मीद है। अत: बाहरी आघात के प्रति ऐसे लचीलेपन की गारंटी नहीं दी जा सकती है। ऐसे परिदृश्य में, यह न केवल महत्त्वपूर्ण, बल्कि चुनौतीपूर्ण भी हो जाता है कि उभरते हुए और विकासशील देश एक क्रमश: एक प्रभावी सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था को अपनायें। इससे न केवल स्थिरता के स्वचालित तत्वों को बेहतर तरीके से कार्य करने में मदद मिलेगी, बल्कि यह व्यापक स्तर पर आकस्मिक ढंग से विवेकपूर्ण राजकोषीय उपायों को आरंभ करने की आवश्यकता को भी कम करेगा जो कि दीर्घावधि के राजकोषीय पोषण संबंधित चिंताओं को केंद्र में लायेगा। इसके अलावा, ऐसे देशों में जिनमें अतिशय चालू खाता अधिशेष है, वहाँ ऐसी संरचनात्मक नीतियों का अनुसरण करने से वैश्विक असंतुलनों से एक टिकाऊ स्तर पर निपटने में सहायता मिलेगी। सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था और वित्तीय बाजारों में सुधार से ऐसे देशों में लंबी अवधि के दौरान निजी बचत राशियाँ भी घट सकती हैं।

भावी संकट के सामने आत्म-सुरक्षा

7.105 हाल के संकट और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं पर उसके प्रभाव से एक बहस आरंभ हुई है कि क्या देशों को ऐसे भावी संकटों के खिलाफ अपने विदेशी मुद्रा भंडारों को निर्मित कर आत्म-रक्षा को सुनिश्चित करना चाहिए। अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (2010 बी) के अनुसार बाह्य भेद्यता को कम करते हुए अधिक मात्रा में अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा भंडार धारिताएं संकट के प्रभाव को कम करने में सहायक होती हैं। लेकिन आरक्षित निधियों का टांसमान प्रतिलाभ था; जब अधिक निधियाँ बहुत अधिक थीं तो उनका उत्पादन के ध्वस्त हो जाने पर कोई नियामक प्रभाव रहा हो इसके सुस्पष्ट प्रमाण नहीं है। इस संदर्भ में दो प्रतिवादी तर्क हैं। ब्लांकहार्ड और अन्य (2009) का दृष्टिकोण है कि ऐसे किसी निष्कर्ष को निकालना कठिन है कि ऐसी आत्म-सुरक्षा सचमुच सफल रही थी। हालांकि अधिकांश उभरते बाजार हाल के संकट का अतीत की तुलना में बेहतर ढंग से सामना कर सके तो इसके पीछे ये तथ्य थे कि प्रथम तो यह संकट उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में जन्मा था और दूसरा यह कि उभरती अर्थव्यवस्थाओं में अतीत की तुलना में बेहतर समष्टि-आर्थिक नीतियाँ और ढाँचे थे। इसे रेखांकित करते हुए उनका तर्क है कि हालांकि ब्राजील के पास मेक्सिको की

तुलना में अधिक आरक्षित राशियाँ थीं और सकल घरेलू उत्पाद की दृष्टि से भी वह बेहतर था फिर भी ऋण चूक विनिमय व्यवस्था में कीमत-लागत अंतर की दृष्टि से कार्यनिष्पादन में बहुत कम अंतर था। सारांश यह कि ब्राजील में भारी आरक्षित राशियों के बावजूद बाजारों ने मेक्सिको को उससे अधिक भेद्य नहीं पाया था।

7.106 ट्रुमैन (2009) का मत है कि आरक्षित राशियों के संचयन से आत्म-सुरक्षा का प्रयास वैश्विक संकट से एक गलत सबक सीखना हो सकता है। उनके अनुसार देशों को भावी संकट से अपनी सुरक्षा जहाँ तक हो सके सुदृढ़ आर्थिक और वित्तीय नीतिगत ढाँचों को अपनाते हुए करनी चाहिए। उस तरह की आत्म-सुरक्षा का एक तरीका विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों की पर्याप्त धारिता होनी चाहिए लेकिन केवल वही पर्याप्त नहीं है। विदशी मुद्रा आरक्षित निधियों की बड़ी धारिताएं वैश्विक वित्तीय संकट के विरुद्ध एक खर्चीला प्रतिरोध प्रदान करती हैं। दक्षिण कोरिया के मामले को उद्धृत करते हुए, जहाँ फरवरी 2008 में 264 बिलियन अमरीकी डालर के विदेशी मुद्रा भंडार थे, उनका निष्कर्ष है कि विदेशी मुद्रा भंडारों को निर्मित करने से आत्म-सुरक्षा की गारंटी नहीं मिल जाती। संकट के दौरान निधियों का सकल आगमन और बहिर्गमन महत्त्वपूर्ण होता है, न कि चालू खाते के निवल अधिशेष या अन्तरराष्ट्रीय आरक्षित निधियों का निवल संचयन। इसके अलावा विदेशी आरक्षित निधियों के स्रोत इस बात को निर्णित करने में एक महत्त्वपूर्ण कारक हैं कि आत्म सुरक्षा के एक उपकरण के रूप में उनका टिकाऊपन कितना है। तथापि, ट्रुमैन इस बात से सहमत हैं कि संकट आरंभ होने से पहले के दौर में यदि कोरिया के चालू खाते में भारी घाटे की स्थिति होती या जब संकट आरंभ हो गया तब यदि कोरिया के पास विदेशी मुद्रा की आरक्षित निधियाँ अल्प मात्रा में होती तो उसे और गहरे संकट का सामना करना पड़ता, लेकिन संकट से आत्म-सुरक्षा के लिए विदेशी मुद्रा का विशाल भंडार अपर्याप्त था। संक्षेप में यह कि केवल विदेशी मुद्रा भंडार निर्मित करना ही आत्म-सुरक्षा का उपाय नहीं हो सकता। उसके साथ-साथ सुदृढ़ आर्थिक और वित्तीय नीतिगत ढाँचा भी मौजूद होना चाहिए। वैश्विक वित्तीय सुरक्षा संजाल (जीएफएसएन) विशेषज्ञ समूह जी-20 मंच के तहत इन मुद्दों पर विचार कर रहा है।

7.107 भारत की विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों की निश्चिंत स्थिति उसके निर्यात की निम्न मांग और पूंजी प्रवाहों की मंद स्थिति के बावजूद उसे भुगतान संतुलन का प्रबंध करने का विश्वास देती है (सुब्बाराव 2009 ए)। पर्याप्त विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों की अनुपस्थिति में विनिमय दर पर दबाव को रोकना शायद बहुत चुनौतीपूर्ण होता। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों के संचयन की इस प्रवृत्ति के मूल में कारण यह है कि अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष जैसी बहुपक्षीय वित्तीय संस्थाओं का प्रत्युत्तर बहुत अपर्याप्त रहा है। पूर्वी एशियाई संकट के समय वित्तीय सहायता की कमी के अनुभव ने उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में भावी संकट से किसी हद तक अछुते रहने के लिए विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों के संचयन की प्रवृति आयी। हाल के संकट के दौरान फेडरल आरक्षित निधि की विश्व भर में केंद्रीय बैंकों को विनिमय व्यवस्था प्रदान करने की इच्छा और अन्य केंद्रीय बैंकों को प्रत्यक्ष रूप से चलनिधि का प्रावधान सुनिश्चित करना शायद परोक्ष रूप से संकट के समय सुरक्षा के लिए अलग-अलग केंद्रीय बैंकों द्वारा विशाल मात्रा में विदेशी मुद्रा आरक्षित राशियों को निर्मित करने की आवश्यकता को दर्शाता है। तथापि आत्म-सुरक्षा की इस जरूरत को अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर क्षेत्रीय और बहुपक्षीय दोनों आधार पर चलनिधि के प्रावधान और आरक्षित निधि प्रबंधन के लिए अधिक प्रभावी तंत्र के द्वारा कम किया जा सकता है। संकट से उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए एक दूसरा महत्त्वपूर्ण सबक रहा है कि वह एक छोर की परिकल्पना, जिसमें यह अवधारणा थी कि देश विनिमय दर व्यवस्थाओं के समय की तरह विनिमय दर के चयन में, अर्थात पूर्णतया लचीली या नियत विनिमय दरों के चयन में एक कोने या दूसरे कोने में जायेंगी, अब पुरानी पड़ चुकी है और आज मध्यवर्ती व्यवस्थाओं की जरूरत है।

7.108 निष्कर्ष यह कि हाल का घटनाक्रम स्पष्ट रूप से इस मुद्दे को उठाता है कि क्या उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएं उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में पैदा हुए विशाल आर्थिक आघात के संचरण से स्वयं को सुरक्षित रख सकती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि चालू खाता और राजकोषीय संतुलनों को सुधारते हुए अलग-अलग देशों की भेद्यताओं को कम कर उन्हें वित्तीय दबावों के संचरण से पूरी तरह पृथक नहीं रखा जा सकेगा, बल्कि सुदृढ़ नीतिगत ढाँचे के द्वारा इन प्राचलिकों में सुधार लाकर ऐसी स्थितियों में किसी समुचित घरेलू नीतिगत प्रत्युत्तर को कार्यान्वित करने के लिए निश्चित रूप से ज्यादा गुंजाइश बनती है और वह अधिक तेजी से पुन: बहाली की सुविधा प्रदान करता है। इसी प्रकार, संकट ने यह महत्त्वपूर्ण सबक दिया है कि तीव्र और विघटनकारी मूल्यह्रास को रोकने के लिए फोरेक्स बाजार का हस्तक्षेप अब गुनाह नहीं है और आरक्षित निधियाँ अब नयी खूबी है। इस प्रकार, यह अनुभव किया गया हे कि वैश्विक वित्तीय सुरक्षा संजाल के किसी भी

ढाँचे में तीन सैद्धान्तिक स्तंभ होने चाहिए। पहला, घरेलू वित्तीय सुरक्षा संजाल में एक सुदृढ़ अन्तरराष्ट्रीय आरक्षित निधि और विवेकपूर्ण ढाँचा हो। दूसरा, क्षेत्रीय वित्तीय सुरक्षा संजालों में क्षेत्रीय विनिमय व्यवस्था भंडार और द्विपक्षीय विनिमय व्यवस्था भंडार होने चाहिए। और अंत में वैश्विक सुरक्षा संजाल में बहुपक्षीय संस्थाओं के लिए एक विस्तृत भूमिका है।

X. नीति निर्माताओं के लिए प्रमुख चुनौतियाँ

7.109 उपर्युक्त सबक यह सुझाते हैं कि हाल के संकट के सन्दर्भ में बहुत सारे उपायों पर विचार करने की आवश्यकता है। उस संदर्भ में सभी नीतिगत सबक और सुझाये गये उपायों का लक्ष्य भेद्यता को कम करना और वित्तीय स्थिरता को बनाये रखना है। तथापि, वित्तीय स्थिरता के लिए उत्तरदायित्व उसकी प्रकृति के कारण सरकार, केंद्रीय बैंक और अन्य विनियामकों को लेना होगा। इस प्रकार, संकट से उजागर कमजोरियों का निर्धारण और उपर्युक्त प्रथाओं को अपनाना नीतिनिर्माताओं के सम्मुख एक चुनौतीपूर्ण कार्य होगा। इस संदर्भ में कुछ प्रमुख चुनौतियों को नीचे रेखांकित किया गया है।

वित्तीय नियंत्रण का भविष्य

7.110 हाल के संकट के विभिन्न कारणों में एक व्यापक स्तर पर पहचाना गया कारण वित्तीय नियंत्रण में कुछ असफलताओं से संबंधित है। स्पष्ट है कि इससे वित्तीय नियंत्रण को सुधार लाने के लिए एक महत्त्वाकांक्षी कार्यक्रम आरंभ करने की आवश्यकता है ताकि नियंत्रणकारी ढाँचा ऐसे संकट की पुनरावृति को रोक सके। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्री, केंद्रीय बैंकर, वित्तीय नियामक और विशेषज्ञ विनियामक ढाँचे के उन प्रमुख क्षेत्रों पर विचार कर रहे हैं, जिनमें मध्यावधि और दीर्घावधि में सुधार किये जाने की आवश्यक है। तथापि, सुधार कार्यक्रमों को आगे बढ़ाने में नीति निर्माताओं को निम्नलिखित चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है।

7.111 नीतिनिर्माताओं के सम्मुख एक महत्त्वपूर्ण चुनौती उनके विनियामक प्रारूपों के निर्धारण से संबंधित है। उदाहरण के लिए इस मुद्दे पर व्यापक स्तर पर चर्चा हुई है कि क्या केंद्रीय बैंक को बैंक विनियमकारी और पर्यवेक्षण का कार्य भी करना चाहिए। यह तर्क दिया गया है कि एक केंद्रीय बैंक अंतिम उधारदाता का अपना कार्य अधिक कुशलता के साथ कर सकता है यदि निवारक कार्रवाई करने के लिए उसका अधिदेश केवल वित्तीय संस्थाओं की निगरानी करने से आगे जाये। यह तब संभव है जब केंद्रीय बैंक के पास बैंक पर्यवेक्षण का उत्तरदायित्व भी हो। इसके अलावा, वित्तीय व्यवस्था में वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित करने के लिए मौद्रिक नीति, जो कि एक समष्टि विवेकपूर्ण कार्य है और बैंक पर्यवेक्षण जो कि व्यष्टि-विवेकपूर्ण कार्य है, दोनों के बीच एक स्वाभाविक सहक्रिया हो। दूसरी ओर कुछ इसका समर्थन नहीं करते कि केंद्रीय बैंकरों को बैंकिंग विनियामकों का कार्य भी करना चाहिए क्योंकि इससे मौद्रिक नीति का संचालन करते हुए नैतिक संकट की समस्या पैदा हो सकती है। यह तर्क दिया गया है कि केंद्रीय बैंक मुद्रास्फीति के विरूद्ध एक 'नरम' रूख अपनायेगा क्योंकि ब्याज दरों में वृद्धि से बैंकों के तुलनापत्रों पर हानिकारक प्रभाव पड़ सकता है। इसके अलावा, अधिक जटिल अधिदेशों के होने से केंद्रीय बैंक अपनी जवाबदेही से आसानी से बच सकते हैं। अत: प्राधिकारियों के सम्मुख यह एक महत्त्वपूर्ण और संभव है कि एक चुनौतीपूर्ण कार्य हो कि वे समग्र रूप से अपनी वित्तीय व्यवस्था में विनियामक मॉडेलों की जाँच करें और अपने देश की विशिष्ट परिस्थितियों के अनुसार यदि उन्हें कुछ परिवर्तन आवश्यक लगें तो उन्हें करें। यदि वर्तमान विनियामक मॉडेल अधिक उपयुक्त लगें तब भी केंद्रीय बैंकिंग और पर्यवेक्षण कार्यों के बीच एक सुचारू और कुशल संबंध के महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता। वित्तीय दबाव की परिस्थितियों में केंद्रीय बैंक के वित्तीय स्थिरता संबंधी निर्धारणों की प्रभावोत्पादकता के लिए पर्यवेक्षण संबंधी जानकारी आवश्यक रहती है। इसके विपरीत, पर्यवेक्षकों को एक-एक संस्था की तुलना में अपनी कार्रवाई पर विचार करते समय केंद्रीय बैंकों के प्रणालीगत परिप्रेक्ष्य से लाभ उठाना चाहिए।

7.112 दूसरी चुनौती प्रतिरोध संबंधी है और नीतिनिर्माताओं और अन्तरराष्ट्रीय मानक निर्धारण निकायों को तब इसका सामना करना पड़ सकता है जब वे वित्तीय बाजार के प्रतिस्पर्धियों को वांछित भावी सुधार कार्यक्रम के बारे में सहमत करने का प्रयास करेंगे। क्लाएसेंस और अन्य (2010) के अनुसार ''अधिकांश देशों में वित्तीय सेवा उद्योग में बड़े स्तर के न्यस्त स्वार्थ हैं और इसलिए इस प्रक्रिया के अंतिम परिणाम को राजनीतिक लॉबी महत्त्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करेगी।'' हाल के संकट ने इसे रेखांकित किया है कि बासेल ढाँचे के तहत प्रचलित व्यष्टि-विवेकपूर्ण पर्यवेक्षण प्रणालीगत जोखिम की रोकथाम के लिए पर्याप्त नहीं है। पर्यवेक्षण के ढाँचे में समष्टि-विवेकपूर्ण उपायों को शामिल करने की आवश्यकता निर्विवाद है। संभवत: जिन नुस्खों की सिफारिश की जा रही है, वे सर्वथा नये नहीं हैं और अनेक केंद्रीय बैंक और वित्तीय नियंत्रक वित्तीय स्थिरता निर्धारण और समष्टि विवेकपूर्ण

पहलुओं के सूक्ष्म संदर्भों से जुड़े कार्यों में लगे रहे हैं। आवश्यकता इस प्रक्रिया को रूपाकार देने और सुदृढ़ बनाने की है। वे संभावी समष्टि-विवेकपूर्ण उपकरण जिन्हें और भी खोजा जा सकता है, उनमें अधिक सरल संकेतकों वाले ऐसे जोखिम आधारित पूंजीगत उपायों पर विचार करना, जिनका लक्ष्य तुलनपत्र के बाहर के ऋण जोखिमों के प्रति अधिक संवेदनशीलता सहित लीवरेजों की निर्मित को आंकना हो; वे पूंजीगत आवश्यकताएं जिन्हें वित्तीय चक्र में समायोजित किया जाये; ऋण-हानि प्रावधान संबंधी वे मानक जो सभी उपलब्ध साख सूचना को समाविष्ट कर लें; जोखिम और मार्जिन आवश्यकताओं के निर्धारण के लिए अधिक लंबी अवधि वाले ऐतिहासिक नमूनों का उपयोग; और बंधकों के लिए मूल्य के समक्ष ऋण अनुपातों पर अधिक एकाग्रता - ये सभी शामिल हैं। इस संदर्भ में वास्तविक चुनौती ऐसे महत्त्वाकांक्षी सुधार कार्यक्रम के बारे में बाजार सहभागियों को इसके लिए सहमत करना होगा। सच तो यह है कि विभिन्न हलकों में यह माना जा रहा है कि वित्तीय व्यवस्था में सुधार लाने की अत्यावश्यकता और जोर धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। आसान होती स्थितियों ने असहमत स्वरों को सुविधा और गुंजाइश प्रदान कर दी है। बाजार सहभागियों के बीच से अब ऐसे स्वर अधिक मुखर होने लगे हैं जो या तो अंतर्निहित रूप से व्यवस्थागत गारंटियों या चलनिधि के मार्फत संकट से बाहर निकल आये थे या कुछ निर्णायक सुधार उपायों के तहत जिन्हें विशिष्ट जमानत मिल गयी थी। अतीत की तरह ही दो मुख्य तर्क दिये जा रहे है प्रथम, अल्पावधि के आर्थिक विकास का जोखिम विपरीत प्रभाव डाल रहा है और दूसरे, प्रमुख वित्तीय केन्द्रों में सभी को समान अवसर देने से यह भय कि इससे कारोबार अवसर समाप्त हो रहे हैं और पहले कार्य करने वालों के लिए स्पर्धा उत्पन्न हो रही है। तथापि, राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय नीति निर्माण निकायों को भावी सुधार कार्यक्रमों के बारे में अल्पकालीन और दीर्घकालीन परिप्रेक्ष्य में उनके निहितार्थों पर सर्तकता से विचार करना होगा।

7.113 विनियामकों के लिए तीसरी चुनौती वर्तमान सूचना संबंधी विषमताओं से जुड़ी हुई है। अतीत में विनियामकों में प्रति-चक्रीय उपायों को करने में उदासीनता इस तर्क पर आधारित थी कि विनियामकों को बाजार के बारे में इतनी बेहतर जानकारी नहीं थी कि क्या आस्ति मूल्य को कायम नहीं रखा जा सकेगा या यह बाजार में अस्थायी उछाल है, या क्या यह उछाल चक्रीयता की वजह से है या उसके मूल में उत्पादकता वृद्धि है। वर्तमान सोच ने अतिशय जोखिम उठाने या आस्ति में अस्थायी उझाल को रोकने के लिए प्रति-चक्रीय उपायों को करने आवश्यकता पर बल दिया है। इसे लोकप्रिय मुहावरे में "मिश्रण का कटोरा हटा लेना" कहा जा सकता है। यह एक अलोकप्रिय लेकिन हाल के संकट के अनुभव के परिप्रेक्ष्य में संभवत: आवश्यक है। इस पर आम सहमति बन रही है कि विनियामकों के पास भले ही `संतुलनकारी' आस्ति मूल्यों या व्यवसाय-चक्रों की जानकारी न रही हो, लेकिन वे उन संकेतकों को देख सकते थे जो अर्थव्यवस्था और वित्तीय बाजारों के विभिन्न हिस्सों में बन रही भेद्यताओं की ओर इशारा करते थे। यदि मिल रहे प्रमाण बढ़ती हुई अस्थिरता की दिशा में इशारा कर रहे हों तो नीति प्राधिकरणों के लिए यह अनिवार्य है कि वे अस्थिरता की ओर बढ़ती स्थिति पर नियंत्रण और उसके निवारण के लिए अग्रगामी रूप से कार्य करें। इस संदर्भ में व्यवसाय-चक्रों के बारे में समझ को बढ़ाने और परिवर्तन के बिन्दुओं की शिनाख्त के लिए तकनीकी कार्य आरंभ किया जाना चाहिए। पूंजीगत सुरक्षा में आये परिवर्तनों के लिए प्रेरक-कारक तत्वों को परिभाषित किया जाना चाहिए। तथापि, नीति निर्माताओं को विशेष रूप से उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाआंट के नीतिनिर्माताओं को व्यवसाय-चक्रों की शिनाख्त के लिए पर्याप्त आंकड़ों की कमी की अतिरिक्त समस्या का सामना करना पड़ सकता है।

7.114 चौथे, अनेक केंद्रीय बैंकरों और वित्तीय क्षेत्र के विनियामकों/विशेषज्ञों ने वर्तमान समष्टि-विवेकपूर्ण ढाँचे को मोटे तौर पर तीन क्षेत्रों में सुदृढ़ बनाने पर जोर दिया है, जो पूंजी पर्याप्तता ढाँचे, चलनिधि जोखिम प्रबंध और ओटीसी व्युत्पन्नियों के ढांचे से संबंधित हैं। आगे बढ़ते समय विनियामकों के लिए यह महत्त्वपूर्ण है कि वे विनियमों और बाजार नवाचारों के बीच एक सही संतुलन को खोजें। एक प्रमुख उद्देश्य वित्तीय संस्थाओं की निगरानी और बाजारों के बीच के अंतराल को भरना और विनियामक व्यवस्था को अद्यतन और आधुनिक बनाने से संबंधित है ताकि बाजार की वास्तविकताओं और वैश्विक एकीकरण के साथ कदम मिलाकर चला सके। एक और विनियामकों को अतिशय लीवरेजों और जोखिम उठाने पर नियंत्रण रखते हुए जोखिमों की शिनाख्त के लिए पर्यवेक्षकों की क्षमता को बेहतर बनाने की आवश्यकता है; दूसरी ओर उन्हें घरेलू-मेजबान पर्यवेक्षण के समन्वयन की चुनौती का सामना करना पड़ सकता है। महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्वों को अधिराष्ट्रीय निकायों को अंतरित करने में राष्ट्रीय प्राधिकरणों के विरोध की परिणति पुन: असम्बद्ध और भेद्य विनियामक ढाँचों में हो सकती है। अत: कुछ सबक बहुत स्पष्ट और सरल प्रतीत होते हैं लेकिन वास्तव में उन्हें कार्यान्वित करना काफी चुनौतीपूर्ण होता है।

7.115 संक्षेप में, नीतिनिर्माताओं के सामने वित्तीय व्यवस्थाओं को इस रूप में आगे बढ़ाने और पुनर्गठित करने की चुनौती है कि वे वित्तीय स्थिरता और वृद्धि को प्रोत्साहित कर सकें। वित्तीय विनियामक ढाँचे का कायाकल्प करने की आवश्यकता है। हाल के संकट से सामने आयी कमजोरियों के संदर्भ में नीतिनिर्माताओं को उनके अपने देशों में अमल में लाये जा रहे विनियामक नमूनों की पर्याप्तता की सावधानी से परीक्षण करने की आवश्यकता हो सकती है। इसी प्रकार, विनियामकों को यह भी सावधानी से निर्धारित करना होगा कि विनियमों की किस हद तक आवश्यकता है क्योंकि नये ढाँचे का क्रियान्वयन नपे-तुले ढंग से सतर्कतापूर्वक किया जाना है और संकट से बहाली की प्रक्रिया पर असर डालने वाली किसी भी संभावना को दूर करना है। किसी विनियामक कदम का सावधानीपूर्वक लागत-लाभ विश्लेषण करना इसलिए और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि अधिकांश प्रमुख अर्थव्यवस्थाएं अभी भी आर्थिक बहाली की ओर प्रारंभिक चरण में हैं। यह सुनिश्चित करना कि वित्तीय विनियम और पर्यवेक्षण वित्तीय नवाचारों के अनुरूप हैं, नीति प्राधिकरणों के समक्ष एक चुनौतीपूर्ण कार्य होगा। विनियमों के समुचित स्तर और वित्तीय क्षेत्र में सरकार की भूमिका का निर्धारण नीतिनिर्माताओं के लिए एक विकट कार्य बन सकता है। इसी प्रकार, आर्थिक विकास के अलग-अलग स्तरों के विभिन्न नमूनों को परिभाषित करना भी कठिन है। ऊपर उल्लिखित मुद्दे एक महत्त्वाकांक्षी कार्यक्रम की मांग करते हैं और इसके लिए न केवल राष्ट्रीय विनियामकों और पर्यवेक्षकों की सक्रिय सहभागिता आवश्यक होगी, बल्कि बासेल समितियों, अन्तरराष्ट्रीय मानक-निर्धारक एजेंसियों, वित्तीय स्थिरता बोर्ड और अन्य सम्बद्ध क्षेत्रीय और अन्तरराष्ट्रीय निकायों की भी आवश्यकता होगी। इसमें अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के लिए भी एक विस्तृत निगरानी अधिदेश की आवश्यकता होगी।

मौद्रिक प्राधिकारियों के लिए चुनौतियाँ

7.116 केंद्रीय बैंकों के लिए एक सबसे अधिक चुनौतीपूर्ण कार्य यह है कि उनकी समष्टि-आर्थिक नीतियों का प्रबंध वैश्वीकरण से मिली चुनौतियों के परिप्रेक्ष्य में किस तरह से किया जाये। केंद्रीय बैंकों के लिए वैश्वीकरण को समझना बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि वैश्वीकरण अनेक मार्गों से, जैसे कि मुद्रास्फीति निर्माण की प्रक्रिया और मौद्रिक संचरण तंत्र के मार्फत मौद्रिक नीति ढाँचे के महत्त्वपूर्ण तत्वों को प्रभावित कर सकता है। अनुभव यह बताता है कि बाहरी परिवर्तन घरेलू समष्टि अस्थिर तत्वों को जटिल, अनिश्चित और अप्रत्याशित तरीकों से प्रभावित करते हैं और केंद्रीय बैंकों को इन पारस्परिक क्रियाओं की समझ को बढ़ाने की आवश्यकता है। तथापि, मौद्रिक नीति निर्माण में बाहरी कारकों को आंकने की चुनौती बहुविध होगी जो इस पर निर्भर करेगी कि खुलापन किस हद तक है और केंद्रीय बैंकों को दिये गये अधिदेश की प्रकृति क्या है। स्पष्ट है कि विस्तृत अधिदेशों वाले केंद्रीय बैंकों को पुन: उनकी घरेलू नीति की परिगणना करते समय बाहरी परिवर्तनों को भी हिसाब में लेना होगा। वर्तमान में यह विवाद का विषय है कि केंद्रीय बैंकों को बृहत्तर वित्तीय वैश्वीकरण को देखते हुए क्या अपने अधिदेशों की समीक्षा करने की आवश्यकता है। उदाहरण के लिए क्या केंद्रीय बैंकों का अधिदेश विशुद्ध मुद्रास्फीति को साधने के परे भी विस्तृत किया जाना चाहिए और बढ़ते हुए आस्ति मूल्यों के रूप में निर्मित होने वाले तीव्र वित्तीय उछालों की संभावना को उन्हें किस तरह से देखना चाहिए।

7.117 हाल के संकट के पीछे जो विभिन्न कारण थे, उनमें सबसे मूलभूत कारण संकट से पूर्व के समय में प्रमुख उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में अनुग्राही मौद्रिक नीति और उसी के साथ एक बढ़ायी गयी अवधि के लिए निम्न ब्याज दरों का होना था। अनग्राही मौद्रिक नीति के बने रहने का परिणाम सुदृढ़ विश्वव्यापी समष्टि-आर्थिक वृद्धि के कारण मुद्रास्फीतिगत दबावों में नहीं हुआ और 'असाधारण मंदी' की घटना से केंद्रीय बैंक इसे मूल्य स्थिरता के संदर्भ में सफलता समझते रहे। तथापि, कईयों ने इस तथ्य को अनदेखा किया कि चलनिधि की अतिशयता बढ़ते हुए आस्ति मूल्यों में दिखाई पड़ रही है, जैसे कि अमेरिका में आवास मूल्य। अब केंद्रीय बैंकों के सामने एक चुनौती सावधानीपूर्वक इस पर सोचना होगा कि क्या आस्ति मूल्य मुद्रास्फीति के नियंत्रण को उनके अधिदेश में शामिल किया जाना चाहिए। उसी समय प्राधिकारियों को यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि वित्तीय स्थिरता के उद्देश्य को उनके अधिदेश में शामिल करने से केंद्रीय बैंकों की आत्मनिर्भरता क्षीण न हो। इसी प्रकार, इसका निर्धारण करने की आवश्यकता है कि विस्तृत अधिदेश को पूरा करने के लिए क्या केंद्रीय बैंक यथोचित उपकरणों से लैस हैं। इस संदर्भ में स्माघी (2009) का तर्क है कि जब तक केंद्रीय बैंक समुचित समष्टि विवेकपूर्ण पर्यवेक्षण उपकरणों से स्पष्ट रूप से सुसज्जित नहीं हैं, उन्हें वित्तीय स्थिरता के लिए उत्तरदायी नहीं समझा जा सकता। यद्यपि, इस मुद्दे पर सर्वसम्मति नहीं है, केंद्रीय बैंकों को आवश्यक तौर अपने समष्टि-आर्थिक निर्धारण की पद्धति को सुदृढ करना होगा। यह उल्लेखनीय है कि मौद्रिक नीति के बेहतर और कुशल संचरण तंत्र के लिए वित्तीय स्थिरता एक महत्त्वपूर्ण पूर्वापेक्षा है। इस प्रकार, मुद्दा यह बन गया है

कि केंद्रीय बैंकों द्वारा उपयोग में लाये जा रहे संचरण तंत्र के मानक नमूनों में वित्तीय कारकों को कैसे शामिल किया जाये। चूंकि किसी भी एजेंसी या विनियामक को सुनिश्चित रूप से वित्तीय स्थिरता का अधिदेश नहीं है, इसलिए एक अर्थपूर्ण अवधारणा की निर्मिति और वित्तीय स्थिरता के उपायों को करना केंद्रीय बैंकों जैसे नीति प्राधिकारियों के लिए एक चुनौतीपूर्ण कार्य होगा।

7.118 गैर-पारम्परिक मौद्रिक उपायों का उपयोग करते हुए अन्य महत्त्वपूर्ण मुद्दा केंद्रीय बैंकों के लिए उनके तुलनपत्र संबंधी आशयों और अधिकाधिक प्रोत्साहन देते हुए अतिशय जोखिम उठाने के रूप में बाजार सहभागियों के लिए उत्पन्न नैतिक संकट की समस्या से जुड़ा हुआ है। हाल के संकट के दौरान अधिकांश उन्नत देशों के केंद्रीय बैंकों के तुलनपत्रों में उनके गठन में महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों के साथ भारी विस्तार हुआ। चलनिधि/अविपणनीय आस्तियों को उसमें शामिल किया गया। विशेषकर विशाल अतिशय आरक्षित निधियों के परिणामस्वरूप त्वरित साख विस्तार होता है जो मुद्रास्फीतिगत दबावों को तीव्र करता है। ये केंद्रीय बैंक के समक्ष ब्याज दर जोखिम, और सैद्धान्तिक रूप में तो साख जोखिम भी पैदा करते है। तथापि, संभव है कि आस्तियों की पुनर्बिक्री उतनी सरल न रहे। भारी घाटों को पूरा किया जा सकता है, जो कि राजनीतिक रूप से असंगत होगा और विश्वसनीयता को घटा सकता है। इसके अलावा, केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र में कुछ खास किस्म की आस्तियों की विक्रेयता का न होना सामान्य खुले बाजार परिचालनों में उपयोगी भी नहीं होगा। इससे चलनिधि प्रबंध परिचालन में बाधा पड़ सकती है और इस प्रकार मुद्रास्फीतिगत दबावों के दोबारा उभरने पर वह मौद्रिक नीति के सामर्थ्य को कम कर सकता है।

समुचित निकास रणनीतियों को बनाने की चुनौतियाँ

7.119 पिछले कई बैंकिंग संकटों की तरह वर्तमान वित्तीय शोधक्षमता संकट के प्रस्तावित समाधानों ने तीन प्रमुख तत्वों को सम्बद्ध किया है देयताओं की गारंटी देना; संस्थाओं का पुन:पूंजीकरण; और संकटग्रस्त आस्तियों को पृथक करना। तथापि, ये नीतियाँ समझौताकारी समन्वयन की चुनौतियों से परिपूर्ण हैं। एक तरफ पुनर्संरचना की क्रियाविधि उत्पादक निवेश को दोबारा आरंभ कर सकती है तो दूसरी तरफ वित्तीय सहायता की भारी लागत है। इसी प्रकार राहत पैकेज भी पूंजी के गलत आबंटन या प्रोत्साहनों में आये विकार और नैतिक संकट के जोखिमों के कारण लागतों को जन्म दे सकते हैं। इन उपायों के लिए संवितरण संबंधी प्रभाव भी अपरिहार्य हैं क्योंकि ये सामान्यतया संसाधनों को करदाताओं से शेयरधारकों की ओर अंतरित करते हैं। अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष स्टाफ के एक आकलन के अनुसार जी-20 देशों द्वारा दिये गये राजकोषीय उद्दीपकों का केवल पाँचवा हिस्सा ही स्थायी है। इसके बावजूद नीति निर्माताओं के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वे समुचित निराकरण नीतियों की रचना कर ऐसी निकास रणनीति पर विचार करें जिसमें संभावित लागत और इन नीतियों के लाभों के बीच एक सही संतुलन हो। सरकारी कर्ज को विवेकपूर्ण स्तरों तक लाने और पर्याप्त सामाजिक सुरक्षा के संजाल को बनाये रखते हुए ऐसे समायोजन को समर्थन देने के लिए राजकोषीय संस्थाओं को सुदृढ बनाने हेतु उन्नत और उभरती अर्थव्यवस्था - दोनों जगहों पर राजकोषीय प्राधिकारियों के सामने राजकोषीय समायोजन रणनीतियाँ बनाने के समय चुनौतियाँ आने की संभावना है। कुछ उभरती अर्थव्यवस्थाओं में निम्न और अधिक अस्थिर राजस्व आधारों और अल्पावधि के विदेशी कर्ज पर ज्यादा निर्भरता के कारण बड़े कर्जों के लिए बाजार की सहनशक्ति की कम होगी और इसके चलते वे ऐसे निम्नतर कर्ज अनुपात का लक्ष्य सामने रख सकती है जो कि संकट के पहले के स्तरों से भी कम हो। इसी प्रकार केंद्रीय बैंकों को जिन्हें कि बाजार की परिस्थितियों की तीव्र मांग के कारण प्रणालीगत चलनिधि प्रावधान के लिए अपने परिचालन ढाँचे का विस्तार करना पड़ा था, उन्हें साख समस्याओं के उन दीर्घकालीन परिणामों के साथ नहीं छोड़ देना चाहिए, जो कि तदर्थ उपायों के कारण उत्पन्न हो सकते हैं। अन्यथा इससे तत्काल बाद की अवधियों में उनके नीतिगत चयन विरुपित हो सकते हैं। इस प्रकार, नीति निर्माताओं को उपायों को वापस लेते समय उनके अवधारण, सामयिकता और क्रमिकता के बारे में सतर्क दृष्टिकोण अपनाना होगा।

7.120 वैश्विक संकट के प्रत्युत्तर में विश्वभर में देशों द्वारा दिये गये नीतिगत प्रोत्साहनों की अभूतपूर्व मात्रा यद्यपि परिस्थिति की तात्कालिकता से प्रभावित थी और एक बड़ी हद तक इसके कारण दूसरी विशाल मंदी का दौर नहीं आया, लेकिन इन प्रोत्साहनों की मात्रा इतनी प्रचुर रही है कि 'नयी सामान्य' स्थिति की ओर लौटते हुए निकास का प्रबंधन बहुत महत्त्वपूर्ण होगा जिससे कि दोहरी डुबकी, बाजार क्रमभंगताओं और भावी मुद्रास्फीति की स्थिति को टाला जा सके। इस संदर्भ में एक बार जब वैश्विक अर्थव्यवस्था गति पकड़ने लगेगी तो वापसी का समय और गति बहुत अधिक महत्त्वूपर्ण होगी। उत्प्रेरक उपायों से बाहर निकलने के अनुक्रम में कुछ मुद्दों पर विचार

आवश्यक है जैसे कि (i) पहले मौद्रिक नीतियों को खोला जाये अथवा राजकोषीय नीतियों को, (ii) पहले परम्परागत नीतियों से बाहर निकला जाये या गैर-परम्परागत नीतियों से और (iii) क्या एक समन्वित तरीके से बाहर निकला होगा। निकासी की गति के बारे प्राधिकारियों को विचार करना होगा कि नीतियों को शिथिल करने की प्रक्रिया आक्रामक ढंग से की जाये या क्रमबद्ध रूप में। इस तथ्य के बावजूद कि वैश्विक अर्थव्यवस्था में अपेक्षा से अधिक तीव्र गति से बहाली हो रही है, ऐसा अधिकाधिक माना जा रहा है कि संकट के बाद की निकासी का प्रबंधन संकट के समय के उस प्रबंधन से जब प्रोत्साहन दिये गये थे, कम जटिल और चुनौतीपूर्ण नहीं होगा। संकट से उबरने की प्रक्रिया के बारे में यह माना जा रहा है कि वह अभी भी कमजोर है और वह सभी देशों में एक जैसी नहीं है क्योंकि अलग-अलग देश वैश्विक एकीकरण के अलग-अलग स्तरों पर हैं इसलिए चक्रों की विभिन्न अवस्थाओं में है और वे बहाली को बनाये रखने के लिए प्रोत्साहनों पर उसी सीमा तक निर्भर भी नहीं है। इसके अलावा यूरोप के ताजे घटनाक्रम यह बताते हैं कि वैश्विक अर्थव्यवस्था में अभी भी कुछ कमजोर स्थल बचे हुए है। यद्यपि, निकास रणनीतियों की रूपरेखा के देश विशेष की परिस्थितियों के अनुसार ही रहने की अधिक संभावना है फिर भी प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण देशों की नीतिगत निकासियों के एक अन्तरराष्ट्रीय समन्वयन की आवश्यकता भी अनुभव की जा रही है। इस संबंध में नीतिगत समन्वयन की कमी से एक देश से दूसरे देश में ब्याज दरों के विभेदों के कारण अनपेक्षित ढंग से प्रतिकूल प्रभावों का छितराना पुन: केंद्रीय बैंकों के लिए चुनौतियाँ पैदा कर सकता है। निकास नीति के चुनावों से अनपेक्षित प्रतिकूल प्रभावों के छितराने की संभावना अन्तरराष्ट्रीय सुसंगतता के महत्त्व को रेखांकित करती है पर जरूरी नहीं कि वह समक्रमिकता भी हो। इसके अतिरिक्त विभिन्न नीतिगत उपायों से बाहर आने की रणनीतियों को सम्प्रेषित करना भी चुनौतीपूर्ण कार्य होगा। उदाहरण के लिए राजकोषीय नीतिगत उपायों से निकास की समय से पहले सूचना बाजार में भरोसे को क्षति पहुँचा सकती है और पुन: सामान्य होने की चिंताओं को और बढा सकती है। अत: नीतिनिर्माताओं के लिए यह एक चुनौतीभरा कार्य होगा कि निकास रणनीतियों के बारे में क्या और कैसे सम्प्रेषित किया जाये। कुछ नीतिगत उपायों की निकासी के बारे में असामयिक या समय से पहले सम्प्रेषण वांछनीय नहीं होगा और इस संबंध में नीतिनिर्माताओं को एक सावधानीपूर्वक निर्धारण करने की आवश्यकता है।

7.121 उपरोक्त चर्चाएं यह बताती हैं कि इस समय एक चिंता यह है कि प्रोत्साहन पैकेजों के रूप में विश्वभर में दिये गये अभूतपूर्व मौद्रिक समझौतापरक समन्वयन से निकासी के नपे-तुले उपाय कैसे किये जाएं। एक ओर जबकि मौद्रिक प्रोत्साहनों को समय से पहले वापस लेना बहाली की प्रक्रिया को पटरी से उतार सकता है, दूसरी ओर विलम्बित कार्रवाई से मुद्रास्फीति की अपेक्षाएं निर्मित हो सकती हैं। इसलिए निकासी की रणनीति को बनाते समय केंद्रीय बैंकों के सम्मुख प्रमुख चुनौती वृद्धि और मुद्रास्फीति के बीच संतुलन स्थापित करना होगी। यह उल्लेखनीय है कि कुछ केद्रीय बैंकों (उदाहरण के लिए रिज़र्व बैंक ऑफ आस्ट्रेलिया, पिपुल्स बैंक ऑफ चाइना, भारतीय रिज़र्व बैंक और बांकों सेन्ट्रल डो ब्राजील) ने मौद्रिक नियंत्रण बढ़ाने के उपाय आरंभ कर दिये हैं।

7.122 भारतीय संदर्भ में राजकोषीय और मौद्रिक निकासियों में समन्वयन पर मौद्रिक नीति 2009-10 की तीसरी तिमाही समीक्षा (29 जनवरी 2010) में जोर दिया गया था। मौद्रिक सहायता को वापस लेना तब तक प्रभावी नहीं हो सकता जब तक कि सरकारी उधारों की प्रवृत्ति में भी बदलाव नहीं हो जाता। इस बात के संकेत दिये गये थे कि भले ही सरकारी उधार 2008-09 और 2009-10 के दौरान आकस्मिक रूप से बढ़ गये थे उनका बहुत सारे ऐसे उपायों से प्रबंधन किया जा सका था जिन्होंने चलनिधि को सहारा दिया। चलनिधि में वृद्धि के वे विकल्प 2010-11 के दौरान उसी हद तक उपलब्ध नहीं होंगे। इतना ही नहीं, कुछ अतिरिक्त दबाव भी होंगे। मुद्रास्फीति के दबाव रहेंगे और निजी साख की मांग और भी अधिक होगी क्योंकि ऐसी साख के सूखते जाने की आशंका वास्तविकता बन रही होगी। इसी प्रकार, अल्पावधि के आर्थिक प्रबंधन और मध्यम अवधि की राजकोषीय स्थिरता दोनों के लिए राजकोषीय सुदृढ़ीकरण की राह पर लौटने के महत्त्व को रेखांकित करते हुए इसमें निम्नलिखित बातों की आवश्यकताओं पर जोर दिया गया है (i) राजकोषीय सुदृढ़ीकरण की राह को बताना और (ii) कर नीतियों और खर्च के दबावों की एक मोटी सी परिधि को स्पष्ट करना जो कि इस राह को परिभाषित कर सके। रिज़र्व बैंक ने विस्तारवादी मौद्रिक नीति से निकास के पहले चरण की घोषणा अक्तूबर 2009 में मौद्रिक नीति की दूसरी तिमाही समीक्षा में की जब उसने कुछ क्षेत्र - विशिष्ट सुविधाओं को समाप्त करने और अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) को संकट-पूर्व के स्तर पर लाने का निर्णय लिया। वर्तमान वैश्विक और घरेलू समष्टि-आर्थिक स्थितियों, दृष्टिकोण और जोखिमों की पृष्ठभूमि में इस बात का संकेत दिया गया कि वर्तमान नीतिगत अवस्थिति को रचने वाले कारक तत्वों में एक कारक यह है

कि पुन: सामान्य स्थिति की ओर लौटने का सुदृढ़ीकरण मौद्रिक नीति की अवस्थिति एक सुस्पष्ट और सुनिश्चित परिवर्तन की ओर इंगित करे जो कि 'संकट के प्रबंधन' से 'पुन: बहाली का प्रबंधन' हो और यह आवश्यक है कि इस प्रक्रिया को और आगे बढ़ाया जाये। तदनुसार, बाद में और भी मौद्रिक नियंत्रण उपाय किये गये।

अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा व्यवस्था के लिए चुनौतियाँ

7.123 संकट के बाद के समय में कुछ क्षेत्रों में एक आरक्षित मुद्रा के रूप में डालर की भूमिका और संभावित वैकल्पिक आरक्षित मुद्राओं के संबंध में चर्चा हुई है। यह तर्क दिया गया कि अमेरिका में आर्थिक और वित्तीय समस्याएं, विशेषकर उसके विशाल राजकोषीय असंतुलन डालर के मूल्य के लिए गंभीर जोखिम पैदा कर रही हैं और इसलिए अन्तरराष्ट्रीय व्यवस्था में अव्यवस्थित समायोजन है। आरक्षित मुद्रा से संबंधित समस्याओं को कैसे हल किया जाये इस बारे में कई सुझाव दिये गये हैं। फिलहाल तो यूएस डालर इन स्थितियों को संतुष्ट करता है और वह अन्तरराष्ट्रीय आरक्षित मुद्रा बना हुआ है। राष्ट्रों की आधिकारिक आरक्षित निधियों में यूएस डालर का हिस्सा उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की आरक्षित निधियों में हुई विशाल वृद्धियों के बावजूद पिछले 30 वर्षों में स्थिर रहा है। वैश्विक स्तर पर, विदेशी मुद्रा लेन-देनों का एक बड़ा हिस्सा यूएस डालर में होता है। इसी प्रकार, उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के व्यापार के एक बड़े हिस्से का बीजक यूएस डालर में बनता है। अत: वर्तमान में यूएस डालर का कोई विकल्प दिखाई नहीं देता और यह वैश्विक आरक्षित मुद्रा बना रहेगा। इसके बावजूद, वर्तमान व्यवस्था की कमियों को लेकर कुछ सहमतियाँ बन रही हैं। अन्तरराष्ट्रीय चलनिधि का प्रबंधन एक बुनियादी असंतुलन पर आधारित है, अर्थात, जबकि सकल घरेलू उत्पाद में अमरीकी प्रतिनिधित्व 25 प्रतिशत है, डालर केंद्रीय बैंक की अन्तरराष्ट्रीय चलनिधि के 65-75 प्रतिशत का प्रतिनिधित्व करता है। इसका अर्थ यह कि अन्तरराष्ट्रीय चलनिधि के प्रबंधन में राष्ट्रीय मुद्राओं पर अनुचित निर्भरता है। अत: अस्थिरता के हाल के दौर का पुन: घटित होना वैश्विक मौद्रिक व्यवस्था में आकस्मिक विच्छिन्न समायोजनाओं के बारे में अनिश्चितताओं को बढ़ाता है। इस संकट के दौरान वैश्विक असंतुलन भले ही किसी हद तक कम हो गये हों लेकिन वे सुलझाये नहीं गये हैं। यह बहुत कुछ अमरीका और प्रमुख उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की मौद्रिक नीतियों पर निर्भर करेगा। कार्नी (2009) के अनुसार ''चूंकि अलग-अलग वृद्धि और मुद्रास्फीति की संभावनाओं के कारण भिन्न नीति-मिश्रणों की आवश्यकता होती है। ऐसा नहीं हो सकता कि जो मौद्रिक नीति अमेरिका के लिए उपयुक्त हो, वह अन्य देशों के लिए भी उपयुक्त होगी। .... यदि इष्टतम मौद्रिक नीति अवस्थिति में यह भिन्नता बढ़ती है तो व्यवस्था पर दबाव बढ़ते जायेंगे।'' इसका परिणाम विनिमय दरों पर, विशेषकर डालर पर होगा और वह उभरते बाजारों के लिए चुनौतियाँ पैदा करेगा। अत: अन्तरराष्ट्रीय मौद्रिक सुधार को हाल के संकट के टिकाऊ समाधान के एक अविभाज्य तत्व के रूप में देखा जाना चाहिए। एक आरक्षित मुद्रा के रूप में वैकल्पिक मुद्रा को इस बल पर उभरना होगा।

व्यापार संरक्षणवाद के निवारण की चुनौतियाँ

7.124 1930 के दशक में विशाल मंदी के अनुभव ने यह दर्शाया कि प्रमुख उन्नत अर्थव्यवस्थाओं ने संरक्षणवादी उपायों का सहारा लिया था। उन्होंने भारी मुद्रा अवमूल्यन किया, विनिमय प्रतिबंध लगाये, आयात शुल्क दर बढ़ा दी और आयात कोटा आरंभ किये। परिणामस्वरूप 1920 और 1933 के बीच वैश्विक व्यापार में 25 प्रतिशत की गिरावट आयी। हाल के संकट के दौरान हालांकि अक्तूबर 2009 और जनवरी 2009 के बीच विश्व व्यापार की मात्रा में 17 प्रतिशत की गिरावट आयी, पर यह संरक्षणवादी उपायों से भिन्न अन्य कारणों से थी। इस सच्चाई के बावजूद कि हाल के संकट के दौरान अधिकांश देश महत्त्वपूर्ण संरक्षणवादी उपायों से दूर रहे, यह माना गया है कि यदि प्रमुख उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में नौकरियों का खत्म होना जारी रहता है तो वे संरक्षणवादी उपाय दोबारा उभर सकते हैं। चूंकि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में भारी बेरोजगारी बनी हुई है, एक बड़ी चिंता, जिसे अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (2010 ए) ने रेखांकित किया है, वह यह है कि अस्थायी बेरोजगारी एक दीर्घकालीन बेरोजगारी की स्थिति में बदल सकती है। चूंकि यूनान के नये संकट के पूरे यूरो क्षेत्र में फैलने का खतरा बना हुआ है, व्यापार संरक्षणवाद नीतिनिर्माताओं के लिए पुन: एक नीतिगत उपकरण बन सकता है। इसके अलावा, यूरो का मूल्यह्रास अमरीका और चीन जैसे बड़े व्यापारिक देशों की स्पर्धात्मकता को घटायेगा जिससे वे कुछ संरक्षणवादी उपाय करने को भी विवश हो सकते हैं।

7.125 इस संदर्भ में निकास रणनीतियों के समय के महत्त्व पर जोर दिया गया है। हेन एंड मेक्डोनाल्ड (2010) के अनुसार "जब राजकोषीय, मौद्रिक और वित्तीय क्षेत्र के प्रोत्साहन उपायों को हटा लिया जाता है तो प्रभावित प्रतिष्ठान और उद्योग व्यापार संरक्षणवाद की मांग करना आरंभ कर सकते हैं। उच्चतर पण्य मूल्य यह जोखिम लाते हैं कि कुछ देश अपने पण्य निर्यातों पर कर या प्रतिबंध लगायेंगे - ऐसा जोखिम जो 2007-08 के खाद्यान्न मूल्य संकट के दौरान प्रदर्शित हुआ था। और अंत में, कुछ उभरते बाजारों में पूंजी आगमनों की लहर से मुद्रा-मूल्य में महत्त्वपूर्ण वृद्धि हुई है। नयी विनिमय दर की उपयुक्तता जो भी हो, इससे निर्यातकों की स्पर्धात्मक स्थिति और निर्यात - स्पर्धात्मक घरेलू क्षेत्र पर जकड़बंदी बन सकती है और वह आयात संरक्षण और निर्यात सहयोग के लिए दबाव पैदा कर सकता है।" ऐसा माना गया है कि ऐसे संरक्षणवादी उपाय वैश्विक आर्थिक पुन:बहाली प्रक्रिया को कमजोर कर सकते हैं। अत: यह नीति निर्माताओं के लिए एक चुनौती है कि वे आने वाले समय में जब सर्वाधिक उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में बेरोजगारी के बहुत अधिक रहने की संभावना है, वे जहाँ तक हो सके, प्रत्यक्ष या परोक्ष संरक्षणवादी उपायों से बचें।

XI. निष्कर्षात्मक टिप्पणियाँ

7.126 उपरोक्त चर्चा रेखांकित करती है कि वैश्विक वित्तीय खलबली और उसके परिणामस्वरूप विशाल मंदी के मूल कारण काफी व्यापक और जटिल थे। हाल के संकट के आरंभ होने के बाद से उसके विभिन्न कारणों का विश्लेषण करने वाला साहित्य प्रचुर मात्रा में है। निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि संकट के कारण हमें सबक देते हैं और उनका कार्यान्वयन राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय स्तरों पर नीतिनिर्माताओं के लिए चुनौतीपूर्ण कार्य हो सकता है।

7.127 संकट के लिए जिम्मेदार कारणों के दायरे में अतिशय लीवरेजों और जोखिम उठाने की इच्छा, जिसे लंबे समय तक दी गयी असाधारण निम्न ब्याज दरों से और भी बढ़ावा मिला तथा विशाल वैश्विक असंतुलन; जोखिम प्रबंध की दोषपूर्ण पद्धतियाँ, अनियंत्रित वित्तीय नवाचार, निवेशकों के लिए समुचित सावधानी की कमी तथा विनियामक और पर्यवेक्षण व्यवस्थाओं में मौजूद कमजोरियों का समावेश है। कैरूआना (2009) के अनुसार यदि इतिहास मार्गदर्शक है तो हम पाते हैं कि भीड़ का भेड़िया-धँसान बहुत सामान्य है और जब चीजें अच्छी घट रही होती हैं तो लोगों में अत्याधिक सीमित दृष्टि और अति उल्लास की प्रवृति होती है। वे चेतावनी देते हैं कि आकुलता का दौर समाप्त होते ही फिर से एक उछाल का दौर आयेगा, जिसकी विशेषता जोखिम उठाने की अभिलाषा, त्वरित आशावाद और अल्पकालीन लाभों पर अतिशय एकाग्रता में होगी। इसलिए यह प्रासंगिक है कि आवश्यक सुधारात्मक कार्रवाई पर विचार किया जाए ताकि भविष्य में ऐसे संकटों की पुनरावृति को रोका जाए और जब वे आते हैं तो उनके प्रभावों को न्यूनतम किया जाये।

7.128 पूर्ववर्ती चर्चा उन मूल मुद्दों पर केंद्रित है जिन पर नीतिनिर्माताओं को विचार-विमर्श करना है। हाल के संकट से उभरे कुछ मुद्दों पर हो सकता है कि पूर्ण सहमति न बन पाये, लेकिन कुछ पहलू इतने स्पष्ट है कि उन पर कार्रवाई करनी होगी। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, जो सबक सीखे जाने हैं वे कारणों में अनतर्निहित हैं। लेकिन बहुत सारा कार्य इन सबकों को उन विशिष्ट कार्रवाइयों में ढालने में है जो ऐसे संकट की भावी पुनरावृति को टाल सकें और उसे न्यूनतम कर सकें। यह आवश्यक है कि इस संकट से जो सबक अभिनिर्धारित किये गये हैं वे वास्तव में सीखे जायें और उनके अनुरूप सार्वजनिक नीतियाँ और बजार व्यवहार अपनाये जाएं। वैश्विक वित्तीय संकट से सबक सीखना और उन्हें अपनाना वास्तव में न केवल उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के नीति निर्माताओं के लिए एक चुनौती होगा, बल्कि उन उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं के लिए भी जिनकी नीतियाँ वैयक्तिक रूप से और सामूहिक रूप से आने वाले समय में वैश्विक अर्थव्यवस्था और वित्तीय प्रणाली के विकास को अधिकाधिक प्रभावित करेंगी।

7.129 पिछला अनुभव यह बताता है कि संकट जरूरी सुधारों के लिए गुंजाइश और सकारात्मक रूख पैदा करता है। यद्यपि संकट कष्टप्रद होते हैं क्योंकि उनके परिणामस्वरूप उत्पादन की हानि होती है और उससे कल्याणकारी गतिविधियाँ प्रभावित होती हैं पर उसी समय वे भविष्य में ऐसे दबावों के लिए प्रतिरोध के उपयों को पुनर्गठित करने और उन्हें सुदृढ़ करने का अवसर भी प्रदान करते हैं। अत: यह अनिवार्य है कि उन क्षेत्रों को निर्धारित किया जाए जिनमें नीतिगत ढाँचे को विनियामकों के दृष्टिकोण से पुन: अभिकल्पित करने की आवश्यकता है और समस्या के उन क्षेत्रों की पुनरीक्षा की जाए, जिन्हें बैंकिंग और वित्त के प्रतिभागियों द्वारा सर्वोत्तम तरीके से सुलझाया जा सकता है। समस्या की अतिरेकपूर्ण प्रकृति को देखते हुए उसके लिए अतिरेकपूर्ण कार्रवाई की आवश्यकता पड़ सकती है। तथापि, सुधारों और नये विनियमों पर तर्कपूर्ण ढंग से और सावधानीपूर्वक विचार-विमर्श करने की आवश्यकता है। सर्तकता इस बात की होनी चाहिए कि अतिरेकपूर्ण नियंत्रण से कुशलता को क्षति पहुँचने जैसी भारी

कीमत न चुकानी पड़े और दूरगामी व व्यापक नियंत्रणों से बाजार ढाँचे को बचाया जाए। तथापि, इन मुद्दों पर विनियामकों के दृष्टिकोण से भारत में और अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर सावधानीपूर्वक चर्चा करने की आवश्यकता है।

7.130 यह अभी भी बहस का विषय है कि आवास की कीमतों में तीव्र उछाल से निपटने का सर्वश्रेष्ठ उपाय विनियामक नीति है या मौद्रिक नीति। तथापि, नये वैश्विक नीतिगत वातावरण के संदर्भ में मोटे तौर पर यह सबक मिला है कि नीतिनिर्माताओं को एकीकृत दृष्टिकोण पर ध्यान देना चाहिए जिसका लक्ष्य सुदृढ़ीकरण और बेहतर ढंग से समष्टि-आर्थिक, संरचनागत और नियंत्रक नीतियों को परस्पर जोड़ते हुए संभाव्य वृद्धि को बढ़ाना हो और अन्तरराष्ट्रीय सहायोग में वृद्धि करते हुए पोषित न किये जा सकने वाले असंतुलनों को रोकना हो। अस्थिर वित्तीय बाजारों के कारण केंद्रीय बैंकों और सरकारों को बहुत सारे ऐसे उपाय करने पड़े थे जो अंतिम उधारदाता (एलओएलआर) के रूप में उनकी परम्परागत भूमिका से बाहर थे। केंद्रीय बैंकों का वित्तीय निकायों को बचाने के लिए सामने आना और अंतिम उधारदाता (एलओएलआर) की अपनी पुरानी अवधारणा से बाहर निकलना वित्तीय बाजारों की बिगड़ती हुई स्थितियों के कारण आवश्यक हो गया था। यद्यपि, केंद्रीय बैंकों की ओर से ऐसी असाधारण सहायता निःस्संदेह संकट के प्रबंधन में बहुत उपयोगी रही, पर अत्याधिक जोखिम उठाने के लिए बैंकों और बाजार प्रतिभागियों के लिए प्रोत्साहन बढ़ाने से एक नैतिक संकट की समस्या भी उभरी है। अंतिम उधारदाता (एलओएलआर) की अवधारणा को विस्तृत किये जाने से बाजार प्रतिभागियों को ऐसा लग सकता है कि अगली बार जब वे अधिक लाभ अर्जन के लिए और भी अधिक जोखिम भरे परिचालन करेंगे तब केंद्रीय बैंक उन्हें चलनिधि में निधि प्रदान करने और उनके प्रतिपक्षों की सहायता करने के लिए तैयार खड़े रहेंगे। इससे केंद्रीय बैंकों के सामने विकास को समर्थन देने और नये, तेजी से विकसित होते वित्तीय बाजारों के प्रति एक संतुलित रवैया सुनिश्चत करने का चुनौतीभरा कार्य उपस्थित हो गया है।

7.131 हाल के संकट ने जिन अल्पावधि और मध्यावधि के मुद्दों को उठाया है, उसके अलावा उसने वित्तीय व्यवस्था के व्यष्टि और समष्टि दोनों प्रभाव क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण संरचनागत कमजोरियों को भी उजागर किया है और वैश्विक अर्थव्यवस्था के विकास के साथ इन्हें मध्यावधि में हल करना होगा। हाल के घटनाक्रमों ने स्पष्ट रूप से यह दर्शाया है कि वैश्वीकरण कैसे वित्तीय स्थिरता को प्रभावित करता है, अर्थात यूएस सब-प्राइम संकट से यूरोपीय संघ बाजार भी तेजी से प्रभावित हुआ और यह प्रतिभूतिकरण के माध्यम से अन्तरराष्ट्रीय पूंजी बाजारों तक भी फैल गया। इस बात को अनुभव करते हुए कि वित्तीय आघात कितनी तेजी से वैश्विक वित्तीय बाजार में संचरित हो जाते हैं, संकट को रोकने और उसके प्रबंधन के लिए बेहतर समन्वयन की अब और अधिक आवश्यकता है। अनेक घटनाक्रमों ने इसमें अपनी भूमिका अदा की थी, जिनमें जटिल बंधक समर्थित प्रतिभूतियाँ और नितान्त अपारदर्शी संरचनावाले व्युत्पन्न, भारी उत्तोलन और अपर्याप्त जोखिम प्रबंध शामिल हैं। इस संकट से वैश्विक वित्तीय व्यवस्था में समष्टि-चलनिधि जोखिम का महत्त्व खुलकर सामने आ गया है और इसकी वजह से इसका निरन्तरता के आधार पर नियंत्रित करने और पर्यवेक्षण करने की आवश्यकता रेखांकित हुई है। अतः निजी क्षेत्र और वित्तीय विनियामक, दोनों को ही जोखिम निगरानी और नियंत्रण की अपनी क्षमता को सुधारना होगा। जैसा कि स्क्वाम लेक रिपोर्ट (जून 2010) में कहा गया है, सूचना संरचना का निर्माण और संकट के पनपने को सरकार द्वारा देख पाने की स्थिति महत्त्वपूर्ण है।

7.132 केंद्रीय बैंकों को समष्टि-आर्थिक निर्धारण पद्धतियों संबंधी अपनी पर्याप्तता और नीतिगत प्रत्युत्तर के संबंध में अपनी भूमिका की समीक्षा करने की आवश्यकता है। नियंत्रण और पर्यवेक्षण के संबंध में एक व्यवस्था-वार दृष्टिकोण की आवश्यकता है। वास्तव में, अनेक लोगों का यह तर्क है कि इस बात को जाँचने की जरूरत है कि क्या प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं को केंद्रीय बैंक के नियंत्रण के अधीन लाया जाये। इसके अलावा, न केवल वैश्विक स्तर पर अन्तरराष्ट्रीय मानक स्थापना करने वाले निकायों के बीच अधिक समन्वयन की आवश्यकता है, बल्कि राष्ट्रीय स्तर पर भी विनियामकों और पर्यवेक्षकों के बीच समन्वयन आवश्यक है। उदाहरण के लिए, सीमाओं के पार लेखा सिद्धान्तों के एक सामान्य आधार की आवश्यकता है। वैश्विक बाजारों में अब यह वांछनीय नहीं रहा कि ऐसी वैश्विक संस्थाएं हों जो अपने देशों में लेखा और प्रकटीकरण के भिन्न मानक अपनाती हों। जैसा कि पिछले खंडों में चर्चा हुई है, वित्तीय नवाचारों ने वित्तीय बाजारों की अपारदर्शिता को बढ़ाया है। अतः विनियामकों और पर्यवेक्षकों को वित्तीय व्यवस्था के विभिन्न घटकों में पारदर्शिता को बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। इसके अतिरिक्त चाहे उन्नत देश हों या उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएं - दोनों जगहों पर राजकोषीय स्थिरता को सुनिश्चित करने के लिए मजबूत संस्थागत ढाँचों पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

7.133 संकट को निर्मित करने में आसान मौद्रिक नीति का ठीक ठीक क्या योगदान था, इस पर यद्यपि मतैक्य नहीं है, पर इस बारे में कोई संदेह नहीं है कि संकट को सुलझाने में मौद्रिक नीति की एक बड़ी भूमिका है। अब इस बात को अधिकाधिक अनुभव किया जा रहा है कि मौद्रिक नीति और आस्ति मूल्यों के बीच के संबंध पर पुन: विचार करने की आवश्यकता है। केंद्रीय बैंकों को प्रणालीगत जोखिमों के लिए नये उपायों को विकसित करना होगा ताकि वास्तविक और अटकलबाजी पर आधारित उछाल के बीच के फर्क को अधिक स्पष्ट किया जा सके। मौद्रिक नीति प्राधिकारियों के लिए अन्य महत्त्वपूर्ण चुनौतियाँ निम्नलिखित होंगी (i) वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित करना, यद्यपि मूल्य स्थिरता को मौद्रिक नीति का प्रमुख उद्देश्य बना रहना चाहिए; (ii) केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र का आकार; (iii) राजकोषीय नीति के साथ समन्वयन; (iv) विभिन्न हितधारकों के साथ प्रभावी सम्प्रेषण; और (v) वित्तीय क्षेत्र और वास्तविक अर्थव्यवस्था को स्थिरता देना।

7.134 आगे की ओर देखने पर, विश्वभर में अभूतपूर्व मौद्रिक समर्थनकारी उपायों से सतर्कतापूर्वक निकास अब एक सबसे महत्त्वपूर्ण चुनौती है। प्रोत्साहन उपायों को समेटने की विश्वसनीय योजनाएं और दीर्घावधि वाली निर्वहन योग्य राजकोषीय स्थितियों की बहाली को विस्तार देने की आवश्यकता है। इस संदर्भ में, यह महत्त्वपूर्ण होगा कि वैश्विक अर्थव्यवस्था कितनी तजी से सामान्य स्थिति की ओर लौटती है। अन्यथा, निरन्तर मंदी का जोखिम राज्य देशों की भेद्यता को और गंभीर बनायेगा, विशेषकर ऐसे देशों की, जिनके सकल घरेलू उत्पादन की तुलना में कर्ज के स्तर बहुत ऊँचे हैं और जिनकी वित्तीय क्षेत्र के लिए भारी आकस्मिक देयताएं हैं। वास्तव में, राष्ट्र-सत्ताओं के कर्ज की समस्याएं यूनान जैसे देशों के मामले में स्पष्ट भी होने लगी हैं, जहाँ ऋण-सकल घरेलू उत्पादन का अनुपात 115 प्रतिशत हो गया है, जो कि निरन्तर बढ़ते हुए राजकोषीय घाटे और गिरते हुए सकल घरेलू उत्पादन की वजह से हैं। इस बात की चिंताएं हैं कि ऐसा संकट यूरोपीय संघ की अन्य भेद्य अर्थव्यवस्थाओं तक भी फैल सकता है। ऐसे देशों को यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि वे कर्ज को पोषित करने की दिशा में विश्वसनीय वचनबद्धताएं करते हैं। इसलिए अन्य भेद्य देशों को यह सुनिश्चित करना है कि उनके द्वारा की गयी नीतिगत पहल से भारी ऋण शोधन जोखिम पैदा नहीं हो रहे हैं। नीतिनिर्माताओं के लिए यह चुनौती भरा कार्य होगा कि वे जब बाजार स्थितियाँ अनुमति दें और आर्थिक परिदृश्य एक ठोस रूप से सामान्य स्थिति की ओर लौटता नज़र आये तो वे संकट में हस्तक्षेप के लिए दिये गये प्रोत्साहनों को समेटने की एक विश्वसनीय और सुसंगत रणनीति प्रारंभिक अवस्था में ही विकसित करें। इस संदर्भ में दो मुख्य चुनौतियाँ हैं। पहली तो यह कि यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि निरन्तर दी जा रही अल्पावधि की सहायता प्रोत्साहनों को विरुपित न करे और मध्यावधि में हानिकारक प्रभाव डालते हुए सार्वजनिक तुलन पत्रों के लिए संकट पैदा न करने लगे। दूसरी यह कि राजकोषीय प्राधिकारियों को सुनिश्चित करना है कि उनके द्वारा वापसी के कदमों का समय और क्रमबद्धता वृद्धि की संभावनाओं को अवरुद्ध न करे। इसके लिए एक सुसंगत क्रमबद्धता और मौद्रिक, विनियामक व राजकोषीय प्राधिकारियों से स्पष्ट सम्प्रेषण आवश्यक है।

7.135 ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ उभरती हुई अर्थव्यवस्थाएं पहले की संकटों से मिले सबक से अपने बजटों को सुदृढ़ बनाने, सार्वजनिक कर्ज को घटाने, चालू खाते के घाटे को सीमित करने और विदेशी मुद्रा ऋण जोखिमों का अधिक सावधानी से प्रबंध करने के लिए प्रेरित हुईं, जिसके परिणामस्वरूप उनकी भेद्यता कम हुई और नीतिगत गुंजाइश बढ़ी। यह हाल के संकट के दौरान अत्यंत लाभदायक साबित हुआ है। इसके बावजूद हाल के संकट से उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं के लिए जो मूल संदेश आया है वह यह है कि वे वित्तीय क्षेत्र में सुदृढ़ नीतिगत ढाँचों को जारी रखें, वैश्विक मांग को संतुलित करने के लिए पर्याप्त निवेश क्षमताएं उत्पन्न करें, भविष्य में विवेकाधीन नीति के लिए बेहतर गुंजाइश हेतु राजकोषीय सुदृढ़ता की दिशा में निरन्तर प्रयास करें और पूंजी खाते के उदारीकरण के संबंध में अपने दृष्टिकोण की समीक्षा करें। हाल के समय में वैश्विक घटनाओं से इस तर्क को बल मिला है कि उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएं उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में उत्पन्न हुए संकट के परिणामों से स्वयं को अछूता नहीं रख सकतीं। तथापि, इस प्रभाव को वित्तीय और राजकोषीय क्षेत्रों में सुदृढ़ नीतिगत कदमों के द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। अपने विकास की गति को बेहतर ढंग से टिकाऊ बनाने के लिए उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं को अन्य बातों के साथ-साथ, अपनी अर्थव्यवस्थाओं की अवशोषण-क्षमताओं को भी बढ़ाना होगा, यह न केवल उनकी वृद्धि संभाव्यताओं को बढ़ाने के लिए आवश्यक है, बल्कि वैश्विक मांग में संतुलन लाने और पूंजी आगमनों के बेहतर अवशोषण के लिए भी जरूरी है। इसके अलावा, संकट ने उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के पूंजी खाता प्रबंधन के मामले की ओर भी ध्यान खींचा है।

7.136 संकट से मिले सबकों की यह सूची सर्वांगीण और पूर्णतया अंतिम नहीं हो सकती। पर इसके बावजूद इससे वे बहुत सारे मुद्दे

उभरे हैं जिन पर नीतिनिर्माताओं को राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर बहस करने की आवश्यकता है। हाल का संकट जबकि बाजारों के बीच राष्ट्रीय सीमाओं के पार के अन्त: संबंधों को देखते हुए आर्थिक नियंत्रण में आधारभूत परिवर्तनों को प्रेरित कर सकता है, राष्ट्रीय समाधान अब पर्याप्त नहीं रहेंगे। समष्टि-आर्थिक नीतियों, व्यापार और वित्तीय नियंत्रणों पर अन्तरराष्ट्रीय सहयोग को आवश्यक बनाते हुए अधिक महत्त्वपूर्ण यह है कि हाल के संकट ने देशों को एक अवसर दिया है कि वे गहन वैश्विक समस्याओं के हल के लिए आवश्यक मतैक्य बनाने की दिशा में पहल करें। हाल का संकट एक उचित समय दे रहा है कि एक राजनीतिक इच्छा शक्ति एकत्रित कर राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर लंबे समय से अपेक्षित संरचनागत सुधारों को अपनाया जाये। नीतिनिर्माताओं को संकट से मिले सबकों की प्राथमिकता बनानी चाहिए और उन पर ऐसे समन्वित रूप से कार्रवाई करनी चाहिए कि भविष्य में ऐसे संकट की संभावना को न्यूनतम रखा जा सके।

चुनिंदा संदर्भ

II. संकट की उत्पत्ति और उसका स्वरूप

आचार्य वी. और मैथ्यू रिचर्ड्सन 2009. "कॉजेज ऑफ दि फाइनेंशियल क्राइसिस", न्यूयॉर्क विश्वविद्यालय।

एकर्लोफ जॉर्ज ए. ऐंड रॉबर्ट जे. शिलर 2009. "एनिमल स्पिरिट: हाउ ह्यूमेन साइकोलॉजी ड्राइव्स दि ईकॉनॉमी, ऐंड व्हाय इट मैटर्स फॉर ग्लोबल कैपिटलिजम", प्रिंस्टन युनिवर्सिटी प्रेस, 2009।

अन्ना एल. पी. रॉबर्ट एम टी. 2005. "फाइनेंशियल कंस्ट्रेंट्स ऐंड इंटरप्रेन्योरशिप: एविडेंस प्रॅम दि थाइ फाइनेंशियल क्राइसिस" *इकॉनॉमिक पर्सपेक्टिव*।

बाटूनंगार, सुकारेला 2002 "इंडोनेशिया बैंकिंग क्राइसिस रिजोल्यूशन:लेसन्स ऐंड दि वे फॉरवर्ड" मिमो, सेंटर फॉर सेंट्रल बैंकिंग स्टडीज़ (सीसीबीएस), बैंक ऑफ इंग्लैंड।

बैंक फॉर इंटरनेशनल सेटलमेंट्स (2009), *79 वीं वार्षिक रिपोर्ट*।

बैरो, रॉबर्ट ऐंड जे. डब्ल्यू. ली. 2003.: "ग्रोथ ऐंड इन्वेस्टमेंट इन ईस्ट एशिया बिफोर ऐंड आफ्टर दि फाइनेंशियल क्राइसिस", *सिओल जर्नल ऑफ इकॉनॉमिक्स,* खंड 16, सं 2 ।

बार्टन डॉमिनिक, न्यूवेल आर. ऐंड विल्सन जी. 2003. "डेंजरस मार्केट्स-मैनेजिंग इन फाइनेंशियल क्राइसिस"।

बर्नांके बी. 2005. "दि ग्लोबल सेविंग ग्लट ऐंड दि यूएस करेंट एकाउंट डेफिसिट", *होमर जोन्स लेक्चर, सेंट लुइस,* 14 अप्रैल 2005, www.federalreserve.gov —

_____ 2004. "दि ग्रेट मॉडरेशन" रिमार्क्स ऐट दि मीटिंग ऑफ दि ईस्टर्न इकॉनॉमी ऐसोसिएशन, वाशिंगटन, डीसी. 20 फरवरी।

_____ 1983. "नॉन मानेटरी इफेक्टस ऑफ दि फाइनेंशियल क्राइसिस इन दि प्रोपेगेशन ऑफ दि ग्रेट डिप्रेशन" *एनबीईआर वर्किंग पेपर* सं 1054 ।

बर्नांके, बेन ऐंड गर्टलर, मार्क 1990. " फाइनेंशियल फ्रैजिलिटी ऐंड इकॉनॉमिक परफॉरमेंस," *दि क्वार्टरली जर्नल ऑफ इकॉनॉमिक्स, एमआइटी प्रेस, खंड 105(1),* पृष्ठ 87-114, फरवरी।

बर्नांके, बेन एस. 2000. "ऐसेज ऑन दि ग्रेट डिप्रेशन" प्रिंस्टन, प्रिंस्टन युनिवर्सिटी प्रेस।

ब्लांकार्ड, ओलिवर जे. ऐंड स्टेनले फिशर. 1989. "*लेक्चर्स ऑन मैक्रोइकॉनॉमिक्स*", *दि एमआइटी प्रेस* (कैंब्रिज, मैसाचूसेट्स)।

बोर्डो माइकेल डी. 1986. " फाइनेंशियल क्राइसिस, बैंकिंग क्राइसिस, स्टॉक मार्केट क्रैशेस ऐंड दि मनी सप्लाई: सम इंटरनेशलन एविडेंस," इन *फाइनेंशियल क्राइसिस ऐंड दि वर्ल्ड बैंकिंग सिस्टम. ईडीएस फॉरेस्ट कॅपी ऐंड ज्याँफरी वुड,* लंदन, मॅकमिलन।

बोरियो, सी. ऐंड पी. लोवे. 2004. "सेक्युरिंग सस्टेनेबल प्राइस स्टेबिलिटी : शुड क्रेडिट कम बैक फ्रॉम दि वाइल्डरनेस?," *बीआइएस वर्किंग पेपर्स* सं. 157, जुलाई।

बोर्डो, एम. डी. बी. ईशनग्रीन, डी क्लिंगेबियल ऐंड एम. एस. मार्टिनेज़-पेरिया. 2001.'' इज दि क्राइसिस प्रॉब्लम ग्रोइंग मोअर सिवियर?'' *इकॉनॉमिक पॉलिसी* 32:51-82 ।

ब्रैके टी, बिज़ियर एम. माइकल एफ. ऐंड स्ट्रॉब आर. 2008. "ए फ्रेमवर्क फॉर ऐसेसिंग ग्लोबल इम्बैलेंसेस", *ईसीबी ओकेजनल पेपर्स सिरीज,* जनवरी ।

कैबलेरो आर. ई फारही ऐंड पी गौरिडचास. 2008.'' ऐन इक्विलीब्रियम मॉडेल ऑफ ग्लोबल इंबैलेंसेज ऐंड लो इंटरेस्ट रेट्स'', *अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू,* खंड 98, सं 1, मार्च, पीपी 358-93 ।

कैलोमिरिस, चार्ल्स डब्ल्यू. ऐंड आर. ग्लेन हबार्ड. 1989 "प्राइज़ फ्लेक्ज़िबिलिटी, क्रेडिट ऐविलेबिलिटी ऐंड इकॉनॉमिक फ्लक्युएशन्स: एविडेंस फ्रॉम दि यूनाइटेड स्टेट्स, 1984-1909" *क्वार्टरली जर्नल ऑफ इकॉनॉमिक्स* 103 (अगस्त 1989), 429-452 ।

कैलोमिरिस, चार्ल्स डब्ल्यू. ऐंड जोसेफ आर. मैसन. 2003ए. "फंडामेंटल्स, पैनिक्स ऐंड बैंक डिस्ट्रेस ड्यूरिंग दि डिप्रेशन," (विथ जोसेफ मैसन) *अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू 93*,1615-47 ।

_____ 2003बी. "कॉन्सिक्वेंसेज ऑफ बैंक डिस्ट्रेस ड्यूरिंग दि ग्रेट डिप्रेशन," *अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू 93*, 937-47 ।

कैलोमिरिस, चार्ल्स डब्ल्यू. ऐंड गैरी गॉर्टन. 1991 "दि ओरिजिन्स ऑफ बैंकिंग पैनिक्स: मॉडेल्स, फैक्ट्स ऐंड बैंक रेगुलेशन," इन आर. ग्लेन हब्बार्ड, ईडी., *फाइनेंशियल मार्केट्स ऐंड फाइनेंशियल क्राइसिस,* यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो, 107-73 ।

कैलोरिमिस चार्ल्स डब्ल्यू. ऐंड चार्ल्स एम. काह्न. 1991. 'दि रोल ऑफ डिमान्डेबल डेट इन स्ट्रक्चरिंग ऑप्टिमल बैंकिंग अरेंजमेंट्स, *अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू,* जून ।

काल्वो, सारा, ऐंड कारमेन एम. रेनहार्ट. 1996. "कैपिटल फ्लोज़ टू लैटिन अमेरिका : इज़ देयर ऐविडेंस ऑफ कंटेजियन इफेक्ट्स?," इन जी. काल्वो ऐंड एम. गोल्डस्टीन, ईडीएस. *प्राइवेट कैपिटल फ्लोज टू इमर्जिंग मार्केट्स आफ्टर दि मैक्सिकन क्राइसिस,* (वाशिंगटन : इंस्टिट्यूट फॉर इंटरनेशनल फाइनेंस)।

केप्रियो गेरार्ड ज्यूनियर, एएसएल डेमिर्गुक-कुन्ट ऐंड एडवर्ड जे. केन. 2008. "दि 2007 मेल्टडाउन इन स्ट्रक्चर्ड सिक्योरिटाइजेशन, सर्चिंग फॉर लेसन्स, नॉट स्केपगोट्स" *वर्ल्ड बैंक पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर, अक्तूबर*।

कार्मेन एम. रेइनहार्ट ऐंड केनेथ एस. रोगॉफ. "इज़ दि 2007 यूएस सब-प्राइम फाइनेंशियल क्राइसिस सो डिफरेन्ट? ऐन इंटरनेशनल हिस्टोरिकल कंपेरिज़न" *एनबीईआर वर्किंग पेपर 13761* ।

सिच्चेटी जी स्टीफन, मेरियन कोहलर ऐंड क्रिस्चियन अपर. 2009. "फाइनेंशियल क्राइसिस ऐंड इकॉनॉमिक एक्टिविटी", *एनबीईआर वर्किंग पेपर 15379,* सितंबर।

चक्रबर्ती के. सी. 2009. "ग्लोबल क्राइसिस : जेनेसिस, चैलेन्ज़ेस ऐंड अपॉर्च्युनिटीज़ अनलीश्ड" आरबीआई बुलेटिन, अक्तूबर।

चैंग रॉबर्ट और एंड्रेस वेलास्को 2001. "ए मॉडेल ऑफ फाइनेंशियल क्राइसिस इन इमर्जिंग मार्केट्स" *दि क्वार्टरली जर्नल ऑफ इकॉनॉमिक्स. मई 2001*, खंड 116, सं. 2, पृष्ठ 489-517 ।

चैंग रॉबर्ट ऐंड ए. वेलास्को. 1998ए. "दि ऐशियन लिक्विडिटी क्राइसिस" *एनबीईआर वर्किंग पेपर 6796*, नेशनल ब्यूरो ऑफ इकॉनॉमिक रिसर्च।

_____ 1998बी. "फाइनैंशियल फ्रैजिलिटी ऐंड दि एक्सचेंज रेट रेजिम" *एनबीईआर वर्किंग पेपर 6491, नेशनल ब्यूरो ऑफ इकॉनॉमिक रिसर्च,* अप्रैल।

कोरसट्टी, जी. पेसेन्टी, पी. ऐंड रूबिनी, एन. 1998. "व्हाट काज़्ड दि एशियन करेंन्सी ऐंड फाइनेंशियल क्राइसिस: दि पॉलिसी डिबेट" *एनबीईआर वर्किंग पेपर 6834* ।

डॉर्नबुश, रूडी 2001. "ए प्राइमर ऑन इमर्जिंग मार्केट क्राइसिस," *एनबीईआर वर्किंग पेपर्स* 8326, नैशनल ब्यूरो ऑफ इकॉनॉमिक रिसर्च।

इशनग्रीन बी., ए. के. रोज़ ऐंड सी वाइपलोज़ 1995. "एक्सचेंज मार्केट मेहेम: दि एंटिसिडेंट्स ऐंड आफ्टरमाथ ऑफ स्पेक्युलेटिव एटॅक्स," *इकॉनॉमिक पॉलिसी 10 (2)* पृष्ठ - 251-312 ।

आइशनग्रीन बी. ऐंड केविन एच. ओ. रूरके, 2009. "ए टेल ऑफ टू डिप्रेशन्स"।

इशनग्रीन, बैरी ऐंड रोज़, ऐन्ड्रयू के 1998. “स्टेइंग एफ्लोट व्हेन दि विन्ड शिफ्ट्स: एक्सटर्नल फैक्टर्स ऐंड इमर्जिंग मार्केट बैंकिंग क्राइसिस,” *सीईपीआर डिस्कशन्स पेपर्स 1828*, सी. ई. पी. आर. डिस्कशन पेपर्स।

इशनग्रीन, बैरी ऐंड चार्ल्स वाइप्लोज़ 1993. “दि अनस्टेबल ईएमएस,” *ब्रुकिंग्स पेपर्स ऑन इकॉनॉमिक एक्टिविटी.* वाशिंगटन: दि ब्रुकिंग इंस्टिट्यूशन।

यूरोपियन सेंट्रल बैंक. 2007. “दि इम्पैक्ट ऑफ शॉर्ट-टर्म इंट्रेस्ट रेट्स ऑन बैंक रिस्क-टेकिंग, *फाइनेंशियल स्टेबिलिटी रिव्यू,* दिसंबर, पीपी 163-67 ।

फेर्गूसन निआल 2008. “*दि ऐसेन्ट ऑफ मनी ए फाइनेंशियल हिस्ट्री ऑफ दि वर्ल्ड*”, दि पेगुंइन प्रेंस, न्यूयॉर्क।

फ्रांसिया मॅनुल रामोस 2009., “रियल ग्लोबल इम्बैलेंसेज, दि कजम्प्शन ग्लट ऐंड दि हाउसिंग बबल” बैंक ऑफ मेक्सिको।

फ्रैंकेल जेफ्रे ए. ऐंड रोज ऐंड्रयू के. 1996. “करेंसी क्रॅशेस इन इमर्जिंग मार्केट्स: एन इम्पिरिकल ट्रीटमेंट”। इंटरनेशनल फाइनेंस डिस्कशन पेपर्स, *बोर्ड ऑफ गवर्नर्स ऑफ दि फेडरल रिज़र्व सिस्टम,* नंबर 534, जनवरी।

फ्रायडमैन, मिल्टन, ऐंड आन्ना जे. श्वाट्र्ज़ 1963. “ए मॉनेटरी हिस्ट्री ऑफ दि युनाइटेड स्टेट्स” प्रिंस्टन, प्रिंस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस।

फ्रैंकलिन ऐलेन ऐंड डगलस गेल 1998. “ऑप्टिमल फाइनेंशियल क्राइसिस”, जर्नल ऑफ फाइनेंस, *अमेरिकन फाइनेंस ऐसोसिएशन,* खंड 53(4) पृष्ठ-1245-1284 ।

_____ 2000ए ‘बबल्स ऐंड क्राइसिस’ *इकॉनॉमिक जर्नल,* जनवरी।

_____ 2000बी “फाइनेंशियल कंटेजियन’, *जर्नल ऑफ पॉलिटिकल इकॉनॉमी,* 108, फरवरी।

_____ 2004, ‘फाइनेंशियल इंटरमीडियरीज ऐंड मार्केट’ *इकॉनॉमेट्रिका,* 72(4), जुलाई।

फ्लड रॉबर्ट पी. ऐंड नैन्सी पी. मारियन 1996. “स्पेक्युलेटिव एटॅक्स: फंडामेंटल्स ऐंड सेल्फ फुलफिलिंग प्रोफेसीज़,” *एनबीईआर वर्किंग पेपर्स 5789, नेशनल ब्यूरो ऑफ ईकॉनॉमिक रिसर्च,* आइएनसी ।

फ्लड रॉबर्ट पी. ऐंड पीटर एस. गार्बर. 1984. “गोल्ड मोनेटाइजेशन ऐंड गोल्ड डिसिप्लिन” जर्नल ऑफ पॉलिटिकल इकॉनॉमी, 92, फरवरी।

ग्रीनवाल्ड बी. स्टिग्लिटज़ जे.ई. 1988. “इनफॉमेशिन, फाइनेंस कंस्ट्रेन्ट्स ऐंड बिजनेस फ्लकच्युएशन्स” इन कान एम. त्सियांग एससी (ईडीएस) ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, ऑक्सफोर्ड।

जी-20 2008. “स्टडी ग्रुप ऑन ग्लोबल क्रेडिट मार्केट डिसरप्शन्स”, पेपर आस्ट्रेलिया द्वारा तैयार किया गया, अक्तूबर।

आइएमएफ. 2008. ग्लोबल फाइनेंशियल स्टेबिलिटी रिपोर्ट: *कंटेनिंग सिस्टमिक रिस्क ऐंड रिस्टोरिडग फाइनेंशियल साउंडनेस,* इंटरनेशनल मॉनेटरी फंड, वाशिंगटन, डीसी।

आइएमएफ. 2008, 2009 ए. *वर्ल्ड ईकॉनॉमिक आउटलुक क्राइसिस ऐंड रिकवरी,* अप्रैल।

_____ 2009बी. *वर्ल्ड इकॉनॉमिक आउटलुक सस्टेनिंग दि रिकवरी,* अक्तूबर।

_____ 2010 *वर्ल्ड इकॉनॉमिक आउटलुक रिबैलेंसिंग ग्रोथ,* अप्रैल।

कामिन्सकी ग्रेसीला एल. ऐंड कारमेन एम. रेइनहार्ट 1999. ‘दि ट्विन क्राइसिस: दि काजेज़ ऑफ बैंकिंग ऐंड बैलेंस ऑफ पेमेंट्स प्रॉब्लेम्स,’ *अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू, 89 (3)* जून 473-500 ।

केन एडवर्ड जे. 2000. "कॅपिटल मूवमेंट्स, बैंकिंग इनसॉल्वेंसी, ऐंड साइलेन्ट रन्स इन दि एशियन फाइनेंशियल क्राइसिस", *एनबीईआर वर्किंग पेपर* 7514 ।

किंडलबर्गर, चार्ल्स पी. 1978. "मैनिआस, पैनिक्स, ऐंड क्रॅशेस: ए हिस्ट्री ऑफ फाइनेंशियल क्राइसिस" संशोधित संस्करण न्यूयॉर्क : बेसिक बुक्स, *तीसरा (1996) ऐंड फोर्थ (2000) संस्करण, इन विली इन्वेस्टमेंट क्लासिक,* न्यूयॉर्क : जॉन विली ऐंड सन्स।

कोड्रेस, लॉरा ई. ऐंड प्रिट्सकर, मैट जी. 2002. "ए रेशनल एक्सपेक्टेशन्स मॉडल ऑफ फाइनेंशियल कन्टेजियन," *जर्नल ऑफ फाइनेंस,* खंड 57 पीपी 769-799 ।

क्रुगमैन पॉल आर. 1979. "ए मॉडल ऑफ बॅलेंस-ऑफ-पेमेंट्स क्राइसिस," *जर्नल ऑफ मनी, क्रेडिट ऐंड बैंकिंग 11(3),* पीपी 311-325 ।

क्रुगमैन पॉल 2009, "हाउ डिड इकॉनॉमिस्ट जेट इट सो रॉंग?" *दि न्यूयॉर्क टाइम्स,* सितम्बर 2 ।

क्रिस्टोफर एस. जेरार्डी, ऐंड्रियास लेनर्ट, शेन एम शेरलैंड ऐंड पॉल एस विलेन,"मेकिंग सेन्स ऑफ दि सबप्राइम क्राइसिस' *फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ एटलांटा, वर्किंग पेपर 2009-2,* फरवरी 2009 ।

लुक लेवेन ऐंड फाबियन वेलेंसिया 2008. "सिस्टेमिक बैंकिंग क्राइसिस: ए न्यू डेटाबेस" *आइएमएफ वर्किंग पेपर, डब्ल्यू पी/08/224* अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

मेंडोज़ा एनरिक जी. 2006. "ऐंडोजेनस सडेन स्टॉप्स इन ए. बिजनेस साइकल मॉडल विथ कोलैटरल कंस्ट्रेन्ट्स ए फिशेरियन डिफ्लेशन ऑफ टॉबिन्स क्यू" *एनबीईआर वर्किंग पेपर नं. 12564* ।

मेंडोज़ा ई. जी. 2001. "क्रेडिट, प्राइजेज़ एंड क्रॅशेस: बिजनेस साइकल्स विथ ए सडेन स्टॉप," *एनबीईआर वर्किंग पेपर्स* 8338, नेशनल ब्यूरो ऑफ इकॉनॉमिक रिसर्च, आईएनसी ।

माइकेल पी. डूले ऐंड डेविड फोकर्ट्स - लैंडाउ ऐंड पीटर गर्बर, 2004, "दि रिवाइव्ड ब्रेटन वुड्स सिस्टम: दि इफेक्ट्स ऑफ फेरीफेरी इंटरवेंशन ऐंड रिज़र्व मैनेजमेंट ऑन इंट्रेस्ट रेट्स ऐंड ऐक्सचेंज रेट्स इन सेंटर कंट्रीज़," *एनबीईआर वर्किंग पेपर्स 10332* ।

मिलेसी-फेरेटी, जिआन मारिया ऐंड रेज़िन, असफ 1998. "करेंट एकाउन्ट रिवर्सल्स ऐंड करेंसी क्राइसिस: इंपिरिकल रेगुरेरिटीज़", *सीईपीआर डिस्कशन पेपर्स,* 1921, सीईपीआर डिस्कशन पेपर्स।

मिंस्की, हाइमान पी. 1972. फाइनेंशियल इनस्टेबिलिटी रिविज़िटेड: दि इकॉनॉमिक्स ऑफ डिजास्टर,'' *इन रिएप्राइजल ऑफ दि डिस्काउन्ट मैकेनिज़म वाशिंगटन. डीसी. बोर्ड ऑफ गवर्नर्स ऑफ दि फेडरल रिज़र्व सिस्टम*''।

मिश्किन, एफ. एस. 1991ए. "एनाटॉमी ऑफ फाइनेंशियल क्राइसिस", *एनबीईआर वर्किंग पेपर* सं 3934 ।

_____ 1991बी. "ऐसिमेट्रिक इनफॉर्मेशन ऐंड फाइनेंशियल क्राइसिस: ए हिस्टोरिकल पर्सपेक्टिव" इन हब्बार्ड, आर जी (ईडी) *फाइनेंशियल मार्केट्स ऐंड फाइनेंशियल क्राइसिस,* युनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, शिकागो, पीपी 69-108 ।

मिशेल, डब्ल्यू. 1941. "*बिजनेस साइकल्स ऐंड देयर काज़ेज*" बर्केली युनिवर्सिटी ऑफ कॅलिफोर्निया प्रेस।

मोदीग्लियानी, एफ. ऐंड एस. एल. कैओ 2004. "दि चाइनीज सेविंग्स पझल ऐंड दि लाइफसाइकल एनालिसिस," *जर्नल ऑफ इकॉनॉमिक लिटरेचर,* खंड 42 .1 ।

मोहन राकेश 2008. "मिटिगेटिंग स्पिलओवर ऐंड कंटेजियन-लेसन्स फ्रॉम दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस" ऐट हैदराबाद, 4 दिसंबर।

_____ 2009. ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस :काजेज, इंपैक्ट, पॉलिसी रिसपॉन्सेज़ ऐंड लेसन्स, स्पीच डेलिवर्ड एट लंदन स्कूल में दिया गया भाषण, 23 अप्रैल।

मॉर्जेनस्टर्न, ऑस्कर 1959. "इंटरनेशनल फाइनेंशियल ट्रांजॅक्शन्स ऐंड बिजनेस साइकल्स," बुक सिरीज स्टडीज़ इन बिजनेस साइकल्स. प्रिंस्टन, *एन जे : प्रिंस्टन युनिवर्सिटी प्रेस*।

ऑब्स्टफेल्ड एम. ऐंड के. रॉगॉफ 2005. "ग्लोबल करेंट एकाउन्ट इम्बैलेन्सेज़ ऐंड दि एक्सचेंज रेट एडजस्टमेंट," इन डब्ल्यू ब्रेनहार्ड ऐंड जी. पेरी (ईडीएस) *ब्रुकिंग्स पेपर्स ऑन इकॉनॉमिक एक्टिविटी* ।

_____ 1999. "फाउन्डेशन्स ऑफ इंटरनेशनल मॅक्रोइकॉनॉमिक्स," *दि एमआइटी प्रेस* (कैंब्रिज,एमए)।

ऑब्स्टफेल्ड मॉरिस 1996. "मॉडेल्स ऑफ करेंसी क्राइसिस विथ सेल्फ फुलफिलिंग फीचर्स" *यूरोपियन इकॉनॉमिक रिव्यू, 40*, 1037-47 ।

_____ 1994. "दि लॉजिक ऑफ करेंसी क्राइसिस," *केहायर्स इकॉनॉमिक्स सीटी मोनेटरीज, XLII, 189-213* ।

पट्टनाइक एस. 2009. "दि ग्लोबल फाइनेंशियल स्टेबिलिटी आर्किटेक्चर फेल्स अगेन : सब प्राइम क्राइसिस लेसन्स फॉर पॉलिसी मेकर्स," क्रॉफर्ड स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स ऐंड गवर्नमेंट, दि आस्ट्रेलियन नेशनल युनिवर्सिटी, कैनबेरा।

प्लेन्डर, जे. 2007. " बासेल ऐकॉर्ड सीडस एट दि रुट ऑफ दि ऑनगोइंग बैंकिंग क्राइसिस", *फाइनेंशियल टाइम्स,* 7 नवंबर, 2007:30 ।

पोर्टेस, रिचर्ड (2009). "ग्लोबल इम्बैलेन्सेस" इन मथिआस डेवाट्रिपॉन्ट, ज़ेवियर फ्रीक्सास ऐंड रिचर्ड पोर्टेस (ईडी), "मैक्रोइकॉनॉमिक स्टेबिलिटी ऐंड फाइनेंशियल रेगुलेशन : की इश्यूस फॉर दि जी 20", सेन्टर फॉर इकॉनॉमिक पॉलिसी रिसर्च, लंदन।

रैडेलेट एस. ऐंड सेच्स जे. 1998. "दि ऑनसेट ऑफ ईस्ट ऐशियन फाइनेंशियल क्राइसिस" *एनबीईआर वर्किंग पेपर* 6680 ।

रेड्डी वाई. वी. 2009ए. "इंडियाज़ फाइनेंशियल सेक्टर इन करेंट टाइम्स", एस गुहान स्मारक व्याख्यान 22 अक्तूबर 2009 को।

_____ 2009बी. "ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस ऐंड ऐशिया", जस्टिस कोंडा माधव रेड्डी स्मारक व्याख्यान, अक्तूबर।

_____ 2009ग. "इंडिया ऐंड दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस : मैनेजिंग मनी ऐंड फाइनेंस," ओरिएन्ट ब्लैकस्वान प्रकाशन, दिसंबर।

रेनिहार्ट, कार्मेन. 1999. "सम पैरलल्स बिट्वीन करेंसी ऐंड बैंकिंग क्राइसिस: ए कमेंट", "*एमपीआरए पेपर* 13197, विश्वविद्यालय पुस्तकालय, म्यूनिच, जर्मनी।

रेनिहार्ट कार्मेन ऐंड रोगोफ, केनेथ एस. 208. " दिस टाइम इज डिफ्रेंट : ऐ पॅनोरमिक व्यू ऑफ ऐट सेंचुरीज़ ऑफ फाइनेंशियल क्राइसिस" *एनबीईआर वर्किंग पेपर 13882*, नेशनल ब्यूरो ऑफ ईकॉनॉमिक रिसर्च।

रोमर, क्रिस्टीना डी. 2003. "ग्रेट डिप्रेशन रिविजिटेड"।

रोमर क्रिस्टिना डी. 2009. "लेसन्स फॉम दि ग्रेट डिप्रेशन फॉर इकॉनामिक रिकवरी इन 2009," ब्रुकिंग्स इंस्टिट्यूशन, वाशिंगटन डीसी, मार्च।

स्किडेल्स्की 2009. "*कीन्स: दि रिटर्न ऑफ दि मास्टर*", पेंगुइन बुक्स।

सुब्बाराव डी. 2009. "ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस - क्वेश्चेनिंग दि क्वेश्चेन्स" नई दिल्ली में 31 जुलाई को दि एसोसिएटेड चेम्बर्स ऑफ कॉमर्स ऐंड इंडस्ट्री ऑफ इंडिया की बैठक में दिया गया जे आर डी टाटा स्मारक व्याख्यान।

_____ 2009. "फाइनेंशियल स्टेबिलिटी: इश्यूज़ ऐंड चॅलेंजेज़" एफआइसीसीआई (फिक्की) और आइबीए द्वारा संयुक्त रूप से 10 सितम्बर को आयोजित "ग्लोबल बैंकिंग : पॅराडिग्म शिफ्ट' पर फिक्की-आइबीए के वार्षिक सम्मेलन में दिया गया विदाई भाषण।

_____ 2010. "चैलेंजेज़ फॉर सेंट्रल बैंक्स इन दि कॉन्टेक्स्ट ऑफ दि क्राइसिस' पर मुंबई में 12 फरवरी को इंटरनेशनल रिसर्च काँग्रेस में प्रस्तुत स्वागत संबोधन।

समर्स, लॉरेंस 2000. "इंटरनेशनल फाइनेंशियल क्राइसिस: कॉज़ेज , प्रिवेंशन ऐंड क्योर्स, "*अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू* खंड-90 पीपी 1-16 ।

टेलर, जे. बी. 2009. " दि फाइनेंशियल क्राइसिस ऐंड दि पॉलिसी रिसपॉन्सेस: ऐन इम्पिरिकल एनालिसिस ऑफ व्हाट वेन्ट रॉंग," *एनबीईआर वर्किंग पेपर* सिरीज़ सं 14631 ।

_____ 2007. 'हाउसिंग, हाउसिंग फाइनेंस ऐंड मॉनेटरी पॉलिसी' फेडरल रिज़र्व ऑफ कान्सास सिटी, जॅक्सन होल कानफ्रेंस, 30 अगस्त - 1 सितंबर।

थोरात, ऊषा, 2009. "लर्निंग फ्रॉम क्राइसिस" आरबीआई बुलेटिन, नवंबर ।

व्हाइट, डब्ल्यू. 2008. *बीआईएस पेपर्स* सं 45 पर उपलब्ध "विदर मॉनेटरी पॉलिसी? मॉनेटरी पॉलिसी चॅलेंजेस इन दि डिकेड अहेड" जून-26-27 पर सातवें बीआइएस वार्षिक सम्मेलन में की गई प्रारंभिक टिप्पणियां।

III. संकट का प्रादुर्भाव

एशियन डेवलपमेंट बैंक, 2009. "रिबैलेंसिंग एशियाज ग्रोथ" *एशियन डेवलपमेंट आउटलुक*।

बग्नाइ, एलबर्टो 2008. "चाइना ऐंड ग्लोबल एक्सटर्नल इम्बॅलेन्सेस: सम फर्दर ऐविडेंस", *लुइस लॅब ऑन यूरोपियन इकॉनॉमिक्स (एलएलईई) वार्किंग डॉक्यूमेंट* सं 59 ।

बाल्डविन, रॉबर्ट ई. 2003. "ओपेननेस ऐंड ग्रोथ: व्हाट्स दि इम्पिरिकल रिलेशनशिप? "*एनबीईआर वर्किंग पेपर सिरीज़,* वर्किंग पेपर 9578, मार्च।

बैंक फॉर इंटरनेशनल सेटलमेंट्स 2009. "कॅपिटल फ्लोज़ ऐंड इमर्जिंग मार्केट इकॉनॉमीज़" कमेटी ऑन दि ग्लोबल फाइनेंशियल सिस्टम जनवरी।

_____ 2009. *79 वीं वार्षिक रिपोर्ट*।

_____ 2010. *तिमाही समीक्षा,* जून।

बैरेल, आर.ई. फिलिप डेविस ऐंड ओ पोमेरांट्ज़ 2004. "कॉस्ट्स ऑफ फाइनेंशियल इन्स्टेबिलिटी, हाउसहोल्ड सेक्टर बैलेंस शीट्स ऐंड कंजंप्शन" *एनआईईएसआर डिस्कशन पेपर* सं 243 ।

बीन, चार्ल्स 2009. "दि ग्रेट मॉडरेशन, दि ग्रेट पॅनिक ऐंड दि ग्रेट कॉंट्रेक्शन" यूरोपियन इकॉनॉमिक एसोसिएशन, बारसीलोना में अगस्त में वार्षिक कांग्रेस में शूम्पीटर व्याख्यान।

ब्लांकार्ड, ओलिवर 2009. "दि क्राइसिस: बेसिक मैकेनिजम्स ऐंड ऐप्रोप्रिएट पॉलिसीज़" *आईएमएफ वर्किंग पेपर* डब्ल्यूपी/09/80 अप्रैल।

काल्वो गिलर्मो ए. 2007. "क्राइसिस इन इमर्जिंग मार्केट इकॉनॉमीज : ए ग्लोबल पर्सस्पेक्टिव" *एनबीईआर वर्किंग पेपर* 11305. अप्रैल।

डेवाइड फुर्सेरी ऐंड ऐनाबेल मॉरॉगेन, 2009. "हाउ डू इंस्टिट्यूशन्स एफेक्ट स्ट्रक्चरल अनइम्प्लॉयमेंट इन टाइम्स ऑफ क्राइसिस?" ओईसीडी इकॉनॉमिक्स डिपार्टमेंट वर्किंग, *आइडियाज़.रीपेक.ऑर्ग/ई/पीएमओ 106 एचटीएमएल*।

डेवाट्रीपाँट, मथाइस, ज़ेवियर फ्रीक्सास ऐंड रिचर्ड्स पोर्ट्स 2009. (ईडीएस) "मैक्रोइकॉनॉमिक स्टेबिलिटी ऐंड फाइनेंशियल रेगुलेशन: की इश्यूज़ फॉर दी जी20" सेंटर फॉर ईकॉनॉमिक पॉलिसी रिसर्च।

डूली, एम. जे. फ्रैंकेल ऐंड डी मैथीसन 1987. "इंटरनैशनल कॅपिटल मोबिलिटी व्हाट डू सेविंग-इनवेस्टमेंट कोरिलेशन्स टेल अस?" *आईएमएफ स्टाफ पेपर्स,* 34(3): 503-530 ।

आइशनग्रीन, बेरी ऐंड कार्लोस आर्टेटा. 2002. "बैंकिंग क्राइसिस इन इमर्जिंग मार्केट्स : प्रीज़म्प्शन्स ऐंड एविडेंस" इन मारियो I. ब्लीजर ऐंड मार्को स्कर्ब (ईडीएस) *फाइनेंशियल पॉलिसीज़ इन इमर्जिंग मार्केट्स.* केंम्बिज, मेसाचूसेट्स, लंदन: एमआइटी प्रेस।

यूरोपियन सेंट्रल बैंक 2009. "मॉनेटरी, फाइनेंशियल ऐंड इकॉनॉमिक डेवलपमेंट्स" *वार्षिक रिपोर्ट 2008* ।

फ्रैंक, नथानियल, ब्रेंडा गोन्ज़ालेज-हार्मोसीलो, ऐंड हीको हेस. 2008. "ट्रांसमिशन ऑफ लिक्वीडिटी शॉक्स : एविडेंस फ्रॉम 2007 सबप्राइम क्राइसिस" *आइएमएफ वर्किंग पेपर डब्ल्यू पी/08/200* अगस्त।

गोल्डस्टीन, एम. जी. एल. कामिन्स्की ऐंड सी. एम. रेनहार्ट 2000. "ऐसेसिंग फाइनेंशियल वल्नरेबिलिटी : ए अर्ली वार्निंग सिस्टम फॉर इमर्जिंग मार्केट्स" इंस्टिट्यूट फॉर इंटरनेशनल इकॉनॉमिक्स: वाशिंगटन, डीसी।

ग्रिफिथ जोन्स, स्टीफनी ऐंड जोस ऐंटोनियो ओकॅम्पो 2009. "दि फाइनेंशियल क्राइसिस ऐंड इट्स इम्पॅक्ट ऑन डेवलपिंग कंट्रीज" *यूएनडीपी वर्किंग पेपर,* जनवरी।

ग्रूबर, जोसेफ डब्ल्यू ऐंड स्टीवेन बी कामिन 2007. "एक्सप्लेनिंग दि ग्लोबल पॅटर्न ऑफ करेंट एकाउन्ट इम्बॅलेंसेज़" *जर्नल ऑफ इंटरनैशनल मनी ऐंड फाइनेंस,* 26:500-522 ।

इंटरनेशनल मॉनेटरी फंड, 2008. *फाइनेंस ऐंड डेवलपमेंट.*. दिसंबर।

_____ 2009. "नेविगेटिंग दि फाइनेंशियल चॅलेंजेज़ अहेड" *ग्लोबल फाइनेंशियल स्टेबिलिटी रिपोर्ट,* अक्तूबर।

_____ 2009 "सस्टेनिंग दि रिकवरी", *वर्ल्ड इकॉनॉमिक आउटलुक,* अक्तूबर।

_____ 2010. "ग्लोबल प्रॉस्पेक्ट्स ऐंड पॉलिसीज़" *वर्ल्ड इकॉनॉमिक आउटलुक,* अप्रैल।

_____ 2010. "रिज़ॉल्विंग दि क्राइसिस लीगेसी ऐंड मीटिंग न्यू चॅलेंजेज़ टू फाइनेंशियल स्टेबिलिटी"। *ग्लोबल फाइनेंशियल स्टेबिलिटी रिपोर्ट,* अप्रैल।

_____ 2010. "*रीजनल इकॉनॉमिक आउटलुक : एशिया ऐंड पॉसिफिक*" अप्रैल।

जेम्स, बिलियम ई, डॉंघ्युन पार्क, शिखा झा, जुथाथिप जाँगवनिच, अकीको टेराडा - हगिवारा ऐंड ली सुमुलांग 2008. "दि यूएस फाइनेंशियल क्राइसिस, ग्लोबल फाइनेंशियल टर्मोइल, ऐंड डेवलपिंग एशिया: इज़ दि एरा ऑफ हाइ ग्रोथ एट एन एन्ड?" *एशियन डेवलपमेंट बैंक.* दिसंबर।

क्रुगमैन, पी 1983 "न्यू थिअरीज ऑफ ट्रेड एमंग इंडस्ट्रिअल कंट्रीज़" *अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू,* खंड 73 ।

क्रुगमैन पी. आर. ऐंड आर. ई. बाल्डविन, 1987. "दि परसिसटेंस ऑफ दि यूएस ट्रेड डेफिसिट" *ब्रुकिंग्स पेपर्स ऑन इकॉनॉमिक एक्टिविटी,* खंड 1:1-43 ।

मीड, जे. ई. 1955. "ट्रेड ऐंड वेलफेयर' ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन।

मैककिन्नन, आर. आइ. 1973. "मनी ऐंड कॅपिटल इन इकॉनॉमिक डेवलपमेंट" ब्रुकिंग्स इंस्टिट्यूशन वाशिंगटन डी सी ।

मोंटिएल, पी. 1993. "कैपिटल मोबिलिटी इन डेवलपिंग कंट्रीज़" *वर्ल्ड बैंक वर्किंग पेपर,* इंटरनेशनल इकॉनॉमिक्स डिपार्टमेंट डब्ल्यूपीएस #1103 ।

मोंटिएल पीटर ऐंड कारमेन एम. रेनहार्ट 1990. "डू कॅपिटल कंट्रोल्स ऐंड मैक्रोइकॉनॉमिक पॉलिसीज़ इन्फ्लुएंस दि वोल्यूम ऐंड कंपोजीशन ऑफ कैपिटल फ्लोज़? ऐविडेंस फ्रॉम दि 1990" *जर्नल ऑफ इंटरनेशनल मनी ऐंड फाइनेंस*।

ऑब्स्टफेल्ड, मॉरिस ऐलन एम. टेलर 2002. "ग्लोबलाइजेशन ऐंड कैपिटल मार्केट्स" *एनबीईआर वर्किंग पेपर 8846 मार्च*।

ऑब्स्टफेल्ड, एम. ऐंड केनेथ रोगोफ 1996. *फाउन्डेशन्स ऑफ इंटरनेशनल माइक्रोइकॉनॉमिक्स.* केंम्ब्रिज, एमए: एमआइटी प्रेस।

ऑस्ट्री, जोनाथन डी 1997. "करेंट एकाउन्ट इम्बैलेंसेज़ इन एशियन कंट्रीज़ - आर.दे.ए. प्रॉब्लम? *आइएमएफ वर्किंग पेपर*।

प्रसाद, ईश्वर एस. केनेथ रोगोफ, शांग-जिन वी ऐंड एम अयान कोस 2003. "इफेक्ट्स ऑफ फाइनेंशियल ग्लोबलाइजेशन ऑन डेवलपिंग कंट्रीज़: सम इंपिरिकल ऐविडेंस" *आइएमएफ ओकेज़नल पेपर्स,* 220. सितंबर।

पुला, गबोर और टुओमास ए. पेल्टोनेन 2009. "हैज़ इमर्जिंग एशिया डिकपल्ड? एन एनालिसिस ऑफ प्रोडक्शन ऐंड ट्रेड लिंकेजेज़ यूज़िंग दि एशियन इंटरनेशनल इनपुट - आउटपुट टेबल" *ईसीबी वर्किंग पेपर* 993. जनवरी ।

राजन, रघुराम जी. ऐंड एल. ज़िंगेल्स 2001. "दि ग्रेट रिवर्सल्स: दि पॉलिटिक्स ऑफ फाइनेंशियल डेवलपमेंट इन दि 20 सेंचुरी" *वर्किंग पेपर,* युनिवर्सिटी ऑफ शिकागो।

शॉ ई. एस. 1973. *फाइनेंशियल डीपनिंग इन इकॉनॉमिक डेवलपमेंट.* ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस।

स्पेंस, ए: माइकेल 2009. "दि फाइनेंशियल ऐंड इकॉनॉमिक क्राइसिस ऐंड दि डेवलपिंग वर्ल्ड" *जर्नल ऑफ पॉलिसी मॉडेलिंग*।

स्टार्क, ओ. ऐंड डी. ब्लूम 1985. "दि न्यू इकॉनॉमिक्स ऑफ लेबर माइग्रेशन" *अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू,* 75:173-178 ।

दि वर्ल्ड बैंक 2009. "ए डेवलपमेंट इमर्जेंसी" *ग्लोबल मॉनिटरिंग रिपोर्ट*।

_____ 2009. "चार्टिंग ए ग्लोबल रिकवरी" *ग्लोबल डेवलपमेंट फाइनेंस*।

_____ 2009. "कमॉडिटीज़ एट दि क्रॉस रोड्स" *ग्लोबल इकॉनॉमिक प्रॉस्पेक्ट्स*।

टेंग, हुई ऐंड शांग-जिन वेइ 2008 "रियल इफेक्ट्स ऑफ दि सबप्राइम मार्टगेज़ क्राइसिस : इज़ इट ए डिमांड ऑर ए फाइनेंस शॉक?" *आइएमएफ वर्किंग पेपर* डब्ल्यू पी/08/186 जुलाई।

यूनाइटेड नेशन्स कॉनफ्रेंस ऑन ट्रेड ऐंड डेवलपमेंट 2009. "ट्रेड ऐंड डेवलपमेंट रिपोर्ट, 2009" सितंबर।

वेलरी सेरा ऐंड स्वेता चमन सक्सेना (2008). "ग्रोथ डाइनेमिक्स: दि माइथ ऑफ इकॉनॉमिक रिकवरी" ideas.repec.org/a/aea/aecrev/v98y2008i1p439-57.html।

वर्ल्ड ट्रेड ऑर्गेनाइजेशन. 2009. "दि ट्रेड सिचुएशन इन 2008-09"।

IV. संकट के प्रति अंतरराष्ट्रीय अनुक्रियाएं

आचार्य विरल, लेस पेडर्सन, थामस फिलिप्पन, ऐंड मॅथ्यू रिचर्ड्सन 2009. "रेगुलेटिंग सिस्टमिक रिस्क" चैप्टर 13 इन विरल आचार्य ऐंड मॅथ्यू रिचर्ड्सन (ईडीएस) का भाग 13 *रिस्टोरिंग फाइनेंशियल स्टेबिलिटी : हाउ टू रिपेअर ए फेल्ड सिस्टम.* न्यूयॉर्क : विली ऐंड सन्स।

अक्यूज़, यिल्माज़ 2009. "पॉलिसी रिस्पॉन्स टू दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस: की इश्यूज़ फॉर डेवलपिंग कंट्रीज़" साउथ सेंटर, जिनेवा।

ऐंड्रिट्ज़की, जोकेन, जॉन किफ, लॉरा कोडन्स, पामेला मेडिड ऐन्ड्रिया मेकलर, आदित्य नारायण, नोएल सकासा, ऐंड जोडी स्कारलाटा 2009. "पॉलिसीज़ टु मिटिमेट प्रोसाइक्लिकैलिटी" *आइएमएफ स्टाफ पॉलिसी* नोट.एसपीएन/09/09 ।

बैरो रॉबर्ट जे 2009. "गवर्नमेंट स्पेंडिंग इज़ नो फ्री लंच" *वाल स्ट्रीट जर्नल,* जनवरी।

बेल्के, अन्सगर, 2009. "फिस्कल स्टिम्युलस पॅकेजेस ऐंड अनसर्टेनिटी इन टाइम्स ऑफ क्राइसिस : इकॉनॉमिक फॉलिसी फॉर ओपेन इकॉनॉमीज़" *ईकॉनॉमिक. एनलिसिस ऐंड पॉलिसी* खंड 39 सं. 1 पीपी 25-46 ।

बर्नांके, बेन एस. 2009. "दि क्राइसिस ऐंड दि पॉलिसी रिसपाँन्स" स्टॅम्प लेक्चर, लंदन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स, लंदन, इंगलैंड।

बर्न्सटीन, असफ, हछसन, ऐरिक ऐंड मार्क डी. वीडेनमियर, 2008. "केन ए लेंडर ऑफ लास्ट रिसॉर्ट स्टेबिलाइज़ फाइनेंशियल मार्केट्स? लेसन्स फ्रॉम दि फाउन्डिंग ऑफ दि फेड" *एनबीईआर वर्किंग पेपर* 14422 ।

बैंक फॉर इंटरनेशनल सेटलमेंट 2008. *बीआइएस तिमाही समीक्षा.* दिसम्बर।

बैंक फॉर इंटरनेशनल सेटलमेंट 2009. *79 वीं वार्षिक रिपोर्ट.* जून।

बोरियो, सी ऐंड एम ड्रेहमैन, 2009. "ऐसेसिंग दि रिस्क ऑफ बैंकिंग क्राइसिस - रिविज़िटेड" *बीआइएस तिमाही समीक्षा.* मार्च. पीपी 29-46 ।

ब्यूटर, डब्ल्यू. एच. 2008. "सेन्ट्रल बैंक्स ऐंड फाइनेंशियल क्राइसिस" परिवर्तनशील वित्तीय प्रणाली में स्थायित्व बनाए रखने के संबंध में कान्सास सिटी सिम्पोज़ियम के फेडरल रिज़र्व बैंक में प्रस्तुत दस्तावेज. 21-23 अगस्त।

कालोमिरिस, सी डी क्लिंगेबियल ऐंड एल लीवेन 2005. "फाइनेंशियल क्राइसिस पॉलिसीज़ ऐंड रिज़ोल्यूशन मॅकेनिज़मस : ए टेक्सोनॉमी फ्रॉम क्रॉस-कंट्री एक्सपिरिएंस," इन पी होनोहन ऐंड एल लीवेन (ईडीएस) *सिस्टमिक फाइनेंशियल क्राइसिस: कंटेनमेंट ऐंड रिजोल्यूशन* (25-75) केंम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस।

कार्वाजल, ऐना, रैन्डल डॉड, माइकल मूर, इर्लेंड नइअर, लैन टॉवर, ऐंड लूइसा जॅनफॉर्लिन 2009. "दि पेरीमीटर ऑफ फाइनेंशियल रेगुलेशन" *आइएमएफ स्टाफ पॉलिसी नोट.* एसपीएन/09/07 ।

सीक्चेटी, एस. जी. 1997. "अंडरस्टँडिंग दि ग्रेट डिप्रेशन: लेसन्स फॉर दि करेंट पॉलिसी" *एनबीईआर वर्किंग पेपर.* 6015. अप्रैल।

सीक्चेटी, स्टीफेन जी. मारियन कोहलर ऐंड क्रिस्चियन अपर 2009. "फाइनेंशियल क्राइसिस ऐंड इकॉनॉमिक एक्टिविटी" *बीआइएस पेपर* अगस्त।

सेरा, वेलरी, यूगो पनीज़ा ऐंड स्वेता सी. सक्सेना 2009. "इंटरनेशनल ऐविडेंस ऑन रिकवरी फ्रॉम रिसेशन्स" *आइएमएफ वर्किंग पेपर* डब्ल्यूपी/09/183 अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

चक्रवर्ती, के सी 2009. "ग्लोबल क्राइसिस: जेनेसिस, चैलेंजेज़ ऐंड अपॉच्युनिटीज़ अनलीश्ड" एसोसिएशन ऑफ प्रोफेशनल बैंकर्स, श्रीलंका की 25 सितंबर को आयोजित 21वीं वर्षगांठ कनवेंशन के अवसर पर।

केलॉक्स,ए.एस. ग्रे,यू क्लूह, एस. शिमिझू ऐंड पी. स्टेला 2008. "सेन्ट्रल बैंक रिस्पॉन्स टू दि 2007-08 फाइनेंशियल मार्केट टर्बूलेंस : एक्सपीरिएंसेज़ ऐंड लेसन्स ड्रॉन", आइएमएफ वर्किंग पेपर. डब्ल्यूपी/08/201 ।

कुकीयरमैन, ए. 2009. "दि करेंट क्राइसिस ऐंड दि ग्रेट डिप्रेशन-हाउ सिमिलर आर दे" बरग्लास स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स ऐंड सीईपीआर।

डेनियल लेह, ऐंड स्वेन जरी स्टहन 2009. “फिस्कल ऐंड मॉनेटरी पॉलिसी ड्यूरिंग डाउनटर्न्स: ऐविडेंस फ्रॉम दि जी 7”। आइएमएफ वर्किंग पेपर 09-50 ।

डेमिर्गिक-कुन्ट, ऐसली ऐंड लूइस सर्वेन. 2009. “आर ऑल दि सेक्रेड काउज़ डेड? इंप्लिकेशन्स ऑफ दि फाइनेंशियल क्राइसिस फॉर मैक्रो ऐंड फाइनेंशियल पॉलिसीज़” पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर 4807, दि वर्ल्ड बैंक डेवलपमेंट रिसर्च ग्रुप फाइनेंस ऐंड प्राइवेट सेक्टर टीम ऐंड मॅक्रोइकॉनॉमिक्स ऐंड ग्रोथ टीम. जनवरी।

डेवाट्रिपॉट, माथिआस, ज़ेविअर फ्रीक्सास ऐंड रिचर्ड पोट्र्स. 2009, “मॅक्रोइकॉनॉमिक स्टेबिलिटी ऐंड फाइनेंशियल रेगुलेशन : की इश्यूज़ फॉर दि जी-20” सेन्टर फॉर इकॉनॉमिक पॉलिसी रिसर्च (सीइपीआर)।

ईस्टर्ली, डब्ल्यू. ऐंड एल सर्वेन 2003. “दि लिमिट्स ऑफ स्टेबिलाइजेशन: इंफ्रास्ट्रक्चर, पब्लिक डेफिसिट्स ऐंड ग्रोथ इन लैटिन अमेरिका” स्टॅनफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस।

ऐल्मेंडोर्फ, डगलस डब्ल्यू. ऐंड जॅसन फरमैन 2008. “इफ व्हेन, हाउ : ए प्राइमर ऑन फिस्कल स्टिमुलस” दि हैमिल्टन प्रोजेक्ट स्ट्रेटजी पेपर, जनवरी।

फील्डस्टीन, मार्टिन. 2002. “दि रोल फॉर डिक्रीशनरी फिस्कल पॉलिसी इन ए लॉ इंट्रेस्ट रेट एनवायरर्नमेंट”. एनबीईआर वर्किंग पेपर 9203।

फाइनेंशियल सर्विसेज़ अथॉरिटी. 2009. दि टर्नर: रिव्यू ए रेगुलेटरी रिस्पाँस टू दि ग्लोबल बैंकिंग क्राइसिस (लंदन, मार्च)।

फाइनेंशियल स्टेबिलिटी बोर्ड (एफएसबी) 2009. एफएसएफ प्रिंसिपल्स फॉर साउन्ड कंपेन्सेशन प्रेक्टिसेज़. अप्रैल।

_____ 2009. “स्ट्रैटेजिक प्रायोरिटिज ऑफ दि रिफॉर्म ऑफ यू.एस. फिनेंशियल रेगुलेशन”. यूनाइटेड स्टेट्स सिलेक्टेड इश्यूज (वॉशिंगटन, जुलाई)।

फिशे, आर. पी. एच्. तथा एम. वोहार. 1990. “दि एडजस्टमेंट ऑफ एक्सपेक्टेशन्स टू ए चेंज इन रेजिम : कमेंट”. अमेरिकन इकोनोमिक रिव्यू 80 (4): 531-555 ।

फ्रीडमैन,सी.एम. कुमहोफ, डी. लेक्सटोन तथा जे. ली. 2009. “दि केस फॉर ग्लोबल फिस्कल स्टिम्यूलस” ।आइएमएफ स्टाफ पोजिशन नोट. मार्च।

फ्रैंकेल, रॉबर्टो तथा मार्टिन रापेटी. 2009. “सम रिफ्लेक्शन्स ऑन दि करेंट ग्लोबल क्राइसिस फ्रॉम ए डेवलपिंग कंट्रीज परस्पेक्टिव”, फ्रेडरिच इबर्ट स्टिफटंग ब्रीफिंग पेपर, मई।

फ्राइडमेन, एम. तथा ए. श्वाट्र्स. 1963. “ए मॉनिटेरी हिस्टरी ऑफ दि यू एस, 1867-1960,” प्रिन्स्टन युनिवर्सिटी प्रेस।

फरसेरी, डी. तथा ए. मौरागन. 2009ए. “दि इफेक्ट ऑफ फिनेंशियल क्राइसिस ऑन पोटेन्शियल आउटपुट : न्यू इम्पिरिकल एविडेन्स फ्रॉम ओइसीडी कंट्रीज,” ओइसीडी इकॉनॉमिक्स डिपार्टमेंट वर्किंग पेपर नं 699 ।

फुरसेरी, डी. तथा ए. मोरगने 2009बी. “फिनेंशियल क्राइसिस: पास्ट लेसन्स एंड पॉलिसी इम्प्लिकेशन्स” ओइसीडी (पॅरिस) 2009 ।

फर्मन, जे. तथा स्टिगलिट्रज, जे. 1998. “इकॉनॉमिक क्राइसिस:एविडेन्स एंड इनसाइट्स फ्रॉम इस्ट एशिया”. ब्रुकिंग्ज पेपर्स ऑन इकॉनॉमिक एक्टिविटि ।

जी-20 स्टडी ग्रुप ऑन ग्लोबल क्रेडिट मार्केट डिस्ट्रप्शन्स. 2008. ऑस्ट्रलिया द्वारा पेपर तैयार किया गया।

घोष, ए. आर, चामोन एम., क्रोवे सी. किम जे. आइ, तथा ओस्ट्री जे. डी. 2008. “कोपिंग विथ दि क्राइसिस: पॉलिसी ऑप्शन्स फॉर इमर्जिंग मार्केट कंट्रीज” आइएमएफ स्टाफ पोजिशन नोट एसपीएन/09/08 ।

गुडहार्ट, सी. तथा पी. जे. आर. डिलार्जी. 1999 "फिनेंशियल क्राइसिस:प्लस का चांगे प्लस सेस्ट ला मेमे चोज", एलएसइ फिनेंशियल मार्केटस् ग्रुप स्पेशल पेपर 108 ।

गुडहार्ट, सी. ए. इ. तथा डी शोनमेकर. 2009 "फिस्कल बर्डेन शेअरिंग इन क्रास-बॉर्डर बैंकिंग क्राइसिस". इंटरनेशनल जर्नल ऑफ सेंट्रल बैंकिंग 5(1): 141-165 ।

गोपीनाथ, श्यामला 2009. "फिलॉसॉफी एंड प्रैक्टिस ऑफ फिनेंशियल सेक्टर रेगुलेशन - स्पेस फॉर अनऑर्थोडोक्सी" एफएसए टर्नर रिव्यू सम्मेलन, लंदन, नवंबर 2 ।

हनाउन, हेर्वे 2009. "लांग टर्म सस्टेनेबिलिटि वर्सेज शॉर्ट टर्म स्टिम्यूलस : इज देअर ए ट्रेड-ऑफ," क्वालालंपुर, बैंक फॉर इंटरनेशनल सेटलमेंट्स में न्यू ग्लोबल फिनेंशियल इनवायर्नमेंट में प्रिजर्विंग मॉनिटेरी एंड फिनेंशियल स्टेबिलिटि पर 44वें सीकेन गवर्नर के सम्मेलन में दिया गया भाषण।

एच. एम. ट्रेजरी 2008. "दि केस फॉर ए कनसर्टेड इंटरनेशनल फिस्कल रिस्पॉन्स". नवंबर।

हारटोन, मार्क, मनमोहन कुमार तथा पाओलो मौरो. 2009. " दि स्टेट ऑफ पब्लिक फाइनान्सेस: ए क्रास कंट्री फिस्कल मॉनिटर " आइएमएफ स्टाफ पोजिशन नोट. इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड. जुलाई।

हूवर, हर्बर्ट. 1952. दि मेमोरिज ऑफ हर्बर्ट हूवर, खंड 3. न्यूयॉर्क : मैकमिलन एंड कंपनी।

इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड. 2008. "फिस्कल पॉलिसी एज ए कंट्रीसाइक्लिकल टूल" वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक. अक्तूबर।

इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड. 2009ए. "दि स्टेट पब्लिक फाइनान्सेस: आउटलुक एंड मीडियम-टर्म पॉलिसीज आफ्टर दि 2008 क्राइसिस" फिस्कल अफेअर्स डिपार्टमेंट. मार्च 6 ।

इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड. 2009बी. "ग्लोबल इकॉनॉमिक पॉलिसीज एंड प्रॉस्पेक्ट्स" मंत्रियों तथा केंद्रीय बैंक के गवर्नरों के लिए लंदन में आयोजित जी-20 बैठक के दौरान इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड के स्टाफ द्वारा दिया गया भाषण।

इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड. 2009सी. "फ्रॉम रेसेशन टू रिकवरी हाउ सून एंड हाउ स्ट्रांग?" वर्ल्ड इकॉनॉमिक आउटलुक का भाग 3, अप्रैल।

इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड. 2009डी. ग्लोबल फिनेंशियल स्टेबिलिटी रिपोर्ट रिस्पॉडिंग टू दि फिनेंशियल क्राइसिस् एंड मेज़रिंग सिस्टेमेटिक रिस्क्स. अप्रैल।

इशी, कोटारो, मार्क स्टोन तथा इटिन्रे बी. येहो. 2009. "अनकन्वेंशनल सेंट्रल बैंक मेजर्स फॉर इमर्जिंग इकॉनॉमिज" *आइएमएफ वर्किंग पेपर.* डब्ल्यूपी/09/226 अक्तूबर।

कवाई, एच, न्यूफॉर्मर, आर., तथा शेमुकलेर, एस. 2005. "फिनेंशिल क्राइसिस: नाइन लेसन्स फ्रॉम इस्ट एशिया" इस्टर्न इकॉनॉमिक जर्नल 31(2):185-207 ।

केमेरेर, इ डब्ल्यू 1910. "सीज़नल वेरिएशन्स इन दि न्यूयॉर्क मनी मार्केट: *अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू* 1(1):33-49 ।

किंडलबर्गर, चार्ल्स पी. 2000. "मेनियाज, पेनिक्स, एंड क्रॅशेज : ए हिस्टरी ऑफ फिनेंशियल क्राइसेस" न्यूयॉर्क, चौथा संस्करण।

कोहलेर-टोगल्होफेर, वालपुरगा तथा लुकास रिस 2009. "दि इफेक्टिवनेस ऑफ फिस्कल स्टिम्यूलस पैकेजेस इन टाइम्स ऑफ क्राइसिस" मॉनिटरी पॉलिसी एंड दि इकॉनॉमी. क्वार्टरली रिव्यू ऑफ इकॉनॉमिक पॉलिसी. क्यू1/09 । ऑसिट्रश्च नेशनल बैंक।

लीवेन, लुक तथा फाबियन वालेन्सिया. 2008. "सिस्टेमेटिक बैंकिंग क्राइसिस:ए न्यू डेटाबेस" आइएमएफ वर्किंग पेपर डब्ल्यूपी/08/224. इंटरनेशलन मॉनिटरी फंड।

लुस्टिग, एन. 2000. "क्राइसिस एंड दि पुअर:सोशली रिस्पॉन्सिबल मैक्रोइकॉमिक्स" इकॉनॉमिया 1(1):1-30 ।

मैनकिव, एन. ग्रेगोरी. 2009. "इज गवर्नमेंट स्पेंडिंग टू इजी एन आन्सर" इकॉनॉमिक रिव्यू न्यूयॉर्क टाइम्स जनवरी 11 ।

मोइन, जॉन तथा इलिस टॉलमन. 2000. "क्लिअरिंग हाउस मेंबरशिप एंड डिपॉजिट कॉन्ट्रक्शन ड्यूरिंग दि पैनिक ऑफ 1907" जर्नल ऑफ इकॉनॉमिक हिस्टरी 60(1): 145-63 ।

मिरोन, जे. 1986. "फिनान्शियल पैनिक्स, दि सीज़नेलिटि ऑफ दि नॉमिनल इंटरेस्ट रेट, एंड दि फांउडिंग ऑफ दि फेड" अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू 76(1): 125-140।

मिश्किन, एफ. एस. 2009. "इज मॉनिटरी पॉलिसी इफेक्टिव डूरिंग फिनेन्शियल क्राइसिस?" *एनबीईआर वर्किंग पेपर 14678*. जनवरी।

ऑर्गनाइजेशन ऑफ इकॉनॉमिक कोऑपरेशन एंड डेवलपमेंट (ओईसीडी), 2001.जी 10 रिपोर्ट ऑन कंसॉलिडेशन इन फाइनेंशियल सेक्टर,पेरिस,जनवरी।

ऑर्गनाइजेशन ऑफ इकॉनॉमिक कोऑपरेशन एंड डेवलपमेंट. 2002. "एक्सपीरिएंस विथ दि रिजोल्यूशन ऑफ वीक फाइनेंशियल इंस्टिट्यूशन्स इन दि ओईसीडी एरिया" फाइनेंशियल मार्केट ट्रेंड्स .82.जून।

ऑर्गनाइजेशन ऑफ इकॉनॉमिक कोऑपरेशन एंड डेवलपमेंट. 2009ए. "फाइनेन्शियल क्राइसिस: पास्ट लेसेन्स एंड पॉलिसी इम्प्लीकेशन्स". जनवरी।

ऑर्गनाइजेशन ऑफ इकॉनॉमिक को-ऑपरेशन एंड डेवलपमेंट 2009 बी. "दि इफेक्टिवनेस एंड स्कोप ऑफ फिस्कल स्टिम्यूलस" ओइसीडी इकॉनॉमिक आउटलुक।

ऑर्गनाइजेशन ऑफ इकॉनॉमिक को-ऑपरेशन एंड डेवलपमेंट 2009सी. "पॉलिसी रिस्पॉन्सेस टू दि इकॉनॉमिक क्राइसिस : इन्वेस्टिंग इन इनोवेशन फॉर लॉंग टर्म ग्रोथ " जून।

पट्टनाइक, एस. 2009. "दि ग्लोबल फिनेन्शियल स्टेबिलिटि आर्किटेक्चर फेल्स अगेन: सब-प्राइम क्राइसिस लेसेन्स फॉर पॉलिमेकर्स " जर्नल ऑफ एशियन पेसिफिक इकॉनॉमिक लिटरेचर 1467-8411 ।

पेरी, जी. सर्वन, एल. तथा सुसन, आर 2007. फिस्कल पॉलिसी, स्टेबिलाइजेशन एंड ग्रोथ : प्रूडेन्स ऑर आब्स्टिनेन्स? वाशिंगटन डी सी: वर्ल्ड बैंक।

डिस्यतात, पिटी 2009. "अनकन्वेंशनल मॉनिटरी पॉलिसी इन दि करेंट क्राइसिस" बीआइएस क्वार्टरली रिव्यू, जून।

प्लॉसर, चार्ल्स 1 2009. "इनश्युअरिंग साउंड मॉनिटरी पॉलिसी इन दि आफ्टरमाथ ऑफ क्राइसिस". फेड़रल रिज़र्व बैंक ऑफ फिलाडेल्फिया. फरवरी 27 ।

रिपोर्ट ऑफ दि कमीशन ऑफ एक्सपर्ट्स ऑफ दि प्रेसिडेंट ऑफ दि यूनाइटेड नेशन्स जनरल एसेंब्ली ऑन रिफॉर्म्स ऑफ दि इंटरनेशनल मॉनिटरी एंड फिनाशियल सिस्टम, 2009 ।

रोज, ए. के. एंड एमएम स्पिएगेल. 2009. "क्रास-कंट्री कॉजेज एंड कॉन्सिक्वेन्सेस ऑफ दि 2008. क्राइसिस : अर्ली वॉर्निंग". सीइपीआर डिस्कशन पेपर नं. 7354 वर्ल्ड इकॉनॉमिक आउटलुक का भाग 3. अप्रैल।

रोजेनग्रेन, एरिक एस. 2009. "प्रिवेन्शन, कंटेनमेंट, एंड पॉलिसी चेंज - लेसेन्स फ्रॉम हिस्टरी" फेडरल रिज़र्व बैंक के बोस्टन के 54वें इकॉनॉमिक कान्फरेंस में : "आफ्टर दि फॉल - रि-इवैल्यूएटिंग सुपरवाइजरी, रेगुलेटरी, एंड मॉनिटरी पॉलिसी"।

स्पिलिमबरगो, ए. एस. सिमनस्काय, ओ. ब्लानचर्ड तथा सी. कोट्टारेली 2008. "फिस्कल पॉलिसी फॉर दि क्राइसिस'', आइएमएफ स्टाफ पोजिशन नोट. इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड. दिसंबर 29 ।

स्प्रेग्यु, ओ. एम. 1910. "ए हिस्टरी ऑफ क्राइसिस अंडर दि नैशनल बैंकिंग सिस्टम". वाशिंगटन : यू .एस. गवर्नमेंट प्रिंटिंग ऑफिस।

स्ट्रॉस-कान, डोमिनक्यू. 2009. "क्राइसिस मैनेजमेंट एंड पॉलिसी को-ऑर्डिनेशन: डू वुई नीड ए न्यू ग्लोबल फ्रेमवर्क?" ऑस्ट्रिश्च नैशनल बैंक विएन्ना में 15 मई को दिया गया भाषण, इंटरनेशलन मॉनिटरी फंड।

सुब्बाराव, डी. 2009 "मॉनिटरी-फिस्कल को-ऑर्डिनेशन, क्लेरिटी ऑफ सेन्ट्रल बैंक मैंडेट, बैलन्स्ड रेगुलेशन एंड मॉनिटरी पॉलिसी इन ग्लोबलाइज्ड़ एनवायर्नमेंट". केंद्रीय बैंक, भारतीय रिज़र्व बैंक की चुनौतियों पर पैनल चर्चा पर की गई कार्यवाही का सारांश।

समर्स, लॉरेन्स एच. 2008 "फिस्कल स्टिम्यूलस इश्यूज" टेस्टीमनी बिफोर दि जॉइन्ट इकॉनॉमिक कमिटि. जनवरी 16 ।

टेलर, जॉन बी. 2000 "रिएसेसिंग डिक्रेशनरी फिस्कल पॉलिसी" जर्नल ऑफ इकॉनॉमिक परस्पेक्टिव्ज़, अमेरिकन इकॉनॉमिक एसोसिएशन. खंड 14(3)।

दि वर्ल्ड बैंक 2008. "लेसन्स फ्रॉम वर्ल्ड बैंक रिसर्च ऑन फिनान्शियल क्राइसिस, पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर डब्ल्यूपीएस 4779. नवंबर।

दि वर्ल्ड बैंक 2008 "दि अनफोल्डिंग क्राइसिस: इंप्लीकेशन्स फॉर फाइनेन्शियल सिस्टम्स एंड देअर ओवरसाइट". फाइनेन्शियल सिस्टम्स एंड डेवलपमेंट इकॉनॉमिक्स डिपार्टमेंट्स. अक्तूबर 28 ।

थोरात, उषा 2009 "संकट से सीख" अक्तूबर 12 को सिंगापुर में बैंकिंग तथा वित्तीय संस्थान में विख्यात व्याख्याता सिरीज' में दिया गया व्याख्यान।

टकर, पॉल 2009 "रिस्टोरिंग कॉन्फिडेन्स - मूविंग फॉरवर्ड" ब्रिटिश बैंकर एसोसिएशन के एन्यूअल इंटरनेशनल बैंकिंग कॉन्फरेन्स, लंदन में 30 जून को दिया गया भाषण ।

यूनाइटेड नेशन्स इकॉनॉमिक एंड सोशल काउन्सिल इकॉनॉमिक कमीशन फॉर आफ्रिका. 2009 "दि ग्लोबल फाइनेन्शियल क्राइसिस: इम्पैक्ट, रिस्पॉन्सेज एंड वे फॉरवर्ड". केरियो. जून।

यूनाइटेड नेशन्स कॉफ्रेंस ऑन वर्ल्ड फाइनेन्शियल एंड इकॉनॉमिक क्राइसिस एंड इट्स इम्पैक्ट ऑन डेवलपमेंट. 2009. रिपोर्ट ऑफ दि कमीशन ऑफ एक्सपर्ट्स ऑफ दि प्रेसिडेंट ऑफ दि यूएन जनरल एसेंब्ली ऑन रिफॉर्म्स ऑफ दि इंटरनेशनल मॉनिटेरी एंड फाइनेन्शियल सिस्टम।

V. तथा VI. भारत पर संकट का प्रभाव और नीतिगत अनुक्रिया : वित्तीय एवं संपदा क्षेत्र

अफोन्सो, अन्टोनियो तथा डेविडे फुर्सेरी. 2008 "गवर्नमेंट साइज, कंपिटिशन, वोलेटिलिटि एंड इकॉनॉमिक ग्रोथ." *इसीबी वर्किंग पेपर सिरीज,* 849 ।

अगरवाल, मनोज के. तथा ब्रियन टी. रैचफोर्ड. 1980 "एस्टिमेटिंग डिमांड फंक्शन्स फॉर प्रॉडक्ट कैरेस्टरिटिक्स : दि केस ऑफ आटोमोबाइल्स". *दि जर्नल ऑफ कंज्यूमर रिसर्च,*7(3):249-262 ।

एजेनर, पी. आर. 2001. "बेनिफिटस एंड कॉस्ट्स ऑफ इंटरनेशनल फाइनेन्शियल इंटिग्रेशन ". पेपर फॉर दि कान्फरेन्स ऑन फाइनेन्शियल ग्लोबलाइजेशन: इश्यूज एंड चैलेंजज फॉर स्मॉल स्टेट्स, सेंट किट्स. मार्च 27-28 ।

एसप्रेम, मैड्स. 1989. "ऐसेट पोर्टफोलियोज एंड मैक्रो इकॉनॉमिक वेरिएबल्स इन टेन यूरोपियन कंट्रीज". *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनान्स,* 13:589-612 ।

आयान, कोजे एम., इस्वर एस. प्रसाद, तथा मार्को इ., टेरोनेज. 2003 "हाउ डज ग्लोबलाइजेशन अफेक्ट दि सिंक्रोनाइजेशन ऑफ बिजिनेस साइकल?" *आइएमएफ वर्किंग पेपर* सं 03/27 ।

बेग,तैमूर तथा इलान गोल्डफेज. 1988. "फाइनेन्शियल मार्केट कंटेजियन इन दि एशियन क्राइसिस" *आइएमएफ वर्किंग पेपर* नं. डब्ल्यू पी/98/155 ।

बैंक फॉर इंटरनेशनल सेटलमेंट्स. *वार्षिक रिपोर्ट 2007-08 तथा 2008-09*।

बैंक फॉर इंटरनेशनल सेटलमेंट्स. 2006 "रीजनल फाइनेन्शियल इंटीग्रेशन इन इमर्जिंग मार्केट्स : ट्रेन्ड्स एंड पॉलिसी चैलेंजेस" अप्रकाशित पेपर।

बाक्सटर, एम., तथा मिचेल ए. कोपरिटस्. 2004 "डिटरमिनट्स ऑफ बिज़नेस साइकल मूवमेंट : ए रोबोस्ट एनेलिसिस" *फेड़रल रिज़र्व बैंक ऑफ शिकागो* डब्ल्यूपी 14 ।

भगवती, जगदीश 1998 "दि कैपिटल माइथ : दि डिफरेन्स बिट्विन ट्रेड इन विडगेट्स एंड ट्रेड इन डॉलर्स". *फॉरिन अफेअर्स,* 77:7-12।

ब्रूनर मियर आदि 2009. "दि फंडामेंटल प्रिंसिपल्स ऑफ फिनान्शियल रेगुलेशन". *विश्व की अर्थव्यवस्था पर जिनिवा रिपोर्ट*।

सिरा, वलेरी, तथा स्वेता चमन सक्सेना. 2008. "ग्रोथ डाइनेमिक्स : दि माइथ ऑफ इकॉनॉमिक रिकवरी" *अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू*।

चक्रवर्ती, के.सी 2009. "ग्लोबल क्राइसिस : जेनेसिस, चैलेंजेज एंड ऑपॉरच्युनिटिज अनलिश्ड" *भारिबैंक बुलेटिन,* अक्तूबर।

चोइ, जोंगमे जय, श्मूएल हाऊजर, तथा केनेथ जे. कोपेकी. 1999. "डज दि स्टॉक मार्केट प्रिडिक्ट रियल एक्टिविटि? टाइम सिरिज एविडेन्स फ्रॉम दि जी-7 कंट्रीज". *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनान्स,* 23: 1771-1792।

चुहान, पी., जी. पेरेज-क्यूरोज, तथा एच. पॉपर. 1996. "इंटरनेशनल कैपिटल फ्लोज : डू शॉर्ट-टर्म इनवेस्टमेंट एंड डाइरेक्ट इनवेस्टमेंट डिफर?" *पीआरइ वर्किंग पेपर* सं 1669, वर्ल्ड बैंक।

क्लार्क, टॉड इ. तथा इरिक वान विनकूप. 2001. "बॉर्डर्स एंड बिज़नेस साइकल्स". *जर्नल ऑफ इंटरनेशनल इकॉनॉमिक्स,* 55 : 59-85 ।

दादूश, यू., डी. दासगुप्ता तथा डी. रथ. 2000. "दि रोल ऑफ शार्ट-टर्म डेट इन रिसेंट क्राइसिस." *फाइनान्स एंड डेवलपमेंट,* 37 : 54-57।

ढल, एस. 2009. "ग्लोबल क्राइसिस एंड दि इंटीग्रेशन ऑफ इंडियाज स्टॉक मार्केट" *जर्नल ऑफ इकॉनॉमिक इंटीग्रेशन,* 24: 778-805।

आइशनग्रीन, बैरी तथा अँड्रयू के. रोसे. 1999. "कंटेजियस करेन्सी क्राइसिस: चैनल्स ऑफ कवेनियन्स". इन चेंजेस इन *एक्सचेंज रेट्स इन रैपिडली डेवलपमेंट कंट्रीज : थिअरी, प्रैक्टिस, एंड पॉलिसी इश्यूज* (एनबीइआर - इएएसइ खंड 7) (29-56). नैशनल ब्यूरो ऑफ इकॉनॉमिक रिसर्च आइनसी।

फामा. युगेने एफ. 1990. "स्टॉक रिटर्न्स, एक्स्पेक्टेड रिटर्न्स, एंड रियल एक्टिविटि". *जर्नल ऑफ फाइनान्स, खंड* . 45 (4) : 1089-1108 ।

वित्तीय स्थिरता फोरम. 2009. *वित्तीय प्रणाली की प्रति-चक्रियता से संबोधन पर वित्तीय स्थिरता फोरम की रिपोर्ट, वित्तीय स्थिरता फोरम.* अप्रैल. http://www.fsforum.org/publicaitons/r_0904a.pdf.

फोर्ब्स, क्रिस्टिन जे. 2001. "आर ट्रेड लिंकेजेस इम्पॉर्टेंट डिटरमिनेंट ऑफ कंट्री व्युनरेबिलिटि टू क्राइसिस?" *एनबीइआर वर्किंग पेपर* नं. 8194 ।

फ्रैंकेल, जेफरी ए. तथा अँड्यू रोसे. 1998 "दि इंडोजेनिइटी ऑफ दि ऑप्टिमम करेन्सी एरिया क्राइटेरिया." *इकॉनॉमिक जर्नल,* 108: 1009-25 ।

फुर्सेरी, डेविडे तथा अन्नाबेले मौरुगन. 2009. "फाइनेन्शियल क्राइसिस: पास्ट लेसेन्स एंड पॉलिसी इम्प्लीकेशन्स"। *ओईसीडी इकोनॉमिक्स डिपोर्टमेंट वर्किंग पेपर* 668, ओईसीडी, इकोनॉमिक्स डिपार्टमेंट ।

ग्लिक, रुवेन तथा अँड्रयू के. रोजे 1998. "कंटेजियन एंड ट्रेड : व्हाइ आर करेन्सी क्राइसिस रिजनल?." *एनबीआर वर्किंग पेपर* 6806 ।

गोपीनाथ, श्यामला 2009. "सम रिफ्लेक्शन्स ऑन दि रिसेंट ग्लोबल फाइनेन्शियल टरमॉइल - एन इंडियन परस्पेक्टिव." *भारिबैंक बुलेटिन,* फरवरी ।

गोर्डी, एम. तथा बी. हावेल्स. 2006. "प्रो-साइक्लिकैलिटी इन बासेल II: कैन वी ट्रीट दि डिसिज विदाउट किलिंग दि पेशंट?" *जर्नल ऑफ फाइनेन्शियल इंटरमीडिएशन,* 15:395-417।

भारत सरकार, *केंद्रीय बजट 2008-09 तथा 2009-10*।

हावरीलिशिन, ओ. 1990. "ट्रेड पॉलिसी एंड प्रोडक्टिविटि गेन्स इन डेवलपिंग कंट्रीज : ए सर्वे ऑफ दि लिटरेचर" *वर्ल्ड बैंक रिसर्च ऑबज़र्वर,* 5:1-24 ।

हायाशी, फूमियो तथा एडवर्ड सी. प्रीस्कॉट. 2002 " दि 1990 इन जापान : ए लॉस्ट डिकेड" *रिव्यू ऑफ इकॉनॉमिक डाइनेमिक्स* 5: 206-235 ।

होज, जे., वी. गालासो, जी. निकोलेटरी तथा टी.टी. डांग. 2006. "दि पोलिटिकल इकॉनॉमी ऑफ स्ट्रक्चरल रिफॉर्म: इंपीरिकल एविडेन्स फ्रॉम ओइसीडी कंट्रीज" *ओइसीडी इकॉनॉमिक्स डिपार्टमेंट वर्किंग पेपर्स,* नं. 501 ।

हेरिगन, जेम्स. 2000. "दि इम्पैक्ट ऑफ दि एशिया क्राइसिस ऑन यू.एस. इंडस्ट्री : एन अलमोस्ट फ्री लंच?." *इकॉनॉमिक पॉलिसी रिव्यू,* वॉल्यूम.6, नं.3 ।

इंब्स, जीन. 2004. "ट्रेड, फाइनान्स, स्पेशलाइजेशन एंड सिक्रोनाइजेशन". *रिव्यू ऑफ इकॉनॉमिक्स एंड स्टेटिस्टिक्स,* 86(3) : 723-734 ।

इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड. 2009. *वर्ल्ड इकॉनॉमिक आउटलुक,* विभिन्न समस्याएं ।

कश्यप, ए. तथा जे. स्टीन 1995. "इम्पैक्ट ऑफ मॉनिटरी पॉलिसी ऑन बैंक बैलेन्स शीट्स." *कारनेगी-रोचेस्टर कान्फरेन्स सिरीज ऑन पब्लिक पॉलिसी,* 42 : 151-195 ।

कश्यप, ए. तथा जे. स्टीन 2000. "व्हॉट डू ए मिलियन आब्जर्वेशन्स ऑन बैंक्स से अबाउट दि ट्रान्समिशन ऑफ मॉनिटरी पॉलिसी ?" *अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू,* 90:407-428 ।

कोहन, डोनाल्ड एल. 2008 "ग्लोबल इकॉनॉमिक इंटिग्रेशन एंड डिकपलिंग" इंटरनेशनल रिसर्च फोरम में मौद्रिक नीति पर दिया गया भाषण, फ्रैंकफर्ट एम मेन, जर्मनी, जून ।

कोसे, ए., सी. ओट्रोक, तथा इ. प्रसाद. 2008. "डिसकनेक्टिंग दि डिकपलिंग डिबेट" VoxEU.org, अक्तूबर ।

कोसे, प्रसाद, रोगोफ तथा वेइ. 2006. "फाइनेन्शियल ग्लोबलाइजेशन: ए रिअप्राइजल" *एनबीइआर वर्किंग पेपर्स,* 12484 ।

क्रूगमैन, पी. 1987. "इज फ्री ट्रेड पास? " *इकॉनॉमिक परस्पेक्टिव्ज,* 1:131-44 ।

लिप्स्की, जॉन. 2009. "फाइनेंस ऐंड इकॉनॉमिक ग्रोथ" रिमार्क्स ऐट दि बैंक ऑफ मैक्सिको कान्फरेन्स, *चॅलेंजेज़ ऐंड स्ट्रेटजीज फॉर प्रमोटिंग इकॉनॉमिक ग्रोथ,* मेक्सिको सिटी, मेक्सिको, अक्तूबर ।

लूकास, आर.ई. जूनियर 1990. "व्हाय डजेंट कैपिटल फ्लो फ्रॉम रिच टू पुअर कंट्रीज़?" *अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू,* 80(2): 92-96।

मैसन, पी. 1998. "कंटेजियन: मानसूनल इफेक्ट्स, स्पिलेओवर्स ऐंड जंप्स बिटवीन मल्टिपल इक्विलिब्रिया" *आइएमएफ वर्किंग पेपर* 98/142 ।

मोहन राकेश 2009. "ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस : कॉजेज, इम्पैक्ट, पॉलिसी रिस्पॉन्सेज़ ऐंड लेसन्स" *आरबीआइ बुलेटिन,* मई ।

मोहन्ती, दीपक 2009. "दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस ऐंड मॉनेटरी पॉलिसी रिस्पाँस इन इंडिया." नई दिल्ली में नवम्बर में तीसरे आइसीआरआइईआर - इनवेन्ट वार्षिक सम्मेलन में दिया गया भाषण।

पंडित बी.एल., ए. मित्तल एम. रॉय तथा एस. घोष 2006. "ट्रांसमिशन ऑफ मॉनेटरी पॉलिसी ऐंड दि बैंक लेंडिंग चैनल : एनालिसिस ऐंड एविडेंस फॉर इंडिया" *डेवलपमेंट रिसर्च ग्रुप,* स्टडी नं.25, भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई।

पिंडिक, आर. एस. 1991. "इर्रिवर्सिबिलिटी, अनसर्टेनिटी ऐंड इन्वेस्टमेंट्स." *जर्नल ऑफ मॉनेटरी इकॉनॉमिक्स,* 12: 139-162 ।

पिंडिक, आर.एस. ऐंड ए. सोलिमानो 1993. " इकॉनॉमिक इन्स्टेबिलिटी ऐंड एग्रीगेट इन्वेस्टमेंट" इन ओ.जे. ब्लांचर्ड ऐंड एस फिशर (ईडीएस.) *एनबीईआर मॅक्रोइकॉनॉमिक एनुअल.* दि एमआइटी प्रेस, केंब्रिज।

प्रसाद , ईश्वर एस., केनेथ रोगोफ, शाँग-जिन वी ऐंड एम. आयन कोस. 2003. "इफेक्ट्स ऑफ फाइनेंशियल ग्लोबलाइजेशन ऑन डेवलपिंग कंट्रीज़: सम इम्पिरिकल एविडेंस." *आइएमएफ ओकेज़नल पेपर नं.* 220, सितंबर।

रेड्डी वाई.वी. 2007ए. "सम परम्पेक्टिव ऑन दि इंडियन इकॉनॉमी" *भारिबैंक बुलेटिन,* नवंबर।

_____ 2007. बी. "ग्लोबल डेवलपमेंट्स ऐंड इंडियन परस्पेक्टिव्स : सम रैंडम थॉट्स" वेलिडिक्टरी एड्रेस एट दि बैंकर्स कॉनफ्रेंस 2007 नवंबर 27 को मुंबई में दिया गया विदाई भाषण।

रेइनहार्ट, कार्मेन एम. ऐंड केनेथ एस. रोगोफ. 2009. "दिस टाइम इस डिफरेंट : ए पॅनोरेमिक व्यू ऑफ ऐट सेंचुरीज़ ऑफ फाइनेंशियल क्राइसिस." *रिव्यू ऑफ इकॉनॉमिक्स ऐंड स्टैटिस्टिक्स,* 84:371-380 ।

रेइनहार्ट, कार्मेन एम. ऐंड केनेथ एस. रोगोफ. मई 2009. "दि आफ्टरमाथ ऑफ फाइनेंशियल क्राइसिस" *अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू*।

रिपुलो, आर. ऐंड जे. सुआरेज़. 2009. "दि प्रो साइक्लिकल इफेक्ट्स ऑफ बैंक कैपिटल रेगुलेशन" *कॉंप्रेस ऑन दि फ्यूचर ऑफ बैंकिंग रेगुलेशन,* बन्डसबैंक, सितंबर 24-25, 2009 ।

रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया, मॉनेटरी पॉलिसी स्टेटमेंट्स (वैरियस स्टेटमेंट्स 2007, 2008 और 2009) मुंबई।

रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया, *वार्षिक रिपोर्ट,* 2008-09 ।

रोड्रिक, डानी, 1998. "हू नीड्स कैपिटल एकाउन्ट कानवर्टेबिलिटी?" हार्वर्ड युनिवर्सिटी, मिमिओ ।

रोज़े, ऐन्ड्यू के. तथा मार्क स्पीगेल. 2009. "क्रॉस-कंट्री कॉजेज़ ऐंड कॉन्सीक्वेंसेज़ ऑफ दि 2008 क्राइसिस : अर्ली वार्निंग" *सीईपीआर डिस्कशन पेपर्स* 7354 ।

रोज़ ऐंड्रयू के. 2009. "बिजनेस साइकल्स बिकम लेस सिंक्रोनाइज्ड ओवर टाइम : डीबंकिंग "डिकपलिंग." । *www.voxev.org. पर उपलब्ध* ।

सर्नो, लूसियो और मार्क पी. टेलर. 1999. "हॉट मनी, एकाउन्टिंग लेबल्स ऐंड दि पर्मनेंस ऑफ कैपिटल फ्लोज़ टू डेवलपिंग कंट्रीज: एन इंपिरिकल इन्वेस्टिगेशन." *जर्नल ऑफ डेवलपमेंट इकॉनॉमिक्स,* 59:337-64 ।

शर्मा वी.के. 2009. "पॉलिसी लेसन्स फ्रॉम दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस" *भारिबैंक बुलेटिन, अक्तूबर*।

सिंह, भूपाल 2009. "स्ट्रक्चरल शिफ्ट्स इन दि करेंट एकाउन्ट ऑफ इंडियाज़ बॅलेंस ऑफ पेमेंट्स" *मार्जिन: दि जर्नल ऑफ ऐप्लाइड इकॉनॉमिक रिसर्च* खंड 3(2)।

स्टिग्लिट्ज़, जोसेफ ई. 2002. "*ग्लोबलाइजेशन ऐंड इट्स डिस्कन्टेंट्स*" ग्रेट ब्रिटेन : ऐलोन लेन, दि पेंगुइन प्रेस ।

स्टिग्लिट्ज़, जोसेफ ई. 2006. "दि रियल इफेक्ट्स ऑफ फाइनेंशियल इंटीग्रेशन" *दि जर्नल ऑफ इंटरनेशनल इकॉनॉमिक्स,* 68(2) : 296-324 ।

सुब्बाराव, डी. 2009ए. "इमर्जिंग मार्केट कंसर्न्स : एन इंडियन परस्पेपेक्टिव" *भारिबैंक बुलेटिन,* नवंबर ।

_____ 2009बी. "ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस - क्वेश्चनिंग दि क्वेश्चन्स" *भारिबैंक बुलेटिन,* अगस्त ।

_____ 2009सी. "इम्पैक्ट ऑफ दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस ऑन इंडिया - कोलेटरल डॅमेज ऐंड रिस्पॉन्स." *भारिबैंक बुलेटिन,* मार्च ।

_____ 2009 डी. "इंडिया - मैनेजिंग दि इम्पॅक्ट ऑफ दि ग्लोबल फइनेंशियल क्राइसिस" *भारिबैं बुलेटिन,* अप्रैल ।

_____ 2009ई. "रिस्क मॅनेजमेंट इन दि मिड्स्ट ऑफ दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस" *भारिबैंक बुलेटिन,* जून ।

_____ 2009एफ. "दि ग्लोबल फाइनेंशियल टर्माइल ऐंड चॅलेंजेज़ फॉर दि इंडियन इकॉनॉमी" *भारिबैंक बुलेटिन,* जनवरी ।

थोरात, उषा 2009ए. "इम्पैक्ट ऑफ ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस ऑन रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया एज़ ए नेशनल रेगुलेटर"। *भारिबैंक बुलटिन,* अगस्त ।

_____ 2009 बी. " लर्निंग फ्रॉम क्राइसिस" *भारिबैंक बुलेटिन,* नवंबर।

यूएनसीटीएडी. 2008. "फॉरेन कैपिटल ऐंड ग्रोथ" *ट्रेड ऐंड डेवलपमेंट रिपोर्ट 2008*. यूनाइटेड नेशन्स ।

वाल्टी ए. 2009. " दि माइथ ऑफ डिकपलिंग" मैन्यूक्रिप्ट, स्विस नेशनल बैंक।

VII. संकट से प्राप्त सबक और भावी चुनौतियां

ऐंड्रिट्ज़की आदि. 2009. "पॉलिसीज़ टू मिटिगेट प्रोसाइक्लिकॅलिटी" *आइएमएफ स्टाफ पोजीशन नोट* नं.एसपीएन/09/09, इंटरनेशनल मॉनेटरी फंड, मई।

बैंक फॉर इंटरनेशनल सेटलमेंट. 2009. "कैपिटल फ्लोज़ ऐंड ईएमई" *सीजीएफएस पेपर्स* नं.33. वैश्विक वित्तीय प्रणाली पर बनी समिति द्वारा स्थापित कार्यदल द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट . जनवरी 2009 ।

_____ 2009. *79 वीं वार्षिक रिपोर्ट,* 1 अप्रैल 2008 31 मार्च 2009 ।

बर्नांके,बेन ऐंड मार्क गर्टलर 2001. "शुड सेन्ट्रल बैंक्स रिस्पॉन्ड टू मूवमेंन्ट्स इन एसेट प्राइसेज़?" *अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू,* खंड 91 सं. 2 ।

बर्नांके, बेन एस. 2009ए. "दि क्राइसिस ऐंड दि पॉलिसी रिस्पॉन्स" लंदन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स, लंदन, इंग्लैण्ड के स्टाम्प लेक्चर में की गई टिप्पणियां, 13 जनवरी 2009 ।

बर्नांके, बेन एस. 2009बी. "फाइनेंशियल रिफॉर्म टू ऐड्रेस सिस्टमिक रिस्क" फॉरेन रिलेशन्स पर आयोजित परिषद में की गई टिप्पणियां, वाशिंगटन, डी.सी., 10 मार्च 2009 ।

बर्नांके बेन एस 2009सी. "रिफ्लैक्शन ऑन ए इयर ऑफ क्राइसिस", फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ केन्सास सिटीज़ एनुअल इकॉनॉमिक सिम्पोज़ियम में दिया गया भाषण, जैक्सन होल, व्योमिंग, 21 अगस्त 2009 ।

बर्नांके बेन एस. 2010. "मॉनेटरी पॉलिसी ऐंड दि हाउसिंग बबल" अमेरिकन ईकॉनॉमिक एसोसिएशन की वार्षिक बैठक के दौरान दिया गया भाषण, एटलांटा, जॉर्जिया. जनवरी 3, 2010 ।

ब्लांकार्ड, ओलिवर, हामिद फारुकी ऐंड ब्लादिमीर क्लाइयुएव. 2009. "डिड फॉरेन रिज़र्व्ज हेल्प वेदर दि क्राइसिस?" *आइएमएफ सर्वे मैगज़ीन,* 8 अक्तूबर 2009 ।

बोर्डो, माइकल डी. ऐंड ओलिवर जीन. 2002. "बूम-बस्ट्स इन एसेट प्राइजेज़, इकॉनॉमिक इन्स्टेबिलिटी, ऐंड मॉनेटरी पॉलिसी", *एनबीईआर वर्किंग पेपर* सं. 8966 ।

बेरियो, सी. एन. केनेडी ऐंड एस.डी. प्राउस. 1994. "एक्सप्लोरिंग एग्रीग्रेट ऐसेट प्राइस फ्लक्चुएशन्स एक्रॉस कंट्रीज़, मेजरमेंट, डिटरमिनेंट्स, ऐंड मॉनिटरी पॉलिसी एम्प्लिकेशन्स", *बीआइएस इकॉनॉमिक पेपर्स* नं.40 ।

ब्रास्क, बर्न्ड 2009. "हाउ हैव लोकल करेंसी बांड मार्केट्स वेदर्ड दि फाइनेंशियल क्राइसिस?" अफ्रीकन ग्लोबल डेट मॅनेजमेंट पर चौथे ओईसीडी फोरम में 12-13 नवंबर 2009 को प्रस्तुत किए गए दस्तावेज।

ब्रूनरमियर, मार्कस; ऐंड्रयू क्रॉकेट; चार्ल्स गुडहार्ट, अविनाश पर्साड ऐंड हयुन सांग शिन. 2009. "दि फंडामेंटल प्रिंसिपल्स ऑफ फाइनेंशियल रेगुलेशन." विश्व अर्थव्यवस्था पर ग्यारहवां जिनेवा पेपर ।

ब्यूटर, विलेम. 2009, "लेसन्स फ्रॉम दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस फॉर रेगुलेटर्स ऐंड सुपरवाइज़र्स." *दि फाइनेंशियल टाइम्स,* 26 मई 2009 ।

कालोमिरिस, चार्ल्स डब्ल्यू. 2009. "फाइनेंशियल इनोवेशन, रेगुलेशन ऐंड रिफॉर्म." *केटो जर्नल,* खंड 29, सं. 1 ।

कार्ने, मार्क. 2009. "दि इवोल्युशन ऑफ दि इंटरनेशनल मॉनिटरी सिस्टम." बैंक ऑफ कनाडा के गवर्नर द्वारा फॉरेन पॉलिसी ऐसोसिएशन दौरान की गई टिप्पणियां, न्यूयॉर्क सिटी, 19 नवंबर, 2009 ।

करुआना, जेम 2009. "मिनिमाइजिंग दि इम्पॅक्ट ऑफ फ्यूचर फाइनेंशियल क्राइसिस: सिक्स की ऐलीमेंट्स ऑफ रेगुलेटरी रिफॉर्म वुई हैव टू गेट राइट." *फाइनेंशियल स्टेबिलिटी रिव्यू,* बैंक दि फ्रांस, सितंबर ।

कैवालो, ऐंड्रुआर्डो ऐंड ऐलेजान्ड्रो इज़क्विअर्डो. 2009. "डीलिंग विथ दि क्राइसिस: लेसन्स फॉर लैटिन अमेरिका" http://www.iadb.org/res/publications/pubfiles/pubRIT-164.pdf

केक्चेटी स्टीफेन जी. ऐंड पिटी डिस्यातात. 2009. "सेंट्रल बैंक टूल्स ऐंड लिक्विडिटी शार्टेजेज़." "सेंट्रल बैंक लिक्विडिटी टूल्स" पर फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ न्यूयॉर्क कॉन्फ्रेंस के लिए तैयार किए गए कागजात", 19-20 फरवरी, 2009 ।

चार्ली मैकक्रीवी. 2008. "क्राइसिस ऑर नो क्राइसिस-लेसन्स फॉर फाइनेंशियल मार्केट्स रेगुलेटर्स." यूरोपियन कमिशनर फॉर इंटर्नल मार्केट ऐंड सर्विसेज़, लंदन हाउस ।

क्लासेन्स, स्टिज्न ; जिओवानी डेल अरीसिया; डेनिज़ लगान, ऐंड लक लीवेन. 2010.'' लेसन्स ऐंड पॉलिसी इंप्लीकेशन्स फ्रॉम दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस'' *आइएमएफ वर्किंग पेपर* नं.10/44 ।

कोहेन, बेन ऐंड इलाइ रेमोलेना. 2009. "दि अनफोल्डिंग टर्मोइल ऑफ 2007-2008 : लेसन्स ऐंड रिस्पॉन्सेज़." *एडीबी इंस्टिट्यूट वर्किंग पेपर* सं.124, दिसंबर ।

डेक्लान कॉस्टेलो *आदि* 2009. "दि निगेटिव इम्पॅक्ट ऑफ दि फाइनेंशियल क्राइसिस ऑन पोटेन्शियल आउटपुट नेसेसिटीज एन ईयू - लेड पॉलिसी रिस्पॉन्स" http://www.voxeu.org/index.php?q=node/3771 ।

डल्ला, स्माइल ऐंड हेस, हीको 2009. "रैपिडली ग्रोइंग लोकल-करेंसी बांड मार्केट्स ऑफर ए वाएबल अल्टरनेटिव फंडिंग सोर्स फॉर इमर्जिंग - मार्केट इश्यूअर्स" http://www.voxeu.org/index.php?q=node/4081पर उपलब्ध ।

डूडली, विल्यम सी. 2009. "लेसन्स लर्न्ड फ्रॉम दि फाइनेंशियल क्राइसिस", आठवें वार्षिक बीआइएस सम्मेलन के दौरान फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ न्यूयॉर्क के प्रेसिडेंट तथा चीफ एक्जिक्यूटिव ऑफिसर द्वारा की गई टिप्पणियां, बासेल, 3 जुलाई 2009।

एहरमान, एम. ऐंड एम., प्रैट्ज़शर. 2007. "कम्यूनिकेशन बाई सेंट्रल बैंक कमिटी मेंबर्स : डिफ्रेंट स्ट्रेटजीस, सेम इफेक्टिनेस ?", *जर्नल ऑफ मनी, क्रेडिट ऐंड बैंकिंग,* खंड 39, सं.2-3 ।

इयशनग्रीन, बैरी. 2009ए. "आउट ऑफ दि बॉक्स थॉट्स एबाउट दि इंटरनेशनल फाइनेंशियल आर्किटेक्चर" *आइएमएफ वर्किंग पेपर* सं. 09/116 ।

इशनग्रीन बैरी, 2009बी. सेन्ट्रल बैंकिंग कॉम www.centralbanking.com/central-banking/interview/1559592/interview-barry-eichengreen के साथ इन्टरव्यू ।

इशनग्रीन, बैरी. 2009सी. "लेसन्स ऑफ दि क्राइसिस फॉर इमर्जिंग मार्केट्स" *एडीबीआइ वर्किंग पेपर सिरिज* सं.179, दिसंबर 2009 ।

फ्रीडमैन, मिल्टन ऐंड आना जे. स्वार्टज़. 1963. *ए मॉनिटरी हिस्ट्री ऑफ दि यूनाइटेड स्टेट्स, 1867-1960*. प्रिंस्टन, एन.जे. प्रिंस्टन युनिवर्सिटी प्रेस फॉर एनबीईआर ।

फाइनेंशियल सर्विसेज अथॉरिटी. 2009. *दि टर्नर रिव्यू,* 18 मार्च 2009 ।

फिशर, I. 1932. "बूम्स ऐंड डिप्रेशंस" न्यूयॉर्क ऐडेल्फी ।

फिशर, स्टेनली. 2009. "प्रिपेयरिंग फॉर फ्यूचर क्राइसिस." जॅक्सन होल, व्योमिंग में ' 21 अगस्त 2009 को कान्सास सिटी के फेडरल रिज़र्व बैंक के 34वें एनुअल सिम्पोज़ियम में प्रस्तुत पेपर ।

जी-20 स्टडी ग्रुप रिपोर्ट ऑन क्रेडिट मार्केट डिस्ट्रप्शन्स, नवंबर 2008 ।

जी-30 रिपोर्ट ऑन फाइनेंशियल रिफॉर्म : ए प्रेमर्वक फॉर फाइनेंशियल स्टेबिलिटी ।

गेर्डस्मियर, डाइटर; हांस-एगर्ट रीमर्स ऐंड बार्बरा रोफिया. 2009. "एसेट प्राइस मिसएलाइनमेंट्स ऐंड दि रोल ऑफ मनी ऐंड क्रेडिट" *ईसीबी वर्किंग पेपर* सिरीज़ सं.1068 जुलाई ।

गोल्डस्टीन, मॉरिस. 2008. " ए टेन प्लान्क प्रोग्राम फॉर फाइनेंशियल रेगुलेटरी रिफॉर्म." "एड्रेसिंग दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस" पर भाषण 18 दिसम्बर 2008 ।

गोपीनाथ, श्यामला. 2009. "लेसेन्स फॉर फाइनेंशियल पॉलिसीमेकिंग - इंटरप्रेटिंग दि डाइलेमाज़" *भारिबैंक बुलेटिन,* अप्रैल ।

ग्रोवे, पॉल डी; थॉमस मेयर ऐंड कैरल लैनू 2008.'' लेसन्स फ्रॉम दि फाइनेंशियल क्राइसिस : न्यू रुल्स फॉर सेंट्रल बैंक्स ऐंड क्रेडिट रेटिंग ऐजेंसीज़.'' *इंटरइकॉनॉमिक्स,* खंड 43, नं.5 सितंबर /अक्तूबर ।

जॉर्जिओ, जोस डी. 2009. "लेसेन्स ऐंड चैलेंजेज़ ऑन फाइनेंशियल रेगुलेशन ? " इंट्रोडक्टरी रीमार्क्स बाइ दि गवर्नर, सेंट्रल बैंक ऑफ चिली एट दि कॉफ्रेंस ऑन फाइनेंशियल रेगुलेशन : लेसन्स फ्रॉम दि रिसेन्ट ग्लोबल काइसिस, सॅन्टिआगो, 17 अगस्त 2009 ।

हाडर, लिओन टी. 2009. "डिड रेगुलेशन्स काज़ रिसेन्ट क्राइसिस?" *बिजनेस टाइम्स,* 7 अगस्त 2009।

हॅमन्ड गिल; रवि कानबुर ऐंड ईश्वर एस. प्रसाद, 2009. "मॉनिटरी पॉलिसी चॅलेंजेज़ फॉर ईएमई " *ग्लोबल इकॉनॉमी ऐंड डेवलपमेंट वर्किंग पेपर 36,* अगस्त 2009।

हेन, क्रिस्चियन ऐंड ब्रैड मॅकडोनाल्ड. 2010. "एवॉइडिंग प्रोटेक्शनिज़म", *फाइनेंस ऐंड डेवलपमेंट,* खंड 47, सं. 1 इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड, वाशिंगटन डी.सी.

http://www.prospect.org/cs/articles?article=the_bubble_economy.

इंटरनेशनल मॉनेटरी फंड. 2009ए. "लेसेन्स ऑफ दि फाइनेंशियल क्राइसिस फॉर फ्यूचर रेगुलेशन ऑफ फाइनेंशियल इंस्टीट्यूशन्स ऐंड मार्केट्स ऐंड फॉर लिक्विडिटी मॅनेजमेंट " मॉनिटरी ऐंड कैपिटल मार्केट्स डिपार्टमेंन्ट ऑफ आइएमएफ द्वारा तैयार किया गया पेपर, 4 फरवरी, 2009 ।

_____. 2009बी. "इनिशियल लेसन्स ऑफ क्राईसिस" आइएमएफ के मॉनेटरी ऐंड कॅपिटल मार्क्रेट्स डिपार्टमेंट द्वारा पेपर तैयार किए गए, 6 फरवरी 2009।

_____. 2009सी. "लेसेन्स ऑफ दि ग्लोबल क्राइसिस फॉर मैक्रोइकॉनॉमिक पॉलिसी" आइएमएफ के अनुसंधान विभाग द्वारा तैयार किया गया पर्चा, 19 फरवरी 2009 ।

_____. 2009डी. *वर्ल्ड ईकॉनॉमिक आउटलुक,* अप्रैल 2009 ।

_____. 2009ई. *ग्लोबल फाइनेंशियल स्टेबिलिटी रिपोर्ट,* अक्तूबर 2009 ।

_____ .2009एफ. *वर्ल्ड इकॉनॉमिक आउटलुक,* अक्तूबर 2009 ।

_____. 2009जी. "इनिशियल लेसन्स ऑफ दि क्राइसिस फॉर दि ग्लोबल आर्किटेक्चर ऐंड दि आइएमएफ." *आइएमएफ पॉलिसी पेपर,* 18 फरवरी 2009, www.imf.org/external/pp/longres.aspx?id=4315 ।

_____. 2010ए. वर्ल्ड ईकॉनॉमिक आउटलुक, अप्रैल 2010 ।

_____. 2010बी. हाउ डिड इमर्जिंग मार्केट्स कोप इन दि क्राइसिस? आइएमएफ वाशिंगटन डी.सी. की रणनीति, नीति और समीक्षा विभाग द्वारा तैयार किया गया, जून, 2010 ।

इस्सिंग, ओ. 2002. "मॉनिटरी पॉलिसी इन ए चेंजिंग एनवायर्नमेंट" कंट्रीब्यूशन टू दि सिम्पोज़ियम ऑन "रिथिंकिंग स्टेबिलाइजेशन पॉलिसी", फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ कांसास सिटी द्वारा होस्ट किया गया (जॅक्सन होल, 30 अगस्त 2002)।

जेनकिंसन, नाइजेल. 2007. "न्यू मार्केट्स ऐंड न्यू डिमान्ड्स : चॅलेंज़ेज़ फॉर सेंट्रल बैंक्स इन दि होलसेल मार्केट इंफ्रास्ट्रक्चर" भुगतान और मौद्रिक और वित्तीय स्थिरता पर बैंक ऑफ इंग्लैंड/यूरोपियन सेंट्रल बैंक सम्मेलन में दिया गया भाषण, 12 नवंबर 2007 ।

जॉयेट, जीन-पियरे. 2009. "दि फ्यूचर ऑफ फाइनेंशियल रेगुलेशन" फाइनेंशियल स्टेबिलिटी रिव्यू ऑफ बैंक ऑफ फ्रांस, सं.13, सितंबर 2009 ।

काटो, ताकातोशी. 2009. कोरिया इंटरनेशनल फाइनेंशियल एसोसिएशन, सीओल, कोरिआ, 16 अक्तूबर, 2009 को प्रथम अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में "इम्पैक्ट ऑफ दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस ऐंड इट्स इम्प्लिकेशन्स फॉर दि ईस्ट एशियन इकॉनॉमी" पर उप प्रबंधन निदेशक, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा दिया गया प्रमुख भाषण।

कोबायाशी, कीचिरो. 2008. "फाइनेंशियल क्राइसिस मैनेजमेंट : लेसेन्स फ्रॉम जापान्स फेल्योर" http://www.voxeu.org/index.php?q=node/2483 (27 अक्तूबर 2008) ।

कटनर, रॉबर्ट. 2007. "दि बबल ईकॉनॉमी" *दि अमेरिकन प्रॉस्पेक्ट,* 24 सितंबर 2007 ।

लिप्स्की, जॉन., 2009ए. "फिस्कल-फाइनेंशिअल नेक्सस : दि चैलेंजज़ ऐंड लेसन्स ऑफ दि ग्लोबल क्राइसिस." पेरिस में ईयूओ-एफएडी उच्च स्तरीय सम्मेलन में प्रथम उप प्रबंधन निदेशक द्वारा दिया गया प्रमुख भाषण, 26 जून, 2009 ।

लिप्स्की जॉन 2009बी. "एशिया, दि फाइनेंशियल क्राइसिस, ऐंड ग्लोबल इकॉनॉमिक गवर्नेंस" सेंन फ्रांसिस्को कॉन्फ्रेंस, सांटा बार्बरा, कॅलिफोर्निया के फेडरल रिज़र्व बैंक में अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के प्रथम उप प्रबंध निदेशक द्वारा भाषण, 20 अक्तूबर 2009 ।

मिश्किन, फ्रेडरिक एस. 2008. "हाउ शुड वी रिस्पॉन्ड टू ऐसेट प्राइस बबल्स?" व्हार्टन फाइनेंशियल इस्टिट्यूशन्स सेंटर में और ओलिवर वाइमॅन इंस्टीट्यूट का वार्षिक वित्तीय जोखिम गोलमेज, फिलाडल्फिया, पेनिसेनिबानियां में दी गई टिप्पणियां, 15 मई 2008।

मोहन, राकेश. 2009ए. "ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस : कॉज़ेज, इमपैक्ट, पालिसी रिस्पॉन्सेज़ ऐंड लेसन्स" *भारिबैंक बुलेटिन,* मई।

मोहन, राकेश. 2009बी. "इमर्जिंग कांटूर्स ऑफ फाइनेंशियल रेगुलेशन: चॅलेंजेज़ ऐंड डाइनेमिक्स्" बैंक ऑफ फ्रांस की वित्तीय स्थिरता समीक्षा, सं.13 - वित्तीय विनियमन का भविष्य, सितंबर, 2009 ।

मोहन, राकेश और मुनीष कपूर. 2010. "लिबरलाइजेशन ऐंड रेगुलेशन ऑफ कैपिटल फ्लोज़ : लेसन्स फॉर इमर्जिंग मार्केट इकॉनॉमीज़", *एडीबीआइ वर्किंग पेपर्स सिरीज़,* सं.186 ।

मोहन्ती, दीपक. 2010. "दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस : जेनेसिस, इम्पैक्ट ऐंड लेसन्स", *भारिबैंक बुलेटिन,* फरवरी ।

नीर, अरलेन्ड. 2009. "फाइनेंशियल स्टेबिलिटी फ्रेमवर्क्स ऐंड दि रोल ऑफ सेंट्रल बैंक्स : लेसन्स फ्रॉम दि क्राइसिस." *आइएमएफ वर्किंग पेपर सं.*09/70 ।

निजथावर्न, बैन्डिड. 2009. "दि रिसेन्ट ग्लोबल क्राइसिस, लेसन्स लर्न्ड, ऐंड फ्यूचर इंप्लीकेशन्स." बैंक ऑफ थाइलैंड के एशिया - पॅसिफिक अर्थव्यवस्थाओं, बैंकॉक के पर्यवेक्षण के निदेशकों के ग्यारहवें सीकेन (एसईएसीईएन) सम्मेलन में दिया गया प्रमुख भाषण ।

नायर, क्रिश्चियन. 2008. "लेसन्स फ्रॉम दि क्राइसिस. सेन्ट्रल बैंकर्स रिफ्लेक्शन्स ऑन सम एकाउन्टिंग पॉलिसी इश्यूज़." लेखांकन व्यवसाय पर पेरिस में आयोजित यूरोपीयन बैठक में दिया गया भाषण" 11 दिसंबर 2008 ।

ऑर्फनाइड्स, अथानासिओज़. 2010, "मॉनिटरी पॉलिसी लेसन्स फ्रॉम दि क्राइसिस", *सीईपीआर डिस्कशन पेपर* सं. 7891, जून ।

ऑस्ट्री, जोनाथन डी., आतिष आर. घोष; कार्ल हबरमियर; मार्कोस चैमन; महवश एस. कुरैशी; ऐंड डेनिश बी.एस. रेइनहार्ट्ट (2010), "कैपिटल इनफ्लोज़ : दि रोल ऑफ कंट्रोल्स", आइएमएफ स्टाफ पोजीशन नोट एसपीएन/10/04, 19 फरवरी ।

पनेटा आदि 2009. "फाइनेंशियल सेक्टर प्रो-साइक्लिकॉलिटी : लेसन्स फ्रॉम दि क्राइसिस" *क्वेश्चनी डी इकोनोमिआ ऐ फिनांजा ओकेज़नल पेपर्स* सं.44, बंका डी'इटालिआ ।

पापाडेमोस, लुकास. 2009. "मोनिटरी पॉलिसी ऐंड दि ग्रेट क्राइसिस": लेसेन्स ऐंड चैलेंजेज़" 37वें अर्थशास्त्री सम्मेलन "बियाँड दि क्राइसिस: इकानॉमिक पालिसी इन ए न्यू मैक्रोइकॉनॉमिक इनवायर्नमेंट" जिसका आयोजन ऑस्टेरीकिश्च नेशनलबैंक, विएन्ना द्वारा 14 मई 2009 को किया गया में इसीबी के उपाध्यक्ष द्वारा दिया गया भाषण ।

पट्टनायक, सितिकांत. 2009 "दि ग्लोबल फाइनेंशियल स्टेबिलिटी आर्किटेक्चर फेल्स अगेन : सब-प्राइम क्राइसिस लेसन्स फॉर पॉलिसी मेकर्स." *एशिया पॅशिफिक इकॉनॉमिक लिटरेचर,* खंड 23, सं.1:21-47 ।

पॉज़ेन, एडम एस. 2009. "हाउ युजफुल वेयर रीसेन्ट फाइनेंशियल इनोवेशन्स? देयर इज़ रीज़न टू बी स्केप्टिकल" http://www.regmonitor.com/pile-monitor/256735/how_useful_were_recent_financial_innovations_there_is_reason_to_be_skeptical.

राम मोहन, टी.टी. 2009. "टेन रेगुलेटरी लेसन्स फ्रॉम दि सब-प्राइम क्राइसिस" *इकॉनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* खंड XLIV, सं.11, 14 मार्च ।

रंगराजन, सी. 2009. इंडिया : *मॉनिटरी पॉलिसी, फाइनेंशियल स्टेबिलिटी ऐंड अदर ऐसेज़* (405-409). ऐकेडमिक फाउन्डेशन : नई दिल्ली।

रेड्डी वाइ.वी. 2006. "सेंट्रल बैंक कम्युनिकेशन्स : सम रैन्डम थॉट्स" *भारिबैंक बुलेटिन,* फरवरी ।

रेड्डी वाइ.वी. 2006ए. "ग्लोबल इम्बॅलैंसेज़ : एन इंडियन पर्सपेक्टिव" *भारिबैंक बुलेटिन,* जून ।

रेड्डी वाइ.वी. 2009. "इंडियाज़ फाइनेंशियल सेक्टर इन करेंट टाइम्स" एस. गुहान स्मारक भाषण, 22 अक्तूबर, 2009 ।

रेइनहार्ट, कारमेन ऐंड केनेथ रोगोफ, 2008. "इज दि 2007 यू एस सबप्राइम क्राइसिस सो डिफ्रेंट ? एन इंटरनेशनल हिस्टोरिकल कम्पेरिज़न", *अमेरिकन ईकॉनॉमिक रिव्यू,* खंड 98. सं.2 ।

अं.मु. कोष में सुधार लाने के लिए जी-20 कार्यदल की रिपोर्ट, मार्च 2009 ।

अंतरराष्ट्रीय सहयोग को सुदृढ़ बनाने और वित्तीय बाजारों में अखण्डता को बढ़ावा देने के लिए जी-20 कार्यदल की रिपोर्ट ।

विश्व बैंक और अन्य बहुपक्षीय विकास बैंकों पर जी-20 कार्यदल की रिपोर्ट, मार्च 2009 ।

सुदृढ़ विनियमन और पारदर्शिता के समशक्तीकरण के संबंध में जी-20 कार्यदल की रिपोर्ट, मार्च 2009 ।

अंतरराष्ट्रीय मौद्रिक और वित्तीय प्रणाली के सुधार पर संयुक्त राष्ट्र जनरल ऐसेम्बली के अध्यक्ष के विशेषज्ञों के आयोग की रिपोर्ट, 21 सितंबर 2009 ।

ईयू में वित्तीय पर्यवेक्षण पर उच्चस्तरीय समूह की रिपोर्ट (अध्यक्ष : जैक्स डी लारोसियर), फरवरी 2009 ।

रोज़ेग्रेन, ई. एस. 2009. "मेकिंग मॉनेटरी पॉलिसी ड्यूरिंग ए फाइनेंशियल क्राइसिस." http://www.bos.frb.org/news/speeches/rosengren/2009/022709.pdf.

शिराकवा, मसाकी. 2009. "अनकन्वेंशनल मॉनेटरी पॉलिसी - सेंट्रल बैंक्स : फेसिंग दि चॅलेंजेज़ ऐंड लर्निंग दि लेसन्स." पीपल्स बैंक ऑफ चाइना और बैंक ऑफ इंटरनेशनल सेटलमेंट्स, शांघाई, द्वारा मिलकर आयोजित किए गए सम्मेलन में बैंक ऑफ जापान के गवर्नर की टिप्पणियां, 8 अगस्त 2009 ।

सिंह, मनमोहन 2006. हैदराबाद में आयोजित 39वीं वार्षिक सामान्य बैठक में आशियाई विकास बैंक के बोर्ड ऑफ गवर्नर्स को संबोधित स्वागत भाषण ।

स्माघी, लॉरेजो बिनी. 2008. "दि फाइनेंशियल क्राइसिस ऐंड ग्लोबल इम्बॅलेंसेज़ - टू साइड्स ऑफ दि सेम कॉइन" एशिया यूरोप आर्थिक फोरम सम्मेलन में दिया गया भाषण "दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस: पॉलिसी चॉइसेज़ इन एशिया ऐंड यूरोप", बीजिंग, 9 दिसंबर 2008 ।

स्टार्क, जुर्गेन. 2009. "दि इकॉनॉमिक क्राइसिस ऐंड दि रिस्पॉन्स ऑफ फिस्कल ऐंड मॉनेटरी पॉलिसी" ऑस्ट्रियन औद्योगिक संगठन, लिंज़, आस्ट्रिया में ईसीबी के कार्यपालक बोर्ड के सदस्य द्वारा भाषण, 8 जून 2009 ।

स्ट्रास-कान, डॉमनिक. 2009ए. " क्राइसिस मॅनेजमेंट ऐंड पॉलिसी को-ऑर्डिनेशन : डू वुई नीड ए न्यू ग्लोबल फ्रेमवर्क?" ओस्टेरेशिश्च नेशनल बैंक, विएन्ना में 15 मई 2009 को अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के प्रबंध निदेशक द्वार दिया गया भाषण ।

स्ट्रॉस-कान, डॉमनिक. 2009बी. "टेक ऑफ ऑर होल्डिंग पैटर्न? प्रॉस्पेक्टस फॉर दि ग्लोबल इकॉनॉमी" ब्रिटिश उद्योग के वार्षिक सम्मेलन में अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, लंदन के प्रबंध निदेशक डॉमनिक स्ट्रॉस-कान द्वारा दिया गया भाषण, 23 नवंबर, 2009 ।

सुब्बाराव, डी. 2008. " लेसन्स फ्रॉम दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस विथ स्पेशल रिफरेंस टू इमर्जिंग मार्केट इकॉनॉमीज़ एंड इंडिया " *भा.रि.बैंक बुलेटिन,*नवंबर।

सुब्बाराव, डी. 2009ए. "रिस्क मॅनेजमेंट इन दि मिड्स्ट ऑफ दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस" *भारिबैंक बुलेटिन* जून ।

सुब्बाराव, डी. 2009बी. "ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस : क्वेश्चनिंग दि क्वेश्चन्स" *भारिबैंक बुलेटिन,* अगस्त ।

सुब्बाराव, डी. 2009सी. "चॅलेंजेज़ फॉर दि सेंट्रल बैंक्स" भारिबैंक के प्लैटिनम जयंती समारोह के एक भाग के रूप में हैदराबाद में आयोजित की गई पैनल परिचर्चा में की गई टिप्पणियां, 14 अगस्त 2009 ।

सुब्बाराव, डी. 2009डी. "फाइनेंशियल स्टेबिलिटी : इश्यूज़ ऐंड चॅलेंजेज़" *भारिबैंक बुलेटिन,* अक्तूबर ।

सुब्रमणियन, अरविन्द और जॉन विलियम्सन. 2009ए. "दि वर्ल्ड क्राइसिस:रिफॉर्मिंग दि इंटरनेशनल फाइनेंशियल सिस्टम" *http://www.lie.com/publications/papers/subramanian-williamson0309.pdf.*

सुब्रमणियन, अरविंद एंड जॉन विलियम्सन. 2009बी. "ब्राजील वार्न्स अगेनस्ट फॉरेन फाइनेंस फेटिश" *बिजनेस स्टैंडर्ड,* 30 अक्तूबर, 2009 ।

तारुलो, डेनियल के 2009. "रेगुलेटरी रिफॉर्म" वित्तीय सेवाओं पर समिति के समक्ष साक्ष्य, यूएस हाउस ऑफ रिप्रेजेन्टेटिव्ज, वाशिंगटन, डी.सी., 29 अक्तूबर, 2009 ।

टेलर, जॉन बी. 2010. "लेसन्स फ्रॉम दि फाइनेंशियल क्राइसिस फॉर मॉनिटरी पॉलिसी इन इमर्जिंग मार्केट्स", 24 फरवरी, 2010 को मुंबई में रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया के प्लैटिनम जयंती समारोह के अवसर पर दिया गया एल.के. झा स्मारक भाषण ।

ट्रिचेट, जीन क्लॉड. 2009. "दि क्राइसिस ऐंड इट्स लेसन्स" 9 अक्तूबर 2009 को वेनिस विश्वविद्यालय में ईसीबी के अध्यक्ष द्वारा दिया गया भाषण ।

टूमॅन, एडविन एम. 2009. "दि ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिस : लेसन्स लर्न्ड ऐंड चैलेंजेज़ फॉर डेवलपिंग कंट्रीज़" अठारहवें साइकल ऑफ ईकॉनॉमिक्स लेक्चर्स, बांको डि गुआटेमाला में 16 जून 2009 को की गई टिप्पणियां।

टर्नर, ऐडेयर. 2010. "आफ्टर दि क्राइसिस: ऐसेसिंग दि कॉस्ट्स ऐंड बेनिफिट्स ऑफ फाइनेंशियल लिबरलाइजेशन", 24 फरवरी 2010 को भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई में 14वें चिन्तामण देशमुख स्मारक व्याख्यान के अंतर्गत दिया गया भाषण ।

वोल्कर, पॉल. 2009. न्यूयॉर्क यूनिवर्सिटीज़ स्टर्न स्कूल ऑफ बिजनेस के कॉन्फ्रेंस में गयी टिप्पणियां, URL: http://www.bloomberg.com/apps/news?pid=newsarchive&sid=atSsZ5Fp8xuY पर उपलब्ध ।

वटनागेस, तरीसा. 2009. "मैनेजिंग फाइनेंशियल क्राइसिस: की लेसन्स ऐंड फ्यूचर रेगुलेटरी चॅलेंज." ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी ग्लोबल इकॉनॉमिक गवर्नेंस व्याख्यान में दिया गया भाषण, 5 मार्च , 2009 ।

वुड, ज्योफरी. 2009. "कम्युनिकेशन इन ए क्राइसिस : सम थॉट्स फॉर सेंट्रल बैंकर्स" केंद्रीय बैंकिंग पर टिप्पणियां www.centralbanking.com/central-banking/opinion/1556711/communication-crisis-central-bankers पर उपलब्ध ।

विश्व बैंक. 2009. *ग्लोबल मॉनीटरिंग रिपोर्ट 2009: ए डेवलपमेंट इमर्जेंसी.* वाशिंगटन डी.सी : वर्ल्ड बैंक ।

पंजीकरण क्र. एमएच/एमआर/साउथ-209/2009-11

गुणजीत कौर द्वारा **भारतीय रिज़र्व बैंक,** मुंबई- 400 001 के लिये प्रकाशित और उनके द्वारा **एल्को कार्पोरेशन,** ए 2/72, शाह एण्ड नाहर इंडस्ट्रियल एस्टेट, लोअर परेल (प.), मुंबई-400 013 में अभिकल्पित तथा मुद्रित ।